ॐ

परमात्मने नमः

श्री सीमन्धर-कुन्दकुन्द-कहान दिगम्बर जैन साहित्य स्मृति संचय, पुष्प नं.

मंगल तीर्थयात्रा

(प्रथम एवं द्वितीय विभाग)

प्रथम विभाग

वीर संवत २४८३ (विक्रम संवत् २०१३) पूज्य श्री कानजीस्वामी ने सवा सात सौ यात्रियों के विशाल संघ सहित की हुई स मेदशिखरजी इत्यादि तीर्थधामों की मंगल यात्रा के पवित्र संस्मरण

: गुजराती लेखक :

ब्रह्मचारी हरिलाल जैन

सोनगढ़ (सौराष्ट्र)

: हिन्दी अनुवाद :

पण्डित देवेन्द्रकुमार जैन

बिजौलियाँ, जिला-भीलवाड़ा (राज.)

: प्रकाशक :

श्री कुन्दकुन्द-कहान पारमार्थिक ट्रस्ट

302, कृष्णकुंज, प्लॉट नं. 30, नवयुग सी.एच.एस. लि.

वी. एल. मेहता मार्ग, विलेपार्ले (वेस्ट), मुम्बई-400 056

फोन : (022) 26130820

प्रथम संस्करण : 1000 प्रतियाँ

ISBN No. :

न्यौछावर राशि : 20 रुपये मात्र

प्राप्ति स्थान :

1. **श्री दिगम्बर जैन स्वाध्यायमन्दिर ट्रस्ट,**
   सोनगढ़ (सौराष्ट्र) - 364250, फोन : 02846-244334
2. **श्री कुन्दकुन्द-कहान पारमार्थिक ट्रस्ट**
   302, कृष्णकुंज, प्लॉट नं. 30, वी. एल. महेता मार्ग, विलेपार्ले (वेस्ट),
   मुम्बई-400056, फोन (022) 26130820 Email - vitragva@vsnl.com
3. **श्री आदिनाथ-कुन्दकुन्द-कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट (मंगलायतन)**
   अलीगढ़-आगरा मार्ग, सासनी-204216 (उ.प्र.) फोन : 09997996346, 2410010/11
4. **पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट,**
   ए-4, बापूनगर, जयपुर, राजस्थान-302015, फोन : (0141) 2707458
5. **पूज्य श्री कानजीस्वामी स्मारक ट्रस्ट,**
   कहान नगर, लाम रोड, देवलाली-422401, फोन : (0253) 2491044
6. **श्री परमागम प्रकाशन समिति**
   श्री परमागम श्रावक ट्रस्ट, सिद्धक्षेत्र, सोनागिरजी, दतिया (म.प्र.)
7. **श्री सीमन्धर-कुन्दकुन्द-कहान आध्यात्मिक ट्रस्ट**
   योगी निकेतन प्लाट, 'स्वरुचि' सवाणी होलनी शेरीमां, निर्मला कोन्वेन्ट रोड
   राजकोट-360007 फोन : (0281) 2477728, मो. 09374100508

टाईप-सेटिंग : **विवेक कम्प्यूटर्स,** अलीगढ़

मुद्रक :

प्रकाशक के दो शब्द

पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी द्वारा विशाल संघसहित की गयी सम्मेदशिखर एवं दक्षिण तीर्थयात्रा के पावन संस्मरणों से अलंकृत तथा उसी दौरान भारतवर्ष के विभिन्न शहरों एवं गाँवों में हुई विशेष धर्म प्रभावना का पावन परिचय करानेवाला प्रस्तुत ग्रन्थ 'मंगल तीर्थयात्रा' आत्मार्थीजनों के समक्ष हिन्दी भाषा में प्रस्तुत करते हुए हमें अत्यन्त प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है। अभी तक गुरुदेवश्री के अनेकों संकलित और शब्दश: प्रवचनों का प्रकाशन मुमुक्षु समाज में प्रचुरमात्रा में उपलब्ध है किन्तु गुरुदेवश्री की भव्य तीर्थयात्रा के मंगल संस्मरणों का बोध करानेवाला यह पहला ही प्रकाशन है। गुरुदेवश्री ने विक्रम संवत् 2013 में की गयी सम्मेदशिखर यात्रा के पावन संस्मरणों का प्रकाशन गुजराती भाषा में श्री दिगम्बर जैन स्वाध्यायमंदिर ट्रस्ट, सोनगढ़ द्वारा सन् 1963 में प्रकाशित किया गया था। जिसका लेखन ब्रह्मचारी हरिलाल जैन, सोनगढ़ ने किया है। तत्पश्चात् विक्रम संवत् 2015 में गुरुदेवश्री द्वारा की गयी दक्षिण यात्रा और गिरनार यात्रा के संस्मरण आत्मधर्म के प्राचीन अंकों में ब्रह्मचारी हरिलालभाई द्वारा लिखित थे, जिनका समायोजन इस ग्रन्थ में मंगल तीर्थयात्रा द्वितीय विभाग एवं परिशिष्ट के रूप में किया गया है।

प्रस्तुत प्रकाशन में गुरुदेवश्री की यात्रा के सचित्र संस्मरणों को जीवन्त रखने के उद्देश्य से उन चित्रों को पृथक् से प्रकाशित किया गया है। इस प्रकार यह प्रस्तुत संस्करण आत्महितैषियों के लिये साध्य की प्रेरणा का कारण बनेगा और उसकी उपलब्धि हेतु ध्येयरूप शुद्धात्मा की आराधना का भी प्रेरक होगा - ऐसा विश्वास है।

प्रस्तुत ग्रन्थ के गुजराती लेखन हेतु बालब्रह्मचारी हरिलाल जैन, सोनगढ़; हिन्दी भाषा में प्रकाशन की प्रेरणा हेतु बालब्रह्मचारी हेमन्तभाई गाँधी, सोनगढ़; श्री निखिलभाई मेहता, मुम्बई तथा हिन्दी भाषा में इसे प्रस्तुत करने में पण्डित देवेन्द्रकुमार जैन, बिजौलियां, भीलवाड़ा (राज०) धन्यवाद के पात्र हैं।

सभी जीव इस ग्रन्थ के अध्ययन द्वारा आत्महित के मार्ग में आगे बढ़ें, ऐसी भावना है।

निवेदक

ट्रस्टीगण, श्री कुन्दकुन्द-कहान पारमार्थिक ट्रस्ट

मुम्बई

प्रकाशकीय

(गुजराती संस्करण का तत्कालीन प्रकाशकीय)

विक्रम संवत् 2013 में पूज्य गुरुदेव ने विशाल संघसहित भारत के मुख्य तीर्थों की जो यात्रा की, वह यात्रा महोत्सव अनोखा था। उस यात्रा के मधुर संस्मरण इस पुस्तकरूप में प्रसिद्ध हो रहे हैं, यह आनन्द का विषय है। इस यात्रा के समय गुरुदेव के साथ आने का सद्भाग्य मुझे नहीं मिला था, परन्तु तीर्थयात्रा के मधुर संस्मरण सुनकर ऐसी झंखना होती है कि अब फिर से गुरुदेव इन महान तीर्थों की यात्रार्थ पधारें... और आपश्री के साथ पावन तीर्थों की यात्रा का महान लाभ मिले। वास्तव में ज्ञानी सन्त के साथ यात्रा करते हुए जगह-जगह तीर्थ की वास्तविक महिमा समझ में आती है और मानों वहाँ से सिद्धि प्राप्त साधक जीवों का आदर्श जीवन नजर समक्ष तैरता है, इस प्रकार सिद्धदशा के प्रति और साधकदशा के प्रति कोई अनोखी ऊर्मि जागृत होती है। ऐसी तीर्थयात्रा में जागृत ऊर्मियाँ जीवन में विस्मृत नहीं होती। इस पुस्तक में तीर्थों का इतिहास और महिमा, जगह-जगह यात्रा में तीर्थों के प्रति गुरुदेव के उल्लासभरे उद्गार, तथा बहिनश्री-बहिन की भावभीनी भक्ति के प्रसंग पढ़कर मुमुक्षु हृदय में तीर्थों के प्रति अद्भुत बहुमान जागृत होता है। वास्तव में गुरुदेव का महान उपकार है कि ऐसे तीर्थों का और वहाँ से सिद्धि प्राप्त जीवों के स्वरूप की पहिचान कराकर ऐसी महान तीर्थयात्रा आपश्री ने करायी है। ऐसा महान प्रभावशाली यात्रासंघ इस इतिहास में विरल है। ऐसा ही दूसरा महान यात्रासंघ (संवत् 2015 में) दक्षिण देश के तीर्थों—बाहुबली भगवान इत्यादि की यात्रा का भी निकला था। सम्भव होगा तो उसके संस्मरण भी शीघ्र प्रसिद्ध होंगे। *(अत्यन्त हर्ष है कि इस प्रस्तुत संग्रह में उस यात्रा के संस्मरण भी समायोजित कर लिये गये हैं)।*

इस यात्रासंघ में गुरुदेव के साथ ही रहकर माननीय भाईश्री रामजीभाई ने यात्रासंघ का अध्यक्ष पद शोभित किया था तथा यात्रासंघ को अमूल्य सलाह दी थी तथा भाईश्री नेमिचन्दजी पाटनी, चिमनलाल ठाकरसी मोदी, हिम्मतलाल छोटालाल शाह, मलूकचन्द छोटालाल शाह इत्यादि अनेक भाईयों ने जो अमूल्य सेवाएँ प्रदान की थीं, उन सबका संस्था आभार मानती है।

ब्रह्मचारी भाई श्री हरिलाल जैन, जो बीस वर्ष से पूज्य गुरुदेव की छाया में रहते हैं और इस संस्था के साहित्य प्रकाशन में जिनका महत्त्वपूर्ण योगदान है, उन्होंने बहुत परिश्रमपूर्वक भक्तिभाव से यह सुशोभित पुस्तक तैयार कर दी है, इसके लिये संस्था उनका आभार मानती है, तदुपरान्त इस पुस्तक के प्रकाशन कार्य में विशिष्ट सहयोग करनेवाले भाईश्री मनसुखलाल छगनलाल देसाई का तथा लगनपूर्वक सुन्दर प्रिंटिंग करने के लिये आनन्द प्रिंटिंग प्रेस का भी संस्था आभार मानती है। अन्त में गुरुदेव ने जिस प्रकार इन पावन तीर्थों की यात्रा करायी, उसी प्रकार रत्नत्रयरूप भावतीर्थ की भी मंगल यात्रा कराकर अपने को इस भव समुद्र से तारे, ऐसी प्रार्थना करता हूँ।

दिनांक - 4-11-1963
सोनगढ़

नवनीतलाल सी. झवेरी (जे.पी.)
प्रमुख
श्री दिगम्बर जैन स्वाध्यायमन्दिर ट्रस्ट, सोनगढ़

ॐ

સ્વાવલંબી ઉપયોગરૂપ સ્વરૂપને સાધીને
જે ક્ષેત્રથી સિદ્ધ થયા તે જ ક્ષેત્રે
સમશ્રેણીએ ઊર્ધ્વ સિદ્ધપણે બિરાજે છે,
તેના સ્મરણના કારણરૂપ
આ તીર્થ નિમિત્ત છે.

स्वावलम्बी उपयोगरूप स्वरूप को साधकर जिस क्षेत्र से सिद्ध हुए, उसी क्षेत्र से समश्रेणी में ऊर्ध्व सिद्धरूप से विराजमान हैं, उनके स्मरण के कारणरूप यह तीर्थ निमित्त है।

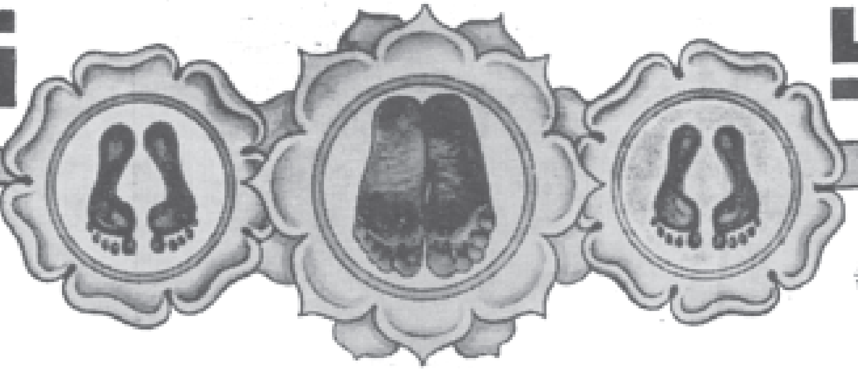

प्रार्थना

चन्द्र किरण सम शीतल यह
पाकर प्रभु तुझ चरण को
शान्त ऊर्मि उल्लसित
तेरे चरण प्रसाद से...
मेरा जीवन तुझ छाँव में
तरस रहा निज आत्म को
नौबत मंगल धर्म की
जयनाद से गुँजित रहे...
यत्न है दिन-रात जो
हो सफल तुझ आशीष से
बारम्बार करूँ मैं प्रार्थना
'हरि' हाथ पकड़ मुझ तारना

જેમના મહાન પ્રતાપથી હજારો યાત્રિકોને સમ્મેદશિખરજી
જેવા પાવન તીર્થોની મહાન પ્રભાવશાળી યાત્રા થઈ,
જેમના મંગલ ઉપદેશથી હજારો જિજ્ઞાસુઓ આત્મહિત
સાધવા જાગૃત થયા... જેમની મંગલ ચરણછાયામાં
આ પુસ્તકની રચના થઈ... જેમના મંગલ આશીર્વાદથી
આત્મિકસિદ્ધિના માર્ગ પ્રત્યે આત્મા ઉલ્લસિત થયો...
અને જેમનો મહાન ઉપકાર ભવોભવમાં નહિ ભૂલાય...
એવા પરમકૃપાળુ ગુરુદેવના પાવન ચરણકમળમાં
આ 'મંગલતીર્થયાત્રા'ના પ્રકાશન પ્રસંગે
હૃદયોર્મિથી નમસ્કાર કરું છું.

जिनके महान प्रताप से हजारों यात्रियों को सम्मेदशिखरजी जैसे पावन तीर्थों की महान प्रभावशाली यात्रा हुई, जिनके मंगल उपदेश से हजारों जिज्ञासु आत्महित साधने के लिये जागृत हुए... जिनकी मंगल चरणछाया में इस पुस्तक की रचना हुई... जिनके मंगल आशीर्वाद से आत्मिक सिद्धि के मार्ग के प्रति आत्मा उल्लसित हुआ... और जिनका महान उपकार भव-भव में विस्मृत नहीं होगा, ऐसे परम कृपालु गुरुदेवश्री के पावन चरण-कमलों में इस 'मंगल तीर्थयात्रा' के प्रकाशन प्रसंग पर हृदयोर्मि से नमस्कार करता हूँ।

उमंग भरे अन्तरंग से... करता हूँ अर्पण मात।
स्वीकार कर आशीष से... पुत्र हो भव पार॥

इस अशरण संसार में मात्र ढाई वर्ष का छोड़कर जो स्वर्गस्थ हो गयी और पश्चात् तीस वर्ष में एक शुभ स्वप्न द्वारा दर्शन देकर जो धर्मात्मा–सन्तों की सेवा का उत्तम आदेश प्रदान कर गयी, ऐसी मेरी स्वर्गस्थ माता को स्मरण करके ऊर्मि भरे हृदय से यह पुस्तक समर्पण करता हूँ।

हे माता! तुम जहाँ हो, वहाँ से अवश्य मंगल तीर्थयात्रा करना।

—तुम्हारा पुत्र

लेखक का निवेदन

मंगलरूप अनन्त सिद्ध सिद्धि के सब धाम।
सिद्धि साधक सन्त को बारम्बार प्रणाम॥

आत्मा का अन्तिम ध्येय जो सिद्धपद, उसे अनन्त जीव प्राप्त कर चुके हैं। जिस स्थान से जीव सिद्धपद को प्राप्त हुए और जिस स्थान में सिद्धपद साधक सन्त विचरे हैं, वह स्थान सिद्धिधाम अथवा तीर्थधाम है। सम्मेदशिखरजी महातीर्थ, यह भारत का शाश्वत् सिद्धिधाम है; अनन्त तीर्थंकर वहाँ से मुक्ति को प्राप्त हुए हैं और प्राप्त होंगे। सिद्धपद प्राप्ति की भावनावाले जीवों को सिद्धिधाम की यात्रा का भाव भी जागृत होता है। परम पूज्य गुरुदेव जैसे अपने को सिद्धि का मार्ग दर्शाते हैं, वैसे सम्मेदशिखरजी शाश्वत् सिद्धिधाम भी दिखावें—ऐसी बहुत भक्तों की भावना थी। वह भावना संवत् 2013 में पूरी हुई... और गुरुदेव के साथ तीर्थयात्रा का एक भव्य इतिहास रचा गया। वैसे तो जब से शिखरजी महातीर्थ के दर्शन हुए, तब से ही अतिशय भक्ति के कारण हृदय में ऐसी उर्मियाँ जागृत हुईं कि इस पूज्य और पवित्र महातीर्थ की महिमा के सम्बन्ध में कुछ साहित्य की रचना हो तो अच्छा है! उसका कितना ही वर्णन लिखा हुआ था, ऐसे में पूज्य गुरुदेव के साथ की इस मंगल तीर्थ यात्रा का महान सुयोग बना और उसके अनुसन्धान में शिखरजी इत्यादि तीर्थों के तथा वहाँ विचरित आराधक सन्तों की महिमा को प्रसिद्ध करनेवाली यह पुस्तक तैयार हुई। यह पुस्तक तीर्थों के प्रति और आराधक सन्तों के प्रति परम भक्ति की उर्मियों से रचित है—अर्थात् यही इस पुस्तक का मुख्य विषय है।

गुरुदेव के साथ नये-नये तीर्थों की यात्रा करते हुए जो आनन्दोल्लास हुआ और उन तीर्थों में विचरते हुए गुरुदेव को भी जो प्रसन्नता हुई उसका कुछ स्पष्ट ख्याल इस पुस्तक द्वारा आ सकेगा, वरना उस प्रसंग का सम्पूर्ण वर्णन तो लेखन में कैसे आ सकता है ? इस मन्दबुद्धि बालक में इतनी शक्ति भी कहाँ है ? तथापि मेरे जीवन में सबसे अधिक उर्मि भरा-भावना भरा-भक्ति भरा यह साहित्य है। अहा! गुरुदेव के साथ छह-छह महीने तक तीर्थभक्ति का यह कोई अनोखा महोत्सव था... लेखन के समय मानो कि उस-उस तीर्थ में ही विचरते हों, ऐसी ऊर्मियाँ जागृत होती थीं। यह पुस्तक गुरुदेव के साथ की महान यात्रा के महान आनन्द को बारम्बार ताजा करने में सहायरूप होगी और जो यह लाभ नहीं ले सकें हों, उन्हें उन तीर्थों की यात्रा करने का उत्साह जागृत करेगी। इस यात्रा महोत्सव की छह हजार फीट लम्बी फिल्म देखने पर मानो फिर से वह तीर्थयात्रा करते हों—ऐसा आनन्द होता है।

इस यादगार यात्रा महोत्सव में गुरुदेव के साथ के कारण और तीर्थों में उनके भाव भरे उद्‌गारों के कारण जो आनन्द आया और यात्रा प्रसंग में जगह-जगह पूज्य बहिनश्री-बहिन ने हृदय के कपाट खोल-खोलकर जो भक्तिरस प्रवाहित किया, संघ को सर्व प्रकार का मार्गदर्शन दिया, तदर्थ समस्त यात्री अन्तर की भक्ति भरी ऊर्मियों से उनका उपकार मानते हैं। गाँव-गाँव के जैन समाज ने संघ की व्यवस्था में सहयोग देकर जो हार्दिक वात्सल्य दर्शाया, वह कभी विस्मृत नहीं हो सकता। यात्रासंघ में अध्यक्षरूप

से मुरब्बी श्री रामजीभाई ने, मुख्य मन्त्रीरूप से भाईश्री नेमिचन्दजी पाटनी ने, सेक्रेटरीरूप से भाईश्री हिम्मतलाल छोटालाल तथा भाईश्री चिमनलाल ठाकरसी ने, संघ की भोजन सम्बन्धी व्यवस्था इत्यादि के लिये भाईश्री मलूकचन्द छोटालाल ने अनेकविध पूर्व तैयारियों में भाईश्री अमृतलाल नरसीभाई सेठ ने, अनेकविध सलाह सूचनाओं में भाईश्री बृजलाल जेठालाल शाह ने तथा भाईश्री हिम्मतलाल जेठालाल शाह ने तथा दूसरे अनेक महानुभावों ने यात्रासंघ के अनेकविध कार्यों में अमूल्य सहयोग देकर संघ को शोभित किया है, तदर्थ यात्रासंघ उन सबका बहुत ही आभारी है।

जिनकी मंगल छाया में यह पुस्तक तैयार हुई है, ऐसे पूज्य गुरुदेव का, मात्र इस पुस्तक की रचना में ही नहीं परन्तु मेरे समग्र जीवन में जो अचिन्त्य उपकार है और उस उपकार के स्मरण से अन्तर में जो ऊर्मि वेदन में आती है, वह व्यक्त करना अशक्य है। अहा, गुरुदेव! आपके प्रसाद से ही इस बालक का जीवन हितपन्थ में जुड़ा है और आपके प्रताप से ही जीवन में ऐसी तीर्थयात्रा इत्यादि के मंगल प्रसंग प्राप्त हुए हैं। आपका उपकार जीवन में और भव-भव में कभी विस्मृत नहीं होगा।

यह पुस्तक तैयार होने में पहले से अन्त तक सभी कार्यों में भाईश्री मनसुखलाल छगनलाल देसाई की अनेक प्रकार से अमूल्य सहायता प्राप्त हुई है, तदुपरान्त भावनगर के आनन्द प्रेस के भाईश्री अन्नूभाई, हसुभाई और स्टाफ ने इस पुस्तक के प्रकाशन कार्य में अनेक प्रकार से सुविधायें दी हैं तथा उत्साहपूर्वक इस पुस्तक को शोभित किया है; राजकोट के फूलछाव कार्यालय ने तुरन्त ही ब्लाक्स बनाकर दिये हैं; भावनगर के पेण्टर गोहिल ने मनपसन्द चित्र बनाकर दिये हैं; मुम्बई के फोटोग्राफर पूनम सेठ की ओर से फोटोओं के लिये सहयोग मिला है, इसके अतिरिक्त अनेक यात्रियों की नोंधपोथी तथा फोटो इस पुस्तक के लिये बहुत उपयोगी हुए हैं और अन्य भी जिनकी सहायता हो उन सबका हार्दिक आभार व्यक्त करता हूँ।

मेरी पूज्य धर्ममाताएँ—पूज्य बहिनश्री चम्पाबेन और पूज्यबहिन शान्ताबेन—इन दोनों के वात्सल्य भरपूर अचिन्त्य उपकारों का स्मरण होने पर हृदय भक्ति से गद्‍गद् हो जाता है; इस बालक के जीवन में आपश्री के अपार उपकारों का किस प्रकार वर्णन करूँ! और किस प्रकार उसका प्रत्युपकार करूँ! यहाँ मात्र भक्ति भरी ऊर्मियों से उसका स्मरण करके ही सन्तोष मानता हूँ।

मेरे हृदय में रही हुई तीर्थों और सन्तों के प्रति भक्ति—यद्यपि उसमें अनेक प्रकार की क्षति है तो भी, उस भक्ति से मेरे दोष नष्ट हों और सम्यक्मार्ग की पवित्र आराधना में मेरा आत्मा लगे, ऐसी भावनापूर्वक, देव-गुरु-तीर्थों को नमस्कार करके और इस पुस्तक के लेखन-प्रकाशन सम्बन्धी कार्यों में मुझसे कुछ भूल हुई हो, उसके लिये विनम्र भाव से क्षमायाचना करके निवेदन समाप्त करता हूँ।

वीर संवत् 2489
द्वितीय कार्तिक कृष्ण 4
दिनांक 4-11-1963

ब्रह्मचारी हरिलाल जैन
सोनगढ़

प्रस्तावना

परम उपकारी पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी द्वारा विक्रम संवत् 2013 में संघसहित की गयी सम्मेदशिखर आदि पावन तीर्थक्षेत्रों की ससंघ यात्रा एवं विक्रम संवत् 2015 में संघसहित की गयी दक्षिण प्रान्तीय तीर्थक्षेत्रों की मंगलकारी यात्रा के मधुर संस्मरण, प्रवचन, भक्ति एवं भारत व्यापी धर्म प्रभावना का विवरण प्रस्तुत करनेवाला 'मंगल तीर्थयात्रा' नामक ग्रन्थ आत्मार्थीजनों के कर कमलों में प्रस्तुत करते हुए अत्यन्त प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है। अभी तक पूज्य गुरुदेवश्री के संकलित प्रवचन, शब्दश: प्रवचन, वचनामृत साहित्य मुमुक्षु समाज के समक्ष अनेक बार प्रस्तुत हुआ है और हो रहा है किन्तु गुरुदेवश्री द्वारा की गयी तीर्थयात्राओं के मधुर संस्मरणों का सम्भवतया यह पहला प्रकाशन है।

आत्मा का साध्य पूर्ण सिद्धत्व है, जो कि पूर्ण ध्येयस्वरूप त्रैकालिक ध्रुव कारणपरमात्मा के आश्रय से प्रगट होता है। कारणपरमात्मा के आश्रय से जब तक पूर्ण सिद्धत्वरूप साध्य की प्राप्ति न हो, तब तक उस पावन दशा के साधकों के अन्त:स्थल में उन साध्य परमात्माओं के प्रति उछलती हुई भक्ति और उन साधक सन्तों की चरणरज से पवित्र हुई तीर्थभूमियों की यात्रा इत्यादि के प्रशस्तभाव हुए बिना नहीं रहते।

जिससे तिरा जाए, उसे तीर्थ कहते हैं। इस अर्थ में आत्मा को संसार के चतुर्गतिरूप परिभ्रमण से उभारनेवाले सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्ररूप रत्नत्रय परिणति ही तीर्थ है और जिस त्रैकालिक ध्रुवस्वभाव के अवलम्बन से यह कल्याणकारिणी रत्नत्रय परिणति प्रगट होती है, वह त्रैकालिक ध्रुवस्वभाव महातीर्थ है। सचमुच ज्ञानियों की अन्तर परिणति निरन्तर उस त्रैकालिक ध्रुवस्वरूप कारणपरमात्मा की मंगल तीर्थयात्रा निरन्तर करती ही है, तथापि जब तक साध्य की पूर्णता न हो, तब तक साध्य के लक्ष्य से उन तीर्थभूमियों की यात्रा का उमंग भरा भाव ज्ञानियों को भी साध्यपद का स्मरणदाता होने से उन्हें तीर्थयात्रा का प्रशस्त भाव आये बिना नहीं रहता और जब तीर्थंकर परमात्माओं और वीतरागी सन्तों की आत्मसाधनास्थलियों में ऐसे साधक सन्तों का प्रवेश होता है, तब उनका अन्त:स्थल भक्तिरस से भींग जाता है और मानो अपने ही धर्मपिता के देश में विचरण कर रहे हों, ऐसा प्रतीत होता है।

साधक-सन्तों के साथ-साथ उन तीर्थों पर विचरण करनेवाले अनेकों भक्तजनों को भी ऐसे प्रसंग में साधक और साध्य के मिलन का यह पावन दृश्य आत्मसाधना की पावन प्रेरणा देता है; इसलिए ऐसी तीर्थयात्रा उन जीवों के लिये भी आत्महित प्रेरक होकर आत्मसाधक बन जाती है।

प्रस्तुत ग्रन्थ मंगल तीर्थयात्रा में अनेकों तीर्थक्षेत्रों में गुरुदेवश्री द्वारा भक्तिभाव से की गयी तीर्थयात्रा के मधुर संस्मरण पढ़ते हुए ऐसा लगता है, मानो हम स्वयं उस मंगल तीर्थ में विचरण कर रहे हों और साधक धर्मात्माओं की पवित्र छत्रछाया में साध्य परमात्माओं के निकटतम होते जा रहे हैं। प्रत्येक तीर्थधाम में पूज्य गुरुदेवश्री एवं पूज्य बहिनश्री-बहिन द्वारा अन्तर के उमंग भरे बहुमानपूर्वक करायी गयी जिनेन्द्र भक्ति, मुनिराज भक्ति तथा गुरुदेवश्री द्वारा स्थान-स्थान पर उस तीर्थधाम से सिद्धि प्राप्त साध्य परमात्मा के प्रति अभिव्यक्त बहुमान और साध्यसिद्धि का अचलितमार्ग हमें भी आत्महित के मार्ग में गमनशील बनने के लिये प्रेरित करता है। तीर्थयात्रा करते हुए अनेकों छोटे-बड़े नगरों और गाँवों में गुरुदेवश्री के विशाल संघ का दिगम्बर जैन समाज द्वारा जिस बहुमान के साथ स्वागत और अभिनन्दन किया गया, वे प्रसंग भी हमें साधर्मी वात्सल्य के पावन प्रेरक हैं। गुरुदेवश्री द्वारा भी छोटे-बड़े सभी नगरों और शहरों में धार्मिक जिज्ञासुजनों की आन्तरिक अभिलाषा को लक्ष्यगत कर जो दिव्यदेशना प्रवाहित की गयी, वह गुरुदेवश्री की जगत के सभी जीवों के प्रति अकारण करुणा का परिचायक है। इन तीर्थयात्रा के पावन संस्मरणों से हमें तीर्थयात्रा की प्रायोगिक पद्धति का भी बोध होता है कि तीर्थयात्रा मात्र घूमने-फिरने अथवा आमोद-प्रमोद के लिये किया जानेवाला देशाटनमात्र नहीं है, अपितु वह एक ऐसा मंगल प्रसंग है जो प्रतिसमय हमें हमारे साध्य के स्मरण को तरोताजा रखने के साथ-साथ उसे उपलब्ध करने के लिये ध्येयभूत शुद्धात्मा की आराधना का प्रेरक भी है।

गुरुदेवश्री के वियोग के लगभग 38 वर्ष बाद भी इस ग्रन्थ के अध्ययन से गुरुदेवश्री की साक्षात् उपस्थिति का मधुर अहसास होता है और अनेक प्रेरणाएँ मिलती हैं। यही कारण है कि उनके प्रवचन ग्रन्थों की भाँति ही इस ग्रन्थ का भी प्रकाशन किया जा रहा है। इसके प्रकाशन से गुरुदेवश्री के अन्तरंग में वीतरागी देव-शास्त्र-गुरु एवं उनकी आत्मसाधनास्थलियों, सिद्धभूमियों, पंच कल्याणक भूमियों इत्यादि के प्रति कैसा बहुमान था, इस बात का परिचय होने से यह भ्रम भी प्रक्षालित हो जाता है कि गुरुदेवश्री व्यवहार का लोप करते हैं अथवा उसे उड़ाते हैं। वास्तविकता तो यह है कि साधक-सन्तों के अन्तरंग में ही वीतरागी साधक परिणति के साथ अवशेष रहे हुए प्रशस्त राग के कारण तीर्थयात्रा इत्यादि के प्रसंग अनायास ही बन जाया करते हैं, तथापि उस प्रशस्त राग के प्रति उन सन्तों को किंचित्मात्र भी उपादेयबुद्धि नहीं होती। निश्चित ही साधक के जीवन की यह अद्भुत विशेषता है कि राग के प्रति सर्वथा एकत्वबुद्धि अथवा उपादेयता टूट जाने पर भी

सविकल्पदशा के काल में वीतरागी देव-शास्त्र-गुरु और उनके आयतनों के प्रति जैसा उल्लसित भाव उनके जीवन में देखा जाता है, वैसा अन्यत्र संभव ही नहीं है।

इस मंगल तीर्थयात्रा ग्रन्थ में 2013 की सम्मेदशिखर यात्रा, 2015 की दक्षिणयात्रा के उपरान्त, गिरनार सिद्धक्षेत्र की यात्रा के संस्मरण भी प्रकाशित किये जा रहे हैं, साथ ही गुरुदेवश्री द्वारा कब, कौन-कौन सी यात्राएँ की गयीं, उसका विवरण प्रस्तुत किया गया है। जिनके संस्मरण हमें उपलब्ध हो सके, उन्हें आत्मधर्म के प्राचीन अंकों से इस पुस्तक में समायोजित किया गया है।

मंगल तीर्थयात्रा ग्रन्थ के गुजराती भाषा के लेखक ब्रह्मचारी हरिलाल जैन सोनगढ़ हैं। जिन्होंने पूज्य गुरुदेवश्री के साथ इन यात्राओं का प्रत्यक्ष लाभ लिया है और प्रस्तुत संस्मरण लिखकर कई संस्मरण स्वयं गुरुदेवश्री को पढ़कर सुनाये हैं। उन्होंने जिस भावपूर्वक यह लेखन किया है, वह तीर्थयात्रा को प्रत्यक्षवत् बना देता है, तदर्थ उनके प्रति आभार व्यक्त करता हूँ। इस ग्रन्थ को हिन्दी अनुवाद के लिये विशेष प्रेरणा हेतु बालब्रह्मचारी हेमन्तभाई गाँधी, सोनगढ़ तथा श्री निखिलभाई मेहता, मुम्बई के प्रति भी धन्यवाद ज्ञापित करता हूँ। प्रूफ संशोधन के लिये श्री दीपकभाई का सहयोग भी अविस्मरणीय रहा है।

इस मंगल तीर्थयात्रा ग्रन्थ के हिन्दी अनुवाद के अवसर पर अनेकों बार गुरुदेवश्री के साथ उस तीर्थधाम में विचरण कर रहे हों, ऐसा प्रत्यक्ष अनुभव हुआ है। इसलिए पाठकों से भी विनम्र अनुरोध है कि इसे मात्र यात्रा संस्मरण के रूप में न देखकर साधकों के अन्तरंग में साध्यदशा का उछलता बहुमान और मुमुक्षुता से साधकदशा और साधकदशा से साध्यदशा की मंगल तीर्थयात्रा के रूप में देखें, हम सभी का अवश्य कल्याण होगा।

सभी आत्मार्थी जीव इस मंगल तीर्थयात्रा ग्रन्थ का आद्योपान्त स्वाध्याय कर निज आत्महित साधें, इसी पवित्र भावना के साथ.....

श्रुतपंचमी महापर्व
दिनांक - 18-6-2018

देवेन्द्रकुमार जैन
बिजौलियां, जिला भीलवाडा (राज०)

अध्यात्मयुगसृष्टा पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी

(संक्षिप्त जीवनवृत्त)

भारतदेश के सौराष्ट्र प्रान्त में, बलभीपुर के समीप समागत 'उमराला' गाँव में स्थानकवासी सम्प्रदाय के दशाश्रीमाली वणिक परिवार के श्रेष्ठीवर्य श्री मोतीचन्दभाई के घर, माता उजमबा की कूख से विक्रम संवत् 1946 के वैशाख शुक्ल दूज, रविवार (दिनाङ्क 21 अप्रैल 1890 – ईस्वी) प्रात:काल इन बाल महात्मा का जन्म हुआ।

जिस समय यह बाल महात्मा इस वसुधा पर पधारे, उस समय जैन समाज का जीवन अन्ध–विश्वास, रूढ़ि, अन्धश्रद्धा, पाखण्ड, और शुष्क क्रियाकाण्ड में फँस रहा था। जहाँ कहीं भी आध्यात्मिक चिन्तन चलता था, उस चिन्तन में अध्यात्म होता ही नहीं था। ऐसे इस अन्धकारमय कलिकाल में तेजस्वी कहानसूर्य का उदय हुआ।

पिताश्री ने सात वर्ष की लघुवय में लौकिक शिक्षा हेतु विद्यालय में प्रवेश दिलाया। प्रत्येक वस्तु के ह्रार्द तक पहुँचने की तेजस्वी बुद्धि, प्रतिभा, मधुरभाषी, शान्तस्वभावी, सौम्य गम्भीर मुखमुद्रा, तथा स्वयं कुछ करने के स्वभाववाले होने से बाल 'कानजी' शिक्षकों तथा विद्यार्थियों में लोकप्रिय हो गये। विद्यालय और जैन पाठशाला के अभ्यास में प्राय: प्रथम नम्बर आता था, किन्तु विद्यालय की लौकिक शिक्षा से उन्हें सन्तोष नहीं होता था। अन्दर ही अन्दर ऐसा लगता था कि मैं जिसकी खोज में हूँ, वह यह नहीं है।

तेरह वर्ष की उम्र में छह कक्षा उत्तीर्ण होने के पश्चात्, पिताजी के साथ उनके व्यवसाय के कारण पालेज जाना हुआ, और चार वर्ष बाद पिताजी के स्वर्गवास के कारण, सत्रह वर्ष की उम्र में भागीदार के साथ व्यवसायिक प्रवृत्ति में जुड़ना हुआ।

व्यवसाय की प्रवृत्ति के समय भी आप अप्रमाणिकता से अत्यन्त दूर थे, सत्यनिष्ठा, नैतिज्ञता, निखालिसता और निर्दोषता से सुगन्धित आपका व्यावहारिक जीवन था। साथ ही आन्तरिक व्यापार और झुकाव तो सतत् सत्य की शोध में ही संलग्न था। दुकान पर भी धार्मिक पुस्तकें पढ़ते थे। वैरागी चित्तवाले कहानकुँवर कभी रात्रि को रामलीला या नाटक देखने जाते तो उसमें से वैराग्यरस का घोलन करते थे। जिसके फलस्वरूप पहली बार सत्रह वर्ष की उम्र में पूर्व की आराधना के संस्कार और मङ्गलमय उज्ज्वल भविष्य की अभिव्यक्ति करता हुआ, बारह लाईन का काव्य इस प्रकार रच जाता है —

शिवरमणी रमनार तूं, तूं ही देवनो देव।

उन्नीस वर्ष की उम्र से तो रात्रि का आहार, जल, तथा अचार का त्याग कर दिया था।

सत्य की शोध के लिए दीक्षा लेने के भाव से 22 वर्ष की युवा अवस्था में दुकान का परित्याग करके, गुरु के समक्ष आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत अंगीकार कर लिया और 24 वर्ष की उम्र में (अगहन शुक्ल 9, संवत् 1970) के दिन छोटे से उमराला गाँव में 2000 साधर्मियों के विशाल जनसमुदाय की उपस्थिति में स्थानकवासी सम्प्रदाय की दीक्षा अंगीकार कर ली। दीक्षा के समय हाथी पर चढ़ते हुए धोती फट जाने से तीक्ष्ण बुद्धि के धारक - इन महापुरुष को शंका हो गयी कि कुछ गलत हो रहा है परन्तु सत्य क्या है ? यह तो मुझे ही शोधना पड़ेगा।

दीक्षा के बाद सत्य के शोधक इन महात्मा ने स्थानकवासी और श्वेताम्बर सम्प्रदाय के समस्त आगमों का गहन अभ्यास मात्र चार वर्ष में पूर्ण कर लिया। सम्प्रदाय में बड़ी चर्चा चलती थी, कि कर्म है तो विकार होता है न ? यद्यपि गुरुदेवश्री को अभी दिगम्बर शास्त्र प्राप्त नहीं हुए थे, तथापि पूर्व संस्कार के बल से वे दृढ़तापूर्वक सिंह गर्जना करते हैं — **जीव स्वयं से स्वतन्त्ररूप से विकार करता है; कर्म से नहीं अथवा पर से नहीं। जीव अपने उल्टे पुरुषार्थ से विकार करता है और सुल्टे पुरुषार्थ से उसका नाश करता है।**

विक्रम संवत् 1978 में महावीर प्रभु के शासन-उद्धार का और हजारों मुमुक्षुओं के महान पुण्योदय का सूचक एक मङ्गलकारी पवित्र प्रसंग बना —

32 वर्ष की उम्र में, विधि के किसी धन्य पल में श्रीमद्‌भगवत् कुन्दकन्दाचार्यदेव रचित 'समयसार' नामक महान परमागम, एक सेठ द्वारा महाराजश्री के हस्तकमल में आया, इन पवित्र पुरुष के अन्तर में से सहज ही उद्‌गार निकले — **'सेठ! यह तो अशरीरी होने का शास्त्र है।'** इसका अध्ययन और चिन्तवन करने से अन्तर में आनन्द और उल्लास प्रगट होता है। इन महापुरुष के अन्तरंग जीवन में भी परम पवित्र परिवर्तन हुआ। भूली पड़ी परिणति ने निज घर देखा। तत्पश्चात् श्री प्रवचनसार, अष्टपाहुड़, मोक्षमार्गप्रकाशक, द्रव्यसंग्रह, सम्यग्ज्ञानदीपिका इत्यादि दिगम्बर शास्त्रों के अभ्यास से आपको नि:शंक निर्णय हो गया कि दिगम्बर जैनधर्म ही मूलमार्ग है और वही सच्चा धर्म है। इस कारण आपकी अन्तरंग श्रद्धा कुछ और बाहर में वेष कुछ — यह स्थिति आपको असह्य हो गयी। अत: अन्तरंग में अत्यन्त मनोमन्थन के पश्चात् सम्प्रदाय के परित्याग का निर्णय लिया।

परिवर्तन के लिये योग्य स्थान की खोज करते-करते सोनगढ़ आकर वहाँ 'स्टार ऑफ इण्डिया' नामक एकान्त मकान में महावीर प्रभु के जन्मदिवस, चैत्र शुक्ल 13, संवत् 1991 (दिनांक 16 अप्रैल 1935) के दिन दोपहर सवा बजे सम्प्रदाय का चिह्न मुँह पट्टी का त्याग कर

दिया और स्वयं घोषित किया कि **अब मैं स्थानकवासी साधु नहीं; मैं सनातन दिगम्बर जैनधर्म का श्रावक हूँ।** सिंह-समान वृत्ति के धारक इन महापुरुष ने 45 वर्ष की उम्र में महावीर्य उछाल कर यह अद्‌भुत पराक्रमी कार्य किया।

स्टार ऑफ इण्डिया में निवास करते हुए मात्र तीन वर्ष के दौरान ही जिज्ञासु भक्तजनों का प्रवाह दिन-प्रतिदिन बढ़ता ही गया, जिसके कारण यह मकान एकदम छोटा पड़ने लगा; अतः भक्तों ने इन परम प्रतापी सत् पुरुष के निवास और प्रवचन का स्थल '**श्री जैन स्वाध्याय मन्दिर**' का निर्माण कराया। गुरुदेवश्री ने वैशाख कृष्ण 8, संवत् 1994 (दिनांक 22 मई 1938) के दिन इस निवासस्थान में मंगल पदार्पण किया। यह स्वाध्याय मन्दिर, जीवनपर्यन्त इन महापुरुष की आत्मसाधना और वीरशासन की प्रभावना का केन्द्र बन गया।

दिगम्बर धर्म के चारों अनुयोगों के छोटे बड़े 183 ग्रन्थों का गहनता से अध्ययन किया, उनमें से मुख्य 38 ग्रन्थों पर सभा में प्रवचन किये। जिनमें श्री समयसार ग्रन्थ पर 19 बार की गयी अध्यात्म वर्षा विशेष उल्लेखनीय है। प्रवचनसार, अष्टपाहुड़, परमात्मप्रकाश, नियमसार, पंचास्तिकायसंग्रह, समयसार कलश-टीका इत्यादि ग्रन्थों पर भी बहुत बार प्रवचन किये हैं।

दिव्यध्वनि का रहस्य समझानेवाले और कुन्दकुन्दादि आचार्यों के गहन शास्त्रों के रहस्योद्‌घाटक इन महापुरुष की भवताप विनाशक अमृतवाणी को ईस्वी सन् 1960 से नियमितरूप से टेप में उत्कीर्ण कर लिया गया, जिसके प्रताप से आज अपने पास नौ हजार से अधिक प्रवचन सुरक्षित उपलब्ध हैं। यह मङ्गल गुरुवाणी, देश-विदेश के समस्त मुमुक्षु मण्डलों में तथा लाखों जिज्ञासु मुमुक्षुओं के घर-घर में गुंजायमान हो रही है। इससे इतना तो निश्चित है कि भरतक्षेत्र के भव्यजीवों को पञ्चम काल के अन्त तक यह दिव्यवाणी ही भव के अभाव में प्रबल निमित्त होगी।

इन महापुरुष का धर्म सन्देश, समग्र भारतवर्ष के मुमुक्षुओं को नियमित उपलब्ध होता रहे, तदर्थ सर्व प्रथम विक्रम संवत् 2000 के माघ माह से (दिसम्बर 1943 से) **आत्मधर्म** नामक मासिक आध्यात्मिक पत्रिका का प्रकाशन सोनगढ़ से मुरब्बी श्री रामजीभाई माणिकचन्द दोशी के सम्पादकत्व में प्रारम्भ हुआ, जो वर्तमान में भी गुजराती एवं हिन्दी भाषा में नियमित प्रकाशित हो रहा है। पूज्य गुरुदेवश्री के दैनिक प्रवचनों को प्रसिद्धि करता दैनिक पत्र **श्री सद्‌गुरु प्रवचनप्रसाद** ईस्वी सन् 1950 सितम्बर माह से नवम्बर 1956 तक प्रकाशित हुआ। स्वानुभवविभूषित चैतन्यविहारी इन महापुरुष की मङ्गल-वाणी को पढ़कर और सुनकर हजारों स्थानकवासी श्वेताम्बर तथा अन्य कौम के भव्य जीव भी तत्त्व की समझपूर्वक सच्चे दिगम्बर जैनधर्म के अनुयायी हुए। अरे! मूल दिगम्बर जैन भी सच्चे अर्थ में दिगम्बर जैन बने।

श्री दिगम्बर जैन स्वाध्यायमन्दिर ट्रस्ट, सोनगढ़ द्वारा दिगम्बर आचार्यों और मान्यवर,

पण्डितवर्यों के ग्रन्थों तथा पूज्य गुरुदेवश्री के उन ग्रन्थों पर हुए प्रवचन-ग्रन्थों का प्रकाशन कार्य विक्रम संवत् 1999 (ईस्वी सन् 1943 से) शुरु हुआ। इस सत्साहित्य द्वारा वीतरागी तत्त्वज्ञान की देश-विदेश में अपूर्व प्रभावना हुई, जो आज भी अविरलरूप से चल रही है। परमागमों का गहन रहस्य समझाकर कृपालु कहान गुरुदेव ने अपने पर करुणा बरसायी है। तत्त्वजिज्ञासु जीवों के लिये यह एक महान आधार है और दिगम्बर जैन साहित्य की यह एक अमूल्य सम्पत्ति है।

ईस्वीं सन् 1962 के दशलक्षण पर्व से भारत भर में अनेक स्थानों पर पूज्य गुरुदेवश्री द्वारा प्रवाहित तत्त्वज्ञान के प्रचार के लिए प्रवचनकार भेजना प्रारम्भ हुआ। इस प्रवृत्ति से भारत भर के समस्त दिगम्बर जैन समाज में अभूतपूर्व आध्यात्मिक जागृति उत्पन्न हुई। आज भी देश-विदेश में दशलक्षण पर्व में सैकड़ों प्रवचनकार विद्वान इस वीतरागी तत्त्वज्ञान का डंका बजा रहे हैं।

बालकों में तत्त्वज्ञान के संस्कारों का अभिसिंचन हो, तदर्थ सोनगढ़ में विक्रम संवत् 1997 (ईस्वीं सन् 1941) के मई महीने के ग्रीष्मकालीन अवकाश में बीस दिवसीय धार्मिक शिक्षण वर्ग प्रारम्भ हुआ, बड़े लोगों के लिये प्रौढ़ शिक्षण वर्ग विक्रम संवत् 2003 के श्रावण महीने से शुरु किया गया।

सोनगढ़ में विक्रम संवत् 1997 - फाल्गुन शुक्ल दूज के दिन नूतन दिगम्बर जिनमन्दिर में कहानगुरु के मङ्गल हस्त से श्री सीमन्धर आदि भगवन्तों की पंच कल्याणक विधिपूर्वक प्रतिष्ठा हुई। उस समय सौराष्ट्र में मुश्किल से चार-पाँच दिगम्बर मन्दिर थे और दिगम्बर जैन तो भाग्य से ही दृष्टिगोचर होते थे। जिनमन्दिर निर्माण के बाद दोपहरकालीन प्रवचन के पश्चात् जिनमन्दिर में नित्यप्रति भक्ति का क्रम प्रारम्भ हुआ, जिसमें जिनवर भक्त गुरुराज हमेशा उपस्थित रहते थे, और कभी-कभी अतिभाववाही भक्ति भी कराते थे। इस प्रकार गुरुदेवश्री का जीवन निश्चय-व्यवहार की अपूर्व सन्धियुक्त था।

ईस्वी सन् 1941 से ईस्वीं सन् 1980 तक सौराष्ट्र-गुजरात के उपरान्त समग्र भारतदेश के अनेक शहरों में तथा नैरोबी में कुल 66 दिगम्बर जिनमन्दिरों की मङ्गल प्रतिष्ठा इन वीतराग-मार्ग प्रभावक सत्पुरुष के पावन कर-कमलों से हुई।

जन्म-मरण से रहित होने का सन्देश निरन्तर सुनानेवाले इन चैतन्यविहारी पुरुष की मङ्गलकारी जन्म-जयन्ती 59 वें वर्ष से सोनगढ़ में मनाना शुरु हुआ। तत्पश्चात् अनेकों मुमुक्षु मण्डलों द्वारा और अन्तिम 91 वें जन्मोत्सव तक भव्य रीति से मनाये गये। 75 वीं हीरक जयन्ती के अवसर पर समग्र भारत की जैन समाज द्वारा चाँदी जड़ित एक आठ सौ पृष्ठीय अभिनन्दन ग्रन्थ, भारत सरकार के तत्कालीन गृहमन्त्री श्री लालबहादुर शास्त्री द्वारा मुम्बई में देशभर के हजारों भक्तों की उपस्थिति में पूज्यश्री को अर्पित किया गया।

श्री सम्मेदशिखरजी की यात्रा के निमित्त समग्र उत्तर और पूर्व भारत में मङ्गल विहार ईस्वी सन् 1957 और ईस्वी सन् 1967 में ऐसे दो बार हुआ। इसी प्रकार समग्र दक्षिण और मध्यभारत में ईस्वी सन् 1959 और ईस्वी सन् 1964 में ऐसे दो बार विहार हुआ। इस मङ्गल तीर्थयात्रा के विहार दौरान लाखों जिज्ञासुओं ने इन सिद्धपद के साधक सन्त के दर्शन किये, तथा भवान्तकारी अमृतमय वाणी सुनकर अनेक भव्य जीवों के जीवन की दिशा आत्मसन्मुख हो गयी। इन सन्त पुरुष को अनेक स्थानों से अस्सी से अधिक अभिनन्दन पत्र अर्पण किये गये हैं।

श्री महावीर प्रभु के निर्वाण के पश्चात् यह अविच्छिन्न पैंतालीस वर्ष का समय (वीर संवत् 2461 से 2507 अर्थात् ईस्वी सन् 1935 से 1980) वीतरागमार्ग की प्रभावना का स्वर्णकाल था। जो कोई मुमुक्षु, अध्यात्म तीर्थधाम स्वर्णपुरी / सोनगढ़ जाते, उन्हें वहाँ तो चतुर्थ काल का ही अनुभव होता था।

विक्रम संवत् 2037, कार्तिक कृष्ण 7, दिनांक 28 नवम्बर 1980 शुक्रवार के दिन ये प्रबल पुरुषार्थी आत्मज्ञ सन्त पुरुष — देह का, बीमारी का और मुमुक्षु समाज का भी लक्ष्य छोड़कर अपने ज्ञायक भगवान के अन्तरध्यान में एकाग्र हुए, अतीन्द्रिय आनन्दकन्द निज परमात्मतत्त्व में लीन हुए। सायंकाल आकाश का सूर्य अस्त हुआ, तब सर्वज्ञपद के साधक सन्त ने मुक्तिपुरी के पन्थ में यहाँ भरतक्षेत्र से स्वर्गपुरी में प्रयाण किया। वीरशासन को प्राणवन्त करके अध्यात्म युग सृजक बनकर प्रस्थान किया।

पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी इस युग का एक महान और असाधारण व्यक्तित्व थे, उनके बहुमुखी व्यक्तित्व की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि उन्होंने सत्य से अत्यन्त दूर जन्म लेकर स्वयंबुद्ध की तरह स्वयं सत्य का अनुसन्धान किया और अपने प्रचण्ड पुरुषार्थ से जीवन में उसे आत्मसात किया।

इन विदेही दशावन्त महापुरुष का अन्तर जितना उज्ज्वल है, उतना ही बाह्य भी पवित्र है; ऐसा पवित्रता और पुण्य का संयोग इस कलिकाल में भाग्य से ही दृष्टिगोचर होता है। आपश्री की अत्यन्त नियमित दिनचर्या, सात्विक और परिमित आहार, आगम सम्मत्त संभाषण, करुण और सुकोमल हृदय, आपके विरल व्यक्तित्व के अभिन्न अवयव हैं। शुद्धात्मतत्त्व का निरन्तर चिन्तवन और स्वाध्याय ही आपका जीवन था। जैन श्रावक के पवित्र आचार के प्रति आप सदैव सतर्क और सावधान थे। जगत् की प्रशंसा और निन्दा से अप्रभावित रहकर, मात्र अपनी साधना में ही तत्पर रहे। आप भावलिंगी मुनियों के परम उपासक थे।

आचार्य भगवन्तों ने जो मुक्ति का मार्ग प्रकाशित किया है, उसे इन रत्नत्रय विभूषित सन्त पुरुष ने अपने शुद्धात्मतत्त्व की अनुभूति के आधार से सातिशय ज्ञान और वाणी द्वारा युक्ति और

न्याय से सर्व प्रकार से स्पष्ट समझाया है। द्रव्य की स्वतन्त्रता, द्रव्य-गुण-पर्याय, उपादान-निमित्त, निश्चय-व्यवहार, क्रमबद्धपर्याय, कारणशुद्धपर्याय, आत्मा का शुद्धस्वरूप, सम्यग्दर्शन, और उसका विषय, सम्यग्ज्ञान और ज्ञान की स्व-पर प्रकाशकता, तथा सम्यक्चारित्र का स्वरूप इत्यादि समस्त ही आपश्री के परम प्रताप से इस काल में सत्यरूप से प्रसिद्धि में आये हैं। आज देश-विदेश में लाखों जीव, मोक्षमार्ग को समझने का प्रयत्न कर रहे हैं - यह आपश्री का ही प्रभाव है।

समग्र जीवन के दौरान इन गुणवन्ता ज्ञानी पुरुष ने बहुत ही अल्प लिखा है क्योंकि आपको तो तीर्थङ्कर की वाणी जैसा योग था, आपकी अमृतमय मङ्गलवाणी का प्रभाव ही ऐसा था कि सुननेवाला उसका रसपान करते हुए थकता ही नहीं। दिव्य भावश्रुतज्ञानधारी इस पुराण पुरुष ने स्वयं ही परमागम के यह सारभूत सिद्धान्त लिखाये हैं :—

1. एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का स्पर्श नहीं करता।
2. प्रत्येक द्रव्य की प्रत्येक पर्याय क्रमबद्ध ही होती है।
3. उत्पाद, उत्पाद से है; व्यय या ध्रुव से नहीं।
4. उत्पाद, अपने षट्कारक के परिणमन से होता है।
5. पर्याय के और ध्रुव के प्रदेश भिन्न हैं।
6. भावशक्ति के कारण पर्याय होती ही है, करनी नहीं पड़ती।
7. भूतार्थ के आश्रय से सम्यग्दर्शन होता है।
8. चारों अनुयोगों का तात्पर्य वीतरागता है।
9. स्वद्रव्य में भी द्रव्य-गुण-पर्याय का भेद करना, वह अन्यवशपना है।
10. ध्रुव का अवलम्बन है परन्तु वेदन नहीं; और पर्याय का वेदन है, अवलम्बन नहीं।

इन अध्यात्मयुगसृष्टा महापुरुष द्वारा प्रकाशित स्वानुभूति का पावन पथ जगत में सदा जयवन्त वर्तो!

तीर्थङ्कर श्री महावीर भगवान की दिव्यध्वनि का रहस्य समझानेवाले शासन स्तम्भ श्री कहानगुरुदेव त्रिकाल जयवन्त वर्तो!!

सत्पुरुषों का प्रभावना उदय जयवन्त वर्तो!!!

❖ ❖ ❖

श्री सद्‌गुरुदेव-स्तुति

(हरिगीत)

संसारसागर तारवा जिनवाणी छे नौका भली,
ज्ञानी सुकानी मळ्या विना ए नाव पण तारे नहीं;
आ काळमां शुद्धात्मज्ञानी सुकानी बहु बहु दोह्यलो,
मुज पुण्यराशि फळ्यो अहो! गुरु कहान तुं नाविक मळ्यो।

(अनुष्टुप)

अहो! भक्त चिदात्माना, सीमंधर-वीर-कुंदना।
बाह्यांतर विभवो तारा, तारे नाव मुमुक्षुनां।

(शिखरिणी)

सदा दृष्टि तारी विमळ निज चैतन्य नीरखे,
अने ज्ञप्तिमांही दरव-गुण-पर्याय विलसे;
निजालंबीभावे परिणति स्वरूपे जई भळे,
निमित्तो वहेवारो चिद्‌घन विषे कांई न मळे।

(शार्दूलविक्रीडित)

हैयु 'सत सत, ज्ञान ज्ञान' धबके ने वज्रवाणी छूटे,
जे वज्रे सुमुमुक्षु सत्त्व झळके; परद्रव्य नातो तूटे;
- रागद्वेष रुचे न, जंप न वळे भावेंद्रिमां-अंशमां,
टंकोत्कीर्ण अकंप ज्ञान महिमा हृदये रहे सर्वदा।

(वसंततिलका)

नित्ये सुधाझरण चंद्र! तने नमुं हुं,
करुणा अकारण समुद्र! तने नमुं हुं;
हे ज्ञानपोषक सुमेघ! तने नमुं हुं,
आ दासना जीवनशिल्पी! तने नमुं हुं।

(स्त्रग्धरा)

ऊंडी ऊंडी, ऊंडेथी सुखनिधि सतना वायु नित्ये वहंती,
वाणी चिन्मूर्ति! तारी उर-अनुभवना सूक्ष्म भावे भरेली;
भावो ऊंडा विचारी, अभिनव महिमा चित्तमां लावी लावी,
खोयेलुं रत्न पामुं, - मनरथ मननो; पूरजो शक्तिशाळी!

सूची पत्रक

स्थान	पृष्ठ
मंगल प्रस्थान	1
सोनगढ़ से मुम्बई	4
मुम्बई नगरी में	26
मुम्बई से मंगल प्रस्थान	31
भीवंडी शहर	34
गजपंथा सिद्धक्षेत्र	35
मांगी-तुंगी सिद्धक्षेत्र	40
धूलिया शहर	53
बढ़वानी सिद्धक्षेत्र	55
पावागिरि-ऊन सिद्धक्षेत्र	67
खण्डवा शहर	74
सनावद	78
सिद्धवरकूट जाने पर नौका विहार	80
सिद्धवरकूट सिद्धक्षेत्र की यात्रा	87
इन्दौर शहर	104
उज्जैन शहर	120
मक्षी पारसनाथ, सारंगपुर	123
ब्यावर और राघवगढ़	124
भोपाल शहर	127
कुरान, नरसिंहगढ़	128
ब्यावर, राघवगढ़	129
गुना शहर	130
बदरवास-कोलारस-सेसई-शिवपुरी	132
झाँसी नगरी	133
थुवौनजी, चन्देरी	134
देवगढ़	136
बबीना, तालहखेट, ललितपुर	137
सोनागिरि सिद्धक्षेत्र	139
ग्वालियर-लश्कर	150
धौलपुर	154
आगरा शहर	155
शौरीपुर तीर्थधाम (बटेश्वर)	160
मथुरा सिद्धक्षेत्र	167
फिरोजाबाद	177
मैनपुरी	182
कानपुर	186
लखनऊ शहर	187
रत्नपुरी तीर्थधाम की यात्रा	190
अनन्त तीर्थंकरों की शाश्वत् जन्मभूमि अयोध्यापुरी तीर्थ	193
तीर्थधाम बनारस	213
चन्द्रपुरी तीर्थधाम की यात्रा	215
सिंहपुरी तीर्थधाम की यात्रा	216
पार्श्व-जन्मधाम की यात्रा	219
सुपार्श्व-जन्मधाम की यात्रा	222
डालमियानगर	230
आरानगर (जैनपुरी)	236
सिद्धक्षेत्र पटना शहर	242
राजगृहीनगरी	247
राजगृही तीर्थधाम—सिद्धिधाम की यात्रा	250
कुण्डलपुर तथा नालन्दा	272
पावापुरी सिद्धिधाम	274
पावापुरी सिद्धिधाम की यात्रा	277
गौतमधाम गुणावा सिद्धक्षेत्र	289
गया शहर	292
सम्मेदशिखर धाम में	295
सम्मेदशिखर—शाश्वत् सिद्धिधाम मंगल तीर्थयात्रा	312

स्थान	पृष्ठ
चम्पापुरी–मन्दारगिरि तीर्थधाम	376
मन्दारगिरि सिद्धिधाम की यात्रा	379
शिखरजी की छाया–मधुवन में	382
ऋजुवालिका के तीर	388
जमशेदपुर, झरीआ तथा धनबाद	392
कोलकाता शहर	394
खण्डगिरि–उदयगिरि तीर्थ की यात्रा	398
कोलकाता की रथयात्रा	406
कोलकाता से दिल्ली की ओर	412
हस्तिनापुर तीर्थधाम की यात्रा	414
दिल्ली शहर में	417
सहारनपुर	419
अलवर, आमेर	420
जयपुर	421
अलीगढ़–टोंक	424
अजमेर	425
लाडनू	429
सुजानगढ़, कुचामन, किशनगढ़	430
ब्यावर, शिवगंज, जावाल	431
आबू	432
जावाल में पुनरागमन	433
जावाल से तारंगा	435
तारंगा सिद्धिधाम	436
तारंगा सिद्धिधाम की यात्रा	437
अहमदाबाद	441
तीर्थधाम सोनगढ़ में	442
मंगल तीर्थयात्रा का उपसंहार	444

ॐ

परमात्मने नमः

मंगल तीर्थयात्रा

(प्रथम विभाग)

वीर संवत २४८३ (विक्रम संवत् २०१३) पूज्य श्री कानजीस्वामी ने सवा सात सौ यात्रियों के विशाल संघ सहित की हुई सम्मेदशिखरजी इत्यादि तीर्थधामों की मंगल यात्रा के पवित्र संस्मरण

卐 मंगल प्रस्थान 卐

स... म्मे... द...शि... ख... र...! जिसके दर्शन करने पर अनन्त सिद्ध भगवन्तों का स्मरण होता है... और सिद्धपद को साधनेवाले तीर्थंकरों तथा सन्तों का समूह स्मृति समक्ष तैरता हुआ अपने को मोक्षमार्ग की प्रेरणा जागृत करता है... ऐसे इस सिद्धिधाम की यात्रा, वह मुमुक्षु जीवन का एक आनन्दमय प्रसंग है। रत्नत्रयतीर्थ प्रवर्तक तीर्थंकरों और उनके साधक-सन्त जिस भूमि में विचरे... और उन तीर्थस्वरूप सन्तों के पवित्र चरणों के प्रताप से जिस भूमि का रजकण-रजकण पावन तीर्थरूप से पूज्य बना है... ऐसी भारत की इस शाश्वत् तीर्थभूमि की मंगल यात्रा करने के लिए अनेक भक्तों के हृदय तरस रहे थे... जहाँ से मात्र इस चौबीसी के बीस तीर्थंकर और 1648,00012317173475 मुनिवर मोक्ष को प्राप्त हुए, उस मोक्षभूमि में गुरुदेव के साथ विचरने को सब उत्सुक थे और बारम्बार निवेदन करते थे कि 'हे गुरुदेव! जिस प्रकार आप सिद्धि का मार्ग दर्शाते हो, उसी प्रकार वह सिद्धिधाम भी दिखलाओ...'

गुरुदेव के अन्तर में भी इस सम्मेदशिखरजी तीर्थधाम के साक्षात्कार की ऊर्मियाँ जागृत होती थी... संवत् 2012 के श्रावण शुक्ल एकम की शाम भक्तों को बुलाकर आपश्री ने संघसहित सम्मेदशिखरजी की यात्रार्थ पधारने की स्वीकृति प्रदान की...

गुरुदेव के श्रीमुख से यह मंगल बधाई सुनकर भक्त अति प्रसन्न हुए.. सोनगढ़ में और भारत भर में जगह-जगह हर्ष छा गया। जैसे सिद्धपद प्राप्त करने से पहले भी साधक के हृदय में उसके आनन्द के भनकार आ जाते हैं, उसी प्रकार गुरुदेव के साथ सिद्धिधाम की यात्रा का निर्णय होते ही, अभी यात्रा करने से पहले भी भक्तों के हृदय में यात्रा का हर्ष छा गया... और आनेवाले इस धन्य अवसर के लिए सब आतुर बन गये।

संवत् 2013 के कार्तिक शुक्ल 9 से 12 तक सोनगढ़ के नूतन भव्य जिनमन्दिर में भगवान **श्री नेमिनाथ जिनेन्द्र** की वेदी प्रतिष्ठा का महोत्सव महा उल्लास और भक्तिपूर्वक मनाया गया... तत्पश्चात् शाश्वत् तीर्थराज के साक्षात्कार की जोरदार तैयारियों में दो दिन तो शीघ्रता से व्यतीत हो गये... कार्तिक शुक्ल चतुर्दशी के प्रवचन में भावभीने उद्गार से गुरुदेव ने कहा—देखो, अब कल तो सम्मेदशिखरजी की यात्रा के लिए जाना है। अनन्त तीर्थंकर वहाँ से मोक्ष प्राप्त हुए हैं। भगवन्त जिस मार्ग से मोक्ष को प्राप्त हुए, उसी मार्ग का भगवन्तों ने उपदेश दिया है। हे सर्वज्ञपिता! आप कहनेवाले... और हम झेलनेवाले... आपने कहा, उसे झेलकर हम भी आपके पदचिह्नों पर आपके मार्ग में चले आ रहे हैं।

कार्तिक शुक्ल पूर्णिमा... रविवार... अष्टाह्निका का मंगल दिन

अहा! आज का प्रभात अनोखा है... पूज्यश्री कहान गुरुदेव सम्मेदशिखरजी इत्यादि तीर्थधामों की यात्रा के लिए आज सोनगढ़ से मंगल प्रस्थान कर रहे हैं। मानो कि सिद्धिधाम आवाज दे-देकर सन्त भक्तों को बुला रहा है... प्रकृति का सौन्दर्य मानो कि आनन्द का उत्सव मना रहा है... और भक्तजनों के हृदय में हर्ष का सागर उल्लसित हो रहा है... स्वर्णसूर्य गुरुदेव के मंगल पथ में कुमकुम वर्षा कर रहा है...

प्रात:काल के पहर में श्री कहान गुरु, **परमोपकारी श्री सीमन्धर भगवान** के दर्शन करने पधारे... मानो कि प्रिय पुत्र, पिताजी के समीप मंगल यात्रा के लिए विदाई लेने आया... गुरुदेव भावभीने चित्त से हाथ जोड़कर बारम्बार सीमन्धर प्रभु को नमस्कार कर रहे थे... और उस समय भक्तजन पंच परमेष्ठी भगवान की मंगल स्तुति बोल रहे थे।

सीमन्धर प्रभु के दर्शन के पश्चात् गुरुदेव जिनमन्दिर के ऊपर के भाग में नेमिनाथ भगवान के दर्शन को आये... वैराग्य रस में झूल रहे उन नाथ को घड़ी भर निहारा... और उनकी मुद्रा में से प्रवाहित वैराग्य के प्रपात द्वारा हृदय को पावन किया। पश्चात् आये समवसरण में... वहाँ सीमन्धर प्रभु को और कुन्दकुन्दाचार्य प्रभु को नयनभर निहारकर...

'प्रभु जी तारा पगले पगले मारे आववुं रे...'

—इत्यादि गाते-गाते भक्तों ने गुरुदेव के साथ-साथ प्रदक्षिणा की। उस समय भक्तों के हृदय में ऐसी भावना हो रही थी कि 'अहा! भगवान के पन्थ में गुरुदेव विचर रहे हैं... और हम भी गुरुदेव के पदचिह्नों पर उसी पन्थ में जा रहे हैं।' अन्त में मानस्तम्भ के दर्शन करके गुरुदेव स्वाध्यायमन्दिर में आकर विराजमान हुए।

दूसरी ओर पूज्य बहिनश्री-बेन और महिला समाज यात्रा के मंगलगीत गाते-गाते आ पहुँचे... और

आनन्द मंगल आज हमारे... आनन्द मंगल आज जी...
गुरुदेव साथे यात्रा करतां... आनन्द नो नहीं पारजी...
शाश्वत् तीर्थनी यात्रा करतां आतम उल्लसी जायजी...

इत्यादि प्रकार से मंगल गीत गाते-गाते स्वाध्यायमन्दिर की प्रदक्षिणा की। तत्पश्चात् सकल संघ ने गुरुदेव के दर्शन-स्तुति करके यात्रा की सफलता की भावना भायी। यात्रा के निमित्त से मांगलिक में गुरुदेव ने कहा—**'प्रत्येक आत्मा स्वभाव चतुष्टय से परिपूर्ण है... उसे पहिचानकर और व्यक्त करके अनन्त जीव सिद्धपद को प्राप्त हुए हैं। अनन्त तीर्थंकर अपने स्वभाव चतुष्टय प्रगट करके सम्मेदशिखर धाम से मोक्ष पधारे... उनकी यात्रा करने के लिए यह विहार होता है।'** इतना कहकर मुमुक्षुओं के अपार हर्ष और जय-जयकार के बीच '**ॐ अनन्त चतुष्टय स्वरूपाय नमः**' ऐसे मंगल वचनपूर्वक श्री कहान गुरुदेव ने शाश्वत् सिद्धिधाम के प्रति शीघ्रता से पवित्र कदम बढ़ाये।

सिद्ध भगवन्तों को और सिद्धिपन्थ पथिक गुरुदेव को नमस्कार हो!

सोनगढ़ से मुम्बई

गुरुवर यात्रा करवा काज विचरे मंगलकारी...
गुरुवर प्रतिष्ठा करवा काज विचरे मंगलकारी...
गुरुवरनो विहार जय जयकार... विचरे मंगलकारी...

सम्मेदशिखरजी की यात्रा और पालेज में प्रतिष्ठा के निमित्त पूज्य गुरुदेव के इस मंगल प्रस्थान प्रसंग में स्वर्णपुरी के वातावरण में आनन्द और उल्लास छा गया था... सब भक्त हर्ष और जय-जयकारपूर्वक मंगल विदाई दे रहे थे... चलते, चलते ब्रह्मचर्याश्रम के पास आने पर गुरुदेव घड़ी भर रुक गए... भक्त आश्चर्य में पड़ गए... वहाँ तो मानस्तम्भ के ऊपर के भगवान के सामने नजर करके गुरुदेव बोले! 'देखो! भगवान कैसे दिखते हैं!'

— यह दृश्य देखकर सबको आनन्द हुआ। गुरुदेव भावपूर्वक हाथ जोड़कर भगवान को निहार रहे थे... मानो कि यात्रा के लिए जाते-जाते भगवान से विदाई की आज्ञा ले रहे थे... और भगवान मंगल आशीर्वादपूर्वक विदाई देते थे।

चौक में मांगलिक सुनाकर गुरुदेव ने वल्लभीपुर की ओर प्रस्थान किया... बीच में झाड़ियों और पहाड़ियों के रमणीय दृश्य देखते हुए शिखरजी धाम के दृश्य स्मरण आ रहे थे... विहार में गुरुदेव के साथ रहनेवाले भक्त (ब्रह्मचारी भाई इत्यादि) मार्ग में शिखरजी को स्मरण कर-करके उमंगपूर्वक गा रहे थे कि—

चालो... चालो, सौ हलीमलीने आज सम्मेदशिखर जइये...
चालो... चालो, श्री गुरुदेवनी साथ... सम्मेद-यात्रा करीये...
चालो... चालो, साधकसंतोनी साथ... मंगलयात्रा करीये...

—इस प्रकार आनन्दपूर्वक विहार करके 10.00 बजे वल्लभीपुर पहुँचे।

★ ★ ★

पूज्य गुरुदेव के वल्लभीपुर पधारने पर वहाँ के ठाकुर साहेब श्री प्रवीणसिंहजी इत्यादि ने सम्मान किया। प्रवचन में राजकुटुम्बसहित लगभग हजार लोगों ने लाभ लिया। रात्रि को तत्त्वचर्चा में गुरुदेव ने मानसिक आनन्द और अतीन्द्रिय आनन्द के बीच भेद समझाया। गुरुदेव के साथ यात्रा प्रवास के इस पहले ही दिन 'गुरुदेव के साथ यात्रा में आत्मलाभ की प्राप्ति होओ', इत्यादि तार-सन्देश मिलने से भक्तों को हर्ष हुआ।

कार्तिक कृष्ण एकम् को वल्लभीपुर से पाटण की ओर जाते हुए बीच में मूलधराई गाँव में नयी पाठशाला के उद्घाटन प्रसंग में गुरुदेव ने सच्ची अध्यात्म विद्या का स्वरूप समझाया। वहाँ से पाटण पहुँचने पर ग्राम्य जनता ने उमंगपूर्वक स्वागत किया। पहले से ही भक्तों की भावना थी कि मानो कोई महान आचार्य और मुनियों के सहवास में विचरते हों - ऐसी उत्तम भावना से गुरुदेव के साथ यह मंगल यात्रा करना है। गुरुदेव की समीपता आत्महित की प्रेरणाएँ जागृत करती थीं। सन्ध्या के उपशान्त वातावरण में सरोवर के किनारे टहल रहे गुरुदेव को देखते हुए मानो आनन्द सरोवर के किनारे चैतन्य हंस केलि कर रहा हो - ऐसा दृश्य लगता था।

कार्तिक कृष्ण 2-3 के दिन पूज्य गुरुदेव पाटण से बरवाला पधारे... बरवाला धाम में भक्तों ने उमंग भरा स्वागत किया। मंगल प्रवचन में गुरुदेव ने कहा कि—**आत्मा का आनन्द वह उत्कृष्ट मंगल है... जिस भाव से आत्मा को आनन्द प्रगट हो, वह मंगल है.. और जिन जीवों ने ऐसा आनन्द प्रगट किया, वे भी मंगलरूप हैं।** बरवाला में पूज्य बहिनश्री-बहिन भी पधारी थीं।

बरवाला से पूज्य गुरुदेव पोलारपुर पधारे थे और भीमनाथ के महन्त के यहाँ भी गुरुदेव का स्वागत-सम्मान हुआ था। कार्तिक कृष्ण पंचमी को गुरुदेव धंधुका पधारे। शाश्वत् सिद्धिधाम में पहुँचने के ध्येयपूर्वक गुरुदेव के साथ विहार करते हुए भक्तों को आनन्द हो रहा था। पूज्य गुरुदेव जहाँ-जहाँ पधारते, वहाँ-वहाँ लोगों को ऐसा लगता कि 'अहा! पूज्य कानजीस्वामी सम्मेदशिखरजी की यात्रा को जाते-जाते हमारे आँगन पधारें - ऐसा लाभ हमें कहाँ से!' गुरुदेव के प्रवचन भी उल्लासकारी थे... प्रतिदिन सम्मेदशिखरजी तीर्थ को स्मरण करके गुरुदेव उसकी महिमा समझाते थे। धंधुका के प्रवचन में गुरुदेव ने कहा कि — **सम्मेदशिखर धाम से अनेक जीव सिद्धि को प्राप्त हुए**

हैं, उसके नीचे शाश्वत् स्वस्तिक 卐 है... जैसे वे सिद्धिगत जीव हैं, वैसा ही मेरा आत्मा है, उसे पहिचानकर... हे जीव! सम्यग्ज्ञान द्वारा तेरे आत्मा में मांगलिक के स्वस्तिक पूर।

★ ★ ★

कार्तिक कृष्ण छठवीं को धंधुका से फेदरा की ओर प्रस्थान किया। अब सौराष्ट्र देश के बाहर भाल प्रदेश में आये... प्रवास में घनी झाड़ियों के मध्य से गमन करते समय सम्मेदशिखर की घनी झाड़ियाँ स्मरण हो रही थीं। भाल प्रदेश में मार्गदर्शक के बिना नहीं चलता। अपने को तो इस संसाररूपी भाल प्रदेश में से बाहर निकलकर सिद्धिधाम में पहुँचाने के लिए पूज्य गुरुदेव ही अपने मार्गदर्शक-भोमिया हैं और हम आपश्री के पदचिह्नों पर उनके साथ जाना है, ऐसी भावनाएँ होती थीं। बीच में खडोल गाँव में थोड़ी देर रुके, वहाँ एक सेठ ने गुरुदेव का सम्मान किया। जिसका नाम भी नहीं सुना हो, ऐसे एकदम अनजाने गाँव में भी गुरुदेव का स्वागत करनेवाला कोई न कोई सज्जन निकल आता था।—वास्तव में धर्मात्मा का पुण्य प्रभाव क्या नहीं करता!

खडोल होकर फेदरा पधारे। यहाँ दोपहर को प्रवचन में गुरुदेव ने वैराग्यमय दृष्टान्तपूर्वक सुन्दर उपदेश प्रदान किया।

कार्तिक कृष्ण सप्तमी को फेदरा से भोलाद गाँव की ओर जाते हुए बीच में ॐकार नदी आयी, तब भक्तों को विदेहक्षेत्र की ॐकार नदी के प्रवाह का स्मरण हुआ। उस ॐकार के आनन्द जल की मिठास के समक्ष इस ॐकार नदी का जल शर्माकर खारा हो जाता था। जैसे खारे संसार को छोड़कर मुनिवर चैतन्य के आनन्द अमृत का आस्वाद लेते हैं; - उसी प्रकार खारे पानी की नदी छोड़कर गुरुदेव के साथ तीर्थयात्रा के आनन्द का स्वाद लेने के लिए सब आगे बढ़ गये। गुरुदेव के साथ ज्ञान नौका में बैठकर झटपट भवसागर को तिरें... ऐसी सबकी भावना थी।

★ ★ ★

साबरमति नौका विहार

कार्तिक कृष्ण अष्टमी : आज भोलाद से गोलाणा जाते हुए बीच में नौका विहार का प्रसंग आने से सबको हर्ष था... प्रभात के उपशान्त वातावरण में गुरुदेव के साथ वन-जंगल के बीच से विहार करते हुए चित्त प्रफुल्ल था। गुरुदेव बारम्बार सम्मेदशिखरजी धाम को स्मरण करते और उस पावन तीर्थ का नाम सुनते ही थके हुए भक्तों के कदमों में नया जोश आता था। बीच में 'मोटीबोर' नामक गाँव आया। वहाँ से आगे जाने के लिए अब नौका द्वारा साबरमति पार करने का अवसर आया। गुरुदेव के साथ नौका में बैठने को सब हर्षित होकर चल दिये... नदी के किनारे का दृश्य सुन्दर था। महाविशाल नदी पट और समुद्र को मिलने जा रही नदी के छाती सम नीर... मानो कि महापुरुष को मार्ग कर देने के लिए नदी का नीर भी स्तम्भित हो जाता हो - ऐसा शान्त-स्थिर बहाव था। नदी के किनारे नौका तैयार खड़ी थी। गुरु कहान को सुकानी (नाविक) बनाकर हम सब नौका में बैठे.... सुकानी के उच्च स्थान में गुरुदेव विराजमान हुए। जीवन में पहली ही बार नौका में बैठे हुए गुरुदेव को निहारकर बहुत आनन्द हुआ। भक्तों के आनन्द कल्लोल बीच थोड़ी देर में नौका चलने लगी। अहा! जीवन में पहली ही बार नौका विहार! गुरुदेव बहुत ही प्रसन्न थे और सबको आनन्द कराते थे। गुरुदेव के साथ नौका विहार करते हुए बालकों को भी ऐसा लगता था कि अहा! धन्य जीवन... कि भवसागर से पार करनेवाले गुरुदेव जैसे नाविक मिले। नाव सर-सर करती हुई गमन करती है और भक्त गाते हैं-

चली रे... चली रे... गुरु नाव चली रे....
चली रे चली... भव पार चली रे...

लगभग आधे पहुँचे... चारों ओर पानी... पानी! गुरुदेव के नेतृत्व में नौका चलती जाती है। बस, अब तो संसार से पार उतरकर गुरुदेव के साथ-साथ मुक्तिपुरी में जा रहे हैं... उसकी साक्षीरूप से चलती हुई नौका में गुरुदेव के हस्ताक्षर कराये :

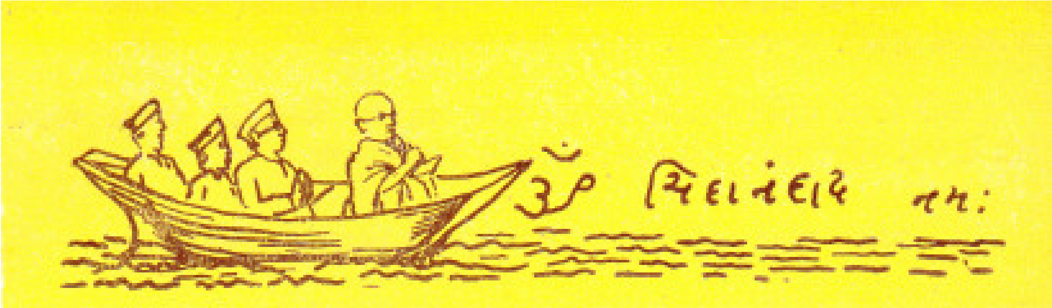

मने हवे गमे नहीं संसार... मारे जावुं पेले पार...
मने हवे गमे नहीं संसार... गुरुजी! लई जाओ पेले पार...

—इस प्रकार गाते-गाते, तारणहार गुरुदेव के साथ नौका विहार करके सामने किनारे पहुँचे.. और आनन्दमय नौका विहार के समाचार सोनगढ़ पहुँचाये। किनारे आने के बाद गुरुदेव प्रसन्नता से नौका विहार की चर्चा करते थे।

नौका विहार से साबरमति पार करके गोलाणा पहुँचे। यहाँ सेठ अमृतलाल नरसीभाई के स्वर्गवास के समाचार आने से वातावरण में स्तब्धता छा गयी थी।

कार्तिक कृष्ण 9 के दिन गोलाणा से अठारह मील का विहार करके खम्भात नगर आये। यहाँ एक प्राचीन दिगम्बर जिनमन्दिर में अनेक प्राचीन प्रतिमाएँ विराजमान हैं, उन्हें देखते ही प्राचीन समय में इस नगर की जैनधर्म की प्रतिष्ठा का ख्याल आता है। सोनगढ़ से विहार करने के बाद पहले-पहले जिनेन्द्रदर्शन यहाँ हुए। मन्दिर में मूलनायक विमलनाथ भगवान हैं। दर्शन के बाद गुरुदेव ने विमलनाथ भगवान का स्तवन गवाया; बहिनश्री-बहिन ने भी 'विमल दर्शन मलि गयु...' इत्यादि भक्ति करायी। तत्पश्चात् श्रीमद् राजचन्द्रजी की स्वाध्यायशाला देखने गये थे। दूसरे दिन पूज्य गुरुदेव 'वडवा' श्रीमद् राजचन्द्र आश्रम में पधारे। इस प्रसंग में बाहर से सैकड़ों जिज्ञासु आये थे। इसलिए आश्रम का वातावरण जीवन्त, जागृत और प्रफुल्लित लगता था। गुरुदेव ने पूरे आश्रम का अवलोकन किया, जिस वड़ के नीचे श्रीमद् राजचन्द्र वांचन करते थे वह वड़ देखा, तथा दूसरे अनेक स्थान देखे। दोपहर को श्रीमद् राजचन्द्र के एक पत्र पर प्रवचन करते हुए '**निज पद की प्राप्ति, वही अनेकान्त का फल है**'—यह बात गुरुदेव ने समझायी थी। रात्रि को बेनश्री-बेन ने भक्ति करायी थी।

कार्तिक कृष्ण 11 : पूज्य गुरुदेव खम्भात से बोरसद पधारे। आज का प्रवास आनन्दकारी था क्योंकि पूज्य बहिनश्री–बहिन आज हमारी बस में थीं और विविध भक्ति करा रही थीं... इसलिए यात्रासंघ जैसा ही वातावरण था। बोरसद में आदिनाथ भगवान का जिनमन्दिर है, वहाँ दर्शन आदि किये। एक गृहचैत्य में स्फटिक के अजितनाथ भगवान के भी दर्शन किये। दोपहर को प्रवचन में गुरुदेव ने सम्यग्दर्शन की अद्भुत बात समझायी थी।

दूसरे दिन गुरुदेव अगास पधारे। आज भी पूज्य बहिनश्री–बहिन हमारी बस में बैठे होने से भक्ति इत्यादि द्वारा बालकों को आनन्द कराती थीं...

चालो चालो सौ हलीमलीने आज... सम्मेदशिखर जईये...
शुं छे? शुं छे? सम्मेदशिखर मोझार... सम्मेदशिखर जईये...
त्यां छे... त्यां छे... शाश्वत सिद्धिनां धाम... सम्मेदशिखर जईये...
त्यां छे... त्यां छे... अनंत तीर्थंकर धाम... सम्मेदशिखर जईये....

चालो चालो सौ भक्तजनों तमे आज... राजगृहीमां जईये...
शुं छे? शुं छे? ये राजगृही मोझार... राजगृहीमां जईये...
त्यां छे... त्यां छे... श्री वीरप्रभु दरबार... राजगृहीमां जईये...
त्यां छे... त्यां छे... श्री दिव्यध्वनिनां धाम... राजगृहीमां जईये...

—इस प्रकार सम्मेदशिखर, राजगृही, पावापुरी इत्यादि तीर्थों को आनन्दपूर्वक स्मरण करते–करते अगास आ पहुँचे। यहाँ ऊपर के भाग में श्री चन्द्रप्रभ भगवान का दिगम्बर जिनमन्दिर है। गुरुदेव ने आते ही श्री चन्द्रप्रभ इत्यादि भगवन्तों के दर्शन किये। तत्पश्चात् श्रीमद् राजचन्द्रजी के इस पूरे आश्रम का और आसपास के स्थानों का अवलोकन किया। दोपहर को विशाल स्वाध्यायशाला में मंगल प्रवचन किया। अगास में पूज्य गुरुदेव पधारने पर आस–पास से भी सैकड़ों जिज्ञासु आये थे, इसलिए वातावरण जीवन्त, जागृत और प्रसन्नतामय बन गया था। धर्मात्मा जिस भूमि पर विचरे हों, उस भूमि के प्रति भी धर्मात्मा को कितना स्नेह आता है! वह यहाँ दृष्टिगोचर हो रहा था। दूसरे दिन सवेरे श्री चन्द्रप्रभ भगवान के दर्शन करके गुरुदेव फिर से बोरसद पधारे... बीच में झाड़ियों के रमणीय दृश्य देखकर प्रसन्नता होती है। गुरुदेव के पधारने पर बोरसद में भक्तों ने स्वागत

किया। दोपहर को गुरुदेव श्रीमद् राजचन्द्रजी की स्वाध्यायशाला में पधारे और वहाँ मंगल प्रवचन किया।

बोरसद के पश्चात् वासद होकर बीच में महीसागर का नया पुल उलंघकर छाणी गाँव में आये। वहाँ चन्द्रप्रभ भगवान के दर्शन किये... दूर-दूर पावागढ़ सिद्धक्षेत्र के भी दर्शन होते थे। यहाँ सुन्दर स्वागत हुआ था।

मागसर शुक्ल एकम को पूज्य गुरुदेव बड़ोदरा (बडोदा) शहर पधारे... श्री जैनसंघ ने धूमधाम से स्वागत किया। यहाँ दो जिनमन्दिर हैं, वहाँ दर्शन किये। चन्द्रप्रभस्वामी के मन्दिर में पार्श्वनाथ प्रभु की धातु की प्रतिमा भी सुन्दर है। दूसरे मन्दिर में आदिनाथ तथा शान्तिनाथ भगवान विराजमान हैं। इस शहर में दिगम्बर जैनों के अस्सी घर हैं। शहर के बीच 'सुखसागर' नाम का सरोवर देखकर 'आनन्दसागर' का स्मरण होता है। यहाँ के संग्रहालय में अनेक प्राचीन दिगम्बर जिनबिम्ब हैं। गुरुदेव के प्रवचन में लगभग हजार शिक्षित लोग आते थे। प्रवचन के बाद प्रोफेसर नरसिंहभाई ने भाषण द्वारा गुरुदेव का उपकार तथा सोनगढ़ के ब्रह्मचर्याश्रम इत्यादि की महिमा व्यक्त की थी। गुरुदेव के बड़ोदरा (बडोदा) में आगमन सम्बन्धी सरस अहेवाल (प्रवास सम्बन्धित संक्षिप्त वर्णन) प्रसिद्ध करते हुए यहाँ के दैनिक 'लोकसत्ता' ने लिखा था कि ***'जिनकी मुद्रा के दर्शन होने पर मानो कोई आध्यात्मिक वातावरण में आये हों - ऐसा लगता है।.....'*** रात्रि को सम्यक्त्व महिमा सम्बन्धी सुन्दर तत्त्वचर्चा हुई।

बड़ोदरा में दो दिन रहकर मगसर शुक्ल तृतीया को गुरुदेव इटोला गाँव में पधारे। यहाँ विद्यामन्दिर के शिक्षकों की प्रार्थना से एक विशाल पीपल की छाया में 'बालकों को कैसे संस्कार डालना' - तत्सम्बन्धी सुन्दर प्रवचन गुरुदेव ने किया; उस समय का दृश्य बहुत सुन्दर था।

विशाल कॉलेज के प्रोफेसर और प्रारम्भिक शिक्षा ग्रहण करते बालकों, ये सब एक साथ बैठकर प्रवचन सुनते थे। प्राचीन समय में वन में मुनिवर - आचार्य उपदेश प्रदान करते थे, उन प्रसंगों का यहाँ स्मरण होता था। गुरुदेव ने प्रवचन में कहा कि 'बालकों को बालवय से ही आत्मज्ञान के संस्कार डालने योग्य है और वही सच्ची विद्या है, क्योंकि

'सा विद्या या विमुक्तये'। गुरुदेव का बालोपयोगी प्रवचन सुनकर प्रोफेसर भी प्रमुदित हुए।

मगसर शुक्ल चौथ को गुरुदेव इटोला से मियांगाँव पधारे, भक्तों ने उमंग से स्वागत किया; जिनेन्द्रदेव के दर्शन किये। दोपहर को श्रृंगारिक मण्डप में प्रवचन हुआ। दूसरे दिन गुरुदेव पालेज पधारे।

★ ★ ★

पालेजपुरी में प्रतिष्ठा महोत्सव

पूज्य गुरुदेव के पालेजपुरी में पधारने पर भक्त मण्डल ने उल्लासपूर्वक स्वागत किया। छोटी उम्र में व्यापार करते थे तब गुरुदेव लगभग दस वर्ष पालेज रहे थे। इसलिए यहाँ के मुमुक्षु सेठ श्री कुँवरजीभाई, आनन्दजीभाई इत्यादि ने रुपये चालीस हजार के खर्च से यहाँ दिगम्बर जिनमन्दिर बनाया है, उसकी प्रतिष्ठा का महोत्सव गुरुदेव की मंगल छाया में मनाया गया। पालेज का मनमोहक जिनमन्दिर तथा अनन्तनाथ, सीमन्धरनाथ इत्यादि जिनभगवन्तों की मुद्रा निहारते हुए गुरुदेव के हृदय में आनन्द की ऊर्मियाँ जागृत होती थीं। 13 से 22 वर्ष की वय तक गुरुदेव यहाँ पालेज की दुकान में बैठते थे, उनके बड़े भाई श्री खुशालचन्दभाई भी यहाँ व्यापार करते थे। उनके भागीदार कुँवरजीभाई अभी भी पालेज में दुकान चलाते हैं। मगसर शुक्ल सप्तमी को गुरुदेव उस हाटड़ी (छोटी दुकान) के धड़ा (गल्ले, कैशियर के बैठने का स्थान) पर बैठे हुए और भक्तों ने हाटड़ी में भक्ति की, तब गुरुदेव ने 'खोली हांट सुज्ञान की' यह दृश्य तादृश हुआ और सैकड़ों हजारों ग्राहक उस ज्ञान हाटड़ी में उमड़े थे।

मगसर शुक्ल 8 से 11 तक वेदी प्रतिष्ठा महोत्सव मनाया गया... ढाई द्वीप मण्डल विधान, इन्द्र प्रतिष्ठा, यागमण्डल विधान, जलयात्रा, वेदी शुद्धि इत्यादि विधि-विधान के पश्चात् बहुत उल्लासपूर्वक गुरुदेव ने पावन हस्त से अनन्तनाथ भगवान को भक्ति से वेदी पर विराजमान किया। ऊपर के भाग में अभिनन्दन भगवान की प्रतिष्ठा करने की बोली श्री खुशालचन्दभाई की धर्मपत्नी गंगाबेन ने, मोतीचन्द गीगाभाई के नाम से ली थी और मोतीचन्दभाई के सुपुत्र कहान गुरुदेव ने बहुत भक्तिपूर्वक भगवान को वेदी पर विराजमान किया था। तदुपरान्त शान्तिनाथ, सीमन्धरनाथ, पार्श्वनाथ और अरनाथ भगवन्तों की भी प्रतिष्ठा हुई थी, और गुरुदेव इत्यादि ने हीरा-माणिक रत्नों से भगवान का बहुमान किया था। पास में 'ज्ञानज्योति मन्दिर' में श्री समयसारजी की स्थापना हुई थी।

शुक्ल दसमी के दिन स्टेशन पर एक वेगन आया; वेगन में क्या सामान आया है ? यह देखने के लिए भक्त गये और देखा तो वेगन में से हाथी उतर रहा था। प्रतिष्ठा महोत्सव के लिए बड़ोदरा (बड़ौदा) से वेगन में हाथी आया था। प्रतिष्ठा के बाद हाथी के ऊपर

भव्य रथयात्रा निकली, गजराज के ऊपर जिनराज अतिशय शोभित हो रहे थे। सायंकाल हाथी ने पैर में घुंघरू बाँधकर नृत्य किया, सूँड़ से वाद्ययन्त्र बजाया और पुष्पमाला से सम्मान किया। रात्रि को जिनमन्दिर में पूज्य बहिनश्री-बहिन ने अद्‌भुत भक्ति करायी थी।—इस प्रकार गुरुदेव की मंगल छाया में पालेज में भव्य प्रतिष्ठा महोत्सव मनाया गया।

मगसर शुक्ल बारस के प्रातःकाल अनन्तनाथ भगवान की स्तुति करके और अभिनन्दनस्वामी का अभिनन्दन करके गुरुदेव ने पालेज से भरुच की ओर प्रस्थान किया। भरुच में पालेज से अनेक भक्त आये थे। रात्रि को बहुत सरस तत्त्वचर्चा हुई थी, उसमें सम्यग्दर्शन और जातिस्मरणज्ञान इत्यादि का स्वरूप गुरुदेव ने सुन्दर रीति से समझाया था।

सम्मेदशिखरजी इत्यादि तीर्थधामों की यात्रा के लिए विचरते हुए गुरुदेव जहाँ-जहाँ पधारते हैं, वहाँ-वहाँ आत्मा और परमात्मा की चर्चा का नाद गूँज उठता है और उस नगरी का वातावरण अध्यात्ममय बन जाता है; सैकड़ों और हजारों लोग गुरुदेव के श्रीमुख से जैनधर्म का पावन सन्देश सुनकर बहुत प्रसन्न होते हैं। इस प्रकार कल्याण की वर्षा करते-करते गुरुदेव मंगल तीर्थयात्रा के लिए विचर रहे हैं।

मगसर शुक्ल तेरह के दिन भरुच से अंकलेश्वर तथा सजोद की ओर प्रस्थान किया। भरुच के पास नर्मदा नदी के ऊपर एक मील लम्बा पुल आया, गुरुदेव के साथ उस पुल को लांघते हुए मानो सम्यक्त्वरूपी सेतू द्वारा इस भवसागर को ही लांघते हों - ऐसी भावनाएँ जागृत होती थी। पश्चात् जैसे-जैसे अंकलेश्वर नजदीक आता गया, वैसे-वैसे धरसेनाचार्य और पुष्पदन्त-भूतबलि मुनिवर स्मृति समक्ष तैरने लगे। आहाहा! महान श्रुतधर सन्त जिस भूमि में विचरे हों, उस भूमि में गुरुदेव के साथ जाते-जाते उस सन्त त्रिपुटि का स्मरण होता है और मानो कि अभी भी ऐसी ही सन्त त्रिपुटि के साथ विचरण कर रहे हों, ऐसा आनन्द होता है। जिस भूमि में महान श्रुतधर सन्त पूर्व में विचरे हों, उस भूमि में अपूर्व श्रुतधर वर्तमान सन्तों के साथ विचरते हुए सम्यक् श्रुत की तीव्र भावनाएँ जागृत होती हैं। बीच-बीच में हजारों ताड़ वृक्ष के वन के सुन्दर दृश्य देखकर वनवासी सन्तों के प्रति सहज भक्ति की ऊर्मियाँ जागृत होती हैं और ताड़ वृक्ष से पूछ लिया जाता है कि—

मने को ने पुष्पदंत स्वामी केवा हशे!
मने को ने भूतबलि स्वामी केवा हशे!
केवा हशे, क्यां रहेता हशे!
क्यां रहेता हशे, शुं करता हशे!.... मने०

और मानो कि वे वृक्ष जवाब देते हैं—

अहीं रहेता हता, ध्यान धरता हता,
ने आगमनी रचना करता हता....
— ये मुनिभगवंतो ऐवा हता।

इस प्रकार मुनिवरों का स्मरण और भक्तिपूर्वक विचरते हुए साढ़े सात बजे अंकलेश्वर आये, वहाँ से सीधे सजोद गाँव में शीतलनाथ भगवान के दर्शन करने गये। बीच में गुरुदेव कहते हैं - 'सज्जोत' (सत् की जोत) यहाँ प्रगटी इसलिए 'सज्जोत' नाम होगा और उसका अप्रभंश सजोद हो गया होगा! 'अंकलेश्वर' नाम के सम्बन्ध में भी ऐसा कहा कि अंक यहाँ लिखे - शास्त्र यहाँ अंकित हुए, इसलिए अंकलेश्वर नाम पड़ा होगा! या पश्चात् में मुनिवर अक्ल के ईश्वर (श्रुतज्ञान के समुद्र) थे, उससे अंकलेश्वर नाम पड़ा होगा!'

'शीतलधाम' सजोद

09.00 बजे सजोद में आते ही भगवान शीतलनाथ प्रभु के दर्शन किये। विपत्ति काल में रक्षा के लिए प्रतिमाजी को भोंयरा में विराजमान किये हुए हैं। भोंयरा में प्रवेश करके जिनमुद्रा के दर्शन करते ही गुरुदेव 'जय भगवान' कहते हुए भगवान के सन्मुख घड़ी भर आश्चर्य से स्थिर हो गये। यह शीतलनाथ भगवान की प्रतिमा अत्यन्त सौम्य वीतरागमुद्राधारी और बहुत प्राचीन है। मानो चौथे काल की हो, ऐसी लगती है और सन्मुख बैठते ही आत्मध्यान की प्रेरणा जागृत होती है। प्रतिमा की कला भी विशिष्ट है और भोंयरा का वातावरण शीतल है। उपशान्त-शीतल वातावरण में शीतलनाथ भगवान का बहुत भक्तिभाव से गुरुदेव ने अवलोकन किया। प्रसन्नता से बारम्बार भावपूर्वक

भगवान को सर्वांग से निहारा... थोड़ी देर ध्यान धरकर भगवान के सन्मुख बैठ गये और पश्चात् स्तवन मंजरी पृष्ठ 190 में से शीतलनाथ भगवान की स्तुति करायी—

सहेजे शीतल शीतल जिन तणी
शीतल वाणी रसाळ जिणंदजी...
वदनचंद्र बरास अधिक सुणी,
समझे बाल-गोपाल जिणंदजी... सहेजे शीतल०

★ ★ ★

भव दव ताप निवारो नाथजी!
द्यो शीतलता रे सार जिणंदजी...
श्री जिनराज तणो दास कहे,
जिम लहुं सुख अपार जिणंदजी... सहेजे शीतल०

गुरुदेव भक्ति गवाते थे, वहाँ बहिनश्री-बहिन भी अंकलेश्वर से आ पहुँचीं। गुरुदेव ने भाव से स्तवन गवाया और सब भक्तों ने झेला। भक्ति के बाद गुरुदेव ने प्रतिमाजी की सातिशयता की ओर समस्त भक्तों का ध्यान आकृष्ट करते हुए कहा—**'देखो! भगवान की मुद्रा कैसी अद्‌भुत है! सामने बैठने पर मानो कि ध्यान की प्रेरणा जागृत करती है।'** इस प्रकार भगवान के दर्शन से गुरुदेव को और समस्त भक्तों को बहुत हर्षोल्लास हुआ। दर्शन और स्तुति के बाद पूज्य बहिनश्री-बहिन इत्यादि सब हाथ में अर्घ्य लेकर भगवान को चढ़ा रहे थे। वहाँ गुरुदेव को भी भगवान की पूजा करने की भावना जागृत हुई और हाथ में अर्घ्य लेकर भगवान को चढ़ाया। यह दृश्य देखकर सबको आनन्दाश्चर्य हुआ और इन शीतलनाथ भगवान की विशेषता में यह एक वृद्धि हुई कि गुरुदेव ने जीवन में 67 वर्ष में पहली ही बार अर्घ्य चढ़ाने की शुरुआत यहाँ से की। गुरुदेव कहते थे कि 'इस भगवान के दर्शन किये और अर्घ्य चढ़ाया, यह प्रसंग याद रह जाएगा।'

इस प्रकार सम्मेदशिखरजी तीर्थधाम की यात्रा के लिए जाते-जाते बीच में सजोद गाँव में गुरुदेव के साथ आनन्दपूर्वक शीतलनाथ भगवान के दर्शन-स्तवन और पूजन करके सब अंकलेश्वर आये।

★ ★ ★

श्रुतधाम अंकलेश्वर

11.30 बजे पूज्य गुरुदेव के अंकलेश्वर पधारने पर भक्त मण्डल ने बैण्ड-बाजा सहित स्वागत किया। यह अंकलेश्वर वह '**श्रुतभूमि**' है। परम्परा से भगवान वर्धमान तीर्थंकर की दिव्यवाणी के साथ सम्बन्ध रखता हुआ जो अपूर्व श्रुतज्ञान धरसेनाचार्यदेव ने गिरनार की गुफा में पुष्पदन्त और भूतबलि मुनिवरों को प्रदान किया था, उस श्रुत रचना की पूर्णता यहाँ हुई थी और सर्वज्ञ की वाणीरूप ऐसा महान श्रुत टिका रहा, उसके हर्षोपलक्ष्य में चतुर्विध संघ ने ज्येष्ठ शुक्ल पंचमी के दिन श्रुतज्ञान की पूजा का बहुत बड़ा उत्सव यहाँ आयोजित किया था। ऐसी इस पावन श्रुतभूमि में महान श्रुतप्रभावक श्री कहान गुरु पधारे।

अंकलेश्वर गाँव में लगभग बीस हजार की आबादी है, दिगम्बर जैनों के लगभग बीस घर हैं और चार जिनमन्दिर हैं। दोपहर में पूज्य गुरुदेव जिनमन्दिरों के दर्शन के लिए पधारे। पहले जिनमन्दिर के भोंयरा में अत्यन्त प्राचीन और विशाल पार्श्वनाथ प्रभु की प्रतिमा थी। भक्ति से भगवान को पुष्पांजलि चढ़ायी। यहाँ दूसरी भी अनेक प्रतिमाएँ थीं। उनमें मुनिराज की खड्गासन प्रतिमा भी (हाथ में कमण्डल, मोरपिच्छी सहित) थी; तदुपरान्त पुलाक, वकुश, निर्ग्रन्थ इत्यादि मुनि चरणों की स्थापना थी। दूसरा पुराना खण्डहर वैभव भी बहुत था। जिससे प्राचीन काल में यहाँ की धार्मिक प्रतिष्ठा कैसी थी, उसका ख्याल आता था।

पहले मन्दिर में दर्शन करके गुरुदेव दूसरे मन्दिर में पधारे। इस मन्दिर के भोंयरा में आदिनाथ भगवान के अति प्राचीन और कलामय प्रतिमा के दर्शन किये। तीसरे मन्दिर में कमलासन से मानो चार अंगुल ऊँचे विराजते हों, ऐसे चौमुखी भगवान का सुन्दर दृश्य था, और बगल में छोटी-सी चरणपादुका थी। कितनी ही प्रतिमा तो अत्यन्त छोटी मात्र पाव इंच की थी। वहाँ दर्शनादि करके चौथे मन्दिर में आये। यह मन्दिर महावीर भगवान का है और यह यहाँ का मुख्य मन्दिर गिना जाता है। श्री भूतबलिस्वामी ने श्रुतरचना (षट्खण्डागम) की पूर्णता यहीं की थी – ऐसा कहा जाता है। मन्दिर के एक प्राचीन चित्र में देवों द्वारा आचार्य-मुनिराज की पूजा का दृश्य है, सम्भव है कि श्रुतरचना की समाप्ति प्रसंग में भूतबलि महाराज की पूजा का वह दृश्य हो। मन्दिर में महावीर भगवान

की प्रतिमाजी विराजमान है। एक गोख में शासनस्तम्भ की स्थापना है, परन्तु उसके पीछे का हेतु क्या है - इस सम्बन्ध में कुछ इतिहास या जानकारी प्राप्त नहीं होती। मन्दिर में स्फटिक के चौमुखी इत्यादि अनेक प्रतिमाएँ थीं। प्रतिमाजड़ित एक चाँदी की अँगूठी भी थी—वे भक्त कैसे वृत्तिप्रधान होंगे कि जिन्होंने यह बनाया होगा! गुरुदेव ने यह अँगूठी हाथ में लेकर देखी और सबको बतलायी। इस प्रकार गुरुदेव के साथ अंकलेश्वर के चारों जिनमन्दिरों के दर्शन किये और श्रुतधर सन्तों के साथ श्रुतभूमि के वैभव के दर्शन करने से सबको आनन्द हुआ। गुरुदेव के साथ श्रुतधाम निहारते हुए बहिनश्री-बहिन प्रसन्नता से कहती हैं कि—बस, अब यहाँ से यात्रा की शुरुआत हुई। वस्तुतः श्रुतधर सन्तों की यह पावनभूमि उन्हें बहुत प्रिय लगती थी। जिस भूमि में श्रुत का महान उत्सव मनाया गया और जहाँ महान श्रुतधर सन्त-मुनिवर विचरे हैं, उस श्रुतभूमि में आज गुरुदेव जैसे श्रुतधर सन्तों को विचरते देखकर सब भक्त बहुत आनन्दित हो रहे थे... और धरसेन-पुष्पदन्त-भूतबलि जैसी श्रुतधर त्रिपुटी के प्रति हृदय नम्रीभूत हो पड़ता था।

सौराष्ट्रमांथी लावेलुं श्रुतज्ञान संतोये ज्यां शास्त्रारूढ़ कर्युं...
ने ज्यां श्रुतज्ञाननो मोटो उत्सव उज्वायो ऐवी
पावन श्रुतभूमिनी गुरुदेव साथेनी यात्रा अमने भावश्रुत आपो...

जिनमन्दिर के दर्शन के पश्चात् दोपहर में गुरुदेव का अद्भुत प्रवचन हुआ... शुद्धात्मा की अनुभूति करना वह सर्व श्रुत का सार है—यह बात समझाकर गुरुदेव ने श्रुतधाम में श्रुत का रहस्य स्पष्ट किया। तत्पश्चात् जिनमन्दिर में भक्ति हुई। महावीर भगवान की स्तुति के पश्चात् जिनवाणी माता की और आचार्य-भगवन्तों की बहुत ही भावभीनी भक्ति बहिनश्री-बेन ने करायी।

जय जिनवाणी जय जिनवाणी जय जिनवाणी माता...
महिमा तोरी अगम अपारा हम नहिं पावे पारा... जय०

जय धवलराज जय धवलराज जय धवलराज देवा...
जय धरसेन जय भूतबलि जय श्री पुष्पदन्त देवा... जय०

अंकलेश्वरमां अंक लखाया महिमा अपरम्पारा...
अंकलेश्वरमां आगम लखाया महिमा अपरम्पारा... जय०

इन्द्रनरेन्द्रे मुनिवर पूज्या वन्दन आज अमारा...
इन्द्रनरेन्द्रे शास्त्रो पूज्या महिमा अपरम्पारा... जय०

ऐसे मुनिवर कैसे देखुं शास्त्रो रचे अपारा...
अंकलेश्वर को तीर्थ बनाया धन धन ऐ मुनिराया... जय०

स्वानुभूति आनन्द के झूले तुं झुलावनहारी...
आतमगीत सुनाकर माता! निंद नशावनहारी... जय०

लालन पालन करती माता बोधि समाधि दाता...
बालक तारा मुक्ति पामे ऐवी मारी माता... जय०

तुज हैयानां हार्द प्रकाशे गुरुवर कहान हमारा...
महिमा सारी जगमां फैलावे ऐवा नन्दन तारा... जय०

इस प्रकार श्रुतधाम में भगवती माताओं ने जिनवाणी माताजी की अद्‌भुत भक्ति करायी और श्रुतभूमि की यात्रा का कार्यक्रम समाप्त हुआ।

श्रुतधर सन्तों को और श्रुतदेवी माता को नमस्कार हो

श्रुतधाम की यात्रा करानेवाले श्रुतदातार कहान गुरुदेव को नमस्कार हो।

★ ★ ★

मगसर शुक्ल चतुर्दशी के सवेरे गुरुदेव ने अंकलेश्वर से कीम की ओर प्रस्थान किया। अंकलेश्वर भूमि में विचरे हुए और विचरते हुए सन्तों के जीवन का स्मरण करते–करते और आत्महित की भावना भाते–भाते गुरुदेव के साथ अंकलेश्वर भूमि में से विहार हुआ। अंकलेश्वर के आसपास के क्षेत्र में आज भी लाखों ताड़ वृक्ष इस बात की साक्षी देते हुए खड़े हैं कि मुनिवरों ने यहाँ ताड़पत्रों में शास्त्र लिखे थे। अंकलेश्वर के पश्चात् कोशाम्बा गाँव आया, वहाँ से रवाना होकर दस बजे कीम पहुँचे।

मगसर पूर्णिमा के दिन गुरुदेव कीम से सूरत शहर में पधारे। गुरुदेव का सत्कार करने के लिए सूरत अति उत्साहित हो रहा था.... गुरुदेव के पधारने से मानो सूरत शहर की सूरत ही बदल गयी... जैन जनता ने उमंग भर भव्य स्वागत किया। सूरत अनेक जिनमन्दिरों से शोभित प्राचीन और विशाल शहर है। चन्दावाड़ी में दो जिनमन्दिर हैं, एक

मन्दिर तीन मंजिला है, उसके तीनों मंजिल में चन्द्रप्रभ इत्यादि भगवन्त विराजमान हैं, बगल के दूसरे मन्दिर में शान्तिनाथ इत्यादि भगवन्त विराजते हैं। दोनों मन्दिरों में दर्शन करके गुरुदेव ने अर्घ्य चढ़ाया। गुरुदेव का प्रवचन बीसेन्ट हॉल में हुआ था, डेढ़ हजार से अधिक श्रोताजनों से हॉल भरचक भरा हुआ था। प्रवचन के पश्चात् गुरुदेव नवापुरा इत्यादि के जिनमन्दिरों के दर्शनार्थ पधारे। एक मन्दिर में पार्श्वनाथ प्रभु (चिन्तामणि), तथा अनेक चौबीसी भगवन्त विराजते हैं, भोंयरा में शीतलनाथ इत्यादि भगवन्त विराजते हैं। दूसरा वासुपूज्य भगवान का मन्दिर है। इस प्रकार अनेक जिनमन्दिरों के दर्शन किये। रात्रि चर्चा बड़ी सुन्दर चली थी और विध-विध अनेक प्रश्न चर्चित हुए थे। चर्चा में गुरुदेव की उत्तर देने की शैली से श्रोताजन प्रभावित हुए थे।

गुरुदेव सूरत शहर में दो दिन रुके थे। सूरत के दिगम्बर जैन समाज ने उत्साहपूर्वक मेहमानों का सम्मान किया था। सेठ मूलचन्द किशनदास कापड़िया, तथा धीरजलाल हरजीवन (फावाभाई) इत्यादि ने सुन्दर व्यवस्था सम्हाली थी। दूसरे दिन सवेरे सूरत से तीन मील दूर कतार गाँव में पूज्य गुरुदेव और सब भक्तजन पहुँचे। वहाँ श्री कुन्दकुन्दस्वामी, धरसेन-पुष्पदन्त-भूतबलिस्वामी, जम्बूस्वामी, रविषेणस्वामी, अकलंकस्वामी, जयसेनस्वामी, जिनसेनस्वामी, योगीन्दुस्वामी, विद्यानन्दिस्वामी इत्यादि सन्तों के चरण-कमल की स्थापना है। आम के वृक्षों इत्यादि से रमणीय मानो मुनियों का धाम हो, ऐसा सुन्दर स्थान है। मानो मुनियों का मेला भरा हो, ऐसे 75 चरणपादुका से यह स्थान शोभित हो रहा है। गुरुदेव एक के बाद एक मुनिचरणों के दर्शन-स्पर्शन करके अर्घ्य चढ़ाते जा रहे थे, सर्व प्रथम पहला अर्घ्य चढ़ाया श्री कुन्दकुन्द प्रभु के चरण में—

कुन्दकुन्द प्रभु चरण कमल पर बलिबलि जाऊँ मन-वच-काय,
हे करुणानिधि भवदुःख मेटो, यातें में पूजुं तुम पाय,

—इस प्रकार अनेक मुनिवरों की स्तुतिपूर्वक हीरा-माणिक मिश्रित अर्घ्य चढ़ाते-चढ़ाते अन्त में एक विशाल शिलापट में टंकोत्कीर्ण सम्मेदशिखरधाम का दृश्य निहारते हुए सबको प्रसन्नता हुई, क्योंकि सम्मेदशिखर धाम तो यात्रा का ध्येय है। अपने ध्येय को निहारकर किसे प्रसन्नता नहीं होगी ?

इस उपशान्त धाम में बहिनश्री-बहिन ने मुनिवरों की भावभीनी भक्ति करायी थी।

जय मुनीश्वर जय मुनीश्वर जय मुनीश्वर देवा,
वन जंगल के वासी तुम हो आत्मस्वरूप के ध्याता;
रत्नत्रय के धारक तुम हो रत्नत्रय के दाता,
कहानगुरु की साथे आकर दर्शन तारा पाया... जय...

—इस प्रकार भक्ति करते-करते सब वापस सूरत आये और बड़े जिनमन्दिर में दर्शन-पूजन किये। दोपहर को कितने ही प्रोफेसर इत्यादि विद्वान गुरुदेव के पास चर्चा करने आये। गुरुदेव ने गम्भीरता से कहा : देखो भाई! यह अकेले शास्त्र के शब्दों की बात नहीं है, यह तो भगवान के पास से आयी हुई और अनुभव से सिद्ध हुई अपूर्व चीज़ है। जिसे कल्याण करना हो, उसे यह समझना ही पड़ेगा। ऐसा कहकर सोनगढ़ इत्यादि सम्बन्धी किंचित् इतिहास भी कहा था, जिसे सुनकर सब आनन्दित हुए थे। दोपहर को गुरुदेव के प्रवचन के पश्चात् जिनमन्दिर के ऊपर के भाग में भक्ति हुई थी।

विद्वान भाईश्री हिम्मतलाल जे. शाह अनेक वर्ष सूरत में रहे हैं और पूज्य बहिनश्री चम्पाबेन भी संवत् 1989-90 में कुछ महीने सूरत रहीं थी। हिम्मतलालभाई के अनेक प्रोफेसर मित्र मिलने आये, आत्मार्थिता तथा आनन्द सम्बन्धी सुन्दर अध्यात्म चर्चा सुनकर वे अत्यन्त प्रसन्न हुए। जिसे आत्मा की वास्तविक धगश जगे और वास्तविक रंग लगे, उसकी स्थिति कैसी होती है, आत्मा के आनन्द का अनुभव कैसा होता है, वह अनुभव किस प्रकार होता है, जिसे आनन्द का अनुभव हुआ हो, वे सन्त किस प्रकार पहिचाने जाते हैं—इत्यादि विषयों की अति सुन्दर चर्चा हुई थी। रात्रिचर्चा में गुरुदेव ने आत्मा के शान्तरस का-समकिती के आनन्द का अद्भुत वर्णन किया था।

—इस प्रकार सूरत शहर का दो दिन का कार्यक्रम पूर्ण हुआ। गुरुदेव के पधारने से अच्छी प्रभावना हुई और 'जैनमित्र' इत्यादि पत्रों में उसकी भावपूर्ण नोंध प्रसिद्ध हुई।

★ ★ ★

मगसर कृष्ण दूज के जल्दी सवेरे जिनेन्द्रदेव के दर्शन करके गुरुदेव ने सूरत से पलसाणा गाँव की ओर प्रस्थान किया। विदाई प्रसंग का दृश्य सुन्दर-भाववाही था। पूज्य बहिनश्री-बहिन इत्यादि सूरत से ट्रेन द्वारा मुम्बई के लिए रवाना हुईं।

सूरत से पलसाणा की ओर विहार में सूरत की आनन्द चर्चाएँ बहुत बार स्मरण आती थीं। हरियाली प्रदेश, सवेरे का शान्त वातावरण, गुरुदेव के साथ सिद्धिधाम के प्रति विहार और आनन्द प्राप्ति की भावनाएँ—यह सब सुयोग था। 'कब उस आनन्द का अनुभव पायेंगे! धन्य इन सन्तों की निर्विकल्प आनन्ददशा! अपने भी धन्य भाग्य हैं कि ऐसे सन्तों की छत्रछाया प्राप्त हुई'—ऐसी-ऐसी भावनाओंपूर्वक गुरुदेव के साथ आनन्द से प्रवास करते हुए पलसाणा पहुँचे। पलसाणा से नवसारी होकर कृष्ण चौथ को चीखली पहुँचे। यहाँ के समाज के छब्बीस अग्रेसरों के हस्ताक्षर से एक स्वागतपत्रिका प्रकाशित हुई थी। दोपहर को धूमधाम से गुरुदेव का स्वागत करके थियेटर में लाए और वहाँ प्रवचन हुआ। थियेटर में प्रवचनसभा का दृश्य आकर्षक था। प्रवचन में गुरुदेव ने 'आत्मा अनादि से संसार में क्यों भटका और अब वह मुक्ति कैसे प्राप्त करे?'—यह दर्शाकर जीव का नाटक समझाया था। छह सौ से ज्यादा शिक्षित श्रोताजनों से थियेटर हॉल भरचक था—किसी भी खेल के समय थियेटर में इतनी सभा इकट्ठी नहीं हुई होगी। प्रवचन के पश्चात् वहाँ के हेडमास्टर श्री जैन ने भाषण द्वारा गुरुदेव की महिमा बतलायी और कहा कि—***गुरुदेव ने जो अन्तरंग आनन्द बतलाया है वह अपने को प्राप्त करनेयोग्य है।*** यहाँ कमलपत्र से ढँका हुआ सुन्दर सरोवर है। किसी-किसी समय उसमें हजार पंखुड़ीवाला कमलपुष्प होता है - ऐसा वहाँ के लोग कह रहे थे।

मगसर कृष्ण पंचमी को चीखली से वलसाड आये। 'गीता सदन' में निवास था। दोपहर को प्रवचन में लगभग पाँच सौ प्रतिष्ठित लोग आये थे, एक भाई ने स्वागत भाषण किया और पुष्पहार से सम्मान किया। यहाँ एक सद्गृहस्थ के यहाँ गृहचैत्यालय में पार्श्वनाथ भगवान विराजमान हैं, वहाँ गुरुदेव के साथ सबने दर्शन किये। रात्रि में सुन्दर तत्त्वचर्चा हुई थी। यहाँ आम, चीकू, और केला बहुत पकते हैं, कमलपत्र से आच्छादित सरोवर यहाँ भी है।

मगसर कृष्ण छठवीं को वलसाड से वापी गाँव आये। यह आदिवासी लोगों का प्रदेश है। यहाँ का रहन-सहन अपने को माफिक नहीं आता। दूसरे दिन (सप्तमी-अष्टमी शामिल) तलासरी आये। गुजरात देश में से अब महाराष्ट्र में प्रवेश किया। भाषा भी मराठी शुरु हो गयी। यहाँ का प्रदेश बहुत घने जंगलों और झाड़ियों से आच्छादित है। सम्मेदशिखरजी

तीर्थधाम की यात्रा के लिए वन-जंगल के प्रदेशों में गुरुदेव के साथ विचरते हुए बारम्बार आहारदान का भी लाभ प्राप्त होता था और इससे आनन्द होता था। यहाँ तलासरी गाँव में वन-विहार का सुन्दर प्रसंग बना।

तलासरी में वन-विहार

घने जंगलों के बीच बसा हुआ तलासरी गाँव...

आज मगसर कृष्ण अष्टमी, अर्थात् कुन्दकुन्द प्रभु की आचार्यपदवी का मंगल दिवस।

दोपहर को गुरुदेव निकट के जंगल में घूमने गये, जंगल के एकान्त वातावरण में उन्हें वनवासी मुनिवरों का स्मरण हुआ... कुन्दकुन्द प्रभु याद आये.. ध्यान की प्रेरणा जागृत हुई... थोड़ी देर वहाँ बैठे और वापिस आकर बात की कि 'वन बहुत सरस! मुझे तो वहाँ बैठे रहने का मन हुआ; मुनिवरों के रहने को और ध्यान करने का स्थान सरस है।' गुरुदेव की यह बात सुनकर सबको गुरुदेव के साथ वह वन देखने का मन हुआ, इसलिए गुरुदेव ने कहा कि शाम को वहाँ जाएँगे।

दोपहर को विद्यालय के बालकों ने गुरुदेव का सम्मान किया। शाम को शीघ्रता से भोजनविधि निपटाकर सब गुरुदेव के साथ वन में गये। गुरुदेव प्रसन्नता से वन-जंगल के दृश्य बतलाते जा रहे थे, चिरौंजी इत्यादि के वृक्षपत्र बतलाते थे और सन्त मुनिवरों को स्मरण कर रहे थे। वन का उपशान्त और गम्भीर दृश्य देखकर गुरुदेव बारम्बार कहते कि मुनि ऐसे स्थान में रहे। मुनि रहे, ऐसा यह वन है। मुनियों को दूसरा तो काम होता नहीं, ऐसे वन में ध्यान में स्थित होते हैं, चलते-चलते एक सुन्दर स्थान आया वहाँ सब बैठ गये। गुरुदेव एक वृक्ष के नीचे चटाई पर बैठे और आसपास लगकर दूसरे सब बैठे।

गुरुदेव कहने लगे—**ध्यान धरने का मन हो जाए ऐसा स्थान है।** सब शान्ति से बैठे रहे... गुरुदेव आँख बन्द करके बैठ गये... थोड़ी देर में ढलती आँखों से वैराग्य झरती वाणी से बोले कि '**ज्ञान में संसार नहीं है; ज्ञान में शान्ति है। ज्ञान में आनन्द है, परन्तु ज्ञान में संसार नहीं है।**' वन के प्राकृतिक वातावरण में गुरुदेव बहुत प्रसन्न थे। गुरुदेव ज्ञान-वैराग्य की भावना में झूल रहे थे और गुरुदेव के चरण में सबको शान्ति और प्रसन्नता हो रही थी।

गुरुदेव को ऐसा लगा कि अहो! यहाँ रहकर ध्यान करें ऐसा मन होता है। शरीर की शक्ति नहीं, नहीं तो यहीं रुक जाएँ, यहीं सोवे और सवेरे जल्दी उठकर परमतत्त्व का ध्यान करें। इस वन में किसी-किसी समय बाघ आता है, परन्तु मुनियों को सिंह-बाघ का भय कैसा? वे तो अपने ध्यान की धुन में स्थित होते हैं! अन्दर आनन्द में स्थित हैं वहाँ जगत को देखने में कहाँ रुकें? पश्चात् गुरुदेव की आज्ञा होने पर हम ब्रह्मचारी भाई निम्न वैराग्य भजन बोले—

जंगल वसाव्युं लेगीअे तजी तनडानी आश जी....
वात न गमे रे आ विश्वनी माठे पहोर उदासजी... जंगल०

त्याग की बात आने पर गुरुदेव कहते हैं : अहा! चक्रवर्ती छह खण्ड और छियानवें-छियानवें हजार रानियों को छोड़कर ऐसे वन में चले जाते हैं। वैराग्य की धुन चढ़ने पर सब छोड़कर वन में आत्मा के ध्यान में बैठ जाते हैं। इस प्रकार गुरुदेव बहुत भाव से सन्त-मुनियों को याद करते थे। हाथी के हौदे चढ़कर चलनेवाले, वैराग्य होने पर वह सब छोड़कर चल निकले और पैरों में जूती भी नहीं रखी, वस्त्र का धागा भी नहीं रखा-यह बात आने पर गुरुदेव वैराग्य भरपूर चेष्टा द्वारा मानो कि यह प्रसंग अभी बन रहा हो ऐसा दिखलाते थे और कहते—अहो! धन्य उन चक्रवर्ती के वैराग्य का प्रसंग! और धन्य वह मुनिदशा! 'उसे करूँ नमन जी' - ऐसा बोलते हुए गुरुदेव के साथ सबने हाथ जोड़कर उन सन्तों को नमस्कार किया।

कुन्दकुन्द प्रभु की आचार्य पदवी का दिवस इस गाँव के वन में इस प्रकार मनाया-यह प्रसंग याद रह जाएगा। गुरुदेव के साथ इस वन-विहार प्रसंग में 'कुन्दगिरि' बारम्बार स्मरण आता था। एक तो कुन्दगिरि जैसी घनी झाड़ियाँ और आज कुन्दकुन्द प्रभु की आचार्य पदवी का दिन तथा गुरुदेव के साथ में वन में सन्त-मुनियों की भक्ति! इस प्रसंग से सबको आनन्द आया.. और हर्षपूर्वक चर्चा करते हुए सब आवास में आये... साथ में वन की चिरौंजी का थोड़ा सा झुमखा (गुच्छा) भी यादगिरि के रूप में लेते आये।

आज रात्रि में भी गुरुदेव ने ज्ञान-वैराग्य भरपूर सुन्दर तत्त्वचर्चा की, जैनधर्म के मूल-मूल गम्भीर तत्त्वों को समझाकर एक घण्टे तक मानो अध्यात्मगंगा में स्नान कराया। गुरुदेव ने स्वयं आज की चर्चा से प्रसन्न होकर कहा कि '**आज तो सोनगढ़ जैसा**

वातावरण हो गया, मानो सोनगढ़ में ही बैठे हों और तत्त्वचर्चा करते हों, ऐसी सरस चर्चा हुई, काठियावाड़ के लोग भाग्यशाली हैं।'

इस प्रकार मगसर कृष्ण अष्टमी को तलासरी गाँव का कार्यक्रम पूर्ण हुआ और दूसरे दिन कासा गाँव की ओर प्रस्थान किया। पूज्य गुरुदेव महान प्रभावना करते-करते तीर्थयात्रा के लिए विचर रहे हैं। परमध्येयरूप ऐसे सिद्धपद को स्मरण करते-करते सिद्धिपन्थ प्रदर्शक गुरुदेवश्री के साथ-साथ, शाश्वत् सिद्धिधाम की ओर शीघ्रता से प्रयाण करते हुए आनन्द होता है। अब दिन-दिन मुम्बई नगरी के निकट होते जा रहे हैं। मुम्बई पहुँचने से पहले, अभी जिस प्रदेश में से निकल रहे हैं, उसका जरा अवलोकन कर लें :

आदिवासी लोगों का यह प्रदेश घनी झाड़ियों से आच्छादित है। बस्ती बहुत ही पिछड़ी, गरीब और वहमी है... जंगल में लकड़ियाँ काटकर जीवन निर्वाह चलाते हैं। दूध जैसी वस्तु भी आसपास अनेक मीलों तक नहीं मिलती, कोई पाठशाला या सरकारी ऑफिस के अतिरिक्त पक्का बँधा हुआ मकान एक भी नहीं मिलता। जैन बस्ती और जिनमन्दिर का तो इस प्रदेश में नाम भी नहीं सुना जाता। लोगों के परिवेश में मात्र लंगोट और कमीज! प्रवेश के दौरान कितनी ही बारातें सामने मिली, उनमें वर राजा का वेश लंगोट, कमीज, सिर पर मुकुट और फूलहार से एकदम ढँका हुआ मुँह! जगत में क्या हो रहा है, उसकी मानो कोई दरकार न हो और जगत के सुख-दुःख की परवाह न हो - ऐसे बेदरकाररूप से लोग जीवन व्यतीत कर रहे हैं। भाषा मराठी है।

कासा गाँव में सूर्या नदी और वनपर्वतों का दृश्य रमणीय है। दोपहर को गुरुदेव ने एक शिक्षण शिविर में सात व्यसनों के त्याग पर सुन्दर प्रवचन प्रदान किया; प्रवचन में दो सौ के लगभग मराठी शिक्षक भाई थे; प्रवचन के पश्चात् मुख्य शिक्षक ने गुरुदेव के प्रति पुष्पांजलि अर्पण करते हुए कहा कि इस जंगल में आपने मंगल किया है। इस अनार्य जैसे प्रदेश में आपके जैसे सन्त कहाँ?

दूसरे दिन कासा से मनोर गाँव आये और वहाँ से खुपरी गाँव आये। इस गाँव के विषय में यद्यपि कोई खास प्रसंग नहीं बना परन्तु इसकी संक्षिप्त यादगिरी दो-चार लाईन में यहाँ लिखने जैसी है—

अत्यन्त साधारण गाँव....

एकदम अनजान लोग....

घोलका जैसे घर में उतारा....

ढोर बाँधने की गमाण में रसोई...

आस-पास घृणाकारी दुर्गन्ध....

बीच में आ पड़े इस गाँव को छोड़कर शाम को ही अम्बाड़ी गाँव आये, यहाँ सरस एकाकी वन के बीच शान्त वातावरण में डाक बँगले में उतरे। रात्रि में 'एकाकी विचरतो वली श्मशान मां...' इत्यादि भावनाएँ गुरुदेव बोलते थे।

मगसर कृष्ण 12 के दिन पूज्य गुरुदेव भीमंडी शहर पधारने पर भक्तों ने उत्साह से स्वागत किया। मुम्बई से लगभग 500 भाई-बहिन आये थे। सेठ श्री मगनलालभाई ने सब व्यवस्था सुन्दर की थी। सायंकाल गुरुदेव भीमंडी से थाणा पधारे। यहाँ एक बड़े श्वेताम्बर मन्दिर में काँच की कारीगरी हाथी इत्यादि है और सीमन्धर भगवान की मूर्ति है।

मगसर कृष्ण 13 के दिन गुरुदेव ने भीमंडी से शिव की ओर प्रस्थान किया। बीच में घाटकोपर, कुर्ला, मुलन्द इत्यादि स्थानों से जब गुरुदेव निकले, तब वहाँ के सैंकड़ों भाई-बहिनों ने हर्षपूर्वक गुरुदेव का सम्मान किया। घाटकोपर के मण्डल में 500 के लगभग भाई-बहिन एकत्रित हुए थे। गुरुदेव शिव पधारने पर डेढ़ हजार लगभग भक्तों ने हर्षित भाव से भव्य स्वागत किया। मंगल प्रवचन में गुरुदेव ने 'शिवनगरी में प्रवेश किस प्रकार हो', यह समझाया। गुरुदेव का निवास इत्यादि सुमनभाई दोशी के यहाँ था। दोपहर को 'तमिल हॉल' में प्रवचन था, उसमें लगभग दो हजार श्रोता थे।

मगसर कृष्ण 14 और रविवार को गुरुदेव ने शिव से मुम्बई की ओर प्रस्थान किया बीच में माटुंगा इत्यादि में सैकड़ों भाई-बहिनों ने सम्मान किया। जल्दी सवेरे गुरुदेव मुम्बई पहुँचे... मुम्बई की धमाल अभी शुरु नहीं हुई थी, वातावरण शान्त था—मात्र मस्जिद बन्दर रोड़ के आसपास धमाल हो रही थी - किसकी ? कि गुरुदेव के स्वागत के लिए हजारों लोग उमड़ रहे थे उसकी।

मु...म्ब...ई... न...ग...री... में...

पौष कृष्ण 14, रविवार को गुरुदेव मुम्बई नगरी में पधारे... इस प्रसंग पर स्थान-स्थान पर विविध श्रृंगारों से मुम्बई नगरी शोभती थी। ध्वजा और तोरण, दरवाजे और कमान, पुष्पवृष्टि और स्वागतसूत्र, इन्द्रध्वज और धर्मचक्र, बैण्डबाजे और विमान रचना, अनेक मोटरें और विक्टोरिया गाड़ियों का झुण्ड, इन सबके बीच हजारों भक्तों के हर्षमय कोलाहल से अद्‍भुत स्वागत हुआ। मुम्बई नगरी के मुमुक्षु बहुत समय से गुरुदेव के आगमन की प्रतीक्षा कर रहे थे, उनकी भावना आज पूर्ण होने पर सबके हृदय उल्लास से हर्षित हो रहे थे। गुरुदेव के पधारने पर सबने हृदय खोलकर स्वागत किया... स्वागत प्रसंग की भक्ति का उत्साह देखकर नगरजन भी आश्चर्य को प्राप्त हो ऐसा था। आठ-दस हजार लोगों की आनन्दमय जयध्वनि से नगरी गाज रही थी। स्वागत में सबसे आगे सोनगढ़ के प्रमुख श्री रामजीभाई और मुम्बई के प्रमुख श्री मणिलालभाई हाथ में छड़ी सहित चल रहे थे... हजारों की भीड़ के बीच कहान गुरुदेव की प्रतिभा सम्पन्न मुद्रा निहारकर लोग प्रसन्न होते थे। स्वागत प्रसंग में मुम्बई के हजारों नहीं परन्तु लाखों लोगों ने गुरुदेव के दर्शन किये... मार्ग के दोनों ओर के छज्जे और अटारियाँ प्रेक्षकों से भरचक भर गयी थीं। जिस रास्ते से स्वागत यात्रा निकल रही थी, वहाँ का वाहन व्यवहार घड़ी भर रुक जाता था; मानो गुरुदेव के आगमन ने सम्पूर्ण मुम्बई को आश्चर्य से स्तम्भित कर दिया था।

मुख्य मार्गों से निकलते-निकलते जब गुलालवाड़ी का दिगम्बर जिनमन्दिर आया, तब गुरुदेव जिनमन्दिर में दर्शन करने पधारे। सूरत के बाद आज बहुत दिनों में जिनमन्दिर के दर्शन होने पर आनन्द हुआ और गुरुदेव ने हीरा-माणिक से भगवान का सम्मान किया। तत्पश्चात् आगे जाने पर झवेरी बाजार में दिगम्बर जैन मुमुक्षु मण्डल के जिनमन्दिर का प्लॉट आया। जिनमन्दिर का चिनाई का काम चल रहा था; गुरुदेव ने वहाँ चरण किये और मुम्बई के प्रमुखश्री की प्रार्थना से अपने सुहस्त से ईंट रखकर शिलारोपण किया। तत्पश्चात् मुम्बादेवी प्लॉट में रचित महावीर नगर के सुसज्जित मण्डप में पधारे और गुरुदेव ने मुम्बई में पहला-पहला मांगलिक सुनाया... गुरुदेव की आनन्दमय अध्यात्मवाणी सुनकर मुम्बई की जनता मुग्ध बन गयी।

'महावीरनगर' मण्डप के भव्य प्रवेशद्वार के सन्मुख 21 फीट उन्नत मानस्तम्भ

रचा गया था, द्वार के एक ओर सम्मेदशिखरजी इत्यादि तीर्थधामों का मार्गदर्शन था और दूसरी ओर सीमन्धर-कुन्द-अमृत-कहान के किरणों का दृश्य था; दोनों दृश्यों की रचना आकर्षक थी। मुम्बईनगरी में गुरुदेव के यादगार स्वागत की नोंध 'मुम्बई समाचार' इत्यादि पत्रों ने उत्साहपूर्वक प्रकाशित की थी। मुम्बई में गुरुदेव 17 दिन रहे; निवास और भोजनादि की व्यवस्था मारवाड़ी पंचायतवाड़ी (पांजरापोल लेन) में थी, रात्रि को सोने के लिए हुकमचन्द सेठ के राजभुवन में पाँचवें मंजिल पर जाते थे।

हमेशा प्रातः और दोपहर गुरुदेव के प्रवचन होते, हजारों श्रोताजन रसपूर्वक उनका श्रवण करते; रविवार जैसे दिनों में श्रोताजनों की संख्या लगभग दस हजार तक पहुँच जाती थी। प्रवचनसभा का दृश्य अद्‌भुत प्रभावशाली लगता था। सवेरे समयसार कर्ताकर्म अधिकार पर और दोपहर को पद्मनन्दीपंचविंशति में से ऋषभजिनस्तोत्र पर प्रवचन होते थे... प्रवचन में शान्त-अध्यात्मरस का समुद्र उछलता था... और श्रोताजन दो घड़ी मुम्बई की धमाल भूलकर शान्तरस में सराबोर हो जाते थे। आत्मार्थी को-अर्थात् सुख के अभिलाषी को तत्त्व का कैसा निर्णय करना, यह गुरुदेव समझाते थे और जब हलकपूर्वक गद्‌गद् वाणी से हाथ जोड़कर सीमन्धर आदि भगवान की-मुनिवरों की भक्ति का झरना बहाते थे, तब सभा आश्चर्यस्तब्ध बन जाती और वैराग्य की मस्ती जमती थी। गुरुदेव को स्वयं को भी अध्यात्म की धुन चढ़ती और अन्तर के सागर का प्रवाह वाणी में बहता। गुरुदेव का अध्यात्मरस झरता प्रवचन लोगों को अत्यन्त मधुर लगता था। उस समय तो मुम्बई 'मोहमयीनगरी' मिटकर मानो कि 'धर्मनगरी' बन जाती थी और 'धांधलपुरी' के बदले 'शान्तपुरी' जैसा लगता था। वह वातावरण देखकर ऐसा लगता था कि अभी शासन का और पात्र जीवों का भाग्य है कि ऐसी प्रभावना चल रही है। गुरुदेव कहते कि-मुम्बई के लोगों को यह बात सुनने का बहुत प्रेम है, बड़ी सभा होने पर भी लोग शान्त और सभ्यता से सुनते हैं। यह तो अन्तर की अलौकिक बात है; मुम्बई में यह तो जैनशासन की पैढ़ी खुली है। अन्तर की इस बात को लोग सुनें तो सही। श्रोताजन आह्लाद से कहते कि सौ वर्ष के सोये हुए को भी जगावे - ऐसी यह वाणी है। वाणी ऐसी प्रभावशाली है कि लोग स्तब्ध बनकर रह जाते हैं। प्रवचन के समय ऐसा लगता है कि मानो दूसरी शान्ति की दुनिया में बैठे हों! मुम्बई में वक्ता तो बहुत आते हैं और सभाएँ भी होती हैं, परन्तु सभा का ऐसा शान्त वातावरण और अध्यात्म की ऐसी बात दिनों तक एक धारारस से लोग सुना करें,

ऐसा हमने नहीं देखा है। व्याख्यान तो बहुतों के सुने, परन्तु ऐसा कभी नहीं सुना—इस प्रकार अनेक लोग अनेक प्रकार से अपना प्रमोद व्यक्त करते थे। किसी-किसी समय दोपहर के प्रवचन के-पश्चात् मण्डप में जिनेन्द्र भगवान को विराजमान करके भक्ति होती, चार-पाँच हजार की भीड़ में पूज्य बहिनश्री-बहिन अद्भुत भक्तिरस उछालती थीं।

अब हम मुम्बई शहर के जिनमन्दिर देखते हैं—

★ एक जिनमन्दिर गुलालवाड़ी में है, जिसके दर्शन करने के लिए स्वागत के समय गुरुदेव पधारे थे।

★ दूसरा जिनमन्दिर भूलेश्वर में है, उसमें चन्द्रप्रभ इत्यादि भगवन्त विराजते हैं, -श्रीमद् राजचन्द्र जिनके दर्शन करते थे वे ही ये चन्द्रप्रभ हैं। इस मन्दिर में स्फटिक की प्रतिमा भी है।

★ तीसरा जिनमन्दिर कालबादेवी रोड पर कसौटी पत्थर का बँध रहा है। उसमें पार्श्वनाथ प्रभु की सुन्दर प्रतिमाजी विराजमान हैं।

★ चौथा झवेरी बाजार में समागत दिगम्बर जैन मुमुक्षु मण्डल का जिनमन्दिर - जिसमें सीमन्धर आदि भगवन्त विराजमान हैं, यह मन्दिर उस समय बन रहा था।

कॉटन एक्सचेंज हॉल के पास जहाँ चार मुख्य रास्ते एकत्र हैं वहाँ एक ओर कालबादेवी का जिनमन्दिर, दूसरी ओर भूलेश्वर का जिनमन्दिर, तीसरी ओर गुलालवाड़ी का जिनमन्दिर तथा चौथी ओर झवेरी बाजार का जिनमन्दिर, इस प्रकार चार जिनमन्दिर के चौक जैसा लगता है।

★ इन चार जिनमन्दिरों के उपरान्त दूसरे दो सुन्दर चैत्यालय चौपाटी पर हैं; एक तो सेठ पूनमचन्द घासीलाल के यहाँ पाँचवें मंजले पर है, उसमें चाँदी के शान्तिनाथ भगवान विराजमान हैं और दूसरा सेठ माणिकचन्द पानाचन्द के यहाँ हैं, उसमें स्फटिक के चन्द्रप्रभ भगवान विराजते हैं। दोनों चैत्यालय काँच की सुन्दर कारीगरी से समुद्र किनारे शोभ रहे हैं, वे दर्शनीय हैं।

पूज्य गुरुदेव और सब भक्तजन इन सब जिनमन्दिर और चैत्यालयों में दर्शन करने गये थे। भूलेश्वर इत्यादि के जिनमन्दिर में बारम्बार उत्साहपूर्वक समूह पूजन भी हुई थी।

पूज्य बहिनश्री–बेन आह्लादकारी पूजन करातीं, उसमें गुरुदेव के साथ होनेवाली मंगल यात्रा का प्रमोद भी दृष्टिगोचर होता था। कालबादेवी इत्यादि मन्दिर में किसी–किसी समय रात्रि में भावभीनी भक्ति करातीं। एक बार तो बहुत ही वैराग्यरस से निम्न स्तवन गाये थे—

(1) दुःखहर सुखदातार... तूं ही है पारस प्यारा रे.... तुं ही है.....
निर्बल को बलकार... तूं ही है एक सहारा रे... तुं ही है......

(2) मैं जीवन दुःख सब भूल गया.....
ये पावन प्रभु को देख प्रभु !.....

— उसमें भी 'यह जीवन तुझसा जीवन हो' – इस भावना के समय का दृश्य तो चिरस्मरणीय था।

यहाँ समुद्र किनारे संग्रहालय में अनेक प्राचीन जिनबिम्ब हैं, जिसमें एक बाहुबली भगवान की आठवीं शताब्दी की (1200 वर्ष प्राचीन) प्रतिमा है।

जयपुर के लगभग 300 प्रतिष्ठित गृहस्थों के हस्ताक्षर से एक आमन्त्रण पत्र द्वारा पूज्य गुरुदेव को पधारने और वहाँ चातुर्मास रहने की प्रार्थना की गयी थी। इस प्रकार इन्दौर, कलकत्ता, दिल्ली इत्यादि बड़े स्थानों से भी गुरुदेव को पधारने के लिए प्रार्थना की गयी थी।

पौष शुक्ल बारस, रविवार को जैनधर्म की महान प्रभावक रथयात्रा निकली थी... रथ में जिनेन्द्र भगवान अतिशय शोभित होते थे... चलती हुई रथयात्रा में भक्ति का उत्साह अद्भुत था... मुम्बई में महान उल्लासपूर्वक की ऐसी भव्य रथयात्रा सब आश्चर्यपूर्वक देख रहे थे।

पौष शुक्ल चतुर्दशी के दिन भूलेश्वर जिनमन्दिर में अत्यन्त भाव से समूह पूजन हुई थी। मुमुक्षु मण्डल के अनेक भाई–बहिनों ने इस समूह पूजन में भाग लिया... बहिनश्री –बहिन ने बहुत उल्लास से चन्द्रप्रभस्वामी का और चौबीसों तीर्थंकर भगवन्तों की पूजन कराने के बाद भक्ति से चँवर ढोलते–ढोलते प्रदक्षिणा की। भारत के सिद्धिधामों की यात्रा के लिए प्रस्थान तो कल होनेवाला है परन्तु इस यात्रा का हर्षोल्लास तो आज से ही व्यक्त हुआ जा रहा था – वह पूजन के समय दृष्टिगोचर हो रहा था। वह पूजन बहुत आह्लादकारी थी।

माघ कृष्ण चतुर्दशी से पौष शुक्ल चतुर्दशी कुल 17 दिन पूज्य गुरुदेव मुम्बई में रहे, उनके अनेकानेक स्मरणों में से कुछ ही यहाँ लिपिबद्ध हुए हैं। क्योंकि अपना मुख्य विषय तो 'तीर्थयात्रा' है। जैसे उस समय गुरुदेव के साथ जल्दी-जल्दी तीर्थयात्रा करने के लिए हम सबके हृदय अधीर थे, वैसे ही अभी भी जल्दी-जल्दी उस तीर्थयात्रा का वर्णन पढ़ने के लिए पाठकों का हृदय अधीर बना होगा, इसलिए अब दूसरे प्रसंगों में न रुककर हम अभी ही 'मंगल तीर्थयात्रा' शुरु कर देंगे।

पौष शुक्ल चतुर्दशी के दिन तो, जैसे आत्मा की धुन के कारण संसार का मोह उड़ जाता है, इसी प्रकार तीर्थयात्रा की धुन के कारण मोहमयी मुम्बई नगरी का मोह उड़ गया.. पूरे दिन सब यात्री यात्रा की तैयारी में ही रचे-पचे रहे। जिस तरह सच्चे आत्मार्थी का हृदय आत्मा की शोध में ही रचा-पचा रहता है, उसी प्रकार। पूरे दिन यात्रा के विचार, उसी की चर्चा और उसी की तैयारी। देर रात तक यात्रा की तैयारी करके उसी की धुन में यात्री सोते थे परन्तु 'जिसकी वास्तविक लगन लगी हो, वह क्या नींद में भी छुटती है ?' नींद में भी यात्रियों को भणकार सुनायी देते थे कि मानो सम्मेदशिखर के ऊपर से कोई सन्त आवाज देकर बुला रहे हैं और विपुलाचल के शिखर से ओंकार ध्वनि की लहरें कर्णगोचर हो रही हैं!... बहुत यात्रियों ने तो रात्रि में ही स्वप्न द्वारा उड़कर गुरुदेव के साथ तीर्थयात्रा करना शुरु कर दिया होगा... और जो इस प्रकार से उड़ नहीं सके होंगे वे जागते-जागते भी ऐसा रटन करते होंगे कि —

गुरुदेव साथे जाशुं...
संतोना धाम जोशुं....
होंसे यात्रा करशुं....
ने रत्नत्रयने वरशुं....

तीर्थधामो नीरखी....
गुरु-कहान जाशे हरखी...
पूजा भक्ति करशुं...
ने झटझट मुक्ति वरशुं....

मुम्बई से मंगल प्रस्थान

संवत् 2013, पौष शुक्ल पूर्णिमा

शाश्वत् तीर्थराज श्री सम्मेदशिखर की यात्रा के प्रस्थान का आज मंगल दिन है। आज का प्रभात अनोखा भासित होता है... गगन में मानो देवों के दिव्य वाजिंत्र बज रहे हैं, पूर्णिमा का पूर्ण चन्द्र प्रकाशित हो रहा है... तारे जगमग करते हुए मुस्करा रहे हैं... आकाश में से मानो कि भूमण्डल पर कल्याण बरस रहा है... पृथ्वी आनन्द से नाच रही है... भक्तों के हृदय में सिद्धिधाम के स्मरण से हर्ष का सागर उल्लसित हो रहा है... और गुरुदेव की पावन मुद्रा प्रसन्नता से शोभित हो रही है।

— क्योंकि आज शाश्वत् तीर्थराज को भेंटने के लिये मंगल प्रस्थान हो रहा है; अनन्त जिनेन्द्रों का सिद्धिधाम मानो आवाज लगा-लगाकर साधक सन्तों को बुला रहा है; गुरुदेव के साथ सिद्धिधाम की यात्रा करने की भक्तों के हृदय की भावना आज पूरी हो रही है। अहा! भरतक्षेत्र के शाश्वत् तीर्थधाम की मंगल यात्रा के लिये आज प्रस्थान हो रहा है।

★ ★ ★

सुप्रभात में उठते ही गुरुदेव ने सर्व प्रथम उस शाश्वत् तीर्थराज का और वहाँ से मुक्ति प्राप्त सिद्ध भगवन्तों का भावपूर्वक स्मरण किया। तत्पश्चात् भूलेश्वर के दिगम्बर जिनमन्दिर में श्री चन्द्रप्रभ भगवान के दर्शन करके पूज्य गुरुदेव 'महावीरनगर' के मण्डप में पधारे। बैण्ड-बाजों का मंगल नाद वहाँ गुँजायमान था और भक्तों की भीड़ की तो क्या बात! मंगल तीर्थयात्रा के लिये 525 यात्रियों के संघ सहित गुरुदेवश्री के प्रस्थान का यह महोत्सव निहारने, तथा सगे-सम्बन्धी यात्रियों को विदाई देने लगभग दस हजार भक्तों की भीड़ उमड़ पड़ी थी। चारों ओर उल्लास और उमंग भरा वातावरण था। अनेक मोटरें और मोटर बसों की लाईन सामान रखने को तैयार हो रही थीं। भगवान के केवलज्ञान कल्याणक के प्रसंग में समवसरण रचने पर जिस प्रकार देव आनन्द से कोलाहल करते हैं कि 'यह लाओ... यह यहाँ रखो... तुम ऐसा करो...' इसी प्रकार यहाँ भी यात्रा संघ के प्रस्थान का कोलाहल हो रहा था। 'यह मोटर तैयार करो... तुम्हारी मोटर यह है... इसमें सामान लाओ...' ऐसे शोरगुलपूर्वक तैयारी चल रही थी। गुरुदेवश्री की यात्रा के लिये मोटर-

जिसका नाम 'कल्याणवर्षिनी' था, वह भी सुन्दर श्रृंगार से शोभित हो रही थी और उस पर जैनधर्म का ध्वज लहरा रहा था। (गुरुदेवश्री के यात्रा प्रवास के लिये कलकत्ता के सेठ श्री बच्छराजजी गंगवाल ने यह एकदम नयी मोटर खरीदी थी। तदुपरान्त श्री गोगीदेवी जैन ब्रह्मचर्याश्रम की बहिनों के लिये एक मोटर बस का भी उन्होंने इन्तजाम किया था।)

मण्डप में अनेक भक्तजनों के झुण्ड इस यात्रा प्रसंग का हर्ष व्यक्त करते थे और 'यह यात्रा सफल हो... इस यात्रा की जय हो...' ऐसी भक्तिपूर्वक आशीर्वाद बरसा रहे थे। अनन्त सिद्ध भगवन्तों के मुक्तिधाम की ओर प्रयाण करते हुए, उस पावन धाम को भेंटने, गुरुदेव के हृदय में उल्लसित भक्तिपूर्ण ऊर्मियाँ आज व्यक्त ज्ञात हो रही थी... और गुरुदेव के साथ उन सिद्ध भगवन्तों की नगरी की ओर प्रयाण करते हुए भक्तों का अन्तरंग भी आनन्द से उल्लसित हो रहा था... धन्य होगा अब यह जीवन! कि गुरुराज के साथ यात्रा का महान अवसर आया।

सवा सात बजे मांगलिक सुनाकर गुरुदेव मोटर के पास आये... और 'इस यात्रा के निमित्त जीवन में पहली ही बार मोटर में बैठना होता है' ऐसा कहकर 'जय भगवान' करते हुए मोटर में विराजमान हुए। चारों ओर जय-जयकार और वाजिंत्रों मंगलकारी नाद से वातावरण गाज उठा। 'कल्याणवर्षिनी' मोटर भी मानो कि गुरुदेव के बैठने से प्रसन्न हुई हो, ऐसे मीठे मधुर स्वर से हॉर्न बजाकर भक्तों के आनन्द में अपना सुर मिला रही थी... 'अहा! मैं जड़ होने पर भी मुझे ऐसे सन्त के साथ शाश्वत तीर्थधाम की यात्रा होगी;' —ऐसे अपने सुमधुर स्वर द्वारा व्यक्त करती 'कल्याणवर्षिनी' चलने लगी। अतिशय भीड़ और अतिशय उमंगपूर्वक जय-जयकार करके भक्तों ने मंगल विदाई प्रदान की और शाश्वत् सिद्धिधाम को जल्दी-जल्दी भेंटने की गुरुदेव के अन्तर की भावना की मानों कि 'कल्याणवर्षिनी' को खबर पड़ गयी हो, वैसे वह भी शीघ्रता से शिखरजी धाम की ओर दौड़ने लगी।

'छूट्या बालक सत्वर प्रभु ने भेटवा....'

हजारों भक्त हर्षित नयनों से यह दृश्य देख रहे हैं।

★ ★ ★

गुरुदेव के साथ-साथ ही यात्रासंघ की अनेक मोटरें चल पड़ीं। सेठ श्री मोहनलालभाई, सेठ श्री नेमिदासभाई, सेठ श्री भूरालालभाई, सेठ श्री तलकशीभाई, सेठ श्री खीमचन्दभाई, सेठ श्री बच्छराजजी, सेठ श्री मीठालालजी इत्यादि तथा पूज्य बहिनश्री-बहिन की 'सत्सेविनी' मोटरें भी जय-जयकारपूर्वक यात्रा के लिये चल पड़ी। तत्पश्चात् यात्रासंघ की दूसरी मोटरें तथा मोटरबसें भी धीरे-धीरे रवाना हुई। गुरुदेव के इस संघ का नाम 'पूज्य श्री कानजीस्वामी दिगम्बर जैन तीर्थ यात्रासंघ' है। संघ में अलग-अलग यात्रियों की 28 मोटरें तथा आठ मोटर बसें हैं, कुल सवा पाँच सौ यात्री हैं। आनन्दपूर्वक भक्ति करते-करते मोटरें और मोटर बसें चलती जा रही हैं—

हिलमिलकर सब भक्तों चालो... शाश्वत तीरथधाम में...
आनंदपूर्वक यात्रा करीये... गुरुजी की साथ में....

भरतक्षेत्र का तीरथ जो है,
अनंत जिनेश्वर मुक्ति गये हैं,
अनेक मुनिश्वर ध्यान किये हैं,
— ऐसे तीरथधाम में.... (४) हिलमिलकर०

शाश्वत्धाम की शोभा भारी,
साधक संतों को है प्यारी,
तीर्थंकर की भूमि न्यारी,
—ऐसे तीरथधाम में.... (४) हिलमिलकर०

— इस प्रकार भक्ति करते-करते गुरुदेव के पदचिह्नों पर पूरा संघ पवित्र सिद्धिधाम की ओर चला जा रहा है।

जय हो... अनंत सिद्धभगवंतों की!
जय हो... सिद्धिधाम के यात्रिक संतो की!

★ ★ ★

भीवंडी शहर

लगभग साढ़े नौ बजे संघसहित पूज्य गुरुदेव भीवंडी शहर पधारे... सेठ श्री मगनलाल सुन्दरजीभाई ने उल्लासपूर्वक शहर को शृंगारित कर गुरुदेव का भव्य स्वागत किया और संघ के यात्रियों को तथा शहर के जैनों को प्रेमपूर्वक जिमाया। जहाँ-जहाँ संघ का मुकाम होता, वहाँ-वहाँ भक्तजनों को ऐसा लगता कि अहा! हमारे आँगन में गुरुदेव का यात्रासंघ कहाँ से! हमारे यहाँ गुरुदेव के चरण कहाँ से! भीवंडी में मात्र साढ़े तीन घण्टे के मुकाम दौरान संघ के स्वागत में श्री मगनलालभाई ने तीन हजार रुपये खर्च किये थे।

मांगलिक प्रवचन में नमः समयसाराय का मंगलाचरण करके गुरुदेव ने कहा कि 'यात्रा के दौरान यह पहला मांगलिक होता है; शुद्धात्मा को साध्यरूप से स्थापित करके, सिद्ध भगवन्तों के सिद्धिधाम की यात्रा का यह मंगलाचरण होता है। ऐसे ध्येय को साध-साधकर अनन्त तीर्थंकर और सन्त सम्मेदशिखरजी धाम से मोक्ष को प्राप्त हुए हैं, उनकी यात्रा के लिये जीवन में पहली बार इस ओर निकले हैं।'

प्रवचन के पश्चात् सेठ मगनलालभाई के यहाँ भोजनादि के पश्चात् एक बजे गुरुदेव ने संघसहित भीवंडी से गजपंथा की ओर प्रस्थान किया।

भीवंडी से गजपंथा जाते हुए मार्ग में पर्वतों के रमणीय दृश्य आते हैं। विध-विध आकृतिवाले पर्वतों में कोई तो मानो कि ध्यानस्थ मुनिवर खड़े हों-ऐसे दिखायी देते हैं। ऐसे दृश्यों का गुरुदेव एकटक अवलोकन करते और वनवासी सन्तों के आत्मध्यान को स्मरण करते। कभी-कभी पर्वत के नीचे उत्कीर्ण गुफा में से मोटर निकलती थी, तब गुरुदेव सन्तों को याद करके उद्‌गार व्यक्त करते थे कि अहा! मुनि ऐसे एकान्त स्थान में आत्मा का ध्यान करते हैं।

आगे गुरुदेव की मोटर रवाना हो कि तुरन्त ही संघ की दूसरी मोटरें भी जय-जयकार और भक्ति की धुन गुँजाती हुई एक के पश्चात् एक रवाना होती है। यह दृश्य बहुत सुन्दर लगता था। इस प्रकार आनन्दपूर्वक मार्ग तय करते-करते चार बजे गजपंथा पहुँच गये।

★ ★ ★

गजपंथा सिद्धक्षेत्र

नासिक शहर से लगभग तीन मील दूर मशरूल गाँव है। वहाँ की विशाल धर्मशाला में श्री महावीर भगवान का मन्दिर है, उसके सन्मुख लगभग 41 फीट ऊँचा मानस्तम्भ है। जिनमन्दिर के ऊपर के भाग में इस सिद्धक्षेत्र से मोक्ष प्राप्त सात बलभद्रों के चरण-पादुका स्थापित है। धर्मशाला से लगभग एक मील दूर गजपंथा पर्वत है, वह सिद्धक्षेत्र है, वहाँ से सात बलदेव तथा आठ करोड़ मुनिवर सिद्धि को प्राप्त हुए हैं।

ऐसे सिद्धिधाम में गुरुदेव चार बजे आ पहुँचे। तत्पश्चात् पीछे रह गयी मोटरें भी शाम को आठ बजे तक क्रम-क्रम से आ गयीं। मुम्बई से दूसरे भी सैकड़ों भाई-बहिन यहाँ यात्रा हेतु आये थे; इसलिए यहाँ लगभग एक हजार यात्री थे। धर्मशाला तो भरचक भर गयी थी। पौष माह की सर्दी की परवाह किये बिना कोई बरामदे में तो कोई टोला में, जहाँ जगह मिली, वहाँ सो गये और दूसरे बहुत से यात्री अभी सामान आने की राह देख रहे थे। यात्रियों के लिये दिल्ली से जो मोटर बसें मुम्बई आनेवाली थीं, उनमें से कितनी ही अभी आयी नहीं थी, इसलिए बहुत से यात्री ट्रेन के द्वारा आये थे तथा यात्रियों का बहुत सा सामान दो ट्रकों के माध्यम से मुम्बई से रवाना हुआ, वह सामान रात्रि को दस बजे आया।

यह यात्रासंघ का पहला ही पड़ाव था, इसलिए संघ को अनेकविध अनुभव हुए। किसी की मोटर मार्ग में रुकी तो कोई पैसेंजर अपनी बस चूक गये और किसी का सामान पीछे रह गया। पौष महीने की कड़कती सर्दी भी शुरु हो गयी। इस प्रकार अनेक तरह की कठिनाईयाँ खड़ी होने पर भी संघ का वातावरण हर्ष से व्याप्त रहता था। गुरुदेव के साथ की यात्रा के उल्लास के कारण अन्य सभी कठिनाईयाँ विस्मृत हो जाती थीं। रात्रि हुई... परन्तु यात्रा की धुन में यात्रियों को सोना रुचता नहीं था। कब जल्दी से सबेरा हो... और कब गुरुदेव के साथ सिद्धक्षेत्र की यात्रा करें! ऐसी भावना भाते थे।

गजपंथा सिद्धक्षेत्र की यात्रा

माघ कृष्ण एकम् : प्रात:काल उठकर यात्री नहा-धोकर यात्रा के लिये तैयार हो गये। प्रथम धर्मशाला के जिनमन्दिर तथा मानस्तम्भ के दर्शन-पूजन किये। लगभग आठ

बजे एक हजार यात्रियों के संघसहित पूज्य गुरुदेव गजपंथा सिद्धक्षेत्र की यात्रा के लिये रवाना हुए। इस पर्वत की चढ़ाई तीन सौ सीढ़ियाँ जितनी है और चढ़ते हुए बीस मिनिट लगते हैं। गुरुदेव को तो शीघ्र यात्रा करने की धुन; इसलिए वे तो शीघ्रता से ऊपर चढ़ने लगे। यहाँ डोली के लिये कठिनाई थी, कितनी ही डोलियाँ अभी आयी नहीं थी; पूज्य बहिनश्री-बहिन की डोलियाँ भी अभी नहीं आयी थी। यदि डोलियों का इन्तजार करके रुकें, तब तो गुरुदेव कहीं आगे निकल जायें... परन्तु बहिनश्री-बहिन को तो गुरुदेव के साथ यात्रा करने का बहुत उत्साह, इसलिए डोली की इन्तजार न करके उत्साह ही उत्साह में उन्होंने चलना प्रारम्भ किया। लगभग आधा पर्वत चढ़ने के पश्चात् डोलियाँ आयीं। मार्ग में भक्ति गाते-गाते चढ़ रहे थे।

मारा परम मुनिवर बलभद्र देख्या सब मिल दरशन कर लो...
—हाँ सब मिल यात्रा कर लो।
बार बार आना मुश्किल है भावभक्ति उर धर लो...
—हाँ सब मिल यात्रा कर लो।

—भक्ति और जय-जयकार करते हुए सब ऊपर पहुँचे। ऊपर दो मन्दिर हैं, एक में श्री पार्श्वनाथ प्रभु की विशाल (आठ फीट की) पद्मासन प्रतिमाजी विराजमान हैं; उनकी भव्य मुद्रा के दर्शन करते ही पर्वत चढ़ने की थकान विस्मृत हो जाती है। वहाँ भक्तिभाव से दर्शन-वन्दन करके सब पूजन करने के लिये बैठ गये। पहली ही बार यात्रा होने से बहुत उत्साहपूर्वक समूह पूजन हुई थी।

बलभद्र सात, वसुकोडि मुनीश्वर यहाँ पर करम खपाई।
केवल लहि शिवधाम पधारे, जजुं तिन्हें शिर नाई॥

चारों ओर यात्रियों की भीड़ से पर्वत भर गया था। गुरुदेव पार्श्व प्रभु के चरण के निकट ही बैठे थे; नयन प्रभुजी की मुद्रा के प्रति स्थिर हो गये हों, एक हाथ में पूजा की पुस्तक हो और दूसरे हाथ में सोने की प्लेट में अर्घ्य लेकर 'स्वा...हा...' करते हों - इस प्रकार समूहपूजन के समय गुरुदेव का भावभीना दृश्य सब भक्तों को आनन्द उत्पन्न कर रहा था, तो दूसरी ओर भगवान के दूसरे चरण के समीप बैठी हुईं बहिनश्री-बहिन भी पूजन की धुन मचाकर सबको उत्साहित कर रही थीं। इस प्रकार उत्साह और आनन्दपूर्वक

पूजन पूर्ण करके बाजू के दूसरे मन्दिर में गये। इस मन्दिर में यहाँ से मोक्ष प्राप्त सातों बलदेव के चरणकमल एक शिला पर उत्कीर्ण है, तदुपरान्त मन्दिर की दीवारों में अनेक प्रतिमाजी उत्कीर्ण हैं। एक शिला पर पंच परमेष्ठी भगवन्त उत्कीर्ण हैं, यह दृश्य बहुत भाववाही है। इन सबके दर्शन करके भावपूर्वक अर्घ्य चढ़ाया।

गुरुदेव के साथ सिद्धक्षेत्र में विचरते हुए भक्तों को बहुत आनन्द हो रहा था। गुरुदेव सब भावपूर्वक देखते और भक्तों को भी बतलाते थे। बीच-बीच में गुरुदेव प्रमोद से कहते : '**देखो, यहाँ से सात बलदेव मोक्ष को प्राप्त हुए हैं। इस चौबीसी में नौ बलदेव हुए, उनमें से आठ मोक्ष को प्राप्त हुए हैं, उनमें से सात बलदेव तो यहीं से मोक्ष पधारे हैं और आठवें रामचन्द्रजी मांगीतुंगी से मोक्ष पधारे हैं; यहाँ से अब वहाँ जाना है, इसलिए अपने को समस्त बलदेवों की मोक्षभूमि की यात्रा हो जायेगी। आज तो अभी यह पहली-पहली यात्रा है। यात्रा में ऐसे बहुत नये-नये तीर्थ आयेंगे। अपने तो जिन्दगी में पहली बार इन तीर्थों की यात्रा हो रही है। सात बलदेवों के उपरान्त दूसरे आठ करोड़ मुनिवर यहाँ से मोक्ष प्राप्त हुए हैं। (प्रत्येक तीर्थ में मोक्ष प्राप्त करनेवालों की जो संख्या कही जाती है, वह वर्तमान चौबीसी की अपेक्षा समझना चाहिए। वैसे तो ढाई द्वीप के पैंतालीस लाख योजन में ऐसा कोई क्षेत्र नहीं कि जहाँ से अनन्त जीव मुक्ति को प्राप्त न हुए हों)। अहा! तीन खण्ड के धनी बलभद्र जैसे शलाका पुरुष दीक्षा लेकर-मुनि होकर जब आत्मा को साधते होंगे और केवलज्ञान प्राप्त करते होंगे, वह अवसर कैसा होगा!**' इस प्रकार अनेक तरह से भक्ति भरे उद्‌गारों द्वारा गुरुदेव यात्रा को बहुत उमंग भरी बना देते थे और गुरुदेव की उमंग देखकर बहिनश्री-बहिन भी बहुत उल्लास से भक्ति कराती थीं। पूजन के बाद थोड़ी देर भक्ति हुई।

मैं गजपंथा सिद्धक्षेत्र को नितप्रति वंदुं रे...
मैं मुनिवर सिद्धदशा को नितप्रति ध्यावुं रे...
मैं बलभद्र मुनिवर को शीश नमावुं रे...

—इस प्रकार आनन्दपूर्वक गजपंथा सिद्धक्षेत्र की यात्रा पूर्ण करके जय-जयकारपूर्वक सब नीचे उतरने लगे।

पर्वत के ऊपर दरवाजे पर घण्टी टंगी हुई है। जब गुरुदेव की डोली इस दरवाजे

के पास आयी, तब घण्टी नीचे होने से एक ओर चलने के लिये डोलीवाले को सूचना करने के लिये अभी कितने ही भक्त विचार कर रहे थे... वहाँ तो डोली घण्टी के नजदीक पहुँच गयी... और डोली में बैठे हुए गुरुदेव ने हँसते-हँसते हाथ ऊँचा करके वह घण्टी बजायी... यात्रा का प्रमोद इस प्रकार गुरुदेव ने व्यक्त किया। तत्पश्चात् तो दूसरे यात्रियों ने भी लगातार घण्टनाद से पर्वत को गूँजा दिया। गुरुदेव के साथ की यात्रा के आनन्द की चर्चा करते-करते यात्रीगण नीचे उतर रहे थे। बहिनश्री-बहिन भी, गुरुदेव के साथ यात्रा हुई, उसकी 'वाहवा... जी... वाहवा...' कराती थीं।

—इस प्रकार आनन्दपूर्वक यात्रा करके लगभग दस बजे सभी यात्री धर्मशाला में आ गये और गुरुदेव के साथ की गजपंथा सिद्धक्षेत्र की प्रथम यात्रा पूर्ण हुई।

गजपंथा से सिद्धि प्राप्त सिद्ध भगवंतों को नमस्कार।
इस सिद्धिधाम की यात्रा करानेवाले कहान गुरुदेव को नमस्कार॥

★ ★ ★

यात्रा के बाद संघ ने भोजन किया। आज की यात्रा की प्रसन्नता में राजकोट के सेठ मोहनलालभाई घीया के पुत्रों की ओर से संघ को वात्सल्य भोज प्रदान किया गया था। यात्रा संघ में भोजन की व्यवस्था भी साथ ही रखी गयी थी। इसलिए सोलह रसोईया तथा दूसरा आवश्यक स्टाफ और आवश्यक सामान साथ ही लिया गया था। भोजन के बाद सायंकाल चार बजे गजपंथा सिद्धक्षेत्र की जय-जयकारपूर्वक संघ ने मांगी-तुंगी की ओर प्रस्थान किया।

गुरुदेव की 'कल्याणवर्षिनी' के साथ-साथ संघ की लगभग चालीस मोटरें और मोटर बसों की लाईन दौड़ी जा रही है। यात्रा के हर्ष के कारण मोटरों ने भी मानो सिर पर मुकुट का शृंगार सजा हो, उसी प्रकार प्रत्येक मोटर पर सामान का ढ़ेर सुशोभित हो रहा है और अन्दर यात्री हर्ष से किलोल कर रहे हैं : कहीं भक्ति चल रही है, तो कहीं नाश्ता-पानी चल रहा है, कहीं यात्रा की चर्चा चल रही है, तो कहीं जय-जयकार सुनाई दे रहा है और कहीं यात्री परस्पर विनोद-प्रमोद कर रहे हैं। इस प्रकार यात्रा प्रवास चल रहा है। पूज्य बहिनश्री-बहिन—आज ब्रह्मचर्याश्रम की (बच्छराजजी सेठ वाली) बस में बैठी हैं

और भक्ति तथा यात्रा की चर्चा द्वारा सबको आनन्द-प्रमोद कराती हैं। लम्बी-लम्बी लश्कर जैसी यात्रा संघ की मोटरों की विशाल कतार देखकर सबको आश्चर्य होता है। इस प्रकार संघ का दिखाव बहुत प्रभावशाली है। गुजरात देश छोड़कर यद्यपि अब अन्य देश में मुसाफिरी चल रही है, तथापि गुरुदेव साथ में होने से परदेश जैसा कहीं लगता ही नहीं... यह सब अपने धर्मपिता का ही देश है, अपने धर्मपिता सन्त-मुनिवर यहाँ विचरे हैं... और गुरुदेव के साथ में अपने धर्मपिता के धाम में ही हम आये हैं - ऐसा ही सबको लग रहा है।

तीर्थधाम में विचरते हुए गुरुदेव को भी मानो कि यह सब देश अपना परिचित ही हो - ऐसा लगता है। प्रवास दौरान वे भी अत्यन्त प्रसन्नता से यात्रा सम्बन्धी चर्चा करते हैं। बहुत बार रास्ते में दो मोटरें इकट्ठी हो जाने पर चलती हुई मोटर में गुरुदेव के दर्शन हो जाते हैं, तब भक्तों को विशेष आनन्द होता है; गुरुदेव भी प्रसन्नता से देखते हैं कि यह कौन सी मोटर है! भक्त भी जय-जयकार करते हुए गुरुदेव की मोटर के पीछे अपनी मोटर दौड़ा देते हैं। इस प्रकार गुरुदेव के साथ यात्रा संघ का प्रवास आनन्दपूर्वक चल रहा है।

गजपंथा से मांगी-तुंगी की ओर जाते हुए मार्ग में बहुत पहाड़ियाँ आती हैं। दूर-दूर से दिखाई देते अनेक पर्वतों में मांगी-तुंगी का पहाड़ कौन सा है, उसे पहिचानने के लिये यात्री प्रयत्न करते हैं। थोड़ी देर में दूर से मांगी-तुंगी धाम के स्पष्ट दर्शन हुए और सब जय-जयकार करने लगे। दूर से दिखायी देता तुंगीगिरि का ऊँचा-ऊँचा शिखर, - मानों कि यहाँ से मुक्ति प्राप्त कर समश्रेणी से सिद्धालय में विराजमान सिद्ध भगवन्त के सामने नजर लगाकर उनके गुणगान गा रहे हों!—और स्वयं भी वहाँ जाना चाहते हों अथवा तो भक्तों को यह पावन सिद्धिधाम देखने के लिये हाथ ऊँचा करके आमन्त्रित कर रहा हो, ऐसा शोभायमान होता है। उस तुंगीगिरि के शिखर पर नजर लगाकर अन्तिम चार मील का ऊबड़-खाबड़ रास्ता तय करते हुए लगभग पाँच बजे मांगी-तुंगी पहुँच गये।

★ ★ ★

मांगी-तुंगी सिद्धक्षेत्र

यह मांगी-तुंगी सिद्धक्षेत्र बहुत पुराना है; यहाँ से श्री रामचन्द्र, सुग्रीव, हनुमान, सुडील, गऊ, गवाख्य, नील, महानील, तथा निन्यानवें करोड़ मुनिवर मोक्ष को प्राप्त हुए हैं। सम्मेदशिखरजी के अतिरिक्त दूसरे किसी भी तीर्थ की अपेक्षा यहाँ से मोक्ष प्राप्त करनेवालों की संख्या अधिक है। यहाँ विशाल धर्मशाला है, उसके बड़े चौक के मध्य में लगभग 31 फीट ऊँचा सुन्दर मानस्तम्भ है। मानस्तम्भ के अगल-बगल तीन जिनमन्दिर हैं। धर्मशाला के बाजू में ही सिद्धिधाम का सुन्दर दृश्य दिखायी दे रहा है। यहाँ के पर्वत को दो चूलिका है, एक का नाम मांगी और दूसरी का नाम तुंगी है। इस मांगी-तुंगी पर्वत का चढ़ाव बहुत कठिन है, परन्तु ऊपर का दृश्य इतना अधिक रमणीय है कि चढ़ाव की थकान उसी प्रकार विस्मृत हो जाती है, जिस प्रकार निर्विकल्प वेदन के समय विकल्प की थकान विस्मृत हो जाती है।

ऐसी मांगी-तुंगी सिद्धक्षेत्र में सायंकाल पाँच बजे गुरुदेव संघसहित आ पहुँचे, तब क्षेत्र के व्यवस्थापकों ने क्षेत्र का श्रृंगार करके बैण्ड-बाजों सहित स्वागत किया। संघ की व्यवस्था के लिये सेठ श्री गजराजजी गंगवाल सहकुटुम्ब आये थे और उनकी देखरेख में सुन्दर व्यवस्था हुई थी।

जिनमन्दिरों के दर्शन करके संघ ने भोजन किया, तत्पश्चात् यात्रा की व्यवस्था सम्बन्धी मीटिंग हुई। यात्रासंघ में प्रमुख श्री रामजीभाई की देखरेख बहुत ही उपयोगी रही। छोटी-बड़ी अनेक कठिनाईयों में से वे मार्ग निकाल देते थे। रात्रि तक अभी कितने ही यात्रियों की मोटर मांगी-तुंगी पहुँची नहीं थी, इस सम्बन्ध में भी वे बहुत लगनपूर्वक खोज कराते थे। यात्रा में स्वयं को बहुत कठिनाईयाँ पड़ने पर भी, उनकी दरकार न करके संघ की व्यवस्था के लिये बहुत परिश्रम करते थे।

तदुपरान्त भाईश्री नेमिचन्दजी पाटनी संघ के मन्त्री थे और संघ की व्यवस्था का अनेकविध उत्तरदायित्ववाला कार्य वे अत्यन्त लगन से सम्हालते थे; विशेषरूप से पूज्य गुरुदेवश्री को प्रवास में कहीं भी तकलीफ न हो, इसके लिये बहुत लगन से सतत्‌रूप से सम्हाल रखते थे और दिन-रात उनके मन में एक ही बात चला करती थी। संघ के आगे

-आगे के प्रोग्राम की व्यवस्था, तदर्थ मार्ग की खोज, निवास इत्यादि की व्यवस्था-यह सब निर्णय करने का उत्तरदायित्व भी उनके सिर पर था। संक्षेप में सम्पूर्ण संघ के संचालन का भार उनके सिर पर था और वे संघ में किसी को कोई तकलीफ न पड़े, इसके लिये बहुत ही लगन और वात्सल्यता से सब संचालन करते थे।

पूज्य बहिनश्री-बहिन (चम्पाबेन और शान्ताबेन) के कार्यों का तो क्या वर्णन करना! सम्पूर्ण संघ का सभी संचालन उनकी देखरेख के नीचे ही होता था। श्री नेमिचन्दभाई को तथा यात्रा संघ के सभी कार्यकर्ताओं को वे निर्देश और प्रोत्साहन देती थीं। प्रवास की थकान की अवगणना करके बहुत बार तो सख्त सर्दी में रात्रि को बारह-बारह बजे तक भी बैठकर वे सब उलझनों का समाधान देती थीं। तदुपरान्त आवास और भोजनादिक में गुरुदेव को किसी प्रकार की तकलीफ न पड़े, इसके लिये वे बहुत सावधानी से ध्यान रखती थीं। यद्यपि उनको स्वयं को आवास इत्यादि की अनेक कठिनाईयाँ पड़ती, परन्तु गुरुदेव सम्बन्धी व्यवस्था की धुन में वह सब वे भूल जाती थीं... और यात्रा प्रसंगों में बारम्बार हृदय के तार झनझना कर भक्ति द्वारा सम्पूर्ण यात्रा संघ का वातावरण उल्लासपूर्ण बना देती थीं। कृपालु गुरुदेव के साथ यात्रा करने की बहुत समय से प्रवर्तित उनकी भावना पूर्ण होने का ऐसा सुअवसर आवे, तब उनके हर्षोल्लास में क्या बाकी रहे? अन्तरंग हर्षोल्लास की लहरें वे पूरे संघ में फैला देती थीं। बाकी तो यात्रा दौरान प्रारम्भ से अन्त तक उनके अद्‌भुत कार्यों का वर्णन कर सकने की शक्ति इस बालक की कलम में नहीं है।

गुरुदेव के कोई अचिन्त्य प्रभाव से यात्रा संघ का कार्यक्रम सुन्दर, व्यवस्थित और उत्साहपूर्वक चल रहा था... और यात्री कदम-कदम पर गुरुदेव के महान उपकार को स्मरण करते थे।

★ ★ ★

मांगी-तुंगी सिद्धक्षेत्र की यात्रा

माघ कृष्ण तीज : प्रात:काल सवा पाँच बजे नहा-धोकर, धर्मशाला के जिनमन्दिरों के दर्शन करके मांगी-तुंगी सिद्धक्षेत्र की यात्रा शुरु हुई। गुरुदेव के साथ भक्ति गाते-गाते सब भक्त चलने लगे। आधे मील चलने के बाद पर्वत की चढ़ाई शुरु हुई। शुरुआत में

बीच में सुन्दर रमणीय वन आया। अहा! एक तो सिद्धक्षेत्र की यात्रा का आनन्दकारी प्रसंग, एकदम प्रातःकाल का उपशान्त वातावरण, उसमें ऐसा सुन्दर वन और फिर गुरुदेव जैसे ज्ञानी सन्तों का साथ! उनके साथ इस वन में विचरण करते हुए भक्तों को अनोखा आह्लाद होता था। आह्लादपूर्वक वनवासी मुनिवरों के गुणगान करते हुए उस वन में से मार्ग तय हुआ। अब पर्वत का चढ़ाव शुरु हुआ। आकाश में अभी तारें और चन्द्रमा जगमगा रहे थे; कभी कोई तारा खिर पड़ता देखकर श्री हनुमानजी के वैराग्य प्रसंग का स्मरण होता था तो जगमग चन्द्र को देखकर श्री रामचन्द्रजी की बाल क्रीड़ायें याद आती थीं और इस पर्वत को देखकर उन दोनों की सिद्धदशा का स्मरण होता था। अहा! इस क्षेत्र से वे मुक्ति को प्राप्त हुए!

केवा हशे बलदेव मुनिराज... अहो! अेने वंदन लाख।
केवा हशे कामदेव मुनिराज... अहो! अेने वंदन लाख॥

—इत्यादि प्रकार से मुनिवरों का स्मरण करते-करते यात्रियों ने 99 करोड़ मुनिवरों के मुक्तिधाम पर चढ़ना शुरु किया। इस पहाड़ का चढ़ाव बहुत कठिन है। बहुत से यात्री कहते हैं कि जो इस मांगी-तुंगी पर्वत की यात्रा करे, उसे दूसरे पर्वतों की यात्रा तो सहजता से हो जाती है। पर्वत का चढ़ाव ऐसा कठिन होने पर भी, यात्रियों को गुरुदेव के साथ यात्रा की ऐसी उमंग थी कि गुरुदेव के पदचिह्नों पर सब दौड़े चले जा रहे थे।

पर्वत की चढ़ाई कठिन होने से कितनी ही जगह डोली भी नहीं चल सकती थी, इसलिए पैदल चलना पड़ता था। थकान लगने पर बीच में किसी-किसी जगह विश्राम के लिये बैठना पड़ता था। तब पर्वत का सुन्दर वातावरण देखकर पूज्यश्री कहते : '**अहा! यहाँ से अनेक मुनिवर मुक्ति को प्राप्त हुए हैं और वे समश्रेणी में ऊपर विराजमान हैं।**' पश्चात् सिद्धालय की ओर नजर लम्बाकर, मानो ऊपर विराजमान सिद्ध भगवन्त दिखायी देते हों, उस प्रकार भावपूर्वक हाथ जोड़कर 'णमो सिद्धाणं' करते थे। यह दृश्य देखकर सब भक्तों को आनन्द होता था और सब उसका अनुकरण करते थे। 'अहा! गुरुदेव के साथ अपूर्व यात्रा होती है और सन्त हमें सिद्ध भगवान दिखलाते हैं।'—ऐसी आनन्द तरंग से सबके हृदय उल्लसित होते थे... वह उल्लास पूज्य बहिनश्री-बहिन निम्न अनुसार भक्ति द्वारा व्यक्त करती थी—

आनंद मंगल आज हमारे.... आनंद मंगल आजजी...
गुरुवर साथे यात्रा करतां... हैडे हरख न मायजी...
दर्शन सिद्धप्रभुनां आजे... आनंद मंगल थाय जी...
दर्शन सिद्धप्रभुनां करीने... मारे पण सिद्ध थावुं जी....
सिद्धप्रभुजी मारां हैये.... आनंद मंगल वरतेजी....
सिद्धप्रभुनां दर्शने थाशुं... थाशुं सिद्ध स्वरूप जी....
कहानगुरुनो साथ जी मलीयो.... थाशुं सिद्ध स्वरूप जी...
आनंद मंगल आज हमारे... आनंद मंगल आज जी....

—भक्ति की धुन चढ़ने पर भक्तों की थकान उतर जाती थी। पर्वत चढ़ते हुए कहीं तो ऐसा विकट मार्ग आता था कि कगार पकड़-पकड़ कर चढ़ना पड़ता तो कहीं और घुटने के बल होकर गुफाओं में से निकलना पड़ता था। इस प्रकार उत्साह-उत्साह से मार्ग उल्लंघते-उल्लंघते सब मांगीगिरि पर आ पहुँचे।

मांगीगिरि पर एक छोटा कुण्ड है, उसके किनारे कितनी ही छोटी गुफायें हैं; जिनेन्द्र भगवन्त तथा ध्यान में खड़े हुए अनेक मुनिवरों के दृश्य से गुफायें शोभित हो रही हैं। एक गुफा का नाम 'सीता गुफा' है, उसमें सीताजी के चरणों की स्थापना है। सम्भव है कि आर्यिका होने के बाद सीता माता ने इस ओर विचरण किया होगा और यहाँ ध्यान किया होगा। तत्पश्चात् आगे जाने पर एक पुरानी घिसी हुई प्रतिमा आती है, उसे 'रीशायेला (रूठे हुए) बलभद्र' रूप से पहिचाना जाता है। (इस सम्बन्ध में ऐसी किंवदंती है कि उनका अतिशय सुन्दर रूप देखकर नगर की स्त्रियाँ मोहित हो जाती थी, इसलिए वे नगर से विमुख होकर वापिस वन में चले जाते हैं।)

तत्पश्चात् एक मन्दिर आता है, उसमें लगभग दो हजार वर्ष प्राचीन अनेक जिनप्रतिमाएँ उत्कीर्ण हैं, वे सुन्दर और भाववाही हैं। भगवान श्री रामचन्द्रजी इत्यादि की वीतराग मूर्ति देखकर सभी को बहुत हर्ष हुआ। यहाँ दर्शन करके भक्ति-पूजन किया और पश्चात् प्रदक्षिणा करते-करते थोड़ी देर भक्ति की—

जय रामचन्द्र जय रामचन्द्र जय रामचन्द्र देवा...
माता तोरी कौशल्या ने पिता दशरथ राया... जय राम०

अयोध्या में जन्म लिया तमे अष्टम बलभद्रराया...
मांगी-तुंगी से मोक्ष पधारे हो देवन के देवा... जय राम०
सिद्धालय में आप विराजो वंदन आज अमारां...
कहानगुरु साथे यात्रा करतां आनंद अपरंपारा... जय राम०

इस प्रकार भक्तिपूर्वक मांगीगिरि की यात्रा करके सब तुंगीगिरि की ओर चल दिये। एक ही पर्वत पर मांगी और तुंगी ऐसे दो शिखर (टोंक) हैं। लगभग पौन पर्वत चढ़ने के बाद दो रास्ते पड़ते हैं—एक मांगी की ओर जाता है और दूसरा तुंगी की ओर जाता है, इसलिए मांगी से तुंगी की ओर जाने के लिये पहले थोड़ा सा उतरना पड़ता है और पश्चात् तुंगी की ओर जाया जाता है। यहाँ मार्ग बहुत सकरा और विकट है, इसलिए एक-एक व्यक्ति मुश्किल से चल सकता है और ढलान तथा चढ़ाव बहुत होने से बहुत सावधानी रखनी पड़ती है। ऐसे मार्ग में आसपास की कगार पर हाथ टेक-टेककर जब गुरुदेव चलते हों,तब पीछे के भक्त मानो वह दृश्य देखकर जय-जयकार करे और वह मार्ग उल्लंघ जाने के बाद फिर गुरुदेव पीछे के भक्तों को सावधान करे कि ध्यान रखकर आना, धीरे-धीरे आना, उतावल नहीं करना - इस प्रकार विकट मार्ग भी गुरुदेव के साथ आनन्द से तय हो जाता है। इस प्रकार मांगी-तुंगी पर्वत की यात्रा में यात्रियों की, उनमें भी वयोवृद्ध यात्रियों की तो भारी कसौटी हुई; बीच-बीच में विकट मार्ग में डोली भी चल नहीं सकती, इसलिए ऐसे मार्ग में पैदल चलना पड़ता था परन्तु गुरुदेव का उत्साह यात्रियों के पैरों में जोश भर रहा था और गुरुदेव के साथ यात्रा करने के उत्साह ही उत्साह में यात्री विकट मार्ग को उसी प्रकार उल्लंघ जाते थे, जैसे मोक्षमार्गी जीव मोक्ष प्राप्ति के उत्साह में बीच में आ पड़ते विभावों को उल्लंघ जाता है।

मांगी से तुंगी की ओर जाने के विकट मार्ग में बीच में गिरिमाला के सुन्दर दृश्य देखते-देखते और भक्ति की धुन गाते-गाते तुंगी पर पहुँचे। श्री राम-हनुमान-सुग्रीव इत्यादि धर्मात्मा मुनि होकर यहाँ से मोक्ष पधारे हैं। यहाँ श्री चन्द्रप्रभ भगवान का सुन्दर मन्दिर है, उसमें वैराग्य झरती उपशान्त मूर्ति के दर्शन होते ही गुरुदेव ने प्रमोद से कहा : **'अहो! यहाँ तो मानो सिद्ध भगवान ऊपर से उतरे हों, ऐसा लगता है; सिद्ध भगवान मानो सन्मुख ही विराजते हों और उनका ध्यान करने बैठ जायें! ऐसा लगता है। यहाँ से**

जो करोड़ों मुनिवर मोक्ष को प्राप्त हुए, वे अपने ऊपर ही विराज रहे हैं, देखो! (ऐसा कहकर गुरुदेव ने ऊपर नजर करके, सिद्धालय की ओर हाथ ऊँचा करके सबको बताया)'। गुरुदेव की ऐसी प्रमोद भरी अमृत वाणी सुनकर यात्रियों को बहुत हर्ष हुआ और सबने भक्ति से दर्शन करके अर्घ्य चढ़ाया.... गुरुदेव ने वैराग्यरस झरती भक्ति करायी। तदुपरान्त गुफा में दूसरे अनेक जिनबिम्ब तथा रामचन्द्रजी इत्यादि के चरण-कमल हैं, वहाँ भी सबने दर्शन-पूजन किये।

राम-हनू-सुग्रीव आदि जे तुंगीगिरि थित थाई।
कोडि निन्यानवे मुक्त गये मुनि, पूजों मन वच काई॥

इस तुंगीगिरि पर सैंकड़ों फीट ऊँची एक सीधी टोंक है, आकाश में ऊँचे-ऊँचे दिखायी देती यह गगनगामिनी टोंक देखते ही, मानों कि यह पर्वत भी रामचन्द्रजी के पीछे-पीछे सिद्धालय में जाने का प्रयत्न करता हो, अथवा यात्रियों को रामचन्द्रजी के सिद्धिगमन का मार्ग दिखलाता हो, ऐसा लगता है और भक्तों के अन्तर में भी सिद्धिपन्थ की प्रेरणा जागृत होती है।

तुंगीगिरि के ऊपर दर्शन-पूजन करने के बाद पूज्य बहिनश्री-बहिन ने थोड़ी देर भक्ति करायी; भक्ति के समय वह-वह प्रसंग और क्षेत्र के योग्य नये-नये काव्य जोड़कर वे गँवाती थीं, इसलिए विशेष भाव उल्लसित होते थे।

धन्य मुनिश्वर आतमहित में छोड़ दिया परिवार.... कि तुमने छोड़ा सब घरबार।
धन्य रामचंद्रमुनि आतमहित में छोड़ दिया परिवार... कि तुमने छोड़ा सब संसार।
धन छोड़ा, वैभव सब छोड़ा, जाना जगत असार... कि तुमने जाना जगत असार।

ज्ञान-दर्शन-चारित्र को ध्याया,
केवलज्ञान को शीघ्र मिलाया;
चिदानंद चेतन का प्रगटा,
सिद्धस्वरूप रूप हो पाया...

मांगीतुंगी से रामचंद्रजी पाया सिद्धिधाम... कि तुमसा और नहिं बलराम।
धन्य रामचंद्रजी धन्य मांगीतुंगी, धन्य धन्य हो सिद्धिधाम... कि तुमसा...
गुरुजी प्रतापे पाया आजे पावन तीरथधाम... कि तुमसा और नहिं बलराम।

दर्शन-पूजन-भक्ति के बाद ऊपर के ऊँचे शिखर को प्रदक्षिणा की। प्रदक्षिणा में बीच में गुफा देखकर उसमें बैठने का मन हो जाता था और गुफावासी होकर कब आत्मध्यान करें, ऐसी भावना हृदय में जागृत होती थी। इस प्रकार भक्ति भावनापूर्वक प्रदक्षिणा पूरी होने पर मांगीतुंगी सिद्धक्षेत्र की यात्रा पूरी हुई और जय-जयकारपूर्वक यात्री नीचे उतरने लगे। तुंगीगिरि चढ़ते-उतरते हुए बीच में एक स्थल में तो बहुत ऊँचा और सीधा चढ़ाव आता है, आसपास की कगार को पकड़कर कठिनतापूर्वक उसे उल्लंघा जाता है। उतरते हुए नीचे के भाग में एक जगह 'शुद्धबुद्धगुफा' आती है, इस गुफा में भी जिनबिम्ब उत्कीर्ण हैं-मानों कि गुफा में बैठकर सन्त शुद्धबुद्ध आत्मा का ध्यान धर रहे हों! इस प्रकार शुद्धबुद्धगुफा देखकर सन्तों को शुद्धबुद्ध आत्मा का स्मरण होता था। इस प्रकार गिरिगुफा का अवलोकन करते हुए... और भक्ति की धुन मचाते हुए आनन्दपूर्वक मांगी-तुंगी सिद्धक्षेत्र की यात्रा करके लगभग साढ़े ग्यारह बजे सब नीचे आये और गुरुदेव के साथ यह दूसरे सिद्धक्षेत्र की यात्रा पूरी हुई।

मांगीतुंगी से सिद्धि प्राप्त सिद्धभगवंतो को नमस्कार।
इस सिद्धिधाम की यात्रा करानेवाले कहानगुरुदेव को नमस्कार।

★ ★ ★

सिद्धक्षेत्र की यात्रा के बाद सभी यात्री आनन्दपूर्वक भोजन करने बैठे। संघ के सभी यात्री एक पंक्ति में बैठकर भोजन करते हों और आनन्द किल्लोल करते हों, यह दिखाव सरस लगता था। परोसने का काम भी यात्री ही करते थे। शुरुआत के दिनों में यह काम ब्रह्मचारी बहिनों इत्यादि ने वात्सल्यपूर्वक उठा लिया था। संघ को जिमाने में आनन्द आता था। यात्रा की प्रसन्नता में किसी-किसी समय संघ के यात्रियों में से कोई भाई अपनी ओर से संघ को जिमाते थे। यात्रा प्रसंग में किन्हीं-किन्हीं भाग्यवन्त यात्रियों को, जब पूज्य गुरुदेव को अपने आँगन में जिमाने का लाभ प्राप्त होता, तब उन यात्रियों को अपार हर्ष होता था।

★ ★ ★

पूज्य श्री कानजीस्वामी की अपूर्व तीर्थयात्रा में पौष कृष्ण तीज का यह वर्णन चल

रहा है। प्रात:काल मांगी-तुंगी तीर्थधाम की अत्यन्त उल्लास भरी यात्रा कर आने के पश्चात् सबने भोजन किया। अब दोपहर को सुसज्जित विशाल मण्डप में पूज्य गुरुदेव का प्रवचन चल रहा है। प्रवचन में गुरुदेव कहते हैं—

''देखो, यात्रा में आज यह पहला-पहला प्रवचन यहाँ मांगी-तुंगी सिद्धक्षेत्र में हो रहा है और इसमें सिद्धि के उपाय की बात आयी है। अपने सन्त-मुनिवर जिस धाम में से मुक्ति प्राप्त हुए, उस धाम की यात्रा करने निकले हैं और यहाँ वे सन्त किस भाव से मुक्ति प्राप्त हुए, उस 'भाव' की बात आयी है। इस प्रकार भाव से और क्षेत्र से दोनों प्रकार से तीर्थयात्रा का सुमेल है। सन्त जिस उपाय से मुक्ति को प्राप्त हुए, उस उपाय को जानकर सन्तों के मार्ग में चलना, यह वास्तविक यात्रा है।''

श्रोताजन आनन्दविभोर होकर एकतानपने (एकाग्रतापूर्वक) सुन रहे हैं, सामने ही श्री मांगी-तुंगी पर्वत दिखायी देता है, उसके समक्ष नजर करके गुरुदेव कहते हैं—

'देखो, इस मांगी-तुंगी पहाड़ पर श्री रामचन्द्रजी, हनुमानजी तथा निन्यानवें करोड़ मुनिवर इत्यादि महान सन्त विचरे थे, वे आत्मा के आनन्द का ध्यान करते थे और यहाँ से सिद्धपद पाकर ऊपर समश्रेणी में विराज रहे हैं। ऐसा सिद्धपद प्रगटाने का सामर्थ्य प्रत्येक आत्मा में है, उसका भान करके ध्यान करने से सिद्धपद प्रगट हो जाता है।'

प्रमोदित होकर गुरुदेव कहते हैं—**'अहा! तुंगीगिरि पर श्री चन्द्रप्रभ भगवान की मूर्ति बहुत ही शान्त थी। बहुत देर तक वहाँ बैठे थे और वह ध्यानस्थ वीतराग मुद्रा देखकर बहुत प्रमोद आया था। अहा! शुद्ध चैतन्य का ध्यान कर-करके अनन्त जीव मुक्ति को प्राप्त हुए। अपने को जिस सम्मेदशिखरजी धाम की यात्रा करने जाना है, उस धाम के ऊपर अनन्त सिद्ध भगवन्त अभी समश्रेणी में विराज रहे हैं। मेरा आत्मा भी सिद्ध भगवान जैसा ही है - ऐसा धर्मी जानता है और ऐसे आत्मा के ध्यान द्वारा वह मोक्षपद को साधता है।'** (यात्रा के वर्णन की चालू धारा टूट न जाये तथा ग्रन्थ का आकार बहुत बढ़ न जाये तदनुसार इस पुस्तक में गुरुदेव के प्रवचनों में से संक्षिप्त महत्त्वपूर्ण अवतरण ही लिये गये हैं।)

यात्रा में गुरुदेव का पहला-पहला ऐसा अद्भुत प्रवचन सुनकर सभी श्रोतागण अत्यन्त प्रसन्न हुए और मण्डप हर्षनाद से गुँजायमान हो गया।

★ ★ ★

सायंकाल पूज्य गुरुदेव मानस्तम्भ के आसपास चौक में घूम रहे थे, साथ में कितने ही यात्री थे। गुरुदेव तीर्थभूमि का भावपूर्वक निरीक्षण कर रहे थे और कभी हाथ में दूरबीन लेकर सामने दिखायी देते मांगी-तुंगी पर्वत का अवलोकन कर रहे थे। तीर्थधाम का वातावरण और दिखाव बहुत सरस है, इसलिए गुरुदेव के साथ घूमते-फिरते उसके दर्शन करने से सबको प्रसन्नता होती थी। गुरुदेव का ऐसा महान प्रभाव तथा यात्रा संघ का ऐसा उल्लास और भक्तिभाव देखकर श्री गजराजजी सेठ इत्यादि बहुत प्रसन्न हुए थे।

रात्रि को मण्डप में विशाल सभा भरी थी, उस समय इस क्षेत्र के महामन्त्रीजी सेठ मोतीलालजी के स्वागत-वक्तव्य के बाद श्री गजराजजी सेठ ने स्वागत-प्रवचन करते हुए कहा कि :—

पूज्य गुरुदेव संघसहित यात्रा करने को पधारे है, इससे मुझे हर्ष हो रहा है और मैं आपका हार्दिक स्वागत करता हूँ। आज का वातावरण देखकर मुझे उस काल की याद आती है कि, भगवान महावीरस्वामी का समवसरण जहाँ जाता, वहाँ पर छहों ऋतु के फलफूल पक जाते थे और आनन्द छा जाता था। इसी तरह वर्तमान में भी स्वामीजी के आगमन के समाचार सुनकर आनन्दपूर्वक उसी की चर्चा ठेरठेर (गाँव-गाँव) चल रही है कि स्वामीजी का स्वागत और संघ की व्यवस्था अच्छी से अच्छी किस प्रकार करें? आप लोग बहुत पुण्यशाली हो। आप लोगों का स्वागत करते हुए मैं अपने को धन्य समझता हूँ। पूज्य स्वामीजी के प्रति मुझे भी सद्भावना और भक्ति है। यहाँ की प्रबन्धकारिणी कमेटी की ओर से मैं सभी का स्वागत करता हूँ। बम्बई की तरह हमारे कलकत्ता में भी बड़े-बड़े लोगों की कमेटी बनी है और आपके स्वागत की बड़ी तैयारियाँ चल रही है।

भाषण के बाद क्षेत्र की प्रबन्धक कमेटी की ओर से सेठ गजराजजी ने एक सम्मान-पत्र अर्पण किया - जिसमें लिखा था कि—

श्री परमपूज्य भगवान कुन्दकुन्दाचार्य के लघुनन्दन परमपूज्य सद्गुरुदेव श्री कानजीस्वामी के चरणकमलों में श्री सिद्धक्षेत्र मांगीतुंगीजी दिगम्बर जैन के प्रबन्धकर्ताओं की तरफ से—

'×××आज आप से भारत में अध्यात्मधर्म का प्रकाश हो रहा है।×××जिस प्रकार भगवान महावीर का समवसरण भारत में सर्वत्र विहार कर ज्ञानरूपी सूर्य का प्रकाश

करता था; उसी प्रकार आप भी इस पंचम काल में जगह-जगह विहार कर जीवों को सच्चा मार्ग बतलाकर अज्ञानरूपी अन्धकार को नष्ट कर रहे हैं। ×××इस प्रकार दिगम्बर जैनधर्म का आपने उद्योत किया है।×××'

वहाँ के मुनीमजी ने भी श्रद्धांजलिरूप में कहा कि—

इस क्षेत्र पर महाराजजी को व संघ को देखकर मुझे बहुत हर्ष होता है। तीर्थंकर भगवान समवसरणसहित जब इस भूमि में विचरते थे, उस वक्त के वातावरण जैसा दृश्य अभी यहाँ दिख रहा है। अभी स्वामीजी ने संघसहित आनन्दपूर्वक बहुत भक्तिभाव से मांगीतुंगी तीर्थ की यात्रा की। चार वर्ष पहले इस पर्वत के ऊपर जाने का मार्ग इतना विकट था कि लोग दर्शने के लिये तलसते थे और बहुत से लोग नीचे से ही दर्शन करके वापिस लौट जाते थे, किन्तु आज सीढ़ियाँ हो गई हैं, इससे तीर्थयात्रा सुलभ हो गयी है।

ऐसे-ऐसे स्वागत प्रवचन, सम्मान-पत्र तथा संघ की आगत-स्वागत का उत्साह-इससे सहज ख्याल में आ जाता था कि इस ओर का दिगम्बर जैन समाज पूज्य गुरुदेव के दर्शन और स्वागत के लिये कितना आतुर है!

सभा में संघ के यात्रियों की ओर से मांगी-तुंगी तीर्थ के लिये लगभग चार हजार रुपये का फण्ड हुआ था। अन्त में इतने बड़े संघ में लम्बी यात्रा के दौरान आवास इत्यादि की व्यवस्था में सुविधा-असुविधा हो तो परस्पर प्रेमपूर्वक किस प्रकार चला लेना है, इस सम्बन्ध में श्री गजराजजी सेठ ने थोड़ी प्रेम भरी बातें करके यात्रा संघ की सफलता चाही थी। इस प्रकार सभा का कामकाज पूरा होने के बाद तत्त्वचर्चा हुई थी।

तत्त्वचर्चा के बाद संघ की व्यवस्था के आवश्यक कामकाज के लिये पूज्य बहिनश्री-बहिन ने एक खास सभा बुलायी थी। उसमें मुरब्बी श्री रामजीभाई, मन्त्री श्री नेमिचन्दभाई, ब्रजलालभाई (इंजीनियर), पण्डित श्री हिम्मतलालभाई इत्यादि के सहयोग से संघ के छोटे-बड़े प्रत्येक प्रकार के काम-काज का विचार करके उसका बंटवारा कर दिया गया था। भोजनव्यवस्था; बस में यात्रियों को बैठाने की व्यवस्था; आवास में प्रत्येक जगह सबको योग्य जगह प्राप्त हो, इस सम्बन्धी व्यवस्था; संघ के कार्यक्रम सम्बन्धी प्रत्येक जगह तार-पत्र की व्यवस्था, इत्यादि अनेकविध कार्यों की विचारणा करके उत्साही कार्यकर्ताओं को वह-वह कार्य सौंप दिया गया था। इसके लिये पूज्य बहिनश्री-बहिन, रात्रि के समय सख्त सर्दी होने पर भी लगभग बारह बजे तक सभामण्डप में बैठी थीं।

प्रतिदिन सैंकड़ों मील की यात्रा तथा तीर्थों की यात्रा करते-करते सवा पाँच सौ यात्रियों के इतने बड़े संघ की सब प्रकार की व्यवस्था भी करते जाना- यह तो एक छोटे से राज्य का कार्यभार चलाने जैसा अटपटा काम था, ऐसा होने पर भी गुरुदेव के महान प्रताप से यात्रा संघ को कुशल नेता और उत्साही कार्यकर्ता मिल जाने से किसी भी प्रकार की कठिनता के बिना संघ का प्रवास आनन्द से चल रहा था, इतना ही नहीं किन्तु गाँव-गाँव की समाज की ओर से भी अपेक्षा से अधिक सहयोग बहुत प्रसन्नता से मिल रहा था।

★ ★ ★

माघ कृष्ण चौथ : सवेरे यात्रियों ने धर्मशाला के जिनमन्दिर में दर्शन-पूजन किये, सामने ही नजदीक दृष्टिगोचर मांगी-तुंगी सिद्धिधाम के पुनः दर्शन किये। विगत दिन जिनकी यात्रा बाकी रह गयी थी, वे यात्री आज यात्रा करने गये। दर्शन-पूजन के बाद गुरुदेव का प्रवचन हुआ। अहा! आज का प्रवचन अद्‌भुत था। शुरुआत में गुरुदेव ने कहा कि इस सिद्धक्षेत्र में मंगलाचरणरूप से समयसार की पहली ही गाथा पढ़ते हैं—

वंदित्तु सव्व सिद्धे...

सिद्ध भगवन्तों को नमस्कार की गाथा और सामने ही सिद्धक्षेत्र! मानों सिद्ध भगवन्त इस यात्रा महोत्सव में हाजरा-हुजूर पधारे हों, ऐसे उल्लास से गुरुदेव की वाणी का प्रवाह बहता था। **'अहो! मैं सर्व सिद्धों को नमस्कार करता हूँ... हे सिद्ध भगवन्तों! मेरे अन्तर में आपको स्थापित करके मैं नमस्कार करता हूँ।'**

'देखो, यह यात्रा का अपूर्व मांगलिक! यात्रा के मंगल में सिद्ध भगवन्तों को बुलाया। हे सिद्ध भगवन्तों... और हे जगत के सन्तों! मेरे मांगलिक के मण्डप में पधारो... मेरे हृदय में विराजो; मेरे हृदय में आपको साथ रखकर मैं आपके पंथ में अप्रतिहतरूप से चला आ रहा हूँ।'

'ढाई द्वीप में जहाँ-जहाँ पंच परमेष्ठी सन्त विराजते हों, उन्हें मेरा नमस्कार! अहो, मोक्ष के साधक मुनिवर जहाँ-जहाँ विचरते हों, उन सर्व का मैं आदर करता हूँ, सिद्धपद के साधक सर्व सन्तों को मैं मेरे आँगन में बुलाता हूँ। हे सिद्ध भगवन्तों! और साधक सन्तों! मेरे आँगन में पधारो.. पधारो..! मेरा आँगन विकारी नहीं, परन्तु मेरे शुद्ध श्रद्धा-ज्ञान के आँगन में मैं आपको स्थापित करता हूँ।'—

हूँ कइ विध पूजुँ नाथ! कइ विध वंदुं रे...
मारे आंगणे सिद्धभगवान जोई जोई हरखुं रे...

वाह ! साधक सन्तों, ऊपर से सिद्ध भगवन्तों को अपने आँगन में उतारकर, अपने आत्मा में स्थापित कर नमस्कार करते हैं।

'देखो, भाई! इस संसार की चार गति में कहीं जीव को विश्राम नहीं है, यह सिद्धगति ही जीव को परम विश्रान्ति का स्थान है। इस पैंतालीस लाख योजन के ढाई द्वीप में अणु-अणु से अनन्त जीव मुक्ति को प्राप्त हुए हैं, कोई भी जगह ऐसी नहीं कि जहाँ से अनन्त जीव सिद्धि को प्राप्त न हुए हों। ऐसे सिद्धपद की प्राप्ति, वह आत्मा का ध्येय है और उस ध्येय को ताजा करने के लिये, जहाँ से जीव सिद्धि प्राप्त हुए, ऐसे तीर्थधाम की यात्रा की जाती है।'

अहा! गुरुदेव के इस प्रवचन में साधकभाव का अद्‌भुत प्रवाह बहता था... साधकभाव की धारा उल्लसित-उल्लसित होकर मानों कि सिद्धपद का अभिनन्दन करती थी... साधक के अन्तर में सिद्धपद की कैसी लगन होती है, यह व्यक्त होती थी... और मुमुक्षु श्रोता तो मुग्ध बन जाते थे।

प्रवचन पूरा हुआ कि तुरन्त ही श्री जिनेन्द्र भगवान की रथयात्रा निकली। भगवान के रथ को भक्त स्वयं उल्लास से खींचते थे। भक्तों की उमंग देखकर गुरुदेव भी हर्षित हो रहे थे... और गुरुदेव का हर्ष देखकर बहिनश्री-बहिन बहुत ही भक्ति कराती थीं। इस प्रकार हर्षोल्लासपूर्वक भगवान की रथयात्रा पूर्ण हुई।

आज गुरुदेवश्री का भोजन सेठ गजराजजी के यहाँ हुआ था; गुरुदेव के आहारदान का लाभ प्राप्त होने से श्री सेठ गजराजजी तथा सेठानी लक्ष्मीबेन को बहुत हर्ष हुआ था। भोजन के पश्चात् संघ ने प्रस्थान की तैयारी की, मोटरें लाईन से लगायी गयीं, ऊपर सामान का ढ़ेर लगा दिया गया और यात्री सायंकाल के लिये भातु (नाश्ता-पानी) लेकर अपनी-अपनी मोटर में बैठ गये.... थोड़ी देर में सिद्धक्षेत्र की जय-जयकार करती हुई एक के बाद एक मोटरें छूटने लगीं और धूलिया की ओर रवाना हुईं।

★ ★ ★

मांगी–तुंगी से प्रस्थान करके पूज्य गुरुदेव रावल गाँव मुकाम में सेठ रतनचन्द हीराचन्द के यहाँ पधारे थे; वहाँ दिगम्बर जैन चैत्यालय के दर्शन करने के बाद भोजन भी वहीं हुआ था। रात्रि में 'जातिस्मरणज्ञान' सम्बन्धी चर्चा हुई थी, उसमें गुरुदेव ने सीमन्धरनाथ को स्मरण किया था। यात्रासंघ रात्रि में धूलिया शहर पहुँच गया था और वहाँ रात्रि में बहिनश्री–बहिन ने भक्ति करायी थी।

श्री बच्छराजजी सेठ की बस के तथा दूसरे कितने ही यात्री मनमाड होकर ईलोरा की जैन गुफाओं के दर्शनार्थ गये थे। ईलोरा में अनेक गुफाएँ हैं, उनमें पाँच जैन गुफाएँ हैं, ये गुफाएँ बहुत ही विशाल हैं, पर्वत खोदकर ही बनायी हुई इन गुफाओं में कोई–कोई गुफा दो मंजिल की है और उनमें सैंकड़ों बड़े–बड़े जिनबिम्ब उत्कीर्ण हैं, जिसमें हजारों मुनि रह सकें, ऐसी उपशान्त गुफाओं में प्रवेश कर जिनेन्द्रदेव के दर्शन करते ही मुमुक्षु का हृदय आनन्द से उल्लसित हो जाता है... अहा! यह शान्तिधाम! सबसे ऊपर की एक गुफा में विशाल और आश्चर्यकारी पार्श्वनाथ भगवान विराजते हैं। गुफा में विराजमान जिनेन्द्र भगवन्तों के दर्शनादि करके और मुनिवरों के शान्त जीवन का स्मरण करके, दूसरे दिन सभी यात्री धूलिया पहुँचकर संघ के साथ हो गये।

पूज्य गुरुदेव रावल गाँव में रात्रि को रहे थे, वहाँ से धूलिया आने पर बीच में मालेगाँव आता है, वहाँ के सेठ श्री चन्दुभाई–कि जो मांगी–तुंगी तीर्थ के ट्रस्टी हैं, उनके आग्रह से एकाध घण्टे वहाँ रुके और जिनमन्दिर के दर्शन करके थोड़ा मंगल प्रवचन प्रदान किया। गुरुदेव के दर्शन और प्रवचनों का लाभ मिलने से यहाँ के समाज को बहुत हर्ष हुआ।

धूलिया शहर

(माघ कृष्ण पंचमी)

धूलिया शहर की जनता और यात्री स्वागत के लिये तैयार होकर गुरुदेव के आगमन की राह देख रहे थे। दिगम्बर समाज के उपरान्त श्वेताम्बर भाई इत्यादि भी उत्साहपूर्वक स्वागत में सम्मिलित थे। गुरुदेव के स्वागत के लिये लोगों को इतना उत्साह था कि 'सत्सेविनी' मोटर में लाउडस्पीकर लगाकर उसे स्वागत में साथ में घुमाया था और समवसरण के दुन्दुभी नाद की भाँति वह 'सत्सेविनी' भी शहर में घोषणा करती जा रही थी कि **सौराष्ट्र के आध्यात्मिक सन्त श्री कानजीस्वामी पधार रहे हैं... आईये... स्वागत कीजिए... प्रवचन सुनिये।** स्वागत प्रसंग में शहर को ध्वजा-पताका और द्वार कमानों से श्रृंगारित किया गया था। और दो-तीन हजार लोगों के उपरान्त, यात्रासंघ के लगभग 500 यात्री भी यात्रासंघ के केसरिया बिल्ला टाँग-टाँगकर स्वागत में जुड़ गये थे। सवा नौ बजे 'कल्याणवर्षिनी' सा..रे..ग..म..ना.. के सुर बजाते हुए आ पहुँची और गुरुदेव के नीचे उतरते ही सबने जय-जयकार और वाजिंत्र नाद से भावभीना स्वागत किया। विद्यालय के विशाल चौक में प्रवचन के लिये खास मण्डप में मंगल प्रवचन हुआ। तत्पश्चात् गुरुदेव जिनमन्दिर के दर्शनार्थ पधारे।

यात्रासंघ की भोजन व्यवस्था धूलिया शहर के दिगम्बर जैन समाज की ओर से की गयी थी। यात्रा के पहले सामान्यरूप से संघ की ऐसी मान्यता थी कि इस ओर तो सब अपनी-अपनी रसोई अलग बनाते हैं, इसलिए समूह भोज की पद्धति नहीं होगी, परन्तु यात्रा के दौरान देखा कि प्रत्येक स्थान की जैन समाज बहुत उल्लास से संघ को प्रीतिभोज कराती थी और उसे विशेष आनन्द का प्रसंग मानती थी।

आज रविवार था; रविवार को यहाँ बाजार बन्द रहते हैं, तथापि यात्रीसंघ आया होने से यात्री बाजार की शोभा देखे और उन्हें आवश्यक वस्तुएँ भी मिल सकें, इस हेतु से बाजार आधे दिन के लिये खुला रखने में आया था। जैसे पुण्य-पुरुषों के चरणों का स्पर्श होने से बन्द द्वार खुल जाते हैं, उसी प्रकार गुरुदेव के पधारते ही गाँव का बाजार और मन्दिर खुल जाते थे। गुरुदेव जहाँ-जहाँ पधारते, वहाँ-वहाँ पूरा वातावरण बदल जाता था। सम्पूर्ण नगर की शोभा ही एकदम बदल जाती थी और हर्ष की लहरें छा जाती

थीं। जैसे सम्यक्त्व होने पर पूरा आत्मा बदल जाता है, उसी प्रकार।

दोपहर को गुरुदेव के प्रवचन में लगभग तीन हजार लोगों ने लाभ लिया। मालेगाँव, सोनगीर इत्यादि आस-पास के गाँवों से भी अनेक लोग प्रवचन सुनने आये थे। इस प्रकार, गुरुदेव जहाँ पधारे वहाँ 'कानजीस्वामी पधारे हैं' ऐसा सुनते ही आस-पास के गाँव के लोग भी दौड़े चले आते थे। रात्रि को तत्त्वचर्चा में भी बहुत से लोगों ने जिज्ञासा से लाभ लिया था।

इस प्रकार धूलिया शहर के दिगम्बर जैन समाज में गुरुदेव का एक दिन का कार्यक्रम बहुत ही उत्साह से शोभित किया था। गुरुदेव अधिक रुकें, ऐसी वहाँ के समाज की बहुत इच्छा थी परन्तु संघ के निश्चित कार्यक्रम में फेरफार नहीं हो सकता था। पौष कृष्ण छठवीं को प्रातःकाल गुरुदेव ने संघसहित धूलिया से बढ़वानीजी की ओर प्रस्थान किया।

धूलिया से बढ़वानी जाते हुए बीच में सोनगीर गाँव में गुरुदेव और कितने ही यात्री दर्शन करने के लिये रुके। यहाँ दिगम्बर जैनों के लगभग चालीस घर हैं, वे सब सोनगढ़ के प्रेमी हैं। गाँव के प्राचीन जिनमन्दिर में श्री सम्भवनाथ भगवान विराजते हैं, उनकी मुद्रा प्राचीन और भव्य है। तदुपरान्त सीमन्धर भगवान इत्यादि के फोटो भी हैं। गुरुदेव ने जिनमन्दिर में दर्शन करके दो स्तवन गवाये और मंगल प्रवचन किया—इससे यहाँ के समाज को अत्यन्त हर्ष हुआ।

तत्पश्चात् आगे जाते हुए सेंधवा गाँव में श्री हुकमीचन्दजी सेठ की जीन फैक्ट्री में भोजन के लिये गुरुदेव रुके। यहाँ 'सत्सेविनी' के यात्री पण्डित हिम्मतलालभाई, ब्रजलालभाई, नेमीचन्दभाई इत्यादि सहित पूज्य बहिनश्री-बहिन रुके थे और उन्होंने गुरुदेव को भोजन कराया था। संघ के यात्रियों ने धूलिया से नाश्ता साथ में ले लिया था। इसलिए वे सीधे बढ़वानी सिद्धक्षेत्र की तलहटी में लगभग बारह बजे पहुँच गये थे।

सेंधवा से प्रस्थान करके गुरुदेव लगभग दो बजे बढ़वानी शहर पधारे। जनता ने उमंगपूर्वक स्वागत किया। मध्य भारत के वित्त मन्त्री श्री मिश्रीलालजी गंगवाल यहाँ पूज्य गुरुदेव के दर्शन करने आये थे और गुरुदेव को पहली ही बार देखकर अत्यन्त प्रसन्न हुए थे। यहाँ जिनमन्दिर में श्री नेमिनाथ प्रभु के दर्शन तथा मंगल प्रवचन के बाद गुरुदेव

बढ़वानी की तलहटी की ओर पधारे। शहर से तलहटी पाँच मील दूर है। मार्ग में पहाड़ियाँ और झाड़ियाँ बहुत आती हैं। ऐसा मार्ग आवे तब, यात्री आनन्द से मुनिवरों के गीत गान करते-करते मार्ग तय करते थे, बढ़वानी की तलहटी में यात्री इन्तजारीपूर्वक गुरुदेव के पधारने की राह देख रहे थे। गुरुदेव के पधारने पर यात्रियों में हर्ष छा गया।

★ ★ ★

बढ़वानी सिद्धक्षेत्र

यह बढ़वानी सिद्धक्षेत्र है। मुम्बई से निकलने के बाद पाँच दिन में यह तीसरा सिद्धक्षेत्र आया है। इस प्रकार लगातार सिद्धक्षेत्रों के दर्शन से सबको आनन्द होता था... और अब धीरे-धीरे देश, कुटुम्ब, घरबार इत्यादि का वातावरण विस्मृत होकर यात्रा का वातावरण जमता जा रहा था... 'बस, हम तो सिद्धिधाम के यात्री हैं... और गुरु के पुनीत कदम-कदम पर हमें सिद्धिधाम में जाना है।'—ऐसे ही भाव सबको चल रहे थे।

इस बढ़वानी सिद्धिधाम की तलहटी का वातावरण बहुत सुन्दर है। विशाल धर्मशाला के बड़े चौगान में चौसठ फीट उन्नत चौकोर मानस्तम्भ है, उसमें ऊँचे पद्मासन भगवन्त हैं और मूल में मगर चिह्नवाले खड्गासन भगवन्त बहुत ही शोभित हो रहे हैं; मानों छोटे से सिद्ध भगवान खड़े हों! मानस्तम्भ के आसपास के चौक में छोटे-बड़े मिलकर लगभग बीस जिनमन्दिर हैं और उनमें सुन्दर भाववाही भगवन्त विराजमान हैं। बाहुबली भगवान इत्यादि अनेक प्राचीन जिनप्रतिमा यहाँ से खुदाई करते हुए निकली हैं, वे भी जिनमन्दिर में विराजमान हैं। अनेक मन्दिरों की हार-माला से धर्मशाला का वातावरण बहुत ही शोभित हो रहा है। धर्मशाला के बगल में दो फलांग पर ही चूलगिरि पर्वत है, वह सिद्धक्षेत्र है। यहाँ से श्री इन्द्रजीत, कुम्भकर्ण और साढ़े तीन करोड़ मुनिवर मोक्ष को प्राप्त हुए हैं। निर्वाणकाण्ड की बारहवीं गाथा में इस निर्वाणधाम का वर्णन आता है। तदुपरान्त यहाँ पर्वत में बाबन गज की विशाल प्रतिमा उत्कीर्ण होने से यह तीर्थ 'बावन गजा तीर्थ' रूप से भी प्रसिद्ध है।

—ऐसे पवित्र धाम में आकर गुरुदेव ने धर्मशाला के जिनमन्दिर के दर्शन किये। गुरुदेव के साथ एक के बाद एक जिनमन्दिरों के दर्शन करते हुए भक्तजन आनन्द से

जय-जयकार कर रहे थे। बीछिया गाँव में पंच कल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव के प्रसंग पर पूज्य गुरुदेव के हस्त से प्रतिष्ठित हुए श्री वासुपूज्य भगवान को एक वेदी पर विराजमान देखकर भक्तों को बहुत आनन्द हुआ—अहो, यह तो हमारे सौराष्ट्र में से आये हुए भगवान!

धर्मशाला का वातावरण पाँच सौ से अधिक यात्रियों की प्रवृत्ति से चहल-पहलयुक्त हो रहा था। कोई दर्शन वन्दन में रुके हुए, तो कोई नहाने-धोने में रुके हुए, कोई डायशे जमाकर यात्रा की बातें करते तो कोई थके-पके आराम करते, कोई नाश्ता-पानी करते, तो कोई सामान रखने में तल्लीन थे।—तो दूसरी ओर से गाँव के विविध धन्धाधारी लोगों ने यहाँ आकर एक छोटा सा बाजार खड़ा कर दिया था। इस प्रकार मानो एक छोटा शहर ही बस गया हो, ऐसे गुरुदेव के प्रताप से जंगल में मंगल हो रहा था। यहाँ धर्मशाला में ही पानी की सुन्दर बावड़ी तथा कुँआ था तथा यहाँ के व्यवस्थापकों की ओर से यात्रियों की सुविधा के लिये गर्म पानी इत्यादि की सुन्दर व्यवस्था की गयी थी (सर्दी होने से यात्रियों के लिये गर्म पानी की व्यवस्था लगभग प्रत्येक जगह होती थी)।

रात्रि को सभी यात्रीभाई पूज्य गुरुदेव के पास तत्त्वचर्चा में बैठे थे... और यह अपूर्व यात्रा की उत्साहभरी बातचीत चल रही थी... बीच-बीच में गुरुदेव इस तीर्थधाम में विचरे हुए मुनिवरों को याद करके भक्ति पूर्ण उद्गार निकालते थे।

उस समय पूज्य बहिनश्री-बहिन यात्री बहिनों के साथ जिनमन्दिर में भगवान के सन्मुख भक्ति कर रही थीं, वैराग्य भरपूर अति शान्त वातावरण में भक्ति चल रही थी।

(1) **जिणंदा मोरा अंतर में आवो... मुनींदा मोरा अंतर में आवो....**

(2) **जंगल वसाव्युं रे जोगीये... तजी तनडानी आश....**
वात न गमे आ विश्वनी.... आठे पहोर उदास....

(3) **मैं जीवन दुःख सब भूल गया... ये पावन प्रभु को देख० प्रभु०**
ये पावन तीरथ देख प्रभो.... तेरी सिद्धभूमि को देख प्रभु...

(4) **ऐसे मुनिवर देखे वन में... जाके राग-द्वेष नहीं तन में...**
ऐसे कुंभकर्णमुनि देखे वन में... जाके राग-द्वेष नहीं तन में....
ऐसे इन्द्रिजीतमुनि देखे वन में.... जाके राग-द्वेष नहीं तन में...
ऐसे कुन्दकुन्दमुनि देखे वन में.... जाके राग-द्वेष नहीं तन में....

ये चार स्तवन गद्‌गद् भक्तिभाव से पूज्य बहिनश्री-बहिन ने गवाये थे... तब उपशान्त भक्तिरस का झरना वहाँ बहता था। अहा! मुनिवरों के इस मुक्तिधाम में मुनिदशा की वैराग्य भावनापूर्वक की यह भक्ति अद्‌भुत थी... गम्भीर वीतरागता से वातावरण गूँजता था और पूज्य बहिनश्री-बहिन के रोम-रोम से वीतरागी मुनिपद की भक्ति नितरती थी।

— और ठीक उसी समय महामुनि भक्ति से प्रसन्न होकर श्री कुन्दकुन्दाचार्यदेव मानो साक्षात् दर्शन देने पधारे हों, उस तरह गुरुदेव की सभा में एक आश्चर्यकारी बात हुई...

— यहाँ के मुनिमजी ने तीर्थ का परिचय देते हुए कहा कि 'श्री कुन्दकुन्दाचार्य यहाँ पधारे थे... और इस पर्वत पर एक जगह उनकी प्रतिमा भी है।' अहा! यह सुनते ही गुरुदेव को एकदम आश्चर्य के साथ अत्यन्त आनन्द हुआ। पूरी सभा में हर्ष और आश्चर्य छा गया। सोनगढ़ के अतिरिक्त अन्यत्र कहीं कुन्दकुन्दाचार्यदेव की प्रतिमा होने का अभी तक सुना नहीं था, वह यहाँ अचानक सुना और फिर कल सवेरे ही उसके दर्शन होनेवाले हैं, इसलिए सबको बहुत ही प्रमोद हुआ... उसके दर्शन के लिये सबका हृदय उल्लसित था... कब प्रभात उदित हो और कब कुन्दकुन्द प्रभु को मिलें—ऐसे रटनपूर्वक मुश्किल से रात्रि व्यतीत हुई।

★ ★ ★

बढ़वानी सिद्धक्षेत्र की यात्रा

माघ कृष्ण पंचमी, सवेरे छह बजे बढ़वानी (चूलगिरि) सिद्धक्षेत्र की यात्रा के लिये पूज्य गुरुदेवश्री संघसहित पधारे... धर्मशाला के नजदीक ही पर्वत है; धर्मशाला से पर्वत तक सड़क है और वहाँ मोटर भी जा सकती है। यात्री जय-जयकार करते हुए दस मिनिट में वहाँ पहुँच गये। यह सब प्रदेश पहाड़ी और वन-जंगल जैसा है और यहाँ चीता इत्यादि का भय भी है, सुने अनुसार संघ की एक मोटर को चीता का साक्षात्कार भी हुआ। वन-पर्वत में सिंह, बाघ के साथ निर्भयरूप से विचरनेवाले मुनिवरों का स्मरण और भक्ति करते हुए यात्री वन-पारकर पर्वत के निकट आ गये।

यहाँ जो पर्वत है, उसका नाम चूलगिरि है और पूजनादि पुस्तकों में इस क्षेत्र का

'चूलगिरि सिद्धक्षेत्र' रूप से उल्लेख है; इस पर्वत में आदिनाथ प्रभु की बावन गज की प्रतिमा उत्कीर्ण होने से यह तीर्थ 'बावनगजा तीर्थ' रूप से भी प्रसिद्ध है और बढ़वानी शहर की हद में आया हुआ होने से अभी 'बढ़वानीजी सिद्धक्षेत्र' रूप से भी प्रसिद्ध है।

पर्वत की चढ़ाई शुरु करते ही दायीं ओर पर्वत में चमकता हुआ दिखायी दिया... धुंधले प्रकाश में नजर करते हुए मानो कोई ध्यान में खड़ा हो—ऐसा लगा... और फिर अधिक नजदीक जाकर देखने पर पता चला कि अहा! यह तो बावनगजा आदिनाथ भगवान! प्रात:काल के मन्द प्रकाश में उनकी पावन मुद्रा ज्ञानतेज से चमकती-चमकती भक्तों को अपने पास बुला रही थी। भगवान को झट नहीं पहिचान सके, इसलिए भक्त जरा असमंजस में पड़ गये, परन्तु फिर भगवान को नयनों से निहारने से आनन्द और आश्चर्य से दर्शन करके सबने जय-जयकार किया। पर्वत की विशाल शिला में से पर्वत में और पर्वत में ही यह बावनगजा (84 फीट के) आदिनाथ भगवान उत्कीर्ण हैं, एशिया भर में यह प्रतिमा सबसे विशाल है और हजारों वर्ष पुरानी है। वीर संवत् 800 में अर्थात् 1700 वर्ष पहले तो इसका जीर्णोद्धार हुआ है। पर्वत के साथ ही ध्यानस्थ खड़े हुए ऊँचे-ऊँचे इन भगवान को निहारते हुए मानो पाँच सौ धनुष की कायावाले आदिनाथ भगवान ही अपने सन्मुख साक्षात् खड़े हों—ऐसा लगता है। अहा! जिन्होंने पर्वत में से ऐसे परमात्मा उत्कीर्ण कर दिये, वे भक्त कैसे होंगे... और उस समय जैनधर्म की कैसी प्रभावना होगी! यह भगवान के दर्शन करते ही गुरुदेव कहते हैं कि अहा, देखो तो सही, कैसे भगवान हैं! यह हजारों वर्ष पुरानी प्रतिमाजी भी दिगम्बर जैनधर्म की साक्षी दे रही हैं और मुनिदशा भी ऐसी ही होती है, ऐसा दर्शा रही है।

इन आदिनाथ भगवान के दर्शन करके सब पर्वत के ऊपर आये। पर्वत चढ़ने में लगभग आधा घण्टा लगता है। ऊपर एक मुख्य मन्दिर है, उसमें श्री पार्श्वनाथ, नेमिनाथ इत्यादि भगवन्तों की भव्य प्रतिमा है, तदुपरान्त यहाँ से मोक्ष प्राप्त श्री इन्द्रजीत, कुम्भकर्ण इत्यादि के सुन्दर चरणकमल हैं। गुरुदेव के साथ सबने भगवन्तों के दर्शन करके उन पवित्र चरणकमलों का स्पर्श किया... बराबर उस समय अभिषेक चलता होने से, गुरुदेव के हस्त से भी जरा सी कलश धारा करायी... और गुरुदेव के पावन हस्त के साथ-साथ भक्तों ने भी अभिषेक किया। इस प्रकार गुरुदेव के सुहस्त से अभिषेक की मंगल शुरुआत

यहाँ कुन्दकुन्द प्रभु के चरणों से पावन हुई इस भूमि से हुई। तत्पश्चात् भक्तिपूर्वक अर्घ्य चढ़ाकर अब कुन्दकुन्दाचार्यदेव के दर्शन के लिये सब मन्दिर से बाहर आये।

कुन्दकुन्द प्रभु के दर्शन के लिये सब बहुत ही उत्सुक थे... पर्वत में कौन जाने कहाँ कुन्दकुन्द प्रभु विराजते होंगे—उसकी किसी यात्री को खबर नहीं थी... गुरुदेव भी आतुर नयनों से पर्वत को निहारते थे... मानो कि इन नयनों द्वारा पर्वत से पूछ रहे थे कि 'कहाँ हैं मेरे कुन्दकुन्द प्रभु! कहाँ हैं हमारे परम गुरुराज!! कहाँ हैं मेरे हृदय के हार! कहाँ हैं हमारे आतम के आराम!!'

मन्दिर के पीछे के भाग में साधारण दिखाव की एक छोटी लगभग तीन फीट ऊँची देहरी है... उसे देखकर दूर से ही गुरुदेव ने पूछा कि इस देहरी में क्या है? वहाँ के मुनिमजी ने कहा—बस, यही कुन्दकुन्द प्रभु की देहरी! यह सुनते ही गुरुदेव देहरी के पास जाकर अन्दर घुस गये... और भक्ति से स्तब्ध होकर कुन्दकुन्द प्रभु के चरण के निकट बैठ गये... गुरु-शिष्य के मिलन का, कुन्द-कहान के मिलन का यह दृश्य अद्‌भुत था। बिछड़ा हुआ पुत्र अपने प्रिय पिता को देखते ही जिस प्रकार हर्षित होता है, उसी प्रकार गुरुदेव भी यहाँ कुन्दकुन्द प्रभु को देखते ही हर्षित हो रहे थे... और भक्त मण्डल भी जय-जयकारपूर्वक गुरुदेव के हर्ष को झेल रहा था।

यह पौष कृष्ण सप्तम का दिन है और सवेरे सात बजे हैं। गुरुदेव चूलगिरि पर्वत पर कुन्दकुन्द प्रभु की देहरी में अन्दर बैठे हैं। अन्दर प्रकाश कम होने से बैटरी के प्रकाश द्वारा कुन्दकुन्द प्रभु को और उसके नीचे के लेख को निहार रहे हैं। देहरी में एक हाथ उन्नत तीन प्रतिमा हैं, उसमें मूल प्रतिमाजी बहुत प्राचीन हैं और उसमें भी दूसरी विशेषता यह है कि वे पूर्व विदेह की ओर हाथ जोड़कर खड़े हैं, अर्थात् सीमन्धर भगवान को नमस्कार कर रहे हों—इस प्रकार खड़े हैं। कुन्दकुन्दाचार्यदेव विदेहक्षेत्र में श्री सीमन्धर प्रभु के पास गये थे, उसका ही मानो कि एक अधिक प्रमाण हो—ऐसी इस प्रतिमा के दर्शन से सबको बहुत ही आनन्द हुआ।

प्रतिमा तो पाँचों परमेष्ठियों की होती है—इसलिए यद्यपि मुनियों की भी प्रतिमा होती है, परन्तु इस प्रकार हाथ जोड़कर वन्दन करते हों—ऐसी प्रतिमा सामान्यरूप से नहीं होती। यह तो कुन्दकुन्दाचार्यदेव, सीमन्धर प्रभु के समवसरण में गये थे—यह खास

प्रसंग सूचित करने के लिये जैसे सोनगढ़ में बनायी गयी है, उसी प्रकार यहाँ भी हजार-डेढ़ हजार वर्ष पहले स्थापित हुई देखकर गुरुदेव को बहुत हर्ष हुआ। गुरुदेव ने कहा—**देखो! कुन्दकुन्द भगवान जैसे अपने सोनगढ़ में (हाथ जोड़कर खड़े हुए) हैं, वैसे ही सहज ही यहाँ निकले हैं, दोनों बहिनों ने सोनगढ़ में बनाये उस समय कहीं यहाँ की खबर नहीं थी। परन्तु सहज मेल हो गया और जितने यहाँ हैं, लगभग उतने ही सोनगढ़ में हैं।** पूर्व दिशा के सन्मुख हाथ जोड़कर खड़ी हुई मूल प्रतिमा तो बहुत प्राचीन होने से मुद्रा घिस गयी, इसलिए दोनों ओर दूसरी दो प्रतिमा (वैसी ही उसी प्रकार हाथ जोड़कर खड़ी हुई) बनायी गयी है, वह भी बहुत प्राचीन है तथा बाजू में मोरपिच्छी और कमण्डल भी उत्कीर्ण है। एक प्रतिमाजी के नीचे लेख है, उसका कितना ही भाग दब गया होने से पूरा लेख स्पष्ट नहीं पढ़ा जाता, परन्तु 'चैत्र शुक्ल तेरस' और 'कुन्दकुन्दाचार्यदेव' ऐसा नाम तो स्पष्ट पढ़ा जा सकता है। भावपूर्वक बहुत-बहुत अवलोकन करने के बाद बाहर आकर तुरन्त गुरुदेव ने पूछा—बहिनें कहाँ हैं ? बहिनश्री-बहिन के आने पर पूज्य गुरुदेव ने कहा—**यहाँ कुन्दकुन्द भगवान की प्रतिमा है। सीमन्धर भगवान की ओर हाथ जोड़कर खड़े हैं और बहुत प्राचीन है; अन्दर जाकर देखो।** तुरन्त बहिनश्री-बहिन ने देहरी में जाकर प्रसन्नतापूर्वक दर्शन किये और कुन्दकुन्द प्रभु के दर्शन से उन्हें भी बहुत ही उल्लास हुआ... 'कुन्दकुन्दाचार्यदेव सीमन्धर प्रभु के समवसरण में पधारे थे' यह प्रसंग यहाँ नजर के समक्ष ताजा तैरता था। भावपूर्वक दर्शन करने के बाद पूजन किया—

कुन्दकुन्द आदि ऋद्धिधारक मुनिन की पूजा करूँ;
ता करि पातिक हरुं सारे सकल आनन्द विस्तरुं।

इत्यादि पूजन करके सबने भाव से अर्घ्य चढ़ाया, प्रदक्षिणा की और किन्हीं-किन्हीं भावुक भक्तों ने आचार्यदेव का अभिषेक भी किया। पश्चात् थोड़ी देर भक्ति हुई—

(1) **धन्य धन्य आज घड़ी कैसी सुखकार है...**
कुन्दप्रभु दरबार लगा... कुन्दप्रभु दरबार है....
खुशियाँ अपार आज हर दिल में छाई है
कुन्दप्रभु को देख हमें आनन्द उभराते हैं... आनन्द...
कहानगुरु साथ कैसी यात्रा होती आज है...
कुन्दप्रभु दरबार लगा... कुन्दप्रभु दरबार है...

(2) **जय बोलो... जय बोलो... श्री कुन्दप्रभु की जय बोलो...**
चूलगिरि पर आप विराजे, सीमन्धर प्रभु का दर्शन करते;
भक्तजनों सब यात्रा करते, कहानगुरु की साथ... प्रभु की जय बोलो०

यात्रियों का समूह इन कुन्दकुन्दाचार्यदेव के दर्शन के लिये उत्साह से उमड़ रहा था... परन्तु देहरी तो छोटी और भक्त बहुत, इसलिए एक के बाद एक अन्दर जाकर दर्शन कर सकते थे। 'जल्दी करो, हमें जाने दो, एक ओर हटो, हमें दर्शन करने दो'—इस प्रकार भक्तजनों में दर्शन के लिये कोलाहल हो रहा था... तो दूसरी ओर जिन्होंने दर्शन कर लिये थे, वे भी हर्ष के कारण भक्ति का कोलाहल कर रहे थे। छोटी सी देहरी में रामजीभाई जैसे तो कठिनाई से मुश्किल से जा सकें, ऐसा था, तथापि जैसे-तैसे करके वे भी अन्दर जाकर दर्शन कर आये।

तत्पश्चात् गुरुदेव ने आस-पास के वातावरण का निरीक्षण किया। चारों ओर मुनियों के वास जैसा वन-जंगल शोभ रहा है, उत्तर की ओर रेवा नदी शोभित हो रही है। इस रेवा नदी के किनारे करोड़ों मुनिवर मुक्ति को प्राप्त हुए हैं, इसलिए यह पवित्र है और सिद्धक्षेत्र समान पूज्य गिनी जाती है। इस रेवा नदी के ही दूसरे नाम चेलना, अथवा नर्मदा है। आस-पास के सुन्दर दृश्यों के अवलोकन से सबको प्रसन्नता हुई। इस प्रकार गुरुदेव के साथ चूलगिरि तीर्थ की यात्रा करके जय-जयकार करते हुए सब नीचे उतरने लगे। रास्ते में कितने ही पुराने मन्दिर आते हैं, वहाँ भी दर्शन करने जाते थे।

यहाँ कुन्दकुन्द प्रभु के अनायास दर्शन होने से सबको बहुत उल्लास हुआ था। जिस प्रकार सीमन्धरनाथ के साक्षात् दर्शन से कुन्दकुन्दाचार्यदेव को परम हर्ष हुआ था; उसी प्रकार यहाँ कुन्दकुन्द प्रभु के दर्शन से सब भक्तों को बहुत हर्ष हुआ। पर्वत उतरते-उतरते पूज्य बहिनश्री-बहिन मुनिवरों की वैराग्य भरी स्तुति बोलती थीं।

ऐसे मुनिवर देखे वन में... जाके राग-द्वेष नहीं तन में...
ऐसे कुन्दमुनि (-इन्द्रजीत मुनि, कुम्भकर्णमुनि) देखे वन में... जाके....

— ऐसे मुनिवरों की स्तुति करते-करते और सिद्ध भगवन्तों की जय-जयकार गजाते हुए नीचे तलहटी में आदिनाथ भगवान के निकट आये। पर्वत में ही उत्कीर्ण चौरासी फीट उन्नत आदिनाथ भगवान का दृश्य बहुत भव्य है। भगवान के सामने बड़ा

विशाल चौक है और ऊँचे-ऊँचे भगवान के सिर के निकट दोनों ओर झरोखा है, जिस पर चढ़कर भक्त दर्शन तथा अभिषेक करते हैं और सामने से भगवान के दर्शन करने के लिये एक अगासी भी है। विशालकाय भगवान के कारण विशाल चौका बहुत ही शोभित हो रहा है। यहाँ आकर गुरुदेव ने भगवान की अद्‌भुत मुद्रा के जी-भरकर दर्शन किये और फिर भक्ति करायी। भक्ति में एकतान होकर गुरुदेव गवाते थे—

प्रभुजी आदीश्वर अलवेसर जिन अवधारिये रे लोल....
प्रभुजी मनमंदिरीये माहरे वहेला आवजो रे लोल...
प्रभुजी ध्येयस्वरूपे तुं छे भवभय वारणो रे लोल...
प्रभुजी तुमपदपंकजनी सेवा कल्पतरु समी रे लोल...

(जिनेन्द्र स्तवनमंजरी, पृष्ठ 284)

— इस प्रकार भावभीनी भक्ति कराकर अभी भी कुछ विशेष भक्ति की उमंग होने से गुरुदेव ने बहिनश्री-बहिन को भक्ति कराने के लिये कहा। गुरुदेव की आज्ञा होते ही बहिनश्री-बहिन ने भक्ति शुरु की।

आदि जिणंदजी सोहामणा रे लाल, धन्य अवतार जिनराजनो रे लाल।
गुरु प्रतापे आज देखिया रे लाल... भवभ्रमण आज मेटिया रे लाल।

यह स्तवन पूरा होने के बाद नीचे की धुन गवायी।

जय आदीश्वर जय आदीश्वर जय आदीश्वर देवा...
बडवानी में आप बिराजी हो देवनके देवा... जय०
अति उन्नत प्रभु मुद्रा सोहे... दर्शन आनन्दकारा...
कहानगुरु साथे यात्रा करतां... आनन्द अपरम्पारा... जय०

भक्ति की धुन से पर्वत गूँज रहा था... दूर-दूर तक वह धुन सुनायी देती थी... पर्वत के ऊपर पीछे रह गये यात्री वह धुन सुनकर शीघ्रता से नीचे आ रहे थे।

भक्ति पूरी होने पर गुरुदेव ने प्रभु के समीप जाकर उनके पावन चरणों का स्पर्श किया... बारम्बार चरणस्पर्श किया... और फिर हँसते-हँसते भगवान के दोनों चरणों के बीच जाकर भक्तिपूर्वक खड़े रहे। यह दृश्य बहुत सुन्दर था... ऊँचे-ऊँचे भगवान के

दोनों चरणों के बीच खड़े हुए गुरुदेव, भगवान के घुटनों तक भी नहीं पहुँचते थे। बड़े-बड़े भगवान के चरणों के बीच खड़े हुए गुरुदेव भगवान के छोटे से नन्दनवत् शोभित होते थे। जिनेन्द्रदेव और उनके लघुनन्दन के मिलन का यह भावभीना दृश्य देखकर यात्री हर्ष से जय-जयकार कर रहे थे.....

तत्पश्चात् उत्साहपूर्वक भगवान की पूजन करके, ऊपर के झरोखे में जाकर एकदम निकट से भगवान की मुद्रा के दर्शन किये, कितने ही भक्तों ने मस्तकाभिषेक भी किया... झरोखे में से भगवान का विशाल मस्तक एक मन्दिर के बड़े गुम्मट जैसा दिखायी देता है... तथा भगवान की भव्य मुद्रा एकदम निकट से देखने पर आश्चर्य और आनन्द होता है।

— इस प्रकार आनन्दपूर्वक गुरुदेव के साथ चूलगिरि (बडवानी) सिद्धक्षेत्र की यात्रा करके 'यात्रा की वाह-वाह' और जय-जयकार करते हुए सब धर्मशाला में आये और तीसरे सिद्धक्षेत्र की यात्रा पूर्ण हुई।

चूलगिरि से सिद्धिप्राप्त सिद्धभगवंतों को नमस्कार हो।
चूलगिरि में टंकोत्कीर्ण श्री आदिनाथ भगवान को नमस्कार हो।
चूलगिरि में विराजमान श्री कुन्दकुन्दाचार्यदेव को नमस्कार हो।
सिद्धिधाम की यात्रा करानेवाले कहानगुरु को नमस्कार हो॥

★ ★ ★

'पूज्यश्री कानजीस्वामी दिगम्बर जैन तीर्थयात्रा संघ' का यह वर्णन चल रहा है। सवेरे चूलगिरि सिद्धिधाम की यात्रा करके धर्मशाला में आने के बाद, वहाँ के मन्दिरों के दर्शन-पूजन किये और पश्चात् भोजन करके संघ ने बडवानी शहर की ओर प्रस्थान किया।

सबसे आगे गुरुदेव की ध्वजा लहराती 'कल्याणवर्षिनी' दौड़ी जा रही थी और उसके पीछे-पीछे अनेक मोटरों की हारमाला भक्ति करते हुए दौड़ी जा रही थी।

जय आदिनाथ जय इन्द्रजीत, जय कुम्भकर्ण देवा...
बडवानी में आप विराजे वंदन आज हमारा... जय०
मुक्तिपुरीमें आप पधार्या हमको भी ले जाओ...
गुरुजी प्रतापे यात्रा कीधी भव से पार लगाओ... जय०

इस प्रकार किसी समय धुन करते, तो किसी समय कुन्दकुन्दप्रभु के विदेह गमन सम्बन्धी स्तुति बोलते।

बहु ऋद्धिधारी कुन्दकुन्द मुनि थया कालमां,
जे श्रुतज्ञान-प्रवीण ने अध्यात्मरत योगी हता;
आचार्यने मन अेकदा जिनविरहताप थयो महा,
रे! रे! सीमन्धरजिनना विरहा पडया आ भरतमां.

(समवसरण-स्तुति)

— इस प्रकार प्रवास के दौरान मोटरों के साथ-साथ भक्ति भी चालू ही रहती... और उसमें भी जब गुरुदेव की मोटर साथ में हो, तब भक्ति का खास रंग जमता था। भक्ति करते-करते एक बजे बडवानी शहर पहुँच गये... वहाँ जिनमन्दिर में दर्शन करने के बाद पूज्य गुरुदेव का प्रवचन चल रहा है। प्रवचन के विशिष्ट मण्डप में लगभग हजार श्रोता उत्साह से श्रवण कर रहे हैं और गुरुदेव यहाँ के आदिनाथ भगवान की तथा कुन्दकुन्द प्रभु की अपार महिमा करके यात्रा का उल्लास वर्णन कर रहे हैं:

देखो, यहाँ तीर्थ पर चौरासी फुट उन्नत आदिश्वर भगवान विराजते हैं। अहा, ऐसे विशाल भगवान इस जिन्दगी में तो पहले-पहले यहीं देखे हैं। जैसी यह जिनेन्द्र प्रतिमा है, वैसा ही अन्दर चैतन्यबिम्ब आत्मा चैतन्यप्रतिमा है। ऐसे भगवान के दर्शन करते हुए 'ऐसा ही मेरा आत्मा है'—ऐसी अन्तर्दृष्टि करना वह सम्यग्दर्शन है। जीव ने अनन्त काल में सम्यग्दर्शन प्रगट नहीं किया और जिनेन्द्रदेव को भी वास्तविक स्वरूप से नहीं पहिचाना, मात्र बाहर से भगवान को देखा है, यदि अन्तर दृष्टि से सर्वज्ञ भगवान के आत्मा को पहिचाने तो अपने आत्मा का भान होकर सम्यग्दर्शन की सिद्धि हो और अल्प काल में परमात्मदशा प्रगट हो जाए। उन परमात्मा की यह प्रतिमा है। मोक्षाभिलाषी जीवों को वीतरागदशा से पहले ऐसे परमात्मा के प्रति भक्ति-पूजा का और जिस स्थान में वे विचरे हैं, उसकी यात्रा इत्यादि का भाव आये बिना नहीं रहता।

समयसार की पहली गाथा द्वारा प्रवचन का मंगलाचरण करके पश्चात् गुरुदेव ने आत्मा के एकत्व स्वरूप सम्बन्धी तीसरी, चौथी और पाँचवीं गाथा पढ़ी थी, उसमें....

'तं एयत्तविहत्तं दाएहं अप्पणो सविहवेण'

(दर्शाऊं एक विभक्त को आत्मा तने निज विभव से)

— इस पद का विवेचन करते हुए गुरुदेव ने बहुत ही भाव से कहा कि— **अहा, आत्मा का एकत्वस्वरूप समयसार में भगवान कुन्दकुन्दाचार्यदेव ने अपने आत्मवैभव से अलौकिक रीति से समझाया है। उन्होंने तीर्थंकर जैसा काम किया है। वे तो पंच परमेष्ठी पद में सम्मिलित भगवान थे। हम तो उन्हें भगवान कहकर ही सम्बोधन करते हैं।**

कुन्दकुन्द प्रभु के प्रति अत्यन्त भक्ति से गुरुदेव कह रहे हैं—

अहो! यहाँ (चूलगिरि पर्वत पर) कुन्दकुन्दाचार्य भगवान की प्रतिमाजी ऐसे हाथ जोड़कर खड़ी हैं, ऐसी प्रतिमाजी हमारे सोनगढ़ में भी है - समवसरण में सीमन्धर भगवान के सन्मुख हाथ जोड़कर खड़े हैं, उसी प्रकार यहाँ भी पूर्व में सीमन्धर भगवान की ओर हाथ जोड़कर कुन्दकुन्दाचार्यदेव खड़े हैं।

'अहो! उन्हें देखते ही मैं तो अन्दर घुस गया। कुन्दकुन्दाचार्य महाराज इस भरतक्षेत्र से महाविदेहक्षेत्र में सीमन्धर परमात्मा के पास गये थे, उनका लक्ष्य करके किसी ने यहाँ वह प्रतिमाजी बनायी है; अभी दो बहिनें (चम्पाबेन और शान्ताबेन) हैं, उन्होंने सोनगढ़ में कुन्दकुन्द भगवान की प्रतिमा इसी प्रकार हाथ जोड़े हुए बनवायी है। उस समय कहीं यहाँ का पता नहीं था। यहाँ यह दृश्य देखकर हमें तो बहुत प्रह्लाद और आह्लाद हुआ है।'

अहा! गुरुदेव के श्रीमुख से अद्भुत धारा प्रवाहित होती थी और श्रोता हर्ष से प्रसन्नचित्त होकर उसे झेल रहे थे। प्रवचन पूर्ण हो जाने के बाद भी उस अमृतपान से लोगों को तृप्ति नहीं हो रही थी, इसलिए बहुत से लोगों ने निवेदन किया कि 'महाराज! और भी थोड़ा फरमाईये।' लोगों ने भाव से विनती तो की परन्तु गुरुदेव के कार्यक्रम की नियमितता बहुत और प्रस्थान का समय हो गया था, इसलिए अधिक रुका जा सके यह सम्भव नहीं था। अन्त में लोगों ने गुरुदेव का बहुत आभार माना... और ठीक ढाई बजे आदिनाथ प्रभु तथा कुन्दकुन्द प्रभु के जय-जयकार पूर्वक गुरुदेव ने बडवानी से पावागिरि-ऊन की ओर प्रस्थान किया।

★ ★ ★

संघ के दूसरे यात्रियों ने तो पूज्य गुरुदेव के साथ ही पावागिरि की ओर प्रस्थान किया परन्तु श्री बच्छराजजी सेठ के विशिष्ट आग्रह के कारण उनकी बस के यात्रियों ने बडवानी सिद्धक्षेत्र में एक टाईम रुक जाना पड़ा। वहाँ यद्यपि बच्छराजजी सेठ ने बहुत लगनपूर्वक भोजनादि का प्रबन्ध किया था परन्तु गुरुदेव से और संघ से बिछुड़ जाने के कारण उन्हें चैन नहीं पड़ता था। इसलिए भोजन के बाद तुरन्त तलहटी में श्री बावनगजा आदिनाथ भगवान की शरण में भक्ति करने गये। बच्छराजजी सेठ इत्यादि भी साथ में थे। प्रथम, भगवान की आरती उतारकर पश्चात् बहुत भक्ति की... किसी ने भक्ति से रास लिया तो किसी ने नृत्य किया। सेठानी मनफूलादेवी ने भी उसमें उत्साह से भाग लिया था। वहाँ बहुत भक्ति करने के पश्चात् रात्रि को धर्मशाला के चौक में मानस्तम्भ के निकट सब बैठ गये और इस सिद्धक्षेत्र से मोक्ष प्राप्त इन्द्रजीत-कुम्भकर्ण इत्यादि सन्तों की कथा की गयी तथा सिद्ध भगवन्तों का स्मरण करके सम्यक्त्वादि की भावना भायी। दूसरे दिन सवेरे यहाँ से प्रस्थान करके पावागिरि-ऊन मुकाम में संघ के साथ हो गये।

बडवानी से पावागिरि की ओर जाते हुए बीच में अंजड गाँव आता है। वहाँ की एक प्रतिमाजी विछिया (सौराष्ट्र में) पूज्य गुरुदेव के हस्त से प्रतिष्ठित हुई हैं। गुरुदेव जी यहाँ से निकले तब अनेक लोग प्रेमपूर्वक दर्शन करने आये थे। तत्पश्चात् लगभग चार बजे पूज्य गुरुदेव संघसहित पावागिरि-ऊन पहुँच गये।

★ ★ ★

पावागिरि-ऊन सिद्धक्षेत्र

श्री पावागिरि-ऊन भी एक सिद्धक्षेत्र है; मुम्बई से प्रस्थान के बाद सात दिनों में यह चौथा सिद्धक्षेत्र आया। सिद्धपद के साधक कहान गुरुदेव के साथ सिद्धिधाम में विचरते हुए आत्मा बहुत प्रसन्न होता है... अहा! मानो कि सिद्ध भगवन्तों का देश गुरुदेव दिखला रहे हैं। साधक सन्तों के साथ सिद्ध भगवन्तों की नगरी में विचरते हुए भक्त संसार को भूल गये हैं... और तीर्थस्वरूप सन्तों के साथ मंगल तीर्थयात्रा का महान लाभ ले रहे हैं।

'निर्वाणकाण्ड स्तुति' में इस पावागिरि सिद्धक्षेत्र का नाम आता है परन्तु कैलाशगिरि की भाँति यह सिद्धक्षेत्र भी प्रसिद्धि में नहीं था। फिलहाल अन्तिम 23 वर्ष से (संवत् 1991 में) यह तीर्थ प्रसिद्धि में आया है। यहाँ खास बस्ती नहीं है; सड़क के किनारे धर्मशाला है, उसमें संघसहित गुरुदेव उतरे थे। धर्मशाला में ही एक मन्दिर है, वहाँ सबने दर्शन किये। यहाँ के मुनिमजी इत्यादि ने गुरुदेव के प्रति भक्तिभावपूर्वक संघ की सारी व्यवस्थाएँ की थीं और आस-पास के गाँवों में से सैकड़ों लोग यहाँ गुरुदेव के दर्शन के लिये आये थे। रात्रि में चर्चासभा थी उसमें 'दिगम्बर जैन धर्म की वास्तविक महिमा किस प्रकार है'- यह पूज्य गुरुदेव ने सुन्दर ढंग से समझाया था। तत्पश्चात् मुनिमजी ने इस सिद्धक्षेत्र का कितना ही परिचय दिया था। यहाँ धर्मशाला से निकट में ही सिद्धक्षेत्र है, वहाँ से श्री सुवर्णभद्र, मणिभद्र इत्यादि चार मुनिभगवन्त मुक्ति को प्राप्त हुए हैं। तदुपरान्त शान्तिनाथ, कुन्थुनाथ और अरनाथ, यह त्रिपुटी चक्रवर्ती तीर्थंकर भगवन्तों की विशाल भव्य मूर्तियाँ जमीन में से अखण्डित निकली हुई विराजमान है। थोड़ी ही दूर 'चेलना' नदी बहती है। इस सिद्धक्षेत्र की पूजन की जयमाला में क्षेत्र सम्बन्धी परिचय देते हुए लिखा है कि इस सिद्धक्षेत्र के बगल में 'ऊन' नाम का एक छोटा सा गाँव है। दक्षिण देश के किसी राजा को भयंकर रोग था, इस पवित्र क्षेत्र में आते ही दैवयोग से उसका रोग मिट गया, इससे हर्षित होकर यहाँ चेलना नदी के किनारे उसने सुन्दर निन्यानवें जिनमन्दिर बँधाये थे; सौ में एक कम होने से इस गाँव का नाम 'ऊन' पड़ा है। मन्दिरों के खण्डित अवशेष और बड़े-बड़े पुराने जिनबिम्बों के अवशेष आज भी यहाँ दृष्टिगोचर होते हैं। तदुपरान्त संवत् 1991 के ज्येष्ठ कृष्ण अष्टमी को यहाँ जमीन में से पाँच सुन्दर प्रतिमाजी निकली हैं, उसमें से श्री महावीर भगवान कि जिन पर संवत् 1252 अंकित है, उनकी मुद्रा बहुत प्रभावशाली है और अभी धर्मशाला के मन्दिर में विराजमान है। यह सिद्धक्षेत्र

एकान्त स्थान में सुन्दर रमणीय है। ऐसे सिद्धक्षेत्र की यात्रा के लिये गुरुदेव को उत्कण्ठा थी... यात्री भी गुरुदेव के साथ शीघ्रता से सिद्धक्षेत्र की यात्रा करने के लिये अत्यन्त आतुर थे... कोई-कोई भक्त तो अर्धरात्रि में जागकर आकाश की ओर देख रहे थे कि अब कब रात्रि व्यतीत हो... कब सवेरा हो... और कब सिद्धिधाम से भेंट हो! मानों कि रात को भी भक्तों की इस भावना की खबर पड़ गयी हो, इस प्रकार वह शीघ्रता से चली गयी। भक्त कोलाहल करते हुए नहा-धोकर यात्रा के लिये तैयार हो गये... आहाहा! ऐसी सुन्दर यात्रा को देखकर सूर्यदेव का भी मन हो गया कि चलो न, मैं भी ऐसे सन्त के साथ सिद्धिधाम की यात्रा करूँ! इसलिए वे भी दौड़ते-दौड़ते आये। (सूरजदेव ज्योतिषी देवों के इन्द्र हैं और जिनेन्द्र भगवान के भक्त हैं।)

पावागिरि सिद्धक्षेत्र की यात्रा

माघ कृष्ण अष्टमी : सवेरे जय-जयकार करते हुए यात्रियोंसहित पूज्य गुरुदेव पावागिरि सिद्धिधाम की यात्रा के लिये जा रहे हैं.... बहिनश्री-बहिन भी उमंग से भक्ति गाते-गाते साथ में चल रहे हैं—

चालो... चालो... सौ हलीमलीने आज गुरुवर साथे जइये...
गावो... गावो... सौ प्रभुजीनां गुणगान... जात्रा करवा जइये....
जुओ... जुओ... आ मुनिवरोनां धाम... गुरुवर साथे जइये...
रुडा... रुडा... आ पावागिरि सिद्धिधाम... जात्रा करवा जइये....

धर्मशाला से पावागिरि सिद्धक्षेत्र एकदम निकट में ही है... यहाँ पर्वत नहीं है परन्तु सामान्य टेकरी जैसे ऊँचे स्थान पर मन्दिर इत्यादि हैं। भक्ति गाते-गाते पाँच-सात मिनिट में वहाँ पहुँच गये; सबसे पहले उन्नत मानस्तम्भ के दर्शन हुए... यह मानस्तम्भ दूर-दूर से आवाज लगाकर यात्रियों को बुला रहा है कि 'आओ... रे... आओ! जिनेन्द्र भगवन्त इस पावन सिद्धिधाम में विराज रहे हैं... उनकी चरण सेवा करने आओ।' यात्री भी गुरुदेव के साथ उत्साहपूर्वक जिनमन्दिर में गये... अन्दर जाकर नजर की... परन्तु अरे! भगवान कहाँ? थोड़ी देर तो सब स्तब्ध हो गये। वहाँ तो सामने भोंयरा जैसा दिखायी दिया, उसमें भगवान विराजमान थे। जिस प्रकार चिदानन्द प्रभु का दर्शन करने के लिये जगत से भिन्न पड़कर अन्तर में गहरे उतरना पड़ता है; उसी प्रकार यहाँ भी, इन भगवान

के दर्शन करने के लिये, जगत के वातावरण से भिन्न पड़कर इस भोंयरे में गहरे उतरना पड़ता था। इस प्रकार भगवान मानो कि मौनरूप से ऐसा ही उपदेश दे रहे थे कि 'चैतन्य के दर्शन करने के लिये अन्तर में गहरे उतरो।' अन्दर उतरकर विशाल-विशाल तीन भगवन्तों को निहारते ही गुरुदेव तो आश्चर्य को प्राप्त हुए... अहा! जैसे चैतन्यदर्शन से आनन्द होता है, उसी प्रकार गुरुदेव को इन भगवान के दर्शन से आनन्द हुआ... 'वाह! ऐसे भगवान!' ऐसा कहते ही वे भगवान के सन्मुख बैठ गये... और भगवान की मुद्रा के सन्मुख इस प्रकार ताक रहे थे मानो कि भगवान से अन्तर की बातें करते हों। लगभग बीस फीट उन्नत इस भोंयरा में सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्ररूप रत्नत्रय की भाँति शान्तिनाथ-कुन्थुनाथ-अरनाथ ये तीन चक्रवर्ती तीर्थंकर भगवन्तों की त्रिपुटी अद्भुत शोभित हो रही है। बीच के भगवान लगभग पन्द्रह फीट उन्नत हैं और अगल-बगल के भगवन्त दस फीट उन्नत हैं... श्याम रंग के तीनों भगवन्त, मानो कि अभी ही चक्रवर्ती का राज छोड़कर मुनि हुए हों, ऐसी अद्भुत वैराग्य मुद्रा से शोभित हो रहे हैं। गुरुदेव कहते हैं कि 'अहा! अपने तो यह सब जीवन में पहले-पहले ही देखते हैं।' गुरुदेव के साथ ऐसे भगवन्तों के दर्शन होने से बहिनश्री-बहिन अत्यन्त ही प्रसन्न हुई।

थोड़े से वर्ष पहले यहाँ जमीन में पोला में प्रतिमा जैसा ज्ञात होने से खुदाई करने पर ये तीन अखण्ड प्रतिमाजी निकले... यहाँ से हटाकर जिनमन्दिर में विराजमान करने की इच्छा हुई थी परन्तु हटाये नहीं जा सके। इसलिए इन भगवन्तों को ऐसे के ऐसे रखकर इनके आसपास में मन्दिर बना दिया गया है। इस कारण भगवन्त भोंयरा में विराजमान हैं। गुरुदेव के साथ-साथ बहुत भावपूर्वक सबने दर्शन करके अर्घ्य चढ़ाया। भोंयरा छोटा और भक्तों की भीड़ बहुत, इसलिए सबने क्रम से दर्शन किये... परन्तु भक्तों को तृप्ति नहीं हुई... अहा जिन तीर्थंकर का रूप हजार-हजार नेत्रों से और घण्टों-घण्टों तक निहारने पर भी इन्द्र जैसे को तृप्ति नहीं होती तो यहाँ मात्र दो ही चक्षु से और मात्र थोड़ी ही मिनिट में उन भगवन्त को निहारने से तृप्ति कहाँ से होगी? अतृप्तरूप से दर्शन करके मन्दिर में विराजमान दूसरे भगवन्तों के दर्शन किये तथा यहाँ से मुक्ति प्राप्त श्री सुवर्णभद्र आदि चार मुनिभगवन्तों के पवित्र चरण पादुका के दर्शन और स्पर्शन करके, जय-जयकार करते हुए सब मानस्तम्भ के पास के चौक में आ गये और वहाँ तीर्थक्षेत्र की पूजन की। स्वर्णपुरी का संघ सुवर्ण मुनि की भक्ति करना कैसे भूले?

जय सुवर्णमुनि जय सुवर्णमुनि जय सुवर्णमुनि देवा,
पावागिरिथी मुक्ति पधार्या हो देवनके देवा...
सुवर्णपुरीना भक्तो तारी करे हृदय से सेवा... जय सुवर्ण०

सुवर्णभद्रादि मुनिवरों के इस सिद्धिधाम में भक्ति का ऐसा सुवर्ण अवसर प्राप्त होने से सुवर्णपुरी के भक्तों को बहुत हर्ष हुआ।

चौक में खड़े-खड़े थोड़े दूर एक स्वच्छ नदी बहती हुई दिखायी देती है—उसका नाम है 'चेलना।' जैसे चेलना रानी को अनेक विशाल-विशाल जिनमन्दिर बँधाने का शौक था, उसी प्रकार इस नदी को भी अपने दोनों किनारे पर अनेक जिनमन्दिर धारण करने का शौक होने से ही कदाचित् इसका नाम चेलना पड़ा होगा। निर्वाणकाण्ड स्तुति में कहते हैं कि—

पावागिरिवर सिहरे, सुवण्णभद्दाइ मुणिवरा चउरो।
चेलणा णई तडग्गे, णिव्वाण गया णमो तेसिं॥ 13॥

चेलना नदी के किनारे पावागिरिवर शिखर के ऊपर सुवर्णभद्रादि चार मुनिवर निर्वाण पधारे, उन्हें नमस्कार हो।

ऐसे इस पावागिरि सिद्धिधाम की आनन्दपूर्वक यात्रा करके, उसकी बगल में ही आयी हुई छोटी पहाड़ी के ऊपर के मन्दिरों के दर्शन किये। उनमें से एक मन्दिर में पूज्य गुरुदेवश्री के हस्त से राजकोट में प्रतिष्ठित हुए शान्तिनाथ भगवान विराजमान थे। अहा, दूर-दूर के देश में भी जगह-जगह गुरुदेव के सुहस्त से सौराष्ट्र में प्रतिष्ठित (पंच कल्याणक) हुए भगवन्तों को देखकर आनन्द होता था... भारत के कौने-कौने में व्याप्त हो गया कहान गुरु का महान प्रताप देखकर सबको आश्चर्य होता था। इस प्रकार आनन्दपूर्वक पूज्य गुरुदेव के साथ इस पावागिरि सिद्धिधाम की यात्रा करके जय-जयकार करते हुए सब धर्मशाला की ओर चल दिये... और चौथे सिद्धक्षेत्र की यात्रा पूर्ण हुई।

पावागिरि से सिद्धि प्राप्त सिद्ध भगवन्तों को नमस्कार हो।
पावागिरि पर विराजमान त्रिपुटी तीर्थंकर भगवन्तों को नमस्कार हो।
पावागिरि सिद्धिधाम की यात्रा करानेवाले श्री कहान गुरुदेव को नमस्कार हो।

★ ★ ★

सिद्धिधाम की यात्रा करके आने के बाद, अब धर्मशाला में पूज्य गुरुदेवश्री का प्रवचन चल रहा है। '**अहो! ज्ञानानन्दस्वरूप यह आत्मा बारम्बार श्रवण-मनन और ध्यान करने योग्य है। जिसे जिसकी प्रीति होती है, वह बारम्बार उसे याद करता है। जैसे विवाह इत्यादि में मण्डप रोपते हैं, तब सगे-सम्बन्धियों को याद करते हैं और आमन्त्रण देकर बुलाते हैं कि अमुक भाई आप जल्दी आना... इसी प्रकार यहाँ मुक्ति के मण्डप में आचार्यदेव सर्व सिद्ध भगवन्तों को और सन्तों को आमन्त्रण देकर बुलाते हैं कि अहो, शुद्धात्मा को प्राप्त कर चुके सिद्ध भगवन्तों और शुद्धात्मा के साधक सन्तों! मेरे आत्मा में आप पधारो... मेरे मुक्ति महोत्सव के मंगल मण्डप में आप शीघ्र पधारो। आचार्यदेव को शुद्ध आत्मा ही प्रिय है इसलिए शुद्ध आत्मा को प्राप्त सिद्ध भगवन्तों को तथा साधक मुनिवरों को बारम्बार स्मरण कर-करके अपने आँगन में पधराते हैं। देखो, अपने भी बराबर यात्रा का महोत्सव चल रहा है, उसमें यह बात आयी है। यात्रा के महोत्सव में सिद्ध भगवन्तों और सन्त मुनिवरों को याद करते हैं।**'

इस प्रकार सिद्ध भगवन्तों को और मुनियों को आँगन में बुलाकर, उस पवित्र पद की भावना का गुणगान करते हुए गुरुदेव उपशान्तभाव से कहते हैं कि '**अरे! चक्रवर्ती के वैभव में भी सुख नहीं है। धर्मात्मा उसे भी छोड़-छोड़कर मोक्षसुख को साधते हैं। देखो न, यह शान्तिनाथ-कुन्थुनाथ-अरनाथ ये तीनों भगवन्त पहले चक्रवर्ती थे, परन्तु उन्होंने उसे छोड़कर मुनिपद अंगीकार किया है और चैतन्य के आनन्द का ध्यान कर-करके मोक्षदशा को साधा है। यहाँ उनकी ही बड़ी-बड़ी प्रतिमाजी हैं। अपने सौराष्ट्र में कहीं ऐसे बड़े भगवान नहीं हैं। ऐसे विशाल भगवान तो यहाँ पहले-पहले देखे हैं। तीनों भगवन्तों की महाभव्य प्रतिमाजी है। ये तीनों भगवन्त पहले चक्रवर्ती थे परन्तु साथ ही साथ आत्मा के ज्ञानानन्दस्वरूप का भान था अर्थात् आत्मा के अतिरिक्त बाहर में चक्रवर्ती पद के वैभव में कहीं सुख नहीं मानते थे। पश्चात् वैराग्य होने पर चक्रवर्ती पद छोड़कर आनन्दस्वरूप आत्मा के ध्यान में मग्न हुए... ऐसे मग्न हुए कि अल्प काल में केवलज्ञान प्रगट करके परमात्मा हुए—धर्म चक्रवर्ती हुए।**'

— गुरुदेव का भावभीना प्रवचन सुनकर यात्री तथा आसपास से आये हुए सैंकड़ों साधर्मी बन्धु बहुत ही प्रसन्न हुए... गुरुदेव का ऐसा प्रभावशाली संघ देखकर यहाँ के

मुनिमजी तो इतने अधिक प्रसन्न हो गये कि उन्होंने अपना प्रमोद व्यक्त करते हुए कहा ***अहा! यह सब देखकर मुझे बहुत हर्ष होता है और ऐसा सन्देह होता है कि क्या हम यह सब सच देख रहे हैं कि स्वप्न देख रहे हैं!*** वास्तव में गुरुदेव के पधारने से यह निर्जन जैसा स्थान भी विशाल शहर के समान शोभित होता था... और चारों ओर आनन्द–आनन्द छा गया था...

यहाँ कुछ यात्री बाद में पहुँचे थे, उन्हें गुरुदेव के साथ यात्रा में न पहुँच सके इसलिए शुरुआत में तो यद्यपि खेद होता था परन्तु प्रवचन में गुरुदेव के श्रीमुख से ही यात्रा का कितना ही वर्णन सुनकर खेद विस्मृत हो गया और प्रवचन के पश्चात् उत्साहपूर्वक जाकर इस पावन सिद्धिधाम की यात्रा कर आये, भक्ति–पूजन और अभिषेक भी किया। यात्रा के बाद भोजन करके दोपहर में यात्रासंघ की बहुत सी मोटरें खण्डवा शहर की ओर रवाना हो गयी। मात्र कल्याणवर्षिनी और सत्सेविनी ही पीछे रुक गयी।

इस पावागिरि से दस मील ऊपर खरगोन गाँव है। वहाँ के साधर्मी बन्धुओं को ऐसा लगा कि अहो! कानजीस्वामी जैसे महा प्रभावशाली पुरुष यहाँ तक आवें और अपना गाँव उनके लाभ से वंचित रह जाए—यह कैसे बने? इसलिए बहुत ही आग्रह करके वे गुरुदेव को खरगोन ले गये। खरगोन में आधे घण्टे प्रवचन करके तथा वहाँ के चैत्यालय के दर्शन करके गुरुदेव वापिस पावागिरि आ गये।

पूज्य गुरुदेव ने सायंकाल का भोजन बहिनश्री–बहिन के यहाँ किया था। यात्रा के दौरान गुरुदेव अपने आँगन में बैठकर भोजन करें, तब भक्तों को बहुत हर्ष होता था। भोजन के पश्चात् सायंकाल पूज्य गुरुदेव फिर से पावागिरि–सिद्धिधाम में गये थे। सवेरे भक्तों की अत्यधिक भीड़ के कारण भगवान के साथ बातें करना अधूरी रह गयी होगी, इसलिए अभी अब भीड़ कम होने से फिर से भगवान से जी–भरकर बातें करने आये थे। पूज्य बहिनश्री चम्पाबेन, पूज्य बेन शान्ताबेन, रामजीभाई, नेमीचन्दभाई, हिम्मतभाई, ब्रजलालभाई तथा चन्दुभाई इत्यादि भक्त पूज्य गुरुदेव के साथ थे। गुरुदेव के साथ में भोंयरा में उतरकर सबने तीर्थंकर त्रिपुटी का भावपूर्वक अवलोकन किया। अहा! कैसा शान्तिधाम! और कैसे भव्य भगवान!!! वहाँ गुरुदेव के साथ भोंयरा में बैठे–बैठे उन भगवन्तों के दर्शन करते हुए सबको अत्यधिक प्रमोद हुआ और उत्साहपूर्वक भक्ति की—

गुरु कहान जिनने नीरखे, हैडामां हरखी जाये...
तुम वारणा उतारे... सुवर्ण मंगल थाये... आज मारे रे...
गुरु कहानना प्रतापे... जिनराज भेटया आजे...
आ पंचम काल भूलाये... नित यात्रा-मंगल थाये... आज मारे रे...

इस प्रकार आनन्दपूर्वक गुरुदेव के साथ घूमकर यात्रा करके धर्मशाला में आये... पूज्य गुरुदेव के साथ फिर से इस प्रकार शान्ति से उल्लास भरी यात्रा हुई, इससे बहिनश्री-बहिन इत्यादि को बहुत ही आनन्द हुआ... और इस प्रकार गुरुदेव के कदम-कदम पर उनके साथ यात्रा करते-करते और देव-गुरु की भक्ति करते-करते चैतन्यपद की पूर्णता पाने तक सदा आपश्री के साथ ही रहें, ऐसी भावना व्यक्त की। रात्रि में जिनमन्दिर में भक्ति की... और दूसरे दिन सवेरे जिनेन्द्र भगवान के दर्शन करके जय-जयकारपूर्वक खण्डवा शहर की ओर प्रस्थान किया। मार्ग में साथ-साथ में दौड़ रही 'कल्याणवर्षिनी' और 'सत्सेवनी' जगत के जीवों को ऐसा प्रसिद्ध करती थी कि आत्मा में 'कल्याण की वृष्टि' तभी होती है कि जब 'सत् का सेवन' किया जाए।

★ ★ ★

खण्डवा शहर

माघ कृष्ण नवमीं : अनेकविध शृंगार से शोभित खण्डवा शहर आज हर्षमय कोलाहल से गूँज रहा है... हजारों भक्तजन गुरुदेव का स्वागत करने के लिये उत्साहपूर्वक गुरुदेव के पधारने की राह देख रहे हैं... जगह-जगह सुन्दर दरवाजे, कमान, ध्वजा, स्वागत सूत्र इत्यादि से नगरी शोभित हो रही है, बैण्ड-बाजों के मधुर नाद गाज रहे हैं और लाउडस्पीकर द्वारा पूरे गाँव में घोषणा हो रही है। समस्त दिगम्बर जैन समाज के उपरान्त गाँव के दूसरे हजारों प्रजाजन भी स्वागत के लिये एकत्रित हुए हैं और विगत दिन सायंकाल यहाँ पहुँच गये यात्री भी स्वागत में जुड़े हैं.... ऐसे तीन-चार हजार लोग गुरुदेव की राह देख रहे हैं।

इस ओर, गुरुदेव पावागिरि से प्रस्थान करके बीच में भिखन गाँव में छोटे से नये जिनमन्दिर के दर्शन करके साढ़े आठ बजने पर खण्डवा शहर पधारे। स्वागत के सुर का मानो कि जवाब देती हो, वैसे दूर से ही मीठे मधुर सुर गूँजाती हुई कल्याणवर्षिनी आ पहुँची... मोटर में से उतरते ही, दर्शन हेतु आतुर जनता ने दौड़कर गुरुदेव को घेर लिया... चारों ओर जय-जयकार नाद छा गया... और स्वागत जुलूस शुरु हुआ... सबसे आगे शुरुआत में धर्मध्वज लहराते हुए दो सुसज्जित घुड़सवार चलते थे... पश्चात् ध्वजा और बैण्डबाजा की टुकड़ियाँ और उसके पीछे एक मोटर लारी में भजन मण्डली लाउडस्पीकर से संगीत द्वारा स्वागत करती हुई चल रही थी; तत्पश्चात् पाठशाला के बालक-बालिकाएँ सुसज्ज होकर श्री समयसार की गाथाएँ बोलते हुए चल रहे थे और इस प्रकार उनके आध्यात्मिक संस्कार ज्ञात हो रहे थे। तत्पश्चात् केशरिया साड़ी और केशरिया बैज (बिल्ला) से सुसज्ज बहिनें चल रही थी और तत्पश्चात् बैण्डबाजा और पुरुषों के बीच पूज्य गुरुदेवश्री शोभित हो रहे थे। पश्चात् संघ की अनेक मोटरों की हारमाला धीरे-धीरे चल रही थी। जुलूस में पहले बहिनें और बाद में भाई-यह यहाँ की एक विशेषता थी... यहाँ के समाज ने अन्तर के उल्लासपूर्वक धूमधाम से भव्य स्वागत किया। स्वागत जिनमन्दिर में आने पर गुरुदेव ने दर्शन किये... तत्पश्चात् जिनमन्दिर के सामने के भव्य मण्डप में चार-पाँच हजार लोगों की सभा में गुरुदेव ने मंगल प्रवचन किया... उसमें आत्मा की पवित्रता और आनन्द का अद्भुत वर्णन किया। प्रवचन सुनकर लोग तो ऐसे

स्तब्ध बन गये कि प्रवचन पूर्ण होने पर भी कोई उठता नहीं था! लोग तो कहते हैं कि अभी और प्रवचन करो। अन्त में एक-दो बार घोषित करना पड़ा कि अभी का कार्यक्रम पूरा हुआ... अब दोपहर में प्रवचन होगा!—तब लोग धीरे-धीरे बिखरने लगे।

खण्डवा में दिगम्बर जैन के लगभग दौ सौ घर हैं, सब सोनगढ़ के प्रेमी हैं। संघ के भोजनादि की समस्त व्यवस्था यहाँ के जैन समाज की ओर से बहुत ही उल्लासपूर्वक की गयी थी... और छोटे-बड़े सब भाई वात्सल्यपूर्वक संघ की आवभगत में रुके हुए थे। पहले संघ के प्रस्थान के समय ऐसा लगता था कि अनजाने देश में जा रहे हैं, लोग भी अनजाने हैं, इसलिए बीच के गाँव में तो कठिनाई रहेगी—परन्तु उसके बदले छोटे या बड़े प्रत्येक गाँव में दिगम्बर जैन समाज ने बहुत ही वात्सल्य से गुरुदेव का और संघ का ऐसा अद्‌भुत स्वागत किया कि सब आश्चर्य में पड़ गये। उसमें भी यहाँ के समाज ने तो संघ को एक बारात से भी अधिक उमंग से सम्हालकर 'सांचु सगपण साधर्मी तणुं' (सच्चा संबंध साधर्मी का) इस कहावत को चरितार्थ किया था। संघ को जीमाने के उपरान्त गर्म पानी, साबुन, तेल इत्यादि छोटी से छोटी बाबत में भी प्रत्येक निवासस्थान पर व्यवस्था थी। कोई उनकी प्रशंसा करे कि 'तुमने तो बहुत अच्छी व्यवस्था की है,' तो तुरन्त सब जवाब देते कि 'अरे! हमारा ऐसा भाग्य कहाँ से कि कानजीस्वामी हमारे यहाँ पधारें!! सोनगढ़ के यात्रीगण हमारे यहाँ कहाँ से!!' यात्रियों को ऐसी तो कल्पना भी नहीं थी कि यात्रा के दौरान ऐसे-ऐसे अद्‌भुत तीर्थ देखने को मिलेंगे... और जगह-जगह इतने अधिक विशाल भाव से गुरुदेव का स्वागत होगा।

खण्डवा शहर को पूज्य गुरुदेव के दो दिन के कार्यक्रम का जो लाभ मिला, उसका मुख्य यश स्वर्गीय अमृतलाल नरसीभाई के हिस्से में जाता है। संवत् 2010 तथा 2011 के पर्यूषण में वे यहाँ वांचन करने आये थे, तब से यहाँ के समाज को गुरुदेव के प्रति विशेष प्रेम जागृत हुआ; और शुरुआत में यात्रा के कार्यक्रम इत्यादि का कामकाज मुख्यरूप से श्री अमृतभाई ही सम्हालते थे, इसलिए खण्डवा के भाईयों का विशिष्ट प्रेम देखकर उन्होंने यहाँ का दो दिन का कार्यक्रम बनाया था। यहाँ के बहुत भाई-बहिन भी वात्सल्यवश होकर स्वर्गस्थ श्री अमृतलालभाई को याद करते थे... गुरुदेव ने भी यहाँ उन्हें याद करते हुए कहा कि 'यह तो अमृतलालभाई का गाँव कहलाता है परन्तु आज

उनकी कमी पड़ गयी है, वे बहुत मीठे व्यक्ति थे... और प्रभावना के लिये उनकी बहुत भावना थी। इस यात्रा की व्यवस्था के काम में भी उन्होंने बहुत मेहनत की थी... परन्तु वे यात्रा में नहीं आ सके....'

यहाँ संघ का निवास कन्याशाला में तथा जैन धर्मशाला में था... पूज्य गुरुदेवश्री का निवास श्री प्रेमचन्द सेठ के मकान में था। यहाँ एक विशाल जिनमन्दिर है, पार्श्वनाथ प्रभु की भव्य प्रतिमाजी के उपरान्त दूसरे अनेक प्राचीन प्रतिमाएँ तथा चाँदी के चन्द्रप्रभ विराजते हैं, शान्तिनाथ प्रभु की एक प्रतिमा विशेष प्राचीन मानी जाती है। (जिसके ऊपर संवत् ८३ ऐसा उल्लेख है)।

दोपहर को पूज्य गुरुदेव के प्रवचन में जैन समाज के उपरान्त शहर की जनता ने भी बड़ी संख्या में लाभ लिया था। दिगम्बर जैन के घर दो सौ होने पर भी प्रवचन में तीन-चार हजार श्रोता आते थे... पूज्य गुरुदेव भी आत्मा को धर्म कैसे हो—यह बात सरल रीति से समझाते थे और सम्यग्दर्शन पर विशेष वजन देकर कहते थे कि—'**अनन्त काल से संसार की चार गति में परिभ्रमण करते हुए जीव ने सम्यग्दर्शन कभी प्रगट नहीं किया। सम्यग्दर्शन के बिना दूसरा सबकुछ वह कर चुका है, परन्तु उसके भवभ्रमण का अन्त नहीं आया। सम्यग्दर्शन ऐसी चीज़ है कि यदि एक बार भी वह प्रगट करे तो अल्प काल में जीव के भवभ्रमण का अन्त आकर उसकी मुक्ति हो जाती है। ऐसा सम्यग्दर्शन यह आत्मा के घर की चीज़ है। आत्मा के अखण्ड स्वभाव के सन्मुख देखकर उसकी प्रतीति करना, वही सम्यग्दर्शन है और वही करनेयोग्य है।**'

प्रवचन के पश्चात् भक्ति हुई थी। भक्तों की विशाल भीड़ मन्दिर में तो समाये, यह सम्भव नहीं था। इसलिए श्रीजी-भगवान को मण्डप में विराजमान करके, पूज्य बहिनश्री-बहिन ने भक्ति करायी थी।

शान्ति प्रभुजी रे.... विनति मोरी मानना,....
आज भक्ति पाई मैंने प्रभु के दरबार में... प्रभु के०

बहिनश्री-बहिन की भक्ति की लगन देखकर वहाँ के लोग आश्चर्यचकित हो जाते थे... और कहते थे कि अभी भक्ति कराओ... ऐसी अद्‌भुत भक्ति हमने कभी नहीं देखी।

रात्रि को तत्त्वचर्चा का कार्यक्रम था... खण्डवा की बहिनों की विशेष प्रार्थना से

समस्त बहिनों को भी तत्त्वचर्चा का लाभ मिलने से बहिनों में हर्ष छा गया था। तत्त्वचर्चा के समय ईश्वर का सृष्टि कर्तृत्व या अद्वैत ब्रह्म (ब्रह्म सत् जगत मिथ्या) इत्यादि मान्यता में क्या भूल है और जैनधर्म का वास्तविक स्वरूप क्या है, यह गुरुदेव ने बहुत सुन्दर रीति से समझाया था। तत्त्वचर्चा में भी हजारों लोगों ने लाभ लिया था।

इस प्रकार खण्डवा शहर का पहले दिन का कार्यक्रम पूरा हुआ। संघ लगभग पाँच सौ मील का प्रवास कर चुका था, इसलिए यात्रियों को थोड़े आराम की आवश्यकता थी। यहाँ दो दिन का कार्यक्रम होने से संघ को थोड़ा आराम मिल गया।

माघ कृष्ण दशम : सवेरे यात्रियों ने जिनमन्दिर में दर्शन-पूजन किये... तत्पश्चात् गुरुदेव का प्रवचन हुआ। प्रवचन के पश्चात् यात्रियों ने शहर देखा। दोपहर को गुरुदेव का प्रवचन सुनकर तुरन्त यहाँ से प्रस्थान करना था, इसलिए भोजन के बाद यात्रियों ने सामान तैयार करके मोटरों में व्यवस्थित कर दिया। दोपहर 02 से 03 प्रवचन चलता था, तब मण्डप के आसपास मोटरों की कतार प्रस्थान के लिये तैयार होकर खड़ी थी और बहुत से यात्री तो मोटर रवाना हो जाने के डर के कारण मोटर में ही बैठे-बैठे प्रवचन सुन रहे थे... क्योंकि कहीं न कहीं दूसरे काम में रुके हुए यात्रियों को छोड़कर मोटर रवाना हो जाने का अनुभव हो गया था, इसलिए उस बावत में यात्री सावधानी रखते थे। प्रवचन पूरा होते ही अनेक मोटरें एक साथ हॉर्न बजाती हुई सनावद की ओर विदा हुईं। विदा होते हुए यात्री इस गाँव के वात्सल्य के संस्मरण साथ ले गये।

गुरुदेव खण्डवा में दो दिन रहे, उस दौरान वहाँ बहुत जागृति आ गयी; लोग दूसरा सब भूलकर सवेरे, दोपहर, शाम गुरुदेव के आसपास घूमा करते थे... गुरुदेव के प्रस्थान के समय उन्हें बहुत विषाद लगा और विदा के प्रसंग में गद्‌गद् होकर वे कहते थे— 'स्वामीजी! आपने पधारकर हमारे गाँव के ऊपर बहुत उपकार किया। अब आप सारे गाँव को आशीर्वाद देते जाओ कि हम सबको सत्‌धर्म का प्रेम बढ़े।' तदुपरान्त आगे के सनावद-सिद्धवरकूट इत्यादि स्थलों में संघ की व्यवस्था में सहायता करने के लिये यहाँ से खास स्वयंसेवक भेजे। खण्डवा से प्रस्थान करके गुरुदेव सायंकाल साढ़े चार बजने पर सनावद पहुँचे।

★ ★ ★

सनावद

सायंकाल गुरुदेव के आ पहुँचते ही यहाँ की समाज ने उत्साहपूर्वक ग्राम को श्रृंगारित करके धूमधाम से स्वागत किया... बहुत से यात्री आ गये थे, उन्होंने भी स्वागत में भाग लिया। गाँव छोटा था, तो भी उत्साह बहुत था। स्वागत के बाद यहाँ के तीन प्राचीन भव्य मन्दिरों के दर्शन किये और पश्चात् भोजन किया। यद्यपि शाम का पाथेय यात्रियों के साथ ही था तो भी यहाँ की समाज ने बहुत आग्रहपूर्वक यात्रियों को जीमाया। भोजन के बाद यात्रियों ने जिनमन्दिर में जाकर भक्ति की थी।

रात्रि में धर्मशाला में चालू नियमानुसार तत्त्वचर्चा का कार्यक्रम था, परन्तु यहाँ के लोगों की विशेष प्रार्थना से गुरुदेव ने थोड़ा-सा प्रवचन भी किया... आहाहा! गुरुदेव का प्रवचन अद्‌भुत था... ऐसा अद्‌भुत प्रवचन सुनकर लोग 'असन्तुष्ट' रहे क्योंकि ऐसी मीठी मधुर वाणी थोड़ी ही देर सुनने को मिली, उसमें सन्तोष कहाँ से होगा? उन्हें तो यह अमृतवाणी अधिक सुनने की छटपटाहट लगी, इसलिए सैकड़ों लोगों ने खड़े होकर बहुत ही आग्रहपूर्वक गुरुदेव को दूसरे दिन यहाँ एक प्रवचन करने की प्रार्थना की... परन्तु दूसरे दिन तो सिद्धवरकूट की यात्रा का कार्यक्रम निश्चित हो गया था... इसलिए किसी प्रकार यहाँ रुका ही नहीं जा सकता था, तब दूसरी ओर से सैकड़ों लोगों ने गुरुदेव के चारों ओर घेरा डालकर प्रवचन के लिये असाधारण आग्रह किया और हठ करके ही बैठ गये कि 'प्रवचन कराये बिना हम आपको नहीं छोड़ेंगे' इतनी आग्रह भरी प्रार्थना देखकर यात्री तो छक्क हो गये। उन लोगों की गुरुदेव का प्रवचन सुनने के लिये तीव्र उत्कण्ठा देखकर यद्यपि हर्ष होता था, परन्तु दूसरे दिन का निश्चित हुआ कार्यक्रम भी बदला नहीं जा सकता था। इसलिए संघ के मन्त्रीजी तो उलझन में आ गये। अन्त में गुरुदेव ने कहा कि सिद्धवरकूट की यात्रा करके वापस आते हुए एक घण्टे यहाँ आ जाएँगे।—इस प्रकार गुरुदेव से हाँ कराकर ही वे शान्त हुए। आहा! गुरुदेव ने प्रवचन प्रदान करने का स्वीकार करते ही हर्षित होकर लोगों ने कैसे जोश से महावीर भगवान की जय बुलायी! छह महीने के वाद-विवाद के पश्चात् अकलंकस्वामी की विजय होने पर जैसे हर्षनाद से 'जैनधर्म की जय' बुलायी होगी, वैसे ही हर्षनाद से यहाँ 'महावीर भगवान की जय' और 'कानजीस्वामी की जय' बुलायी थी—यह प्रसंग देखकर आश्चर्य होता था कि अहा! गुरुदेव की वाणी सुनने के लिये भारत के जीव कितने अधिक आतुर हैं!

यह गाँव छोटा था और संघ को यहाँ रात्रि में रहना था। बहुत से यात्री धर्मशाला में सोये, तो बहुत से यात्री अपनी-अपनी बस में ही सो गये। कितने ही किसी साधर्मी के यहाँ सोये और कितने ही पेड़ी पर सोये। पौष कृष्ण ग्यारह के सवेरे लगभग चार बजे पहले जगकर सबने बिस्तर इत्यादि तैयार किये... और मंगलस्तुति करते-करते गुरुदेव के साथ सिद्धवरकूट की ओर प्रस्थान किया। छह बजे ओंकारेश्वर घाट पहुँचे। अब यहाँ से सिद्धवरकूट जाने के लिये लगभग तीन मील का नौका विहार करना था। मोटर में छह सौ मील की सवारी करने के बाद यह नौका विहार का नवीन प्रसंग आने से सब हर्षित हो रहे थे।

★ ★ ★

सिद्धवरकूट जाने पर नौका विहार

माघ कृष्ण ग्यारह : ओंकारेश्वर घाट पर शहनाई के सुर बज रहे हैं। अनेक नौकाओं के बीच ध्वजाओं से शोभित गुरुदेव की नौका किनारे पर तैयार खड़ी है। मन्द हास्यपूर्वक 'जय भगवान' कहते हुए गुरुदेव नौका में पधारे, गुरुदेव के साथ-साथ उस नौका में प्रमुख श्री रामजीभाई, मन्त्री श्री नेमीचन्दभाई पाटनी, पण्डित हिम्मतलालभाई, बृजलालभाई इंजीनियर, मणिलालभाई खारा, ब्रह्मचारी बालक चन्दुभाई, अमुभाई-हरिभाई तथा सतीशचन्द्र इत्यादि अनेक भक्त बैठे थे। पूज्य बहिनश्री-बहिन (चम्पाबेन-शान्ताबेन) तो ऐसे आनन्द प्रसंग में मुख्य होते ही हैं। दूसरी नौकाएँ भी अनेक भक्तजनों से भर गयी... चारों ओर से यात्री हर्ष का कोलाहल कर रहे हैं... गुरुदेव नौका में खड़े-खड़े हर्षमय वातावरण और आसपास के दृश्य निहार रहे हैं... सब नौकाएँ तैयार हो जाने पर गुरुदेव नौका में रखी हुई कुर्सी पर बैठे... आहा! ...भक्तों को भवसागर से तारनेवाले गुरुदेव नौका में नाविक स्थान में कैसे शोभित हो रहे हैं!—उनकी प्रसन्न मुद्रा मानो कि ऐसा कह रही है कि 'अरे! भेदज्ञानरूपी नौका द्वारा अनन्त भवसमुद्र को तिर जानेवाले साधकों को यह छोटी नदी पार करना तो किस हिसाब में है!' भक्त तो गुरुदेव के साथ के नौका विहार से आनन्द के कारण डोल उठें, उसमें क्या आश्चर्य है! परन्तु नौका भी आनन्द से डोल रही है...

थोड़ी देर में नौकाएँ चलने लगीं—

चली रे चली मेरी नाव चली रे... चली रे चली गुरु साथ चली रे...
मंगल-यात्रा गुरु साथ होती रे... चली रे चली सिद्धिधाम चला रे...

मानो कि भक्ति नौका में बैठकर गुरुदेव के साथ सिद्धिधाम में जाते हों—ऐसी उमंग से भक्त भक्ति करने लगे—

पार लगा पार लगा पार लगाना, ओ नाथ! मेरी नाथ चली पार लगाना...
ओ तुम सम ओर न मांझी.. ओ.. स्वामीजी.. पार लगा.. पार लगा.. पार लगाना..

गुरुदेव की नौका के पीछे-पीछे दूसरी नौकाएँ भी चलने लगीं... अहा! मोक्षपुरी के नाविक कहान गुरुराज सैकड़ों यात्रियों को सिद्धवरकूटधाम में ले जा रहे हैं... भक्तों के

हृदय में हर्ष की हिलोरें चढ़ रही हैं... उर में उभरता आनन्द भक्ति द्वारा व्यक्त होता है। पूज्य बहिनश्री-बहिन भक्ति गवाती हैं।

लेजो सेवा प्रभु की लेजो... लेजो अे सुखकारी... सौ लेजो अे सुखकारी...

नौका मेरी तरती जाये... तुमने मेरा सुकान बनाये...
चलकर मोक्षनगर में जाये... चलकर सिद्धवरकूट में जाये...

भक्ति की धून मचाये... सौ... भक्ति की धून मचाये...
आत्मा की धून मचाये... सौ आत्मा की धून मचाये...

कहानगुरुवर के संग आये, उमंग उमंग भर यात्रा थाये;
भवसागर को तरके आये, मोक्षनगर के निकट आये...

यात्रा उत्सव मनाये... हाँ... यात्रा उत्सव मनाये...
नौकाविहार सुहाये... हाँ... नौकाविहार सुहाये...

अहा! सिद्धवरकूट जैसे सिद्धिधाम में जाने के लिये गुरुदेव के साथ नौका प्रवास करते हुए बहिनश्री-बहिन को ऐसा आनन्द होता था कि किस प्रकार यह आनन्द व्यक्त करें, इसकी सूझ नहीं पड़ती थी... 'यह भक्ति करे या यह भक्ति करें' ऐसी धुन ही धुन में जो भक्ति याद आती वह बोलने लगतीं। प्रत्येक-प्रत्येक नौका में से भक्ति के नाद गाजते थे... और नदी भी कलकल करती हुई उस भक्ति में ताल पुराती थी।

गुरुदेव प्रसन्नता से बैठे थे... 'हे गुरुदेव! संसार सागर में हिचकोले खाती हमारी नौका को पार उतारो... आप ही हमारे नाविक हैं।'—ऐसे मानो गुरुदेव से प्रार्थना करते हों, ऐसी ऊर्मि सब यात्रियों में दिखायी देती थी। गुरुदेव के साथ नौका विहार के इस अपूर्व अवसर में नीचे की स्तुति भी बराबर याद आती थी

संसारसागर तारवा जिनवाणी छे नौका भली
ज्ञानी सुकानी भल्या बिना ये नाव पण तारे नहि;
आ काणमां शुद्धात्मानी सुकानी बहु बहु दोह्यलो,
मुझ पुण्यराशि कल्यो अहो! गुरु कहान तुं नाविक भल्यो।

नौका में उच्च स्थान में बैठे हुए गुरुदेव बारम्बार यात्रासंघ की नौकाओं को मीठी-

मधुर दृष्टि से निहारते थे... और भक्तों की उमंग देखकर नि:शंकरूप से मानो कि ऐसा कहते थे कि आओ रे आओ! नि:शंकरूप से इस मार्ग में चले आओ... संसार-समुद्र को तिरकर सिद्धपुरी में पहुँचने का यही मार्ग है, इसलिए बेधड़करूप से इस मार्ग में चले आओ... अहा, तैरते पुरुष की वाणी यात्रियों को भी भव-समुद्र से तारती थी... तैरते पुरुषों के साथ की यह नौकायात्रा भक्तों को भी भव समुद्र से तैरने का उत्साह जागृत करती थी। तारणहार गुरुदेव भक्तों को तारते थे।

'अहा! अनेक जीवों के तारणहार को आज मैं तार रही हूँ'—ऐसे गौरव से वह जड़मती नौका डोलती थी—परन्तु उस बेचारी को कहाँ से खबर हो कि वह स्वयं भी इस सन्त-पुरुष के पुण्य-प्रताप से ही तिर रही है!! अरे, भेदज्ञान नौका द्वारा अनन्त संसार-समुद्र को तिर जानेवाले साधकों को एक छोटी नदी पार करना तो किस हिसाब में है? वास्तव में ज्ञानियों की नौका निराली है। इसीलिए पूज्य बहिनश्री-बहिन नौका में बैठे-बैठे गवा रही हैं कि—

नैया तुमरी निराली प्रभुजी नैया तुमरी निराली...
भव की नदियां इस नैया से... लाखो भविजन पार लगे...

इस नैयां को खेनेवाले... दुनियां छोडी पार चले...
इस नैया में बैठनेवाले... सिद्धप्रभु के पास चले...

आनंद नाव चलाते... मुक्ति के घाट दीखाते है...
वो स्वामी को भजनेवाले... मोक्षपुरी में जाते हैं...

आज उठत है सेवक सुवेरा जिनवर तान रसीली... प्रभुजी...
नैया तुमरी निराली प्रभुजी! नैया तुमरी निराली

सवा पाँच सौ यात्रियों को सिद्धवरकूट ले जाने के लिये अनेक नौकाएँ सर-सर करती हुई नर्मदा के निर्मल नीर में चली जा रही हैं। इस नर्मदा नदी के किनारे करोड़ों मुनिवर आत्मध्यान कर-करके सिद्धि को प्राप्त हुए हैं... मोक्ष के प्रति उल्लसित मुनिवरों की स्वच्छ परिणति के प्रतीक समान इस नदी का प्रवाह भी स्वच्छ तरंगों से उछल रहा है, उसमें गुरुदेव के साथ नौका विहार करते हुए सबको बहुत हर्ष होता है। अहा! गुरुदेव के साथ अपूर्व नौका विहार प्रसंग की भक्तों की अन्तर की ऊर्मियाँ यहाँ कागज में किस

प्रकार उतारना! भक्त तो गुरुदेव के साथ के नौका विहार से आनन्द के कारण डोल उठें—उसमें क्या आश्चर्य!—'अहा! मुझमें कैसे-कैसे भक्त बैठे हैं... और कैसी आनन्दकारी धुन करते हैं'—ऐसे भाव से रंग में आकर नौका भी डोलती थी! पानी में नौका चलती है और नौका में भक्ति चलती है, मानो कि भक्ति के कारण ही नौका चलती हो... और नदी भी पानी रूपी जीभ द्वारा कलरव करती हुई गुरुदेव के स्वागतगीत गाती हो... या यहाँ से मोक्ष पधारे मुनिवरों के मंगल इतिहास सुनाती हो... ऐसा सुन्दर वातावरण सृजित हो गया था। अरे! पानी की मछलियाँ भी मानो कि गुरुदेव के दर्शन करने के लिये और बहिनश्री-बहिन की भक्ति सुनने के लिये उल्लसित हो, ऐसे किल्लोल करती नौका के आसपास उछल रही थीं। गुरुदेव के साथ आनन्द किल्लोल करते हुए यात्री, बीच-बीच में उक्ति (प्रसंग के अनुरूप काव्य पंक्ति) भी जोड़ते जाते थे।

सरसर करती तरती जाय
एवी भारी नौका....
नौका करे नदीमां....
ने गुरु बैठा नौकामां...

संतो केरी छांयडी
एवी भारी नावडी...
कहानगुरु साथ मां
जय सिद्धिधाममां....

★ ★ ★

गुरुदेव के साथ नौका में बैठे हैं। गुरुदेव के चरण के निकट बैठे-बैठे भक्ति करते-करते सिद्धवरकूट की ओर जा रहे हैं... गुरुदेव आसपास के उपशान्त वातावरण को प्रसन्नतापूर्वक निहार रहे हैं और उस समय नौका में बैठे-बैठे ही यह संस्मरण लिखे जाते हैं... नौका विहार के इस प्रसंग के एक खास संस्मरणरूप में नौका में बैठे-बैठे पूज्य गुरुदेव के हस्ताक्षर कराये... गुरुदेव ने भी हँसते-हँसते हस्ताक्षर किये।

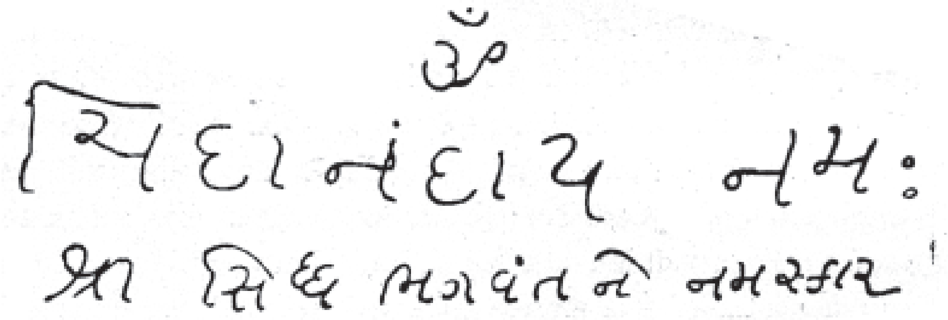

हस्ताक्षर करते हुए गुरुदेव ने कहा—'यात्रा में नौका में बैठने का यह प्रसंग याद रह जायेगा कि नौका में बैठे-बैठे यह लिखा था।'

नौका की केबिन के बेंच पर बैठे हुए बहिनश्री-बहिन भी आज के नौका विहार प्रसंग से अत्यन्त रोमांचित थीं... और उमंग से नयी-नयी भक्ति करा रही थीं।

आज अपूरव अवसर आया... गुरुवर साथे यात्रा चाल्या...
जिनेन्द्रदेव का दरशन पाया... सिद्धप्रभु का धाम दिखाया...
भक्तिकी धुन मचाया... सौ०
अनेक जात्राधाम दिखाया... कहान गुरु का प्रभाव खील्या...
संसारसागर पार कराया... भारतभर में हर्ष छवाया...
धर्म का ध्वज फरकाया.... हां०

सिद्ध भगवन्तों का स्मरण करके, भक्ति की धुन मचाते-मचाते, गुरुदेव के साथ निर्भयरूप से सर-सर करती हुई नौकाएँ चली जा रही थी... उस समय भक्तामरस्तोत्र का नीचे का श्लोक ताजा हो रहा था।

'ज्यां ऊछणे मगरमच्छ तरंग झाझा,
ने वाडवाग्नि भयकारी थकी भरेला;
अेवा ज सागर विषे स्थित नाव जे छे,
ते निर्भये तुझतणा स्मरणे तरे छे॥'

डेढ़-दो मील के प्रवास के बाद वळांक (मोड़) आया। यहाँ से नदी के दो भाग पड़ते हैं, इसलिए एक भाग में से दूसरे भाग में जाना था... छिछरा पानी होने से बहुत

यात्री नौका में से उतरकर किनारे-किनारे चलते हुए वळांकवाले (मोड़वाले) भाग को उल्लंघ गये, तो कितने ही यात्री आनन्द में आकर पानी में छप्प-छप्प करते हुए गुरुदेव की नाव को खींचने लगे... यहाँ नदी में खड़कों (नदी के बीच में पहाड़ जैसे पत्थर) के कारण तरंगें बहुत ही उछल रही थीं। दोनों ओर रमणीय पहाड़ी के दृश्य, बीच में तरंगों से उल्लसित नर्मदा नदी, उसमें नौका द्वारा विहार और गुरुदेव का संग, और थोड़ी दूर सिद्धवरकूटधाम... आहा! जीवन का यह एक स्वर्ण प्रसंग था... इस प्रसंग का आह्लादकारी वातावरण सब यात्रियों के हृदय में उत्कीर्ण हो गया है पूज्य गुरुदेव भी इस प्रसंग को प्रमोदपूर्वक बहुत बार स्मरण करते हैं और व्याख्यान में भी उसका एक उदाहरण देकर कहते हैं कि—

'जैसे नौका में बैठकर सिद्धवरकूट की ओर जाते समय बीच में नदी का 'वळांक' (मोड़) आने से तरंगों की खलबलाहट उठती थी... इसी प्रकार रत्नत्रयरूपी नाव में बैठकर सिद्धपद की ओर जा रहे मोक्षमार्गी मुनिवरों की परिणतिरूपी नदी का प्रवाह मोक्ष की ओर जा रहा है, उसमें बीच में रागरूपी मोड़ आने से खलबलाहट होती है... उस राग का मोड़ मिटाकर वीतरागता द्वारा सिद्धपद में पहुँचा जाता है।'

मोड मिटाकर दूसरे प्रवाह में आये कि तुरन्त ही जैसे विभाव से विमुख होकर आत्मार्थी की परिणति स्वभावसन्मुख दौड़ने लगती है, उसी प्रकार नौकाएँ सरपट करती सिद्धवरकूट की ओर दौड़ने लगीं... क्योंकि अभी तक तो नौकाएँ सामने प्रवाह में चलती थी... और अब प्रवाह अनुसार चलने लगी... इसलिए उन्हें ऐसा वेग मिला कि मानों सिद्धपद में पहुँचने के लिये क्षपकश्रेणी ही माँड़ी... अब सामने सिद्धवरकूटधाम भी एकदम नजदीक ही दिखता था, इसलिए उस सिद्धिधाम को भेंटने के लिये नौकाएँ एकदम दौड़ने लगीं... एक मानो कि मैं पहले पहुँचूँ... दूसरी मानो कि मैं पहले पहुँचूँ... आहाहा! सिद्धिधाम के दर्शन होने पर किसे आनन्द नहीं होगा! उस सिद्धिधाम के दर्शन होने पर पूज्य बहिनश्री-बहिन ने भी बहुत उमंगपूर्वक सिद्धभगवान की भक्ति की धुन मचायी—

जय सिद्धभगवंत जय सिद्धभगवंत जय सिद्धभगवंत देवा...
सिद्धवरकूट पर आप विराजो... यात्रा जय जयकारा...
नौका विहार गुरुजी साथे... आनंद मंगलकारा - जय सिद्ध०

रत्नत्रयी नौका में वेसी हो गये भव से पारा...
कहानगुरु के संग भक्त सौ... आये द्वार तुमारा... - जय सिद्ध०
साधक-हृदय-विरामी प्रभुजी... रत्नत्रय दातारा....
भक्तजनो सौ भक्ति करता... आवे मारग तारा.... जय सिद्ध०

बहिनश्री-बहिन यद्यपि यह धुन गुरुदेव की नौका बैठे-बैठे गवाती थी, परन्तु मात्र गुरुदेव की नौका में ही नहीं किन्तु आसपास की सब नौका के यात्री उमंगपूर्वक यह धुन झेलते थे। उस समय भक्ति का रंग बराबर खिला था... वह देखकर ऐसा लगता था कि अहा! सिद्धपद की भूमि के प्रति भी साधकों को ऐसी उमंग उछलती है, तो साक्षात् सिद्धपद के प्रति साधकों को अन्तरंग रंग की क्या बात!! वास्तव में साधक के भाव अचिन्त्य है। उन्हें ही उपादान-निमित्त की वास्तविक सन्धि वर्तती है। इस भक्ति का रंग देखकर गुरुदेव भी प्रसन्नता से कहते कि देखो, भक्त कैसे खिले हैं!

—इस प्रकार आनन्दपूर्वक नौका विहार में भक्ति करते-करते सब सिद्धवरकूट पहुँचे। अहा, मानो कि भवसागर को तिरकर सिद्ध भगवान के धाम में आये। गुरुदेव नौका में से सिद्धवरकूट के किनारे उतरे कि तुरन्त ही शहनाई के मधुर सुर से स्वागत हुआ... किनारे से थोड़ी ही दूर सिद्धवरकूट पहाड़ है, लगभग दो सौ सीढ़ियाँ जितनी चढ़ाई चढ़कर सिद्धवरकूट धाम में पहुँचा जाता है। गुरुदेव के साथ समस्त संघ सिद्धवरकूट में सिद्ध भगवन्तों को भेंटने चल निकला... अहा, गुरुदेव सब भक्तों को सिद्धिधाम में ले जाते हैं... आओ... आओ! तुम्हें सिद्धिधाम दिखाऊँ। गुरुदेव के पदचिह्नों पर जय-जयकार करते हुए सब यात्री उस सिद्धिधाम में आ पहुँचे।

सम्यक्त्व नौका द्वारा भक्तों को भव पार करके सिद्धिधाम में ले जानेवाले धर्म के नाविक गुरुदेव को नमस्कार हो!

सिद्धवरकूट सिद्धक्षेत्र की यात्रा

माघ कृष्ण ग्यारह के दिन सिद्धवरकूट सिद्धिधाम की मंगल यात्रा हुई। सिद्धवरकूट बहुत ही रमणीय सिद्धक्षेत्र है। यात्रा के दौरान ग्यारह दिनों में यह पाँचवाँ सिद्धक्षेत्र आया। अहा! जहाँ से दो चक्रवर्ती (सनतकुमार और मधवा) दस कामदेव और साढ़े तीन करोड़ मुनिवर सिद्धिपद को प्राप्त हुए, ऐसे इस उपशान्त धाम में विचरते हुए मानो कि मोक्षसाधक मुनिवरों के समूह के बीच आये हों—ऐसा साधकों को बहुत आनन्द हो रहा था और साधक-सन्तों के साथ विचरते हुए भक्तों को भी बहुत हर्ष हो रहा था। यहाँ मुख्य मन्दिर बहुत विशाल और भव्य है, मूलनायक सम्भवनाथ भगवान हैं; तदुपरान्त ऊँची-ऊँची तीन कटनी (वेदी, शिला) पर विराजमान पार्श्वनाथ भगवान मानो कि समवसरण में ही विराजते हों, ऐसे शोभित होते हैं। आसपास के दूसरे मन्दिरों में पुराने प्रतिमाएँ विराजती हैं। बाहर बड़े विशाल चौक में सुन्दर मानस्तम्भ हैं—जिनके ऊपर के भाग में चारों दिशा में भगवन्त खड्गासन विराजते हैं। वे लोकाग्र में सिद्ध भगवान समान शोभित हो रहे हैं, नीचे के भाग में दो प्रतिमाजी पूर्वमुख खड्गासन में विराजमान हैं, मानो कि नीचे के भगवान ही ऊर्ध्वगमन करके ऊपर पधारते हों—ऐसे नीचे-ऊपर के भगवन्तों को देखने से लगता है। मानस्तम्भ की बाजू में देहरी (छतरी) है, उसमें यहाँ से मोक्ष प्राप्त चक्रवर्ती, कामदेव और मुनियों के चरण-कमल स्थापित हैं। तदुपरान्त मन्दिर की ओसरी में दीवार पर दो चक्रवर्ती और दस कामदेव मुनिदशा में एक साथ ध्यानस्थ खड़े हैं, उसका सुन्दर भाववाही चित्र है; एक साथ ध्यान में खड़े वे पराक्रमी पुरुष मानो कि क्षपकश्रेणी में आरोहण करते हों... या... अपने सन्मुख ही ऊर्ध्वगमन करके सिद्धालय में सिधारते हों—ऐसे शोभित हो रहे हैं। यह भावभीना दृश्य देखते ही, उनके पावन चरणों से स्पर्शित इस क्षेत्र के प्रति हृदय नम्रीभूत हो जाता है। धर्मशाला इत्यादि भी यहाँ ही है। इस तीर्थ के आसपास का वातावरण भी अति मनोरम है। चारों ओर के वन मानों कि मुनियों के आवास से व्याप्त हों, ऐसे दृष्टिगोचर होते हैं। एक ओर नर्मदा तथा दूसरी ओर कावेरी, इस प्रकार दोनों ओर बहती नदियाँ मानो कि तीर्थं की प्रदक्षिणा करती जाती हैं और यहाँ से मोक्ष प्राप्त मुनिश्वरों के चरण-कमलों का अपने जल द्वारा अभिषेक करना चाहती हैं। जैसे वीतरागी

मुनिश्वर इस संसार–समुद्र में डूबते जीवों को नाविक समान हैं, उसी प्रकार इन मुनिश्वरों का यह मुक्तिधाम भी आसपास बह रही नदियों के कारण टापू जैसा बन गया है।

—ऐसे पवित्र तीर्थधाम में 'पूज्यश्री कानजीस्वामी दिगम्बर जैन तीर्थयात्रा संघ' सवेरे आठ बजे आ पहुँचा... सब यात्रियों ने गुरुदेव के साथ जिनमन्दिर के दर्शन किये, स्तुति करके अर्घ्य चढ़ाया... तत्पश्चात् बाजू के मन्दिर में आये... अहा, यहाँ महावीर भगवान की भव्य प्रतिमाजी के दर्शन करने से सब स्तब्ध बन गये... अत्यन्त प्राचीन और अतिशय वैराग्यभाव में झूलती यह जिनमुद्रा देखते ही यह प्रतिमा चौथे काल की हो ऐसा सहज लगता है। सजोद की भाँति यहाँ भी इन भगवान को निहारते हुए गुरुदेव बहुत प्रसन्न हुए और थोड़ी देर तो भगवान के सन्मुख एकटक निहारते हुए स्तब्ध होकर बैठ गये... तब 'प्रभुजी तुम्हारे साथ सद्ध्यान आज जमा' ऐसा वातावरण यहाँ सृजित हो गया। गुरुदेव के साथ सब भक्त भी गुपचुप भगवान को निहारते हुए बैठ गये... थोड़ी देर बाद गुरुदेव ने कहा—'**वाह! देखो कैसी मुद्रा है! सामने बैठकर ध्यान करने का मन हो जाता है ऐसी मुद्रा है। यह भगवान मानो चौथे काल के हों, ऐसे लगते हैं... लाओ, अर्घ्य चढ़ायेंगे।**' गुरुदेव के ऐसे कहते ही उल्लासपूर्वक सब भक्तों के साथ पूज्य बहिनश्री–बहिन ने स्वाहा मन्त्र बोलकर अर्घ्य चढ़ाया... गुरुदेव ने भी अर्घ्य चढ़ाया। सब भक्त महिमापूर्वक इन भगवान के दर्शन करते थे... जो पहले चुस्त स्थानकवासी थे और मूर्ति के नाम से भी भड़कते थे—ऐसे कितने ही भक्तों को सम्बोधनकर गुरुदेव ने कहा : देखो, यह प्रतिमा बहुत पुरानी है, ऐसे तो बहुत बड़ी–बड़ी प्रतिमाएँ यात्रा में आयेंगी और वे दिगम्बर जैनधर्म कितना पुराना है, उसकी साक्षी देती है, बारम्बार उन भगवान को भावपूर्वक अवलोकन कर, आनन्दपूर्वक दिगम्बर जैनधर्म की जय–जयकार करते हुए सब तीसरे मन्दिर में आये।

इस मन्दिर में भी एक खड्गासन प्रतिमा बहुत प्राचीन, सुन्दर और अति भाववाही है। ऐसे पुराने प्रतिमाजी के प्रत्येक अंगों के भाव का गुरुदेव सूक्ष्मता से अवलोकन करते और भक्तों का भी उस ओर ध्यान आकृष्ट करते। खड्गासन प्रतिमाजी के दृश्य में चैतन्यसाधना की एकदम उग्रता तैरती दिखायी देती है। यहाँ भी प्रसन्नतापूर्वक दर्शन करके गुरुदेव के साथ सबने भावपूर्वक अर्घ्य चढ़ाया। (इस खड्गासन प्रतिमाजी पर संवत् ग्यारह लिखा हुआ है परन्तु इसका अर्थ स्पष्ट समझ में नहीं आता।)

इस मन्दिर के दर्शन करके बाहर आते ही मन्दिर की दीवार पर एक बड़ा भाववाही चित्र नजर में पड़ा और सब स्थिर हो गये। दो चक्रवर्ती और दस कामदेव, ऐसे बारह महामुनिवर एक साथ ध्यान में खड़े हैं। मानो कि अभी ही वैराग्य पाकर राज्यपाट त्यागकर मुनि हुए हों और ध्यान की श्रेणी माँडकर केवलज्ञान प्राप्त करते हों—ऐसा सरस वह दृश्य है। वह दृश्य देखते ही गुरुदेव ने भावपूर्वक कहा—'**वाह! देखो यह मुनिदशा! अहा छह-छह खण्ड के राजपाट को छोड़कर चक्रवर्ती जब दीक्षा लेते होंगे और रूप-रूप के अम्बार ऐसे कामदेव भी हजारों रानियाँ छोड़कर जब दीक्षा लेते होंगे—वह प्रसंग कैसा होगा और फिर कुदरत का मेल तो देखो कि एक के बाद एक दस कामदेव और दो चक्रवर्ती, ये सब यहीं से मोक्ष को प्राप्त हुए। अभी यहाँ से ऊपर आकाश में लोकाग्र में वे विराजते हैं।**'—ऐसा कहकर ऊपर हाथ जोड़कर गुरुदेव ने उन सिद्ध भगवन्तों को नमस्कार किया। गुरुदेव के साथ-साथ सब भक्तों ने भी नमस्कार किया।

तत्पश्चात् चौक में स्थित मानस्तम्भ के सभी ने दर्शन किये... और पश्चात् बगल की छतरी में यहाँ से मोक्ष प्राप्त चक्रवर्ती-कामदेव और करोड़ों मुनिवरों के चरणकमल स्थापित हैं, वहाँ दर्शन करके सबने चरणस्पर्श किये। ऊपर के सिद्ध भगवन्तों को चिन्तवन कर 'हे नाथ! आपके पदचिह्नों पर हम भी आपके सिद्धिपन्थ में आ रहे हैं।'—ऐसे भाव से गुरुदेव सहित सभी यात्रियों ने इन भगवन्तों के चरण में बारम्बार स्पर्शन किया और निम्नानुसार श्लोक बोलकर भक्तिपूर्वक अर्घ्य चढ़ाया—

द्वय चक्री दस कामकुमार, भवतरि मोक्ष गये।
तातैं पूजूँ पदसार मन में हर्ष ठये।

(ॐ ह्री श्री सिद्धवरकूट सिद्धक्षेत्र से दो चक्रवर्ती, दस कामदेव और साढ़े तीन करोड़ मुनिवर मोक्ष पधारे, उनके चरणकमल पूजनार्थे अर्घ्यं निर्वपामीति... स्वाहा...)

एक बावत विशेष ध्यान में लेने योग्य है कि अभी तक गजपंथा, मांगीतुंगी, बढ़वाणीजी, पावागिरि-ऊन और सिद्धवरकूट—ऐसे जो पाँच सिद्धक्षेत्रों की यात्रा की, वह सब शुद्ध दिगम्बर तीर्थ हैं। श्वेताम्बर या दूसरे किसी अन्य मत का वहाँ प्रचार नहीं है। अभी आगे जाने पर सोनागिरि, मथुरा इत्यादि दूसरे भी शुद्ध दिगम्बर तीर्थ आयेंगे। हजारों वर्ष प्राचीन ऐसे शुद्ध दिगम्बर जैन तीर्थ आज भी दिगम्बर जैनधर्म की परम सत्यता

की प्रसिद्धि कर रहे हैं, इतना ही नहीं परन्तु उन-उन सिद्धक्षेत्र से सिद्धि प्राप्त सन्त भी शुद्ध दिगम्बर ही थे—ऐसा भी इन तीर्थों के रजकण-रजकण प्रसिद्ध कर रहे हैं। अहा, दिगम्बर जैन सन्तों के चरणों से स्पर्शित भूमि भी दिगम्बर जैनधर्म को प्रसिद्ध करती हुई उसकी प्रभावना कर रही है। ऐसी प्रभावक तीर्थभूमि के दर्शन से जिज्ञासुओं की धर्म दृढ़ता भी पोषित होती है और उनकी यात्रा करने से आनन्द होता है।

सिद्धवरकूट से सिद्धि प्राप्त सिद्ध भगवन्तों को नमस्कार हो
सिद्धिधाम में साथ ले जानेवाले श्री कहान गुरुदेव को नमस्कार हो।

★ ★ ★

सिद्धवरकूट सिद्धिधाम में उल्लसित सिद्ध भक्ति

तीर्थवन्दना के बाद अब पूज्य गुरुदेव का प्रवचन चल रहा है।

सिद्धवरकूट जैसे उपशान्त सिद्धिधाम में सिद्ध भगवन्तों के प्रति हृदय की ऊर्मियाँ व्यक्त करते हुए गुरुदेव कहते हैं :

''देखो, यह सिद्धवरकूट तीर्थ है। 'सिद्ध-वर-कूट!' अहा, सिद्ध भगवन्त तो जगत के उत्कृष्ट शिखर समान हैं। ऐसे उत्कृष्ट शिखर समान सिद्धपद को करोड़ों जीव यहाँ से प्राप्त हुए, इसलिए यह क्षेत्र 'सिद्धवरकूट' है। यहाँ का दिखाव भी ऐसा है कि मानो चारों ओर मुनि ध्यान में बैठे हों! दो चक्रवर्ती, दस कामदेव और साढ़े तीन करोड़ मुनिवर यहाँ से मोक्ष पधारे हैं, वे यहाँ से ऊपर लोकाग्र में सिद्धालय में विराजते हैं।'' (ऐसा कहकर गुरुदेव ने ऊपर नजर करके हाथ द्वारा सिद्धालय बताया। पश्चात् ऊपर के सिद्ध भगवन्तों को मानो कि अपने तथा श्रोताओं के हृदय में उतारते हों, उस प्रकार कहा)

'अहो सिद्धभगवन्तों! आपको नमस्कार हो 'वंदित्तु सव्व सिद्धे'—ऐसा कहकर समयसार के मांगलिक में ही आचार्यदेव सर्व सिद्ध भगवन्तों को अपने तथा श्रोताओं के आत्मा में स्थापित करके, उन्हें नमस्कार करते हैं। अहा! सिद्ध भगवन्त अक्रिय चैतन्यबिम्ब हैं, उन्हें शान्त परिणति हो गयी है, अपने मस्तक पर समश्रेणी में लोक के

उत्कृष्ट स्थान में वे विराजते हैं। सिद्ध भगवन्त लोक के प्रमुख हैं, इसलिए लोक के सिर पर विराजते हैं। यदि वे प्रमुख न हों तो लोक के ऊपर कैसे विराजे! जैसे पगड़ी या मुकुट को लोग अपने सिर पर धारण करते हैं, उसी प्रकार सिद्ध भगवान का स्थान भी लोक के सिर पर है, वे जगत में सबसे श्रेष्ठ हैं... साधकों ने अनन्त सिद्ध भगवन्तों को अपने सिर के ऊपर रखा है... ध्येयरूप से हृदय में स्थापित किया है। इस प्रकार 'सिद्ध' भगवन्त 'वर' अर्थात् कि उत्कृष्ट 'कूट' अर्थात् कि शिखर है—ऐसे सिद्ध भगवान में 'सिद्ध-वर-कूट' का भावार्थ उतारा। ऐसे सिद्ध भगवन्तों को पहिचानकर ध्येयरूप से अपने आत्मा में स्थापित करना अर्थात् उस सिद्धि के पन्थ में अपने आत्मा को परिणमित करना, वह 'सिद्ध-वर-कूट' की परमार्थ यात्रा है।

अनन्त जीव सिद्ध हुए, वे कहाँ से हुए ? आत्मा की शक्ति में अनन्त चतुष्टय है, उस शक्ति में से सिद्धपद व्यक्त होता है। प्रत्येक आत्मा स्वभावशक्ति से परिपूर्ण, कारणपरमात्मा अथवा कारणशुद्धजीव है, उस कारण का मनन (ध्यान) कर-करके वे कार्यशुद्धजीव (सिद्ध परमात्मा) हुए, प्रत्येक आत्मा में 'कारण' है, उसके सन्मुख एकाग्रता द्वारा 'कार्य' होता है। देखो, यह सिद्धपद का कारण। सिद्धपद के लिये बाहर का कोई कारण नहीं है, रागादि भी कारण नहीं है, पूर्व की मोक्षमार्गरूप अपूर्ण पर्याय भी परमार्थकारण नहीं है, अन्तर का त्रिकाली स्वभाव ही परमार्थकारण है।—बस, उसमें अन्तर्मुख होकर गहरे उतरने जैसा है। द्विविध ऐसा मोक्षमार्ग अन्तर के ध्यान द्वारा प्राप्त होता है—यह नियम है अर्थात् दूसरे प्रकार से मोक्षमार्ग प्राप्त नहीं होता।*

देखो न, यहाँ का आसपास का दिखाव भी कैसा है! मोक्ष के साधक मुनि ऐसे धाम में रहते हैं और चैतन्य के ध्यान में लवलीन होते हैं। वाह वह मुनिदशा! मुनि तो दिगम्बर ही होते हैं, उन्हें वस्त्रादि की वृत्ति उत्पन्न ही नहीं होती—ऐसा सहज मार्ग है। पहले के काल में ऐसे वन-जंगल में रहकर अनेक मुनि कारणपरमात्मा को ध्याते थे... और केवलज्ञान पाकर मोक्ष साधते थे, यहाँ से भी करोड़ों मुनि-भगवन्त इस प्रकार से मोक्ष को प्राप्त हुए हैं। प्रत्येक आत्मा स्वयं ऐसा कारणपरमात्मा है; जब अन्तर्मुख होकर

---

* दुविहं पि मोक्खहेउं झाणे पाउणदि जं मुणि णियमा।
तह्मा पयत्तचित्ता जूयं झाणं समब्भसह॥४७॥

(बृहद्द्रव्यसंग्रह, गाथा-47, श्री नेमिचन्द्र सिद्धान्तदेव)

स्वयं अपना ध्यान करे, तब सम्यग्दर्शन होता है। अन्तर में कारणपरमात्मा को ध्या ध्याकर ही अनन्त जीव सिद्ध हुए हैं और होंगे। सनतकुमार और मघवा ये दो चक्रवर्ती छह-छह खण्ड के राज्य को क्षण भर में छोड़कर मुनि हुए और आत्मा को ध्याकर यहाँ से सिद्धपद को प्राप्त हुए। इसी प्रकार दस कामदेव और करोड़ों मुनिवर भी यहाँ से सिद्धपद को प्राप्त हुए, वे सब अन्दर में कारण था, उसे ध्याकर ही कार्यपरमात्मा (-सिद्ध) हुए हैं।

जिस प्रकार बढ़वानीजी तीर्थ में आदिनाथ भगवान की विशाल मूर्ति मूल चूलगिरि पर्वत में से ही उत्कीर्ण कर निकाली है, बाहर से नहीं आयी; उसी प्रकार चैतन्यस्वरूप आत्मा चूलगिरि जैसा कारणपरमात्मा है, उसके स्वभाव में से उत्कीर्ण कर सिद्धपद प्रगट होता है, सिद्धपद बाहर से नहीं आता।

अनन्त सिद्ध भगवन्त ऊपर विराजते हैं, अनन्त नित्य निगोद जीव नीचे हैं। सिद्ध ऊपर हैं और निगोदिया नीचे हैं। निगोद जीव एक शरीर में अनन्त हैं और अनन्त दुःखी हैं; सिद्ध जीव एक स्थान में अनन्त हैं और अनन्त सुखी हैं—ऐसे सिद्धपद की प्राप्ति का यह स्थान है, इसलिए यह सिद्धभूमि है। दो चक्रवर्ती, दस कामदेव और साढ़े तीन करोड़ मुनिवर यहाँ से मोक्ष को प्राप्त हुए हैं—यह संख्या तो नजदीक के काल की अपेक्षा से (अर्थात् मात्र वर्तमान चौबीसी के काल की अपेक्षा से) है, बाकी तो यहाँ से तथा ढाई द्वीप के प्रत्येक स्थान से अनन्त जीव मोक्ष को प्राप्त हुए हैं। जहाँ से अनन्त जीव मोक्ष न प्राप्त हुए हों, ऐसा कोई स्थान ढाई द्वीप में नहीं है। इस अपेक्षा से पैंतालीस लाख योजन प्रमाण सम्पूर्ण ढाई द्वीप, वह सिद्धक्षेत्र है और उसके बराबर ऊपर उतनी ही सिद्धशिला है अर्थात् लोकाग्र में सिद्ध भगवन्तों के रहने का स्थान भी बराबर ढाई द्वीप जितना है; अनन्त सिद्ध भगवन्त वहाँ विराजते हैं। यह तो सिद्धपद के क्षेत्र की बात हुई। भाव अपेक्षा से तो आत्मा की ध्रुव शक्ति में सिद्धपद प्रगट होने की अनन्त सामर्थ्य पड़ी है, उसमें एकाग्रता द्वारा सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र प्रगट होता है, वह सिद्धि का मार्ग है। अनन्त जीव ऐसे भाव से सिद्धपद को प्राप्त हुए हैं।

कुन्दकुन्दाचार्यदेव कहते हैं कि ऐसे अनन्त सिद्धों को मैं नमस्कार करता हूँ, अनन्त सिद्धों को मेरे ज्ञान में स्थापित करके एक साथ उन सर्व का आदर करता हूँ। 'वंदित्तु सव्व सिद्धे' सर्व सिद्ध भगवन्तों को मेरे आत्मा में स्थापित करके, उनकी पंक्ति में बैठकर, मैं उन्हें वन्दन करता हूँ। देखो, यह सिद्धवरकूट की वास्तविक वन्दना है।

(माघ कृष्ण ग्यारस के दिन सिद्धवरकूटधाम में बहुत ही सुन्दर वातावरण के बीच गुरुदेव का यह प्रवचन चल रहा है... श्रोता एकतान होकर आनन्दपूर्वक यह भावभीना प्रवचन झेल रहे हैं। अहा! यात्रा महोत्सव में मानो कि अनन्त सिद्ध भगवन्त इस सिद्धवरकूट में उतरे हैं और गुरुदेव महा-आदरपूर्वक आपश्री की पहिचान कराकर सिद्धपद के प्रति भावभक्ति की धुन मचा रहे हैं। गुरुदेव की अन्तर की धारा उल्लसित हो रही है... सामने ही मानस्तम्भ है, बगल में मन्दिर है, आसपास सुन्दर वनराजी से घिरे हुए उपशान्त तीर्थधाम में गुरुदेव यह सिद्धभक्ति का शान्तरस बहा रहे हैं।)

दो चक्रवर्ती यहाँ से सिद्धपद को प्राप्त हुए, अहा! चक्रवर्ती के वैभव की क्या बात! परन्तु चैतन्य के वैभव के समक्ष उसकी क्या कीमत!! आत्मा के आनन्द के वैभव के समक्ष छह खण्ड के वैभव को तुच्छ तृण समान जानकर चक्रवर्ती भी वन में चल निकले और अन्तर के ध्यान द्वारा चैतन्य के आनन्द निधान को साध-साधकर सिद्ध हुए। उसी प्रकार दस कामदेव भी यहाँ से सिद्धपद को प्राप्त हुए। अहा! कामदेव के रूप की क्या बात! परन्तु चैतन्य के रूप के समक्ष उसकी क्या गिनती ? देह का रूप तो जड़-पुद्गल का पिण्ड है; हम तो उससे भिन्न सिद्धसमान चेतनरूप हैं।—ऐसा जानकर उन कामदेवों ने अन्तर के सिद्धपद को साधा। जैसे मन्दिर के ऊँचे शिखर (वरकूट) के ऊपर सोने का कलश शोभित होता है। उसी प्रकार इस लोकरूपी मन्दिर के ऊँचे शिखर (वरकूट) के ऊपर सिद्धभगवन्त कलश-समान शोभित होते हैं।

—जिसने ऐसे सिद्धपद का आदर किया, उसे संयोग की और विकार की बुद्धि छूट गयी और उत्कृष्ट चैतन्यस्वभाव में उसने आरोहण किया, इसका नाम सिद्धवरकूट की यात्रा है और ऐसे जीव को बाहर में भी ऐसे सिद्धक्षेत्रों की यात्रा का भक्तिभाव आता है, वह शुभभाव है। 'अहा! रत्नत्रयधारक सन्त जहाँ विचरे हैं... और जहाँ से सिद्धपद को प्राप्त हुए हैं, वह भूमि भी धन्य है... उनके चरण से स्पर्शित रज भी धन्य है—ऐसे बहुमानपूर्वक धर्मी को तीर्थयात्रा का भाव उल्लसित होता है। परमार्थ से तो सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्ररूप भाव, वही तीर्थ (अर्थात् भवसमुद्र से तारनेवाला) है। परिपूर्ण ज्ञान दर्शन आनन्द और वीर्यस्वरूप परम सिद्धपद ही मुझे सत्कार करने योग्य है—ऐसा निर्णय करके अपने आत्मा में अनन्त सिद्ध भगवन्तों को जिसने पधराया है, वह साधक जीव अल्प काल में सिद्ध की बस्ती में मिल जायेगा, उसने सिद्धवरकूट की वास्तविक यात्रा की है।

सिद्धपद का पथिक कहता है—अहो सिद्धभगवन्तों! मैं मेरे अन्तर के आँगन में आपको पधराता हूँ। 'तुम्हारा आँगन कितना' तो कहते हैं कि सिद्धभगवान समावे उतना। जैसे चक्रवर्ती राजा को अपने आँगन में बुलाने में बुलानेवाले की कितनी जवाबदारी है ? उसी प्रकार यहाँ पूर्णानन्द को प्राप्त सिद्ध परमात्मा को अपने आँगन में पधराने पर धर्मी जीव अपनी जवाबदारी सहित कहता है कि हे सिद्धभगवन्तों! मेरे आत्मा के आँगन में पधारो।

आवो आवो श्री सिद्ध भगवान अम घेर आवो रे...
इडा भक्तिवत्सल भगवंत नाथ! पधारो ने।
हुं कई विध पूजुं नाथ! कई विध वंदुं रे...
मारे आंगणे सिद्ध भगवान जोइ जोई हरखुं रे...

मेरे आत्मा में मैं विकार का आदर निकालकर आपका ही आदर करता हूँ सिद्धपद को मेरे आत्मा में स्थापित करता हूँ। हे नाथ! पधारो, मेरे अन्तर के आँगन में। मेरे आँगन में से रागादि की मलिनता निकालकर, निर्मल श्रद्धा-ज्ञान के आँगन में मैं आपको विराजमान करता हूँ।

—इस प्रकार साधक धर्मात्मा अपने आँगन में सिद्धभगवान को पधराता है और सिद्धभगवान को अपने आत्मा में पधराकर स्वयं भी सिद्धपद को साधता है। इस विधि से दस कामदेवों ने यहाँ से सिद्धपद को साधा है।

अरे, कामदेव के रूप की क्या बात! परन्तु उसे जड़ जानकर, धर्मी ने चैतन्यरूप को उससे भिन्न जाना है। देह का कामदेवपना छोड़कर चैतन्य के पूर्णानन्द का भोग करनेवाले वास्तविक कामदेव हो गये अर्थात् चैतन्य का वास्तविक काम (सिद्धपद) उन्होंने कर लिया। ऐसे दस कामदेव यहाँ से मोक्ष को प्राप्त हुए। अरे! यह देह की सुन्दरता हमारी नहीं; सुन्दर तो हमारा ज्ञानानन्द से भरपूर आत्मा अन्दर विराजता है—ऐसे आत्मा को प्रतीति में लेकर, श्रद्धा-ज्ञान में सिद्धभगवान को पधराया और पश्चात् अल्प काल में स्वयं भी सिद्ध हुए। ऐसे सिद्धभगवन्तों को नमस्कार हो।

इसी प्रकार कामदेव की भाँति यहाँ से मोक्ष प्राप्त दो चक्रवर्ती भी बाहर के चक्र को जड़ समझते थे; अन्तर के चैतन्य का परिणमन चक्र ज्ञानानन्दरूप वर्ते—उसमें ही हमारा चक्रवर्तीपना है, ऐसा जानकर उन्होंने चैतन्य का चक्रवर्ती पद (-सिद्धपद)

साधा है। ध्रुव-अचल और अनुपम ऐसे सिद्धपद को यहाँ से प्राप्त किया है। पाँच परमेष्ठी पद में सिद्धपद सर्वोत्कृष्ट है, उसे नमस्कार हो—मैं मेरी ज्ञान शक्ति में एकाग्र होकर उस सिद्धपद का आदर करता हूँ, उसे नमस्कार करता हूँ, यह सिद्धवरकूट की यात्रा है।

इस प्रकार सिद्धवरकूट में सिद्धभगवन्तों को नमस्कार किया।

(सिद्धवरकूट में गुरुदेव का प्रवचन पूरा हुआ)

सिद्धवरकूट में सिद्धभक्ति की धुन मचानेवाले गुरुदेव की जय हो।

★ ★ ★

व्याख्यान में गुरुदेव ने इस सिद्धक्षेत्र सम्बन्धी अपना बहुत प्रमोद व्यक्त किया और सिद्धभक्ति के अति भाव भरे उद्गार अभिव्यक्त किये... परन्तु अन्तर में उल्लसित भक्ति को अभी सन्तोष नहीं हुआ, इसलिए प्रवचन पूर्ण होते ही तुरन्त बहिनश्री-बहिन को लक्ष्य कर कहा कि 'कुछ भक्ति बोलो' गुरुदेव का आदेश होते ही बहिनश्री-बहिन ने वैराग्यमय मुनिभक्ति शुरु की।

नित उठ ध्यावुं गुण गावुं, परम दिगम्बर साधु... परम दिगम्बर साधु,
महाव्रतधारी.... धारी महाव्रत धारी....
रागद्वेष नहीं लेश जिन्होंके मन में है.... मन में है;
कंचनकामिनी मोह काम नहीं तन में है... तन में है;
परिग्रह रहित निरालंभी, ज्ञानी व ध्यानी तपसी... ज्ञानी व ध्यानी तपसी।
नमों हितकारी... कारी नमों हितकारी... नित ऊठ ध्यावुं....

(मानो ज्ञानध्यान में निमग्न अनेक मुनिवर अपने समक्ष ही विराज रहे हों, ऐसे उत्तमभाव से भक्ति चल रही है)

शीतकाल सरिता के तट पर जो रहते... जो रहते;
ग्रीषमऋतु गिरिराज शिखर चढ़ आध दहते... आघ दहते;
तरुतल रहकर वर्षा में विचलित न होते लख भय... विचलित न होते लख भय,
वन अंधियारी भारी... वन अंधियारी... नित उठ ध्यावुं......
कंचन-काया मसान-महल सम जिनके है... जिनके है,
अरि-अपमान, मान-मित्र सम तिनके है... तिनके है;

समदर्शी समताधारी, नग्न दिगम्बर मुनि है... नग्न दिगम्बर मुनि है,
भवजस तारी... तारी... भवजस तारी... नित उठ ध्यावुं....

(अन्तर में स्थित मुनिभक्तिरूप मोती स्वयमेव मानो नयी-नयी काव्यमालारूप गुँथकर बाहर आ रहे हों... इस प्रकार पूज्य बहिनश्री-बहिन तत्काल नयी-नयी भक्ति बना करके भक्ति करा रही थीं।)

क्षपकश्रेणी चढ़ मुनिवर केवल पाते हैं.... पाते हैं...
करोड़ मुनिवर इस तीर्थ पर आये हैं आये हैं
वे चक्री और कामदेव दस आये हैं... आये हैं...
अनेक मुनिवर सिद्धवरकूट पर पधारे हैं... पधारे हैं...
निजरूप में लीन होकर सिद्धपद पाये हैं पाये हैं...
पावन मुनिवर चरणों से, अद्‌भुत यह तीरथ सोहे... अद्‌भुत यह तीरथ सोहे
महामंगलकारी... कारी... महा मंगलकारी... नित उठ ध्यावुं...
ऐसे परम तपोनिधि जहाँ जहाँ जाते हैं... जाते हैं...
परम शान्ति सुखलाभ जीव सब पाते हैं... पाते हैं...
भवभव में सौभाग्य मिले... गुरुपद पूजुं-ध्याऊँ.... गुरुपद पूजुं-ध्याऊँ
वरुं शिव नारी.... नारी... वरुं शिवनारी...
-वंदुं तीर्थ भारी.... भारी.... वंदुं तीर्थ भारी.... नित उठ ध्याऊँ....

भक्ति पूरी हुई... और मुनिभगवन्तों का जय-जयकार गाज उठा।

गुरुदेव ने प्रवचन में सिद्धभक्ति की धारा बहायी... बहिनश्री-बहिन ने भक्ति में मुनिभक्ति की धुन मचायी...

इस प्रकार सन्तों सहित सिद्धवरकूट तीर्थधाम में सिद्धभक्ति और मुनिभक्तिपूर्वक यात्रा करते हुए यात्रियों को बहुत ही आनन्द हुआ। अभी तक की यात्राओं में यहाँ सबसे विशेष आनन्द हुआ। जिस तरह रत्नत्रयरूप धर्मतीर्थ में जीव जैसे-जैसे आगे बढ़ता जाता है, वैसे-वैसे उसका आनन्द बढ़ता जाता है। उसी प्रकार गुरुदेव के साथ तीर्थयात्रा में जैसे-जैसे आगे बढ़ते जाते हैं, वैसे-वैसे यात्रियों का आनन्द बढ़ता जाता है।

प्रवचन और भक्ति के बाद तीर्थयात्रा का आनन्द व्यक्त करते हुए गुरुदेव ने

कहा—**पावागिरि में तीन चक्रवर्ती-तीर्थंकरों की प्रतिमा अद्भुत थीं और तीर्थ का वातावरण भी शान्त था, वहाँ बहुत रुचा था, वहाँ रुके थे और शाम को दूसरी बार दर्शन करने गये थे। यहाँ यह सिद्धवरकूट धाम भी बहुत सरस है। मानो यहाँ आसपास में मुनि बसते हों - ऐसा दिखाव है। यहाँ भी विशेष रहने का मन होता है, परन्तु सनावदवालों को दोपहर में व्याख्यान की हाँ करके आये हैं, इसलिए वहाँ गये बिना छुटकारा नहीं है।**

खण्डवा शहर के सेठ दयालचन्दजी (सिद्धवरकूट के महामन्त्री) इत्यादि भी यहाँ आये थे। और संघ की सुविधा के लिये बहुत व्यवस्था की थी। तदुपरान्त भोपाल शहर के अनेक भाई भी यहाँ आये थे और संघ की उल्लास भरी यात्रा तथा गुरुदेव का महान प्रभाव देखकर बहुत प्रसन्न हुए थे;—इतना ही नहीं किन्तु उन्हें ऐसा हो गया था कि ऐसे प्रभावशाली महापुरुष अपने शहर के नजदीक आये हैं और अपने शहर की जनता उनके दर्शन-प्रवचन से वंचित रह जाए—यह कैसे चलेगा! इसलिए यद्यपि भोपाल कार्यक्रम में नहीं था तथापि किसी भी प्रकार से भोपाल पधारकर वहाँ के जैन समाज को लाभ प्रदान करने के लिये बहुत ही आग्रहपूर्वक विनती की... और अन्त में हाँ करायी।

तत्पश्चात् फिर से मुख्य मन्दिर में जाकर दर्शन-पूजन किये; सिद्धवरकूट तीर्थधाम की पूजन बहिनश्री-बहिन ने बहुत उमंग से करायी और पूजन के बाद सिद्धभगवान की भक्ति भी बहुत सरस हुई। हाथ ऊँचे कर-करके सब सिद्ध भगवन्तों को नमस्कार करते जाएँ और 'सब सिद्ध नमो सुखदायक हो' इस स्तुति की धुन बोलते जाएँ—इस प्रकार पूज्य बहिनश्री-बहिन के साथ आनन्दपूर्वक भक्ति हुई थी।

'पूज्यश्री कानजीस्वामी दिगम्बर जैन तीर्थ यात्रा संघ' का सिद्धवरकूट तीर्थधाम का यह वर्णन चल रहा है। पौष कृष्ण ग्यारह के लगभग 10.30 बजे हैं... और भोजनोपरान्त संघ को यहाँ से इन्दौर की ओर प्रस्थान करना है, इसलिए सब यात्री भोजन के लिये बैठ गये हैं। यहाँ की आनन्दकारी तीर्थ-वन्दना की चर्चा करते-करते तीर्थधाम में ही सभी यात्री हर्षपूर्वक जीम रहे हैं।

भोजन के पश्चात् संघ के यात्रियों ने जय-जयकारपूर्वक वहाँ से प्रस्थान किया और फिर से नौका में बैठकर ॐकारेश्वर घाट की तरफ चल दिये। बेचारी नौका को

सिद्धवरकूट की महिमा की क्या खबर पड़े! इसलिए वह तो सिद्धवरकूट का किनारा छोड़कर दूर-दूर जाने लगी... परन्तु यात्रियों के हृदय में से सिद्धवरकूट की धुन हटती नहीं थी। नौकाएँ सिद्धवरकूट से दूर जा रही हैं परन्तु भक्तों के मन और मुख तो अभी सिद्धवरकूट की ओर ही लगे हुए हैं। सिद्धवरकूट जाने के लिये नौका विहार में जैसा आनन्द आया... वैसा आनन्द इस समय के नौका विहार में नहीं आता था... सत्य बात है—सिद्धिधाम में जिनका चित्त लगा हुआ है, उनके चित्त को जगत का दूसरा कोई पदार्थ कहाँ आनन्द उत्पन्न करा सकता है?

बारम्बार सिद्धवरकूट की ओर नजर लगाकर उसे निहारते हुए और उसके गुणगान करते-करते भक्तों को ॐकारेश्वर घाट कब आ गया, इसकी खबर नहीं पड़ी। घाट आने पर नौका में से उतरकर सब अपनी-अपनी मोटर में और बस मैं बैठे और मोरटक्का घाट आये। यहाँ अब गहरी नर्मदा नदी उलंघन करनी थी; सैकड़ों यात्रियों के उपरान्त सामान से भरी हुई मोटरें और मोटर बसें, इन सबको मछुवा द्वारा सामने पार जाना है। सामान से भरी हुई बड़ी-बड़ी बसों को मछुवा से सामने पार ले जाना—यह विकट काम था। एक बजे से यह काम शुरु हुआ वह अन्त में रात्रि दस बजे तक चला। सामानसहित एक बड़ी बस तथा दो मोटरें और उनके पैसेंजर-इतना एक मछुवा में भर जाता था और नदी पार करके एक घण्टे में सामने पार उतरता था। कोई नौका सर-सराहट करती हुई सामने पार पहुँच जाती, तो कोई नैया डोलती-डगमगाती... और यात्रियों को डराती हुई सामने किनारे पहुँचाती। कोई-कोई बस के यात्रियों के लिये तो यह नदी पार करने का प्रसंग यात्रा का एक विचित्र संस्मरण बन गया। समिति की नौका पानी के प्रवाह में फँसी हुई थी उसे सामने पार ले जाने में एक छोटे लड़के ने बहादुरीपूर्वक सहायता की थी, उसे यहाँ शाबासी दिये बिना नहीं रहा जाता—इस प्रकार कोई कठिनतापूर्वक तो कोई आनन्दपूर्वक नदी पार कर-करके इन्दौर की ओर प्रस्थान करने लगे। सायंकाल पाँच बजे तक आधा संघ नदी पार हुआ और फिर आधा संघ इस किनारे रहा। इस किनारे रहे हुए यात्री 'कब हमारा नम्बर आवे'—ऐसी आतुरता से इन्तजार कर रहे थे, तो कोई यात्री 'अभी पूज्य गुरुदेव और पूज्य बहिनश्री-बहिन यहाँ पधारना चाहिए'—ऐसी आतुरतापूर्वक उनके दर्शन के लिये इन्तजार में थे।

थोड़ी देर उन्हें इन्तेजारी में ही रहने देकर अब हम जरा सिद्धवरकूट की ओर नजर लम्बाकर वहाँ रुके हुए पूज्य गुरुदेव इत्यादि क्या करते हैं—उनकी थोड़ी याद करते हैं।

बारह बजे सिद्धवरकूट से संघ ने प्रस्थान करने के पश्चात् पूज्य गुरुदेव, प्रमुखश्री, मन्त्रीजी, पण्डितजी, ब्रह्मचारीजी, इंजीनियर साहेब इत्यादि और पूज्य बहिनश्री-बहिन इत्यादि बीस-पच्चीस यात्री ही बाकी रहे और तीर्थ का वातावरण एकदम शान्त हो गया। जैसे मुनिराज छठे गुणस्थान में जिनभक्ति का प्रपात बहाते हों और दूसरे ही क्षण में सातवें गुणस्थान की निर्विकल्प शान्ति में लीन हो जाएँ... उसी प्रकार यहाँ थोड़ी देर पहले संघ के यात्रियों की भक्ति इत्यादि प्रवृत्तियों से उत्साह से गाजता यह तीर्थ अभी एकदम उपशान्त वातावरणमय बन गया है।

ऐसे उपशान्त वातावरण में अकेले घूमते-घूमते पूज्य गुरुदेव शान्तचित्त से तीर्थधाम की आसपास के वनों का अवलोकन कर रहे हैं। अहा! सिद्धक्षेत्र के एकान्त वातावरण में अकेले-अकेले टहलते गुरुदेव बहुत भाव से मुनिवरों का यह धाम एकटक से टक-टक निहार रहे हैं और उनके हृदय में उपशान्तभाव की ऊर्मियाँ जगती हैं। मानों साक्षात् मुनि भगवन्तों के झुण्ड के झुण्ड नजर के समक्ष तैरते हों—ऐसा प्रमोद उनकी मुद्रा पर वर्त रहा है—यह प्रमोद व्यक्त करने के लिये आसपास देखते हैं परन्तु कोई दिखता नहीं, इसलिए वापस वन की ओर नजर लगाकर स्तब्धता से देख रहे हैं... थोड़ी देर में सहज योग से दो भक्त भी घूमते-घूमते वहाँ आ पहुँचे... उन्हें देखते ही बहुत भाव से अन्दर की ऊर्मियाँ व्यक्त करते हुए गुरुदेव ने कहा—

'अहा! मैं तो इस क्षेत्र में मुनियों को ही देखता हूँ... आसपास मानो मुनि ध्यान धर रहे हों, ऐसा यहाँ का वातावरण है। कैसा सरस शान्ति का धाम है! मानों यही रह जाएँ—ऐसा मन होता है। इस ओर सब जगह मुनिवरों ने ध्यान धरा होगा—वह सब यहाँ नजरों में तैरता है।'

अहा! शान्तधाम में गुरुदेव को जागृत हुई उन ऊर्मियों का यहाँ क्या वर्णन करना? अरे उनकी तो क्या बात! परन्तु जिन भक्तों को सम्बोधन करके गुरुदेव ने ये ऊर्मियाँ व्यक्त कीं, उन भक्तों के उल्लास का भी क्या वर्णन करना! निर्विकल्प शान्ति के वेदन का पूरा वर्णन क्या राग में वर्तता प्राणी कर सकता है?

—पश्चात् तो गुरुदेव के साथ-साथ भक्तों ने भी एकदम अच्छी तरह से इस तीर्थधाम का अवलोकन किया... शान्तरस की बहुत-बहुत भावनाएँ भायीं। मुनि भगवन्तों के प्रत्यक्ष दर्शन के लिये तरसते उनके हृदय भक्ति से अति गद्‌गद् हो गये और सिद्धवरकूट तीर्थ के कायमी स्मरणरूप यहाँ उल्लसित ऊर्मियाँ उनके पवित्र हृदय में उत्कीर्ण हो गयी।

इस प्रकार सिद्धवरकूट सिद्धिधाम की मंगलयात्रा आनन्दपूर्वक पूर्ण हुई।

इस सिद्धवरकूट तीर्थधाम की यात्रा में पूज्य गुरुदेव के साथ नौका विहार, रमणीय क्षेत्र का उपशान्त वातावरण, सिद्ध भगवान के प्रति भक्ति से उल्लसित गुरुदेव का प्रवचन, मुनिभक्ति, एकान्त वातावरण के अवलोकन के समय गुरुदेव को जागृत मुनिदर्शन की ऊर्मियाँ, वापस आते हुए गुरुदेव के साथ नौका विहार—ऐसे-ऐसे जो आनन्द प्रसंग बने, उन आनन्द प्रसंगों का स्मरण होने से आज भी पूज्य बहिनश्री-बहिन का हृदय उल्लास से उछल जाता है, और उनके श्रीमुख से इन प्रसंगों का तादृश वर्णन सुनते हुए भक्तों को भी अन्तर में कुछ-कुछ हो जाता है। गुरुदेव के प्रवचन में किसी-किसी समय सिद्धवरकूट का मात्र नाम देने पर भी हजारों की सभा में हर्ष छा जाता है।

—इस प्रकार उल्लसित ऊर्मिपूर्वक सिद्धवरकूट सिद्धि धाम की मंगल यात्रा पूर्ण करके, अब सनावद जाने के लिये पूज्य गुरुदेव और बाकी रहे हुए भक्तजन फिर से नौका विहार करके भक्तिपूर्वक जय-जयकार करते हुए ॐकारेश्वर घाट आये... और वहाँ से सीधे सनावद पधारे। सनावद का जैन समाज तो गुरुदेव के पधारने की राह ही देख रहा था। गुरुदेव के पधारते ही हर्षपूर्वक जय-जयकार करके सबने स्वागत किया। प्रवचन के लिये तरसती यहाँ की जनता को एक घण्टे तक अध्यात्मरस की वर्षा द्वारा गुरुदेव ने तृप्त किया। गुरुदेव फिर से सनावद पधारने से वहाँ की समाज को बहुत प्रसन्नता हुई। शाम को सेठ ईश्वरचन्दजी के यहाँ भोजन करने के पश्चात् वहाँ से प्रस्थान करके गुरुदेव मोरटक्का घाट पधारे।

यहाँ, गुरुदेव के दर्शन के लिये इन्तजार करते भक्त गुरुदेव को देखते ही हर्ष से जय-जयकार करने लगे... और दौड़ते हुए आकर गुरुदेव की मोटर को घेर लिया। घाट उतरने की ऊहापोह में पड़े हुए यात्री गुरुदेव को देखते ही आनन्दित हुए। गुरुदेव ने भी

यात्रासंघ के समाचार पूछे और फिर मछुआ द्वारा घाट को उल्लंघा। मछुआ में मोटर और मोटर में गुरुदेव—यह दृश्य सब भक्त हास्यपूर्वक देखते रहे। थोड़ी दूर घाट का अवलोकन करने के बाद पूज्य गुरुदेव वहाँ से बढ़वाह गाँव पधारे।

पृष्ठ 84 से शुरु करके यहाँ तक का वर्णन एक ही दिन के कार्यक्रम का है। सवेरे सनावद से ॐकारेश्वर; वहाँ से नौका विकार करके सिद्धवरकूट; वहाँ यात्रा करके नौका विहार से वापस ॐकारेश्वर, वहाँ से सनावद, वहाँ प्रवचन करके मोरटक्का घाट और वहाँ से मछुआ द्वारा नर्मदा पार करके रात्रि में गुरुदेव बढ़वाह रुके तथा यात्रासंघ इन्दौर आया;—एक दिन में इतने भरचक कार्यक्रम रहते थे।

★ ★ ★

बढ़वाह (पौष कृष्ण ग्यारह शाम) : पूज्य गुरुदेव के पधारने से यहाँ के दिगम्बर जैन समाज ने भक्तिपूर्वक लम्बा-लम्बा स्वागत किया। गुरुदेव ने दो जिनमन्दिरों के दर्शन किये तथा रात्रि में धार्मिक चर्चा हुई। गुरुदेव रात्रि में यहीं रुके। यहाँ के दिगम्बर जैन समाज को पूज्य गुरुदेव के प्रति और सोनगढ़ के प्रति बहुत प्रेम है।

★ ★ ★

अब हम जरा पीछे नजर करके, मोरटक्का घाट लाँघने के लिये रुके हुए साधर्मी यात्रियों को इन्दौर तक पहुँचा दें... नर्मदा घाट के ऊपर एक के पश्चात् एक बस और मोटरें जा रही थीं और इन्दौर पहुँचती गयी। परन्तु अभी कितनी ही बसें बाकी थीं। सन्ध्या होने पर जैसे-जैसे दिन घटता जाता था, वैसे-वैसे चिन्ता बढ़ती जाती थी। पूज्य गुरुदेव पधारने के बाद थोड़ी देर में पूज्य बहिनश्री-बहिन पधारे... लगनपूर्वक थोड़ी देर रुककर उन्होंने भी बालकों की सम्हाल ली... उनका कृपापूर्ण वात्सल्य देखकर बालकों को बहुत आश्वासन मिला। संकट के समय में जैसे बालक अपनी माता को पकड़ लेता है, उसी प्रकार सब बालकों ने धर्ममाता पूज्य बहिनश्री-बहिन को घेर लिया... और घाट पर हर्ष का वातावरण छा गया। धर्मात्मा पुण्यवन्तों को तो प्रकृति भी सहायता करती है—मानो ऐसा दर्शाती हो, इस प्रकार नदी ने पूज्य बहिनश्री-बहिन की मोटर को तो शीघ्र सामने किनारे उतार दिया और उन्हें लेकर सत्सेविनी इन्दौर की ओर चली गयी। इन्दौर की ओर

जाते-जाते बहिनश्री-बहिन अति वात्सल्य के कारण संघ के मुख्य व्यवस्थापकों को पीछे रहे हुए यात्रियों की सलाह-सूचना करती गयीं।

यहाँ नदी किनारे शाम पड़ गयी, इसलिए सबने वहीं जैसे-तैसे नाश्ता कर लिया... और फिर नदी किनारे यात्रा सम्बन्धी चर्चा करते हुए बैठ गये... शाम होने पर सन्तों का ध्यान का समय हुआ। अहा! इस नर्मदा के किनारे अनेक सन्त-मुनियों ने आत्मध्यान की श्रेणी लगाकर मोक्षदशा को साधा है—नर्मदा किनारे बैठे-बैठे यात्री उनका स्मरण कर रहे थे।

धीमे-धीमे अन्धकार बढ़ने लगा... बहुत सारी बसें पार उतर गयी थीं। अब मात्र दो बसें ही बाकी थीं। सामान भरी हुई बड़ी-बड़ी बसों को अंधेरे में रात्रि में मछुआ में चढ़ाना और गहरी नदी से पार ले जाकर सामने किनारे उतारना—यह काम बहुत कठिन तथा जोखिम भरा था, तथापि बसों को सामने किनारे ले गये बिना कोई उपाय नहीं था। सब विचार में पड़ गये... अन्त में संघ से बिछुड़ न जाएँ और इन्दौर में गुरुदेव के स्वागत से पहले पहुँच जाएँ—ऐसी उग्र भावना के कारण रात्रि में ही बहुत हिम्मत और सम्हालपूर्वक बस को सामने किनारे ले जाने का साहस किया। एक के बाद एक बस को अत्यन्त मेहनत से मछुआ में चढ़ाकर अन्धेरे में बहुत ही सावधानीपूर्वक धीरे-धीरे सामने किनारे ले गये और दोनों बसें सामने किनारे पहुँच गयीं।

यात्रा प्रवास में अन्धेरी रात्रि में नदी पार करने का यह प्रसंग यात्रियों के लिये यादगार बन गया। बस के सामने पार उतरते ही हृदय में दबी हुई भक्ति का पूर उमड़ने लगा, भगवान के और सन्तों के जयनाद से नर्मदा किनारे का सिद्धिधाम गाज उठा। इस प्रकार नदी पार करके तुरन्त ही यात्रियों ने इन्दौर की ओर प्रस्थान किया। अन्तिम बस लगभग बारह बजे पहुँची, तब बहुत से यात्री तो सो गये थे, परन्तु पूज्य बहिनश्री-बहिन अति वात्सल्य के कारण बाल भक्तों की चिन्ता से अभी जागृत थीं और आश्रम की बस आ गयी है या नहीं, ऐसा बारम्बार पूछ रही थीं। अहा! उनके अन्तर में अभिव्यक्त वात्सल्य देखकर उस वात्सल्य की हूँफ में सब बालक अपना दुःख भूलकर प्रसन्न और प्रफुल्लित हुए।

यहाँ इन्दौर नगरी में सर सेठ हुकमचन्दजी के नसियाजी में (सियागंज धर्मशाला में) संघ का आवास था। धर्मशाला के जिनमन्दिर में विराजमान उपशान्तमूर्ति पार्श्वनाथ

भगवान के आनन्दकारी दर्शन से चित्त हर्षित हुआ। नसियाजी में बैठे-बैठे रात्रि में एक बजे यह वर्णन लिखा गया है।

महु—(माघ कृष्ण बारह) : बढ़वाह से पूज्य गुरुदेव ने इन्दौर आने के लिये सवेरे प्रस्थान किया। बीच में महु आया, वहाँ थोड़ी देर रुके; वहाँ का जैन समाज गुरुदेव के दर्शन के लिये आतुर था। विगत दिन भी 'कानजीस्वामी का संघ यहाँ से निकलनेवाला है' ऐसा जानकर लोगों ने संघ के लिये शाम को नाश्ता और चाय-पानी की तैयारी रखी थी और दोपहर से यात्रासंघ की राह देख रहे थे। जो यात्री नर्मदा पार करके पहले निकल सके, उन्होंने थोड़ी देर यहाँ रुककर यहाँ के जिनमन्दिरों के दर्शन किये थे। गुरुदेव के दर्शन से यहाँ के समाज को हर्ष हुआ।

★ ★ ★

इन्दौर शहर

(माघ कृष्ण बारह से माघ कृष्ण अमावस्या)

इन्दौर नगरी आज सुन्दर श्रृंगार से इन्द्रपुरी के समान शोभित हो रही है। सुन्दर दरवाजे, कमान, ध्वजा पताकाओं और स्वागत सूत्रों से नगरी के मार्ग शोभ रहे हैं और कानजीस्वामी आते हैं-कानजीस्वामी आते हैं—ऐसी रटन करते हुए हजारों लोग स्वागत के लिये हर्षित होकर उमड़ रहे हैं। स्वागत कमेटी के प्रमुख और सदस्य जोशदार व्यवस्था गुँथी हुई है और लाउडस्पीकर द्वारा नगरी में आनन्दभेरी बजा रहे हैं कि 'सौराष्ट्र के महान आध्यात्मिक सन्त श्री कानजीस्वामी पधार रहे हैं... आईये, स्वागत कीजिये!' पूरा गाँव (नगर) कोलाहलमय हो गया है। पुराणों में तीर्थंकरदेव के पधारने पर नगरी में कोलाहल होने का जो सुन्दर वर्णन आता है, उस प्रकार का कुछ वातावरण यहाँ दृष्टिगोचर होता है। सुभाष चौक तो दस हजार से भी अधिक लोगों की भीड़ से भर गया है। बैण्डबाजा के मधुर सुर छूट रहे हैं... गजराज भी सूँड में हार लेकर आतुरतापूर्वक स्वागत करने के लिये तरस रहा है।

गुरुदेव के स्वागत के लिये इन्दौर समाज की इतनी अधिक जोशदार भावना देखकर, कल्याणवर्षिनी (मोटर) भी गुरुदेव को लेकर दौड़ते-दौड़ते इन्दौर आ पहुँची... और दूर से ही सा.. रे.. ग.. म.. के मधुर स्वर द्वारा गुरुदेव के पधारने की बधाई दी... गुरुदेव के पधारते ही इन्दौर के समाज ने भावभीना भव्य स्वागत किया... बैण्डबाजा जोश से झनझना उठे... हाथी ने सूँड ऊँचा करके सलाम किया और हजारों भक्तों के हर्षनाद से सुभाष चौक गूँज उठा... गुरुदेव के आते ही सुभाष चौक में आये हुए एक भव्य जिनमन्दिर के दर्शन किये, तत्पश्चात् स्वागत जुलूस शुरु हुआ। सबसे आगे सर सेठ हुकमचन्दजी सेठ के पट्ट हाथी ऊपर धर्मध्वज लहरा रहा था... उसके पीछे घुड़सवार और छड़ीदार चल रहे थे, पश्चात् ध्वजा की हारमाला और सोने-चाँदी की पालकी में शास्त्रों को विराजमान किया था। उसके पीछे सैकड़ों बालक-बालिकाओं की टुकड़ी चलती थी। तत्पश्चात् बैण्ड पार्टी गमन करते ही गुरुदेव के दर्शन होते थे। स्वागताध्यक्ष भैयासाहिब श्री राजकुमारसिंहजी (सेठ हुकमचन्दजी के सुपुत्र) तथा स्वागत मन्त्री श्री

माणेकचन्दजी सेठी गुरुदेव के साथ ही साथ नंगे पैर चल रहे थे... और पीछे दस हजार से अधिक संख्या में इन्दौर का जैन समाज उत्साहपूर्वक स्वागत में भाग ले रहा था। जिसमें रंग-बिरंगी मारवाड़ी पोशाक में सुसज्ज बहिनें भी हजारों की संख्या में थीं; सबसे पीछे बहिनों की बड़ी लंघरमाला चलती थी, सुशोभित राजमार्ग में निकल रहा यह भव्य स्वागत जुलूस नगरी की शोभा में एक ओर वृद्धि करता था... जगह-जगह हजारों लोग आश्चर्य से स्वागत निहारते थे। मकानों की अटारियाँ भी दर्शकों से भर गयी थीं और भक्तजन जगह-जगह अक्षत पुष्प की वृष्टि करके गुरुदेव का सम्मान कर रहे थे। अलग-अलग बाजार के एसोसियेशनों ने भी अपने बाजार ध्वजा पताका-कमानों और स्वागत सूत्रों से शृंगार करके इस स्वागत में अपना सुर मिलाया था। अहा! इन्दौर नगरी का वैभवशाली स्वागत बहुत शोभित होता था और यह स्वागत देखकर नगरी के बहुत से लोग प्रभावित हुए थे। स्वागत-जुलूस नगरी में घूमते-घूमते इतवारिया बाजार में आकर काँच की कारीगरीवाले जिनमन्दिर के सामने एक विशाल सभा के रूप में परिवर्तित हो गया... पन्द्रह हजार की विशाल सभा का दृश्य अद्भुत था। उसमें मंगल प्रवचन करते हुए गुरुदेव ने कहा—

'अरिहन्त, सिद्ध, साधु और सर्वज्ञ ने कहा हुआ धर्म, वह मंगलरूप है। आत्मा का जैसा स्वभाव सर्वज्ञदेव ने कहा है, उसकी श्रद्धा, उसका ज्ञान और उसमें लीनता, यह मंगल है। सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्ररूप रत्नत्रयभाव, वह जगत में उत्कृष्ट मंगल है। सम्यग्दर्शन में सिद्ध भगवान के समान सम्पूर्ण आनन्द का नमूना आ गया है... यह सम्यग्दर्शन भी महा मंगलमय है।'

गुरुदेव की मीठी-मधुर मंगल वाणी सुनकर जनता ने बहुत हर्ष व्यक्त किया... तत्पश्चात् गुरुदेव काँच के मन्दिर में दर्शन करने पधारे। इन्दौर में सर सेठ हुकमीचन्दजी सेठ का यह काँच की कारीगरीवाला जिनमन्दिर बहुत प्रसिद्ध है, देश देशावर के लोग इसे देखने आते हैं... यह मन्दिर बहुत भव्य है, लाखों रुपये के खर्च से चारों ओर ऊपर-नीचे सर्वत्र काँच की सुन्दर कारीगरी और चित्रकाम इत्यादि से यह बहुत ही शोभित हो रहा है... बहुत वर्षों से सुना हुआ यह जिनेन्द्र वैभव नजरों से निहारते हुए भक्तों को हर्ष हो रहा था और उसमें विराजमान श्री शान्तिनाथ भगवान की परम शान्त मुद्रा के दर्शन से चित्त

वही स्थिर हो जाता था। गुरुदेव ने बहुत भाव से दर्शन किये... और जिनमन्दिर की अद्‌भुत शोभा निहारकर प्रसन्न हुए। श्री राजकुमारसिंहजी गुरुदेव के साथ ही साथ रहकर सब दिखलाते थे। इस मन्दिर में मूलनायक रूप से श्री शान्तिनाथ भगवान के पाँच फुट के विशाल प्रतिमाजी का दिखाव बहुत ही भव्य है। यह शान्त श्याम प्रतिमाजी मानो कि वैराग्यरस में से ही ढाली गयी हों—ऐसा इसका दिखाव है, इसके अतिरिक्त स्वर्ण-चाँदी इत्यादि के दूसरे भी अनेक जिनबिम्ब वहाँ शोभित हो रहे हैं। वहाँ दर्शन करने के बाद पूज्य गुरुदेव इन्द्रभुवन में सर हुकमीचन्दजी सेठ के यहाँ भोजन के लिये पधारे... अपने आँगन में गुरुदेव के दर्शन होते ही वे बहुत आनन्दित हुए। गुरुदेव ने भी प्रेमपूर्वक उनके साथ थोड़ी देर बातचीत की; गुरुदेव ने पूछा : आपसे प्रवचन में आया जा सकेगा? सेठजी ने तुरन्त उल्लास से जबाव दिया—हाँ, जरूर आऊँगा, मैं चल नहीं सकता लेकिन आदमियों के सहारे स्ट्रेचर में आऊँगा... आप हमारी इन्दौर नगरी में पधारे और मैं प्रवचन का लाभ न लूँ—यह कैसे बने? गुरुदेव ने कहा—अच्छा, आपकी भावना अच्छी है। तत्पश्चात् गुरुदेव ने वहाँ भोजन किया; अपने आँगन में गुरुदेव का भोजन होने से राजकुमारजी इत्यादि को बहुत हर्ष हुआ। सेठानी श्री कंचनबाई के आग्रह से पूज्य बहिनश्री-बहिन ने भी वहीं भोजन किया था। बहिनश्री-बहिन को भी अपने आँगन में देखकर सेठजी ने बहुत प्रमोद व्यक्त किया।

गुरुदेव के इन्दौर पधारने से सेठजी को इतना अधिक उत्साह था कि विरोध का जरा सा नाम सुनने पर भी उन्हें वह असह्य लगता था और वे कहते : अरे, यहाँ कानजीस्वामी का विरोध कैसा? इन्दौर नगरी में कभी न हुआ हो ऐसा भव्य स्वागत स्वामीजी का होगा। तदुपरान्त गुरुदेव पधारे, उसके हर्षोपलक्ष में इन्दौर के इतिहास में कभी न निकली हो ऐसी जिनेन्द्रदेव की अभूतपूर्व भव्य रथयात्रा समस्त वैभवसहित निकालने की उनकी भावना थी, परन्तु समय के अभाव में वह कार्यक्रम सम्भव नहीं हो सका।

सेठजी के इन्द्रभवन के बगीचे में एक जिनालय है, उसमें श्री चन्द्रप्रभ भगवान के पाँच फीट के बहुत ही भव्य विशाल प्रतिमाजी हैं, तदुपरान्त स्फटिक के भी बड़े सुन्दर जिनबिम्ब हैं। गुरुदेव ने वहाँ जाकर दर्शन किये... तत्पश्चात् आवास पर आये।

पूज्य गुरुदेव का तथा समस्त संघ का निवास सेठजी की नसियां में था। यह

धर्मशाला बहुत विशाल है और उसमें एक भव्य जिनमन्दिर भी है। पार्श्वनाथ प्रभु के बहुत भव्य प्रतिमाजी वहाँ विराजमान हैं। पूरे संघ के लिये नहाने-धोने की, चाय-पानी की तथा भोजन इत्यादि की सभी व्यवस्था इन्दौर के जैन समाज की ओर से बहुत प्रेमपूर्वक सुन्दर रीति से की गयी थी; भोजनालय आवास से थोड़ा सा दूर था, वहाँ आने-जाने के लिये भी मोटरों की व्यवस्था की गयी थी और यात्रियों को बहुत प्रेमपूर्वक भोजन कराया था। सेठ साहब के पुत्र-पौत्र तथा दूसरे अनेक अग्रणीय स्वयं ही भोजनशाला में आकर आवभगत करते थे इतना ही नहीं परन्तु उत्साह से स्वयं ही परोसते थे। इसी प्रकार बहिनों में भी सेठानीजी तथा उनकी पुत्रियों और पुत्रवधुओं इत्यादि उत्साहपूर्वक परोसने आते थे। संघ के प्रति उनका इतना अधिक वात्सल्य देखकर यात्री आश्चर्य को प्राप्त हुए। इन्दौर जैन समाज को और उसमें भी विशेषरूप से सर सेठ साहब को पूज्य गुरुदेव का और संघ का स्वागत करने का इतना अधिक उत्साह था कि बहुत दिन पहले से संघ की व्यवस्था सम्बन्धी छोटी-बड़ी अनेक बाबतें वे टेलीफोन द्वारा मुम्बई से पुछवाते थे। पूज्य गुरुदेव के साथ यात्रा करने का भी उन्हें उत्साह था... गुरुदेव यात्रा के लिये पधारनेवाले हैं, यह बात सुनते ही उन्होंने प्रसन्नता के साथ-साथ अपनी भावना व्यक्त करते हुए लिखा था कि 'पूज्य महाराजजी सम्मेदशिखरजी की यात्रा करने को इस तरफ पधार रहे हैं, यह जानकर मुझे बहुत खुशी हुई। अगर मेरी शारीरिक हालत अच्छी होती तो मैं भी मोटर लेकर यात्रा में महाराजजी को साथ-साथ चलता।' गुरुदेव के इन्दौर पधारने पर वहाँ के समाज को बहुत हर्ष हुआ था और सबने उत्साह से भाग लेकर इस प्रसंग को शोभित किया था... तथा अनेकविध व्यवस्था के लिये इन्दौर के गणमान्य लोगों की एक बड़ी स्वागत समिति बनायी गयी थी और इन्दौर की जैन जनता तो गुरुदेव के दर्शन से हर्षित हो गयी थी। इन्दौर के यह नमूनेदार भव्य स्वागत की प्रतिध्वनियाँ तत्पश्चात् के बहुत-बहुत शहरों में भी पड़ी और जगह-जगह एक-दूसरे को भुलावे, ऐसा भावभीना स्वागत हुआ... इस प्रकार नहीं सोचे हुए स्वागत प्रसंगों को देखकर गुरुदेव के ऐसे महान पुण्यप्रभाव से सब यात्री आश्चर्यचकित बन जाते थे।

इन्दौर में गुरुदेव के प्रवचन के लिये प्रसिद्ध स्थान घण्टाघर (गाँधी हॉल) के चौगान में दस हजार श्रोता बैठ सकें—इतना एक विशाल मण्डप बाँधा गया था और उसे ध्वजा-पताका इत्यादि से बहुत श्रृंगारित किया गया था। प्रवचन का स्थान आवास से दूर

था, इसलिए यात्रियों को वहाँ जाने-आने के लिये सेठजी की ओर से मोटरों की व्यवस्था की गयी थी। गुरुदेव के प्रवचन सुनने के लिये इन्दौर की जनता बहुत ही उमड़ पड़ी थी... दस हजार श्रोता बैठ सकें, इतना मण्डप भी छोटा पड़ रहा था और हजारों श्रोता मण्डप के बाहर धूप में बैठकर भी शान्ति से प्रवचन सुन रहे थे। मध्यभारत के वित्त मन्त्री श्री मिश्रीलालजी गंगवार-जो दिगम्बर जैन हैं, वे भी गुरुदेव का प्रवचन सुनने आते थे; इन्दौर के उदासीन ब्रह्मचर्य आश्रम के ब्रह्मचारी, तथा वहाँ के प्रसिद्ध पण्डित और न्यायाधीश, वकील, डॉक्टर इत्यादि भी प्रवचन में आते थे। सेठ साहेब हुकमीचन्दजी की तबीयत पथारीवश होने पर भी वे भी गुरुदेव के प्रवचन में आते थे और ध्यानपूर्वक सुनते थे। इस प्रकार प्रवचन सभा एक भव्य धर्मदरबार जैसी शोभित होती थी। मानो कि धर्म का महान कल्याणकारी कोई महोत्सव आयोजित हो! सवेरे, दोपहर जिज्ञासुओं के झुण्ड के झुण्ड वहाँ उल्लसित होते थे और गुरुदेव के प्रवचन भी अद्भुत थे... एक घण्टे तक परम शान्तरस का झरना सततरूप से धीरे-धीरे बहता था। सभाजन शान्तरस में सराबोर बनकर मन्त्रमुग्ध की तरह डोल उठते थे। '**मोक्षमार्ग की शुरुआत निश्चय सम्यग्दर्शन से ही होती है—यह रहस्य गुरुदेव विशेष वजनपूर्वक बारम्बार स्पष्ट करके समझाते थे; तदुपरान्त उपादान-निमित्त की स्वतन्त्रता, निश्चय-व्यवहार का स्वरूप, सर्वज्ञ का निर्णय करने में स्वसन्मुख पुरुषार्थ इत्यादि महत्त्व के विषयों की बहुत ही छनावट करके समझाते थे।** गुरुदेव के प्रवचनों का लाभ लेने के लिये बाहर गाँव से भी अनेक सज्जन और विद्वान आते थे; उनमें सोलापुर के वयोवृद्ध पण्डित बंशीधरजी तो गुरुदेव के दर्शन से और प्रवचन श्रवण से गद्गद् होकर कहते थे कि अहा! निश्चय-व्यवहार का यथार्थ रहस्य आपने ही खोला है। भूतार्थस्वभाव के आश्रय से ही सम्यग्दर्शन होने की बात भी अपूर्व है। निश्चय व्यवहार का ऐसा स्पष्टीकरण आज तक किसी ने नहीं समझाया।'

हमेशा रात्रि में तत्त्वचर्चा नसियाजी में एक विशाल मण्डप में होती थी। तत्त्वचर्चा में भी छह-सात हजार जिज्ञासु भाई-बहिन बहुत रसपूर्वक भाग लेते थे.. और उसमें अनेकविध प्रश्नों के छूट से छनावट होती थी। प्रत्येक प्रत्येक जिज्ञासुओं के प्रश्न का गुरुदेव विस्तार से समाधान करते थे। तत्त्वचर्चा में इतनी बड़ी संख्या में और इतने रस से लोगों ने लाभ लिया, यह इन्दौर का एक रिकार्ड था।

'कानजीस्वामी किसी के साथ चर्चा नहीं करते और किसी के प्रश्नों का जवाब नहीं देते'—ऐसा सुने हुए बहुत लोग, यहाँ तत्त्वचर्चा का ऐसा सरस वातावरण देखकर आश्चर्य को प्राप्त हुए और उपरोक्त सुनी हुई बात कितनी भ्रामक है—इसका उन्हें ख्याल आ जाता था। हाँ, इतना अवश्य है कि कानजीस्वामी चर्चा के बहाने किसी के साथ वाद-विवाद के झगड़े में नहीं उतरते हैं और आपश्री का इस प्रकार का झुकाव कितना अधिक योग्य है वह आज जैन समाज के अच्छे-अच्छे सब विद्वान और जिज्ञासु प्रसिद्धरूप से जानते हैं। रात्रिचर्चा में चार दिन के दौरान हजारों लोगों की जाहिर सभा के बीच सैकड़ों प्रश्न चर्चित हुए थे, तथापि कभी भी विसंवाद ज्ञात नहीं हुआ था; इतना ही नहीं परन्तु दिल्ली की सुप्रीम कोर्ट की तरह एकदम व्यवस्थित और शान्तिपूर्वक तत्त्वचर्चा का कामकाज चलता था। इन्दौर के जिज्ञासुओं ने हजारों की संख्या में जो शान्ति और व्यवस्थापूर्वक इतने अधिक रस से तत्त्वचर्चा का लाभ लिया, उसे देखकर सब यात्रियों के मुख से इन्दौर के समाज के प्रति धन्यवाद के शब्द निकलते थे। श्री राजकुमारसिंहजी भी तत्त्वचर्चा में अच्छा रस लेते थे और वे कहते थे कि 'जिज्ञासुबुद्धि से जो समझना चाहता है, उसके तो सब समाधान हो जाते हैं, परन्तु जिसे जिज्ञासुबुद्धि नहीं है और विरोध के लिये ही विरोध करना चाहता है, उसका समाधान तो खुद भगवान भी नहीं कर सकते। जिज्ञासा से पूछे जाने पर प्रत्येक प्रश्न का समाधान कितनी सरलता और शान्तिपूर्वक होता है, यह हमने इन्दौर की चार दिन की चर्चा के दौरान देखा है।'

श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैन विद्वत परिषद के अग्रगण्य विद्वान—पण्डित फूलचन्दजी (तत्कालीन अध्यक्ष) पण्डित नाथूलालजी, पण्डित जगन्मोहनलालजी (भूतपूर्व अध्यक्ष), तथा पण्डित पन्नालालजी (मन्त्री) यहाँ पूज्य गुरुदेव के साथ कितना ही आवश्यक विचार-विनिमय करने तथा सम्मेदशिखरजी मधुवन में सागर विद्यालय के स्वर्ण जयन्ती अधिवेशन के सम्बन्ध में सम्मति लेने के लिये आये थे। दोपहर को लगभग डेढ़ घण्टे तक उन्होंने पूज्य गुरुदेव के साथ छूटपूर्वक बातचीत की थी और इस बातचीत के बाद सभी पण्डित बहुत प्रसन्न ज्ञात होते थे। उपरोक्त चार समर्थ विद्वान पूज्य गुरुदेव से विशेषरूप से मिलने के लिये आये, उसमें उनका मुख्य हेतु यह था कि पूज्यश्री कानजीस्वामी इतने सब यात्रियों का संघसहित तीर्थ वन्दना के लिये इस ओर पहली ही बार पधार रहे हैं, तब एक-दूसरे से अपरिचित होने के कारण इस ओर के लोगों द्वारा कोई गैर समझ या

अनुचित प्रवृत्ति न हो जाए और उनके विचार योग्य रीति से इस ओर की जनता जाने तथा उनका योग्य सम्मान करे—इस प्रकार दिगम्बर जैनधर्म की शान बराबर बनी रहे—ऐसी उनकी सद्भावना थी। इस प्रसंग में जो कुछ चर्चा, शंका-समाधान, या सूचना करने की उन्हें आवश्यकता लगी, वह उन्होंने की थी और इस प्रकार गुरुदेव के विशेष निकट परिचय से वे प्रभावित और सन्तुष्ट हुए थे।

सवेरे नसियाजी के मन्दिर में यात्रीगण समूह पूजन करते थे और रात्रि में चर्चा के बाद पूज्य बहिनश्री-बहिन भक्ति कराते थे। हिन्दी में दो स्तवन गवाने के बाद, इन्दौर की बहिनों ने गुजराती भजन सुनने की इच्छा दर्शाने पर पूज्य बहिनश्री-बहिन ने दो गुजराती भजन गाकर सुन्दर भक्ति करायी थी।

(1) **आवो आवो सीमन्धरनाथ अमघेर आवो रे...**
रुडा भक्तिवत्सल भगवंत नाथ! पधारो ने....

(2) **मारा जिनवरजीनी जोड़.... जगमां जोतां मलशे ना...**
के... एना शुध्धजीवनजी होड... कोई देवो करशे ना...

उपरोक्तानुसार दो स्तवन गवाये थे। बहुत से मारवाड़ी लोग यद्यपि इस गुजराती भजन की भाषा समझते नहीं थे, तथापि भक्ति की उल्लास भरी धुन और चेष्टा देखकर वे भी उत्साहित हो जाते थे।

पूज्य बहिनश्री-बहिन की ऐसी सरस भक्ति देखकर सेठानीजी तथा उनकी पुत्रियों और पुत्रवधुओं इत्यादि ने बहुत आग्रहपूर्वक शहर के अलग-अलग इलाकों के जिनमन्दिर में ऐसी भक्ति कराने की माँग की थी, इसलिए नये-नये मन्दिरों में भक्ति होती थी। एक बार शक्कर बाजार के जिनमन्दिर में रात्रि में डेढ़ घण्टे तक पूज्य बहिनश्री-बहिन ने अद्भुत भक्ति करायी थी... भक्ति का ऐसा अन्तरंग उल्लास देखकर वहाँ के समाज ने बहुत हर्ष व्यक्त किया था और 'एक छोटी सी तमन्ना... ले तेरे दरबार में...' यह स्तवन बारम्बार गाने की माँग की थी, इस स्तवन के समय बहुत ही धुन जम जाती थी। तदुपरान्त एक दिन दूसरे एक जिनमन्दिर में भी भक्ति करायी थी।

इन्दौर नगर जैनधर्म के वैभव से समृद्ध है, वहाँ लगभग 17 दिगम्बर जिनमन्दिर हैं, प्रत्येक मन्दिर भव्य है, उसमें काँच का मन्दिर सर्वाधिक प्रसिद्ध है। शक्कर बाजार के

एक मन्दिर में स्फटिक के बड़े भगवान हैं; दूसरा मारवाड़ी मन्दिर-जिसमें पूज्य बहिनश्री-बहिन ने भक्ति करायी थी, उसमें समवसरण की तीन पीठिका के ऊपर श्री आदिनाथ भगवान बहुत ही शोभित हो रहे हैं, तदुपरान्त उसमें ढाई द्वीप की सुन्दर रचना करके सीमन्धर आदि बीस विद्यमान भगवन्तों का स्थान तथा ढाई द्वीप (मनुष्यक्षेत्र) के 458 शाश्वत् जिनमन्दिरों का दृश्य बहुत भाववाही है और जिनवाणी मन्दिर की रचना भी भक्तियुक्त है। मल्हारगंज के एक मन्दिर में शान्तिनाथ भगवान की सात फीट उन्नत गुलाबी खड्गासन प्रतिमाजी का दिखाव अद्भुत है; दूसरे एक मन्दिर में पाँच फीट के पद्मासनस्थ भगवान नेमिनाथ प्रभु का दिखाव भी भव्य है। सेठ कल्याणमलजी के यहाँ एक भव्य मन्दिर है, उसमें सहस्त्रकूट चैत्यालय की रचना है; कहते हैं कि सहस्त्रकूट चैत्यालय की रचना पूरे मालवा प्रान्त में एक यहीं है, तदुपरान्त इस मन्दिर में दूसरे भी विशाल जिनबिम्ब हैं, चाँदी के छह जिनबिम्बों में एक तो दो फुट विशाल है, स्फटिक के भी अनेक जिनबिम्ब हैं। सर हुकमीचन्दजी सेठजी के यहाँ बगीचे के मन्दिर में पाँच फीट के विशालकाय पद्मासन चन्द्रप्रभ तथा स्फटिक के लगभग एक फुट बड़े और दूसरे चाँदी के चन्द्रप्रभ इत्यादि जिनबिम्ब विराजते हैं। इन चाँदी के चन्द्रप्रभ की प्रतिष्ठा सौराष्ट्र में पूज्य गुरुदेव के सुहस्त से हुई है। सियागंज में नसिया के जिनमन्दिर में बड़े पार्श्वनाथ भगवान विराजते हैं—जिनका दिखाव मधुवन के पार्श्वनाथ प्रभु जैसा है। छोटे नसिया में भी एक मन्दिर है—इसके अतिरिक्त दूसरे भी भव्य जिनालय हैं। कुल सत्रह जिनालयों से और समृद्ध जैनसंघ से यह नगरी शोभित हो रही है, नगरी का दिखाव भी सुन्दर है। चार दिन तक नगरी में घूम-घूमकर यात्रियों ने सभी जिनमन्दिरों के दर्शन किये। पूज्य गुरुदेव को भी श्री राजकुमारसिंहजी ने साथ रहकर जिनमन्दिरों के दर्शन कराये तथा शीशमहल और गजरथ के लिये बड़ा रथ, सोने की मोटर इत्यादि देखनेयोग्य चीज़ें बतायीं। सर हुकमीचन्दजी सेठ जब से सौराष्ट्र में सोनगढ़ (तीन बार) पधारे, तब से उनकी इन्दौर नगरी का जैन वैभव देखने की सौराष्ट्र के भक्तों की उत्कण्ठा थी। पूज्य गुरुदेव के साथ इन्दौर नगरी का जैन वैभव नजरों से निहारकर सबको बहुत प्रसन्नता हुई। इन्दौर की जनता ने भी बहुत वात्सल्य भरा स्वागत किया और चार दिन तक गुरुदेव के सत्समागम का बहुत लाभ लिया। गुरुदेव जैसे महान आध्यात्मिक सन्त हमारे आँगन में भोजन करने पधारें—ऐसी बहुत भक्तों की भावना थी, वे हमेशा निमन्त्रण अनुसार अलग-अलग घर में भोजन करते

थे। पहले दिन श्री हुकमीचन्दजी सेठ के यहाँ, तथा तत्पश्चात् सेठ कल्याणमलजी, सेठ माणिकचन्दजी सेठी, सेठ फतेहचन्दजी, सेठ लालचन्दजी तथा सेठ अमृतलाल हंसराज इत्यादि के यहाँ भोजन किया था। गुरुदेव की अत्यन्त सीधी और सादी भोजन पद्धति देखकर सबको आनन्द होता था और दूर-दूर के देश में बसनेवाले ऐसे आध्यात्मिक सन्त के चरण अपने आँगन में होने पर उसकी खुशहाली में उत्सव जैसा करते थे।

यात्रासंघ इन्दौर में चार दिन आनन्दपूर्वक रहा; सवेरे यात्री बहुत उत्साहपूर्वक जिनमन्दिर में समूहपूजन करते, तत्पश्चात् गुरुदेव का प्रवचन होता। अभी तक में कभी न हुई हो इतनी बड़ी गुरुदेव की प्रवचन सभा का दिखाव अद्भुत था। अनेक त्यागी और विद्वान, वित्तप्रधान और सेठजी, न्यायाधीश और वकील, डॉक्टर और प्रोफेसर, जैन और अजैन—ऐसे विध-विध प्रकार के लगभग बारह हजार श्रोताजनों से सभामण्डप शोभित हो उठता था और गुरुदेव का प्रवचन उस सभामण्डप की शोभा पर कलश चढ़ाता था। प्रवचन के बाद मध्यभारत के वित्तप्रधान श्री मिश्रीलालजी गंगवाल ने 'सन्त सदा सुखदायी जगत में,... सन्त सदा सुखदायी...'—ऐसा सन्तों के समागम की महिमा दर्शाता हुआ प्रसंगोचित भजन गाया था। चारों दिन प्रवचनों का रिकार्डिंग तथा फोटो और फिल्म बनाना चालू ही था। श्री राजकुमारसिंहजी और मुख्य-मुख्य कार्यकर्ता सततरूप से गुरुदेव के और संघ के सान्निध्य में रहकर, किसी को कुछ तकलीफ न हो, इसका ध्यान रखते थे। इन्दौर की जनता ऐसे महान आध्यात्मिक सन्त का भलीभाँति लाभ ले सके और सम्पूर्ण नगरी में जैनधर्म की प्रभावना हो, इसके लिये बड़े-बड़े रंगीन पैम्पलेट (भींतपत्र) द्वारा गुरुदेव के आगमन की प्रसिद्धि की गयी थी, पूरी नगरी में चौक-चौक में जहाँ देखो वहाँ रंगीन पत्रिकाएँ जनता का चित्त आकर्षित कर रही थीं... और कब वे सौराष्ट्र के सन्त पधारें और कब उनके दर्शन करें—इस प्रकार जनता इन्तजारपूर्वक बहुत दिनों से राह देख रही थी। गुरुदेव के पधारने पर जनता ने स्वागत भी ऐसा ही भव्य किया। 'जागरण' नामक हिन्दी दैनिक (दिनांक 29-01-1957 के अंक में) गुरुदेव के स्वागत प्रसंग की फोटोसहित नोंध ली और साथ में गुरुदेव का संक्षिप्त जीवनपरिचय भी प्रसिद्ध किया।

पौष कृष्ण तेरह (दिनांक 28-01-1957) के दिन दोपहर को इन्दौर के दिगम्बर जैन समाज की ओर से पूज्य गुरुदेव के स्वागत निमित्त अभिनन्दन समारोह आयोजित

किया गया था, उसमें सर हुकमीचन्दजी सेठ, मिश्रीलालजी गंगवाल, राजकुमारसिंहजी, पण्डित बंशीधरजी, पण्डित नाथूलालजी इत्यादि विद्वान, अनेक त्यागी, तथा नगरी के अनेक प्रतिष्ठित नागरिक मिलकर पाँच हजार से अधिक सभाजन उपस्थित थे। कार्यक्रम की शुरुआत निम्न मंगलाचरण से हुई थी—

नमः श्री वर्द्धमानाय निर्द्धूत कलिलात्मने।
सालोकानां त्रिलोकाणां वर्तते दर्पणायते॥

तत्पश्चात् श्री कोमलचन्दजी वकील की दसैक वर्ष की बालिका ने निम्न स्वागत गीत गाया था।

महाराज तुम्हारा स्वागत है.... मेरी नगरी के आंगन में....
यह इन्द्रपुरी इन्दौर नगर, पुलकित है इसकी डगर डगर,
आलोक बने तुम आये हो, उमटी पड़ती है प्राण लहर... (1)
तुम हो सुज्ञान किरण अनुपम, आ लोक दिया अन्तर तम में,
गुरु प्रथमबार इस नगरी में, आये हो भाग्य हमारा है... (2)
तुम आओ बार हजार यहाँ, यह रूप तुम्हारा प्यारा है,
तुम निजधन के सौदागर हो, हो धन जीवन के ज्ञापन में... (3)
हम प्राणी हैं मिथ्यात्व फंसे, बहुतेरे पापों के भागी,
तुम आये रजनी बीत चली, अब भोर हुआ निंदिया जागी... (4)
तुम जैन धर्म के राजमुकुट, बस गये आज जन के मन में,
मेरा प्रणाम स्वीकार करो, मेरे गुरुवर कानजी स्वामी... (5)
मैं हूँ अबोध बालिका एक, बन सकुं तुम्हारी अनुगामी,
वर दो मुझको मैं भटक नहि पाऊँ योंही पागलपन में...
महाराज तुम्हारा स्वागत है... मेरी नगरी के आंगन में... (6)

बालिका के स्वागत गान के पश्चात् सेठ साहब की सुपुत्री सौ. चन्द्रकलाबहिन ने जुस्साहार भाषा में अपना खास अभिनन्दन गीत (वीर संवत् 2473 में वे सोनगढ़ आये तब जो गाया था, उसमें थोड़ा बढ़ाकर) गाया था, उसका थोड़ा सा अंश निम्नानुसार है।

यही धरा पर आत्मरवि का उदय सदा जयवंत रहो...
ज्ञानपूंज उस आत्मज्योति को बार बार सब नमन करो...

धन्य धन्य तुम गुरुवर मेरे आत्मज्योति को जगा दिया,
कोटि जन्म के अन्धज्ञान का पलभर में ही नाश किया,

कुन्दकुन्द मुनिराज चरण में चन्द्रप्रभा का कोटि प्रणाम,
ओर कानजीसद्‌गुरु को भी अर्पित करती भक्तिललाम...

तत्पश्चात् स्वागत मन्त्री श्री माणेकचन्दजी सेठी ने अपने भाषण में कहा 'हमारी इन्दौर नगरी के आँगन में कानजीस्वामी जैसे आध्यात्मिक महापुरुष पधारे हैं यह हमारे बड़े सौभाग्य की बात है। इन्दौर की जनता ने आपका जो भव्य स्वागत किया वह योग्य ही है। परन्तु आपका वास्तविक स्वागत करने के लिये हम आपके बताये मार्ग पर चलें— वही आपका सच्चा स्वागत है। आज के भयभीत संसार को शान्ति के लिये कानजीस्वामी का आध्यात्मिक उपदेश बहुत जरूरी है।'

तत्पश्चात् इन्दौर दिगम्बर जैन समाज की ओर से भैयासाहेब श्री राजकुमारसिंहजी (एम.ए., एल.एल.बी.) राय बहादुर इत्यादि ने एक सुशोभित अभिनन्दन पत्र पढ़कर सभा के हर्षनाद के बीच गुरुदेव को अर्पण किया था। उस भावभीने अभिनन्दन-पत्र में लिखा था कि—

'हमारा सौभाग्य है कि हम जिस महान व्यक्ति के पुण्य सम्पर्क की वर्षों से प्रतीक्षा कर रहे थे, हमारी वह मनोकामना आज सफल हो गयी। वर्तमान बीस तीर्थंकरों की निर्वाणभूमि तीर्थराज श्री सम्मेदशिखरजी की वन्दना करने के पवित्र संकल्प को लेकर आप सौराष्ट्र से 500 धार्मिक बन्धुओं के साथ मार्ग में आनेवाले सिद्धक्षेत्रों की वन्दना करते हुये यहाँ पधारे हैं। दो दिन से हमें आप अपनी लोककल्याणकारिणी अमृतमयी वाणी का रसास्वादन करा रहे हैं। आज इस मंगलबेला में मध्यप्रदेश के आत्मज्ञानपिपासु नागरिकों के समक्ष आपके प्रति बहुमान प्रगट करते हुए हम अपने को गौरवान्वित मानते हैं।'

'अनन्त दु:खमय संसार की स्थिति का अवलोकन कर आपने उच्चतम तत्त्वज्ञान का अध्ययन एवं मनन किया और उसकी महत्ता अन्य मुमुक्षुजनों को अवगत कराकर उनका पथ-प्रदर्शन किया। इस विनाशकारी अणुयुग के भौतिक वातावरण के विरुद्ध

आध्यात्मिकता का प्रसार कर आपने सहस्र दिग्भ्रान्त मानवों का जीवन ही परिवर्तित कर दिया है। आपकी वीतरागप्रणीत निर्ग्रन्थ मार्ग पर दृढ़ श्रद्धा, आत्मार्थिता, गुणगरिमा, निस्पृहता, कर्तव्यनिष्ठा और परोपकारपरायणता का मूर्तिमानरूप सोनगढ़ (सौराष्ट्र) है, जो आप ही के कारण आज तीर्थस्थान बन गया है।'

इस प्रकार अभिनन्दन समारोह के बाद पूज्य गुरुदेव का प्रवचन शुरु हुआ था; प्रवचन में अभिनन्दन के सम्बन्ध में गुरुदेव ने संक्षेप से कहा था कि वास्तव में सब अपने-अपने भाव का अभिनन्दन करते हैं; पर का बहुमान या अभिनन्दन कोई नहीं करता, परन्तु अपने भाव में जो रुचा, उस भाव का ही स्वयं बहुमान और अभिनन्दन करते हैं। आत्मा का चिदानन्दस्वभाव है, उसे पहिचानकर उसका अभिनन्दन करना अर्थात् उसकी रुचि और बहुमान करके ज्ञान को उसमें अन्तर्मुख करना, यही आत्मा का वास्तविक अभिनन्दन है और इस प्रकार शुद्ध आत्मस्वभाव ही अभिनन्दन करनेयोग्य है...

— प्रवचन के पश्चात् यात्रासंघ के मन्त्री नेमिचन्दजी पाटनी ने संघ की ओर से इन्दौर की दिगम्बर जैन समाज का हार्दिक आभार माना था और साथ-साथ ऐसे असाधारण उत्साहपूर्वक गुरुदेव का स्वागत और संघ की व्यवस्था करने के लिये उन्हें धन्यवाद दिया था।

इस प्रकार इन्दौर की जनता ने पूज्य गुरुदेव का भावभीना स्वागत करके उत्साहपूर्वक लाभ लिया था... बहुत से जिज्ञासुओं ने गुरुदेव को अधिक रुककर इन्दौर को लाभ प्रदान करने की प्रार्थना की थी।

प्रवचन के बाद यात्री जिनमन्दिरों तथा आश्रम इत्यादि देखने के लिये जा रहे थे। भारत के भिन्न-भिन्न स्थलों में ब्रह्मचर्याश्रम इत्यादि देखते समय सोनगढ़ के ब्रह्मचर्य आश्रम का अचूक स्मरण हो जाता था और ऐसा भी लगता था कि सोनगढ़ जैसे विशिष्ट ध्येयवाला-मात्र आत्महित के ध्येयवाला और सन्तों की सीधी छायावाला आश्रम भारत में भाग्य से ही कहीं होगा!

कितने ही यात्रियों ने अभी महु देखा नहीं था, महु के स्वर्गमन्दिर की बड़ी बातें सुनकर उसे देखने के लिये मन ललचा गया, इसलिए कितने ही यात्री महु देखने गये... परन्तु जब वहाँ जाकर देखा, तब सबको ऐसा लगा कि पर्वत तो दूर से ही रमणीय लगता

है बड़ी बातें सुनी, वैसा कुछ वहाँ देखने में नहीं आया। यद्यपि वहाँ अन्यमत की मूर्तियों के साथ-साथ तीन जैन मूर्तियाँ भी थीं परन्तु वे योग्य विधि अनुसार स्थापित नहीं थीं, इसलिए वहाँ विशेष न रुककर तुरन्त ही गाँव के जिनमन्दिरों के दर्शन करने गये। मानो कि 'स्वर्ग मन्दिर' में से वापिस घूमकर 'मोक्षमन्दिर' की ओर चले। जिनमन्दिर तो मोक्षमन्दिर कहलाता है, उसमें विराजमान भगवान जिनेन्द्रदेव के दर्शन से सबको आनन्द हुआ। वास्तव में मोक्षमन्दिर के अभिलाषी को स्वर्ग मन्दिर कहाँ से रुचेगा? भगवान मानों कहते थे कि अरे बालकों! तुम इस मोक्षमन्दिर के बदले स्वर्ग मन्दिर देखने में क्यों ललचाये?— वहाँ कुछ नहीं है। वहाँ तुम्हें नहीं रुचेगा, तुम इस मोक्षमन्दिर में आओ... मेरा वास इस मोक्षमन्दिर में है, स्वर्ग मन्दिर में मेरे दर्शन नहीं होंगे, मेरे दर्शन मोक्षमन्दिर में होंगे। महु में चार जिनमन्दिरों के दर्शन करके सब वापस इन्दौर आ पहुँचे।

इन्दौर के आनन्द भरे वातावरण में तीन दिन तो सहज व्यतीत हो गये और अन्तिम दिन आया.. इन्दौर की जनता अभी अतृप्त थी और विशेष लाभ की अभिलाषी थी, तो दूसरी ओर से तीन-तीन दिन की मूसलधार अमृतवर्षा से उसे तृप्तता भी होती थी। ऐसी मिश्र वृत्ति व्यक्त करते हुए अन्तिम दिन (पौष कृष्ण अमावस्या को) सवेरे के प्रवचन के पश्चात् श्री राजकुमारसिंहजी ने एक सरस भावभीना और विद्वतापूर्ण प्रवचन किया था। यहाँ उसका थोड़ा-सा सार प्रस्तुत है —

सज्जन बन्धुओं! संसार में सब परिणमनशील है। तीन दिन पहले महाराज श्री अपनी नगरी में पधारे और अपने सबके हृदय में हर्ष छा गया, तो दूसरी ओर अब आगामी कल आपश्री यहाँ से उज्जैन की ओर प्रस्थान करनेवाले हैं, इसलिए अपने मन में उदासी छा जाए, यह भी योग्य है क्योंकि अब कल इन्दौर नगरी में स्वामीजी के उपदेशामृत का लाभ नहीं मिलेगा। इस प्रकार मरुस्थल के ऊँट जैसी अपनी दशा है। जैसे उस ऊँट को जब पानी मिल जाता है, तब वह खूब पी लेता है और अपनी थैली भर लेता है, तत्पश्चात् जब तृषातुर होता है, तब उससे अपनी तृषा शान्त करता है; इसी प्रकार महाराजश्री ने यहाँ पधारकर चार दिन तक जो उपदेश दिया, उसमें बहुत ही अमृत पिला दिया है और हमने भी वह बहुत पिया है—हृदय में भर लिया है; अब यह जो उपदेशामृत हमने भर लिया है, वह अपने पास ही रहेगा और संसार में सुख-दु:ख के प्रसंग में वह अपने को शान्ति देगा;

यह पर्याय रहे तब तक और नवीन पर्याय में भी इस उपदेश का मनन करने से बहुत लाभ होगा। (यहाँ हजारों सभाजनों ने तालियों की गड़गड़ाहट से अपनी सम्मति प्रगट की)।

महाराजजी के अध्यात्म उपदेश का कितने ही लोग विरोध करते हैं परन्तु यह तो उनके क्षयोपशम का दोष है। महाराज अपनी बात नहीं कहते, महाराज तो जिनेन्द्रदेव ने जो कहा, वही कहते हैं। (सभा में हर्षनाद) अपने को जिनभक्त कहलानेवालों को महाराज के वचनों का (जो कि जिनेन्द्रदेव के वचन हैं उनका) विरोध किस प्रकार कर सकते हैं? (श्री राजकुमारसिंहजी के वचन सुनकर बारह हजार से अधिक सभाजन बहुत हर्षित हुए थे)। समझने की जिज्ञासा से जो प्रश्न पूछते हैं, उनके तो सब समाधान हो जाते हैं परन्तु विरोध के लिये ही जिन्हें विरोध करना है, उनका तो खुद भगवान भी समाधान नहीं कर सकते। मरीचि की शंका का समाधान आदिनाथ भगवान से भी नहीं हुआ था, तो इस पंचम काल में किसकी सामर्थ्य है कि जो विरोधियों का समाधान कर सके!! (सभा में जोश से हर्षनाद)।

लोग कहते हैं कि 'महाराज चारित्र नहीं मानते'—लेकिन यह बात गलत है; महाराज तो मोक्ष का उपदेश देते हैं, महाराज का उपदेश आत्मद्रव्य की नित्य अवस्था के प्रति है; बाह्य क्रिया, क्या वह आत्मद्रव्य की क्रिया है? (नहीं)। आत्मद्रव्य की पहिचान करके उसमें लीन रहना, वह निश्चयचारित्र है, वह मोक्षमार्ग है और ऐसे निश्चयचारित्र का प्रयत्न करने पर जब तक पूर्णता न हो, तब तक शुभराग हो जाता है और व्रतादि उसी में अन्तर्गत है। इस प्रकार चारित्र की पूर्णता न हो, वहाँ बीच में शुभराग होता है—महाराज उस शुभराग को आदर क्यों दें? क्या शुभराग से मुक्ति होगी?—नहीं। मुक्ति का कारण तो निश्चयचारित्र है। उसकी पूर्णता के पहले रागादि तो होते हैं।

सम्यग्दृष्टि हो जाए और निश्चयचारित्र की अपूर्णता रहे, तब तक शुभराग होता है—अशुभ नहीं; अशुभ को तो अच्छा नहीं कहा। अशुभ में से शुभ में तो आयेगा परन्तु उसके प्रयत्न का उपदेश नहीं है। प्रयत्न तो आत्मा में लीनता का ही है, उसका उपदेश है, बीच में राग होने पर भी उस पर मोक्षार्थी को ध्यान (वजन) नहीं देना चाहिए।

पुरुषार्थ के बारे में महाराजजी ने कहा था कि पर्याय में पुरुषार्थ भी साथ में ही है (यहाँ क्रमबद्धपर्याय और पुरुषार्थ की सन्धि के बावत कहने का उनका आशय था)।

इस प्रकार मूल-मूल मुद्दों का सुन्दर उल्लेख करने के बाद राजकुमारसिंहजी ने अन्त में कहा कि—जिज्ञासा से सभी शंकाओं का समाधान हो सकेगा; महाराजश्री के उपदेश का मनन करने से कोई शंका या विरोध नहीं रहेगा।

यहाँ महाराज पधारे और हमारे धर्मबन्धु पधारे, उनकी व्यवस्था हमने अपनी सामर्थ्य के अनुसार की, फिर भी हम अपूर्ण हैं। ऐसी हालत में हमारी त्रुटियों की क्षमा करें क्योंकि प्रवास में थोड़ी-बहुत तकलीफ तो रहती ही है। हमारे साधर्मी बन्धुओं वात्सल्य भाव से हमें क्षमा करेंगे।

भैयासाहब श्री राजकुमारसिंहजी का यह भाषण पूरी सभा ने बहुत ही हर्षपूर्वक स्वीकार लिया था। और ऐसी सुन्दर प्रस्तुति के लिये उनकी बुद्धि की सब मुक्तकण्ठ से प्रशंसा कर रहे थे। कितने ही बड़े-बड़े विद्वानों को भी जो बात पकड़ना कठिन पड़ती है, ऐसी सूक्ष्म बात उन्होंने गुरुदेव के थोड़े ही परिचय में पकड़ ली है। इतना ही नहीं, उसकी प्रस्तुति भी सुन्दर रीति से वे कर सकते हैं। यदि उन्हें गुरुदेव का अधिक परिचय होवे तो बहुत लाभ का कारण होगा। गुरुदेव के चार दिन के प्रवचन बराबर सुनकर उनका आशय पकड़ा और विरोधी किस मुद्दे पर विरोध करते हैं, वह भी बराबर पकड़कर अपने भाषण में सुन्दर शैली से उन्होंने जिस प्रकार प्रस्तुति की और विरोध का जिस प्रकार से निराकरण किया, उसमें उनकी बुद्धिमत्ता और गुरुदेव के प्रति बहुमान-दोनों स्पष्ट झलक उठते हैं। इस प्रकार वे अपने पिताजी का धार्मिक उत्तराधिकार भी भलीभाँति शोभित करेंगे।

दिनांक 30 के दोपहर पूज्य गुरुदेव का अन्तिम प्रवचन हुआ, तत्पश्चात् दूसरे दिन गुरुदेव का प्रस्थान होना है, यह बावत् प्रसिद्ध करते हुए गद्‌गद्‌भाव से श्री राजकुमारसिंहजी ने कहा : महाराज के उपदेशामृत हमने चार दिन तक बहुत सुना, लेकिन फिर भी मैंने देखा कि एक घुँट जल पिलाकर कटोरा छीन लेने जैसा हुआ है। बहुत लोगों की इच्छा है कि महाराज का उपदेश और सुना जाए। मैं सब लोगों की ओर से प्रार्थना करता हूँ कि महाराज फिर पधारकर इन्दौर को पावन करें और अबकी बार ज्यादा टाईम देकर यहाँ चातुर्मास करें (पूरी सभा में हर्षपूर्वक तालीनाद) देखो, मेरी विनती में सारी सभा अपना सुर मिला रही है। मुझे विश्वास है कि महाराज फिर जरूर पधारेंगे।

सर हुकमीचन्दजी सेठ भी सभा में बैठे थे और हँसते-हँसते राजकुमारसिंहजी की बात को अनुमोदन दे रहे थे।

राजकुमारसिंहजी ने भाषण पूरा करते हुए अन्त में कहा—अन्तिम बात यह है कि महाराज के उपदेश की खास बात मोक्ष की है। उसका हेतु निजस्वरूप में लीन रहना है। 'एक को साधे सब सधे'—इसलिए महाराज के उपदेश का मनन कीजिए।

महाराज के प्रति समस्त जनता की ओर से मैं उपकार मानता हूँ।

इस प्रकार सुशोभित प्रवचनमण्डप में दोपहर का कार्यक्रम पूरा हुआ परन्तु लोगों को मण्डप में से जाना सुहाता नहीं था... गुरुदेव के दर्शन के लिये हजारों की भीड़ जमा थी... गुरुदेव प्रसन्न मुद्रा से खड़े थे और लोग गद्‌गद् भाव से अपना हर्ष व्यक्त कर रहे थे। मण्डप में से विदा लेने से पहले सेठजी के साथ बातचीत में गुरुदेव ने कहा : 'सब अच्छा हो गया... आपकी भावना पूरी हो गयी और यहाँ के लोगों ने भी बहुत उत्साह दिखाया। राजकुमारजी ने भी बहुत उत्साह दिखाया।' गुरुदेव के इन्दौर पधारने से ऐसी महान धर्मप्रभावना हुई और चारों दिनों के कार्यक्रम बहुत ही सुशोभित हो उठा, इससे यद्यपि सेठजी पूर्ण प्रसन्न ज्ञात होते थे परन्तु आगामी दिवस सवेरे ही गुरुदेव का प्रस्थान हो रहा होने से वे जरा भावुक हो गये थे, इसलिए विशेष बोल नहीं सके थे। हाथ जोड़कर फिर से पधारने की विनती की थी।

रात्रि में तत्त्वचर्चा में सात-आठ हजार लोग थे, उसमें दो-तीन हजार जितनी तो बहिनों की संख्या थी और अन्तिम दिन की तत्त्वचर्चा बहुत सूक्ष्म तथा सरस थी तथा सेठजी की पुत्री सौ. चन्द्रकलाबहिन ने अपना गीत फिर से गाया था।

अन्त में बहुत ही उमंग भरे वातावरण में हर्षनाद और जय-जयकार पूर्वक इन्दौर नगरी का चार दिन का कार्यक्रम पूरा हुआ था। बहुत ही उत्साहपूर्वक इन्दौर नगरी का कार्यक्रम शोभित करने के लिये वहाँ के दिगम्बर जैन समाज को धन्यवाद!

माघ शुक्ल एकम के दिन एकदम सवेरे श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्र के दर्शन करके, गुरुदेवसहित यात्रीसंघ ने उज्जैन की ओर प्रस्थान किया। भरत चक्रवर्ती ने वहाँ मुनिवर आहार के लिये पधारे हों और आहार के बाद वापस जब वन की ओर जाते हों, तब अतिशय प्रीति के कारण भरत भी मुनियों के पीछे-पीछे बहुत दूर तक जाते थे, उसका भावभीना वर्णन पुराणों में आता है, इसी प्रकार यहाँ भी गुरुदेव के प्रति अतिशय प्रीति के कारण राजकुमारसिंहजी मोटर लेकर गुरुदेव के पीछे-पीछे कहीं तक आये थे।

उज्जैन शहर (उज्जैयनीनगरी)

माघ शुक्ल एक - दो

इतिहास प्रसिद्ध उज्जैन नगरी भी, इन्दौर की तरह ही गुरुदेव का स्वागत करने को लालायित थी... पहले से ही नगरी को श्रृंगार करके भव्य स्वागत की तैयारियाँ की गयी थीं। गुरुदेव के पधारते ही भावभीना स्वागत हुआ। जैन समाज के उपरान्त शहर की जनता भी उत्साहपूर्वक स्वागत में भाग ले रही थी। अनेक घुड़सवार, पैदल और तीन बैण्ड पार्टी सहित लगभग आधे मील लम्बा, सात-आठ हजार का विराट स्वागत जुलूस बहुत शोभित हो रहा था। बीच में चलनेवालों को स्वागत की शुरुआत या अन्त दिखायी नहीं देता था। शहर के मुख्य-मुख्य मार्ग से गुजरते हुए बीच में जहाँ-जहाँ जिनमन्दिर आये, वहाँ गुरुदेव दर्शन करने जाते थे। इस प्रकार जिनमन्दिरों के दर्शन करते-करते स्वागत समुदाय प्रवचन के स्थल 'लक्ष्मीनिवास' आया। वहाँ गुरुदेव ने अपूर्व मांगलिक सुनाया।

मंगल प्रवचन के बाद स्वागताध्यक्ष श्री भूपेन्द्रकुमारसिंह ने स्वागत भाषण करते हुए कहा कि पूज्यश्री कानजीस्वामी का हमारी उज्जैन नगरी में संघसहित शुभागमन होने पर यहाँ की जैन समाज को एवं जनता को कितनी श्रद्धा, कितनी भक्ति और कितना हर्ष हो रहा है, यह आज के स्वागत जुलूस में और यह प्रवचन में दिख रहा है। आज हमारी नगरी के आँगन में स्वामीजी को देखकर हम सबको बहुत खुशी हो रही है। स्वामीजी के आध्यात्मिक उपदेश के प्रभाव से जैन समाज की विचारधारा में एक बड़ी क्रान्ति फैल गयी है और समाज में अच्छी जागृति आ गयी है। यहाँ के जैन समाज एवं समग्र जनता की ओर से मैं स्वामीजी का एवं संघ का हार्दिक स्वागत करता हूँ।

मालव प्रान्त का यह उज्जैन वह प्रसिद्ध ऐतिहासिक नगर है, पुराणों में बारम्बार इस नगरी का उल्लेख आता है। पुराने समय की इस नगरी की जैनधर्म की प्रसिद्धि दर्शानेवाले अनेक प्राचीन जिनमन्दिरों के और सैकड़ों जिनबिम्बों के अवशेष यहाँ मिल गये हैं और जैसिंहपुर के एक दिगम्बर जिनमन्दिर में पुरातत्त्व संग्रहरूप से उन्हें रखा गया है। उसमें मुनियों की प्रतिमा भी है। तदुपरान्त राजा भोज के समय में महान दिगम्बर जैन सन्त श्रीमानतुंगाचार्य को किसी विरोधी की चुगली के कारण जेल में डाल दिया गया था

और जेल में ही उन्होंने आदिनाथ भगवान की भावभीनी स्तुति भक्तामर स्तोत्र करते-करते फाटक स्वयं खुल गये, यह प्रसिद्ध प्रसंग भी इसी नगरी में बना था। कथाओं में बारम्बार पढ़ी हुई इस उज्जैयनीनगरी को गुरुदेव के साथ नजरों से निहारते हुए यात्रियों को आनन्द हुआ।

यहाँ विनोद मिल के बंगले में गुरुदेव का निवास था। बंगले के कम्पाउण्ड में एक रमणीय चैत्यालय है, वहाँ दर्शन किये। विनोद मिल वाले सेठ लालचन्दजी तथा सेठ भंवरलालजी को गुरुदेव के प्रति बहुत प्रेम है। बारह वर्ष पहले (संवत् 2001 में) सेठ भंवरलालजी पहली-पहली बार सोनगढ़ आये, तब गुरुदेव के प्रवचन सुनकर और सोनगढ़ का शान्त वातावरण देखकर बहुत प्रसन्न हुए थे और उस समय सोनगढ़ संस्था को रुपये 1001 अर्पण किये थे। इस प्रकार सौराष्ट्र के बाहर की दिगम्बर जैन समाज के किसी भी व्यक्ति की ओर से सोनगढ़ संस्था को चार अंकों की रकम के दान का पहला-पहला यश सेठ भंवरलालजी के हिस्से में जाता है।

संघ के भोजन की व्यवस्था यहाँ के दिगम्बर जैन समाज की ओर से बहुत वात्सल्यपूर्वक की गयी थी। यहाँ एक जैन स्वाध्यायमन्दिर भी चलता है। गुरुदेव वहाँ पधारे थे और एक दिन का संघ का भोजन स्वाध्यायमन्दिर की ओर से दिया गया था। किसी भी यात्री को भोजन में तकलीफ न हो, इसके लिये (इन्दौर की तरह) विधविध मिष्ठान के साथ सादा भोजन भी परोसा जाता था। भोजन के समय इस ओर के शहरों में थाली कटोरी के बदले पत्तल और दौना रहता था। जिससे जीमते-जीमते रमुज होती, क्योंकि पत्तल किस प्रकार से सुलटी कहलाती है, इसकी ही बहुतों को खबर नहीं पड़ती थी। इसी प्रकार दाल के लिये कटोरी के बदले रखा जानेवाला दौना भी जीमते-जीमते बारम्बार लुढ़क जाता था... इसलिए दाल के लिये पडिया के बदले कोडिया का इन्तजाम किया जाता था। इस प्रकार पत्तल और दौने में जीमने का अनुभव भी यात्रियों के लिये नया ही था।

लम्बे-लम्बे यात्रा प्रवास में थके हुए यात्रियों को विनोद मिल के आवास में नहाने के लिये गर्म पानी के नल और कपड़े धोने की इलेक्ट्रॉनिक मशीन मिल गयी थी। इसलिए सबने नहा धोकर प्रवास की थकान उतारी।

उज्जैन में पूज्य गुरुदेव दो दिन रहे... गुरुदेव के प्रवचन में पाँच-छह हजार

श्रोताजन होते थे... णमो लोए सव्व साहूणं के अर्थ में पूज्य गुरुदेव जब मुनिपन की अलौकिक महिमा करते और हाथ जोड़कर 'हे सन्त! तुम्हारे चरणों में मेरा नमस्कार है।' ऐसा कहते, तब सभा भक्ति में तल्लीन होकर आश्चर्यमुग्ध बन जाती... आहा! मुनिदशा के प्रति गुरुदेव की उमंग बारम्बार उल्लसित होती थी... और सभा भी कभी नहीं सुनी हुई मुनि भगवन्तों की अद्भुत महिमा सुनकर हर्ष विभोर बन जाती थी। रात्रि में तत्त्वचर्चा भी सुन्दर हुई थी और उसमें भी हजारों जिज्ञासुओं ने लाभ लिया था।

यहाँ अनेक दिगम्बर जिनमन्दिर हैं, वहाँ गुरुदेव तथा यात्री दर्शन करने के लिये गये थे; जैसिंहपुर के जिनमन्दिर में दिगम्बर जैन पुरातत्त्व संग्रह का खास अवलोकन किया था। उसके अतिरिक्त क्षिप्रानदी, भर्तृहरि गुफा इत्यादि स्थान भी देखे थे।

गुरुदेव के पधारने से यहाँ का दिगम्बर जैन संघ बहुत आनन्दित हुआ था और दो दिन में जिन शासन की बहुत ही प्रभावना हुई थी... जिस-जिस नगरी में गुरुदेव पधारे, उस-उस नगरी में जैनधर्म के महान उत्सव का वातावरण कौने-कौने में पसर जाता था। पुराण प्रसिद्ध सौराष्ट्र और मालव इन दोनों प्रान्त के साधर्मी एक-दूसरों से एकदम अनजाने होने पर भी साधर्मीभाव से एक-दूसरे के मिलन से सबको वात्सल्य उमड़ता था... और साधर्मी मिलन का अनोखा आनन्द वहाँ छा जाता था।

—इस प्रकार आनन्दपूर्वक उज्जैन नगरी का कार्यक्रम पूरा होने पर माघ शुक्ल दूज की शाम पाँच बजे पूज्य गुरुदेव भोपाल शहर की ओर पधारे। यद्यपि यात्रा के मार्ग के कार्यक्रम में भोपाल नहीं था, परन्तु वहाँ के समाज की आग्रह भरी विनती से और वहाँ के अग्रगण्य पूज्य गुरुदेवश्री को लेने के लिये आये होने से पूज्य गुरुदेव भोपाल पधारे। पूज्य गुरुदेव के साथ रामजीभाई, नेमीचन्दभाई, महेन्द्रकुमारजी सेठी इत्यादि कितने ही भाई तथा पूज्य बहिनश्री-बहिनजी भी भोपाल गये। भोपाल का कार्यक्रम पूरा करके माघ शुक्ल चौथ के सवेरे गुरुदेव गुना शहर पधारेंगे... परन्तु उससे पूर्व अपने संघ के यात्रियों को गुना शहर तक पहुँचा देते हैं।

माघ शुक्ल तीज के शाम पूज्य गुरुदेव इत्यादि उज्जैन से भोपाल की ओर पधारने पर पीछे के यात्री उज्जैन में रुके... कोई नगरी देखने गये, कोई विनोद मिल देखने गये तो कोई वहाँ के चैत्यालय में जाकर आरती-भक्ति करने में रुक गये।

दूसरे दिन (माघ शुक्ल तीज) सवेरे यात्रियों ने उज्जैन से गुना की ओर प्रस्थान किया। उज्जैन से गुना लगभग 150 मील होने से आज लगभग पूरे दिन प्रवास में ही व्यतीत होना है और भोजन भी बीच में वन में ही करना है। जब ऐसा लम्बा प्रवास हो तब प्रत्येक बस के यात्री आनन्द किल्लोल पूर्वक भक्ति करते हुए यात्रा के विध-विध अनुभवों की रसभरी चर्चा करते और अन्ताक्षरी खेलकर घण्टों के घण्टों व्यतीत कर देते। इस प्रकार साधर्मियों के संघ में सैकड़ों मील का लम्बा प्रवास बात-बात में कब पूरा हो जाता, इसकी खबर भी नहीं पड़ती थी।

★ ★ ★

मक्षी पारसनाथ

पूज्य श्री कानजीस्वामी दिगम्बर जैन तीर्थयात्रा संघ, उज्जैन से गुना की ओर जा रहा है, वहाँ बीच में 'मक्षी' आया, यहाँ जिनमन्दिर के दर्शन करने के लिये संघ रूक गया। 'मक्षी पारसनाथ' के रूप में यहाँ का मन्दिर प्रसिद्ध है। यहाँ दो मन्दिर हैं, एक तो दिगम्बरों का ही है और दूसरे मन्दिर में श्वेताम्बर-दिगम्बर दोनों का हक है। पूजन के लिये दोनों को तीन-तीन घण्टे का नम्बर होता है, जब श्वेताम्बर भाईयों का नम्बर हो, तब उसमें विराजमान प्रतिमाजी पर मुकुट इत्यादि चढ़ाकर वे पूजनादि करते हैं और जब दिगम्बर भाईयों का नम्बर हो तब मुकुट इत्यादि सरागता के चिह्न उतारकर वीतराग प्रतिमा के पूजनादि करते हैं। यात्रियों ने दोनों मन्दिरों में दर्शन किये। मन्दिर की बाजू में एक ही बोरड़ी का वृक्ष देखकर बालयात्रियों ने तो उसके मीठे बोर भी खाये। इस प्रकार मक्षी पारसनाथ के दर्शन करके संघ ने तुरन्त आगे प्रस्थान किया और लगभग ग्यारह बजे सारंगपुर पहुँचे।

सारंगपुर (वन भोजन और भक्ति)

यहाँ सारंगपुर के वन में सर हुकमीचन्दजी सेठ के भतीजे सेठ देवकुमारजी की ओर से संघ के भोजन का प्रबन्ध किया गया था, इसलिए भोजन के लिये संघ वन में रुका... वन में संघ का मुकाम होते ही मानो जंगल में मंगल हुआ। वन के बगल में सेठ देवकुमारजी का शक्कर का कारखाना था... वहाँ यात्रियों को प्रेमपूर्वक गन्ने का रस पिलाया... भोजन भी तैयार था... वन के वृक्ष के नीचे सैंकड़ों यात्रियों की पंगत भोजन

करने बैठ गयी... श्री वच्छराजजी सेठ-जो संघ के साथ ही थे—वे भी संघ को जीमने इत्यादि की व्यवस्था में उत्साह से भाग लेते थे... इस वन भोजन का प्रसंग सरस था... यहाँ मुनिवरों के आहारदान प्रसंगों का बहुत स्मरण होता था... और वज्रजंघ-श्रीमती इत्यादि ने वन में पड़ाव के समय मुनिवरों को अति भक्तिपूर्वक आहारदान दिया—ऐसे अनेक प्रसंगों का पुराणों में जो रोमांचकारी वर्णन आता है... उसे स्मरण करके सब ऐसे प्रसंग की भावना भाते थे... मात्र यहाँ मुनिवरों की ही कमी थी... इसलिए वह भावना, भावनारूप ही रह गयी।

अब भोजन के बाद संघ दो घण्टे वहीं आराम करने के लिये रुका है। पाँच सौ यात्रियों को देखकर वन भी हर्ष से प्रफुल्लित हो गया है। कोई यात्री वृक्ष की छाया के नीचे जाकर सो गये हैं तो कोई बस में बैठकर आराम कर रहे हैं, कोई वन के बन्दरों के साथ खेल करने में रुके हैं तो और कोई वृक्ष की छाया में मण्डली जमाकर मुनियों का भजन कर रहे हैं और कोई मुनिवरों के गुणों का चिन्तवन करके आत्महित की भावना भा रहे हैं। उस वन में वृक्ष के नीचे बैठे-बैठे ही यह संस्मरण लिखे जा रहे हैं। वन के शान्त वातावरण में, वृक्ष के नीचे वाजिन्त्र सहित वनविहारी मुनिवरों की वैराग्यमय भक्ति बहुत आह्लादक थी यहाँ भक्ति भावना से भक्तों का चित्त प्रसन्न हुआ।

इस प्रकार सारंगपुर वन में भोजन और भजन करके लगभग दो बजे संघ ने वहाँ से आगे प्रस्थान किया।

ब्यावरा और राघवगढ़

थोड़ी दूर में ब्यावरा गाँव आया वहाँ तो मार्ग के बीच खड़े रहकर कितने ही लोगों ने मोटरों को रोका... मोटर एक के बाद एक हॉर्न बजाये, परन्तु कोई बीच में से हटता ही नहीं। मोटरें खड़ी रखकर उन्हें पूछने पर पता पड़ा कि यहाँ का दिगम्बर जैन समाज संघ को चाय-पानी के लिये रोकना चाहता है परन्तु संघ को शीघ्र गुना पहुँचना था, इसलिए चाय-पानी के लिये तो रुका नहीं जा सकता था... और ब्यावरा के वत्सलवन्त भाई संघ को अपने आँगन से ऐसा का ऐसा कैसे जाने दें? इसलिए उन्होंने युक्ति करके कहा कि बगल में ही जिनमन्दिर है, वहाँ दर्शन तो करते जाओ। 'अहा! जिनेन्द्र भगवान के दर्शन

का प्रसंग आवे, उससे इनकार कैसे किया जाये?' यात्री भी उनकी इस युक्ति से प्रसन्न होकर हँसते-हँसते उतरे और जिनमन्दिर में जाकर भगवान पार्श्वनाथ प्रभु के दर्शन कर आये, तत्पश्चात् आग्रहपूर्वक सबको चाय-दूध पिलाया। अहा! कानजीस्वामी का संघ यहाँ से गुजरनेवाला है, इतनी खबर पड़ने पर भी दिगम्बर जैन समाज को उल्लासपूर्वक संघ के प्रति कितना वात्सल्य उमड़ता था, वह यहाँ दिखायी देता था। वहाँ से प्रस्थान करके संघ की मोटरें और बसें शीघ्रता से दौड़ी जा रही थीं तभी और वापस एक खेत के निकट कितने ही लोगों ने बीच में आकर संघ की मोटरों को रोक दिया। किसलिए? चाय-पानी के लिये-यह जानकर यात्रियों को आश्चर्य हुआ। आसपास में कोई गाँव दिखायी नहीं देता। मकान या दुकान कुछ दिखायी नहीं देते और अधबीच रास्ते में रोककर चाय-पानी? पूछताछ करने पर उन्होंने स्पष्टीकरण किया कि 'हमारा राघवगढ़ गाँव इस सड़क के मार्ग से ढाई मील दूर है परन्तु कानजीस्वामी का संघ यहाँ से गुजरनेवाला है- यह जानकर उनके दर्शन के लिये और संघ को चाय-पानी पिलाने के लिये हम सवेरे से यहाँ आये हैं...' 'वाह' इनकी बात सुनकर यात्रियों के मुख से हर्षपूर्वक आश्चर्य के उद्‌गार निकल पड़े। अहा, अपना गाँव तो यहाँ से ढाई मील दूर है, वहाँ तो गुरुदेव या संघ आनेवाला भी नहीं है, गाँव से ढाई मील दूर के मार्ग से कानजीस्वामी का संघ मात्र गुजरनेवाला है और वह भी कब आयेगा, इसका कोई निश्चित समय भी नहीं है, तथापि 'कानजीस्वामी यहाँ से निकलनेवाले हैं' मात्र इतना सुनकर भी ढाई मील दूर से लोग दर्शन करने दौड़े आते हैं, वह भी ऐसे के ऐसे नहीं परन्तु पाँच सौ यात्रियों के लिये खेत में चाय-पानी की व्यवस्था भी करते हैं और कभी के आकर राह देखते हैं। दूर-दूर देखों के एकदम अनजाने लोगों को भी पूज्य गुरुदेव के प्रति ऐसा प्रेम और वात्सल्यभाव देखकर आश्चर्य होता था। —ऐसे वात्सल्य की अवगढ़ना कैसे की जा सकती है इसलिए संघ को जल्दी होने पर भी यहीं रुककर चाय-पानी पीया और थोड़ी देर सोनगढ़ सम्बन्धी बातचीत करके, उन भाईयों को सोनगढ़ आने का प्रेम भरा आमन्त्रण दिया। तत्पश्चात् 'धन्य गुरुदेव का प्रभाव! और धन्य यह साधर्मियों का वात्सल्य!' ऐसे विचारते हुए संघ ने वहाँ से प्रस्थान किया और शाम को गुना पहुँच गये।

गुना शहर में सेठ श्री पन्नालालजी की अगुवाई में दिगम्बर जैन समाज के समस्त

भाई उत्साहपूर्वक संघ की व्यवस्था में रुक गये थे। जैसे-जैसे संघ की मोटरें और बसें आती गयीं, वैसे-वैसे शीघ्रता से आवास आदि की व्यवस्था होती गयी। सायंकाल का भोजनादि निपटाकर यात्रियों ने यहाँ के दो जिनमन्दिरों के दर्शन किये तथा भक्ति की। सवेरे उज्जैन से जिनेन्द्र भगवान के दर्शन करके निकलने के पश्चात् बीच में मक्सी पार्श्वनाथ, पश्चात् ब्यावरा और अन्त में गुना—ऐसे एक दिन में चार गाँवों के जिनमन्दिरों के दर्शन हुए। जिनमन्दिर में दर्शन करके शान्ति से भक्ति की, तत्पश्चात् पूरे दिन की यात्रा से थके हुए यात्री सो गये।

दूसरे दिन (माघ शुक्ल चौथ) सवेरे गुना शहर के हजारों लोग गुरुदेव के स्वागत के लिये तैयार हो गये हैं। यात्री भी भगवान के दर्शन-पूजन करके स्वागत के लिये तैयार हो गये हैं... इस गुना शहर में दिगम्बर जैनों के लगभग 200 घर हैं परन्तु स्वागत में तो गाँव की जनता में से पाँच हजार से अधिक लोग उमड़ पड़े हैं और नगरी को शृंगार करके उत्साहपूर्वक गुरुदेव के पधारने की राह देख रहे हैं। चलो, हम भोपाल की ओर गये हुए गुरुदेव को यहाँ ले आवें।

गुरुदेव इत्यादि माघ शुक्ल दूज की शाम उज्जैन से प्रस्थान करके भोपाल की ओर जाते हुए बीच में सोनकच्छ गाँव आया। सोनगढ़ के सन्त का सोनकच्छ के भाईयों ने स्नेह से स्वागत किया। यहाँ दिगम्बर जैनों के 20-25 घर हैं, मुख्य मार्ग पर विशाल जिनमन्दिर है वहाँ सभी ने दर्शन किये। रात्रि में एक घण्टे तत्त्वचर्चा हुई, उसे सुनकर सोनकच्छ की जनता को बहुत प्रसन्नता हुई। रात्रि में पूज्य गुरुदेव यहीं रुक गये। दूसरे दिन सवेरे यहाँ से प्रस्थान करके भोपाल की ओर पधारे।

★ ★ ★

भोपाल शहर

मध्यप्रदेश के इस पाटनगर में पधारते ही जनता ने गुरुदेव का उमंगपूर्वक भव्य स्वागत किया। कार्यक्रम में परिवर्तन करके भी गुरुदेव यहाँ पधारे, इसलिए दिगम्बर जैन समाज को बहुत हर्ष हुआ और आस-पास के गाँवों से भी हजारों लोग गुरुदेव के प्रवचनों का लाभ लेने आये। मंगल प्रवचन के बाद श्री नेमिनाथ प्रभु के जिनमन्दिर में दर्शन करने गये... वहाँ बारह फीट उन्नत भगवान श्री आदिनाथ प्रभु के प्राचीन जिनबिम्ब (संवत् 92 के) विराजमान हैं, उनके दर्शन से गुरुदेव को बहुत प्रमोद हुआ। यहाँ भोपाल की बाजू में एक टेकरी पर श्री मानतुंगस्वामी की तपोभूमि है। वहाँ उनके चरणकमल स्थापित हैं; आचार्य समन्तभद्रस्वामी की भी तपोभूमि यहाँ कही जाती है; इतिहास में भी समन्तभद्रस्वामी मालवप्रान्त में विचरे थे तत्सम्बन्धी अनेक उल्लेख हैं। दिगम्बर सन्तों की तपोभूमि देखकर सभी को आनन्द हुआ। ऐसे मुनिवरों के धाम में दोपहर 1.30 से 2.30 प्रवचन करते हुए गुरुदेव ने मुनिदशा की अद्भुत महिमा समझायी और मुनिदशा के प्रति महान भक्ति व्यक्त की।

मध्य भारत के वित्तमन्त्री श्री मिश्रीलालजी गंगवाल यहाँ पूज्य गुरुदेव के दर्शनार्थ आये थे और लगभग एक घण्टे तक तत्त्वचर्चा की थी, उसमें उनका जिज्ञासु भाव और धर्म प्रेम दृष्टिगोचर होता था। ललितपुर के दिगम्बर जैन समाज की ओर से पण्डित परमेष्ठीदासजी ने यहाँ आकर गुरुदेव को ललितपुर पधारने हेतु आग्रह भरी प्रार्थना की थी।

गुरुदेव के भोपाल पधारने का कार्यक्रम पहले से निश्चित नहीं था परन्तु बाद में अचानक निश्चित हुआ था, इसलिए भोपाल के आसपास के गाँवों को पहले से इसका पता नहीं था किन्तु अन्तिम घड़ी में जैसे पता पड़ा कि तुरन्त ही गुरुदेव के दर्शन करने के लिये आसपास के गाँवों से स्पेशल ट्रेन में सैकड़ों लोग रवाना हुए... परन्तु बीच में ट्रेन कुछ लेट हुई, इसलिए ट्रेन पहुँचने से पहले गुरुदेव भोपाल से प्रस्थान न कर जाएं, इसलिए उन लोगों के तार पर तार आते थे कि 'कानजीस्वामी को रोको... हम स्पेशल ट्रेन में आ रहे हैं... कानजीस्वामी को रोको...'—इससे लोगों को गुरुदेव के दर्शन की कितनी

जिज्ञासा थी, यह दृष्टिगोचर होता है। परन्तु (लिखते हुए खेद होता है कि) उनका सन्देश पहुँचने से पहले ही गुरुदेव का भोपाल से गुना की ओर प्रस्थान हो गया था... बाद में जब स्पेशल ट्रेन आयी और सैकड़ों लोग गुरुदेव के दर्शन के लिये तरसते-तरसते शीघ्रता से शहर में आये तब 'कानजीस्वामी तो प्रस्थान कर गये' यह सुनकर वे लगन से गद्गद् हो गये।

★ ★ ★

कुराना :

भोपाल से गुना की ओर जाते हुए बीच में आठ मील पर कुराना गाँव आया। इस प्राचीन गाँव में 15 फीट उन्नत अति प्राचीन भव्य खड्गासन प्रतिमाजी के दर्शन से आनन्द हुआ।

नरसिंहगढ़ :

कुराना से आगे बढ़ते हुए नरसिंहगढ़ आया; यहाँ शाम के भोजन के लिये रुकना था। यहाँ दिगम्बर जैनों का एक भी घर नहीं है इसलिए साथ के भक्तों को ही रसोई का प्रबन्ध करना था। श्री कारिणी माता के मन्दिर की जगह में रसोई का प्रबन्ध हुआ... वहाँ तो कुराना से गुरुदेव की मोटर सरासरहट करते आ पहुँचे और वन के वातावरण में छोटी से थाली में गुरुदेव ने आहार किया, पश्चात् नेमीचन्दभाई तथा चन्दुभाई ने भोजन कर लिया और तुरन्त वहाँ से ब्यावरा की ओर प्रस्थान किया। यात्रा के अनेक आनन्दकारी प्रसंगों में यहाँ नरसिंहगढ़ में गुरुदेव के भोजन का प्रसंग भी भक्तों को बहुत स्मरण रह गया है। पूज्य बहिनश्री-बहिन जब यह प्रसंग विस्तार से वर्णन करती हैं, तब उनका हर्ष देखकर भी बहुत प्रमोद होता है। यात्रा प्रवास के दौरान इस प्रकार कहीं रास्ते में अधबीच या वन-जंगल में गुरुदेव को जीमाने का (आहारदान का) अकस्मात् लाभ मिल जाता था तब भक्तों को बहुत आनन्द होता था और ऐसे प्रसंग में रामचन्द्रजी, वज्रजंघ इत्यादि वन में आहारदान सम्बन्धी पुराण के प्रसंग विशेषरूप से याद आते थे... और इस निकृष्ट काल में मुनिवरों के विरह के समय भी मानो उनके जैसा ही लाभ मिला हो—ऐसा आनन्द भक्तों को होता था।

ब्यावरा :

पूज्य गुरुदेव के सायंकाल ब्यावरा पधारने पर वहाँ के समाज ने प्रेमपूर्वक भारी स्वागत किया। गुरुदेव ने जिनमन्दिर के दर्शन किये... यहाँ दिगम्बर जैनों के 25-30 घर हैं। रात्रि में एक घण्टे तत्त्वचर्चा हुई... सैकड़ों लोग अध्यात्म चर्चा सुनकर प्रसन्न हुए। गुरुदेव रात्रि में यहाँ डाक बंगले में रुके थे।

राघवगढ़ :

दूसरे दिन (माघ शुक्ल चौथ को) सवेरे ब्यावरा से गुना की ओर जाते हुए बीच में राघवगढ़ आया। राघवगढ़ गाँव, मुम्बई-आगरा की मुख्य सड़क पर, सड़क से ढाई मील दूर स्थित है, परन्तु आज प्रातः काल कानजीस्वामी यहाँ से निकलनेवाले हैं, ऐसी वहाँ के समाज को खबर पड़ गयी होने से, वहाँ के उत्साही लोग धूमधाम से गुरुदेव के दर्शन और स्वागत करने के लिये ढाई मील दूर सड़क पर आकर खड़े थे। साथ में बैण्ड-बाजा और ठेलागाड़ी में लाउडस्पीकर भी लाये थे... गुरुदेव के लिये दूध भी लाये थे। उनकी नजर पड़े उससे पहले तो गुरुदेव राघवगढ़ गाँव में जाकर वहाँ के दो दिगम्बर जैन मन्दिरों के दर्शन कर आये। वहाँ पुजारी ने तथा गाँव के लोगों ने गुरुदेव को देखकर बहुत हर्ष प्रदर्शित किया... वहाँ से दर्शन करके जैसे ही गुरुदेव सड़क पर आये कि उन्हें देखते ही वहाँ एकत्रित हुए राघवगढ़ के जैन समाज में हर्ष का कोलाहल हो गया। सबने बहुत प्रेमपूर्वक जय-जयकार से गुरुदेव का स्वागत किया और पश्चात् वहीं गुरुदेव ने लगभग पन्द्रह मिनिट मंगल प्रवचन करके उन्हें चैतन्यरस का पान कराया। तत्पश्चात् गुरुदेव की मोटर गुना की ओर आगे बढ़ गयी, संघ की दूसरी कितनी ही मोटरें भी साथ ही थी, जिसने सोनगढ़ संस्था का स्टेशन वेगन भी था। पूज्य बहिनश्री-बहिन, प्रमुख श्री रामजीभाई इत्यादि आज इस स्टेशन वेगन में बैठे थे। गुरुदेव के साथ-साथ ही मोटरें दौड़ती जा रही थी, इसलिए सबको हर्ष हुआ था... ऐसे हर्षपूर्वक प्रवास करते हुए गुरुदेव के स्वागत से पहले सब गुना शहर आ पहुँचे।

गुना शहर

माघ शुक्ल चौथ को गुरुदेव गुना शहर पधारे तो तुरन्त ही हजारों लोगों की भीड़ ने उमंगपूर्वक गुरुदेव का भव्य स्वागत किया। शहर को ठाठ-बाट से शृंगारित किया था, जगह-जगह दरवाजे और तोरणों से बाजार शोभित हो रहा था... अपनी दुकानों के निकट किसी ने रस्सी के बण्डलों का कलामय दरवाजा बताया था तो किसी ने कपड़े के गट्टा रचकर और किसी ने बैटरी-लालटेन इत्यादि सामान टाँगकर, (जिसे जिस चीज़ का व्यापार हो, उन चीज़ों में से) सुन्दर दरवाजा बनाया था... और अकलंक दरवाजा, कुन्दकुन्द दरवाजा इत्यादि नाम दिये थे। इस प्रकार भव्य स्वागत, जिनमन्दिर के दर्शन करके प्रवचन के लिये खास मण्डप में आये। मण्डप एकदम नये कपड़ों से बहुत सुशोभित बनाया गया था और उसमें गुरुदेव की बैठक के लिये बहुत ही ऊँची व्यासपीठ अत्यन्त शोभित होती थी। वहाँ गुरुदेव ने मंगल प्रवचन किया। विशाल मण्डप लगभग बारह से पन्द्रह हजार लोगों से भर जाता था। मात्र तीस हजार की आबादीवाले गाँव में पन्द्रह-पन्द्रह हजार लोगों की सभा हो, यह देखकर सबको आश्चर्य होता था। खास गुरुदेव के दर्शन का और प्रवचन का लाभ लेने के लिये अशोकनगर से स्पेशल ट्रेन में लगभग दो हजार लोग आये थे, बून्दीकोटा से भी हजारों लोग आये थे और आस-पास के दूसरे भी अनेक गाँव से बहुत लोग आये थे। गुना में दो दिन तक मानो कोई विशाल धार्मिक मेला भरा हो, ऐसा वातावरण जमा था।

गुना में सेठ श्री पन्नालालजी, गटुलालजी, राजमल्लजी इत्यादि बहुत भाईयों को गुरुदेव के प्रति बहुत भक्तिभाव है और वे बारम्बार सोनगढ़ आकर शिक्षण वर्ग में भी लाभ लेते हैं। गुरुदेव के यहाँ पधारने पर सेठ पन्नालालजी ने तथा दिगम्बर जैन समाज के सभी भाईयों ने बहुत उत्साह प्रदर्शित किया था, संघ के प्रत्येक निवास पर बारम्बार स्वयं जाकर वे यात्रियों की आवभगत करते थे, सादा भोजन के साथ चार-चार प्रकार के मिष्ठान बनाकर संघ को बहुत वात्सल्यपूर्वक जीमाते थे... और चाय-दूध, गर्म पानी इत्यादि प्रत्येक निवास पर पहुँचाते थे। कोई कहे कि तुमने तो संघ की बहुत मेहमानगति की, तो वे कहते कि अरे, हमारे आँगन में ऐसा अवसर कहाँ से ? हमारे महाभाग्य से गुरु महाराज हमारे आँगन में पधारे हैं, हम जितना करें, उतना कम है।

रात्रि–चर्चा में भी छह–सात हजार भाई–बहिन लाभ लेते थे। पहले दिन चर्चा के पश्चात् श्री वच्छराजजी सेठ की अध्यक्षता में यहाँ की पाठशाला का वार्षिक उत्सव मनाया गया था, उसमें बालकों ने सीताहरण नाटिका का मंचन किया था तथा लोगों के विशेष आग्रह से पूज्य बहिनश्री–बहिन ने थोड़ी देर भक्ति करायी थी। भक्ति में यात्रा का उल्लास व्यक्त करते हुए वे निम्नानुसार गवांती थी—

आनंद मंगल आज हमारे आनंद मंगल आज जी...
गुरुवर साथे यात्रा करतां आनंदनो नहिं पार जी...
जिनवर प्रभु का दर्शन पाते आनंद मंगल आज जी...
सिद्धप्रभु का दर्शन पाते आनंदनो नहिं पार जी...
सिुद्धप्रभुजी हैये बिराजे आनंद मंगल आज जी...
सम्मेदशिखरजी यात्रा करतां आनंदनो नहिं पार जी...

इसके अतिरिक्त 'आज म्हारे जिनवरजी को शरणो' यह भजन भी गवाया था।

यहाँ गुना शहर में दो जिनमन्दिर हैं, दोनों प्राचीन हैं; एक मन्दिर में अनेक प्राचीन प्रतिमाएँ हैं, उनमें कितने ही खड्गासन प्रतिमाजी का दिखाब बहुत भव्य है। यात्रियों ने वहाँ दर्शन तथा पूजन–भक्ति किये।

पूज्य गुरुदेव का निवास गेस्ट हाउस में था और भोजन सेठ पन्नालालजी, गट्टुलालजी राखन, सेठ राजमल्लजी (जैन स्टोरवाले) इत्यादि के यहाँ हुआ था। पूज्य बहिनश्री–बहिन का निवास गहरी–गहरी गुफा जैसे एक मकान में शोभित होता था।

बजरंगगढ़ :

गुना से पाँच मील दूर बजरंगगढ़ गाँव में दो दिगम्बर जिनमन्दिर हैं, वहाँ भी यात्री दर्शन करने गये थे... बस में से उतरकर आनन्द से भक्ति गाते–गाते जिनमन्दिर में गये... और अन्दर जाकर भोंयरा (गुफा) जैसे भाग में नजर की, वहाँ तो अहा! बड़े–बड़े तीन भगवन्त दिखायी दिये... मानो गहरी–गहरी गुफा में मुनिवर ध्यान में खड़े हों! शान्तिनाथ–कुन्थुनाथ–अरनाथ ये तीन चक्रवर्ती तीर्थंकरों की त्रिपुटी बहुत अद्भुत है... असल पावागिर–ऊन जैसा ही दृश्य है। बीच के भगवान 20 फीट उन्नत और अगल–बगल के

15–15 फीट उन्नत, इन तीनों भगवन्तों की भव्य मुद्रा के दर्शन से सबको बहुत आनन्द हुआ... और भक्ति से अर्घ्य चढ़ाकर पूजन किया। वहाँ से दूसरे मन्दिर के दर्शन करके, भक्ति करते–करते वापिस गुना आये।

माघ शुक्ल (दूसरी) चौथ के दोपहर के प्रवचन के पश्चात् संघ ने गुना से प्रस्थान किया। इस प्रकार गुना शहर का दो दिन का प्रभावशाली कार्यक्रम पूरा हुआ। गुना के जैन समाज ने संघ के स्वागत के लिये जो हार्दिक वात्सल्य प्रदर्शित किया, वह प्रशंसनीय है।

★ ★ ★

बदरवास-कोलारस-सेसई-शिवपुरी—

(माघ शुक्ल चौथ) गुना से प्रस्थान करके गुरुदेव बदरवास गाँव में पधारे, वहाँ के चैत्यालय में जिनेन्द्र भगवान के दर्शन करके और डाक–बंगले में भोजन करके तुरन्त वहाँ से कोलारस पधारे। कोलारस प्राचीन गाँव है और वहाँ दो जिनमन्दिर हैं, उनमें विशाल–विशाल भव्य प्रतिमाएँ विराजमान हैं तथा हस्तलिखित प्रतियों का संग्रह भी है। गुरुदेव यहाँ दर्शन करने रुके। एक मन्दिर में बड़े–बड़े दस खड्गासन भगवन्तों को देखकर गुरुदेव को बहुत आनन्द हुआ... और बहुत भाव से उन भगवन्तों को निहारते रहे। सामने तीन भगवन्त तथा अगल–बगल में तीन–तीन भगवन्त, इस प्रकार एक ही जिनमन्दिर में नौ भगवन्त खड्गासन से अद्भुत शोभित हो रहे हैं। तीन दिशा में तीन–तीन भगवन्तों की त्रिपुटी ऐसा ही दर्शा रही है कि इस प्रकार से रत्नत्रय की एकता द्वारा हम इस अरहन्त पद को प्राप्त हुए हैं। उसमें बीच की मुख्य प्रतिमाश्री चन्द्रप्रभस्वामी की 12 फीट उन्नत है। अगल–बगल की जो तीन–तीन प्रतिमा हैं, वे छहों पार्श्वनाथ प्रभु की है और सात फीट उन्नत है। जिनमन्दिर के बाहर अजितनाथ भगवान की नौ फीट की एक चमकदार भव्य प्रतिमा है। अहा! गुरुदेव के हृदय में ये दसों भगवन्त बस गये हैं... वे कहते हैं कि एक साथ इतने विशाल–विशाल दस खड्गासन भगवन्त अपने तो जिन्दगी में यहाँ पहली बार ही देखे हैं। वहाँ भावपूर्वक दर्शन करने के बाद दूसरे मन्दिर में भी दर्शन करके आगे जाते हुए सेसई गाँव आया, वहाँ भी जिनमन्दिर के दर्शन करने के लिये रुके। सेसई गाँव में खास बस्ती नहीं है। एक जिनमन्दिर जर्जरित अवस्था में है। उसमें 15 फीट उन्नत (नवगजा) भव्य जिनप्रतिमा विराजमान है। वहाँ भावपूर्वक दर्शन करके सायं 7 बजे

शिवपुरी पहुँचे। वहाँ एक जिनमन्दिर में दर्शन किये। तदुपरान्त दूसरा एक बावनगजा मन्दिर कहलाता है, उसमें अभी अन्यमतियों का अधिकार होने पर भी मूलत: वह जैनों का है, उसमें मानस्तम्भ और चरण-पादुका इत्यादि भी है। यहाँ रात्रि में सर्दी होने पर भी खुले चौक में तत्त्वचर्चा हुई, उसमें अनेक श्वेताम्बर भाईयों सहित सैकड़ों लोगों ने लाभ लिया था। यहाँ रात्रि विश्राम करके माघ शुक्ल पंचम के प्रात: गुरुदेव झाँसी की ओर पधारे।

★ ★ ★

झाँसी नगरी

माघ शुक्ल पंचम : पूज्य गुरुदेव के झाँसी पधारने पर दिगम्बर जैन समाज ने लश्करी बैण्ड से स्वागत किया। मंगल प्रवचन के बाद गुरुदेव तथा यात्रियों ने यहाँ के नौ जिनमन्दिरों के दर्शन किये। सोनगढ़ में बहिनों के ब्रह्मचर्य आश्रम के उद्घाटन का आज का दिवस वीरांगना लक्ष्मीबाई की झाँसी नगरी के भाग में आया; यहाँ 'झाँसी की रानी' लक्ष्मीबाई का वीरता सूचक पुतला देखकर धार्मिक वीरता का वास्तविक झाँसी नगर सोनगढ़ याद आता था। आत्मिक वीरता द्वारा चैतन्यराज की स्वतन्त्रता को साधनेवाले आत्मार्थी वीरांगनाओं की नगरी तो सोनगढ़ है। गुरुदेव का निवास 'वर्णी भवन' धर्मशाला में था। संघ के भोजन की व्यवस्था जैन समाज की ओर से हुई थी और गुरुदेव का भोजन फूलचन्द गुलाबचन्द सेठ के यहाँ था। दोपहर 2.15 से 3.15 प्रवचन हुआ था। गुना से थुवौनजी-चन्देरी की ओर गये हुए कितने ही यात्री यहाँ गुरुदेव के प्रवचन से पहले आ गये थे। प्रवचन के बाद स्थानीय दिगम्बर जैन समाज की ओर से गुरुदेव का आभार व्यक्त किया गया था और यात्रासंघ की आगत-स्वागत करने के लिये मन्त्रीजी ने यहाँ के समाज का आभार व्यक्त किया था तथा उन्हें सोनगढ़ आने का निमन्त्रण दिया था। इस प्रकार सोनगढ़ आने का आमन्त्रण तो लगभग प्रत्येक गाँव में दिया जाता था। प्रवचन के पश्चात् गुरुदेव ने ललितपुर की ओर प्रस्थान किया।

ललितपुर, पूज्य गुरुदेव के साथ पूरे संघ के जाने का कार्यक्रम नहीं था, इसलिए जो यात्री थुवौनजी-चन्देरी इत्यादि देखकर झाँसी आ गये थे, उनमें से कितने ही यात्री

उसी दिन झाँसी से प्रस्थान करके सोनागिरि सिद्धक्षेत्र पहुँच गये और कितने ही झाँसी की एक धर्मशाला में रात्रि में रुककर दूसरे दिन सोनागिरि पहुँचे। इस प्रकार सोनागिरि पहले से पहुँचे हुए यात्रियों को पूरे दिन गुरुदेव के बिना चैन नहीं पड़ता था... यद्यपि माघ शुक्ल छठवीं को बहुत से यात्रियों ने सोनागिरि सिद्धक्षेत्र की शान्तिपूर्वक यात्रा की थी, तथापि अभी गुरुदेव के साथ की यात्रा तो बाकी ही थी... और यात्री, गुरुदेव के पधारने की आतुरतापूर्वक राह देखते थे।

अब अपने प्रथम थुवौनजी, चन्देरी तथा देवगढ़ का अवलोकन कर लें... पश्चात् पूज्य गुरुदेव के झाँसी से सोनागिरि तक के कार्यक्रम का अवलोकन करेंगे; और तत्पश्चात् गुरुदेव के साथ उल्लासपूर्वक सोनागिरि सिद्धक्षेत्र की यात्रा करेंगे।

थुवौनजी—गुना से कितने ही यात्री सीधे थुवौनजी आ गये थे। थुवौनजी शान्त रमणीय अतिशयक्षेत्र है। जहाँ तीर्थंकर भगवान के कल्याणक हुए हों, उसे तीर्थभूमि कहा जाता है; जहाँ से आराधक जीव सिद्धपद को प्राप्त हुए हों, उसे सिद्धक्षेत्र कहा जाता है और इन दो के अतिरिक्त जिस भूमि में रत्नत्रय-आराधक सन्त विचरे हों, जहाँ उन्होंने ज्ञान-ध्यान किया हो अथवा जहाँ विशिष्ट जिनबिम्ब इत्यादि विराजमान हों, उन्हें अतिशय क्षेत्र कहते हैं। यहाँ हारबन्द (लगातार) 35 देहरियाँ हैं, प्रत्येक में विशाल-विशाल पाँच से पच्चीस फीट के खड्गासन प्रतिमा विराजमान है। प्रत्येक मन्दिर का लगभग आधा भाग जमीन के अन्दर भोंयरा जैसा है। अन्दर उतरकर भोंयरा में विराजमान भगवान को निहारते हुए ध्यान की प्रेरणा जागृत होती है। बाहर से देखो तो छोटी देहरी जैसा छोटा द्वार, परन्तु अन्दर जाकर देखने पर विशाल भगवान को देखकर आनन्द होता है। उनमें बारह प्रतिमा तो पार्श्वनाथ भगवान की है। प्रतिमा की शिल्पकला प्राचीन ढंग की है। यहाँ दर्शन करके तथा अर्घ्य चढ़ाकर चौबीस भगवन्तों के दर्शन करने के लिये दूसरे तीर्थधाम आये।

कौन से तीर्थधाम आये? चन्देरी... चन्देरी...
चौबीस प्रभु विराजते हैं कहाँ? चन्देरी... चन्देरी...

चन्देरी : आनन्दपूर्वक भक्ति की धुन करते-करते रात्रि को चन्देरी पहुँचे। सब यात्री रात्रि में ही आनन्दपूर्वक जिनमन्दिर में दर्शन कर आये। तत्पश्चात् दूसरे दिन (माघ शुक्ल पंचमी को) सवेरे फिर से दर्शन करने गये। यहाँ चौबीसी मन्दिर में चौबीस

प्रतिमाजी विराजमान हैं। उनका वर्ण भी प्रत्येक भगवान के वर्ण अनुसार है। चन्देरी की यह चौबीसी प्रसिद्ध है। जिनमन्दिर में चारों ओर हारबन्द चौबीस शिखरबन्द देहरियाँ हैं, उनमें यह चौबीसी विराजमान है। प्रत्येक भगवान सोनगढ़ के सीमन्धर भगवान जितने हैं। मुद्रा बहुत भाववाही है। इन चौबीस भगवन्तों के दर्शन से सबको आनन्द हुआ। एकदम छोटे से प्रवेशद्वार द्वारा देहरी में जाकर भाव से भगवान के दर्शन करके, अर्घ्य चढ़ाकर प्रत्येक भगवान की स्तुति (जेणे कीधी सकल जनता नीति ने जाणनारी-इत्यादि) बोलते थे। एक के बाद एक चौबीस भगवन्तों के दर्शन-अर्चन और स्तवन करने के बाद चौबीस भगवन्तों के बीच के चौक में बहुत आनन्दपूर्वक भक्ति की।

मैं चौबीस जिनवरको चित्त में लगाकर ध्याऊँ रे...
मैं प्रभु भक्ति में दिल को लगाकर बोलुं रे।

इस प्रकार चौबीसी मन्दिर में दर्शन-भक्ति से यात्रा जैसा आनन्द आया। तत्पश्चात् दूसरे दो प्राचीन जिनमन्दिरों में भी दर्शन किये, उनमें भोंयरे में वेदी पर अनेक प्रतिमा विराजती हैं।

जिनमन्दिरों के दर्शन के बाद यात्री चन्देरी से एक मील दूर खन्दारगिरि-पहाड़ पर गये; इस छोटे से पर्वत में अनेक जिनप्रतिमा उत्कीर्ण है, उसमें एक प्रतिमा लगभग 25 फीट विशाल खड्गासन से है, वह जर्जरित हालत में होने पर भी मुद्रा इत्यादि स्पष्ट दिखायी देती है। उस पर्वत में उत्कीर्ण प्रतिमाजी को दूर से देखने पर ऐसा लगता है कि मानो चौथे काल के कोई मुनिराज पर्वत पर ध्यान में खड़े हों। पर्वत की टोंच पर एक सुन्दर गुफा है, उसमें भी अनेक जिनबिम्ब उत्कीर्ण हैं। यहाँ पर्वत के ऊपर शान्त गुफा में जिनेन्द्र भगवान के सन्मुख बैठने पर मुमुक्षु को ध्यान की प्रेरणा जागृत होती है और वहाँ बैठे रहने का मन होता है। पर्वत पर जाते हुए मार्ग में कहीं-कहीं जर्जरित प्राचीन पगले स्थापित दृष्टिगोचर होते हैं। इससे ऐसा अनुमान होता है कि पूर्व में यहाँ अनेक सन्त विचरे होंगे। चन्देरी से लगभग सात मील पर बूढीचन्देरी है। वहाँ भी कलामय अनेक प्राचीन प्रतिमाएँ विराजमान हैं। बहुत से यात्री वहाँ भी दर्शन करने गये थे।

इस प्रकार चन्देरी इत्यादि के दर्शन करके यात्री झाँसी पहुँचे; वहाँ पूज्य गुरुदेव का

प्रवचन सुनकर और जिनमन्दिर के दर्शन करके सवेरे सोनागिरि पहुँचे। वहाँ पर्वत पर दर्शन करके गुरुदेव के पधारने की राह देखने लगे।

देवगढ़ : कितने ही यात्री देवगढ़ भी गये थे, यहाँ के पर्वत पर लगभग 45 पुराने भव्य जिनमन्दिर हैं और इतने अधिक जिनबिम्ब हैं कि मानों जिनेन्द्र भगवन्तों की एक नगरी ही बस गयी हो! यहाँ के लिये ऐसा कहा जाता है कि चावल की पूरी बोरी भरी हो और यहाँ की एक प्रतिमा के पास चावल का मात्र एक-एक दाना ही रखे तो भी वह चावल कम पड़ेंगे। जगह-जगह बिखरा हुआ जिनवैभव नजर पड़ता है; बिखरा हुआ होने पर भी गौरवपूर्वक यह जैनधर्म की समृद्धि की कथा सुना रहा है। यहाँ के प्रतिमाजी की कला विशेष महिमावन्त है। विशाल-विशाल खड्गासन प्रतिमाओं का दृश्य भी भव्य है। एक जगह तो चक्रवर्ती की दीक्षा का दृश्य है। चक्रवर्ती राजा दीक्षा लेकर मुनि होता है, उसके द्वारा छोड़े हुए नवनिधान और चौदह रत्न बगल में चरणों के पास पड़े हैं.... परन्तु मुनिराज उनके समक्ष नहीं देखते। यह दृश्य देखने पर मानो कि अभी ही चक्रवर्ती दीक्षा ले रहे हों और चैतन्यनिधान में एकाग्र हुए हों! चैतन्य के ध्यान की महत्ता और नवनिधान की तुच्छता यहाँ प्रगट प्रतिभासित होती है। तदुपरान्त एक दिगम्बर आचार्य धर्मोपदेश दे रहे हैं—यह दृश्य भी सुन्दर और भाववाही है और दिगम्बर मुनिमार्ग को वह प्रसिद्ध करता है मानो कि अन्तर्मुख होने की देशना देते-देते स्वरूप में स्थिर हो जाते हों—ऐसा अद्भुत उसका दिखाव है तथा कितने ही मुनिवर पुरुषाकार ध्यान में खड़े हैं। वर्षाऋतु में वृक्ष तले, चातुर्मास योग धारण करके ध्यान की मस्ती में ऐसे एकाग्र हैं कि केश बढ़ जाते हैं तथापि लोंच करने का विकल्प भी नहीं उठता, ऊपर से वर्षा की धारा बरसती है और केश भींजकर उनमें से पानी टपक-टपक नितर रहा है, मुनिराज को तो अन्तर में आनन्दरस की धारा टपक रही है। अहा! मानो चौथे काल में विचरते किन्हीं मुनिराज के ही साक्षात् दर्शन कर रहे हों, ऐसे भाव भक्तों को उल्लसित होते हैं। (यद्यपि यह स्थान सभी यात्रियों ने नहीं देखा, परन्तु जिन्होंने देखा है, वे उसका भावभीना वर्णन करते हुए उत्साह में आ जाते हैं। संवत् 2015 में दक्षिणयात्रा के समय गुरुदेव ने संघसहित इस देवगढ़ की यात्रा की है, उसका वर्णन दक्षिणयात्रा में आयेगा।) देवगढ़ दर्शन करने गये हुए यात्री भी ललितपुर होकर सोनागिरि पहुँच गये।

★

बबीना तथा तालहखेट : झाँसी से माघ शुक्ल पंचमी की दोपहर को प्रस्थान करके गुरुदेव बबीना गाँव पधारे; यहाँ दिगम्बर जैनों के 40 घर हैं। वे भी प्रेमपूर्वक गुरुदेव के दर्शन करने सड़क पर आये थे; यहाँ गुरुदेव ने पाँच मिनिट मंगल प्रवचन किया था। यहाँ से ललितपुर जाते हुए बीच में तालहखेट आया। तालहखेट में दिगम्बर जिनमन्दिर का प्रतिष्ठा महोत्सव विगत दिन ही पूरा हुआ था और विशाल रथयात्रा निकली थी। ताजा ही प्रतिष्ठित हुए जिनमन्दिर में गुरुदेव ने दर्शन किये और प्रतिष्ठा के लिये मण्डप में दस मिनिट प्रवचन किया... उसमें जिनेन्द्र भगवान की वास्तविक पहिचान किस प्रकार हो और आत्मा में जिनेन्द्र भगवान की प्रतिष्ठा किस प्रकार हो—यह समझाया, इसे सुनकर उपस्थित जनता को आनन्द हुआ। भजनसागर पण्डित भैयालालजी तथा दूसरे एक-दो विद्वान यहाँ गुरुदेव के दर्शन से प्रसन्न हुए। शाम का भोजन यहीं करके गुरुदेव ने ललितपुर की ओर प्रस्थान किया.... अचानक रास्ते में सड़क पर ललितपुर के सेठ श्री जिनेन्द्रदासजी तथा पण्डित परमेष्ठीदासजी को खड़े हुए देखा; गुरुदेव के सामने आने पर उनकी मोटर रुक गयी और वे अधबीच में खड़े थे, उन्हें संघ की मोटर में साथ में ले लिया और शाम को 6 बजने पर सब ललितपुर पहुँच गये।

ललितपुर : पूज्य गुरुदेव के ललितपुर पधारते ही वहाँ की जनता ने उमंगपूर्वक भव्य स्वागत किया... स्वागत में हजारों लोग उमड़ पड़े थे। प्रवचन के बाद प्रसिद्ध मार्ग के विशिष्ट मण्डप में गुरुदेव ने मंगल सुनाया। पूज्य बहिनश्री-बहिन की 'सत्सेविनी' भी यहाँ आ पहुँची थी, तथा आगरा के दिन निश्चित करने के लिये वहाँ के सेठश्री मटरूमलजी तथा सेठश्री सौभाग्यमलजी इत्यादि भाई भी यहाँ आये थे। रात्रि में एक घण्टे सुन्दर तत्त्वचर्चा हुई उसमें लगभग पाँच हजार लोगों ने लाभ लिया। दूसरे दिन सवेरे गुरुदेव का प्रवचन सुनकर जनता बहुत प्रसन्न हुई। पहले से कार्यक्रम में न होने पर भी ललितपुर की जनता को पूज्य गुरुदेव का जो लाभ प्राप्त हुआ, उसका मुख्य यश पण्डित परमेष्ठीदासजी को दें तो वह अयोग्य नहीं गिना जाएगा। उन्हें गुरुदेव के प्रति बहुत प्रेम है। वे अनेक बार सोनगढ़ आ गये हैं। भारतवर्षीय दिगम्बर जैन विद्वत् परिषद का तीसरा अधिवेशन सोनगढ़ में हुआ, उसके मूल प्रेरक भी वे ही थे और सोनगढ़ के अनेक साहित्य का हिन्दी भाषान्तर उन्होंने किया है। गुरुदेव के ललितपुर पधारने पर उन्हें बहुत उल्लास हुआ। प्रवचन के बाद ललितपुर के कविराज 'हरि' ने स्वागत गीत गाया। ललितपुर में अनेक वेदी संयुक्त

दो भव्य जिनमन्दिर हैं, इन मन्दिरों के उपरान्त तीसरे एक मन्दिर में गुरुदेव के साथ सबने दर्शन किये। गाँव के बाहर के भाग में एक विशाल मन्दिर है, उसमें अनेक वेदी उपरान्त भोंयरा में श्री पार्श्वनाथ इत्यादि भगवन्तों की प्राचीन प्रतिमाएँ हैं। यहाँ दर्शन करके 11.30 बजे गुरुदेव चन्देरी के दर्शन को पधारे।

चन्देरी : चन्देरी प्राचीन क्षेत्र है वहाँ दिगम्बर जैनों के 60 घर हैं। चन्देरी की चौबीसी इत्यादि का वर्णन अपने पहले कर गये हैं। पूज्य गुरुदेव के चन्देरी पधारने पर वहाँ के लोगों ने उत्साहपूर्वक स्वागत किया। अगल-बगल के गाँवों से भी अनेक लोग गुरुदेव के दर्शनार्थ आये थे... गुरुदेव ने पन्द्रह मिनिट तक मंगल प्रवचन किया। यहाँ की चौबीसी के दर्शन करने पर गुरुदेव को बहुत प्रसन्नता हुई। चन्देरी-चौबीसी के भक्तिपूर्वक दर्शन करके गुरुदेव वापिस ललितपुर पधारे और वहाँ से सोनागिरि की ओर प्रस्थान किया। बीच में सायंकाल लगभग 4.30 बजे झाँसी आया... वहाँ कल्याणवर्षिनी पेट्रोल भरने के लिये रुकी, उस दौरान गुरुदेव ने शाम का भोजन वहीं कर लिया... और तुरन्त वहाँ से प्रस्थान किया। पूज्य बहिनश्री-बहिन की 'सत्सेविनी' तथा दूसरी कितने ही यात्रियों की मोटरें भी साथ में ही थी।

इस ओर सोनागिरि सिद्धक्षेत्र में भक्तजन कभी से गुरुदेव की राह देख रहे थे और गुरुदेव भी सिद्धक्षेत्र की ओर निरखकर भक्तों को याद कर रहे हैं इसलिए गुरुदेव को शीघ्रता से सिद्धक्षेत्र पहुँचाकर गुरु-शिष्यों का मिलन कराने के लिये 'कल्याणवर्षिनी' मोटर तीव्र वेग से सिद्धक्षेत्र की ओर दौड़ रही है... गुरुदेव मोटर में बैठे-बैठे वन-पर्वत के वातावरण का प्रसन्नतापूर्वक अवलोकन कर रहे हैं। अब तो सोनागिरि सिद्धक्षेत्र के जिनमन्दिरों के उज्ज्वल शिखरों का समूह भी दूर-दूर से दिखायी दे रहा है... गुरुदेव कहते हैं कि 'वाह! पर्वत का दृश्य तो सरस है!' अहा! मानो कि मुनिवरों का समूह पर्वत पर ध्यान धरकर खड़ा हो और मुनि शुक्लध्यान की श्रेणी द्वारा केवलज्ञान पा-पाकर सिद्धालय में पहुँचते हों... ऐसा उसके उज्ज्वल शिखरों का दृश्य दिखायी देता है। पर्वत की परिक्रमा लेते-लेते थोड़ी ही देर में सोनागिरि सिद्धक्षेत्र में आ पहुँचे और 'कल्याणवर्षिनी' के कर्ण मधुर सुर द्वारा गुरुदेव के आ पहुँचने की बधाई सुनकर भक्तजन हर्षपूर्वक गुरुदेव का स्वागत करने दौड़ पड़े।

★ ★ ★

सोनागिरि सिद्धक्षेत्र

पूज्य गुरुदेव के सोनागिरि सिद्धक्षेत्र में पधारते ही यात्रियों ने जय-जयकारपूर्वक मंगल गीत गाते-गाते स्वागत किया... एक दिन के विरह बाद गुरुदेव के दर्शन होने पर सब प्रफुल्लित हुए... स्वागत के बाद थोड़ी देर में पूज्य गुरुदेव तथा यात्री जिनमन्दिर के दर्शन करने आये। दर्शन करने के बाद गुरुदेव ने कहा : चलो, भक्ति करते हैं। भक्ति की बात सुनते ही सब यात्री आनन्दपूर्वक एकत्रित हो गये... जिनमन्दिर का विशाल चौक भर गया, माईक भी व्यवस्थित हो गया... परन्तु पूज्य बहिनश्री-बहिन तो पीछे रह गये थे, उनकी मोटर अभी आयी नहीं थी... परन्तु भक्ति का प्रसंग भक्तों को दूर कैसे रहने दे? एक ओर भक्ति के लिये जैसी तैयारी हुई कि दूसरी ओर उसी समय बहिनश्री-बहिन को लेकर दौड़ती-दौड़ती सत्सेविनी मोटर आ पहुँची... और पूज्य बहिनश्री-बहिन मोटर में से उतरकर सीधे मन्दिर में ही पधारीं। आते ही भगवान के दर्शन करके तुरन्त ही भक्ति शुरु की। शान्तभाव से पहले नीचे का स्तवन गवाया।

आज मारे जिनवरजी को शरणो.... आज मारे जिनवरणजी को शरणो।
सुंदरमुरत प्रभुजी की कहिये नित उठ दर्शन करणो... आज मारे जिनवरजी को शरणो।
धन दौलत और माल खजानां इनको म्हारे कांई करणो... आज मारे जिनवरजी को शरणो।
अब सेवक मिलकर गुण गावे भवदधि पार उतरणो... आज मारे जिनवरजी को शरणो।

तत्पश्चात् इस सिद्धक्षेत्र से मोक्ष प्राप्त नंग-अनंग इत्यादि मुनि भगवन्तों को अनुलक्ष्य कर निम्न स्तवन गवाया—

धन्य मुनिश्वर आतमहित में छोड़ दिया परिवार... कि तुमने छोड़ा सब संसार...
अंग-अनंग मुनि आतमहित में छोड़ दिया परिवार... कि तुमने छोड़ा सब संसार...
राज छोडा वैभव सब छोड़ा छोड़ा सब घरबार... कि तुमने छोड़ा सब संसार...

भव-तन-भोग अनित्य विचारा, आत्मस्वरूप में चित्त लगाया,
ज्ञान-दरश-चारित्र को ध्याया, केवलज्ञान लक्ष्मी को पाया;

सोनागिरि तीरथ पर से पाया सिद्धिधाम... कि तुमने छोड़ा सब संसार।
पांच करोड़ मुनि मुक्ति गये अेने वन्दन बार हजार... कि अेने वन्दन बार हजार

अहा! सिद्धिधाम के शान्त वातावरण में मुनिवरों की भक्ति का बहुत रंग जमा था, मुनि भक्ति की तान में गुरुदेव भी वैराग्य की धुन से डोलते थे। मुनिभक्ति के ऐसे-ऐसे प्रसंगों से, शीघ्र कवि (आशु कवि) की तरह नये-नये काव्य जोड़कर बहिनश्री-बहिन भक्ति की ऐसी धुन मचाती थीं कि इस क्षेत्र में अभी मुनिवरों का विरह है—यह बात भी उस समय विस्मृत हो जाती थी। इस प्रकार सिद्धक्षेत्र में तो भक्ति बहुत ही खिल निकलती थी। सिद्धि के साधकों को सिद्धक्षेत्र मिल जाए, फिर उनकी भक्ति में क्या बाकी रहे!

दूसरा स्तवन पूरा होते ही महावीर भगवान के दरबार में तीसरा स्तवन शुरु हुआ—

आज मैं महावीरजी आया तेरे दरबार में...
साथ ही में भक्ति लेकर आया तेरे दरबार में...

(मानो कि इस क्षेत्र से मोक्ष प्राप्त करोड़ों सिद्ध भगवन्तों के दरबार में ही गुरुदेव के साथ बैठे हैं—ऐसा भाव उल्लसित होने पर बहिनश्री-बहिन ने गाया)—

अहो श्री सिद्धभगवानजी में आया तेरे दरबार में...
कहान गुरु की साथ में मैं आया तेरे दरबार में...

पश्चात्,—

'ध्यान आसन की जगह दे दे तेरे दरबार में'...

यह कड़ी आने पर भक्ति का उपशान्त वातावरण बहुत शोभित हो रहा था। इस प्रकार आनन्दपूर्वक सोनागिरि सिद्धक्षेत्र के जिनमन्दिर में भक्ति हुई।

रात्रि हुई... यात्रा दूसरे दिन सवेरे करनी थी... परन्तु... चाँदनी रात और निकट ही सिद्धक्षेत्र! इसलिए ऊपर जाने के लिये मन ललचा जाता था... इसलिए कितने ही ब्रह्मचारी भाई तो रात्रि ही रात्रि में पर्वत पर जाकर दर्शन कर आये। (पर्वत पर जाने में चालीस मिनिट लगते हैं।)

सोनागिरि सिद्धक्षेत्र की यात्रा

माघ शुक्ल सप्तमी—सवेरे नीचे के जिनमन्दिरों के दर्शन करने के बाद, पूज्य गुरुदेव ने संघसहित सोनागिरि सिद्धक्षेत्र की यात्रा का प्रारम्भ किया। यात्रा के दौरान यह छठवाँ सिद्धक्षेत्र है। इस सोनागिरि सिद्धक्षेत्र से अंग-अनंग ये दो मुनिवर तथा अन्य साढ़े पाँच करोड़ मुनिवर मुक्ति को प्राप्त हुए हैं, तथा श्री चन्द्रप्रभस्वामी का समवसरण अनेक बार यहाँ आया है। यह सिद्धक्षेत्र बहुत ही रमणीय है। मानो कि सिर पर मुकुट का शृंगार सज रहा हो—ऐसे 77 जिनमन्दिरों से सोनागिरि पर्वत शोभ रहा है। पर्वत पर जिनमन्दिरों की इतनी संख्या अन्यत्र कहीं देखने में नहीं आती तथा तलहटी में भी 17 जिनमन्दिर हैं। पर्वत के ऊपर की व्यवस्था बहुत सुन्दर है। पूरे पर्वत पर प्रत्येक जगह मन्दिर को जोड़ते हुए पक्के रास्ते की रचना वह इस सिद्धक्षेत्र की विशेषता है और ऊपर के मन्दिरों की रचना ऐसी है कि पहाड़ चढ़ने की शुरुआत करते ही आधे-आधे मिनिट में एक के बाद एक मन्दिर आते जाते हैं अर्थात् कहीं खाली चढ़ना नहीं आता परन्तु प्रत्येक मन्दिर पर अनुक्रम नम्बर लिखा हुआ है, तद्नुसार क्रमबद्ध एक के बाद एक मन्दिरों के दर्शन करते-करते सहज सिद्धगिरि पर चढ़ा जाता है। प्रत्येक मन्दिर के द्वार पर, उसमें जो भगवान विराजमान हों, उनका नाम तथा उनकी पूजा सम्बन्धी एक भाववाही श्लोक लिखा हुआ है, वह श्लोक बोलकर अर्घ्य चढ़ाया जाता है; इस सिद्धक्षेत्र में ऊपर-नीचे मिलाकर 94 जिनमन्दिर होने पर भी वे सभी दिगम्बर जैन मन्दिर हैं, दूसरे मन्दिर एक भी नहीं हैं, इस प्रकार पूर्व के पाँच सिद्धक्षेत्रों की भाँति यह छठवाँ सिद्धक्षेत्र भी शुद्ध दिगम्बर जैनों का है। अनेक मन्दिरों के कारण इस तीर्थ को देखने से सौराष्ट्र के शत्रुंजयगिरि का स्मरण होता है तथापि स्वच्छता, सौन्दर्य और शान्त वातावरण वह इस क्षेत्र की विशेषताएँ हैं।

ऐसे सिद्धिधाम पर पाँच सौ से अधिक यात्रियों सहित पूज्य गुरुदेव यात्रा करने पधारे, वहाँ के स्वयंसेवकों ने हाथ में झण्डा लेकर स्वागत किया।

सुन्दर दरवाजेवाले भव्य प्रवेशद्वार में प्रविष्ट होते ही भगवान के दर्शन की शुरुआत हो गयी। प्रवेशद्वार के दरवाजे के ऊपर ही पहला जिनमन्दिर है, वहाँ दर्शन करने के बाद जय-जयकारपूर्वक एक के बाद एक जिनमन्दिरों के दर्शन करते जाते थे और श्लोक बोलकर अर्घ्य चढ़ाते थे। बहुत से मन्दिर छोटे हैं, इसलिए सब दर्शन कर-करके आगे

बढ़ते थे, बहुत से प्रतिमाएँ तीन फीट के खड्गासन थे, किसी–किसी मन्दिर में तीन या पाँच वेदियाँ भी थीं। कोई–कोई मन्दिर छोटी–सी गुफा जैसा था, उसमें भगवान के दर्शन करके गुरुदेव जब छोटे से द्वार में से बाहर आते हों तब मानो भगवान के साथ एकान्त: बात करके गुफा में से बाहर निकलते हों—ऐसा लगता था।

पर्वत के ऊपर सैकड़ों प्रतिमाओं में श्री पार्श्वनाथ, चन्द्रप्रभ, आदिनाथ और नेमिनाथ प्रभु की प्रतिमाओं की संख्या सर्वाधिक है। किसी प्रतिमा की मुद्रा अतिशय उपशान्त है तो किसी प्रतिमाजी की मुद्रा बहुत ही हँसती हो, ऐसी है, कोई प्रतिमा वैराग्यरस में सराबोर है तो कोई प्रतिमा मानो अपने साथ वार्ता करते हैं, ऐसी है। इस प्रकार भिन्न–भिन्न प्रकार की पुरानी कलावाले चित्र–विचित्र प्रतिमाओं के दर्शन से भक्तों को आश्चर्य होता था। 34 नम्बर के मन्दिर में एक स्तम्भ के ऊपर चारों दिशाओं में 13–13 प्रतिमाएँ उत्कीर्ण हैं—वह नन्दीश्वरद्वीप की स्थापना है। इस प्रकार एक के बाद एक मन्दिरों के दर्शन करते हुए 57वें मन्दिर में आये, यह मूल मन्दिर पर्वत के मन्दिरों में सबसे मुख्य है और बहुत विशाल है। अन्दर जमीन में भोंयरा की भाँति नीचे में श्री चन्द्रप्रभ भगवान के 12 फीट उन्नत और लगभग 1700 वर्ष प्राचीन अद्भुत प्रतिमाजी खड्गासन में विराज रहे हैं, आजू–बाजू में दूसरे भी भगवन्त विराजमान हैं तथा चौबीस भगवन्तों की प्रतिमाएँ हैं। गुरुदेव ने यहाँ सर्व भगवन्तों के बहुत भावपूर्वक दर्शन किये और अर्घ्य चढ़ाया। यात्रा में प्रत्येक जगह गुरुदेव भावपूर्वक अर्घ्य चढ़ाते थे। गुरुदेव की उपस्थिति में भक्तों ने जिनेन्द्रदेव का अभिषेक किया। मन्दिर के अन्दर विशाल चौक है और चारों ओर दीवारों पर बाईस परीषहयुक्त मुनिवरों इत्यादि के सुन्दर चित्र चित्रित हैं। जिनमन्दिर में दर्शन करके बाहर आये... यहाँ पर्वत पर विशाल मैदान है... और खुले मैदान में 10 फीट के श्री बाहुबली भगवान बहुत शोभायमान हो रहे हैं... इन बाहुबली भगवान के दर्शन से सबको बहुत आनन्द हुआ। गुरुदेव ने उनके निकट बैठकर बहुत देर तक उनका अवलोकन किया... सिर से लेकर चरणों से उन भगवान को बारम्बार भावपूर्वक निहारा। पूज्य बहिनश्री–बहिन के नयन भी उस वीतराग मुद्रा के प्रति स्तब्ध बन गये। सैकड़ों यात्री भी हर्ष पूरित नयनों से उन भगवान को निहार रहे थे... बहुत देर तक टकटकी लगाकर सबने दर्शन किये... अभिषेक भी किया। तत्पश्चात् वहाँ खुले चौक में ही बैठकर बाहुबली भगवान के सन्मुख भक्ति हुई, पर्वत पर लाउडस्पीकर की

भी व्यवस्था होने से पूरा पर्वत भक्ति के नाद से गाज उठा था, मानो कि इतने सब भक्तजनों को देखकर पर्वत स्वयं ही तान में आकर जोरशोर से भगवान की कथा सुनाता हो!

पहले गुरुदेव ने बहुत भावपूर्वक निम्न स्तवन गवाया—

धन्य दिवस धन्य आजनो... धन धन घड़ी तेह
धन्य समय प्रभु माहरो, दरिशण दोहुं आज... मन लाग्युं रे मारा नाथजी

(भगवान की मुद्रा के सन्मुख निहारकर गुरुदेव गवा रहे हैं)—

सुंदर मुरत ताहरी, केटले दिव आज...
नयन पावन थया माहरां... पापतिमिरं गयां भाज... मन लाग्युं रे मारा नाथजी।

(प्रत्येक कड़ी बारम्बार भावपूर्वक गुरुदेव गवाते हैं और भक्त वैसे ही उमंग से झेल रहे है)

साचो भक्त जाणीने, करुणा घरो मनमांह्य।
सेवक पर हित आणीने, धरी हृदय उमाह... मन लाग्युं रे मारा नाथजी।
निर्मल सेवा आपी, भवना बुझेरे ताप,
हवे दरिशन विरह मत करो, मेटो मननो संताप... मन लाग्युं रे मारा नाथजी।

(भक्तिरस में भींजे हुए गुरुदेव भगवान के समक्ष हाथ चौड़े करके कहते हैं कि हे नाथ!)

धणुं धणुं शुं कहीये तुमने, तमे चतुर सुजाण,
मुझ मनवांछित पूरजो, वहाला सीमंधरनाथ... मन लाग्युं रे मारा नाथजी...
— वहाला बाहुबलीनाथ! मन लाग्युं रे मारा नाथजी...

अहा, सिद्धक्षेत्र में गुरुदेव की भक्ति अद्‌भुत थी। भक्ति के समय का वातावरण देखकर हिन्दी यात्री—कि जो स्तवन की गुजराती भाषा नहीं समझते थे वे भी—स्तब्ध बन गये थे। भक्ति पूरी होते ही हिन्दी में उसका भावार्थ समझाते हुए गुरुदेव ने बहुत उमंग से कहा—

देखो, इसमें ऐसा कहा कि हे भगवान! आज का मेरा दिवस और मेरी घड़ी धन्य हुई, मेरा यह समय धन्य हुआ कि मुझे आपका दर्शन हुआ। हे नाथ! आपको देखकर

के अब मेरा मन आपकी ही साथ में लगा है, अब वह दूसरे में नहीं लगता। आप में लगा हुआ मेरा मन अब संसार में नहीं लगता।

अहा! आपकी यह सुन्दर मूरत मैंने बहुत दिन के बाद देखी, उसे देखकर मेरे नयन पावन हुए और पाप नष्ट हो गये।

फिर कहते हैं कि—हे भगवान! अपना सच्चा भक्त जानकर हमारे ऊपर करुणा और आपके साक्षात् चरणों की निर्मल सेवा देकर के हमारे भवताप बुझा दो। हे प्रभो! आपके साक्षात दर्शन देने में अब विरह मत कीजिये। प्रत्यक्ष दर्शन देकर हमारे मन का सन्ताप दूर कीजिये। अधिक क्या कहें ? हे प्रिय सीमन्धरनाथ! हे प्रिय बाहुबलीनाथ! आप तो सब जानते ही हो।

सोनागिरि पर्वत पर गुरुदेव के मुख से स्तवन का भावभीना भावार्थ सुनते हुए यात्रियों की भक्ति में नया ज्वार आया... और सबको अभी विशेष भक्ति करने का मन हुआ। इसलिए गुरुदेव ने बहिनश्री-बहिन को दूसरी भक्ति करने को कहा : बहिनश्री-बहिन का मन तो भगवान की भक्ति में ही रमता था, इसलिए तुरन्त ही अन्दर के भाव भक्ति द्वारा व्यक्त होने लगे।

मेरा मन तो रमे प्रभु तुंही ध्याने...
मेरा दिल तो भमे नाथ त्हारा गाने... मेरा०

अहा! भगवान के भक्तों का दिल तो सदा ही भगवान के गान-ध्यान में ही रम रहा है। ज्ञानियों के हृदय के गहरे भावों को देखने का यहाँ यात्रियों को सौभाग्य सम्प्राप्त हुआ था। 'मेरा मन तो रमे प्रभु तुंही ध्याने....' यह हृदयोर्मि से गवाती कड़ी पूज्य गुरुदेव आँखें झुकाकर सुनते थे... और वास्तव में उस समय उनका मन प्रभु के ध्यान में ही रमता था।

भक्ति पूर्ण होने पर अपरम्पार जय-जयकार से वह सिद्धक्षेत्र गाज उठा... यहाँ की भक्ति से सबको बहुत आनन्द हुआ। तत्पश्चात् उन बाहुबलीनाथ की अति पुरुषार्थ प्रेरक गंभीर ध्यानमुद्रा गुरुदेव और भक्तजनों ने बारम्बार एकाग्र नयनों से निहारी... और वह मुद्रा उनके अन्तर में उत्कीर्ण हो गयी।

पश्चात् उस चौक में ही एक ओर सुन्दर छतरी के नीचे यहाँ से मोक्ष प्राप्त श्री अंग और अनंगकुमार मुनिवरों के चरणकमल स्थापित हैं, वहाँ जाकर अति भावपूर्वक दर्शन

किये, गुरुदेव और भक्तजनों ने भक्तिपूर्वक उन चरणों का स्पर्श किया और पश्चात् निम्नानुसार अर्घ्य चढ़ाया।

अंग-अनंगमुनि चरणकमल पर बलिबलि जाऊँ मन-वच-काय
हे करुणानिधि भव दुःख मेटो यातें मैं पुजुं तुम पाय...

ॐ ह्रीं श्री सोनागिरिसिद्धक्षेत्र से श्री अंग-अनंग मुनिराज तथा साडा पाँच करोड़ मुनिराज मोक्ष पधारे तिनके चरणकमल पूजनार्थे अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा....

इस प्रकार अर्घ्य चढ़ाने के पश्चात् सबने प्रदक्षिणा की। पूज्य बहिनश्री चम्पाबेन तथा पूज्य बहिन शान्ताबेन भी अति भक्तिभीने चित्त से बारम्बार उन मुनिवरों के चरणों का स्पर्श करती थीं... और सिद्धालय की ओर देख-देखकर वन्दन करती थीं।

तत्पश्चात् उस चौक में ही बीच में एक सुशोभित मानस्तम्भ है, उसकी दांडी पर सोलह स्वप्न तथा अष्टमंगल उत्कीर्ण हैं; मानस्तम्भ में ऊपर-नीचे विराजमान जिनेन्द्रदेव के सबने दर्शन किये। सोनागिरि सिद्धिधाम के ऊपर के इस विशाल चौक में एक ओर चन्द्रप्रभ का भव्य जिनमन्दिर, दूसरी ओर बाहुबली भगवान, तीसरी ओर मानस्तम्भ और चौथी ओर अंग-अनंग मुनिराज के चरण-कमल हैं तथा आसपास अनेक जिनमन्दिरों से पूरा पर्वत व्याप्त है; कहीं-कहीं पानी के छोटे से कुण्ड हैं, इस प्रकार सिद्धक्षेत्र का दृश्य अत्यन्त रमणीय है... यहाँ से ऊपर खुले आकाश में देखने पर मानों सिद्धालय दिखता हो—ऐसा प्रमोद आता है। इस प्रकार प्रमोदपूर्वक गुरुदेव के साथ बहुत ही दर्शन-भक्ति किये, तत्पश्चात् फिर से मन्दिर में जाकर पूज्य बहिनश्री-बहिन ने सामूहिक पूजन करायी।

तत्पश्चात् 60 नम्बर का मन्दिर आया, उसे 'चक्कीवाला मन्दिर' अथवा 'मेरु मन्दिर' कहते हैं। उसकी रचना समवसरण की तीन पीठिका जैसी है, इसलिए समवसरण मन्दिर भी कहा जाता है। ऊँची-ऊँची तीन पीठिका के सीढ़ियों की रचना इस प्रकार की है कि सीढ़ियाँ चढ़ते-चढ़ते भगवान को तीन प्रदक्षिणा हो जाती है। इसे चक्कीवाला मन्दिर कहने के सम्बन्ध में ऐसी कथा सुनी जाती है कि एक महिला थी, वह जिनधर्म की भक्त थी; उसने आटे की चक्की पीस-पीसकर पैसे इकट्ठे किये और उसमें से यह मन्दिर बनाया; इसलिए इसे 'चक्कीवाला मन्दिर' कहते हैं। इस मन्दिर की प्रदक्षिणा करते-करते यात्री ऊपर चढ़े और भगवान के पास आकर बैठ गये.... मानो चन्द्रप्रभ के समवसरण की सभा भर आयी... यहाँ आनन्द से भक्ति की... यहाँ ऊँची-ऊँची तीसरी

पीठिका के ऊपर से सोनागिरि पर्वत के ऊपर के बहुत मन्दिर एकसाथ दिखायी देते हैं। इतने सब मन्दिर देखकर, मानो कि जिनमन्दिरों की ही नगरी रच गयी हो! ऐसा लगता है। यहाँ से सम्पूर्ण सिद्धक्षेत्र का बहुत-बहुत अवलोकन करने के पश्चात् शीघ्रता से एक के बाद एक मन्दिरों के दर्शन करते-करते आगे जाते हुए बीच में एक ओर कुण्ड तथा एक विशाल 'बजती शिला' आती है तथा ताजमहल जैसे आकारवाला एक जिनमन्दिर आता है। मन्दिरों के दर्शन करते-करते यात्रियों को तो ऐसा ही लगता था कि हम अभी पर्वत पर आगे जा रहे हैं और सब मन्दिरों के दर्शन करने के बाद पर्वत के ऊपर जितना चढ़े हैं, उतना उतरना होगा! परन्तु 77 नम्बर के जिनमन्दिर में दर्शन करने के बाद आगे बढ़ने के लिये जहाँ नजर की, वहाँ तो खबर पड़ी की कि अरे! हम तो पर्वत उतरकर एकदम तलहटी के नजदीक पहुँच गये हैं... क्योंकि 57 नम्बर के जिनमन्दिर के दर्शन करने के पश्चात् आगे के मन्दिरों के दर्शन करते-करते साथ-साथ में पर्वत से उतरा जाता था परन्तु जिनेन्द्र भगवन्तों के दर्शन की धुन ही धुन में कब पर्वत चढ़ा गया और कब उतरा गया—इसका भी ख्याल नहीं आता। इस प्रकार आनन्दपूर्वक स्वर्णपुरी के सन्तों के साथ स्वर्णगिरि सिद्धक्षेत्र की यात्रा पूरी करके नीचे आये, तब भक्त जय-जयकारपूर्वक मंगल गीत गाते थे कि—

मारे सोना समो रे सूरज ऊगीयो रे....
में तो हरखे नीहाळया सिद्धिधाम... मारे०
मारे जात्रा थई छे गुरुजीनी साथ... मारे०
मारे जीवननो लहावो छे आज... मारे...
(सोनागिरिमां) आजे सोना समोरे सूरज ऊगीयो रे... मारे०
मैं तो हरखे वधाव्या सिद्धक्षेत्र.... मारे०

इस प्रकार पूज्यश्री कहान गुरुदेव के साथ छठवें सिद्धिधाम श्री सोनागिरि सिद्धक्षेत्र की यात्रा पूर्ण हुई।

सोनागिरि से सिद्धि प्राप्त सिद्ध भगवन्तों को नमस्कार हो....
इस सिद्धिधाम दर्शक श्री कहान गुरुदेव को नमस्कार हो....

★ ★ ★

सिद्धक्षेत्र की यात्रा के पश्चात् धर्मशाला में संघ ने भोजन किया... सोनागिरि पर्वत के निकट ही विशाल धर्मशाला स्थित है... और उस धर्मशाला में विशाल चौक है... उसका नाम है 'चन्द्रप्रभ चौक!' धर्मशाला की व्यवस्था सुन्दर है। यहाँ व्यवस्थापकों ने यात्रियों के लिये सावधानीपूर्वक गर्म पानी इत्यादि का इन्तजाम किया था। पूज्य गुरुदेव का भोजन दिल्लीवाले भाईयों के यहाँ हुआ था... और सिद्धक्षेत्र में गुरुदेव के आहारदान का लाभ मिलने से उन्हें बहुत आनन्द हुआ था। यहाँ दिल्ली के कितने ही भाई पूज्य गुरुदेव को दिल्ली पधारने के लिये आमन्त्रित करने आये थे... और सम्मेदशिखरजी से वापिस आते समय दिल्ली का कार्यक्रम रखने का निश्चित हुआ था।

अब दोपहर में, बराबर सिद्धक्षेत्र के प्रवेश द्वार के चौक में ही गुरुदेव का प्रवचन चल रहा है। सिद्धक्षेत्र के प्रवेश द्वार में विराजमान गुरुदेव, बगल के सिद्धक्षेत्र की ओर बारम्बार हाथ लम्बाकर सिद्धपद का उपाय समझा रहे हैं—

'देखो! इस सिद्धक्षेत्र सोनागिरि से अंग-अनंग आदि करोड़ों मुनिवर मुक्ति प्राप्त हुए हैं; वे किस प्रकार से मुक्ति प्राप्त हुए? चिदानन्दस्वरूप आत्मा का अन्तर में भान करके पश्चात् उसके ध्यान में लीनता द्वारा मुक्ति को प्राप्त हुए। भगवान सर्वज्ञ परमात्मा और सन्त कहते हैं कि अरे जीव! तेरा आत्मा ज्ञानस्वभाव से भरपूर है, उसमें स्व-पर को जानने की ताकत है; जैसे शरीर के एक अवयव (अंगुली) द्वारा शरीर का स्पर्श ज्ञात होता है, वैसे आत्मा ज्ञानशरीरी है, उसके मति-श्रुतज्ञानरूप अवयव द्वारा पूर्ण आत्मा का ज्ञान होता है। अन्तर्मुख ज्ञान द्वारा शुद्ध ज्ञानस्वभावी आत्मा को पहिचानकर उसका बारम्बार चिन्तवन, वह मोक्ष का उपाय है। अनन्त जीव चैतन्य का चिन्तन कर-करके ही मोक्ष प्राप्त हुए हैं।'

गुरुदेव के साथ सिद्धिधाम की यात्रा के पश्चात् उस सिद्धिधाम में ही सिद्धपद का उपाय सुनकर यात्रियों के अन्तर में अनोखा उत्साह जागृत होता है। गुरुदेव भी अध्यात्म की मस्ती से मानो कि सिद्ध भगवन्तों के साथ बातें करते हों... या सिद्ध भगवन्तों को आवाज देकर बुलाते हो—इसप्रकार से ऊपर नजर करके हाथ द्वारा सिद्धालय का निर्देश करते हुए कहते हैं:—

'अहा! यहाँ से ऊपर समश्रेणी में अनन्त सिद्ध भगवन्त आत्मा के पूर्णानन्द में

विराज रहे हैं। अंग-अनंग इत्यादि करोड़ों मुनिवर यहाँ आत्मध्यान कर-करके मोक्ष प्राप्त हुए हैं और अभी ऊपर सिद्धालय में विराज रहे हैं... देखो, यह सिद्धक्षेत्र में सिद्ध भगवन्तों का स्मरण करते हैं... अपने को याद रह जाएगा कि यात्रा के समय सिद्धक्षेत्र में इस प्रकार से सिद्ध भगवन्तों को स्मरण किया था..'

सिद्ध भगवन्तों के साथ-साथ, विदेहक्षेत्र के सीमन्धर भगवान को भी स्मरण करके गुरुदेव ने भक्तिपूर्वक कहा: **देखो, इस पूर्व दिशा में विदेहक्षेत्र में श्री सीमन्धर परमात्मा अभी साक्षात् विराजमान हैं और वहाँ से अभी भी जीव मुक्ति प्राप्त करते हैं.... मुक्ति प्राप्त हुए, उनका यह तो क्षेत्र है परन्तु किस भाव से मुक्ति प्राप्त हुए - उसकी यह बात है... भगवन्त जिस भाव से मुक्ति को प्राप्त हुए, उस भाव का अंश अपने में प्रगट करना, वही भगवान के तीर्थ की (अर्थात् कि रत्नत्रय की) वास्तविक यात्रा है....**

मंगल तीर्थयात्रा के दौरान सिद्धक्षेत्र में गुरुदेव के ऐसे भावभीने प्रवचन सुनकर आत्मार्थी जीवों को चैतन्य के प्रदेश-प्रदेश में प्रमोद उल्लसित होता था... और उनके हृदय में से ऐसे उद्गार निकलते थे कि जयवन्त वर्तो गुरुदेव के साथ की आत्मवृद्धिकर मंगल तीर्थयात्रा!

प्रवचन पूर्ण होते ही 'सिद्धिधाम में सिद्धि का मार्ग दिखलानेवाले गुरुदेव की जय हो'—ऐसी जय-जयकारपूर्वक संघ के बहुभाग यात्रियों ने सोनागिर से ग्वालियर-लश्कर की ओर प्रस्थान किया... पूज्य गुरुदेव और सेठ बच्छराजजी इत्यादि कितने ही यात्री सोनागिरि रुक गये। शाम को गुरुदेव का भोजन इस तीर्थधाम के मैनेजर के यहाँ हुआ था। यात्रियों ने हाथ से ही रसोई बनाकर सामूहिक भोजन किया था... इस प्रकार सिद्धक्षेत्र में साधर्मी संग से समूह भोजन करने पर उत्सव जैसा आनन्द होता था।

भोजन के बाद सायंकाल सिद्धक्षेत्र में घूमते-घूमते गुरुदेव भावपूर्वक उस सिद्धक्षेत्र को निरखते थे... और कहते थे कि इस बुन्देलखण्ड में तो जगह-जगह जिनेन्द्र भगवान का बहुत वैभव है... लाखों जिनप्रतिमाओं से बुन्देलखण्ड भरपूर है... शान्तिनाथ-कुन्थुनाथ और अरनाथ इन तीन चक्रवर्ती तीर्थंकरों के विशाल-विशाल खड्गासन प्रतिमा की त्रिपुटी बहुत जगह दृष्टिगोचर होती है, वह तो स्मरण रह जाए ऐसी है... यह सिद्धक्षेत्र भी कितने अधिक जिनमन्दिरों से भरपूर है!

रात्रि में जिनमन्दिर में तत्त्वचर्चा हुई थी... जिसमें तीर्थयात्रा के प्रसंगों के वर्णन के साथ–साथ तीर्थ में विचरित सन्त–मुनिवरों की अद्‌भुत महिमा गुरुदेव ने की थी। तत्पश्चात् पूज्य बहिनश्री–बहिन इत्यादि ने भक्तिपूर्वक तलहटी के 17 जिनमन्दिरों के दर्शन किये थे।

इस प्रकार सोनागिरि सिद्धक्षेत्र का उल्लासपूर्ण कार्यक्रम पूरा करके, माघ शुक्ल अष्टमी के प्रात:काल में सिद्धक्षेत्र तथा जिनेन्द्र भगवन्तों को वन्दन करके गुरुदेव ने ग्वालियर–लश्कर की ओर प्रस्थान किया।

★ ★ ★

सुप्रभात की सोनेरी किरणों से जगमगाते सोनागिरि सिद्धक्षेत्र को अर्धचक्र लेती हुई 'कल्याणवर्षिनी' शीघ्रता से दौड़ी जा रही है.... पीछे–पीछे 'सत्‌सेविनी' भी उसके साथ हो जाने के लिये दौड़ी आ रही है। कल्याणवर्षिनी में बैठे हुए गुरुदेव बारम्बार सोनागिरि सिद्धक्षेत्र को निहार रहे हैं और उस सिद्धक्षेत्र में उल्लसित हुए प्रमोदभाव अभी भी उनकी मुद्रा पर तैर रहे हैं.... मोटर दूर–दूर चली जाने पर सिद्धक्षेत्र दिखना बन्द हो गया... गुरुदेव विचार रहे हैं कि अब कौन सा तीर्थ आयेगा!! अब तो अपने सौराष्ट्र के नेमीनाथ भगवान का जन्मधाम शौरीपुर आयेगा—यह जानकर गुरुदेव को बहुत हर्ष हुआ... और... इतने में तो ग्वालियर आ गया।

ग्वालियर—लश्कर

माघ शुक्ल अष्टमी : गुरुदेव ग्वालियर में पधारते ही दिगम्बर जैन समाज ने बहुत उल्लासपूर्वक धूमधाम से स्वागत किया। भव्य स्वागत के पश्चात् सर्राफा बाजार में विशाल जिनमन्दिर में दर्शन करके वहीं गुरुदेव ने मंगल प्रवचन किया... तत्पश्चात् गुरुदेव और यात्रियों ने अनेक जिनमन्दिरों में दर्शन किये...

ग्वालियर में 27 भव्य जिनमन्दिर हैं; कितने ही मन्दिर तो बहुत ही वैभवशाली और सुन्दर कारीगरीवाले हैं। बड़े मन्दिर में छत का सोनेरी काम बहुत आकर्षक और लाखों के खर्च से हुआ है, इस मन्दिर में स्फटिक रत्न इत्यादि के अनेक जिनबिम्बों-उपरान्त महावीर भगवान के विशाल खड्गासन प्रतिमाजी विशेष दर्शनीय है। सोनेरी कारीगरीवाले, रामचन्द्रजी के आहारदान इत्यादि दृश्य भी सरस है... अहा! जहाँ 27-27 तो दिगम्बर जिनमन्दिर हों ऐसी जैनधर्म की समृद्धिवाले अनेक शहर भारत में देख-देखकर यात्रियों को आनन्द होता था। ग्वालियर-लश्कर और मुरार तीनों की संयुक्त बस्ती (ग्रेटर ग्वालियर की) सात लाख है... संघ का निवास ग्वालियर की हद में श्री महावीर धर्मशाला में था। गुरुदेव का निवास वहाँ से चार मील दूर लश्कर में सेठ लालचन्दजी के बँगले में था... पूज्य बहिनश्री-बहिन यहाँ जरा-सी देरी से पहुँचे थे और निवास के लिये दो घण्टे की कठिनाई के बाद अन्त में महावीर धर्मशाला में उतरे थे। यद्यपि पूज्य गुरुदेव को और संघ को निवास की कठिनाई न पड़े, इसलिए वे ही ध्यान रखती थीं परन्तु संघ के अनेक कार्यक्रमों की विचारणा में स्वयं के निवास की व्यवस्था का लक्ष्य नहीं रहता था, इसलिए अनेक स्थलों में निवास के सम्बन्ध में उन्हें कठिनाई भी पड़ती थी, तो भी यात्रा के उमंग भरे वातावरण में ऐसी किसी कठिनाई को वे गिनती नहीं थीं।

ग्वालियर में 'दिगम्बर जैन धर्म संरक्षिणी सभा' की ओर से पूज्य गुरुदेव के और संघ के स्वागत के लिये पहले से ही एक विशाल स्वागत समिति मनोनीत की गयी थी और बहुत ही उमंगपूर्वक संघ के भोजनादि की व्यवस्था की गयी थी। स्वागत समिति के अध्यक्ष श्री गप्पूलालजी बाकलीवाल थे और मन्त्री श्री मिश्रीलालजी पाटनी थे। सेठ श्री लक्ष्मीचन्दजी वरैया ने स्वागत सम्बन्धी व्यवस्था बहुत उत्साह और भक्तिपूर्वक की थी;

उनके घर में गुरुदेव ने भोजन किया था। महावीर धर्मशाला के पीछे बाजू में एक नशियाजी हैं। उसके बाग में 25 फीट उन्नत श्री शान्तिनाथ भगवान की खड्गासन प्रतिमा का दृश्य बहुत सरस है, उसके पीछे पर्वत की रचना है, जिसका दिखाव बहुत रमणीय लगता है। पूज्य गुरुदेव का प्रवचन कम्पू—सरस्वती भवन (गवर्मेन्ट कॉलेज) में हुआ था... प्रवचन स्थल को बहुत शृंगारित किया गया था... लोग प्रवचन में इतना रस लेते थे कि प्रवचन के लिये हॉल छोटा पड़ता और सैकड़ों लोग बाहर खड़े-खड़े सुनते थे... गुरुदेव को यहाँ विशेष रोकने के लिये वहाँ के अग्रगण्यों ने बहुत आग्रह किया था... परन्तु पहले से निश्चित हुआ दो दिन का कार्यक्रम बढ़ नहीं सकता था। जैन विद्यार्थियों की ओर से तथा दिगम्बर जैन समाज की ओर से पूज्य गुरुदेव को अभिनन्दन-पत्र अर्पण किया गया था... गुरुदेव के पधारने से यहाँ की जनता बहुत प्रसन्न हुई थी... अभिनन्दन-पत्र में वह प्रसन्नता व्यक्त करते हुए लिखा था कि

''परम उपकारी, समयसारमर्मज्ञ! आप जैन जाति के जीवनदाता हैं, आपकी दिव्यवाणी के उत्कृष्ट प्रवाह द्वारा जैनजाति में समयसार के अभ्यास की रुचि जागृत हुई।.....आपके प्रवचन जैनसाहित्य की अमरनिधि हैं।.....इस युग के महान आध्यात्मिक सन्त! आपकी वाणी संसारी प्राणियों के लिये अमृतवाणी है! ....हमें आशीर्वाद दें कि हम छात्रावास के छात्र अपना सफल विद्यार्थी जीवन समाप्त कर जैनधर्म के सच्चे भक्त बनें! *(छात्रावास के छात्रों के अभिनन्दन पत्र में से)*

जैनपुरातत्त्व से सम्पन्न, शान्तिकेन्द्र, कुलभूषण आदि दिगम्बर मुनियों की साधनास्थली, जैनरक्षक विजयसिंह कछवाडा की राजधानी, प्राचीन जैन संस्कृति के केन्द्र ग्वालियर के इस ऐतिहासिक नगर में अध्यात्मयोगी श्री कानजीस्वामी का स्वागत करते हुए हमें परम हर्ष हो रहा है।

.....शान्तिरस की जो विमलधारा सौराष्ट्र से प्रारम्भ होकर अनेक नगरों व उपनगरों में होती हुई अविरुद्ध प्रवाह से बढ़ती हुई इस नगर में आयी है, उससे हमें शांति और आत्मज्ञान का जो शुभसन्देश मिला है, उसने हमारे हृदय की ज्योति को जगा दिया है। ....इस पुनीत अवसर पर बृहत्तर ग्वालियर का दिगम्बर जैन समाज हृदय से अभिनन्दन करता हुआ श्री 1008 भगवान जिनेन्द्रदेव से प्रार्थना करता है कि आप चिरायु हों एवं

आपका आत्मज्ञान या शुभ सन्देश संसार के कोने-कोने में सूर्य की प्रखर किरणों की भाँति फैले, यह हमारी शुभ कामना है!''

(दिगम्बर जैन समाज : बृहत्तर ग्वालियर के अभिनन्दनपत्र में से)

यहाँ ग्वालियर का किला विशेष दर्शनीय गिना जाता है। किला के ऊपर लगभग 400 वर्ष पहले का गहरा-गहरा भव्य राजमहल है, उसके प्रवेश द्वार के दोनों ओर जिनबिम्ब उत्कीर्ण हैं और दोनों ओर की पहाड़ी में आधे मील के विस्तार में बड़े-बड़े अनेक जिनबिम्ब उत्कीर्ण हैं। सबसे पहले बीस नम्बर के प्रतिमाजी तो लगभग 57 फीट उन्नत हैं, उनके चरण नौ फीट चौड़े हैं और पर्वत में से प्रवाहित झरना बराबर उनके चरणों पर ही गिरता है—मानों कि पर्वत उस प्रतिमाजी के चरणों का अभिषेक करता हो! यह दृश्य देखकर यात्रियों को बहुत आनन्द हुआ। राजा बाबर ने अपनी आत्मकथा में इस प्रतिमा का उल्लेख किया है। अभी पर्वत की खुदाई करने पर सुन्दर कारीगरीवाले दस से तीस फीट के अनेक जिनबिम्ब (पहाड़ में ही उत्कीर्ण) निकल आये हैं... कितने ही मुस्लिम युग में खण्डित हो गये हैं, तो कोई-कोई अखण्डित भी है... प्रतिमाजी के आसपास तीर्थंकर की माता को सोलह स्वप्न आते हैं तथा माताजी बाल तीर्थंकर को गोद में रखकर सो रही हैं—ऐसे-ऐसे भाववाही दृश्य उत्कीर्ण हैं। एक जगह महाराज सिद्धार्थ, त्रिशलादेवी तथा कुँवर महावीर—इन तीनों का सरस दिखाव है (नंबर तीन में) इसमें से बहुत से जिनबिम्बों के शिलालेख में राजा डूंगरेन्द्रदेव (संवत् 1497) का उल्लेख किया गया है। इस प्रकार ग्वालियर का किला मुस्लिम युग में से गुजरने के बाद भी आज भी प्राचीन जैन वैभव की गौरवपूर्ण गाथा सुना रहा है।

ग्वालियर में ऐसा ही दूसरा दर्शनीयस्थल 'गोपगिरि' है, बड़े विशाल किले जैसी यह पूरी पहाड़ी उत्कीर्ण करके विशाल जिनबिम्बों की ओर जिनमन्दिरों की हार-माला रच दी गयी है, इतने विशाल पद्मासन प्रतिमाएँ अन्यत्र कहीं देखने में नहीं आयीं। अहा, सम्पूर्ण पर्वत खोदकर उसमें 30-40 फीट के पद्मासन प्रतिमाओं की भव्य उत्कीर्णता जिसने करायी—वह धन्य श्रावक कैसे होंगे! और उस समय की जैनधर्म की प्रभावना कैसी होगी! प्रतिमाजी की अन्तर्मुख ढलती आँखें... ऐसी तो भाववाही है कि दर्शक को भी अन्तर्मुख होने का दर्शा रही है... यहाँ की प्रत्येक प्रतिमा की मुद्रा अतिशय कलामय

और वीतरागता से भरपूर है... जिसके दर्शन से दर्शक के हृदय में भी मानो वीतरागता की लहरियाँ उठती हैं : विशालकाय प्रतिमाजी की संरचना भी ऐसी है कि उसके समक्ष खड़े हुए भक्त एकदम छोटे लगते हैं। मात्र संरचना इतनी विशाल है तो सम्पूर्ण 30-40 फीट की प्रतिमाजी का दिखाव कैसा रोमांचकारी होगा! यह तो नजर से देखनेवाले को ही ख्याल में आता है। पर्वत के ऊँचे-ऊँचे भाग पर उत्कीर्ण प्रतिमाजी की भव्य मुद्रा का निकट से अवलोकन करने के लिये पर्वत में ही प्रतिमाजी के दोनों ओर सीढ़ियाँ उत्कीर्ण हैं। उन पर चढ़कर भगवान के कान के पास कोई मनुष्य बैठा हो तब वह मनुष्य भगवान के कान से भी छोटा लगता है, ऐसे वे बड़े-बड़े प्रतिमाजी हैं। कहीं बड़े-बड़े चौबीस भगवन्तों की हार-माला उत्कीर्ण है, तो कहीं सैकड़ों प्रतिमाओं का समूह एक साथ उत्कीर्ण है।

इस प्रकार भारत में अनेक स्थलों में पूरे पर्वत के पर्वत जिन-प्रतिमा से उत्कीर्ण दिखायी देते हैं, यह दृश्य देखने से पूरे पर्वत ही मानो जैनधर्म की परम सत्यता को पुकारते हों, ऐसा लगता है। पर्वत को ही खोदकर उसमें विशाल जिनप्रतिमा उत्कीर्ण कर दिये गये हों, ऐसे दृश्य विशेषरूप से श्रवणबेलगोल, बावनगजा, ग्वालियर, ईलोरा की गुफाएँ, चन्देरी में खन्दारगिरि, खण्डगिरि-उदयगिरि इत्यादि में दृष्टिगोचर होते हैं। यह ध्यान में रखनेयोग्य है कि जहाँ-जहाँ इस प्रकार से पर्वत में ही उत्कीर्ण किये हुए हजारों वर्ष पुराने भव्य जिनबिम्ब प्राप्त हो जाते हैं, वे सब दिगम्बर जिनबिम्ब ही हैं। उसमें भी यहाँ के अतिविशाल और अत्यन्त भाववाही जिनबिम्बों का दिखाव तो अद्‌भुत है। ऐसे अद्‌भुत गौरववन्त जिनवैभव को निहारते हुए भक्तजनों को बहुत आनन्द होता था। इस गोपगिरि की एक बड़ी गुफा में 'एक पत्थर की बावड़ी' है। उसमें से निरन्तर पानी का झरना बहता रहता है; लगभग 15 फीट चौड़ी और 15 फीट लम्बी यह गम्भीर बावड़ी कितनी गहरी होगी, यह अन्दर डुबकी लगाये बिना कल्पना नहीं की जा सकती—जैसे मुनिवरों की गहरी परिणति की महिमा अन्तर्मुख हुए बिना नहीं मानी जा सकती।

ग्वालियर का ऐसा जैन वैभव निहारकर और ग्वालियर की जनता को अन्तरंग जैन वैभव का उपदेश देकर माघ शुक्ल 9 के दोपहर के प्रवचन के बाद गुरुदेव ने संघसहित आगरा की ओर प्रस्थान किया।

धौलपुर

ग्वालियर से आगरा जाते हुए बीच में धौलपुर आता है, वहाँ सायंकाल के भोजन के लिये संघ रुका था। यहाँ धौलपुर के डिप्टी कलेक्टर जो सेठ बच्छराजजी के रिश्तेदार होते हैं। उन्होंने अत्यन्त प्रेमपूर्वक गुरुदेव का और संघ का स्वागत किया था और भोजनादि की सभी व्यवस्थाएँ की थीं। पूज्य गुरुदेवश्री का निवास भी उनके यहीं था।

यहाँ धौलपुर आ पहुँचने पर पहले बीच में चंबल नदी आयी थी, उसे पार करने के लिये पानी में तैरता पुल (पीपे पर स्तम्भरहित कच्चा पुल) बना हुआ है। उस तैरते पुल के ऊपर से एक के बाद एक मोटर और मोटरबसें निकलते हुए धौलपुर आ पहुँचे और उनके यात्री तो अभी वहाँ भोजन करके तथा जिनमन्दिर के दर्शन करके वहाँ से आगरा पहुँच गये... परन्तु इन्दौर जाते समय नर्मदा पार करने के प्रसंग की तरह यहाँ भी मुम्बई की और सोनगढ़ आश्रम की दो बसें अन्तिम रह गयी - ये दो बसें सबसे बड़ी होने से झूलते पुल से निकल सके, वैसा नहीं था... इसलिए दोपहर से सायंकाल तक यात्री वहाँ नदी के किनारे बैठे.... अन्त में दूसरी खाली बसें सामने किनारे आयी, उनमें बैठकर यात्री धौलपुर पहुँचे और बसों का सामान खाली करके छोटी-छोटी नाव द्वारा सामने किनारे ले गये। और खाली बसें पुल के ऊपर से धीरे-धीरे सावधानीपूर्वक निकलकर रात्रि में धौलपुर आ गयी। ये बसें पुल के ऊपर से निकलने में डिप्टी कलेक्टर साहब ने बहुत लगनपूर्वक सहायता की थी। पूज्य गुरुदेव तथा रामजीभाई, सेठ श्री प्रेमचन्दभाई, बच्छराजजी सेठ तथा आश्रम की बस के यात्री धौलपुर में ही रात्रि में रुके थे। रात्रि में सुन्दर तत्त्वचर्चा चली थी। धौलपुर के बहुत से भाई-बहिन चर्चा सुनकर प्रसन्न हुए थे।

माघ शुक्ल दशम के सवेरे पूज्य गुरुदेव ने आगरा की ओर प्रस्थान किया। दूसरे यात्रियों को आग्रहपूर्वक चाय-नाश्ता करने के लिये रोका, सवेरे जिनमन्दिर में दर्शन करने के पश्चात् यहाँ के लोगों के आग्रह से ब्रह्मचारिणी बहिनों ने थोड़ी देर भक्ति की... तत्पश्चात् तुरन्त आगरा की ओर प्रस्थान किया।

आगरा शहर

माघ शुक्ल दशमी के सवेरे पूज्य गुरुदेव के आगरा पधारने पर यहाँ के जैन समाज ने भव्य स्वागत किया। स्वागत में चार-पाँच हजार लोगों ने भाग लिया था... संघ का आवास 'श्री महावीर दिगम्बर जैन इंटर कालेज' के भवन में था। इस कालेज में लगभग छह सौ विद्यार्थी पढ़ते हैं; संघ के निवास के लिये इस कालेल में विशेष अवकाश दिया गया था। प्रवचन के लिये विशेष मण्डप भी वहीं था; अनेक सुशोभित दरवाजों में से गुजरते हुए स्वागत जुलूस मण्डप में आया, वहाँ मंगल प्रवचन के बाद स्वागताध्यक्ष सेठ श्री मटरूमल्लजी ने गुरुदेव का तथा संघ का हार्दिक स्वागत किया और कहा कि— स्वामीजी के प्रवचनों के प्रभाव से जैन जगत में अभूतपूर्व ढंग से धार्मिक चेतना जागृत हो रही है। संघ के भोजनादि की व्यवस्था भी यहीं के दिगम्बर जैन समाज की ओर से बहुत प्रेमपूर्वक की गयी थी। संघ के भोजन के समय नेमीचन्दभाई के कुटुम्बीजन तथा आगरा के अनेक भाई स्वयं ही आकर संघ को उत्साहपूर्वक परोसते थे... साधर्मी वात्सल्य का अनोखा आनन्द यहाँ देखने को मिलता था।

आगरा, भाईश्री नेमीचन्दजी पाटनी का वतन होने से यहाँ उनके ऊपर दुगुनी जवाबदारी थी—यात्रासंघ के मुख्यमन्त्रीरूप से संघ की व्यवस्था भी उन्हें सम्हालनी थी और आगरा के वतनीरूप से संघ का स्वागत करने में भी मुख्य भाग उन्हें ही वहन करना था... आगरा के दिगम्बर जैन समाज के उत्साह भरे सहकार के कारण वे बहुत उल्लास से अपनी दोनों जवाबदारियाँ सम्हाल रहे थे।

पूज्य गुरुदेव संघसहित आगरा में तीन दिन रहे, उस दौरान हमेशा सवेरे तथा दोपहर में प्रवचन और रात्रि में तत्त्वचर्चा होती थी... तीव्र सर्दी पड़ती होने पर भी और प्रवचनस्थान शहर से दूर होने पर भी हजारों लोग प्रवचन का लाभ लेते थे। यहाँ के दिगम्बर जैन समाज की ओर से स्वागताध्यक्ष श्री मटरूमल्लजी ने गुरुदेव को अभिनन्दन-पत्र अर्पण किया था तथा जैन कालेज की ओर से गुरुदेव को अभिनन्दन करते हुए प्रधान-अध्यापक (प्रो.) श्री ने कहा था कि ***पूज्य स्वामीजी ने हमारे कालेज में पधारकर***

हमारे गृह को पावन किया है, इसलिए हमारा कालेज परिवार स्वामीजी का आभारी है। मैं कहने का साहस करता हूँ कि सारा आगरा शहर आपके स्वागत के लिये बहुत उत्सुक है। हमारे कालेज की ओर से हम आपके एवं साथ में पधारे हुए मेहमानों के अभिनन्दन करते हैं और स्वामीजी के आशीर्वाद चाहते हैं कि यह हमारी कालेज उन्नति करती रहे। दूसरे एक अध्यापक श्री ने काव्य द्वारा अभिनन्दन किया था। गुरुदेव और संघ आगरा पधारने से नेमीचन्दभाई ने भी बहुत हर्ष व्यक्त किया था। स्थानीय 'नवप्रभात' दैनिक ने भी पहले पृष्ठ पर—

'सोनगढ़ के सन्त श्री कानजीस्वामी का आगमन'

जैन कालेज में अपूर्व आध्यात्मिक समारोह

— ऐसे हेडिंगपूर्वक गुरुदेव के स्वागत इत्यादि के साथ-साथ लिखा था कि *उनके प्रवचनों के प्रभाव से जैन जगत में अभूतपूर्व ढंग से धार्मिक चेतना जागृत हो रही है।*

इस ओर के अनेक शहरों के दिगम्बर जैन समाज को गुरुदेव के स्वागत इत्यादि का कितना प्रेम और उत्साह था, इसके लिये आगरा का एक प्रसंग यहाँ उद्धृत करें तो वह अस्थान में नहीं होगा।

पूज्य गुरुदेव जब आगरा पधार रहे थे और स्वागत इत्यादि की जोशदार तैयारियाँ चल रही थीं, तब आगरा के आसपास के किसी गाँव में विराजमान एक 'त्यागी' को विरोध करने का विचार जागृत हुआ... और अपने इस विचार के अमल के लिये उन्होंने आगरा आने का आगरा के प्रमुखों को विदित कराया... परन्तु दिगम्बर जैन समाज के अग्रगण्य तो विचारशील थे, तुरन्त ही उन त्यागी महाराज को जवाब भेज दिया कि **'हमारे आगरा में कानजीस्वामी के विरोध की प्रवृत्ति नहीं हो सकेगी; कानजीस्वामी जैसे आध्यात्मिक पुरुष जब संघसहित हमारे आँगन में पधार रहे हैं, तब उनका हार्दिक स्वागत करना हमारे दिगम्बर जैन समाज का कर्तव्य है... इसलिए आप आगरा नहीं पधारेंगे। ऐसा होने पर भी यदि आप कानजीस्वामी का विरोध करने के लिये आगरा आयेंगे तो आपकी सभा में तो 50-100 लोग भी मुश्किल से एकत्रित होंगे और कानजीस्वामी के प्रवचन में तो पाँच-पाँच हजार लोग इकट्ठे होंगे, इसलिए उल्टे**

आपको ही शर्मिन्दा होना पड़ेगा... और समाज में उल्टा आपका विरोध होगा। इसलिए आप विवेक से काम लेकर कानजीस्वामी का विरोध नहीं करें - ऐसी आशा रखते हैं।'

दिगम्बर जैन समाज के विचारवान अग्रगण्यों ने मिथ्यारूप से किसी की शह में खिंचे बिना ऐसा स्पष्ट जवाब देकर विवेकपूर्वक दिगम्बर जैनधर्म की शान बनी रहे ऐसा मार्ग लिया—यह जानकार हर्षपूर्वक उनके प्रति धन्यवाद के उद्‌गार निकलते हैं।

— यह तो आगरा की बात की—मात्र आगरा में ही नहीं परन्तु जहाँ-जहाँ इस प्रकार के प्रसंग उपस्थित हों, ऐसा लगा, वहाँ-वहाँ प्रत्येक जगह दिगम्बर जैन समाज के विचारवन्त अग्रगण्यों ने विवेक और हिम्मतपूर्वक दिगम्बर जैन समाज को शोभित हो, ऐसा योग्यमार्ग लिया है और प्रत्येक स्थान पर गुरुदेव का तथा संघ का हार्दिक स्वागत करके बहुत ही साधर्मी वात्सल्य दर्शाया है, उसे देखकर आनन्द होता है।

पूज्य गुरुदेव आगरा में थे, उस दौरान जैन कालेज में एक जैन सरस्वती भवन (पुस्तकालय) का शिलान्यास हुआ था... और उस शिलान्यास विधि के लिये शिला पर गुरुदेव के सुहस्त से स्वस्तिक कराकर पश्चात् प्रमुख श्री रामजीभाई के हस्ते शिलान्यास हुआ था।

यह आगरा उपादान-निमित्त के सैंतालीस दोहों की जन्मभूमि है :

'नगर आगरा अग्र है जैनी जन को वास;
तिंह थानक रचना करी 'भैया' स्वमति प्रकाश।'

प्रवचन में जब उपादान निमित्त की स्पष्टता चलती थी, तब गुरुदेव सभा को सम्बोधन करके कहते : **देखो, यह तुम्हारे ही गाँव में लिखी हुई बात है। इसलिए तुम्हें तो यह समझनी पड़ेगी न!** आगरा के ताजगंज मन्दिर में एक 'श्रुतस्कन्ध यन्त्र' है, उसकी प्रतिष्ठा भैया भगवतीदासजी ने संवत् 1689 के फाल्गुन शुक्ल आठ को रविवार के दिन करहल नगर में की थी। तदुपरान्त नाटक समयसार के कर्ता कविश्री बनारसीदासजी भी बहुत वर्षों तक आगरा में रहे थे। और बादशाह जहाँगीर के दरबार में उनका बहुत सम्मान था।

आगरा में जैनधर्म की प्रभावना अच्छी है, वहाँ जैनबस्ती लगभग दस हजार है

और तैतीस जिनमन्दिर हैं। जहाँ संघ का आवास था, उस जैन कालेज में भी एक जिनमन्दिर तथा सुशोभित मानस्तम्भ है। यात्री हमेशा वहाँ दर्शन-पूजन तथा भक्ति करते थे; इसके अतिरिक्त शहर के दूसरे भी अनेक जिनमन्दिरों के दर्शन किये थे।

मोती कटरा के एक जिनमन्दिर में सात फीट उन्नत गुलाबी पाषाण के खड्गासन स्थित अतिसौम्य मुद्रावन्त श्री महावीरभगवान को देखते ही भक्तजन हर्ष से नाच उठे... और प्रदक्षिणा देते-देते बहुत भक्ति की। पूज्य बहिनश्री-बहिन ने भी 'महावीरा तेरी धुन में आनन्द आ रहा है' इत्यादि सुन्दर भक्ति गवायी थी। आहाहा! इन भगवान की पावन मुद्रा के सन्मुख देखने पर मानो कि भगवान की दृष्टि में से अपने पर आशीर्वाद बरस रहे हों, ऐसी प्रसन्नता होती है। तदुपरान्त बेलनगंज, राजामण्डी इत्यादि में भी अनेक जिनमन्दिरों के दर्शन किये। रोशन मौहल्ला के मन्दिर में (-जो अभी श्वेताम्बरों के अधिकार में है उसमें) शीतलनाथ भगवान की दिगम्बर प्रतिमा विराजमान है। यह प्रतिमा यहाँ बहुत प्रसिद्ध है... उसकी वेदी की कारीगरी बहुत सरस—ताजमहल जैसी है और जैन तथा जैनेतर लोग भी उसे मानते हैं। श्वेताम्बर भाई भी ऐसी की ऐसी इस प्रतिमा को पूजते हैं और दर्शन-पूजन के लिये दिगम्बर भाईयों को भी अधिकार है। यह भव्य दिगम्बर जिनप्रतिमा को यहाँ श्वेताम्बर मन्दिर में देखते ही भक्तों को ऐसा हो जाता है कि अरे! हमारे भगवान यहाँ कहाँ से? वहाँ तो मानो भगवान जवाब देते हैं कि—नहीं, मैं तो मुझे पहिचाननेवाले मेरे भक्तों के हृदय में बसता हूँ। इन भगवान को देखने पर भक्तों को भी ऐसा लगता था कि हे भगवान! जगत में आप चाहे जहाँ विराजते हों—परन्तु आपका स्थान हमारे हृदय में है, हमारे जैसे भक्तों के हृदय में ही आप विराजते हो।....प्रभु! आप हमारे हो... और हम आपके हैं।

जिनमन्दिरों के दर्शनों के बाद आगरा के खास दर्शनीयस्थल—ताजमहल, दयालबाग और लाल किला देखने गये थे परन्तु धर्म रंग से रंगे हुए सन्त और भक्त ने उड़ता अवलोकन करके तुरन्त बाहर निकल गये थे, उनके चित्त को वह कोई वस्तु आकर्षित नहीं कर सकी थी। ताजमहल देखने के बाद गुरुदेव ने 'नूरजहाँ और फकीर' का दृष्टान्त याद किया था : एक था फकीर बाबा; लोगों में नूरजहाँ के रूप की बहुत प्रसिद्धि सुनकर एक बार वे उसका रूप देखने गये... बादशाह की उपस्थिति में नूरजहाँ का रूप देखकर

फकीर बाबा ने उदासभाव से सिर धुन लिया!! बादशाह ने आश्चर्य से पूछा – क्यों सांईं बाबा! क्यों सिर धुनते हो? तब फकीर बाबा कहता है : बादशाह! लोग कहते हैं कि 'बीबी नूरजहाँ का रूप बहुत अच्छा है'—लेकिन वह बादशाह की दृष्टि में होगा। फकीर की दृष्टि में नहीं!!—ऐसा इस ताजमहल का है! ताजमहल के चार कोने सैकड़ों फीट उन्नत खुर्ज हैं। पुराने समय में उन पर चढ़ा जा सकता था परन्तु अभी उसे बन्द कर दिया गया है। इस ताजमहल को देखकर कोई-कोई खास यात्रियों को बालपन में ली हुई ताजमहल की मुलाकात के प्रसंग याद आते थे। आगरा में यात्रियों को याद रह जाए ऐसी कोई वस्तु होवे तो वह वहाँ की जबरदस्त सर्दी! यात्रियों को यहाँ सर्दी का ऐसा अनुभव हुआ कि वे आगरा के ताजमहल को तो कदाचित् भूल जाएँगे परन्तु आगरा की सर्दी को नहीं भूलेंगे।

मुम्बई से प्रस्थान करने के बाद अनेक तीर्थधामों की यात्रा करते-करते और अनेक शहरों के हजारों साधर्मियों का वात्सल्य झेलते-झेलते 25वें दिन आगरा पहुँचे। यहाँ तक पहुँचने में 1100 मील से अधिक प्रवास हुआ। यहाँ तीन दिन का मुकाम था। यात्रियों को प्रवास की थकान कुछ हल्की हुई। मांगीतुंगी के पश्चात अभी तक में यात्रासंघ की सभा कहीं मिली नहीं थी, इसलिए यहाँ यात्रासंघ की खास सभा रात्रि में बुलायी गयी थी, उसमें अभी तक के यात्राप्रवास के अनुभव तथा यात्रियों को प्राप्त सुविधा-असुविधा इत्यादि का अवलोकन करके यात्रियों के योग्य सलाह-सूचनाएँ दी गयी थीं और अब बाद के यात्राप्रवास की व्यवस्था सम्बन्धी संरचना की गयी थी। रात्रि में आगरा की जबरदस्त सर्दी के बाद भी खुले मण्डप में बैठकर पूज्य बहिनश्री-बहिन सभा के कामकाज की रिपोर्ट तथा योग्य सलाह-सूचना देती थीं, उनकी लगन देखकर यात्रासंघ को उत्साह का संचार होता था।

इस प्रकार आगरा शहर का तीन दिन का कार्यक्रम पूरा हुआ था।

★ ★ ★

तीर्थधाम शौरीपुर की यात्रा

माघ शुक्ल 14 के सवेरे पूज्य गुरुदेव ने संघसहित आगरा से शौरीपुर की ओर प्रस्थान किया। आगरा से शौरीपुर की ओर जाते हुए बीच में जमुना नदी के ऊपर दो मंजिल का बड़ा पुल आता है, पुल के नीचे के मंजिल पर जब यात्रियों की बसें गुजर रही थीं, उसी समय ऊपर के मंजिल से ट्रेन भी घनघनाहट करती हुई जा रही थी। मानो कि ऐसे महान यात्रासंघ को अपने में बैठने के बदले मोटरबसों में बैठे देखकर उस ट्रेन को ईर्ष्या होती थी और इसीलिए वह घनघनाहट करती थी; तब कल्याणवर्षिनी मोटर तो अपने में गुरुदेव बैठे हुए होने से आनन्दित होकर मीठे मधुर संगीत गाती-गाती उमंग से नेमिनाथ प्रभु के जन्मधाम की ओर दौड़ी जा रही थी। सौराष्ट्र के नेमिनाथ भगवान की जन्मभूमि में जाने पर सौराष्ट्र के यात्रियों को बहुत हर्ष होता था। श्री नेमिनाथ भगवान की भक्ति करते-करते शौरीपुर आ पहुँचे। यात्रा दौरान तीर्थंकर भगवान की कल्याणक भूमि यह पहली-पहली ही है। कल्याणभूमि में आते ही गुरुदेव को हर्ष हुआ। अहो! यह तो अपने देश के भगवान का ही धाम! गुरुदेव का हर्ष देखकर कल्याणवर्षिनी भी शीघ्रता से उन्हें ठेठ पहाड़ के ऊपर ले गयी।

नेमिनाथ भगवान का यह जन्मधाम आगरा से लगभग 30 मील दूर जमुना नदी के किनारे बहुत शोभायमान हो रहा है और भगवान के जन्मधाम के कारण जमुना नदी भी शोभित हो रही है। आसपास हरियाली झाड़ियाँ तथा पर्वत माला के बीच में होकर पर्वत के ऊपर जाया जाता है। चलकर ऊपर पहुँचने में लगभग आधा घण्टा लगता है। छोटी मोटरें तो ठेठ ऊपर तक पहुँच गयी और बड़ी बसों के यात्री चलकर ऊपर चढ़ गये। चढ़ते-चढ़ते बीच में कोई सुन्दर स्थान देखकर बाल भक्त ऐसा कहते थे कि : ***नेमकुंवर छोटे होंगे तब यहाँ खेले होंगे... और इस धूल में उनके पावन चरण पड़े होंगे!***—ऐसा कहकर उस चरणरज को मस्तक पर चढ़ाते थे—ऐसे आनन्दपूर्वक सब यात्री शौरीपुर तीर्थ पर पहुँच गये और वहाँ मन्दिर में विराजमान श्री नेमिनाथ भगवान के दर्शन किये, मूल मन्दिर में विराजमान नेमिनाथ भगवान के दर्शन करके, गुरुदेवसहित सबने अर्घ्य

चढ़ाया... तत्पश्चात् बगल में दूसरा मन्दिर है, वहाँ जाकर नेमिनाथ भगवान को निहारते ही 'वाह प्रभु वाह!' ऐसे आनन्द उद्गार गुरुदेव के मुख से निकले; बहिनश्री-बहिन तो भगवान के चरणों में झुक गयीं... यह दस फीट उन्नत खड्गासन प्रतिमा परम ध्यानमुद्रा में ऐसी शोभित हो रही है मानो कि साक्षात् भगवान ही अपने सन्मुख खड़े हों! आनन्दरस टपकती अद्भुत उनकी मुद्रा है... मुखमुद्रा में से तो मानो वैराग्य का रस प्रवाहित होता है... और नयनों में से प्रसन्नता का प्रवाह झरता है... ऐसा लगता है। इन भगवान को देखकर गुरुदेव को बहुत प्रमोद आया, थोड़ी देर तक भगवान के सन्मुख बैठकर प्रभुजी की मुद्रा के वीतरागी भावों को निहारा। यात्रा प्रसंग में इतने विशाल भगवंतों को बहुत से यात्रियों ने तो जीवन में पहली ही बार निहारा था, इसलिए वे आश्चर्यचकित थे। बहिनश्री-बहिन तो मानो भगवान के साथ बातें ही करने लग गयीं, भक्तों का मन भगवान के प्रति स्थम्बित हो गया। इस प्रसंग में 'हठीलो छबीलो... रंग भीनो मन लीनो हमारो जी...' इस स्तुति का स्मरण होता था। इन भगवान के समक्ष गुरुदेव ने बहुत रंग से भक्ति करायी—

म्हारा नेमि पिया गीरनारी चाल्या... मत कोई रोक लगाजो... हाँ... मत कोई रोक लगाजो।
लारलार संयम मैं लेशुं मत कोई प्रीत बढ़ाजो हाँ मत कोई प्रीत बढ़ाजो।

यह वैराग्य भरा स्तवन गवाने के बाद यात्रियों की बहुत उमंग देखकर गुरुदेव ने दूसरा स्तवन गवाया। मानो कि अभी ही भगवान संसार से विरक्त होकर गिरनार सिधारे हों... और उसी समय यह स्तवन गाया जाता हो—ऐसी ऊर्मियों से गुरुदेव गवाते थे।

जब चले गये गीरनार मेरे भरतार, हे मेरी सहेली, मैं क्यों रहुं अकेली...
लो आभूषण नहि भाते हे... ये पियु बिन नहि सुहाते हैं;
जब नव भव के साथी ने दीक्षा लेली... मैं क्यों कर रहूँ अकेली....

अहा नाथ! जो परम वैराग्य जीवन आपने अंगीकार किया, हमारे चित्त में भी वही रम रहा है—हमारे मन को वही सुहाता है; इसलिए हम भी आपके पदचिह्नों पर आकर कर्मों का क्षय करेंगे—ऐसे भाव व्यक्त करके गुरुदेव ने भक्ति पूर्ण की। गुरुदेव की इस भावना में सब भक्तों ने भी अति जोर-शोर से जय-जयकार करके साथ दिया; गुरुदेव की भक्ति से प्रसन्न होकर यात्री इतने अधिक उल्लास से जय-जयकार करते थे कि जो यात्री

पीछे रह गये थे और अभी पर्वत चढ़ने की शुरुआत ही करते थे, वे भी दूर-दूर से वह जय-जयकार सुनकर शीघ्र-शीघ्र उस भक्ति में पहुँचने के लिये दौड़ रहे थे।

भगवान के जन्म का पावन धाम, सुप्रभात का समय और पर्वत की टोंच पर विराजमान वैराग्यमूर्ति नेमिनाथ भगवान के सन्मुख गुरुदेव की भावभीनी भक्ति - वैराग्य के साज से सजी हुई यह अपूर्व भक्ति—यह प्रसंग अद्‌भुत था। तत्पश्चात् पूज्य बहिनश्री-बहिन ने भी मानो कि अभी ही त्रिलोकीनाथ भगवान नेमिकुंवर यहाँ जन्मे हों और हम सब उनके जन्म कल्याणक मनाने के लिये ही यहाँ आये हों, ऐसे उमंग भाव से आनन्दपूर्वक भक्ति करायी।

नेमिजिणंदजी का दर्शन पाया... रोम रोम में हर्ष समाया,...
तोरे गुणगणग गमें न्हाया हर्ष भराया जन्म सुहाया;
आनंद आज अपार जिनजी आनंद आज अपार
शौरीपुर की शोभा न्यारी... नेम प्रभुथी पावनकारी,
पुनितचरणथी पावनकारी... आनंद आज अपार जिनजी।
धन्यभूमि धन्य धूल जिणंदा, गर्भ-जन्म हुआ नेम जिणंदका,
केलि करता नेमजिणंदा, सौराष्ट्रदेशे सिद्धि को ध्याया.. आनंद आज अपार

पूज्य बहिनश्री-बहिन हजार नयनों जैसी उत्सुकता से भगवान की मुद्रा के सन्मुख निहार-निहारकर भक्ति की धुन मचा रही हैं, उनके रोम-रोम से भक्ति के सुर उठ रहे हैं... और भक्तजन भक्तिरस से सराबोर होकर बारम्बार आकाश के सन्मुख देखते हैं कि अभी मानो ऊपर से इन्द्र आकर यहाँ रत्नवृष्टि करेंगे! क्या ? यह पंचम काल है, यह बात तो उस समय विस्मृत ही हो गयी थी; यह तो चौथा काल है और चौथे काल में जन्मे हुए भगवान का जन्मोत्सव हम मना रहे हैं—ऐसा ही उस समय का वातावरण था। पूज्य बहिनश्री-बहिन ने प्रत्येक तीर्थधाम के योग्य अनेक नये-नये भाववाही स्तवन रचे थे, इसलिए नवीनता के कारण भक्ति में विशेष आनन्द आता था। :

मनोहर मुद्रा आज नीरखता... रोगशोक सहु दूर ज टलीआ,
आतम में सुखशांति पाया... आनन्द आज अपार जिनजी।

गुरुवरसंगे दर्शन पाया, आतम में आनन्द छवाया,
जन्मसफल मुझ त्रिभुवनराया... आनन्द आज अपार जिनजी।

इस प्रकार भगवान के जन्मधाम में भगवान के जन्म कल्याणक सम्बन्धी महान भक्ति के बाद भगवान का पूजन करके मूल मन्दिर में आये... यहाँ खुदाई कार्य करते हुए अति प्राचीन सैकड़ों प्रतिमाएँ निकली हुई हैं, उनका अवलोकन किया। हजारों वर्ष प्राचीन इन दिगम्बर प्रतिमाओं की मुद्रा अत्यन्त कलामय है... मूल मन्दिर में चार फीट विशाल पद्मासन नेमिनाथ प्रभु विराजमान हैं, वहाँ जन्माभिषेक करके सबने गन्धोदक लिया... और पश्चात् पूज्य बहिनश्री-बहिन ने बहुत भक्तिभाव से पूजा करायी तथा यम, धन्य तथा विमलासुत मुनिवरों की यह सिद्धभूमि होने से, सिद्धपूजा भी करायी।

यह शौरीपुर नेमिनाथ प्रभु के गर्भ-जन्म कल्याणक के कारण तीर्थक्षेत्र है; तथा यम, धन्य तथा विमलासुत—ये तीनों अन्त:कृत केवली भगवन्त भी यहीं से मोक्ष प्राप्त हुए होने से सिद्धक्षेत्र भी है। इस प्रकार अपनी यात्रा दौरान यह सातवाँ सिद्धक्षेत्र है। तदुपरान्त सुप्रतिष्ठित मुनिराज की केवलज्ञान भूमि भी यही है—इन यम, धन्य इत्यादि मुनि भगवन्तों के चरणकमल यहाँ चौक में चार देहरियों में स्थापित है, वहाँ जाकर सबने चरणस्पर्श करके अर्घ्य चढ़ाया।

(धन्य मुनि की कथा संक्षिप्त में इस प्रकार है: विदेहक्षेत्र के वीतशोकपुरी के राजा अशोक को एक बार भयंकर रोग हुआ, और उस रोग की दवा तैयार करके जहाँ उसका सेवन करने जाता है, तभी एक मुनिराज वहाँ पधारे। वे मुनिराज भी ऐसे ही रोग से ग्रसित थे। राजा ने मुनि को आहारदान के साथ-साथ अपने लिये बनायी हुई औषधि का भी दान किया और उस दान के प्रभाव से वहाँ से भरत में अमलकण्ठ नगरी के राजा का पुत्र हुआ, उसका नाम धन्यकुमार! उस धन्यकुमार को एक बार भगवान नेमिनाथ प्रभु का उपदेश सुनने का अवसर प्राप्त हुआ और अपना थोड़ा ही आयुष्य बाकी जानकर, वैराग्यपूर्वक दीक्षा अंगीकार करके मुनि हुए...

श्री धन्य मुनिराज एक बार नेमिप्रभु के जन्मधाम शौरीपुर में जमुना किनारे आकर आतपनयोगपूर्वक ध्यान करते थे, इतने में शिकार के लिये गया हुआ एक राजा वहाँ आ पहुँचा, राजा को आज शिकार नहीं मिला था 'इस नग्न मुनि के कारण ही मुझे शिकार

नहीं मिला'—ऐसा समझकर क्रोधपूर्वक उसने ध्यानस्थ धन्य मुनिराज पर तीर चलाया... परन्तु उसी समय धन्य मुनिराज ने तो वीरतापूर्वक मोह के ऊपर शुक्लध्यानरूपी निरन्तर तीर चलाया और मोह को नष्ट करके तुरन्त ही सिद्धगति को प्राप्त किया। धन्य वे धन्य मुनिराज! इस प्रकार शौरीपुर तीर्थ अन्तःकृत केवली श्री धन्य मुनिराज की सिद्धभूमि भी है।)

यहाँ प्राचीन महल तथा मन्दिरों के अवशेष जमीन की खुदाई में से निकले हुए हैं, उन सबका भावपूर्वक अवलोकन करके गुरुदेव भक्तों के दिखलाते थे।

तदुपरान्त प्रसिद्ध न्यायग्रन्थ 'प्रमेयकमलमार्तण्ड' की रचना भी आचार्य प्रभाचन्द्रस्वामी ने इस पावन भूमि में ही की है। यद्यपि नेमिनाथ प्रभु के जन्म को तो 86000 वर्ष व्यतीत हो गये हैं तथापि भगवान की यह जन्मभूमि देखने पर वह प्रसंग मानो अभी ताजा ही बना हुआ हो, ऐसा लगता था।

इस प्रकार आनन्द से शौरीपुर तीर्थधाम की यात्रा करके यात्री वहाँ पर्वत पर उत्सव मनाने बैठे... मानो कि भगवान के जन्म की खुशहाली में समुद्रविजय महाराज के महल में ही उत्सव करते हों, ऐसा आनन्द हुआ... इस तीर्थधाम में गुरुदेव को जीमाने का लाभ पूज्य बहिनश्री-बहिन, नेमीचन्दजी पाटनी इत्यादि को मिलने से उन्हें बहुत प्रसन्नता हुई थी। नेमिप्रभु की इस भूमि में विचरते हुए भक्त कहते थे कि : अपने तो भगवान के गाँव में आये हैं और भगवान के मेहमान हुए हैं। भगवान के पवित्र चरणों का असर अभी भी मानो इस भूमि में वर्त रहा है—ऐसा यहाँ का सुन्दर वातावरण है। भगवान का जन्मोत्सव मनाने के लिये इन्द्र यहाँ आये होंगे, छोटे से नेमिकुंवर देवकुमार के साथ इस भूमि में ही खेले होंगे और पश्चात् यहीं से बारात बनाकर राजुलमति को वरण करने के लिये सौराष्ट्र देश में (जूनागढ़) पधारे होंगे...

शौरीपुर में ब्याहन आये स्वामी नेमकुमार...
मोह तोड़कर दीक्षाधारी जाय चढ़े गीरनार... सांवरीया०

सौराष्ट्र के यात्री नेमिनाथ प्रभु को सम्बोधन करके कहते हैं : हे नाथ! आप इस शौरीपुर में से विवाह के लिये हमारे सौराष्ट्र देश में पधारे... परन्तु हमने तो अतिशय भक्ति

के कारण आपको सौराष्ट्र में ही रख लिया। हे नाथ! हमारे आँगन में पधारे, फिर हम आपको वापस कैसे जाने देंगे!! प्रभो! अब आज हम सौराष्ट्र में से आपके आँगन में आये हैं.... तो आप भी अब हमें ठेठ सिद्धपद तक साथ का साथ ही रखना.... इस प्रकार भगवान की प्रार्थना करते-करते और जय-जयकार गजाते-गजाते सब नीचे उतरे और शौरीपुर तीर्थधाम की यात्रा पूर्ण हुई।

शौरीपुर तीर्थधाम में विराजमान नेमिनाथ प्रभु को नमस्कार।

शौरीपुर से सिद्धि प्राप्त करनेवाले सिद्ध भगवन्तों को नमस्कार।

शौरीपुर तीर्थधाम की यात्रा करानेवाले कहान गुरुदेव को नमस्कार॥

बटेश्वर

'पूज्य श्री कानजीस्वामी दिगम्बर जैन तीर्थयात्रा संघ' का यह वर्णन चल रहा है। शौरीपुर तीर्थ की यात्रा पूर्ण करके बटेश्वर आये; शौरीपुर के पर्वत की तलहटी में ही यह बटेश्वर है, यहाँ दिगम्बर जैन धर्मशाला में ही जिनमन्दिर है, उसमें विराजमान श्री अजितनाथ इत्यादि भगवन्तों के दर्शन किये। लगभग 800 वर्ष प्राचीन इन अजितनाथ भगवान की प्रतिमाजी की रचना ऐसी कलामय है कि दूर से देखने पर उनके ही हृदय में उनका ही छोटा प्रतिबिम्ब हो, ऐसा दिखता है, यह देखकर भक्तों को आनन्द होता है— 'परमात्मा के हृदय में परमात्मा' देखकर ऐसा लगता है कि 'हृदय में इस प्रकार परमात्मा को ध्या-ध्याकर हम परमात्मा हुए हैं'—ऐसा वे भगवान बतला रहे हैं।

यह धर्मशाला ठीक जमुना नदी के तीर पर ही है, धर्मशाला के नीचे के दो मंजिल का भाग तो जमुना के पानी में दबा हुआ है। इस प्रकार धर्मशाला को स्पर्शित करके ही प्रवाहित जमुना नदी मानो कि जिनेन्द्र भगवान का जन्माभिषेक करना चाहती हो, ऐसा लगता है। एक-दो वर्ष पहले ही (संवत् 2011 में) पूर से गांडीतुर होकर पूरे दिल्ली जैसे शहर को भी भयभीत कर देनेवाली यह जमुना नदी यहाँ प्रभुजी के चरण में तो उपशान्त बन गयी है! ऐसी जमुना किनारे जिनमन्दिर के दर्शन करके वहाँ से वापिस आगरा आये और शाम को भोजनादि के बाद वहाँ से प्रस्थान करके यात्री रात्रि में चौरासी—मथुरा पहुँच गये। पूज्य गुरुदेव रात्रि में आगरा में ही सेठ मगनमलजी के यहाँ रुक गये और बगल में जिनमन्दिर में तत्त्वचर्चा हुई थी, उसमें अनेक भाई जिज्ञासापूर्वक समयसार सम्बन्धी प्रश्न पूछते थे। दूसरे दिन सवेरे गुरुदेव आगरा से प्रस्थान करके मथुरा पधारे।

मथुरा सिद्धक्षेत्र की यात्रा

माघ शुक्ल पूर्णिमा

इस भरतक्षेत्र के अन्तिम सर्वज्ञ श्री जम्बुस्वामी के निर्वाणधाम मथुरा नगरी में गुरुदेव के पधारने पर भक्तों ने स्वागत किया... पश्चात् धूमधाम सहित मंगल गीत गाते-गाते यात्रियों सहित गुरुदेव जिनमन्दिर में पधारे। सुन्दर जिनमन्दिर में भगवान श्री जम्बुस्वामी के बहुत प्राचीन चरणकमल विराजमान हैं, वहाँ गुरुदेव ने अत्यन्त भावपूर्वक चरण स्पर्श किया। अहा, नाथ! आप इस क्षेत्र के अन्तिम केवली हुए.... आप मोक्षपुरी में पधारे और भरतक्षेत्र में से केवलज्ञान भी आपके साथ ही ले गये.... तथापि हे नाथ! हमारे जैसे भव्य शिष्यजनों के लिये आपके दिव्यज्ञान-आनन्द की प्रसादी आप यहाँ छोड़कर गये हैं। आपके चरणचिह्नों से अभी भी मोक्षमार्ग जयवन्त वर्तता है, आपके दोनों चरण पकड़कर हम भी आपके पीछे-पीछे आपके मार्ग में आ रहे हैं.... ऐसे भावोंपूर्वक गुरुदेव ने इन अन्तिम केवली प्रभु का स्पर्शन किया और भक्तिपूर्वक सबने अर्घ्य चढ़ाया.... श्री जम्बुस्वामी इस भरतक्षेत्र के अन्तिम कामदेव और अन्तिम केवली थे, वे यहाँ से मोक्ष प्राप्त हुए हैं। इस प्रकार जम्बुस्वामी का यह सिद्धिधाम अपनी यात्रा का यह आठवाँ सिद्धक्षेत्र है। यहाँ से जम्बुस्वामी के साथ महामुनि विद्युत् (पहले जो विद्युत्‌चोर था वह) इत्यादि पाँच सौ मुनिवर भी मोक्ष प्राप्त हुए हैं, उनको भी अर्घ्य चढ़ाया। मन्दिर में श्री अजितनाथ भगवान के प्राचीन प्रतिमाजी मूलनायक रूप से विराजमान हैं.... उनका भी दर्शन करके अर्घ्य चढ़ाया।

जिनके दर्शन करने से ही भक्तों के हृदय में आनन्द की ऊर्मि जागृत हो ऐसे श्री सप्तर्षि मुनिभगवन्तों की हार-माला भी यहीं इस मन्दिर में ही विराजमान है। अहा, एक साथ खड़े हुए सात मुनिभगवन्तों की शोभा अद्‌भुत है, सातों ही मुनिवर मानो कि सातवें गुणस्थान के ही निर्विकल्प आनन्द में झूल रहे हों—ऐसी उनकी मुद्रा है। मुनिसुव्रत भगवान के तीर्थ में राजा रामचन्द्रजी के बन्धु श्री शत्रुघ्न जब इस मथुरा नगरी के राजा थे, तब एक बार बैर से प्रेरित होकर चमरेन्द्र ने पूरी मथुरा नगरी में भयंकर महामारी का उपद्रव किया। वह उपद्रव चल रहा था कि इतने में ही श्रीमनु, स्वरमनु, निचय, सर्वसुन्दर,

जयवान, विनयलालस और जयमित्र—ये सात गगनविहारी चारणऋद्धिधारी मुनिवर (सप्तर्षि भगवन्त) मथुरा नगरी में पधारे और इनकी ऋद्धि के प्रभाव से महामारी का उपद्रव एकदम शान्त हो गया, इसलिए समस्त नगरजनों ने अति भक्तिपूर्वक इन सप्तर्षि भगवन्तों की पूजन की; इस प्रसंग की स्मृति में आज भी यहाँ सप्तर्षि भगवन्तों की सुन्दर प्रतिमाएँ शोभित हो रही हैं। इन सप्तर्षि के दर्शन से पूज्य गुरुदेव को, पूज्य बहिनश्री-बहिन को और समस्त यात्रियों को बहुत आनन्द हुआ और सबने बारम्बार इन दिगम्बर सन्तों के पुनीत चरणों में झुक-झुककर शीश झुकाया। गुरुदेव कहते हैं—वाह! देखो तो सही इन मुनियों का दिखाव!! एक साथ सात मुनिवर कैसे शोभित हो रहे हैं!! लाओ, अर्घ्य चढ़ायें!

— ऐसा कहकर गुरुदेवसहित सब यात्रियों ने उन मुनिवरों के चरणों में अर्घ्य चढ़ाया।

श्री मनु-आदि ऋद्धिधारक मुनिन की पूजा करूँ,
ताकरि पातक हरे सारे, सकल आनन्द विस्तरूँ।

ॐ ह्रीं श्री मथुरा सिद्धक्षेत्र में विराजमान मनु आदि सात ऋद्धिधारक श्रुतकेवली मुनिश्वराय चरणकमल पूजनार्थे अर्घ्य निर्वपामिति... स्वाहा।

तत्पश्चात् इस जिनमन्दिर के अन्दर चौक में ही गुरुदेव का सुन्दर प्रवचन हुआ। प्रवचन में मथुरा जिनमन्दिर जैन समाज के अग्रगण्य तथा राजा भगवानदासजी, विमलाबेन और जैनसन्देश के भूतपूर्व सम्पादक पण्डित बलभद्रजी इत्यादि उपस्थित थे। तदुपरान्त दिल्लीवाले सेठ श्री रघुवीरदयालजी तथा प्रेमचन्दजी इत्यादि भी यहाँ आये थे और गुरुदेव को दिल्ली पधारने के लिये विनती की थी।

जिनमन्दिर में भावभीना प्रवचन करते हुए गुरुदेव ने कहा कि—"**यह चैतन्यस्वरूप आत्मा वह आनन्द का मन्दिर है। उसमें एकाग्रता द्वारा सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्ररूप वीतरागता प्रगट होती है, वही वास्तविक अहिंसाधर्म है। ऐसे आनन्दमन्दिर में प्रवेश करके चैतन्य का ध्यान कर-करके जम्बुस्वामी इत्यादि यहाँ से मोक्ष प्राप्त हुए हैं। अरे! विद्युत्—जो कि पहले बड़ा चोर-पाँच सौ चोरों का सरदार था, वह भी चैतन्य का ध्यान कर-करके यहाँ से मोक्ष प्राप्त हुआ। वह विद्युत्चोर पहले राजकुमार था परन्तु फिर बड़ा चोर हो गया—पाँच सौ चोरों का सरदार! वह एक बार जम्बुकुमार के महल**

में चोरी करने आया था, उस समय जम्बुकुमार उसी दिन विवाहित उनकी चार रानियों के साथ वैराग्य से सवेरे दीक्षा लेने की बात कर रहे थे; विद्युत्चोर ने भी उनके साथ बहुत चर्चा की... अन्त में जम्बुस्वामी के वैराग्य से प्रभावित होकर वह भी वैराग्य को प्राप्त हुआ और पाँच सौ चोर सहित उसने भी जम्बुस्वामी के साथ दीक्षा अंगीकार की... वे सब केवलज्ञान प्राप्त करके यहाँ से मुक्ति प्राप्त हुए हैं। देखो तो सही, कहाँ चोर के परिणाम! और कहाँ मोक्षदशा! चैतन्य में मोक्ष प्राप्त करने की बेहद सामर्थ्य भरी है। जम्बुस्वामी इस भरतक्षेत्र में अन्तिम केवली हुए। तत्पश्चात् अनुबद्धकेवली नहीं हुए, तथापि आत्मा में केवलज्ञान की सामर्थ्य पड़ी है, उसकी प्रतीति करके सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्ररूप धर्म इस काल में भी हो सकता है।''

सभा के आनन्द के बीच मथुरा नगरी में गुरुदेव कहते हैं : **'देखो न, यहाँ सप्तर्षि की कैसी प्रतिमा हैं! अहा! उन्हें देखते ही ऐसा लगता है कि वाह! मुनि तो ऐसे ही होते हैं, जिन्हें देह पर वस्त्र का धागा भी नहीं होता और अन्तर में चैतन्य के आनन्द में झूलते हों। अहा! उस मुनिदशा की क्या बात! वह तो परमेष्ठी पद है।'**

प्रवचन पूर्ण होते ही स्वागत प्रवचन करते हुए पण्डित बलभद्रजी ने कहा :—

आज इस मथुराक्षेत्र में पूज्य कानजीस्वामी को इतने बड़े संघसहित देखकर मुझे बहुत हर्ष हो रहा है। स्वामीजी यहाँ पधारे इनके लिये मथुरा की जनता की ओर से मैं स्वामीजी का व संघ का आभार मानता हूँ। आज यहाँ पर ऐसा महान सम्मेलन देखकर हम सबको बहुत हर्ष होता है।

जैसे भगवान नेमिनाथ ने उत्तर से पश्चिम में जाकर के (शौरीपुर से सौराष्ट्र में आ करके) धर्म का सन्देश सुनाया, वैसे आज इतने वर्षों के बाद वही सन्देश स्वामीजी के द्वारा वहाँ से हमको यहाँ वापस मिल रहा है, यह हमारा बड़ा भाग्य है। पूर्वाचार्यों ने उत्तर का सन्देश दक्षिण की ओर भेजा, वही सन्देश आज दक्षिण से फिर उत्तर की ओर आ रहे हैं। इस तरह सौराष्ट्रप्रान्त के साथ पहले से ही हमारा सम्बन्ध चलता रहा है। हमारी समझ में नहीं आता कि कुछ लोग इनके विरोध की बात क्यों करते हैं? वे तो हमारे मेहमान हैं, हमें उनका वात्सल्यपूर्वक स्वागत और सन्मान करना चाहिए। प्रवचन में हमने देखा कि स्वामीजी की दृष्टि अन्तर की है। हमने कभी इस पद्धति से स्वाध्याय-मनन नहीं किया,

यह जो नवीन दृष्टिकोण प्राप्त हुआ है, इस हेतु हम स्वामीजी के आभारी है।

यह अन्तिम केवली जम्बुस्वामी का निर्वाणक्षेत्र है, इसी पवित्रधाम में आज हम बैठे हैं। यह मथुरा बहुत पुरानी ऐतिहासिक नगरी है। सातवें तीर्थंकर सुपार्श्वनाथ की स्मृति में यहाँ पर एक सुवर्णस्तम्भ बनाया गया था, उसका प्रमाण पार्श्वनाथ भगवान के समय से मिलता है, उस वक्त उस स्तम्भ को ईंटों से चुन लिया था। यहाँ के म्यूजियम में दूसरी शताब्दी के एक शिलालेख में उसको 'देवनिर्मित आयातस्तम्भ' के रूप में उल्लेख किया गया है। इसके सिवाय जम्बुस्वामी के साथ उनके विद्युत् आदि 500 अनुयायी यहाँ से मोक्ष पधारे उनकी यादी में भी यहाँ 500 स्तम्भ बनाये जाने का उल्लेख मिलता है। ऐसी ऐतिहासिकनगरी में हम आपका फिर से स्वागत करते हैं।

पण्डितजी ने स्वागत प्रवचन बहुत भाव से किया था, उसमें भी उत्तर का सन्देश पश्चिम में और पश्चिम का सन्देश उत्तर में – ऐसे एक–दूसरे के सम्बन्ध का जब उन्होंने हर्षपूर्वक उल्लेख किया, तब सभा को बहुत आनन्द हुआ था, तथा गुरुदेव द्वारा स्वाध्याय –मनन का नया दृष्टिकोण प्राप्त होने की बात की, उसमें भी पण्डितजी की जिज्ञासा तथा गुरुदेव के प्रति प्रेम ज्ञात होता है।

जिनमन्दिर में गुरुदेव के प्रवचन के पश्चात् पूज्य बहिनश्री–बहिन ने भक्ति करायी:

आवो आवोजी... हां हां आवो आवोजी जैनजगसारे। जम्बुस्वामी सिद्ध भये।
गुण गावोजी... हां हां... गुण गावोजी सकल नरनारी। जम्बुस्वामी मोक्ष गये।

धन्य धन्य ब्रह्मचारी भूषण प्रबल प्रतापी नेता,
अर्हदास जिनमति के नंदन (2) पावन जीवन सारा... आवो आवोजी।

परमवैरागी मुनिपदधारी, रत्नत्रय आराधा,
आतमध्यानी, क्षायक ज्ञानी (2) आठों कर्म विजेता... आवो आवोजी०

केवलज्ञान की ज्योति विस्तारी, दोष समूल नशाये,
अन्तिम केवली जम्बुस्वामी (2) भव से पार लगाये... आवो आवोजी०

सिद्धालय में आप विराजो, शाश्वत आनन्दकारी,
विद्युत को भी पार लगाये (2) नितप्रति ढोक हमारी... आवो आवोजी०

चौरासी-मथुरा की भूमि पर चरण प्रभु का सोहे,
परम वैरागी जम्बुस्वामी (2) देख प्रभु मन मोहे... आवो आवोजी०
दूर दूर से यात्री आकर यात्रोत्सव मनावे,
कहानगुरु साथ दर्शन पाकर (2) अतिशय हर्षित होवे... आवो आवोजी०

बहुत उल्लासपूर्वक जम्बुस्वामी की भक्ति के बाद सप्तर्षि मुनिवरों की भक्ति गवायी:

मैं परम दिगम्बर साधु के गुण गाऊं रे...
मैं शुद्ध उपयोगी संतन को नित ध्याऊं रे...
मैं पंच महाव्रत धारी को शिर नाऊं रे...
मैं सात चारणमुनि चरणों को नित पाऊं रे...
मैं ऋद्धिारी मुनिवर को नित ध्याऊं रे...
भवरोग मिटावन हारे को नित ध्याऊं रे...
मैं रत्नत्रय के धारक संत को वंदुं रे...
मथुरा में रोग प्रगटते, चौफर अशान्ति प्रसरते;
पावन मुनीन्द्र चरण से समाधि होती रे...
ऋद्धिधारी मुनीन्द्र चरण से शान्ति होती रे...
मथुरा से मुनिवर सिद्धिधाम को पाया रे...
मथुरा नगरी को तीरथधाम बनाया रे...
गुरुजी प्रतापे सेवक दर्शन पाया रे...

अहा! इन सप्तर्षि भगवन्तों की उल्लास भरी भक्ति अद्‌भुत थी, एक साथ सात श्रुतकेवली मुनिवरों को देख-देखकर बहिनश्री-बहिन का आत्मा उन सन्तों के प्रति भक्ति से उल्लसित हो जाता था। आज भी सोनगढ़ में से उत्तर दिशा के आकाश में 'सप्तर्षि' को देखते ही उत्तरप्रदेश (मथुरा) के उन सप्तर्षि भगवन्तों का स्मरण होता है। साथ-साथ में वहाँ की अद्‌भुत भक्ति भी याद आती है और वह भक्ति देखकर मानो आकाश के सप्तर्षि -तारे भी लबक-झबक करते हुए हँसते हों ऐसा लगता है! इतना ही नहीं, सम्यक्‌भक्ति से आकर्षित होकर मानो वे सप्तर्षि मुनिभगवन्त सोनगढ़ पधारे हों, ऐसा उनका अतिभाववाही दृश्य सोनगढ़ जिनमन्दिर में शोभ रहा है।

भजन के बाद यात्री भोजन करने बैठे। जिनमन्दिर के सामने के चौक में ही भोजन करते हुए यात्रियों का वातावरण उमंग भरा था। यहाँ जिनमन्दिर के सामने के चौगान में मानस्तम्भ तैयार हो गया है, परन्तु अभी उसमें जिनबिम्ब प्रतिष्ठा होना शेष है। धर्मशाला भी वहीं है और वहाँ बगल में ही कुँए पर रहंट चलता होने से यात्रियों को धोने की सुविधा मिल गयी थी।

दोपहर को तत्त्वचर्चा के बाद सायंकाल म्यूजियम (पुरातत्त्व संग्रह) देखने जाना था परन्तु गुरुदेव की 'कल्याणवर्षिनी' मोटर तैयार नहीं थी, कल्याणवर्षिनी के बदले तुरन्त ही 'सत्सेविनी' मोटर उपस्थित हो गयी... और दस-बारह भक्तों सहित गुरुदेव पहली ही बार 'सत्सेविनी' में बैठकर म्यूजियम में आ पहुँचे। म्यूजियम में एक 'आयागपट्ट' है, जिसके ऊपर का जैन शिलालेख लगभग 2200 वर्ष प्राचीन है। दूसरे एक प्रतिमाजी लगभग 2000 वर्ष प्राचीन है। हजार-डेढ़ हजार वर्ष प्राचीन तो अनेक प्रतिमाएँ हैं और यहाँ से एक मील पर स्थित 'कंकाली टीला' नाम की जगह में से खुदाई करते हुए सैकड़ों प्रतिमाएँ मिल जाती हैं। यह सब प्राचीन दिगम्बर जिनप्रतिमाएँ हजारों वर्ष पहले के जैन वैभव की आज भी प्रसिद्धि कर रही हैं। यह जैन पुरातत्त्व देखने पर गुरुदेव को ऐसा लगता था कि अहो! 2000 वर्ष पहले के दिगम्बर जिनप्रतिमाएँ यहाँ हैं। इतिहास भी साक्षी देता है कि दिगम्बर जैनधर्म कितना प्राचीन है! ऐसी कहावत है कि शत्रुघ्न के पुत्र 'शूरसेन' के नाम से इस प्रदेश का नाम 'शौरसेन' पड़ा है।

मथुरा से चार-पाँच मील दूर 'वृन्दावन' है; यह वैष्णवों का मुख्य धाम! कहते हैं कि यहाँ कृष्ण के हजारों मन्दिर हैं, तब जैनों का मन्दिर एक ही है, जैसे हजारों तारों के वृन्द के बीच एक ही चन्द्र शोभता है, उसी प्रकार इन हजारों कृष्ण मन्दिरों के बीच छोटा-सा एक ही जिनमन्दिर शोभ रहा है, वृन्दावन के मुख्य मन्दिर में एक स्वर्णजड़ित स्तम्भ के उपरान्त दूसरा बहुत साज है।

वृन्दावन देखने के पश्चात् गोकुल भी देखने गये थे; गोकुल अर्थात् मीराबाई का धाम! पूज्य बहिनश्री-बहिन जब गोकुल की गलियों में वैराग्य का भजन गाते-गाते घूम रही थीं, तब ऐसा लगता था कि जैनधर्म की सच्ची मीराबहिन तो यही रहीं! कि जिनका

अन्तर रग-रग में वीतराग प्रभु की भक्ति से रंगा हुआ है। पूज्य बहिनश्री चम्पाबेन छोटी थीं, तब बालपन में भी कितने ही भजन बोलती थीं, वह भजन यहाँ जमुना नदी के तीर गोकुल की कुंज गली में घूमते-घूमते याद आते थे।

वृन्दावन और गोकुल देखकर पश्चात् मथुरा शहर देखने गये थे। मथुरा के बाजार लम्बे हैं और उसके बगल में ही जमुना नदी बह रही है। यहाँ श्री विजय स्टेट में (विमला बहिन के बंगले में) गृहचैत्य है। उसमें विराजमान भगवान की पंच कल्याणक प्रतिष्ठा सोनगढ़ में मानस्तम्भ के प्रतिष्ठा महोत्सव के समय गुरुदेव के सुहस्त से हुई थी; उसके भी दर्शन किये तथा दूसरे एक जिनमन्दिर के भी दर्शन किये।

सायंकाल जम्बुस्वामी के निर्वाणधाम में उत्साहपूर्वक आरती हुई।

धन्य धन्य आज घड़ी कैसी सुखकार है...
जम्बुस्वामी धाम देखा... जम्बुस्वामी धाम है,
सप्तर्षि भगवान देखा... सप्तर्षि भगवान है;
गुरुजी की साथ यात्रा... गुरु की साथ है।

खुशियां अपार आज हर दिल में छाई है,

यात्रा के हेतु सब जनता अकुलाई है.. जनता अकुलाई है,
निशदिन आता है नया तीर्थधाम है...
यात्रा उत्सव आज देखो... यात्रा उत्सव आज है
गुरुजी की साथ यात्रा गुरुजी की साथ है।

भक्ति से नृत्यगान कोई है कर रहै,
आतमसुबोध कर पापों से डर रहे... पापों से डर रहै,
पलपल पुण्य का भरे भंडार है...

यात्रा उत्सव आज देखो... यात्रा उत्सव आज है,
गुरुजी की साथ यात्रा... गुरुजी की साथ हैं।

जिनमन्दिर में आरती के बाद श्री सप्तर्षि भगवन्तों के सन्मुख पूज्य बहिनश्री-बहिन शान्ति से बैठे-बैठे मुनिवरों को ध्याती थीं और भक्ति करती थीं, तभी तो दूसरे अनेक भक्त

एकत्रित हो गये और पूज्य बहिनश्री–बहिन ने दो स्तवन गवा कर विशेष भक्ति करायी—

(1) ओ साधु हृदय मम वसीयोजी... मेरे पातक हरीयो जी....

(2) धन्य मुनीश्वर आतमहित में... छोड़ दिया परिवार कि तुमने छोड़ा सब घरबार...
धन्य जम्बुमुनि आतमहित में... छोड़ दिया परिवार कि तुमने छोड़ा सब घरबार...
बाल ब्रह्मचारी जम्बुस्वामी जाना जगत असार कि तुमने छोड़ा सब घरबार...
महावैरागी जम्बुस्वामी क्षण में त्यागी नार कि तुमने क्षण में त्यागी (चार) नार।

ज्ञान दर्शन चारित्र को ध्याया, केवलज्ञान को शीघ्र मिलाया;
चिदानन्द चेतन का प्रगटा, सिद्धस्वरूप रूप हो पाया;
तुम चरणों से सोहे आजे मथुरा सिद्धिधाम... कि धन धन जम्बु मुनिभगवान।

धन्य दिवस आजे सुखकारा, जम्बुस्वामी का दर्शन पाया;
चरम केवलज्ञानी को पाया, अंतर में आनंद उभराया,
मथुरा से प्रभु पाया तुमने पावन सिद्धिधाम कि तुमने पाया सिद्धिधाम...
मथुरानगरी तुझ प्रतापे हो गई सिद्धिधाम... कि तुमने पाया सिद्धिधाम...
कहानगुरु साथ आवी सेवक वंदे बारंबार कि तुमने पाया सिद्धिधाम।

बहुत उल्लास भरी धुन से यह स्तवन गवाया था। सात मुनि भगवन्तों के सन्मुख अद्भुत भक्ति देखकर भक्त आश्चर्य को प्राप्त होते थे। तत्पश्चात् अजितनाथ प्रभु के निकट, जम्बुस्वामी के चरण विराजते हैं, वहाँ भी बहुत भक्ति की थी।

दूसरे दिन सवेरे जिनमन्दिर में ही जम्बुस्वामी का तथा सप्तर्षि भगवन्तों का उल्लासपूर्वक समूह पूजन हुआ था। उसमें सप्तर्षि मुनिभगवन्तों की पूजा का रंग तो अलग ही था। पूजन के पश्चात् गुरुदेव इत्यादि ने जिनमन्दिर की अगाशी के ऊपर से मथुरानगरी के आसपास के उद्यानों का अवलोकन किया। तब गुरुदेव के हृदय में उन मुनिभगवन्तों का स्मरण जागृत होता था और इसलिए उनका चित्त वैराग्यरस से भींग जाता था। तत्पश्चात् भोजन करके बहुत से यात्रियों ने आगरा होकर फिरोजाबाद की ओर प्रस्थान किया। पूज्य गुरुदेव शाम को विमलाबेन के यहाँ भोजन करके आगरा पधारे और रात्रि को वहाँ रुककर दूसरे दिन सवेरे फिरोजाबाद की ओर प्रयाण किया। कितने ही बालभक्तों को मथुरा में ही रात्रि में रुकना पड़ा था। वहाँ रात्रि में जिनमन्दिर में बहुत ही

भक्ति की थी, जम्बुस्वामी के चरण समीप कितनी ही बहिनों ने भक्तिपूर्वक रास भी लिया था, तथा सात मुनि भगवन्तों के समीप शान्ति से भक्ति भावना करती थीं। दूसरे दिन सवेरे प्रस्थान करके फिरोजाबाद पहुँच गये थे।

इस प्रकार आठवें सिद्धक्षेत्र मथुरा नगरी की मंगल यात्रा पूरी हुई।

भारत के अन्तिम सर्वज्ञ श्री जम्बुस्वामी को नमस्कार।
मथुरा सिद्धक्षेत्र से मुक्ति प्राप्त सिद्ध भगवन्तों को नमस्कार।
मथुरा क्षेत्र में विराजमान भवरोग विध्वंसक सप्तर्षि भगवन्तों को नमस्कार।
मथुरा तीर्थधाम की यात्रा करानेवाले कहान गुरुदेव को नमस्कार।

★ ★ ★

मथुरा से प्रस्थान करने पर भी यात्रियों के दिल में मथुरा के जम्बुस्वामी विस्मृत नहीं होते थे, इसलिए बस में बैठे-बैठे जम्बुस्वामी को स्मरण कर-करके भक्ति करते थे... मानो कि साक्षात् जम्बुस्वामी के समीप जाकर सिद्धि का मार्ग पूछते हों और जम्बुस्वामी उत्तर देते हों, ऐसे भाव से भक्ति गाते थे।

[भक्त कहते हैं:]

मथुरामां मुक्ति तमे पाम्या हो जम्बु! क्यांथी मुक्ति पाम्या?
क्यांथी मुक्ति पाम्या प्रभु! केवी रीते पाम्या... मथुरामां...
अनादिकालना कर्मसंबंधने, केम करी छेदी ते नाख्या हो... जम्बु०
भक्तजनों ने केवल विरहमां, मुकी मुकी केम तमे चाल्या... हो जम्बु०

[जम्बुस्वामी जवाब देते हैं।]

मथुरानगरीना चोराशीधाममां, अपूर्व सिद्धि अमे पाम्या... हो भक्त... सिद्धिधाम पाया।
निजस्वरूपनुं ध्यान करीने, कर्मबंधन छेदी नांख्या... हो भक्त.... सिद्धिधाम पाया।

[गुरुदेव को सम्बोधन करके भी गाते]

मथुरा मां जात्रा करी आव्या, हो कान! क्यां क्यां जई आव्या ?
क्यां क्यां जई आव्या... प्रभु! शुं शुं जोई आव्या ?... मथुरा मां०

[और गुरुदेव मानो कि जवाब देते हैं—]

सिद्धवरकूटना सिद्ध प्रभु ने, नौकाविहार करी भेटया... हो भक्त... जात्रा...
मथुरानगरीमां सप्तर्षिनाथने भावे करीने अमे भेटया... हो.. भक्त... जात्रा...

[भक्त प्रसन्न होकर कहते हैं—]

'वाह वा!' ...गुरुजी! नौकाविहारनी, 'वाह वा!' ये सिद्धकूटधाम... हो कान...

— इस प्रकार यात्रा को आनन्दपूर्वक स्मरण करके भक्ति करते-करते फिरोजाबाद पहुँच गये।

फिरोजाबाद

फाल्गुन कृष्ण दूज

सवेरे पूज्य गुरुदेव के फिरोजाबाद आ पहुँचने पर दिगम्बर जैन समाज ने बहुत भव्य स्वागत किया। सेठ श्री छदामीलालजी की अगुवाई में पाँच-छह हजार लोगों ने उमंगता से स्वागत में भाग लिया। पण्डित राजेन्द्रकुमारजी इत्यादि हाथ में झण्डा लेकर गुरुदेव के आगे चलते थे। जगह-जगह रंग-बिरंगी पुष्पवृष्टि होती थी। संघ की 30-40 मोटरें और मोटरबसें भी झण्डों से शृंगारित कर स्वागत यात्रा में साथ-साथ ही चल रही थी, इस प्रकार स्वागत बहुत प्रभावशाली और उत्साह भरा था। गुरुदेव का ऐसा महान प्रभाव नजरों से निहारकर दिगम्बर जैन समाज को तथा नगरी की जनता को भी आश्चर्य होता था। स्वागत यात्रा घूमते-घूमते सेठ छदामीलालजी के जैन बाग में आयी और वहाँ गुरुदेव ने भावभीना मंगल प्रवचन किया। अब अपने सेठ छदामीलालजी का और उनके जैन बाग का थोड़ा परिचय देते हैं—

थोड़े वर्ष पहले सेठ छदामीलालजी तथा दिल्लीवाले लाला राजकिशनजी यात्रा प्रवास करते-करते सोनगढ़ आये थे; सोनगढ़ में गुरुदेव के दर्शन से उन्हें बहुत प्रसन्नता हुई थी और गुरुदेव को प्रार्थना करते हुए कहा था कि : 'महाराज! आप हमारे प्रान्त की ओर पधारिये; एक बार शिखरजी की यात्रा के लिये अवश्य हमारे देश की ओर पधारिये।' यह उस समय तो वे औपचारिक विनय के लिये कहते हैं, ऐसा लगा था, परन्तु वास्तव में गुरुदेव जब फिरोजाबाद पधारे, तब उनके हृदय की भावनापूर्वक बहुत ही उत्साह और प्रेमपूर्वक गुरुदेव का और संघ का स्वागत किया और तब ही खबर पड़ी कि उन्हें गुरुदेव के प्रति कितनी अधिक भावना है! सोनगढ़ में ताजा ही बना हुआ भव्य मानस्तम्भ देखकर उन्हें बहुत आनन्द हुआ था और फिरोजाबाद में भी ऐसा ही मानस्तम्भ बनाने के लिये अपने खास कारीगरों को वह मानस्तम्भ नजरों से देख आने और उसका नक्शा करने के लिये सोनगढ़ भेजा था। अभी सोनगढ़ जैसा ही मानस्तम्भ फिरोजाबाद में वे बना रहे हैं। उसकी पीठिका के एक चित्र में उन्होंने पूज्य गुरुदेव की प्रवचन सभा का दृश्य उत्कीर्ण किया है और उसमें गुरुदेव के प्रति स्वयं (छदामीलालजी सेठ) नमस्कार कर रहे हैं-यह दृश्य बताकर गुरुदेव के प्रति खास भक्तिभाव उन्होंने व्यक्त किया है। कितने ही वर्ष पहले फिरोजाबाद

में सेठ छदामीलालजी की ओर से एक खास 'जैन संस्कृति सम्मेलन' आयोजित किया था, उस समय लगभग 35000 लोगों की सभा में राजकोट पंच कल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव की फिल्म बतायी गयी थी और सेठ श्री छदामीलालजी ने उस प्रसंग पर रुपये 20,00000 (बीस लाख) जिनमन्दिर तथा जैन संस्कृति सम्बन्धी कॉलेज इत्यादि के लिये खर्च करने की घोषणा की थी। तद्नुसार इस जैन बाग में एक विशाल जिनमन्दिर, उसके सन्मुख भव्य मानस्तम्भ, धर्मशाला, कॉलेज, पुस्तकालय इत्यादि अभी तैयार हो रहे हैं, सब तैयार हो जाने पर बहुत भव्य दर्शनीय दृश्य होगा। (इस जिनमन्दिर, मानस्तम्भ इत्यादि का कार्य सम्पूर्ण हो जाने पर संवत् 2018 के मगशिर महीने में प्रतिष्ठा का भव्य पंच कल्याणक महोत्सव मनाया गया था, जिसमें यात्रियों को रहने के लिये लगभग पाँच हजार डेरा-तम्बू थे तथा बिजली की शानदार रोशनी के लिये साठ हजार बल्ब और एक हजार ट्यूबलाईट थी। जन्म कल्याणक के समय आठ हाथी, डेढ़ लाख जनता उपस्थित थी।)

मंगल प्रवचन के बाद 'श्री कानजीस्वामी दिगम्बर जैन सरस्वती भवन' का उद्घाटन गुरुदेव के शुभहस्त से कराया था और उसमें गुरुदेव के हस्त से सोनगढ़ से प्रकाशित जैन बालपोथी इत्यादि कितनी ही पुस्तकें रखी गयी थीं। इस प्रसंग पर रंग-बिरंगे पुष्पों की बहुत ही वृष्टि करके लोगों ने अपना बहुत हर्ष व्यक्त किया था। तत्पश्चात् श्री पी.डी. जैन इण्टर कॉलेज के विशेष आमन्त्रण से गुरुदेव वहाँ पधारे थे; वहाँ गुरुदेव का सम्मान करके अभिनन्दन-पत्र अर्पण किया गया था; गुरुदेव ने प्रवचन करके 'सम्यक् विद्या अर्थात् आत्मविद्या' का स्वरूप दर्शाया था। गुरुदेव के पधारने से तथा उनका सन्देश सुनने से कालेज के अध्यापक और सैकड़ों विद्यार्थी बहुत प्रसन्न हुए थे; अभिनन्दन-पत्र में अपनी प्रसन्नता व्यक्त करते हुए लिखा था कि :—

आपके शोधपूर्ण एवं ठोस अध्ययन तथा अनुभव ने अध्यात्म जगत में एक युगान्तर ही उपस्थित कर दिया है। भारतवर्ष सहस्रों वर्षों से सन्त भूमि है, परन्तु आत्मतत्त्व की इतनी मौलिक, जगन्मोहिनी एवं रसवती व्याख्या, जिनका निर्विरोधरूप से सर्वत्र स्वागत हुआ हो, अद्यावधि कम ही हुई है।....आपके निर्विकार व्यक्तित्व के सन्मुख उग्र विरोधक व्यक्ति भी नत हो, सेविका बनने में ही आनन्दानुभव करता है।

यहाँ एक 'रत्नत्रय मन्दिर' है; इस जिनमन्दिर में सुन्दर कमल के ऊपर श्री शीतलनाथ भगवान विराजमान हैं; पाँच फीट की पद्मासन प्रतिमाजी का दिखाव बहुत ही

भव्य है—शीतलनाथ प्रभु की मुद्रा में से मानो चैतन्यरस का शीतल झरना बह रहा है। जिनदेव के बगल में प्रभु कुन्दकुन्दाचार्यदेव परमगुरु का बड़ा भव्य चित्रपट है, यह देखकर कहानगुरु और सोनगढ़ के सब भक्तजनों को विशेष आनन्द हुआ। यह जिनदेव और परमगुरु के उपरान्त यहाँ श्री जिनवाणी-शास्त्रजी की भी प्रतिष्ठा है। इस प्रकार वीतरागी देव-गुरु-शास्त्र इन तीन रत्नों की स्थापना होने से इस जिनमन्दिर को 'रत्नत्रय मन्दिर' नाम दिया है। इस रत्नत्रय मन्दिर के दर्शन करने से भक्तों को बहुत आनन्द हुआ। तदुपरान्त यहाँ दूसरे भी आठ-दस जिनमन्दिर हैं, उनके भी दर्शन किये।

जैनबाग में जो भव्य मन्दिर तैयार हो रहा है, उसका कितना ही भाग तैयार हुआ है, मन्दिर के साथ ही एक विशाल हौज है और पश्चात् मानस्तम्भ है; हौज में रंग-बिरंगी लाइटें लगायी गयी हैं, इसलिए उसमें मन्दिर और मानस्तम्भ के प्रतिबिम्ब दिखने से बहुत भव्य दृश्य लगता है। जो जिनमन्दिर बनता है, उसका एक मिट्टी का नमूना बनाकर एक हॉल में रखा गया है, वह नमूना भी एक छोटे से जिनमन्दिर जैसा लगता है। इसके अतिरिक्त जैनबाग में—कि जहाँ संघ का आवास था, वहाँ गर्म पानी के नल, पानी के छोटे झरने, तैरने की हौज इत्यादि भी थी। मुसाफिरी से थका हुआ संघ दोपहर को नहाने-धोने में रुका था, उस समय का दृश्य नदी किनारे जैसा था। पूज्य गुरुदेव का भोजन सेठ छदामीलालजी के यहाँ हुआ था। सेठानीजी भी बहुत उत्साही थी, तथा पूज्य बहिनश्री-बहिन का विशेष परिचय होने से उन्हें सोनगढ़ के प्रति विशेष प्रेम था। मन्दिर इत्यादि के दर्शन कराने में भी वे साथ की साथ ही रहती थीं। संघ के सब यात्रियों के भोजन की व्यवस्था भी सेठ छदामीलालजी की ओर से बहुत प्रेमपूर्वक की गयी थी। दोपहर को यात्री बाजार देखने गये थे। यहाँ के बाजार में खास देखने योग्य हो तो वह चूड़ियों का ढेर! फिरोजाबाद अर्थात् चूड़ियों का धाम। दुकान-दुकान में और घर-घर में जहाँ देखो वहाँ लाखों-करोड़ों चूड़ियाँ नजर पड़ती है... साढ़े तीन सौ चूड़ियों का बण्डल मात्र एक रुपये में मिलता है। यात्रियों ने लगभग एक लाख चूड़ियाँ यहाँ से खरीदी होंगी। यहाँ काँच की वस्तुओं के अनेक कारखाने हैं। दिगम्बर जैनों की आबादी लगभग पाँच हजार है।

दोपहर दो बजे गुरुदेव के अभिनन्दन समारोह में अनेक प्रतिष्ठित व्यक्तियों ने भावपूर्ण भाषण द्वारा श्रद्धांजलि अर्पित की थी। श्रीमान् पण्डित श्री राजेन्द्रकुमारजी ने श्रद्धांजलि अर्पण करते हुए कहा कि—***पूज्य कानजीस्वामी के आगमन से हमारी नगरी***

को हम धन्य समझते हैं। आज हमको उल्लास और आनन्द का प्रसंग है। स्वामीजी के आध्यात्मिक सिद्धान्त मात्र हमारे लिये ही नहीं, अपितु हमारे राष्ट्र और विश्व के लिये बड़ी उपयोगी चीज़ है। आज ऐसे महापुरुष के समागम से हम सब धन्य हैं। हमारी नगरी में कुछ अविचारी लोगों ने विरोध की जो चेष्टा की, उसके लिये हमें खेद है और हम क्षमा चाहते हैं। फिर जब आप दिल्ली पधारे, तब यहाँ का प्रोग्राम ज्यादा रखने की प्रार्थना करते हैं।

पण्डितजी के इस प्रवचन में हजारों लोगों की पूरी सभा ने हर्षनादपूर्वक अपना सुर मिलाया था। तत्पश्चात् 'श्री महावीर जयन्ती सभा' की ओर से अभिनन्दन-पत्र दिया गया था। पाँच-छह हजार लोगों की सभा में अभिनन्दन विधि के बाद पूज्य गुरुदेव का प्रवचन हुआ था। गुरुदेव का प्रवचन सुनकर फिरोजाबाद शहर के हजारों श्रोताजन बहुत हर्षित हुए थे। प्रवचन के दौरान सेठ छदामीलालजी बारम्बार अपना उत्साह व्यक्त करते थे।

लोगों को गुरुदेव के प्रवचन में आने से रोकने के लिये कितने ही व्यक्तियों ने प्रवचन के समय विरोधसभा आयोजित की, परन्तु फिरोजाबाद के सुज्ञ दिगम्बर जैन समाज ने उसमें भाग नहीं लिया था। विरोधसभा में मुश्किल से 100-200 लोग थे, जबकि उसी समय गुरुदेव की प्रवचनसभा में पाँच से छह हजार लोग थे। प्रवचन के पश्चात् यात्री जिनमन्दिर के दर्शन करने गये थे। इस ओर वाहनरूप से रिक्शा का बहुत प्रचार है। जहाँ देखो वहाँ यात्रियों को रिक्शा दिखायी देता था। लगभग दस जिनमन्दिर हैं, एक पंचायती मन्दिर में श्री चन्द्रप्रभ भगवान के स्फटिक के सवा फीट के विशाल प्रतिमाजी विराजमान हैं। वे बहुत प्राचीन हैं और लगभग 100 वर्ष पहले जमुना नदी में से प्राप्त हुए हैं। एक स्थल पर दस फीट के बाहुबली भगवान के बहुत सुन्दर प्रतिमाजी हैं। इस प्रकार अनेक जिनमन्दिरों के दर्शन किये। पंचायती मन्दिर में दर्शन करने के लिये पूज्य गुरुदेव शाम को गये थे।

रात्रि में धर्मशाला में सब यात्री 'किसने कौन-कौन से मन्दिर देखे' इसकी परस्पर चर्चा करते थे। चर्चा करते-करते चन्द्रप्रभ की एक सुन्दर प्रतिमाजी की प्रशंसा हुई। वह सुनते ही, जिन्होंने उसके दर्शन नहीं किये थे ऐसे भक्तों का मन उन भगवान के दर्शन के लिये बहुत लालायित हुआ और इसलिए वे तो भगवान के दर्शन के लिये उठने लगे। बहुत खोजते-खोजते रात्रि में ग्यारह बजे उस मन्दिर में पहुँचे, परन्तु मन्दिर तो बन्द!

भक्तों ने भगवान को आवाज लगाकर जय-जयकार किया... यह सुनते ही 'यात्री दर्शन के लिये आये हैं'—ऐसा जानकर बगल में से तुरन्त व्यवस्थापक भाई दौड़ते आये और मन्दिर तो खोला परन्तु अन्दर निज मन्दिर की चाबी वहाँ नहीं थी। अब क्या हो! मानतुंग मुनि की स्तुति के बल से जेल के ताले जैसे टूट गये उसी प्रकार यहाँ भी भक्तों की अतिशय भक्ति देखकर व्यवस्थापकों ने नकुचा तोड़-तोड़कर द्वार खोल दिया। और इस प्रकार भक्तों को दर्शन कराये। अहा! चार फीट के चन्द्रबिम्ब जैसे उज्ज्वल चन्द्रप्रभ को देखते ही भक्तों को अति हर्ष हुआ। 'मानो अभी भगवान बोलेंगे!' ऐसी अद्भुत उनकी मुद्रा है। ठीक सोनगढ़ के सीमन्धर प्रभु जैसी ही मुद्रा है। उनके दर्शन करते हुए मानो कि सोनगढ़ के सीमन्धर प्रभु के ही दर्शन कर रहे हों—ऐसा लगता था। उन भगवान के दर्शन करके बहुत-बहुत भक्ति की। वहाँ से वापिस मुड़ने की तैयारी करते थे, परन्तु भक्ति देखकर प्रसन्न हुए वहाँ के भाई कहते हैं कि नहीं; अभी और भी भक्ति करो, हमें आपकी भक्ति को देखना है। उन्होंने नकुचा तोड़कर दर्शन कराया था इसलिए उनकी प्रार्थना को इनकार कैसे किया जा सकता है! शान्त रात्रि फिर से भक्ति के नाद से गाज उठी और बहुत भक्ति करके, यहाँ के भगवान ने इस प्रकार दर्शन दिये, उसकी 'वाहवा जी वाहवा' करते-करते यात्री धर्मशाला में आये।

फाल्गुन कृष्ण तीज को सवेरे पूज्य गुरुदेव ने संघसहित फिरोजाबाद से मैनपुरी की ओर प्रस्थान किया। थोड़ी देर में बीच में शिकोहाबाद आया। यहाँ पूज्य गुरुदेव की मोटर रोककर दिगम्बर जैन समाज ने हाथ में झण्डा लेकर जय-जयकारपूर्वक स्वागत किया और गाँव के जिनमन्दिर में ले गये। वहाँ शीतलनाथ भगवान के दर्शन करके गुरुदेव ने वहाँ से प्रस्थान किया। तत्पश्चात् संघ की दूसरी मोटरों को भी चाय-पानी के लिये वहाँ रोका। यात्रियों ने जिनमन्दिर के दर्शन करके चाय-पानी पिया। लगभग सब मोटरें आ गयीं परन्तु अभी 'सत्सेविनी' मोटर क्यों नहीं आयी ? इसकी भक्त चिन्ता करते थे। वहाँ तो ठीक उसी समय सत्सेविनी का सुर सुनायी दिया... और पूज्य बहिनश्री-बहिन को देखते ही सब भक्त हर्षित हुए... और संघ की सभी मोटरों ने वहाँ से आगे प्रस्थान किया। गुरुदेव की कल्याणवर्षिनी तो शीघ्र से कहीं आगे निकल गयी थी और सर्व प्रथम मैनपुरी पहुँच गयी थी।

★ ★ ★

मैनपुरी

फाल्गुन कृष्ण तीज

पूज्य गुरुदेव मैनपुरी पधारते ही वहाँ के दिगम्बर जैन समाज ने बहुत उत्साहपूर्वक स्वागत किया। यह वही मैनपुरी है कि जहाँ आज से लगभग दस वर्ष पहले (वीर संवत् २४७३ में) श्री जैन साहित्य सभा ने पूज्य गुरुदेव की कल्याणकारी वाणी के प्रति अति प्रेम के कारण, उस वाणी का पूरी दुनिया में प्रचार हो—ऐसी भावना से, सोनगढ़ में रेडियो ब्राडकास्टिंग स्टेशन स्थापित करने के लिये प्रस्ताव पास किया था। वह प्रस्ताव निम्नानुसार था।

85, मियाना स्ट्रीट
मैनपुरी, दिनांक 14 जून 1957

श्री जैन साहित्य सभा—मैनपुरी ऐसा प्रस्ताव करती है कि स्वर्णपुरी सोनगढ़ में एक वायु प्रवचन स्थान (Bioadcasting station) स्थापित किया जाए, जिसके द्वारा वर्तमान समय के उत्कृष्ट जैनतत्त्ववेत्ता श्री कानजीस्वामी के परमोपकारी आध्यात्मिक प्रवचन सम्पूर्ण जगत को सहजता से मिल सकें, जिससे जगत के मुमुक्षुओं का कल्याण हो।

(सर्वानुमत से पारित)

महेताबचन्द्र जैन
मन्त्री
श्री जैन साहित्य सभा, मैनपुरी

जैसे उत्साह से यह प्रस्ताव किया था, वैसे ही उत्साह से वहाँ के जैन समाज ने गुरुदेव का स्वागत किया था। इन्दौर की तरह इस ओर के प्रत्येक नगर में, अरे! बीच में आनेवाले छोटे-छोटे गाँवों में भी, दिगम्बर जैन समाज ने बहुत वात्सल्य से सोच से भी

(मैनपुरी के उपरोक्त प्रस्ताव अनुसार सोनगढ़ में ब्रॉडकास्टिंग स्टेशन होना तो सम्भवित दिखायी नहीं देता, परन्तु इस प्रस्ताव की प्रेरणा से गुरुदेव के सैकड़ों प्रवचनों का रेकार्डिंग हुआ और उसके द्वारा देश-विदेश के मुमुक्षु मशीन पर घर बैठे गुरुदेव के प्रवचन सुन सकते हैं।)

अधिक उत्साह से स्वागत किया। गुरुदेव के साथ इतने बड़े प्रभावक संघ को देखकर जगह-जगह जैन समाज को आश्चर्य और आनन्द होता था। गुरुदेव का स्वागत पंचायती जिनमन्दिर में आया, वहाँ दर्शन करने के बाद मन्दिर के चौगान में गुरुदेव ने मंगल प्रवचन किया। मैनपुरी में नौ जिनमन्दिर ऊँचे-ऊँचे शिखरों से शोभित हो रहे हैं और उनमें माणिक, पन्ना इत्यादि के जिनबिम्ब विराजते हैं, वहाँ यात्रियों ने दर्शन किये। भोजन के बाद शाम के लिये पाथेय लेकर यात्रियों ने प्रस्थान की तैयारी की। मोटर बसें गाँव के बाहर रखी हुई थी और वहाँ से यात्री गाँव में आये थे, उस दौरान कितनी ही मोटर बसें आगे-पीछे चली गयीं। भोजनोपरान्त संघ को आगे का प्रोग्राम बतलाना था परन्तु संघ की मोटर बसें कहाँ हैं, इसका पता ही नहीं लगता, इसलिए बहुत देर तक उसकी खोज चली। अनेक यात्रियों को पूछा-तुम्हारी बस कहाँ? सब कहते : हमें खबर नहीं। भोजन करके तुरन्त जाना था इसलिए यात्री जल्दी अपनी-अपनी बस में पहुँच जाने के लिये चल दिये, जहाँ बस देखे, वहाँ यात्री जाए, परन्तु जाकर देखे तो दूसरे की बस निकले! इस प्रकार दोपहर की धूप में अनजाने-अनजाने अपनी-अपनी बस को खोजने के लिये यात्री एक के बाद एक बस पर घूमते थे। 'बस पर लेट पहुँचूँगा और कहीं वह रवाना हो जाएगी तो!'—ऐसे भय से किंचित् आकुलित यात्री अन्त में साईकिल रिक्शा कर-करके थोड़ी देर में अपनी-अपनी बस में पहुँच गये और तुरन्त कानपुर की ओर प्रस्थान किया।

मैनपुरी में दोपहर को गुरुदेव ने जिनमन्दिर के चौगान में प्रवचन किया। यहाँ दिगम्बर जैनों के लगभग 150 घर हैं। उन सबने उत्साह से भाग लिया था, तदुपरान्त आसपास के गाँवों से भी बहुत लोग यहाँ आये थे। प्रवचन के बाद यहाँ के युवक समाज ने गुरुदेव के प्रति अभिनन्दनरूप भाषण दिया। तत्पश्चात् तुरन्त गुरुदेव ने वहाँ से कन्नौज की ओर प्रस्थान किया था।

आगे संघ की मोटर बसें चली जा रही थीं, वहाँ गुरुदेव की मोटर भी आ पहुँची, और चलते प्रवास में गुरुदेव के दर्शन हुए। कभी-कभी इस प्रकार से वन-जंगल में बीच में दौड़ती मोटर में गुरुदेव के दर्शन हो जाते, तब भक्त एकदम हर्ष से जय-जयकार करके वातावरण गजा देते थे और गुरुदेव भी हँसते-हँसते मीठी नजर करके शीघ्रता से आगे निकल जाते। यहाँ गुरुदेव की मोटर निकलते ही यात्रियों ने अपनी बस उसके पीछे दौड़ा

दी। 'पार लगा पार लगा पार लगाना... ओ नाथ मेरी बस चली पार लगाना'—ऐसी जोशदार धुन गाते-गाते पचास मील की रफ्तार से गुरुदेव की मोटर के साथ के साथ कितने ही मील तक दौड़े... यद्यपि 'कल्याणवर्षिनी' चेत गयी थी इसलिए वह शीघ्रता से दौड़ती थी, परन्तु भक्त गुरुदेव का साथ कैसे छोड़ें! इसलिए उनकी बसें भी उतनी ही शीघ्रता से दौड़ती थीं। नजर के सन्मुख ही गुरुदेव की मोटर दौड़ रही हो और पीछे अपनी बस दौड़ रही हो, ऐसे प्रसंग में गुरुदेव के साथ के साथ मुसाफिरी करते हुए यात्रियों को बहुत हर्ष होता था।

आगे जाने पर कन्नौज और कानपुर का, ऐसे दो रास्ते अलग पड़ते थे। यात्रियों की बस तो कानपुर की ओर चली गयी। और गुरुदेव की मोटर कन्नौज की ओर गयी परन्तु 'अभी भी भक्त मेरे पीछे आते होंगे' ऐसे भय के कारण वह कल्याणवर्षिनी लगभग पचास मील आगे दौड़ गयी और दूसरे रास्ते चढ़ गयी, इसलिए उसे पचास मील वापस आना पड़ा; इस प्रकार गुरुदेव को सौ मील की अधिक यात्रा हुई और रात्रि में कन्नौज पहुँचे। कन्नौज जाते हुए बीच में छिबरामऊ गाँव में गुरुदेव ने भोजन किया। कन्नौज में दिगम्बर जिनमन्दिर शोधकर दर्शन किये तथा रात्रि में तत्त्वचर्चा हुई थी। गुरुदेव रात्रि को वहीं रुके थे।

अब कानपुर की ओर आगे बढ़ रहे यात्रियों की मोटरबसों में से एक बस (नं. 2991) अधबीच में रुक गयी, कड़क सर्दी में यात्रियों को अधबीच ही रहना पड़ा और उनके रक्षण के लिये बगल के गाँव से पुलिस की व्यवस्था करनी पड़ी। इस बस के यात्री ठेठ दूसरे दिन शाम को दूसरी बस में कानपुर पहुँचे थे। पूरा दिन न मिले भोजन और न मिले चाय-पानी; साथ के नाश्ते से जैसे-तैसे पूरा दिन सबने चला लिया और कानपुर पहुँचे कि तुरन्त वहाँ से लखनऊ की ओर जाना हुआ। ऐसा होने पर भी यात्रा की धुन में यह भी एक नवीन अनुभव गिनकर यात्रियों ने हिल-मिलकर यात्रा सम्बन्धी चर्चा-भक्ति इत्यादि में समय व्यतीत किया था।

दूसरे यात्री बीच में वन में भोजन करके उसी दिन रात्रि को कानपुर पहुँच गये थे। यात्रा प्रवास में किसी समय शहर में या जंगल में चाहे जहाँ मोटर भले अटक पड़ती और चाहे जहाँ वन-जंगल में रात्रि में या दिन में रुक जाना पड़ता, किसी समय पूरी रात यात्रा

होती, यात्रा में ऊँचे-नीचे रास्ते के झटके भी लगते, खाने-पीने की और सोने की भी कहीं कठिनाई पड़ती; यह सब होने पर भी यात्रा का ध्येय होने से यात्रियों को आनन्द और उत्साह रहता था। सबको ऐसा लगता था कि यात्रा तो ऐसी ही होती है। सभी साधर्मी साथ में होने से, कभी रात्रि में जंगल में रुक जाना पड़े तो भी कठिनाई के बदले एक प्रकार का मजा आता था और यात्रा के प्रसंग के समय भी नयी-नयी भक्ति इत्यादि के प्रसंग से वातावरण आनन्दमय बन जाता और कठिनाई विस्मृत हो जाती। इस प्रकार यात्रा प्रवास आनन्द से चलता था और यात्रियों को ऐसा भी लगा कि ट्रेन की अपेक्षा इस प्रकार मोटर द्वारा यात्रा में अधिक आनन्द आता और प्रत्येक स्थल में जाने-आने की सुगमता रहती; मोटर बसें ही घर जैसी बन गयी थी। इसलिए सामान के सम्बन्ध में भी निश्चिन्तता रहती थी।

कानपुर

फाल्गुन कृष्ण चौथ सवेरे आनन्दपूर्वक श्री जिनमन्दिर में दर्शन-पूजन करके यात्री गुरुदेव के स्वागत के लिये तैयार हो गये; कानपुर जैन समाज के उत्साही भाई भी संघ की और स्वागत की व्यवस्था में रुके हुए थे और विगत दिन पूरी रात मेहनत करके गुरुदेव के प्रवचन के लिये विशाल मण्डप तैयार किया था। कानपुर की सोलह लाख की आबादी में लगभग पाँच हजार दिगम्बर जैन हैं। पूज्य गुरुदेव के कानपुर पधारने पर वहाँ के जैन समाज ने तथा यात्रियों ने सुन्दर स्वागत किया। एक डॉक्टर के बंगले में गुरुदेव का आवास था और प्रवचन के लिये मण्डप भी वहीं था। बीच में जिनमन्दिर के दर्शन करते-करते मण्डप में आकर गुरुदेव ने मंगल प्रवचन सुनाया। यहाँ पाँच-छह जिनमन्दिर हैं। एक बड़े मन्दिर में पंच बालब्रह्मचारी भगवन्तों के प्रतिमाजी का दृश्य सुन्दर है तथा काँच का काम तथा सुनहरी कारीगरी भी बहुत है तथा एक छोटी सी स्वर्ण प्रतिमा भी है। संघ का आवास तथा भोजन व्यवस्था एक धर्मशाला में थी। वहाँ यात्री जब भोजन करते थे तब बरसात की झरमर आती थी और भीने चौक में बैठे-बैठे यात्री भोजन करते थे। गर्म कपड़ों के लिये कानपुर प्रसिद्ध है; आगरा की कड़क सर्दी से डरे हुए यात्रियों ने यहाँ से हजारों रुपये के कपड़ों की खरीदी की। इसलिए सर्दी तो डरकर भाग ही गयी, वह फिर कहीं दिखायी ही नहीं दी। यहाँ के वयोवृद्ध पण्डितजी दोपहर को गुरुदेव के पास आये थे और गुरुदेव द्वारा दिगम्बर जैनधर्म की ऐसी महान प्रभावना देखकर आनन्द व्यक्त किया था। वे बहुत संस्कृत में बोलते थे और लगभग आधे घण्टे चर्चा की थी। दोपहर को गुरुदेव का प्रवचन ढाई से साढ़े तीन था परन्तु आश्रम की बस तो उससे पहले ही, कितने ही यात्रियों को छोड़कर लखनऊ की ओर रवाना हो गयी थी। गुरुदेव का प्रवचन सुनकर जनता को बहुत हर्ष हुआ था। पहले के कार्यक्रमानुसार कानपुर में दो दिन रखे गये थे किन्तु बाद में परिवर्तन हो जाने से एक ही दिन रखा जाने से कानपुर के जिज्ञासुभाई जरा हताश हुए थे और यात्रा के बाद वापस मुड़कर कानपुर को फिर से लाभ प्रदान करने की विशिष्ट आग्रह भरी प्रार्थना की थी, जिसे स्वीकार किया गया था। प्रवचन के बाद कानपुर के दिगम्बर जैन समाज की ओर से गुरुदेव को अभिनन्दन-पत्र प्रदान किया गया था। रात्रि में तत्त्वचर्चा चली थी। गुरुदेव रात्रि को यहीं रहे थे। यात्रियों ने दोपहर को यहाँ से लखनऊ की ओर प्रस्थान किया था।

लखनऊ शहर

बहुत से यात्री शाम को लखनऊ आ गये थे। सम्पूर्ण शहर में निकलकर गाँव के दूसरे छोर पर आवास था, उसे खोजने में देरी लगी। यात्रियों ने बस में बैठे-बैठे ही शाम का भोजन कर लिया और फिर मन्दिर देखने गये। किसी भी शहर में जाएँ तो यात्रियों का पहला काम वहाँ के जिनमन्दिर देखना। लखनऊ शहर बहुत बड़ा होने पर भी, उसके कितने ही मन्दिर तो एकदम सकड़ी गहरी-गहरी गलियों में हैं। इसलिए अनजाने यात्रियों को रात्रि में जाने में कठिनाई पड़ती है। कोई-कोई यात्री मार्ग भूल जाते... ऐसी कठिनाईपूर्वक मार्ग व्यतीत कर जब भगवन्तों के दर्शन होते, तब बहुत आनन्द होता। एक मन्दिर खोजते-खोजते लगभग दो मील दूर निकल गये, तब भगवान के दर्शन हुए। इस ओर रिक्शा का प्रचार बहुत है; यात्रासंघ का मुकाम जिस गाँव में हो, उस गाँव में जहाँ देखो वहाँ यात्रियों से भरे हुए रिक्शा घूमते दिखायी दें। जिनमन्दिर के दर्शन करने इत्यादि प्रसंग में यात्री एकसाथ जब रिक्शा में हारबन्द निकलें तब तो मानों कि यात्रियों का रिक्शा जुलूस निकला! कभी पूज्य बहिनश्री-बहिन भी रिक्शा में बैठतीं। इस ओर रिक्शा इतने अधिक हैं—कहते हैं कि अकेले लखनऊ शहर में बाईस हजार रिक्शा चलते हैं। चुनाव का प्रसंग होने से किसी-किसी समय तो हजार-हजार रिक्शा का झुण्ड जैसा मिलता। यहाँ संघ का निवास जैनबाग में था, बहुत से यात्रियों की मोटर रात्रि को देरी से आयी थी। जैनबाग में विशाल धर्मशाला है, तदुपरान्त एक सुन्दर जिनमन्दिर है, वहाँ अति उपशान्तमूर्ति पार्श्वनाथ प्रभु के दर्शन होने से यात्रियों की अकुलाहट शान्त हो जाती थी। अहा! मानो भगवान के सन्मुख बैठे रहकर भगवान की मुद्रा निहारते ही रहें... और भगवान के साथ वीतरागता की बातें किया ही करें—ऐसा होता था... वहाँ भक्तों ने भक्ति की। पूज्य गुरुदेव तथा पूज्य बहिनश्री-बहिन, मुरब्बी रामजीभाई, ब्रजलालभाई, हिम्मतलालभाई, नेमीचन्दभाई, चन्दुभाई इत्यादि तो अभी कानपुर रुके हैं, वे तो कल सवेरे आनेवाले हैं, इसलिए यात्री सवेरे गुरुदेव का स्वागत करने की भावना भाते-भाते सो गये।

फाल्गुन कृष्ण पंचम : सवेरे नहा-धोकर जिनेन्द्रपूजन करके, गुरुदेव के स्वागत

के लिये यात्रासंघ के बिल्ला (बैज) लगाकर सब यात्री तैयार हो गये; लखनऊ का दिगम्बर जैन समाज भी स्वागत के लिये तैयार हो गया था। और सब गुरुदेव के पधारने का इन्तजार कर रहे थे, तभी सत्सेविनी ने आकर बधाई दी कि गुरुदेव पधार रहे हैं! थोड़ी ही देर में 'कल्याणवर्षिनी' का मधुर हॉर्न सुनायी दिया कि तुरन्त स्वागत बैण्ड ने भी जोरदार सुर द्वारा सलामी दी। अनेक भक्त गुरुदेव को पुष्पवृष्टि से बधाते थे और स्वागत मन्त्री ने संघ के पाँच सौ के पाँच सौ यात्रियों को पुष्पमाला पहनाकर स्वागत किया था। जैनबाग धर्मशाला में आकर जिनमन्दिर में दर्शन करने के बाद, वहीं विशाल हॉल में गुरुदेव का मंगल प्रवचन हुआ। दोपहर को भी वहीं प्रवचन हुआ था। प्रवचन में कानपुर का कोलाहल यात्रियों को याद रह गया था। प्रवचन का स्थान शहर से दो मील दूर था और चुनाव चल रहे थे, तो भी प्रवचन में डेढ़-दो हजार लोग आये थे। प्रवचन के बाद बहिनश्री-बहिन ने सुन्दर भक्ति करायी थी।

तत्पश्चात् गुरुदेव सहित बहुत यात्री शहर के जिनमन्दिरों के दर्शन करने तथा पुरातत्त्व संग्राहलय देखने के लिये गये। संघ की अनेक मोटरें लाईन से चली जा रही थीं, उसमें 'सत्सेविनी' और 'कल्याणवर्षिनी' ये दोनों साथ में होने से भक्ति और ज्ञान के सुमेल का सुन्दर वातावरण सृजित हो गया था, उसे देखकर भक्त आनन्दित थे। 'चौक' के जिनमन्दिर में नेमनाथ प्रभु के अतिशय भाववाही प्रतिमा विराजमान है, वहाँ दर्शन करके गुरुदेवसहित सबने अर्घ्य चढ़ाया, वहीं दूसरे भी अनेक भगवन्त विराजमान हैं, उनके भी दर्शन किये। तत्पश्चात् दूसरे भी कितने ही जिनमन्दिरों में दर्शन करके पुरातत्त्व संग्रहालय में आये। इस संग्रहालय में दिगम्बर जैनधर्म के बहुत प्राचीन अवशेष दृष्टिगोचर होते हैं। कितने ही प्रतिमाजी तो बहुत ही विशाल, हजारों वर्ष प्राचीन और अति प्रशान्त मुद्राधारक हैं। यह सब देख-देखकर गुरुदेव यात्रियों का भी ध्यान आकृष्ट करते और कहते कि 'यह वस्तु नोंध लेने जैसी है; देखो, इतिहास भी दिगम्बर जैनधर्म की प्राचीनता की साक्षी देता है...' संग्रहालय में मात्र जिनबिम्ब ही नहीं परन्तु जैनधर्म के अनेक प्राचीन शिलालेख आयागपट्ट—ताम्रपट् पर विध-विध प्रकार के मण्डल इत्यादि अनेक वस्तुएँ हैं। गुरुदेव के साथ यह सब दिगम्बर जैनधर्म का प्राचीन वैभव देखकर सबको हर्ष हुआ। रात्रि में तत्त्वचर्चा हुई थी।

फाल्गुन कृष्ण छठ के सवेरे दर्शन-पूजन के बाद जिनमन्दिर में समूहभक्ति हुई थी। यहाँ के दिगम्बर जैन समाज की ओर से यात्रासंघ के प्रति बहुत वात्सल्य दर्शाया गया था और संघ के भोजनादि की व्यवस्था भी उनकी ओर से की गयी थी। सवेरे की भक्ति के पश्चात् यात्री शहर देखने गये तथा खरीदी करने लगे थे। यह लखनऊ शहर बहुत पुराना है; कहते हैं कि लंका विजय की यादगिरि में लक्ष्मणजी ने यह शहर बसाया था और लक्ष्मणजी के नाम से लखनऊ नाम पड़ा है। यहाँ धर्मशाला में बन्दर भी बहुत थे और बारम्बार यात्रियों के पास आकर छेड़खानी करते-करते जो वस्तु हाथ में आवे, उसे उठाकर ले जाते और किसी समय वह वस्तु वापिस भी रख जाते।

दोपहर को भोजन करके और शाम के लिये पाथेय लेकर संघ ने यहाँ से अयोध्या नगरी की ओर प्रस्थान किया। आनन्दपूर्वक अयोध्या नगरी जाते हुए बीच में वन-जंगल के रमणीय दृश्य आते थे, उन्हें देखकर प्रसन्नता होती थी। मंगल गीत गाते-गाते और किल्लोल करते-करते मानो कि अयोध्यापुरी में भगवान का जन्म कल्याणक मनाने के लिये जाते हों, ऐसे सब शीघ्रता से जा रहे थे, तभी तो बीच में 'रत्नपुरी' आयी और संघ की मोटरें तथा बसें रुक गयीं। जैसे इन्द्र का सिंहासन डोलने पर 'क्या है! क्या है!' करते हुए इन्द्र को आश्चर्य होता है और भगवान के जन्म कल्याणक की खबर पड़ते ही आनन्द से सिंहासन के ऊपर से उतरकर वन्दन करता है, उसी प्रकार बसें खड़ी रहते ही 'क्या है! क्या है!' ऐसे आश्चर्य में पड़े हुए भक्तों को जहाँ खबर पड़ी कि 'अरे! यह तो धर्मनाथ भगवान का जन्मधाम'—कि तुरन्त ही जय-जयकार करते हुए भक्त बस में से उतरकर उस जन्मधाम की वन्दना के लिये दौड़ पड़े।

रत्नपुरी तीर्थधाम की यात्रा

फाल्गुन कृष्ण छठ

यह रत्नपुरी धर्मनाथ भगवान की जन्मभूमि है, इसलिए तीर्थधाम है। सरयु के किनारे आये हुए इस रत्नपुरी धर्मधाम में कितने ही यात्रियों सहित पूज्य गुरुदेव लगभग ढाई बजे आ पहुँचे थे; साथ में सेठ श्री खीमचन्दभाई, छगनलालभाई तथा फूलचन्दभाई इत्यादि की मोटरें भी पहुँच गयी थीं और उन्हें पूज्य गुरुदेव के साथ रत्नपुरी में धर्मनाथ भगवान के जन्मधाम की यात्रा से बहुत हर्ष हुआ था। भक्त कहते थे कि 'धर्म' की यह रत्नपुरी की यात्रा की भाँति, अनन्त धर्मों से भरपूर शाश्वत रत्नपुरी समान हमारा जो आत्मधाम, उस धर्मधाम की यात्रा (रत्नत्रय धर्म द्वारा) कराकर, हे गुरुदेव! ठेठ सिद्धिधाम -मोक्षपुरी की यात्रा तक हमको साथ ही साथ रखकर हमारा कल्याण करो। इस प्रकार भावनापूर्वक भक्तजनों ने गुरुदेव के साथ वन्दन-स्तवन किया। धर्मनाथ प्रभु के चरणपादुका को भक्तिपूर्वक स्पर्श करके गुरुदेव ने अर्घ्य चढ़ाया। संघ की दूसरी मोटरें और बसें भी एक के बाद एक आने लगीं और यात्री जय-जयकार करते हुए रत्नपुरी की यात्रा को जाने लगे। रत्नपुरी में जन्मधाम सड़क से लगभग एक मील दूर है, वहाँ तक बस नहीं जा सकती थी, इसलिए सब यात्री चलते-चलते जन्मधाम में आये। जन्मधाम में छोटा-सा मन्दिर है, वहाँ धर्मनाथ भगवान की प्रतिमाजी तथा चरण-कमल हैं; चरण-कमल बहुत छोटे से और आकर्षक हैं। जंगल के बीच इस जन्मधाम के भक्तिपूर्वक दर्शन किये और अर्घ्य चढ़ाया; इस मन्दिर के बगल में ही दूसरे एक स्थान में भगवान के सुन्दर चरण-कमल हैं और उसके नीचे 'धर्मनाथस्वामी का जन्मधाम-रत्नपुरी' ऐसे अर्थ का लेख है। सरयु नदी के किनारे, जंगल में यह स्थान शोभित हो रहा है। यहाँ भगवान के चरणों का स्पर्श करके सबने अर्घ्य चढ़ाया और पूज्य बहिनश्री-बहिन ने भगवान के जन्म-कल्याणक सम्बन्धी भक्ति भी करायी।

मारा नाथनी बधाई आंहीं छे...
धर्मनाथनी बधाई आहीं छे...
एना जयनाद गगनमां गाजे छे...
गुरुदेव साथे यात्रा थाये छे...

थोड़ी देर उल्लासभरी भक्ति करके उस तीर्थधाम के आसपास के वातावरण का अवलोकन किया; और पश्चात् धर्मनाथ भगवान की जय-जयकार करते हुए वहाँ से सब वापिस आये। अपनी इस 'मंगल तीर्थयात्रा' में यह पहला जन्मधाम नेमिनाथ प्रभु का आया था और यह दूसरा जन्मधाम धर्मनाथ प्रभु का आया और लगातार नौवें तीर्थधाम की यात्रा हुई। इस प्रकार रत्नपुरी तीर्थधाम की यात्रा पूर्ण हुई।

रत्नपुरी तीर्थधाम में विराजमान धर्मनाथ प्रभु को नमस्कार!

रत्नपुरी तीर्थधाम की यात्रा करानेवाले कहान गुरुदेव को नमस्कार!

★ ★ ★

रत्नपुरी तीर्थधाम की यात्रा करके उल्लासपूर्वक भक्ति और 'वाहवा जी' करती भक्तों की हारमाला चल दी। यह दृश्य सुन्दर था। मार्ग पर खड़ी हुई बस के पास पहुँचे तब लगभग शाम हो गयी थी, इसलिए वहाँ रत्नपुरी के शान्त वन-जंगल में ही सभी यात्री नाश्ता करने बैठ गये। मानो कि भगवान के जन्मधाम में भगवान के जन्मोत्सव की प्रसन्नता में सब उत्सव मनाते हों, ऐसा दृश्य था। यह दृश्य देखकर सबको आनन्द होता था। इस प्रकार धर्मनाथ प्रभु के जन्मधाम में यात्रा और वन भोजन करके, जय-जयकार करते हुए वहाँ से अयोध्यापुरी की ओर प्रस्थान किया।

भोजन के पश्चात् अब भजन शुरु हुआ। यद्यपि आज का प्रवास लम्बा था, परन्तु भक्ति करते-करते आनन्दपूर्वक मार्ग कट जाता था। यात्रा के समय अनेक मोटर बसों में यात्रियों की भक्ति तो चलती ही रहती हो। मानो कि भक्ति के बल से ही मोटर चलती हो, ऐसी भक्ति की धुन बढ़ने पर मोटर की शीघ्रता भी बढ़ती और भक्ति धीमी पड़ जाने पर मोटरें भी धीमी पड़ जातीं। भक्ति की धुन सुनकर ड्राईवर भी रंग में आ जाते। कभी लम्बी यात्रा में भक्ति कर-करके थके हुए भक्त मोटर में बैठे-बैठे झोंका खाने लगें तो अचानक मोटरें रुक जाती और 'क्या हुआ' ऐसा पूछने पर ड्राईवर कहते हैं कि आप लोग भक्ति नहीं करते तो मोटर कैसे चले? आप सो जाओगे तो मोटर भी सो जाएगी। ऐसा होने से, नींद में से झबककर वापस सब भक्ति करने लग जाते। कभी तो लगातार बारह-बारह

घण्टे से भी अधिक यात्रा करनी पड़ती, तब 'अन्त कड़ी' (अन्ताक्षरी) कर-करके या यात्रा का अन्त लाते; जब आगे जाने पर कोई बस बहुत धूल उड़ाती हो और उससे आगे निकल जाना हो, तब भक्त भक्ति की ऐसी जोरदार धुन मचाते कि वह धुन सुनकर मानो मोटर को भी तान चढ़ जाती हो और घड़घड़ाहट करती हुई वह आगे निकल जाती। ऐसे प्रसंग के लिये नीचे के दो स्तवनों का विशेष उपयोग होता :

1- एक तूं ही आधार हो जग में.... अय मेरे भगवान.... कि तुमसा और नहीं बलवान

2- पार लगा... पार लगा... पार लगाना... ओ नाथ! मेरी बस चली... पार लगाना...

इस प्रकार यात्रा में आनन्द करते-करते अभी तक दो हजार मील से अधिक प्रवास करके, अब तीर्थंकरों की शाश्वत जन्मभूमि ऐसी अयोध्यापुरी में आ पहुँचे।

★ ★ ★

अनन्त तीर्थंकरों की शाश्वत् जन्मभूमि
अयोध्यापुरी तीर्थ

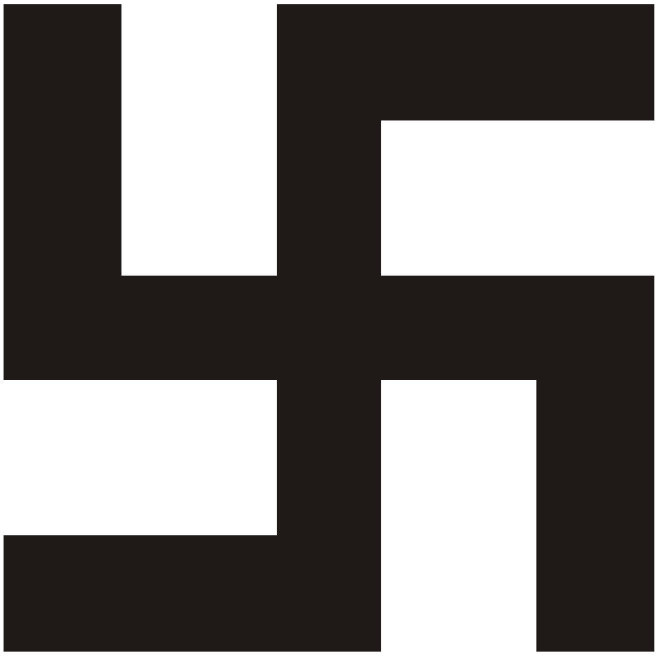

फाल्गुन कृष्ण छठ : अनन्त तीर्थंकरों की जन्मभूमि में पूज्य गुरुदेव तो सबसे पहले पहुँच गये। इस अयोध्या में तो अनन्त तीर्थंकर जन्मे हैं; जन्मभूमि को भी 'जननी' की उपमा है, यह देखने पर यह अयोध्यापुरी अनन्त तीर्थंकरों की जननी है, इसने अपनी गोद में अनन्त तीर्थंकरों को खिलाया है और इस भूमि में आज भी मानो माता का वात्सल्य झर रहा है। जैसे बालक माता को भेंटने दौड़ता है अथवा तो जैसे दिग्कुमारी देवियाँ तीर्थंकर प्रभु की माता की सेवा में दौड़ी आती हैं, वैसे ही 'कल्याणवर्षिनी' भी इस कल्याणभूमि को भेंटने के लिये दौड़ती-दौड़ती आ पहुँची।

दोपहर को तीन बजे अयोध्यापुरी में पैर रखते ही गुरुदेव को बहुत प्रमोद हुआ और कहा : **यहाँ तो इन्द्रों ने आकर अनन्त तीर्थंकरों के जन्मकल्याणक मनाये हैं, यह अयोध्या तो खास तीर्थ है। जैसे सम्मेदशिखर वह तीर्थंकरों का शाश्वत् सिद्धिधाम है,**

वैसे यह अयोध्यानगरी तीर्थंकरों का शाश्वत् जन्मधाम है। शिखरजी की भाँति इस अयोध्यापुरी के नीचे भी शाश्वत् स्वस्तिक है।

तीर्थंकरों के जन्मधाम के प्रथम दर्शन से गुरुदेव को बहुत आनन्द हुआ और शीघ्र ही जिनमन्दिर में दर्शन करने पधारे। अहा! जिनमन्दिर में भगवान आदिनाथ और अगल-बगल में भरत-बाहुबली—इस प्रकार त्रिपुटी भगवन्तों के अति मनोज्ञ भव्य प्रतिमाजी को देखकर गुरुदेव आह्लाद से स्तब्ध हो गये। वाह, पिता-पुत्र की त्रिपुटी!! एक 'तीर्थंकर पिता' और उनके केवलज्ञान का उत्तराधिकार लेनेवाले 'दो पुत्र'—ऐसी पिता-पुत्र की त्रिपुटी को देखकर गुरुदेव के हृदय में बहुत ऊर्मि उठती थी और क्षणभर तो भूत-भविष्य के गहरे विचार में उतर जाते थे। वहाँ दर्शन करने के बाद, उसी मन्दिर में विराजमान सुमतिनाथ प्रभु के चरण-कमल के तथा अन्य भगवन्तों के दर्शन किये। तत्पश्चात् भोजन करके सायंकाल आदिनाथ भगवान इत्यादि के जन्मधाम के भी दर्शन कर आये; यद्यपि अभी संघसहित की यात्रा तो आगामी कल सवेरे होनेवाली है, तो भी गुरुदेव पहले-पहले जाकर भगवन्तों के चरणों को भेंट कर आये। रात्रि में फिर से आदिनाथ भगवान तथा भरत-बाहुबली भगवन्तों के पास आकर गुरुदेव बैठ गये। भगवन्तों को निहारते ही भक्ति करने की भावना उल्लसित हो गयी; सेठ श्री प्रेमचन्दभाई इत्यादि ने भक्ति शुरु की। भगवान का दरबार भर गया था परन्तु अभी बहिनश्री-बहिन अयोध्या नहीं आयी थीं, इसलिए उनका इन्तजार किया जा रहा था।

थोड़ी ही देर में जय-जयकार करते हुए अनेक यात्रियोंसहित बहिनश्री-बहिन अयोध्यापुरी में आ पहुँचीं; आते ही मोटर में से सीधे-सीधे मन्दिर में आकर सिर झुका रही हैं, तभी गुरुदेव ने भक्ति कराने को कहा। बहिनश्री-बहिन को भी इस जन्मधाम की भक्ति के लिये बहुत ही रंग-उमंग थी। इसलिए तुरन्त ही जन्म कल्याणक सम्बन्धी विशिष्ट बनाया हुआ स्तवन शुरु किया—

आवो आवो ने सुरनरवृंद हरखे आवो रे...
अहीं जन्म्या त्रिभुवन नाथ अयोध्यानगरे रे...
नगरी अयोध्याधाम अति अति सोहे रे...
एेनी शोभा वरणी न जाय मनडुं मोहे रे...

त्रणकालना त्रिभुवननाथ अयोध्या जन्मे रे....
अनादि अनंत तीर्थधाम कहीये शुं वयणे रे...
जन्मकल्याणक अनंता थाय अयोध्या नगरे रे...
अे शाश्वत छे तीर्थधाम अंतर उछले रे...

अहा, क्या इस भक्ति के भावों की ऊर्मि! मानों अभी ही यहाँ जन्म कल्याणक मनाया जाता हो! तीर्थंकर के जन्म की तैयारी हो गयी हो और सुरेन्द्र ऊपर से आते हों—ऐसे तादृशभाव से पूज्य बहिनश्री-बहिन यह भक्ति गवा रही हैं और इस भक्ति के सरस भाव के कारण पूज्य गुरुदेव भी तान में आकर बीच-बीच में ताल पुरा रहे हैं। यात्री भी भक्ति की धुन में लीन हुए हैं, बहुत सरस धुनपूर्वक भक्ति चल रही है।—

अहीं नाभिरायना नंद तीर्थंकर विराजता रे...
ऋषभ अजित जिणंद अयोध्या जन्म्या रे...
श्री अभिनंदन जिणंद अयोध्या जन्म्या रे...
सुमति अनंत जिणंद अयोध्या जन्म्या रे...
आ भूमिमां विचर्या (रमता) जिनदेव केली करता रे...
अे दृश्य अहो अद्‌भुत पावनकारी रे...
धन्य भूमि धन्य आ धाम धन्य आ धूलने रे...
पुनितपगलांथी पावन धाम मंगलकारी रे...
देव देवेन्द्रोना वृंद अहिंया ऊतरे रे...
जन्मकल्याणक फरीफरी थाय अयोध्या नगरे रे...
धन्य भाग्य अमारा आज गुरुवर साथे रे...
आ शाश्वत यात्रा थाय गुरुजी प्रतापे रे...

अनन्त तीर्थंकरों के जन्म कल्याणकधाम अयोध्यापुरी में ऐसी महान भक्तिपूर्वक गुरुदेव के साथ यात्रा का प्रसंग आने पर भक्तों को उमंग तो समाती नहीं। बहुत से भक्तों को तो पहले-पहले ही ऐसे तीर्थधाम का दर्शन होता है और वे हृदय के भाव से कहते हैं कि 'हमारी यह अयोध्याधाम की पहली-पहली यात्रा ऐसे सरस भक्तिभाव से सन्तों के

साथ होती है, यह हमारे जीवन का सौभाग्य है। गुरुदेव के प्रताप से हमें ऐसी महान तीर्थयात्रा होती है।'

— और, सन्मुख विराजमान रत्नत्रय भगवन्तों के प्रति बारम्बार भक्तों का लक्ष्य खिंच जाता है... अहा, क्या अद्भुत मुद्रा! कैसा सरस भावभीना दृश्य!! बीच में पिताजी आदिनाथ भगवान (12 फीट उन्नत) विराजते हैं और उनकी दोनों ओर दो पुत्र (भरत-बाहुबली) शोभित हो रहे हैं। पिता-पुत्र की यह त्रिपुटी बहुत अद्भुत है.... मानों कि भरत-बाहुबली को लड़ते-लड़ते भिन्न करके दोनों को केवलज्ञान साम्राज्य का उत्तराधिकार देते हों—ऐसा सरस भाव भरा दृश्य है। दोनों भाईयों ने पिताजी के केवलज्ञान का उत्तराधिकार लिया है। अहो नाथ! आप तीनों ने इस अयोध्यापुरी में जन्म लेकर इस जन्म को सफल बनाया और अयोध्यापुरी को पावन किया। इस त्रिपुटी में बीच में आदिनाथ भगवान परमध्यानमय गम्भीर मुद्रा में विराजमान हैं, भरतजी की मुद्रा एकदम सौम्यता भरी और निर्दोष राजकुमार जैसी ही है, जबकि बाहुबली की मुद्रा एकदम शान्ति और दृढ़ता भरी है,—महापराक्रम करने के बाद की शान्तदशा जैसी उनकी मुद्रा है—इन तीनों की भाव भरी पावन मुद्राएँ बहुत देर तक निहारते ही रहें तो भी सन्तोष नहीं होता और अभी बारम्बार उन्हें निरखने की भावना होती है। अभी भी मानो 'यह अपने सामने ही खड़े'!—ऐसा लगता है।

भरतक्षेत्र के आदि तीर्थंकर, आदि चक्रवर्ती और आदि कामदेव—ऐसे पिता-पुत्रों की त्रिपुटी केवलज्ञान पाकर एक साथ अयोध्यापुरी में खड़ी है और उनके सन्मुख हजारों यात्रियों के समूह में भक्ति चल रही है। एक स्तवन पूरा होने पर, बहुत ही भाव से भगवान के जन्म की बधाई गाना शुरु किया;—मानो कि नाभिराजा के दरबार में बैठे हैं और भगवान के जन्मोत्सव की खुशहाली मना रहे हैं, ऐसे भाव से बहिनश्री-बहिन गवा रही हैं।

आज तो बधाई राजा नाभि के दरबारजी....
मरुदेवी बेटो जायो, जायो ऋषभकुमारजी...
अयोध्या में उत्सव कीनो घरघर मंगलाचारजी आज तो बधाई०

अहा! तीर्थंकर भगवान यहाँ जन्मे, वहाँ तो तीन लोक में दूर-दूर भी आनन्द फैल जाता है, तो फिर भगवान की साक्षात् जन्मभूमि में ही भगवान के जन्म की बधाई सुनने पर भक्तों के हृदय में आनन्द फैल जाए, उसमें क्या आश्चर्य!! भक्ति के पश्चात् दूसरे

दिन की यात्रा का कार्यक्रम निश्चित करके जय-जयकार करते हुए यात्री बिखर गये और दूसरे मन्दिरों के तथा सुमतिनाथ प्रभु के चरण-कमल के दर्शन करके धर्मशाला में गये।

जहाँ भक्ति हुई, उस मन्दिर के बगल के एक रूम में ही गुरुदेव का आवास था... और यात्री विशाल धर्मशाला में उतरे थे। रात्रि में सोने से पहले यात्री इस पावन तीर्थधाम की महिमा विचारते थे : शाश्वत् तीर्थराज सम्मेदशिखरजी जैसा ही इस अयोध्यानगरी का माहात्म्य है; शिखरजी वह शाश्वत् सिद्धिधाम है तो अयोध्या, वह शाश्वत् जन्मधाम है। सामान्यरूप से भरतक्षेत्र के तीर्थंकर अयोध्या में जन्मते हैं और सम्मेदशिखरजी से मोक्ष प्राप्त करते हैं। विशेष में, इस भरतक्षेत्र की भाँति ऐरावतक्षेत्र में भी अयोध्यानगरी है और विदेहक्षेत्र में भी अयोध्यानगरी है और उस अयोध्यानगरी में अनेक तीर्थंकर जन्मे हैं। इस भरतक्षेत्र के अन्तिम चौबीस तीर्थंकरों में से श्री आदिनाथ, श्री अजितनाथ, श्री अभिनन्दनस्वामी, श्री सुमतिनाथ और श्री अनन्तनाथ—ये पाँच तीर्थंकर अयोध्या में जन्मे हैं। इस प्रकार अपनी यात्रा में यह दसवाँ तीर्थधाम है। तदुपरान्त प्रथम तीर्थंकर के पुत्र भरतराज, कि जो इस भरतक्षेत्र के प्रथम चक्रवर्ती थे, वे भी यहीं जन्मे हैं और उनकी राजधानी यही है। आदिनाथ के पुत्र प्रथम कामदेव बाहुबलीजी का जन्मधाम भी यही है। अनेक चक्रवर्तियों उपरान्त राजा दशरथ और राजा रामचन्द्रजी की राजधानी भी यही है। अनेक पुराण पुरुषों को उत्पन्न करनेवाली इस नगरी की महिमा का क्या वर्णन करना! अनन्त तीर्थंकर यहाँ जन्मे हैं और अभी अनन्त तीर्थंकर यहाँ जन्मेंगे—उसमें ही इसकी सब गौरवगाथा समाहित हो जाती है। अहा, जिस अयोध्यापुरी की महिमा का वर्णन सुनने पर भगवान पार्श्वनाथ जैसे भी वैराग्य पाकर तीर्थंकरों के पथ में विचरे, उसकी महिमा की क्या बात! 'हम अभी गुरुदेव के साथ ऐसी अयोध्यापुरी में आये हैं'—ऐसा स्मरण करने पर भी यात्रियों को हर्ष होता था; सवेरे अयोध्यानगरी में जन्मे हुए तीर्थंकरों के जन्मधाम की यात्रा को जाना है—उसकी भावना भाते-भाते देरी से यात्री सोये और भगवान की माताजी ने भगवान के जन्म से पहले इस जन्मधाम में सोलह मंगल स्वप्न देखे थे, वैसे ही भक्त भी नींद ही नींद में इस जन्मधाम की यात्रा करने की उत्कट धुन के कारण भगवान के जन्मसम्बन्धी अनेक मंगल स्वप्न इस जन्मधाम में देखते थे... वहाँ तो मंगल प्रभात उदित हुआ... और भक्त जागृत हुए.....

★ ★ ★

24 भगवान के सोलह जन्मधाम

*1. अयोध्या : ऋषभदेव, अजितनाथ, अभिनन्दन, सुमतिनाथ, अनन्तनाथ
*2. श्रावस्ती : संभवनाथ
3. कौशम्बी : पद्मप्रभ
*4. काशीपुर : सुपार्श्वनाथ, पार्श्वनाथ
*5. चन्द्रपुरी : चन्द्रप्रभ
6. काकन्दी नगरी : सुविधिनाथ
7. भद्रिकानगरी : शीतलनाथ
*8. सिंहपुरी : श्रेयांसनाथ
*9. चम्पापुरी : वासुपूज्य
10. कम्पिलानगरी : विमलनाथ
*11. रत्नपुरी : धर्मनाथ
*12. हस्तिनापुरी : शान्तिनाथ, कुन्थुनाथ, अरनाथ
13. मिथिलापुरी : मल्लिनाथ, नमिनाथ
*14. राजगृही : मुनिसुव्रतनाथ
*15. शौरीपुर : नेमिनाथ
*16. कुण्डलपुर : वर्धमान प्रभु

नोट : अपनी इस मंगल तीर्थयात्रा में कुल सत्रह भगवन्तों के दस जन्मधाम की (जिसमें '*' का निशान है, की) यात्रा होगी। बाकी के जन्मधामों को परोक्षरूप से नमस्कार करते हैं।

चौबीस भगवन्तों के निर्वाणधाम

1. कैलाशगिरि : ऋषभदेव
2. चम्पापुरी : वासुपूज्य
3. गिरनार : नेमिनाथ
4. पावापुरी : वर्धमानप्रभु
5. सम्मेदशिखर : शेष बीस तीर्थंकर

अपनी इस मंगल तीर्थयात्रा में 23 भगवन्तों के चार मोक्षधाम की यात्रा होगी। कैलाशगिरि सिद्धिधाम को परोक्षरूप से नमस्कार करते हैं।

शाश्वत तीर्थधाम अयोध्यापुरी में पाँच भगवन्तों के जन्मधाम की यात्रा

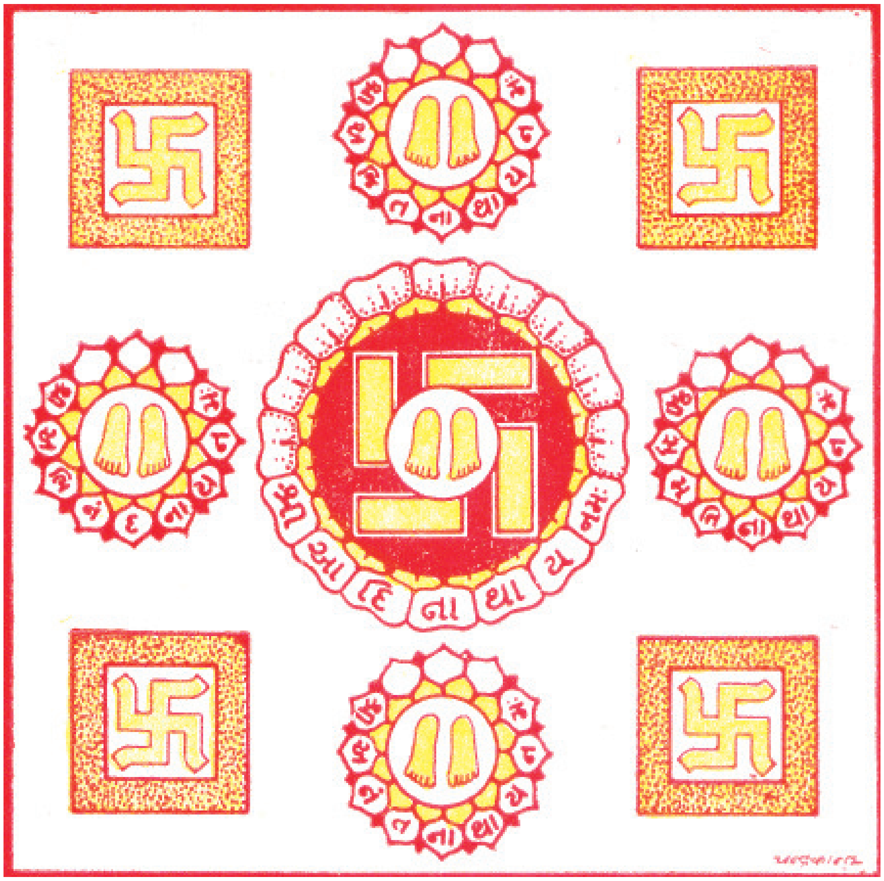

फाल्गुन कृष्ण सप्तमी : जगत मंगलकारी जिनेन्द्र भगवन्तों के जन्मधाम की मंगल यात्रा करने के लिये गुरुदेव प्रातः जल्दी उठकर तैयार हो गये और गुरुदेव के साथ-साथ दूसरे यात्री भी यात्रा के लिये तैयार हो गये। प्रथम जिनमन्दिर में विराजमान आदिनाथ भगवान के दर्शनार्थ गये; वहाँ आदिनाथ प्रभु की जन्म नगरी में विराजमान आदिनाथ प्रभु का जन्माभिषेक किया। अहा! शाश्वत् जन्मधाम अयोध्या नगरी में विराजमान आदिनाथ तीर्थंकर का अभिषेक करने से भक्तों को बहुत आनन्द हुआ; साथ-साथ भरत-बाहुबली का भी अभिषेक किया।

तत्पश्चात् उस मन्दिर के चौक में ही सुमतिनाथ भगवान का जन्मस्थान है, वहाँ चरण-कमल के दर्शन करके सबने अर्घ्य चढ़ाया और भाव से भगवान के चरण को भेंटकर तीन प्रदक्षिणा देते-देते स्तुति की, इस प्रकार सुमतिनाथ भगवान के जन्मधाम की यात्रा करके दूसरे चार भगवन्तों के जन्मधाम की यात्रा के लिये सब जय-जयकार करते हुए चल दिये।

सुमतिनाथ भगवान को नमस्कार हो!

卐

आदि-अजित-अभिनन्दन और अनन्त इन चार भगवन्तों के जन्मस्थान लगभग दो मील के घेराव में थोड़ी-थोड़ी दूर है और उन स्थानों के मन्दिरों में उन-उन भगवानों के पुनीत चरण-कमल स्थापित हैं। सरयु नदी के किनारे समागत अनन्तनाथ भगवान का जन्मधाम तो बहुत ही रमणीय है।

इन्द्रों द्वारा रचित इस अयोध्या नगरी की शोभा निहारते-निहारते गुरुदेव और यात्री जन्मधाम की यात्रा करने चले जा रहे हैं; बहिनश्री-बहिन उमंगपूर्वक महामंगल जन्मबधाई गवा रही हैं, इन्द्रों ने रचना की, उस समय के जैसी शोभा यद्यपि अभी नहीं है, परन्तु अतिशय भक्ति के बल से यात्री भक्तों को उस समय की शोभा में और अभी की शोभा में कुछ अन्तर होने की कल्पना भी नहीं उठती... अरे! 'भगवान यहाँ पूर्व में जन्मे थे'—ऐसा नहीं परन्तु 'अभी ही यहाँ भगवान जन्में हैं और हम यहाँ भगवान का जन्म कल्याणक मनाने आये हैं' ऐसे भाव से गुरु के साथ सब यात्रा कर रहे हैं।

पहले अभिनन्दन भगवान के जन्मधाम में आये, यहाँ मन्दिर में भगवान के चरण-कमल बहुत ही शोभित हो रहे हैं। गुरुदेवसहित सब भक्तजन भावपूर्वक अभिनन्दन प्रभु के चरणों को अभिनन्दन किया और भक्तिपूर्वक अर्घ्य चढ़ाया, पश्चात् प्रभु के पावन चरणों का गुरुदेव ने पाँच बार स्पर्शन किया; तत्पश्चात् सबने स्तुति की।

चौथा आरा रूप नभ विषे दीपता सूर्य जेवा,
घाति कर्मो रूप मृग विषे केशरी सिंह जेवा;
साचे भावे भविकजन ने आपता मोक्ष मेवा,
चौथा स्वामी चरण युगले हुं चहुं नित्य रहेवा॥

दर्शन-वन्दन-पूजन और स्तुति के बाद सबने प्रदक्षिणा की। इस प्रकार बहुत ही भाव से प्रभु चरणों को भेंटकर सब यात्रियों ने जय-जयकारपूर्वक अभिनन्दन भगवान के जन्मधाम की यात्रा पूर्ण की।

अभिनन्दन भगवान को नमस्कार हो

卐

इन अभिनन्दन भगवान का चिह्न लांच्छन बन्दर है, मानो कि इस चिह्न की प्रसिद्धि करने के लिये ही यहाँ अनेक बन्दर मन्दिर के आसपास घूम रहे हैं और यात्रियों के साथ-साथ स्वयं को भी मानो कि भगवान की पूजा करनी हो, वैसे यात्रियों के हाथ में से अर्घ्य के बटुए लूटकर ले जाते हैं। गुरुदेव के पदचिह्नों पर पाँच सौ यात्रियों का कारवां जन्मधाम में प्रभु के चरणों को भेंटने के लिये चला जा रहा है; विध-विध धुन और भक्ति तो चालू ही है।

अयोध्यापुरी धाममां.... वाह वा.... जी..... वाह वा!
तीर्थंकरदेव जन्म्या आज.... वाह वा.... जी..... वाह वा!
अनन्त तीर्थंकर जन्म्या आंहीं.... वाह वा.... जी..... वाह वा!
शाश्वत जन्मधाममां .... वाह वा.... जी..... वाह वा!
कहानगुरु साथमां.... वाह वा.... जी..... वाह वा!
यात्रा अद्भुत थाय आज.... वाह वा.... जी..... वाह वा!
प्रभुनां जन्मधाम देखी.... वाह वा.... जी..... वाह वा!
गुरुजीनां हैडां हरखे आज.... वाह वा.... जी..... वाह वा!

इस प्रकार उल्लास से 'वाह वा जी वाह वा' करते-करते अजितनाथ भगवान की टूंक की ओर जा रहे थे; सकड़ी पगडण्डी पर चलते-चलते धूल उड़ती थी तब भक्तजन कहते : 'अहा! तीर्थंकर प्रभु के चरणों से स्पर्शित पवित्र भूमि की रज भी हमारे सिर पर कहाँ से! इस रजकण से हमारा मस्तक पवित्र हुआ है।'—ऐसा कहकर उस भूमि की रज को भक्तिपूर्वक अपने सिर पर चढ़ाते और बहिनश्री-बहिन गवाते कि —

तुझ पादपंकज अहीं थया आ देशने पण धन्य छे...
तुझ मात कुलज वंद्य छे आ गाम पुरने धन्य छे...

तारा क्यां दर्शन अहा, आ जीवन अम कृतपुण्य छे।
'तुझ पादथी स्पर्शाइ अेवी (आ) धूलिने पण धन्य छे।'

अन्तिम लाईन बोली जाती थी तब भक्तों का मस्तक 'इस' बहुरत्ना वसुन्धरा माता के प्रति नम्रीभूत हो पड़ता था।

थोड़ी देर में अजितनाथ भगवान की टूंक पर पहुँचे, इस टूंक की देहरी अन्दर से विशाल और सुशोभित है; भगवान के चरण कमल की शोभा की तो बात ही क्या! सबने अन्दर जाकर प्रभु चरणों में सिर झुकाकर नमस्कार किया। प्रत्येक जगह अर्घ्य चढ़ाने से पहले गुरुदेव क्या करते हैं?—कि पहले तो चरण के ऊपर के पुराने अर्घ्य को दूर करके भगवान के चरण खुले करते हैं और फिर सोने की प्लेट में रत्न मिश्रित अर्घ्य लेकर भगवान के चरण में चढ़ाते हैं। तत्पश्चात् पाँच बार भगवान के चरणों का स्पर्शन करते हैं। यात्रा में गुरुदेव के ऐसे भाव देखकर भक्तजनों को भी बहुत ही उल्लास आता था। अजितनाथ प्रभु के चरण-कमल में अर्घ्य चढ़ाने के बाद स्तुति शुरु की—

देखी चरणो अजित जिननां नेत्र म्हारां ठरे छे,
ने हैडुं आ फरी फरी प्रभु! ध्यान तेनुं धरे छे;
आत्मा म्हारो प्रभु तुझ कने आववा उल्लसे छे,
आपो अेवुं बल हृदयमां माहरी आश अे छे॥

स्तुति के बाद भक्तों ने अतिशय भक्तिभाव से प्रभु चरणों में सिर झुकाकर नमस्कार किया और फिर प्रदक्षिणा करते-करते धुन मचायी—

जय अजितनाथ जय अजितनाथ जय अजितनाथ देवा...
माता तोरी 'महादेवी', पिता 'महाराया' जय०
अयोध्या में जन्म लिया प्रभु! हो देवन के देवा;
कहानगुरुजी हरखे नीरखे जन्मधाम तुमारा..... जय०

अहा, तीर्थंकरों के जन्मधाम में गुरुदेव बारम्बार प्रमोद भरे उद्गारों द्वारा अपने अन्तर का हर्ष व्यक्त करते थे। वस्तुत: साधक सन्तों का आत्मा सर्वज्ञ प्रभु के चरण को देख-देखकर उल्लसित होता था। तीर्थंकर प्रभु के कल्याणकधाम के प्रति ज्ञानियों को कैसी ऊर्मि उभरती है, वह यहाँ हमने नजरों से देखा। हमें तो एक ओर से तीर्थंकर

भगवन्त की कल्याणक भूमि के दर्शन तथा दूसरी ओर से सन्तों के हृदय के पवित्र भावों के दर्शन–इस प्रकार साध्य–साधक दोनों के एकसाथ दर्शन से हमारा अन्तर उल्लास से उछल रहा था। वास्तव में गुरुदेव के साथ की यह मंगल तीर्थयात्रा इस जीवन का एक सुनहरा प्रसंग था, उस सुनहरे प्रसंग के सुमधुर संस्मरण याद करते हुए आज भी इस मनरूपी हंस को भक्तिरूपी पंख आते हैं और यह हंस यहाँ से उड़कर ठेठ अयोध्यापुरी पहुँच जाता है... और वहाँ जाकर प्रभुजी के चरणों में नमस्कार करता है...

अजितनाथ भगवान को नमस्कार हो।

卐

सुमतिनाथ, अभिनन्दन और अजितनाथ इन तीन भगवन्तों के जन्मधाम की यात्रा के बाद अब श्री आदिनाथ भगवान के जन्मधाम में यात्री जा रहे हैं। कोई मोटर में, तो कोई रिक्शा में और बहुत से पैदल। इस प्रकार यात्रियों का लम्बा–लम्बा झुण्ड हर्षनाद करते–करते यात्रा धाम में घूम रहा है। गुरुदेव के साथ ऐसे यात्रीसंघ को देखकर आज तो अयोध्या की भूमि भी आनन्द से हँस रही है... भगवान को यहाँ जन्मे हुए तो युगानुयुग (असंख्य वर्ष) व्यतीत हो गये हैं तथापि आज भी ये भक्त मेरा इतना अधिक बहुमान करते हैं!—ऐसे गौरव से वह कल्याणक भूमि खिल उठी है। अहा! पृथ्वी भी जहाँ खिल उठे, वहाँ भव्य जीवों का अन्तर खिल उठे—इसमें क्या आश्चर्य!

अहा! जिस भूमि में तीर्थंकर भगवान जन्मे, जिस भूमि में स्वर्ग में से आकर इन्द्रों ने मंगल जन्मोत्सव मनाया, जिस भूमि में भगवान ने नन्हें-नन्हें कदमों की छाप छोड़ी। जिस भूमि में बालतीर्थंकर देवकुमारों के साथ खेले, बड़े होकर जिस भूमि में भगवान ने राज्य किया और वैराग्य पाकर जिस भूमि में भगवान स्वयं दीक्षित हुए—ऐसी इस पावन भूमि में, लगभग 500 यात्रियों के साथ विचरते कानजीस्वामी बहुत ही हर्षपूर्वक एक महान ऐतिहासिक तीर्थयात्रा कर रहे हैं—कहान गुरुदेव की यह 'मंगल तीर्थयात्रा' 'भारत प्रसिद्ध' बन गयी है।

मंगल यात्रा करते-करते अब आदिनाथ भगवान की टूंक पर पहुँचे। सब टूंकों में यह टूंक मुख्य गिनी जाती है, इसलिए यहाँ पूजा-भक्ति विशेष उल्लासपूर्वक हुई थी। छूटे हुए सब यात्री यहाँ एकत्रित हो गये थे। गुरुदेव के साथ इस टूंक की यात्रा करते हुए सबको आनन्द हुआ। प्रथम भगवान के चरण-कमल के दर्शन करके सबने अर्घ्य चढ़ाया और फिर मन्दिर के चौक में पूज्य बहिनश्री-बहिन ने सरस भक्ति करायी—

आज तो बधाई राजा नाभि के दरबारजी....
मरुदेवी बेटो जायो जायो ऋषभकुमारजी....
अयोध्या में उत्सव कीनो घरघर मंगलाचारजी... आज तो बधाई०

(अहा! भगवान के जन्मधाम की बधाई इस जगत में सर्वोत्कृष्ट बधाई है, वह मंगल बधाई सुनते हुए जगत में किसे हर्ष नहीं होगा! भगवान के जन्मधाम में बहुत उल्लासपूर्वक बहिनश्री-बहिन यह बधाई सुना रही हैं।)

घननन घननन घंटा बाजे देव करे जयकारजी
इंद्राण्यां मिली चौक पुरायो भरभर मोतीयन थालजी... आज तो बधाई०
हाथ जोड में करुं विनती प्रभु जीवो चिरकालजी,
नाभिराजा दान देवे, वरसे रतन अपारजी.... आज तो बधाई०

(और नाभि राजा ने दान में अन्य क्या-क्या दिया?)

हाथी दीना, घोड़ा दीना, दीना रथ भंडारजी,
नगर सरीखा पट्टण दीना दीना सब सिंगारजी... आज तो बधाई०
तीन लोक में दिनकर प्रगटे घरघर मंगलाचारजी
केवल कमलारूप निरंजन आदीश्वर जयकारजी... आज तो बधाई०

एक स्तवन पूर्ण होते ही दूसरा शुरु हुआ! अहा, आज तो मानो भक्ति का समुद्र उछल रहा है।

मोरी हाली... आज बधाई गाईयां.... हो.... मोरी हाली०
मरुदेवी बेटा जायो, श्री ऋषभ जिन नाम धरायो,
सबही के मन भाईयां... सो मोरी हाली.... आज बधाई०

नाभिराय राजा घर बाजत बधाईयां.... वाहवा जी वाहवा!
आये हैं गुणी सब गावत बधाईयां.... वाहवा जी वाहवा!
आये हैं भक्त सब गावत बधाईयां.... वाहवा जी वाहवा!
बाजत ताल मृदंग नौबत सनाईयां.... वाहवा जी वाहवा!
दान दीयो राजा नाभि मन भाईयां.... वाहवा जी वाहवा!
ओ मोरी हाली आज बधाई गाईयां.......

आदिनाथ प्रभु के जन्मधाम में कोई अद्‌भुत भक्ति हुई। जीवन में कदाचित् ही देखने को मिले, ऐसी यह भक्ति देखकर यात्रियों को बहुत आनन्द हुआ। बहिनश्री-बहिन आनन्द से जन्म बधाई देते थे और भक्तजन गगनभेदी हर्षनादपूर्वक 'वाहवा जी वाहवा' करते हुए वह बधाई झेलते थे। मन्दिर तो पूरा ही भक्तों से खचाखच भर गया था। अरे! ऊपर की जाली में से बन्दरों के झुण्ड भी गर्दन निकाल-निकाल कर आश्चर्यपूर्वक भक्ति सुनते थे। उन्हें ऐसा लगा होगा कि यात्री तो बहुत देखे हैं—परन्तु ऐसी आनन्ददायिनी भक्ति करनेवाले यात्री तो आज ही देखे हैं। यात्रियों के उर में उल्लास समाता नहीं था इसलिए जय-जयकार की जोशदार ध्वनिरूप से वह बाहर आता था।

पश्चात् आदिनाथ प्रभु के चरण की भक्तों ने प्रदक्षिणा की, बारम्बार चरण स्पर्श किया और आदिनाथ भगवान की तथा सन्तों की जय-जयकार करते हुए इस जन्मधाम की यात्रा पूर्ण हुई....

आदिनाथ भगवान को नमस्कार हो

卐

आदिनाथ भगवान के जन्मधाम का यह मन्दिर बहुत प्राचीन है और तत्सम्बन्धी इतिहास इस प्रकार है : 400 वर्ष पहले मुगल बादशाह के राज्य में लाला केसरी सिंह

नामक जैन दीवान थे कि जिन्होंने यहाँ पाँच तीर्थंकरों के जन्मस्थान के स्मारकरूप मन्दिरों का जीर्णोद्धार कराया था। उनमें पहले आदिनाथ प्रभु के जन्मधाम के इस मन्दिर के स्थान में किसी बादशाह ने मस्जिद बनाने का हुक्म किया था परन्तु दीवानजी को बारम्बार स्वप्न में भास होता था कि इस भूमि के नीचे तो आदिनाथ प्रभु के जन्मधाम का मन्दिर है— इससे दीवानजी ने बादशाह से यह बात की और बादशाह ने उसका प्रमाण माँगने पर दीवानजी ने कहा कि खोदते-खोदते प्रथम एक दीपक, एक स्वस्तिक तथा एक श्रीफल निकलेगा... बादशाह के हुक्म से खोदकर जाँच करने पर वे ही वस्तुएँ निकलीं, इसलिए बादशाह ने उस स्थान पर मन्दिर बनाने की आज्ञा दी और तुरन्त ही दीवानजी ने मन्दिर का जीर्णोद्धार कराकर उसमें आदिनाथ प्रभु के चरण-कमल विराजमान किये। आज भी इस मन्दिर की रचना देखकर इस बात का ख्याल आ जाता है; मन्दिर का कितना ही भाग जमीन की गहराई में है, इसलिए उसमें प्रवेश करने पर भोंयरे की भाँति थोड़ा सा नीचे उतरना पड़ता है और मन्दिर की बाजु में अमुक अवशेष आज भी दृष्टिगोचर होते हैं। यहाँ के व्यवस्थापकों से इस मन्दिर का इतिहास सुनकर गुरुदेव ने मन्दिर का निरीक्षण किया। यहाँ बन्दर बहुत हैं और हाथ में से वस्तुएँ झपट कर ले जाते हैं, इसलिए मन्दिर के ऊपर के भाग में बारीक जाली जड़ी हुई है। यात्री हाथ में बटुआ लेकर भक्ति करते-करते चले जा रहे हों, वहाँ तो बन्दर अचानक आकर हाथ में से बटुआ झपटकर ले जाते हैं; और कोई हिम्मतवान यात्री हो तो उनके पास से बटुआ वापिस ले लेते हैं।

आदिनाथ भगवान के जन्मधाम की यात्रा में सबको विशेष आनन्द आया और ऐसा लगा कि वाह! गुरुदेव के साथ की अपनी यात्रा सफल हुई। इस प्रकार चार भगवन्तों के जन्मधाम की यात्रा के बाद यात्रीगण श्री अनन्तनाथ भगवान के जन्मधाम की ओर चल दिये।

अनन्तनाथ प्रभु का जन्मधाम ठीक सरयु नदी के किनारे पर ही है, सरयु के राजघाट पर यह जन्मधाम है, उसके बदले बहुत से यात्री रास्ता भूलकर दूसरे ही घाट पर पहुँच गये। वहाँ खबर पड़ी कि तुरन्त शीघ्रता से राजघाट पर पहुँचे। राजघाट, वह जैनों का घाट है और वह कोई जैन राजा ने बनाया हो ऐसा माना जाता है। यहाँ राजघाट पर एक प्राचीन मन्दिर था, उसमें अनन्तनाथ प्रभु के चरण-कमल विराजित थे; सरयू नदी अनेक बार उफन-उफन कर उन चरणों का अभिषेक कर जाती। थोड़े समय पहले सरयू नदी में

बहुत ही बाढ़ आने से इस मन्दिर को धक्का लगा और वह गिरने जैसा हो रहा था परन्तु जब तक उसमें भगवान के चरण विराजमान थे, तब तक कुछ नहीं हुआ; अन्त में जब उसमें विराजमान पावन चरणपादुका को सुरक्षित रूप से अन्य स्थल में हटाया कि तुरन्त ही यह मन्दिर गिर गया। अभी इसके बगल में दूसरा नया स्थान बनाकर उसमें भगवान के चरण-कमल विराजमान किये गये हैं और यात्री आनन्दपूर्वक उनके दर्शन-पूजन करते हैं।

माघ कृष्ण सप्तमी के दिन पावन अयोध्या नगरी में यह तीर्थयात्रा चल रही है। सवेरे नौ बजे सरयु नदी के राजघाट पर अनन्तनाथ प्रभु के जन्मधाम को सैकड़ों भक्त भक्तिपूर्वक निहार रहे हैं। इस स्थान का प्राकृतिक दृश्य गुरुदेव को बहुत रुचिकर लगा। साथ के भक्तों को भी गुरुदेव प्रमोदपूर्वक सब दिखाते थे। पास में ही प्रवाहित सरयु नदी इस स्थान से शोभा में अभिवृद्धि करती है। सरयु सरिता बहुत ही बड़ी और भव्य है; अनन्तनाथ भगवान के जन्मधाम को स्पर्श कर कलरव करती वह इस प्रकार चली जा रही है कि मानो भगवान का अभिषेक करते-करते बाल तीर्थंकर की लोरियां गाती हों! सरयु का स्वच्छ और शान्त बहाव देखकर आर्यिका माता का स्मरण होता था। मानो सन्तों ने बहाया हुआ शान्तरस का झरना प्रवाहित हो रहा है, ऐसी इस सरयु नदी में डुबकी मारने का दिल हो जाता था और कोई-कोई यात्री उसमें पैर डुबोकर हर्षित होते थे।

सरयु नदी का अवलोकन करते हुए रामचन्द्रजी के विदेश गमन का प्रसंग स्मरण होता था। यहाँ से रामचन्द्रजी वन की ओर गये थे, तब राम-लक्ष्मण-सीता को इस नदी ने मार्ग कर दिया था। वे तो महापुण्यवन्त पुरुष, इसलिए सहज नदी का पानी घट गया और मार्ग हो गया,—अनेक राजा और प्रजाजन इस किनारे रह गये। प्रजाजनों ने साथ लेकर जाने की विनती की, तब रामचन्द्रजी ने कहा : बस, हमारा और तुम्हारा यहीं तक का साथ था—ऐसा कहकर वे चले गये; इसलिए वैराग्य पाकर बहुत राजाओं ने और प्रजाजनों ने वहीं की वहीं दीक्षा ले ली—इस प्रकार वैराग्यपूर्वक सरयु किनारे सब स्मरण में आता था। इस प्रकार भगवान के जन्मधाम में चारों ओर का अवलोकन करने के बाद अनन्त प्रभु के चरणों के दर्शन करके चरणस्पर्श किये और वहाँ चौक में बैठे-बैठे सामूहिक पूजन की।

चौबीसों श्री जिनचंद आनंद कंद सही,
पद जजत हरत भवफंद पावत मोक्ष मही।

ॐ ह्रीं श्री अनन्तनाथ आदि अनन्त तीर्थंकर जन्मधाम में अनन्त जिनेन्द्र चरणकमल पूजनार्थे अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूजन के पश्चात् इस जन्मधाम में बहिनश्री-बहिन ने भक्ति करायी—

आवो आवो ने सुरनरवृंद हरखे आवो रे....
अहीं जनम्या त्रिभुवननाथ अयोध्या नगरे रे....
आ नगरी अयोध्याधाम अति अति सोहे रे...
एनी शोभा वरणी न जाय मनडुं मोहे रे....
जन्म कल्याणक अनंता थाय अयोध्या नगरे रे
आ शाश्वत तीरथधाम अंतर ऊछले रे...
धन्य भूमि धन्य आ धाम धन्य आ धूलने रे...
प्रभु चरणोथी पावन धाम मंगलकारी रे...
धन्य भाग्य अमारा आज गुरुवर संगे रे...
आ शाश्वत यात्रा थाय गुरुजी प्रतापे रे...

— भक्ति के बाद, अब मानो कि भगवान के जन्माभिषेक के लिये मेरुपर्वत पर जाते हों—ऐसे सरयु के किनारे ऊँचे घाट पर आये, समुद्र जैसी सरयु को देखकर भावुक भक्तों के भगवान के जन्माभिषेक की भावना जागृत हुई, इतना ही नहीं, जल के कलश भर-भरकर हाथों-हाथ एक-दूसरे को देने भी लगे और 'हरि' ने हर्ष से ताण्डवनृत्य भी शुरु कर दिया—इस प्रकार सरयु किनारे थोड़ी देर जन्माभिषेक का वातावरण चला। इस प्रसंग में पूज्य बहिनश्री-बहिन ने भक्तों को बहुत आनन्द कराया और यात्रियों के अपार हर्ष के बीच अनन्तनाथ भगवान की धुन गवायी। इस प्रकार बहुत ही आनन्द से और बहुत ही भक्तिभाव से भगवान के पावन जन्मधाम की यात्रा पूर्ण करके जय-जयकार करते हुए सब यात्री धर्मशाला में आये।

अनन्तनाथ भगवान को नमस्कार हो

卐 卐 卐 卐 卐

अहा! गुरुदेव के इस अयोध्या तीर्थधाम की यात्रा कोई अनोखे उत्साह से हुई। मानो पंचम काल में फिर से तीर्थंकर के जन्मकल्याणक मनाते हों—ऐसा उल्लास होता था। यह प्रसंग तो जिन्होंने प्रत्यक्ष देखा हो, उन्हें ही पूरा ख्याल में आयेगा। बाकी वर्णन में तो कितना आवे! कवि ने सत्य ही कहा है कि

कल्याणकाल प्रत्यक्ष प्रभु को लखें जो सुरनर घने,
तिह समय की आनंद महिमा कहत क्यों मुखसों बने ?

शाश्वत् जन्मधाम अयोध्यापुरी में जन्मे हुए पाँच जिनेन्द्रों को नमस्कार
शाश्वत् जन्मधाम अयोध्यापुरी में जन्मे हुए अनन्त जिनेन्द्रों को नमस्कार
शाश्वत् जन्मधाम अयोध्यापुरी की यात्रा करानेवाले गुरुराज को नमस्कार

हे तीर्थंकर भगवन्तों!
आपकी कल्याणक भूमि की मंगल यात्रा हमारा कल्याण करे।

卐 卐 卐 卐 卐

मंगल यात्रा के बाद धर्मशाला में पूज्य गुरुदेव ने अतिशय भक्ति और वैराग्य से भरपूर प्रवचन किया; उसमें इन्द्रों ने यहाँ भगवान के जन्म कल्याणक मनाये हैं, उसका भक्ति भरा वर्णन किया; तथा जब भरतजी छह खण्ड साधकर अयोध्या के समीप आते हैं, तब चक्र वहीं रुक जाता है—अयोध्या में प्रवेश नहीं करता, भरत-बाहुबली का युद्ध होता है, बाहुबली वैराग्य को प्राप्त होते हैं। ये सब प्रसंग भी यहीं बने थे, ऐसा कहकर उनका वैराग्य भरा वर्णन किया और रामचन्द्रजी के विदेश गमन के समय के वैराग्य प्रसंग का तो ऐसा अद्भुत रोमांचक वर्णन किया कि श्रोताओं को उसे सुनकर आँख में अश्रु भर आये। राम-लक्ष्मण-सीता अयोध्या छोड़कर जब जाते हैं, तब माताएँ रोती हैं, भरत रोते हैं, अनेक राजा रोते हैं, प्रजा रोती है... इस प्रसंग का उल्लेख करके अति वैराग्य से गुरुदेव ने कहा—

अहा! रामचन्द्रजी यह सरयु नदी उल्लंघकर अयोध्या में से जब चल निकले, तब अयोध्या के हजारों-लाखों प्रजाजन अश्रुभीनी आँखों से उनसे प्रार्थना करते थे

परन्तु रामचन्दजी तो उन सबको वहीं छोड़कर चल दिये। बाहर से देखनेवाले लोगों को ऐसा लगता है कि अरे यह क्या हुआ!! कहाँ अयोध्या का राज और कहाँ यह परदेश गमन! परन्तु रामचन्द्र तो धर्मात्मा थे, वे जानते थे कि हमारा आत्मा राज में भी नहीं था और वन में भी नहीं है, हमारा आत्मा तो सर्वदा हमारे ज्ञानस्वभाव में ही है। हम तो हमारे आत्मा के ज्ञान-दर्शन में ही हैं। परन्तु लोगों को ज्ञानी का हृदय समझना कठिन पड़ता है—इस प्रकार गुरुदेव करुणरस में से वैराग्यरस में और वैराग्यरस में से अध्यात्मरस में ले जाते थे, उस समय श्रोताजन मुग्ध बनकर एकचित्त हो जाते थे। और जब तीर्थंकर के जन्मकल्याणक को स्मरण करके गुरुदेव वापस भक्तिरस का प्रवाह बहाते, तब यात्री भक्ति में लवलीन बन जाते थे।

अयोध्या की महिमा के सम्बन्ध में गुरुदेव ने कहा—**यह अयोध्या शाश्वत् तीर्थधाम है; यह अवसर्पिणी (हल्का) काल है, इसलिए कुछ तीर्थंकर अन्यत्र जन्में हैं, नहीं तो सब तीर्थंकर यहाँ अयोध्या में जन्मते हैं और सम्मेदशिखरजी से मोक्ष प्राप्त करते हैं, ऐसा नियम है। इन दोनों तीर्थों के नीचे शाश्वत् स्वस्तिक है। यहाँ की यात्रा करने के बहुत भाव थे, वे आज पूरे हुए। लोगों को उत्साह भी बहुत है। यह यात्रा तो ऐसी होती है कि सबको चाह रह जाएगी। यह तीर्थस्थान बहुत सरस है। यहाँ रहनेयोग्य था, परन्तु अपने को समय कम है, अपना प्रयोजन यात्रा का था, वह यात्रा तो आनन्द से हो गयी।**

प्रवचन में भावभीने चित्त से गुरुदेव कहते हैं—**अहा! तीर्थंकर जब यहाँ जन्मते, तब इन्द्र आकर इस अयोध्या नगरी का शृंगार करते थे और ऊपर से रत्नों की वृष्टि होती थी... उस समय की शोभा की क्या बात! कहाँ उस समय की शोभा और कहाँ अभी की स्थिति! अरे, संसार की क्षणभंगुरता!! भले सब पलट गया परन्तु यह भूमि और आकाश तो वह का वही है कि जो भगवान के समय था। भगवान के जन्म से यह भूमि भी मंगल है-पूज्य है। अहा! जब बाल तीर्थंकर यहाँ खेलते होंगे और छोटे से चरणों से पृथ्वी को पावन करते होंगे, तब इस भूमि का वैभव कैसा होगा!**—इस प्रकार सरयु के तीर ज्ञान-वैराग्य और भक्ति की प्रवाहित धारा में स्नान करके यात्री पावन हुए।

गुरुदेव के प्रवचन के पश्चात् कितने ही यात्री अयोध्या नगर देखने गये। यहाँ लगभग डेढ़ लाख लोगों की आबादी है, जैनों की आबादी बहुत कम है। यहाँ वैष्णवों के

राम-लक्षण-सीता इत्यादि के मन्दिर लगभग पाँच हजार होना कहा जाता है। रामराज्य के बदले आज तो यहाँ बन्दरों का साम्राज्य वर्त रहा है। जैनों का एक विशाल जिनमन्दिर है, जिसमें आदिनाथ तथा भरत-बाहुबली की प्रतिमा है तथा पाँच स्थलों में तीर्थंकरों की चरण-पादुका के मन्दिर हैं। तदुपरान्त हर्ष की बात है कि अभी अयोध्या नगरी में भगवान आदिनाथ की 32 फीट उन्नत मार्बल की भव्य प्रतिमाजी की स्थापना होनेवाली है; दुनिया की मार्बल की प्रतिमाओं में यह प्रतिमा सबसे बड़ी होगी। उसके लिये मार्बल का जो पाषाण प्रयोग किया गया है, उस पाषाण की ही कीमत 50,000 रुपये थी और प्रतिमाजी के स्थापन में लगभग चार लाख रुपये का खर्च अन्दाजित आया है। यह प्रतिमा तैयार होकर अयोध्या पहुँच गयी है।*

तदुपरान्त अयोध्या में एक दिगम्बर जैन ऋषभ ब्रह्मचर्याश्रम भी है, जिसमें कितने ही विद्यार्थी अभ्यास करते हैं।

अयोध्यायपुरी के यात्रा के पश्चात् यात्रियों ने भगवान की जन्मभूमि में भोजन किया। तत्पश्चात् जिनमन्दिर में दर्शन करके संघ के यात्रियों ने प्रस्थान की तैयारी की। शाम का पाथेय साथ में ले लिया और 'हे भगवान! आपकी नगरी की शीतल छाया में सन्तों के साथ-साथ आये हैं, आपका ही मार्ग अंगीकार करके आपकी मोक्ष भूमि की ओर आ रहे हैं और सन्तों के साथ आपके पुनीत पदचिह्नों पर भव का पार करके आपके पास आयेंगे।'—ऐसी भावनापूर्वक भगवान की चरणरज को मस्तक चढ़ाकर, जय-

*** COLOSSAL STATUE OF LORD ADINATH UNDER CONSTRCTION**

The colossal statue of Lord Adinath which was under construction at Makrana village, Jaipur has now been transported to Ayodhya, dist. Faizabad U.P., where it will be enshrined. The statue when completed will stand 32 feet high. It is learnt that it will be placed on a 12 feet high marbel plinth, The statue is being carved out from a single piece of marble which was purchased at a cost of Rs. 50,000. The cost involved in the completion of this statue is estimated at Rs. 4 lacs.

Negotiations are being made to obtain the garden of Rani of Ayodhya for enshrining world's one of the highest one - piece marble statues. The garden is surrounded on all sides with a high parapet wall and enclosed well laidout beautiful Flower-beds, B.J.I. News Service ('इंग्लिश जैन गजट' में से)

जयकारपूर्वक बनारस (काशी) नगरी की ओर प्रस्थान किया; पाँच भगवन्तों की जन्मभूमि में से अब चार भगवन्तों की जन्मभूमि की ओर चले। इस प्रकार लगातार तीर्थंकर भगवन्तों की कल्याणक भूमि आने से यात्रियों को बहुत आनन्द हुआ। मोटर बस में बैठे-बैठे यात्री भक्ति करते थे। पूज्य बहिनश्री-बहिन की मोटर भी साथ में ही थी, इसलिए विशेष हर्ष होता था। शाम को रास्ते में एक रमणीय वन में सब नाश्ता-पानी के लिये रुके। प्रवास के दौरान जब इस प्रकार वन में रुकने का प्रसंग बनता, तब यात्रियों को वनवासी सन्तों का विशेष स्मरण होता और वन का वातावरण सबको रुचिकर लगता। वन-भोजन के बाद पार्श्वनाथ प्रभु की धुन गाते-गाते शाम सात बजे पार्श्वनाथ इत्यादि भगवन्तों की जन्मभूमि में आ पहुँचे। यहाँ मेदागिन धर्मशाला में आवास था। धर्मशाला में ही पार्श्वप्रभु का भव्य जिनमन्दिर है। आते ही जिनमन्दिर में दर्शन-भक्ति करके, 133 मील की यात्रा की थकान से थके हुए यात्री दूसरे दिन सवेरे जल्दी उठकर गुरुदेव का स्वागत करने की भावना भाते हुए सो गये। गुरुदेव अयोध्यापुरी से प्रस्थान करके रात्रि में जौनपुर मुकाम में रुके और दूसरे दिन सवेरे बनारस नगरी की ओर पधारे।

तीर्थधाम बनारस

फाल्गुन कृष्ण अष्टमी के सवेरे सा..रे..ग..म.. का मधुर बाजा बजाती 'कल्याणवर्षिनी' भगवान के जन्मधाम में आ पहुँची। गुरुदेव बनारस पधारते ही पण्डित कैलाशचन्द्रजी, पण्डित फूलचन्द्रजी, प्रोफेसर खुशालचन्द्रजी इत्यादि सहित बनारस के जैन समाज ने तथा यात्रियों ने स्वागत किया। बनारस जैसे सुप्रसिद्ध शहर में दिगम्बर जैनों के मुश्किल से लगभग पच्चीस घर हैं, तथापि स्वागत सुशोभित हुआ था। स्वागत के समय गुरुदेव के साथ-साथ एक ओर सिद्धान्त शास्त्री पण्डित कैलाशचन्द्रजी और दूसरी ओर सिद्धान्त शास्त्री पण्डित फूलचन्द्रजी, इस प्रकार दो सिद्धान्त शास्त्रियों के बीच गुरुदेव का दृश्य प्रभावशाली था। (भारतवर्षीय दिगम्बर जैन विद्वत् परिषद के अध्यक्ष पद में भी ये दोनों विद्वान आ गये हैं।) यहाँ गुरुदेव के स्वागत के लिये तथा संघ की व्यवस्था के लिये और किसी भी प्रकार का विरोध न हो, इसलिए उपरोक्त दोनों विद्वान बन्धुओं ने बहुत लगनपूर्वक परिस्थिति सम्भाली थी। ये विद्वान सोनगढ़ आ गये हैं और सोनगढ़ के अध्यात्म वातावरण से वे प्रभावित हैं; गुरुदेव द्वारा हो रही दिगम्बर जैनधर्म की प्रभावना से उन्हें प्रसन्नता होती है। दिगम्बर सन्तों ने कहा हुआ जो परम सत्य कानजीस्वामी समझाते हैं, उसे जैन समाज किसी भी प्रकार समझे और जैनधर्म की प्रभावना हो-ऐसी पण्डित फूलचन्द्रजी को तो बहुत ही लगन है और उस लगन को अनुसरता कार्य यात्रा के दौरान जगह-जगह उन्होंने किया है और अभी भी कर रहे हैं। पण्डित कैलाशचन्द्रजी यहाँ के 'स्याद्वाद महाविद्यालय' के प्रधान अध्यापक तथा 'जैन सन्देश' के सम्पादक हैं, उनका भी समाज में अच्छा प्रभाव है और बनारस में गुरुदेव के स्वागत के लिये उन्होंने तथा पण्डित खुशालचन्द्रजी प्रोफेसर इत्यादि ने बहुत प्रेम से भाग लिया था। स्वागत धर्मशाला में आने पर गुरुदेव ने प्रथम जिनमन्दिर में पार्श्वप्रभु के दर्शन किये, पश्चात् उस धर्मशाला की अगासी में स्वागत सभा हुई, उसमें प्रथम पण्डित कैलाशचन्द्रजी ने संक्षिप्त स्वागत प्रवचन किया और तत्पश्चात पण्डित फूलचन्द्रजी ने स्वागत प्रवचन करते हुए कहा कि : ***आज हमारे सौभाग्य का विषय है कि स्वामीजी संघसहित इस नगरी में पधारे***

हैं। आपके द्वारा बड़ी धर्म प्रभावना हुई है। मुझे खेद है कि कुछ अनजान लोग धर्म की प्रभावना को तो ध्यान में नहीं लेते और बिना समझे ही विरोध करते हैं। —ऐसा कहकर गुरुदेव का संक्षिप्त जीवन और उनके द्वारा हुई प्रभावना का विशिष्ट परिचय दिया था, तथा संघ के साथ के मुख्य-मुख्य व्यक्तियों—पूज्य बहिनश्री तथा पूज्य बहिन, प्रमुख श्री रामजीभाई, पण्डित हिम्मतलालभाई इत्यादि का परिचय दिया था और अन्त में कहा कि **बनारस में स्वामीजी के स्वागत के इस प्रसंग को शोभित करने के लिये हमारे बन्धुवर पण्डित कैलाशचन्द्रजी ने विशिष्ट प्रयत्न किया है और इन्होंने हमारे बनारस की शान बनाये रखी है।**

तत्पश्चात मंगल प्रवचन में '**जीवो चरित्तदंसणणाणठ्ठिउ**'... पर बोलते हुए गुरुदेव ने कहा : **सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्ररूप से परिणमित होकर उसमें जो जीव स्थित है, वह स्वसमय है और वही मंगलरूप है... विकार में टिका हुआ जीव परसमय है। जीव की जीवनशक्ति ऐसी है कि वह अपने चैतन्य प्राण से जीता है; विकार में टिककर जीवे, ऐसा उसका स्वभाव नहीं है, परन्तु अपने ज्ञान-आनन्दस्वभाव में टिककर जीवे, वह उसका स्वभाव है और वही मंगलरूप है।**

कारणजीव 'त्रिकाल मंगल' है और उसके श्रद्धा-ज्ञान-चारित्र द्वारा जो परमात्मदशा प्रगट होती है, वह 'अपूर्व मंगल' है। इस प्रकार मंगल के आश्रय से मंगल प्रगट होता है। कारणस्वभाव के अवलम्बन से मोक्षमार्ग और मोक्षरूप कार्य होता है; ऐसा कार्य प्रगट करके स्वसमयरूप से जीना, वह मांगलिक है। इस प्रकार भगवान के जन्मधाम में मांगलिक किया।

जिसका दूसरा नाम काशी है, ऐसी यह बनारसी नगरी गंगा नदी के किनारे ही स्थित है और सुपार्श्वनाथ तथा पार्श्वनाथ भगवन्तों के जन्मकल्याणक से यह पावन हुई है; तदुपरान्त चन्द्रप्रभु की चन्द्रपुरी यहाँ से चौदह मील दूर है और श्रेयांसनाथ की सिंहपुरी सात मील दूर है। इस प्रकार बनारस नगर लगभग चार भगवन्तों का जन्मधाम है। भगवन्तों के जन्मधाम में गुरुदेव के साथ विचरते यात्रियों को आनन्द हुआ। गुरुदेव का भोजन पूज्य बहिनश्री-बहिन के यहाँ हुआ; भोजन के बाद दोपहर में जन्मधामों की यात्रा के लिये चल दिये। प्रथम चन्द्रपुरी आये....

चन्द्रपुरी तीर्थधाम की यात्रा

चन्द्रप्रभ भगवान का जन्मधाम चन्द्रपुरी गंगानदी के किनारे है। गंगा के तीर से ऊँची जगह पर सुन्दर जिनमन्दिर में चन्द्रप्रभ भगवान विराजमान हैं। गुरुदेव के साथ यात्रियों ने चन्द्रपुरी में चन्द्रप्रभ के दर्शन किये। यहाँ चन्द्रप्रभ के चरणकमल भी हैं, उनके भी दर्शन करके सबने अर्घ्य चढ़ाया।

अतिशय क्षेत्र सुचंद्रपुरी जहाँ चंद्रप्रभु अवतारी
दीजे शिवसुख नाथ हमें प्रभु दुःख भवोदधि हारी...

अर्घ्य चढ़ाने के बाद गुरुदेव ने चन्द्रप्रभ की भक्ति करायी। लगभग प्रत्येक तीर्थधाम में गुरुदेव भक्ति कराते थे, इससे भक्तों को बहुत आनन्द होता था। गुरुदेव की भक्ति के बाद गंगा तीर में इस जन्मधाम में पूज्य बहिनश्री-बहिन ने भगवान के जन्म की बधाई गवायी—

आज तो बधाई राजा चन्द्रसेन दरबारजी....
चन्द्रसेन दरबार... राजा... चन्द्रसेन दरबारजी... आज तो बधाई०
विमला देवी बेटो जायो... जायो चंद्रकुमारजी....
देव-देवेन्द्रे उत्सव किनो, घरघर मंगलाचारजी... आज तो बधाई०

ठसाठस भरे हुए चन्द्रप्रभ के दरबार में बहुत आनन्दपूर्वक भगवान के जन्म की बधाई झेल रहे थे। बनारस से चौदह मील दूर यह चन्द्रपुरी अभी एकदम गाँव जैसी दशा में है, परन्तु मन्दिर का स्थान बहुत रमणीय और शान्त है; गंगा किनारे जन्मधाम का दृश्य भक्तों को प्रसन्नता उत्पन्न कराता है। वह स्थान देखते ही ऐसा लगता है कि वाह! कैसी सरस भूमि है! भगवान छोटे होंगे, तब यहाँ खेलते होंगे और इस गंगा नदी में नहाते होंगे... और इससे ही यह गंगा नदी तीर्थ कहलायी होगी। भगवान के चरण प्रताप से यह स्थान अभी भी शोभित लगता है। ऐसे कल्याणकधाम की गुरुदेव के साथ वन्दना की। भगवान के जन्मकल्याणक धामरूप से अपनी यात्रा में यह चौथे तीर्थ की वन्दना हुई और लगभग यह ग्यारहवें तीर्थधाम की वन्दना हुई। इस प्रकार चन्द्रप्रभ भगवान के जन्मधाम की यात्रा करके जय-जयकार करते हुए सिंहपुरी की ओर चल दिये।

चन्द्रपुरी तीर्थधाम में विराजमान चन्द्रप्रभ को नमस्कार।
चन्द्रपुरी तीर्थ की यात्रा करानेवाले कहान गुरुदेव को नमस्कार।

सिंहपुरी तीर्थधाम की यात्रा

श्रेयांसनाथ प्रभु की जन्मभूमि सिंहपुरी बनारस से सात मील दूर है। इस सिंहपुरी में श्रेयांसनाथ प्रभु का सुन्दर जिनमन्दिर है; उसमें प्रवेश करके भगवान को निहारते ही हृदय में शान्ति की धारा पड़ती है... अहा! कैसा सरस शान्ति का धाम! श्रेयांस प्रभु की मुद्रा बहुत ही भाववाहिनी है, नैनों में से तो मानो शान्त रस नितर रहा है। ऐसा शान्तिधाम निरखकर गुरुदेव को बहुत प्रसन्नता हुई और बहुत भावपूर्वक जन्मधाम में विराजमान श्रेयांसप्रभु के दर्शन करके सैकड़ों यात्रियों सहित गुरुदेव ने अर्घ्य चढ़ाया... तत्पश्चात पूज्य बहिनश्री-बहिन ने भक्ति करायी। गुरुदेव के साथ तीर्थों की वन्दना और भक्ति करते हुए यात्रियों को अद्‌भुत उत्साह आता था। किसी-किसी समय तो भक्ति इत्यादि के अद्‌भुत प्रसंग बनते कि देखनेवाले को आश्चर्य होता। यहाँ भक्तों ने प्रार्थना करने पर गुरुदेव ने भी एक भजन गवाया था, गुरुदेव भावभीने चित्त से अपने मीठे-मधुर हलक से भजन बोलते... और भक्त उमंगपूर्वक उसे झेलते थे, उस समय कोई-कोई भक्त भक्ति के उमंग से भगवान को चँवर भी ढोलते थे। तदुपरान्त—

मैं तेरे ढीग आया रे... श्रेयांसप्रभु ढीग आया...
हांजी रटता रटता आया रे... कहानगुरु साथ आया...

— इत्यादि भक्ति भी हुई थी। इस प्रकार गुरुदेव के साथ श्रेयांस नाथ प्रभु का बहुत सरस शान्त वातावरणवाला जन्मधाम देखकर और भक्ति करके भक्तों का हृदय तृप्त हुआ और जय-जयकारपूर्वक सिंहपुरी तीर्थधाम की यात्रा पूरी हुई। [इस प्रकार अभी तक में (38 दिनों में) लगभग आठ सिद्धक्षेत्रों की और पाँच जन्मकल्याणक तीर्थधामों की यात्रा गुरुदेव ने करायी। कुल नौ भगवन्तों के जन्मधाम हमने देखे और कुल बारह तीर्थों की मंगल यात्रा गुरुदेव के साथ हुई।] *

सिंहपुरी तीर्थधाम में विराजमान श्रेयांसनाथ भगवान को नमस्कार हो।
सिंहपुरी तीर्थधाम की यात्रा करानेवाले गुरुदेव को नमस्कार हो।

卐

*** आठ सिद्धक्षेत्र : गजपंथा, मांगीतुंगी, वडवानी, पावागीर-ऊन, सिद्धवरकूट, सोनागिर, शौरीपुर, मथुरा।**
पाँच जन्मकल्याणकधाम : शौरीपुर, रत्नपुरी, अयोध्या, चन्द्रपुरी, सिंहपुरी।

श्रेयांसप्रभु के जन्मधाम की यात्रा करके गुरुदेव के साथ यात्री बाहर आये। यहाँ दिगम्बर जैन मन्दिर के सामने के भाग में नजदीक में बौद्धों का सारनाथ स्तूप तथा बौद्ध मन्दिर इत्यादि हैं, उनका भी अवलोकन किया। उस समय यहाँ कितने ही यूरोपियन मुसाफिर भी आये हुए थे। गुरुदेव का अतिशय प्रभाव और अध्यात्म तेज से सुशोभित उनकी मुद्रा देखकर उन यूरोपियनों को ऐसा हो गया कि 'अहा! मेरे देश के लोग भी भारत के ऐसे महान सन्त के दर्शन करें।' इस प्रकार अपने देश के लोगों को दर्शन कराने के लिये उसने गुरुदेव की फिल्म उतार ली; और उस गुरुदेव की फिल्म उतारनेवाले की फिल्म हमने उतार ली। जैसे अपनी यात्रा की फिल्म देखते हुए अपने को वह यूरोपियन भाई दिखायी देता है, उसी प्रकार उसने उतारी हुई फिल्म यूरोप इत्यादि में जहाँ-जहाँ देखी जाती होगी, वहाँ-वहाँ उसमें भारत के महान सन्त के दर्शन से यूरोपियन लोग प्रसन्न होते होंगे। यहाँ बौद्ध मन्दिर के घण्टे का आवाज यद्यपि मधुर था तो भी कल्याणवर्षिनी के सुमधुर सुर की तुलना में वह नहीं आ सकता। कहाँ से आवे ? क्योंकि उस घण्टे को कहाँ कल्याण बरसानेवाले सन्तों का सुयोग मिला था! जबकि इस कल्याणवर्षिनी को तो वास्तव में कल्याण बरसानेवाले सन्त का सुयोग सम्प्राप्त हुआ था। इसलिए वह तो गुरुदेव की कल्याणकारिणी मधुर वाणी की नकल करना सीख गयी थी।

बौद्ध मन्दिर के बाद सारनाथ का म्यूजियम देखने गये थे परन्तु उसमें सार जैसा कुछ नहीं लगने से कल्याणवर्षिनी तो गुरुदेव को लेकर झटपट बनारस पहुँच गयी। कल्याणकारी ऐसे श्री जिनेन्द्र भगवान जहाँ न विराजते हों, वहाँ कल्याणवर्षिनी को कैसे रुचे (रुचे ही नहीं)। इसलिए ऐसे स्थानों से तो वह तुरन्त ही भागती थी; कल्याणवर्षिनी जाने पर उसके पीछे संघ की सभी मोटरें भी सरसराहट करती हुई चली जा रही थीं क्योंकि कल्याणवर्षिनी तो संघ की सभी मोटरों में 'इंजन' जैसी थी।

कल्याणवर्षिनी में बैठकर भगवान के कल्याणधाम की यात्रा कर आने के बाद कल्याण का उपाय दर्शाते हुए रात्रि चर्चा में गुरुदेव ने कहा कि **भूतार्थस्वभाव का आश्रय करना, वही कल्याण का उपाय है।** रात्रि चर्चा शहर के टाउनहॉल में थी और काशी के अनेक पण्डितों के उपरान्त दूसरे भी लोग तत्त्वचर्चा में रस लेते थे और अध्यात्म की सूक्ष्म चर्चा सुनकर प्रमुदित होते थे।

★ ★ ★

इस काशी नगरी में गुरुदेव संघसहित दो दिन रहे थे। गुरुदेव के निकट में ही आवास होने से भक्तजनों को सवेरे उठते ही गुरुदेव के दर्शन होने से आनन्द होता था और बारम्बार गुरुदेव के चरणों में जाकर यात्रा की उमंग व्यक्त करते थे।

(दूसरे दिन फाल्गुन कृष्ण नौ के दिन) सवेरे गुरुदेव रत्नप्रतिमा के दर्शन को पधारे। रेवाबाई की धर्मशाला के सामने भाट गली में धर्मचन्द झवेरी के मकान में तीसरी मंजिल के गृहचैत्य में पार्श्वप्रभु की सुन्दर रत्नप्रतिमा है; भक्तजन सहित गुरुदेव ने भावपूर्वक उस रत्नप्रतिमा को अर्घ्य चढ़ाया। उस रत्नप्रतिमा की मुद्रा में झलकती रत्नत्रय की प्रभा को बारम्बार निहारा। इस प्रकार बनारस में जन्मे हुए पार्श्वनाथ भगवान की रत्नप्रतिमा के गुरुदेव के साथ दर्शन होने से सबको आनन्द हुआ और दर्शन करने के बाद मार्ग में भक्ति करते-करते सब दूसरे मन्दिर की ओर चल दिये।

जय पारस जय पारस जय पारस देवा,
बनारसी में जन्म लिया प्रभु हो देवन के देवा... जय०
बनारसी में गुरुजी साथ दर्शन तारां कीधां,
गुरुवर साथे जन्मभूमिमां पार्श्वप्रभुजी दीठां... जय०
रत्नत्रयना धारक अेवा रत्नप्रतिमा सोहे,
गुरुदेव साथ जात्रा करतां भक्तो जय जय बोले... जय०

महान काशीनगरी की सकड़ी गलियों में गुरुदेव के साथ-साथ भक्तों का लम्बा कारवां भक्ति करते-करते चला जा रहा था। वह दृश्य सरस था। तत्पश्चात् पंचायती मन्दिर के दर्शन करके, सभी यात्री पार्श्वनाथ प्रभु की जन्मभूमि के दर्शन को चल दिये।

★ ★ ★

पार्श्व-जन्मधाम की यात्रा

बनारस में ही भेलूपुर में पार्श्वनाथ भगवान का जन्मधाम है। गुरुदेव तो शीघ्रता से वहाँ पहुँच गये और दूसरे यात्री भी रिक्शा में बैठ-बैठकर वहाँ जाने लगे। सैकड़ों रिक्शा दौड़ा-दौड़ करते हुए भगवान के जन्मधाम की ओर जा रहे थे। बहुत से रिक्शा तो ऐसी शीघ्रता से दौड़ रहे थे कि 'कल्याणवर्षिनी' के साथ ही पहुँच गये।

यहाँ भेलूपुर में कुल तीन मन्दिर हैं। उनमें से दो दिगम्बर जैनों के हैं और एक श्वेताम्बर-दिगम्बरों का संयुक्त है। पहले एक मन्दिर में पार्श्वनाथ प्रभु के दर्शन किये, उसमें धरणेन्द्र और पद्मावती देवी, उपसर्ग के समय पार्श्वनाथ प्रभु की सेवा कर रहे हैं,—कमठ के घोर उपसर्ग के समय, नीचे हजार पंखुड़ी का कमल और ऊपर हजार फण का छत्र धरकर भगवान को जल से अत्यन्त अलिप्त रखते हैं।—इस भक्तिभीने दृश्य में पार्श्वनाथ प्रभु के दर्शन करके सब बगल के मन्दिर में आये। यह मन्दिर दिगम्बर-श्वेताम्बर दोनों का संयुक्त है और एक ही वेदी पर दोनों की अलग-अलग प्रतिमाएँ विराजमान हैं। वेदी के पीछे के भाग में पार्श्वनाथ प्रभु के चरणकमल हैं। यहाँ पार्श्वनाथ भगवान का जन्मधाम गिना जाता है। भगवान के जन्मधाम में भगवान के दर्शन करते हुए सबको बहुत आनन्द हुआ। यद्यपि इस मन्दिर में मिश्र-परिस्थिति थी तो भी 'अपने भगवान यह रहे' ऐसे भाव से सब भक्त वीतरागी पार्श्वप्रभु को भेंटे... अर्घ्य चढ़ाया... और फिर पूज्य बहिनश्री-बहिन ने पार्श्वप्रभु की भक्ति करायी।

पार्श्व जिणंद ने प्रीतथी नित्य वंदुं...
हांरे नित्य वंदुं रे.... नित्य वंदुं....
हांरे कीधां पाप ते सर्व निकंदुं,
हांरे करी दरिशण आज.... पार्श्व....

बनारसी नगरी अति मनोहारी,
हांरे सहु जनने अति सुखकारी,
हांरे अश्वसेनराय घरनारी,
हांरे वामा देवीना नंद... पार्श्व...

पार्श्व प्रभु के जन्मधाम से पावन प्रसिद्ध काशी तीर्थ का नाम बहुत समय से सुनते थे और उसे स्मरण कर-करके भक्ति करते थे। आज गुरुदेव के साथ यह काशी धाम नजरों से निहारकर और इस तीर्थधाम में पार्श्वप्रभु का भजन करने पर भक्तों की बहुत समय की भावना पूर्ण हुई, इसलिए सभी को बहुत आनन्द हुआ। गुरुदेव भी काशी नगरी को भावपूर्वक निहारते थे... पण्डित कैलाशचन्द्रजी साथ के साथ रहकर सब बतलाते थे... और गुरुदेव का तथा यात्रीसंघ का अन्तर का ऐसा भक्तिभाव देखकर वे आश्चर्य को प्राप्त होते थे।

काशीनगरी के भेलूपुर में पार्श्वनाथ प्रभु के सन्मुख भक्तों की भीड़ जमी है, पूरा मन्दिर खचाखच भर गया है और भक्ति चल रही है।

जय पारस जय पारस जय पारस देवा... जय०
माता तोरी वामादेवी पिता अश्वसेना...
काशीजी में जन्म लीया प्रभु हो देवन के देवा... जय०

भगवान के जन्मधाम में सैकड़ों भक्तों ने खड़े-खड़े अति उत्साह से बहुत ही भक्ति की। 'बनारसी में जन्म लिया... प्रभु...' यह धुन सोनगढ़ में तो बहुत समय से बोलते थे और उस समय पार्श्व भगवान की बनारसी नगरी देखने के लिये भक्तों का हृदय तरसता था। आज गुरुदेव के साथ बनारसी नगरी में पार्श्वप्रभु की जन्मभूमि देखकर उन भक्तों के हृदय की इच्छा पूरी हुई... और भक्तों ने भावपूर्वक भक्ति की। अनेक भक्त तो भक्ति करते-करते नाच उठे... यात्रा में दर्शनादि के बाद जहाँ तक अन्तिम खास धुन न हो, तब तक यात्रा का कार्यक्रम अधूरा ही गिना जाता... पूज्य बहिनश्री-बहिन की जोरदार धुन के पश्चात् गगनभेदी जयकारपूर्वक यात्रा का कार्यक्रम पूरा होता था।

पार्श्वप्रभु की भक्ति की जोरदार धुन पूरी होने पर उस वेदी के पिछले भाग में विराजमान श्री पार्श्वनाथ प्रभु के पावन चरण पादुका के दर्शन करके, भावपूर्वक सब भगवान के चरणों को भेंटे और प्रार्थना की : 'हे नाथ! इस भवसमुद्र में डूबते जीवों को उभारने के लिये आपके पावन चरणों का ही अवलम्बन है। आपके यह चरण पकड़कर उनके अवलम्बन से हम इस भवसमुद्र को तिर जाएँगे।'

इस प्रकार भेलूपुर में पार्श्वप्रभु के दूसरे जिनमन्दिर में दर्शन-भक्ति करके, बगल के तीसरे मन्दिर में सबने दर्शन किये। इस मन्दिर में तीन वेदियाँ हैं, उन पर विराजमान पार्श्वनाथादि जिनेन्द्र भगवन्तों के दर्शन करके गुरुदेव सहित सभी यात्रियों ने अर्घ्य चढ़ाया—और फिर पार्श्वप्रभु की जय-जयकार करते हुए और यात्रा का आनन्द व्यक्त करते हुए सब धर्मशाला की ओर आये। इस प्रकार पूज्य गुरुदेव के साथ की इस 'मंगल यात्रा' में छठवें कल्याणकधाम की यात्रा हुई।

बनारस तीर्थधाम में विराजमान पार्श्वनाथ भगवान को नमस्कार हो।

पार्श्वनाथ जन्मधाम की यात्रा करानेवाले गुरुदेव को नमस्कार हो।

★ ★ ★

भेलूपुर में भगवान के जन्मधाम के पास अनेक मोटरें और सैकड़ों रिक्शाओं की भीड़ जमा थी और गाँव-गाँव के भक्तजन आकर भगवान के जन्मधाम का अभिनन्दन करते थे, इसलिए पूरी नगरी में आनन्द का वातावरण जम गया था। भगवान के जन्म प्रसंग में जैसे पूरे विश्व में आनन्द छा जाता है, वैसे यहाँ भगवान के जन्मधाम की यात्रा प्रसंग में पधारने से सम्पूर्ण नगरी में आनन्द छा गया था। और इस प्रकार तीर्थंकरों के कल्याणकारी शासन का प्रभाव अभी भी भारत में गुरुदेव के प्रताप से कैसे वर्त रहा है—यह प्रगट दिखायी देता था।

सुपार्श्व-जन्मधाम की यात्रा

बनारसी नगरी में पूज्य श्री कानजीस्वामी दिगम्बर जैन तीर्थयात्रा संघ का माघ कृष्ण नौ के दिन का यह वर्णन चल रहा है। सवेरे पार्श्वप्रभु के जन्मधाम की यात्रा के पश्चात् भोजनादि के बाद गुरुदेव गंगा किनारे 'स्याद्वाद महाविद्यालय' में पधारे। सुपार्श्वनाथ भगवान का जन्मधाम भी यहीं है। गुरुदेव के साथ-साथ सैकड़ों भक्तों की हारमाला भी चली। सबसे आगे सा.. रे.. ग.. म.. सुन्दर सुर द्वारा सुपार्श्व प्रभु की स्तुति बोलती गुरुदेव की कल्याणवर्षिनी शोभित होती थी, उसके पीछे दूसरी अनेक मोटरें और रिक्शाओं का लम्बा लंगर और उन सबमें पहले रिक्शे में पूज्य बहिनश्री-बहिन, ऐसा यात्रा-कारवां जहाँ-जहाँ से गुजरता जाता था, वहाँ सैकड़ों नगरजन आश्चर्य से देखते रहते... और 'क्या है... क्या है...' ऐसा पूछते, तब यात्री हर्ष से जवाब देते कि 'सोनगढ़ से कानजीस्वामी का संघ आया है... और भगवान के जन्मधाम में जा रहा है।'—यह सुनकर नगरजन भी आनन्दित होते।

इस प्रकार नगर में आनन्द का वातावरण फैलाते-फैलाते यात्रियों का समूह गंगा नदी के भदैनी घाट पर आ पहुँचा। 'स्याद्वाद महाविद्यालय' और सुपार्श्वप्रभु का जन्मधाम इस भदैनी घाट के ऊपर ही स्थित है। गुरुदेव के पधारने पर विद्यालय के विद्यार्थियों ने पुष्पवृष्टि द्वारा स्वागत किया। ऊपर से पुष्पवृष्टि का सुन्दर दृश्य ऐसा शोभित होता था-मानो कि अभी ही सुपार्श्व प्रभु का जन्मकल्याणक मनाया जाता हो और आकाश में से देव रत्नवृष्टि करते हों। यहाँ गंगा किनारे भदैनी घाट पर दो जिनमन्दिर हैं, एक विद्यालय के बाहर के भाग में है, दूसरा विद्यालय के अन्दर भोंयरे में है। पहले बाहर के मन्दिर के दर्शन करके विद्यालय में आये। यहाँ जन्मधाम में सुपार्श्वनाथ इत्यादि भगवन्त विराजते हैं; बहुत भाव से उनके दर्शन करके सबने अर्घ्य चढ़ाया। अहा! सन्तों के साथ इस जन्मधाम की यात्रा से सबको आनन्द हुआ... भगवान के जन्मधाम के कारण यहाँ से प्रवाहित गंगा नदी भी कैसी सुशोभित भासित होती है! गंगानदी दूर-दूर से कल्लोलें उछालती हुई भगवान के चरणों को भेंटने के लिये दौड़ी आती है और सुपार्श्व प्रभु के चरणों की समीपता पाकर गौरववन्ती बन जाती है। अहा! जिन सुपार्श्व प्रभु के चरणों की

समीपता के प्रभाव से गंगा का जल भी लोगों में पवित्र माना गया, उन सुपार्श्व प्रभु के चरणों की पवित्रता की क्या बात! गंगा किनारे पवित्र जन्मधाम में भक्ति के लिये भक्तों की विशाल भीड़ जमी थी। दर्शन-पूजन के बाद पूज्य बहिनश्री-बहिन ने बहुत भाव से यह तीर्थ का स्तवन गवाया—

जय सुपार्श्व प्रभो... स्वामी जय सुपार्श्व प्रभो...
बनारसी में जन्म लिया प्रभु हो तारक देवा... ॐ जय सुपार्श्व प्रभो।
धन्य पिता धन्य मात प्रभुना, धन्य त्रिभुवन स्वामी... अहो, धन्य त्रिभुवन स्वामी,
पावन मंगलकारी बनारसी (2) जनम्या जगनामी... ॐ जय सुपार्श्व प्रभो।
जन्मकल्याणक सुरपति ऊज्वे... मात-पिता द्वारे... अहो! मात पिता द्वारे,
(जन्म कल्याणक सुरपति ऊज्वे... उतरे भरत मोझार... अहो, उतरे भरत मोझार)
जन्मोत्सव ने स्मरण करतां, आनंद अपरंपार... ॐ जय सुपार्श्व प्रभो।
महाप्रसंग ने स्मरण करतां, आनंद अपरंपार.... ॐ जय सुपार्श्व प्रभो।
श्री गुरुवर संगे दर्शन करतां हर्षतणो नहि पार... स्वामी हर्षतणो नहि पार,
निशदिन गुरुवर संगे रहीये, अे ज अरज दिनरात... ॐ जय सुपार्श्व प्रभो।

सुाश्र्व प्रभु के जन्मधाम में आनन्द भरे वातावरण के बीच अनेक स्तवनों से बहुत उल्लासपूर्वक भक्ति हुई। बीच-बीच में गुरुदेव भी यात्रा का हर्ष और प्रसन्नता व्यक्त करते थे। आज की भक्ति के समय बहुत आनन्द का वातावरण था। अद्‌भुत भक्तिपूर्वक गुरुदेव के साथ यात्रा करते हुए सबको बहुत आनन्द हुआ। इस प्रकार उल्लासपूर्वक जन्म कल्याणक धाम में भक्ति करके सभी सुपार्श्व प्रभु का जय-जयकार करते हुए भोंयरा में से ऊपर स्याद्वाद महाविद्यालय के मुख्य हॉल में आये—मानो भक्ति गुफा में से निकलकर ज्ञान पर्वत पर आये। इस प्रकार सुपार्श्वनाथ प्रभु के जन्म कल्याणक धाम की यात्रा पूर्ण हुई। अपनी तीर्थयात्रा में यह छठवाँ तीर्थधाम था और अभी तक में कुल तेरह तीर्थधामों की यात्रा हुई।

बनारस तीर्थधाम में विराजमान सुपार्श्वनाथ भगवान को नमस्कार हो।
सुपार्श्वनाथ जन्मधाम की यात्रा करानेवाले गुरुदेव को नमस्कार हो।

★ ★ ★

सुपार्श्वनाथ प्रभु के जन्मधाम की यात्रा पूर्ण होने पर स्याद्वाद महाविद्यालय का वार्षिक अधिवेशन शुरु हुआ.... गुरुदेव के सम्मान के निमित्त उनकी छत्रछाया में ही यह अधिवेशन आयोजित किया गया था। काशी का यह स्याद्वाद विद्यालय दिगम्बर जैन समाज की 52 वर्ष से पुरानी विद्या संस्था है, अनेक विद्वान इसमें पढ़े हैं। श्री कैलाशचन्द्रजी सिद्धान्त शास्त्री इसके प्रधान अध्यापक हैं। विद्यालय के मुख्य हॉल में अधिवेशन हुआ था। इस हॉल की दीवारों पर मानतुंगस्वामी के भक्तामर स्तोत्र की 48 कड़ी सम्बन्धी 48 चित्र भाववाही और सुशोभित है। यात्रासंघसहित गुरुदेव यहाँ पधारने पर अध्यापकों तथा स्नातकों ने हर्षपूर्वक स्वागत किया था। और स्वागत प्रवचन करते हुए पण्डित कैलाशचन्द्रजी ने कहा था कि— ***पूज्य स्वामीजी सौराष्ट्र में से इस तरफ पहली बार पधार रहे हैं-यह जब से सुना तब से हमारे हर्ष का पार नहीं था। और आज हमारे विद्यालय में आपको विराजमान देखकर हमें और भी विशेष हर्ष हो रहा है। यह वही पावन नगरी है जिस नगरी में श्री पार्श्व-सुपार्श्व तीर्थंकरों ने जन्म लिया है। गंगा के तीर पर इस विद्यालय में ही सुपार्श्वप्रभु का जन्मधाम है। 52 वर्ष पहले स्थापित इस विद्यालय में 7 अध्यापक हैं, 55 विद्यार्थी हैं, 3000) रुपये मासिक खर्च है और भारत की सबसे बड़ी संस्कृत कॉलेज जो कि काशी में है - उसके साथ इस विद्यालय का सम्बन्ध है, उत्तर भारत का यह एक आदर्श विद्यालय है। हमारे इस विद्यालय में भारत के अनेक राजनैतिक नेता (गाँधीजी वगैरह) तथा धार्मिक नेता आ गये हैं, लेकिन अब तक इन महाराजजी का आगमन नहीं हुआ था। वे भी आज पधारने से हमको बड़ी प्रसन्नता हो रही है और हम महाराजजी के साथ-साथ संघ के सभी सदस्यों का भी हार्दिक स्वागत करते हैं।***

तत्पश्चात् पण्डित श्री फूलचन्द्रजी सिद्धान्त शास्त्री ने भी भावभीना स्वागत करते हुए कहा— ***हमारा बड़ा सौभाग्य है कि आज एक बड़े आध्यात्मिक सन्त हमारे विद्यालय में पधारे हैं। जैसे यहाँ पर गंगा का प्रवाह बह रहा है, वैसे ही आप यहाँ पर स्वामीजी के मुख से अध्यात्मगंगा प्रवाह बहता हुआ देखेंगे।*** तत्पश्चात् गुरुदेव का संक्षिप्त जीवन परिचय दर्शाकर पण्डितजी ने कहा कि— ***स्वामीजी ने समयसार अपने जीवन में उतार दिया है, यहाँ के लोगों ने स्वामीजी का प्रवचन सुना और आँखें खुल गयीं। लोग व्यामोह में पड़ गये हैं कि यह क्या कहते हैं। आप सम्यक्त्व के ऊपर ही भार देते हैं, क्योंकि वही तो दुर्लभ है। तीन लोक में अनन्तानन्त जीव हैं, उसमें त्रसजीव असंख्यात***

ही हैं, उसमें भी पंचेन्द्रिय कम हैं, और पंचेन्द्रियों में भी सम्यग्दृष्टि तो पल्य के असंख्यातवें भाग प्रमाण ही हैं, इस तरह संसार में सम्यक्त्व अतीव दुर्लभ है। सम्यक्त्व की तो क्या बात, सम्यक्त्व न हो लेकिन भद्र हो—सम्यक्त्व की बात आदरपूर्वक सुनता हो—तो वह भी सुमार्गशाली हैं, क्योंकि यथार्थ देशनालब्धि भी बहुत महत्त्व की है। ऐसी देशनालब्धि जहाँ मिलती है, वहाँ तक जो भाई-बहन पहुँचे हैं, वे भी अभिनन्दनीय है।

आगे उन्होंने कहा—***स्वामीजी 500 भक्तों की मण्डली के साथ यहाँ पधारे हैं, उनका कितना धर्म प्रेम है! कितना विश्वास है! कितनी श्रद्धा है! यही मैं तो देख रहा हूँ। मेरी सात साल की लड़की जो कि स्कूल जाती थी, एक बार मैंने उससे पूछा : बेटी, तुझको किसने बनाई? वह बोली 'ईश्वर ने मुझे बनायी' यह सुनते ही मेरा मस्तक चक्कर में पड़ गया—मेरे हृदय में चोट लग गई : अरे! कहाँ तो जैनधर्म की संस्कृति! और कहाँ ये ईश्वर-कर्तृत्व के संस्कार! बस, तभी से जैन संस्कृति के प्रचार की मुझे धुन लगी थी। और आज स्वामीजी के सान्निध्य में इस स्याद्वाद महाविद्यालय का सुवर्ण अवसर देखकर मुझे प्रसन्नता हो रही है। अब इस अधिवेशन के उपलक्ष में विद्यालय में ही स्वामीजी का प्रवचन होगा।***

पण्डित फूलचन्द्रजी के उपरोक्त भाषण के बाद उपसभापति तथा मन्त्रीजी ने गुरुदेव के चरणसमीप माला अर्पण करते हुए कहा—***हम पूज्य गुरुदेव को माला अर्पण करके आपका सन्मान करते हैं, और संघ के प्रमुखश्री तथा मन्त्रीजी को भी माला अर्पण करके सारे संघ का हम विद्यालय में स्वागत करते हैं।*** इस प्रकार काशीनगरी में गंगा किनारे स्याद्वाद महाविद्यालय के अधिवेशन में स्वागत विधि होने के बाद पूज्य गुरुदेवश्री का प्रवचन शुरु हुआ।

समयसार की 11वीं गाथा पर प्रवचन करते हुए गुरुदेव ने कहा : **जगत में स्याद्वाद, वह महाविद्या है। उस स्याद्वाद विद्या द्वारा अर्थात् भावश्रुतज्ञान द्वारा अन्तर में भूतार्थ स्वभाव का आश्रय करना, वह मुक्ति का कारण है। भूतार्थ स्वभाव की विद्या बिना सम्यग्दर्शन-सम्यग्ज्ञान-सम्यक्चारित्र नहीं होता; इसलिए शुद्धस्वभाव का आश्रय करना और रागादि का आश्रय छोड़ना, वह स्याद्वाद विद्या का तात्पर्य है। इस प्रकार सम्यग्ज्ञानरूपी महास्याद्वाद विद्या का उपाय कहा। ऐसी स्याद्वाद विद्या, वही मोक्ष का कारण है। 'सा विद्या या विमुक्तये' वह यह ही विद्या है।**

अहा, स्याद्वाद विद्यालय में गुरुदेव के श्रीमुख से जहाँ श्रुतगंगा बहने लगी, वहाँ तो बेचारी गंगा नदी शर्माकर दूर-दूर भागने लगी 'अहा! इस अध्यात्म गंगा के पावन प्रवाह के समक्ष मेरे जड़ प्रवाह की क्या गिनती है? इस श्रुतगंगा का जल तो जीवों के अज्ञान मल को धो डालता है, जबकि मैं तो स्वयं अज्ञानमय जल से भरी हूँ, तो मुझमें अज्ञान मल को धोने की सामर्थ्य कहाँ से होगी!!'—ऐसा विचारती हुई बेचारी गंगा नदी सुपार्श्व प्रभु के चरणों में वन्दन करके नीचे चली गयी। गंगा तीर पर 'स्याद्वाद विद्यालय' में गुरुदेव ने स्याद्वाद विद्या की गंगा बहायी। लोग कहते हैं कि गंगा जल में स्नान करने से जीवों के पाप धुल जाते हैं, यह बात तो सत्य, परन्तु वह गंगा कौन सी? गुरुदेव के प्रवचन-समय दोनों गंगा यहाँ एक साथ चल रही थीं। ऊपर तो स्याद्वाद विद्या के प्रवाह से भरपूर श्रुतगंगा बहती थी और नीचे जड़ पानी के प्रवाह से भरपूर गंगा नदी बहती थी; उस जड़ गंगा में नहीं परन्तु श्रुतगंगा में स्नान करनेवाले जीव पावन हो जाते थे। प्रवचन में श्रोताओं को कोई बात सूक्ष्म लगती, तब गुरुदेव कहते—देखो, यह काशी तो विद्या का धाम गिना जाता है, इसलिए सूक्ष्म बात न समझ में आये, ऐसा कहोगे, वह नहीं चलेगा।

प्रवचन के बाद विद्यालय की अगासी में आकर गुरुदेव ने तथा यात्रियों ने काशी नगरी का और गंगा नदी का अवलोकन किया; नदी में तैरती अनेक नौकायें, भव पार होने के लिये भगवान के उपदेश का तथा भेदज्ञान नौका का स्मरण कराती थी। गंगा नदी और उसके किनारे काशी नगरी का दृश्य बहुत रमणीय है—जिसे निहारते हुए पार्श्व और सुपार्श्व प्रभु के संस्मरण ताजा होते हैं। पुनः-पुनः प्रसन्नता से नगरी का सौन्दर्य निहारकर, सुपार्श्व प्रभु के जय-जयकार पूर्वक कार्यक्रम पूरा हुआ। तत्पश्चात् वहाँ से गुरुदेव 'सन्मति-निकेतन' (जैन विद्यालय) में पधारे, वहाँ प्रोफेसर खुशालचन्दजी पण्डित तथा विद्यार्थियों ने भावपूर्वक स्वागत किया, वहाँ से वापिस मुड़ते हुए मार्ग में काशी विश्वविद्यालय इत्यादि का सामान्य अवलोकन किया था। आसपास में ही श्री महावीर भगवान का मन्दिर है, उसमें सब यात्री दर्शन करने गये। यह दिगम्बर जैन मन्दिर श्री सेठ हुकमचन्दजी सेठ का बनाया हुआ है, मन्दिर के रमणीय और उपशान्त वातावरण में वीर भगवान उपशान्त रस में झूल रहे हैं; उन भगवान के सन्मुख भक्त शान्ति से बैठे, आनन्दरस झरती भव्य मुद्रा निहारकर और शान्तचित्त से भक्ति की। तत्पश्चात् नगरी की

शोभा निहारते-निहारते सभी यात्री धर्मशाला में आये। शाम को पार्श्वप्रभु की भक्ति की। रात्रि में तत्त्वचर्चा की।

फाल्गुन कृष्ण दशम : '*पूज्यश्री कानजीस्वामी दिगम्बर जैन तीर्थयात्रा संघ*' का बनारस मुकाम का वर्णन चल रहा है। यहाँ मैदागीन धर्मशाला में सवेरे उठते ही श्री गुरुदेव के दर्शन होते थे, इसलिए यात्रियों को बहुत आनन्द होता था; यात्रा के दौरान जहाँ दो-तीन दिन का मुकाम हो और लगभग एक ही स्थल पर आवास हो, वहाँ सवेरे से शाम तक हरते-फिरते पूज्य गुरुदेव के दर्शन हुआ करें और उनका निकट सहवास रहा करे, इसलिए जीवन का आदर्श नजर के समक्ष वर्ता करे—इसलिए भक्तों को बहुत प्रसन्नता होती थी और क्षण-क्षण में साक्षात् तीर्थ की यात्रा हुआ करती थी। भेदज्ञानरूप जहाज द्वारा भवसागर को तैरनेवाले और तारनेवाले ऐसे सन्तों का जीवन स्वयं ही वास्तव में साक्षात् तीर्थस्वरूप है। अहा, ऐसे तीर्थस्वरूप सन्तों के साथ भारत के अनेक तीर्थों की यात्रा करते हुए भक्तों को अनोखा आनन्द वर्त रहा है और इसलिए गुरुदेव के उपकार को बारम्बार व्यक्त करते हैं।

सवेरे उठकर यात्रियों ने पार्श्वप्रभु की इस जन्मनगरी में पार्श्वप्रभु के दर्शन किये और भगवान के जन्म कल्याणक को स्मरण करके भक्ति से अभिषेक तथा पूजन-भक्ति किये। तत्पश्चात् टाउन हॉल में गुरुदेव का प्रवचन हुआ। काशी नगरी अर्थात् पण्डितपुरी! जैन तथा अजैन विद्वत समाज गुरुदेव का प्रवचन सुनने आये थे और काशी में गुरुदेव का प्रवचन भी अध्यात्म के सूक्ष्म भावों से भरपूर आता था। निश्चय-व्यवहार सम्बन्धी स्पष्ट स्पष्टीकरण आता था।

प्रवचन के बाद पण्डित कैलाशचन्द्रजी ने कहा कि—***आपके ससंघ आगमन से हम सबको बहुत प्रसन्नता हुई है, और यात्रा से वापस लौटते समय भी आप यहाँ दो-चार दिन ठहरने का प्रोग्राम अवश्य रखें - ऐसी विनती है।***

इस प्रकार विनती करने के बाद उन्होंने कहा कि— ***महाराजजी के प्रवचन के बारे में मैं कुछ कहना चाहता हूँ। अध्यात्म की यह कथनी सुनते लोगों को ऐसा होता है कि 'यह क्या कहते हैं!—यह तो एक आत्मा की ही बात करते हैं'—लेकिन यही तो प्रयोजन की चीज है, यह अपनी ही बात है, इस शरीर के भीतर रहे हुए आतमराम की यह चर्चा है।—***

सुदपरिचिदानुभूदा सव्वस्स वि कामभोगबंधकहा।
एयत्तस्सुबलंभो णवरि ण सुलहो विहत्तस्स॥

(समयसार: 4)

इसलिए यही तो दुर्लभ है; शरीर की और शरीर के साथ सम्बन्ध रखनेवाली शिक्षा सब जगह चलती है लेकिन शरीर में स्थित आतमराम क्या चीज़ है, इसकी शिक्षा नहीं चलती; जिसकी शिक्षा नहीं, जिसकी चर्चा नहीं, वह बात महाराजजी अपने प्रवचन में बतला रहे हैं। लेकिन मैं क्या कहूँ: —

'मोहे सुन सुन आ गइ हंसी... पानी में मीन पीयासी'

शुद्धनय के अनुसार आत्मा का वास्तविक स्वरूप आप दिखला रहे हैं, आचार्यों ने भी यही दिखलाया है—

आत्मस्वभावं परभावभिन्नं आपूर्णमाद्यंतविमुक्तमेकम्।
विलीन संकल्पविकल्पजालं प्रकाशयन् शुद्धनयोभ्युदेति॥10॥

यह चीज़ अनुभवगम्य है। इत्यादि प्रकार से गुरुदेव की प्रवचन शैली सम्बन्धी स्पष्टता करके उसकी प्रशंसा की थी।

प्रवचन के पश्चात् यात्री नगरी में घूमने निकले थे। बनारस के प्रख्यात सैला और साड़ियाँ अनेक यात्रियों ने खरीदी थी।—तो बहुतों ने काशी के मीठे बोर खाये और किसी को यहाँ का दही विशेष पसन्द आया। इस प्रकार संघ के कारण पूरी नगरी का वातावरण उमंगमय लगता था। खरीदी करने के बाद भोजन करके दोपहर में संघ ने बनारस से डालमियानगर की ओर प्रस्थान किया।

★ ★ ★

जय पारस... जय पारस.... जय पारस देवा....
बनारसी में जन्म लिया.... प्रभु हो देवन को देवा.... जय०
संतजनों के संग तुम्हारी यात्रा आनंदकारी....
दास तुम्हारा चरण सेवके हो जाते भवपारी.... जय०

ऐसी यात्रा की धुन करती-करती अनेक मोटर बसें और मोटरें बनारस से

डालमियानगर की ओर चली जा रही है; पूज्य गुरुदेवश्री इत्यादि की मोटरें अभी पीछे हैं, इसलिए भक्त पीछे नजर लम्बाकर उनके आने की राह देख रहे हैं, अभी गुरुदेव की मोटर गुजरेगी और जय-जयकार करेंगे।—इस प्रकार सब अधीर बनकर गुरुदेव के दर्शन के लिये आतुर हैं... वहाँ तो थोड़ी देर में दूर-दूर से कल्याणवर्षिनी शीघ्रता से दौड़ती हुई आती दिखायी दी, तुरन्त ही उसे रास्ता देने के लिये सब मोटरें और बसें रुक गयीं। कल्याणवर्षिनी नजदीक आ पहुँची, भक्तों ने जय-जयकार से गुरुदेव का सम्मान किया। और कल्याणवर्षिनी गुजर जाने के बदले भक्तों के आश्चर्य के बीच ठीक वहीं रुक गयी, भक्त तुरन्त ही बस में से उतरकर आनन्दपूर्वक गुरुदेव के दर्शन के लिये दौड़े और मोटर के पास जाकर दर्शन करते हुए गुरुदेव ने प्रसन्न मुख से हाथ ऊपर करके आशीर्वाद दिया। अहा! इस प्रकार यात्रा के दौरान अधबीच में गुरुदेव के दर्शन से और आशीर्वाद से भक्तों को जो आनन्द उल्लसित होता था, उसका यहाँ क्या वर्णन हो!! थोड़ी देर वहाँ रुककर गुरुदेव ने संघ की मोटरों की बातचीत की। फिर जलपान करके मोटर शीघ्र डालमियानगर की ओर चल दी; भक्तों ने भी बहुत जोश से बसें दौड़ाकर उसका पीछा किया, परन्तु अन्त में पीछे रह गये और कल्याणवर्षिनी अलोप हो गयी। इस प्रकार गुरुदेव के साथ आनन्दमय वातावरणपूर्वक यात्रा करते-करते शाम तक पूरा संघ डालमियानगर पहुँच गया।

डालमियानगर

सीमेण्ट इत्यादि अनेकविध उद्योगों की प्रधानता से आधुनिक शैली में रचित डालमियानगर एक सुन्दर शहर है। प्रसिद्ध जैन उद्योगपति साहू शान्तिप्रसादजी के अनेक कारखाना यहाँ चलते हैं; उन्होंने गुरुदेव को तथा संघ को डालमियानगर पधारने का विशेष आमन्त्रण प्रदान किया था और संघ के आगमन से उसकी विदा तक की छोटी-बड़ी सब व्यवस्था बहुत सरस और उमंगपूर्वक की थी। बहुत बार बड़े शहर में पहुँचने के बाद आवास खोजने के लिये रास्ता पूछ-पूछकर एकाध घण्टे घुमना पड़ता, तब थके-पके मुश्किल से आवास पर पहुँचते। परन्तु यहाँ संघ की मोटरें आने पर अनजाने शहर में रास्ते के लिये या आवास के लिये किसी से पूछना न पड़े, इस प्रकार पहले से ही जगह-जगह मार्गदर्शक स्वयंसेवक रख दिये गये थे। इसलिए सब मोटरें सीधे-सीधे आवास पर पहुँच गयीं। एक बँगले में गुरुदेव का आवास था और उसके आसपास में दूसरे अनेक बँगलों में संघ का आवास था। शाम को पूज्य गुरुदेव ने सेठ जगतप्रसादजी के यहाँ भोजन किया था।

यहाँ एक जैन मन्दिर में महावीर भगवान की बहुत सुन्दर भाववाही प्रतिमाजी विराजमान है। रात्रि में वहाँ भक्ति हुई; भक्ति के समय आनन्दमय वातावरण था और मन्दिर में भक्तों की भीड़ जमी थी। किन्हीं-किन्हीं भक्तों को जगह न मिले तो गुरुदेव नजदीक बुलाकर अपने पास बैठा देते। पूज्य बहिनश्री-बहिन भी भक्ति में बहुत खिले थे और जोरदार धुनपूर्वक, दो नहीं परन्तु चार स्तवन गवाय थे।

(1) **वीर छवि भाये... अरु न सुहाये.... ओ दृग वसीया रे....**

(2) बनारस की यात्रा अभी ताजा होने से दूसरा पार्श्वनाथ प्रभु का स्तवन गवाया।

जय पारस देवा... स्वामी... जय पारस देवा...
पोष वदि ग्यारस काशी में.. आनन्द अति भारी.. स्वामी आनन्द अति भारी।
अश्वसेन वामा माता उर लीनो अवतारी... ॐ जय पारस देवा।

(3) सामान्य रीति से दो स्तवन गाकर भक्ति पूरी की जाती है, परन्तु आज तो

भगवान के चरण समीप भक्ति उल्लसित हुई थी। इसलिए तीसरा स्तवन गवाया : 'मैं तेरे ढीग आया रे... वीर प्रभु ढीग आया रे...'

(4) अहा, वीतरागी नाथ को देख-देखकर, उनकी भक्ति की तान में लवलीन बने हुए भक्त जीवन के दुःखों को भूल जाते थे, और पूज्य बहिनश्री-बहिन ने भी बराबर वे ही भाव व्यक्त करते हुए चौथा स्तवन गवाया—

मैं जीवन दुःख सब भूल गया...
वे पावनप्रभु को देख... प्रभु... तेरी... सुन्दर मुरत देख प्रभु...
यह मन भक्ति में लीन हुआ... लीन हुआ... हां... लीन... हुआ...
यह जीवन तुझसा जीवन हो जीवन हो... हाँ जीवन हो...

अहा इस भक्ति की क्या बात! मानो अभी तक की तेरह तीर्थों की यात्रा का इकट्ठा हुआ आनन्द भक्तों के हृदय में से उल्लसित होकर बाहर निकलता हो! संघ के पाँच सौ यात्रियों का समूह भक्ति की मस्ती में चढ़ा था, इतना ही नहीं, गुरुदेव भी उमंगपूर्वक भक्ति में साथ देते थे; ऐसी अद्‌भुत भक्ति देखकर सब आश्चर्य को प्राप्त होते थे, और यहाँ कोई खास तीर्थ का स्थान न होने पर भी अद्‌भुत भक्ति के कारण मानो कोई महान तीर्थ की यात्रा ही कर रहे हों—ऐसी उमंग थी.... (डालमियानगर में हुई इस अद्‌भुत भक्ति के संस्मरण तो यहीं के यहीं लिख लेना, ऐसा विचारकर, रात्रि बारह बजे डालमियानगर में पूज्य गुरुदेव के आवास पर बैठे-बैठे यह संस्मरण लिखे गये हैं।) यात्री भक्त दिन-रात यात्रा को याद करके आत्महित की भावना भाते; पूज्य गुरुदेव के साथ-साथ जिस सिद्धिधाम की यात्रा कर रहे हैं, उस सिद्धिधाम में से सिद्धि प्राप्त सिद्ध भगवन्तों का स्मरण करते और हमें भी हमारे जीवन साथी गुरुदेव के प्रताप से झटपट ऐसे सिद्धपद की प्राप्ति होओ—ऐसी अन्तर में गहरी-गहरी भावना भाते। रात्रि को स्वप्न में भी मानो सिद्धि साधक सन्तों के साथ कोई दिव्य तीर्थ की यात्रा कर रहे हों, ऐसे दर्शन होते।

दूसरे दिन (फाल्गुन कृष्ण ग्यारस को) सवेरे नहा-धोकर सब यात्रियों ने जिनेन्द्र भगवान के दर्शन-पूजन किये। आज सेठ शान्तिप्रसादजी साहू तथा उनकी धर्मपत्नी सौ. रमादेवी सवेरे गुरुदेव के पास दर्शन करने आये, उन्होंने बहुत प्रेम प्रदर्शित किया तथा संघसहित गुरुदेव के यहाँ पधारने से बहुत प्रसन्नता व्यक्त की।

संघ के आवास, भोजनादिक में सेठजी ने बहुत आवभगत की। सवेरे चाय-पानी के साथ अनेक प्रकार की मिठाई तथा मेवा, फरसाण, इत्यादि परोसे... तत्पश्चात् रोटरी क्लब के हॉल में गुरुदेव के सम्मान का समारम्भ हुआ। स्वागत उत्सव की शुरुआत में 'महावीर भगवान दृष्टि समक्ष होकर हमें साक्षात् दर्शन दो' ऐसा बाबू चैतन्यलालजी ने मंगलाचरण किया। तत्पश्चात् व्याकरणाचार्य पण्डितजी पाण्डे ने 'भरतभूमि के भूषणस्वरूप गौरव गुण गरिमा से गरिष्ठ' इत्यादि स्वागत गायन गाया। तत्पश्चात् दूसरे एक पण्डितजी ने स्वागत प्रवचन करते हुए कहा—आज आध्यात्मिक जगत के एक सन्त का स्वागत करने का हमें सौभाग्य मिला है। इस विषमय जगत में उन्होंने यह सिद्ध कर दिया है कि यदि शान्ति चाहिए तो वह बाहर से नहीं आयेगी, वह अपने आत्मा में से ही मिलेगी। आज सोनगढ़ से कौन अपरिचित है? सोनगढ़ तो अध्यात्मधाम बन गया है। पूर्व में पण्डित मण्डन मिश्रजी के सम्बन्ध में कहा जाता है कि—कुएँ पर पानी भर रही पनिहारिन को किसी अनजाने मुसाफिर ने पूछा—पण्डित मण्डन मिश्र का घर कहाँ आया? आश्चर्यपूर्वक उस पनिहारिन ने जवाब दिया—**जिस घर में तोता और मैना भी 'स्वतः प्रमाणं परतः प्रमाणं' की बात रट रहे हों वही मण्डन मिश्र का घर समझना।** इसी प्रकार यदि कोई मुझे पूछे कि सोनगढ़ कहाँ आया? तो मैं कहूँगा कि जहाँ बच्चा भी हमेशा अध्यात्म की चर्चा करता हो, उसे सोनगढ़ समझो। सोनगढ़ वास्तव में स्वर्ण का नहीं किन्तु अध्यात्म का गढ़ बन गया है। जहाँ हमेशा अध्यात्म की चर्चा का वातावरण रहता है, ऐसे सोनगढ़ के इन आध्यात्मिक सन्त का तथा हमारे इन सब साधर्मियों का स्वागत करते हुए हमें आनन्द होता है। डॉ. भागचन्दजी ने भी श्रद्धांजलि द्वारा अपना सुर मिलाया। इस प्रकार जगह-जगह अनजाने विद्वान भी गुरुदेव के प्रति हार्दिक सम्मान प्रगट करते और सोनगढ़ का नाम लेने में भी गौरव अनुभव करते, यह देखकर यात्रियों को बहुत प्रसन्नता होती; और गुरुदेव का धर्म प्रभाव कितना दूर-दूर तक भारत के कौने-कौने में फैल गया है, यह देखकर आश्चर्य होता।

पण्डित अयोध्याप्रसादजी गोयलीय जो भारतीय ज्ञानपीठ काशी के मन्त्री हैं—उन्होंने सम्मान-पत्र अर्पण करने से पहले अपने भाषण में कहा—जब सूर्य और चन्द्र हजारों वर्षों तक भटक-भटककर पृथ्वी के कौने-कौने में खोजते हैं, तब हजारों वर्ष की

उनकी तपस्या के फल में कोई महान सन्त दिखते हैं। इसी प्रकार भारतवर्ष में आज अपने को यह महान अध्यात्म सन्त का सुयोग बना है, वह अपनी कोई पूर्व तपस्या का ही फल समझना चाहिए। जिस विश्ववन्द्य विभूति के दर्शन के लिये हमें सोनगढ़ जाना था, वह विभूति स्वयं आज हमारे आँगन में आयी है, यह हमारे महान सौभाग्य का विषय है।

स्वामीजी कानजी महाराज सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्ररूप मार्ग की प्रभावना कर रहे हैं; उनका प्रवचन अभी होगा, उसे सुनने पर अपने को ख्याल आयेगा कि उनका आध्यात्मिक ज्ञान कितना गहरा है! यहाँ के समाज की ओर से मैं आपको यह सम्मान-पत्र समर्पण करता हूँ—ऐसा कहकर उन्होंने सम्मान-पत्र अर्पण किया था। तत्पश्चात् सौ. श्रीमती रमादेवी सेठानी ने पुष्पमाला द्वारा श्रद्धांजलि समर्पण की थी, पश्चात् सेठ शान्तिप्रसादजी साहू ने पूज्य गुरुदेव को पुष्पहार द्वारा श्रद्धांजलि प्रदान करते हुए कहा कि : मैं यहाँ डालमियानगर की जनता की ओर से तथा मेरी ओर से स्वामीजी को श्रद्धांजलि अर्पित करता हूँ। हमारा परम सौभाग्य है कि पूज्य स्वामीजी हमारे आँगन में पधारे हैं और हमें उनके स्वागत का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। मैं यह श्रद्धांजलि अर्पित करके स्वामीजी का और संघ का स्वागत करता हूँ। तत्पश्चात् सेठ जगतप्रसादजी ने भी श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए कहा—मैं डालमियानगर की जैन समाज की ओर से तथा नगरी की सारी जनता की ओर से पूज्य स्वामीजी को श्रद्धांजलि भेंट करता हूँ।

इस प्रकार सम्मान समारम्भ की विधि पूर्ण होने पर वहीं पूज्य गुरुदेव का प्रवचन हुआ। प्रवचन सुनकर सब प्रसन्न हुए और अयोध्याप्रसादजी गोयलीय ने अपनी प्रसन्नता व्यक्त करते हुए कहा कि—पूज्य स्वामीजी यहाँ संघसहित पधारे, उनका स्वागत करने के लिये हमारे पास शब्द नहीं हैं... किस शब्द से हम आपका स्वागत करें ? अरे ! स्वामीजी की मोटर की धूली से भी हम अपने को पावन समझते हैं। आगे गोयलीयजी ने कहा : हम स्वामीजी को क्या अर्पण करें ? हमारे पास यह श्लोकवार्तिक आदि पुस्तकें हैं वे हम श्रद्धापूर्वक स्वामीजी के करकमल में अर्पण करते हैं, ऐसा कहकर भारतीय ज्ञानपीठ के अनेक महत्त्व के प्रकाशन अर्पण किये थे। अन्त में साहू शान्तिप्रसादजी ने भी पुनः गुरुदेव को और संघ को अभिनन्दन देते हुए कहा : हमारे लिये आज यह शुभ अवसर है कि आप सब यहाँ पधारे हैं, और हमें आपके सन्मान का अवसर मिला है। इसी तरह आगे फिर

भी सम्मेदशिखरजी, कलकत्ता आदि में भी हमें आपके दर्शन का व परिचय का सुअवसर प्राप्त होगा। आपकी यह महान तीर्थयात्रा सफल हो-ऐसी मैं भावना करता हूँ।

(साहू शान्तिप्रसादजी कलकत्ता की स्वागत समिति के प्रमुख थे)

तत्पश्चात् यहाँ के अनेक बड़े-बड़े कारखाने-सीमेण्ट फैक्ट्री, पेपर मिल, डालडा, वेजीटेबल का कारखाना, शुगर फैक्ट्री, सोडायश फैक्ट्री इत्यादि यात्रियों को बताने की व्यवस्था सेठजी ने की थी। इसलिए यात्री तो कारखाने देखने गये। सेठजी के आग्रह से गुरुदेव भी पधारे थे; कहाँ तीर्थधामों के वातावरण की शान्ति... और कहाँ यह उद्योगधाम की घनघनाहट! कारखानों का ऊपर-ऊपर से उड़ता अवलोकन करके यात्री प्रस्थान की तैयारी करने लगे। (यहाँ शुगर के कारखाने में शुगर की शुद्धता होती थी, वहाँ व्यवस्थापकों ने सबका लक्ष्य खींचा था और बतलाया था कि चूने में से एक प्रकार की गैस उत्पन्न करके उसके द्वारा शक्कर की शुद्धि की जाती है।)

गुरुदेव का भोजन सेठ शान्तिप्रसादजी के यहाँ हुआ था तथा सम्पूर्ण संघ के भोजन की व्यवस्था भी उन्होंने बहुत उत्साहपूर्वक की थी। कितने ही अग्रगण्य यात्रियों को अपने घर जीमने ले गये थे। कहीं-कहीं इस ओर की भोजनपद्धति अनुसार सबसे पहले भात परोसे, फिर रोटी परोसी, और लगभग भोजन करने के बाद अनेकविध मिष्ठान आते थे, यह देखकर गुजराती यात्री हँस पड़ते। यह लोग किसलिए हँसते हैं, इसकी जब उन लोगों को खबर पड़ती तब वे भी आश्चर्य से हँसते और कहते कि अरे, यह मुख्य चीज़ तो रह गयी। हमें ऐसी खबर होती तो सबसे पहले यह वस्तु परोसते, लेकिन पहले आप क्यों नहीं बोले? अब आपको यह खाना ही पड़ेगा! तब यात्री कहते कि सेठजी! हमारे तो भात और पापड़ आवे तो भोजन की समाप्ति हो गयी! इस प्रकार देश-देश की अलग-अलग पद्धति के कारण भी अनेक बार हास्य प्रसंग बन जाते थे।

भोजन के बाद मोटर और बसों में सामान चढ़ाकर डालमियानगर से आरा की ओर प्रस्थान के लिये सब यात्री तैयार हो गये... आरा पहुँचने पर रात पड़ जाए ऐसा होने से बीच में शाम के भोजन के लिये सेठजी ने संघ को अनेक प्रकार की मिठाई-फरसाण-फल और मेवा का पाथेय बँधवा दिया था और मोटरबसों में बैठे-बैठे ही गुरुदेव के दर्शन करके जय-जयकारपूर्वक संघ ने आरा शहर की ओर प्रस्थान किया। संघ के प्रस्थान का

उमंग भरा दृश्य गुरुदेव हँसते-हँसते निहार रहे थे। प्रत्येक स्थल में संघ के प्रस्थान के समय का दृश्य देखने योग्य रहता था। कोई पीछे रह गया हो और दौड़ा-दौड़ करके आता हो, कोई मोटर में बैठने के बाद कोई चीज़ भूल जाने से याद आने पर शीघ्र से लेने जाता हो, कोई चिल्लाकर किसी यात्री को खोजता हो तो कोई बस में सब तैयार होकर जल्दी-जल्दी बस रवाना करने के लिये भक्ति की धुन द्वारा ड्राइवर को प्रेरणा करता हो। कोई मोटरें हार्न बजा-बजाकर अगली मोटर को रास्ता देने के लिये कहती हो, तो कोई बस स्वयं सबसे पहले रवाना हुई, इसके हर्ष से जय-जयकार गजाती हुई दौड़ी जा रही हो और कोई बस अमुक खास मोटर के साथ रहने का प्रयत्न करती हो। इस प्रकार प्रस्थान के समय का दृश्य बहुत उमंग भरा लगता था।

गुरुदेव शाम तक डालमियानगर रहे थे। शाम को डॉक्टर भागचन्दजी के यहाँ भोजन करके, पाँच बजे वहाँ से प्रस्थान किया था और बीच में विक्रमगंज में रात्रि को रहे थे। संघ के यात्री सीधे ही आराशहर पहुँच गये थे।

★ ★ ★

आरानगर (जैनपुरी)

फाल्गुन कृष्ण बारह

श्री सम्मेदशिखरजी इत्यादि पवित्र तीर्थधामों की मंगल यात्रा करने के लिये जा रहा 'पूज्य श्री कानजीस्वामी दिगम्बर जैन तीर्थयात्रा संघ' आरानगरी में आ पहुँचा। यह आरानगरी जैनपुरी है। लगभग चालीस जिनमन्दिरों से यह जैनपुरी शोभित हो रही है। यहाँ के दिगम्बर जैन सिद्धान्त भवन में अनेक शास्त्रों का संग्रह है। शहर से लगभग दो मील दूर ब्रह्मचारिणी चन्दाबाई संचालित जैन-बालाश्रम है; वहाँ संघ का निवास था। इस बालाश्रम में जैन मन्दिर तथा बाहुबली भगवान की भव्य प्रतिमाजी, मानस्तम्भ इत्यादि है। सवेरे श्री जिनेन्द्रभगवान के दर्शन-पूजन करके यात्री पूज्य गुरुदेव के स्वागत के लिये कटिबद्ध हो गये... और स्वागत के लिये शहर में पहुँचने के लिये बसों में बैठकर स्वागत गीत गाते-गाते चलने लगे—

जय गुरुदेवा... जय गुरुदेवा... जय गुरुदेवा... देवा...
जैनपुरी मां आप पधार्या स्वागत आज तुमारा...
शाश्वत तीर्थनी जात्रा करवा संघ सहित पधार्या.... जय०

लगभग साढ़े आठ बजे पूज्य गुरुदेव के पधारने पर आरा शहर की जैन समाज ने बहुत उत्साह से भावभीना स्वागत किया। गुरुदेव जहाँ-जहाँ पधारे, वहाँ-वहाँ गुरुदेव के अतिशय प्रभाव से जनता बहुत ही प्रभावित होती और उसे सहज-सहज स्वागत का उल्लास आता था। यहाँ का स्वागत भी वात्सल्य भीना था... अनेक वैभवयुक्त स्वागत में बीच में जगह-जगह पुष्पवृष्टि इत्यादि होती थी। स्वागत के समय बीच-बीच में जैन मन्दिरों के दर्शन भी गुरुदेव करते जाते थे। स्वागत शान्तिनाथ भगवान के पंचायती मन्दिर में आया और वहाँ दर्शन करके तथा अर्घ्य द्वारा पूजन करके मन्दिर के विशाल चौक में गुरुदेव ने मंगल प्रवचन किया; उसने कहा कि : **आत्मा का पवित्र स्वभाव है, वह त्रिकाल मंगल है और उसके श्रद्धा-ज्ञान रमणता करना, वह अपूर्व मंगल है, क्योंकि वह पवित्रता को प्राप्त कराता है और अपवित्रता का नाश करता है। ऐसा मांगलिक प्रगट करना, वह मोक्ष का कारण है। ऐसा मंगल प्रगट करके अनन्त जीव मोक्ष को**

प्राप्त हुए हैं, और जीव जहाँ से मोक्ष को प्राप्त हुए, वह भूमि भी व्यवहार से मंगलरूप है अर्थात् तीर्थरूप है, ऐसे तीर्थों की यात्रा के लिये हम निकले हैं।

तीर्थयात्रा के दौरान गुरुदेव के ऐसे भाव सुनकर यात्रियों को विशेष प्रमोद और उल्लास था। मंगल प्रवचन के बाद पूज्य गुरुदेव भक्तजनों सहित इस जैनपुरी के जिनमन्दिरों के दर्शन करने पधारे। गुरुदेव के साथ मुख्य-मुख्य जिनमन्दिरों के दर्शन करते हुए भक्तों को बहुत हर्ष होता था। गुरुदेव के साथ आनन्दपूर्वक जिनमन्दिरों के दर्शन करते-करते एक जलमन्दिर आया... उसमें जाने के लिये एक छोटे से पुल के ऊपर से भक्ति गाते-गाते निकलना हुआ... और अन्दर जाकर भक्तिपूर्वक गुरुदेव के साथ सबने अर्घ्य चढ़ाया। एक मन्दिर से दूसरे मन्दिर में जाते हुए बीच में पूज्य बहिनश्री-बहिन भक्ति गवाते थे—

जय जिनवर नमीये आपने, जपीये पावन तुम जापने जय०
आतमरामी शिवपद गामी, हरता भव भव पापने जय०
उपशम रसधर मूरति सुन्दर, सेवक पूजे अरिहंतने जय०

आगे जाकर 'नन्दीश्वर मन्दिर' आया। यहाँ पंचमेरु और नन्दीश्वर के बावन जिनालयों की सुन्दर रचना है। उनके दर्शन से गुरुदेव और सब भक्तजन प्रसन्न हुए। गुरुदेव के साथ सबने नन्दीश्वर जिनधाम को अर्घ्य चढ़ाया, तत्पश्चात् उस नन्दीश्वरधाम की प्रदक्षिणा की... सब भक्त आनन्द से नीचे की धुन गाते-गाते गुरुदेव के साथ जिनेन्द्रदेव की प्रदक्षिणा करते थे।

हिलमिलकर सब भक्तो चालो नन्दीश्वर जिनधाममें....
नन्दीश्वर जिनधाम में... नन्दीश्वर जिनधाम में... नन्दीश्वर जिनधाम में... हाँ गुरुवर की साथ में... हिल०
नन्दीश्वर की शोभा भारी... पावन मन्दिर छे मनहारी...
दरशन कीधां आनन्दकारी... कहानगुरु की साथ में... (4)
हिलमिल कर सब भक्तों चालो नन्दीश्वर जिनधाम में...

— इस प्रकार आनन्दपूर्वक नन्दीश्वर जिनधाम के दर्शन करके जय-जयकार करते हुए सब दूसरे मन्दिरों में गये। कहीं चक्रवर्ती तीर्थंकर त्रिपुटी, (शान्ति-कुन्थु-

अरनाथ भगवन्तों की त्रिपुटी) शोभायमान थी तो कहीं पंच बालयति तीर्थंकर (वासुपूज्य-मल्लिनाथ, नेमिनाथ, पार्श्वनाथ और वर्धमान, ये पाँच बाल ब्रह्मचारी तीर्थंकर) ब्रह्मरस में निमग्नरूप से एक साथ शोभायमान थे; कहीं सप्तऋषी भगवन्त शोभते थे तो कहीं चौबीस तीर्थंकर एक साथ शोभायमान थे और कहीं सम्मेदशिखरजी तीर्थ की रमणीय रचना शोभायमान थी... इस प्रकार जैनपुरी के अनेक जिनमन्दिरों के दर्शन किये।

'जैन बालाश्रम' गाँव से लगभग दो मील दूर शान्त वातावरण में है... पण्डित चन्दाबाई आश्रम के स्थापक और संचालक है। इस आश्रम का मुख्य आकर्षण है—बाहुबली भगवान! बगीचे के बीच में कृत्रिम पहाड़ पर लगभग 15 फीट उन्नत बाहुबली भगवान विराजमान हैं। बाहुबली भगवान के सामने ही लगभग 40 फीट ऊँचा मानस्तम्भ है, जिसमें आदिनाथ भगवान विराजते हैं। इस प्रकार एक-दूसरे के सन्मुख पिता-पुत्र के मिलन का दृश्य शोभित हो रहा है। बीच में दर्शन-पूजन के लिये वेदिका है। इस मानस्तम्भ में ऊपर-नीचे और बीच में तीनों स्थानों में जिनबिम्ब हैं। तदुपरान्त आश्रम में एक जिन चैत्यालय है, जिसमें महावीर आदि भगवन्त विराजमान हैं... आश्रम के सामने दो विशाल प्राचीन जिनमन्दिर हैं - जिनमें अनेक जिनबिम्ब तथा सहस्रकूट चैत्यालय इत्यादि है। इन सबके दर्शन किये।

गुरुदेव के स्वागत इत्यादि में तथा संघ के आगत-स्वागत में श्री चन्दाबाई ने तथा यहाँ के जैन समाज ने अच्छा प्रेम प्रदर्शित किया था। गुरुदेव का भोजन बाबू निर्मलकुमारजी के यहाँ हुआ था। संघ के भोजन की व्यवस्था भी यहीं के समाज की ओर से (जैन बालाश्रम में) की गयी थी। दोपहर को गुरुदेव का प्रवचन पंचायती मन्दिर में (-शान्तिनाथ भगवान के बड़े मन्दिर में) हुआ था। प्रवचन सुनकर आरा की जनता ने ऐसे अध्यात्म प्रवचनों का विशेष लाभ प्रदान करने की प्रार्थना की थी।

यहाँ इस पुस्तक के लेखक प्रवचन में गये, वहाँ पीछे से उनकी बस राजगृही जाने के लिये रवाना हो गयी। बस तो गयी और सब सामान भी लेकर गयी... वह भी अच्छा ही हुआ क्योंकि पीछे से उन्हें पूज्य गुरुदेव के साथ बाहुबली भक्ति, शाम की विशेष चर्चा, पटनायात्रा और भक्ति तथा आरा से राजगृही तक गुरुदेव के साथ यात्राप्रवास इत्यादि विशेष लाभ प्राप्त हुआ।

दोपहर का प्रवचन पूर्ण होने पर तुरन्त ही गुरुदेव बाहुबली भगवान के पास आकर बैठ गये—थोड़ी देर में बहिनश्री-बहिन भी आ पहुँची; सबने थोड़ी देर बाहुबलीनाथ की परम ध्यानमुद्रा का अवलोकन किया। पश्चात् तुरन्त गुरुदेव ने भक्ति करने को कहा... उस समय पूज्य गुरुदेव, ब्रह्मचारी चन्दुभाई, ब्रह्मचारी हरिभाई तथा पूज्य बहिनश्री-बहिन तथा थोड़े भक्त भाई-बहिन और दूसरे स्थानीय दो-चार भाई—ऐसे मात्र आठ-दस लोग ही थे, तो भी शान्त वातावरण में उमंग भरी भक्ति शुरु हुई।

आज मारा हृदयमां आनन्दसागर उछले...
जिनचंद्रना दर्शनवडे संसार ताप सहु टले...
—बाहुबली-दर्शनवडे संसारताप सहु टले...
कलिकालमां जिनदेवनुं दर्शन जीवन आधार छे,
पामशे जे शुद्धभावे तरी जशे संसार ते....

— जैसे-जैसे भक्ति चलती गयी, वैसे-वैसे सैकडों भक्त एकत्रित हो गये... पहला स्तवन पूरा होने पर पूज्य बहिनश्री-बहिन ने नीचे का दूसरा स्तवन गवाया—

धन्य मुनिश्वर आतमहित में छोड़ दिया परिवार कि तुमने छोड़ा सब घरबार....
—धन्य बाहुबली आतमहित में छोड़ दिया परिवार कि तुमने छोड़ा सब घरबार....
धन छोड़ा... वैभव सब छोड़ा... जाना जगत असार कि तुमने छोड़ा सब घरबार....

एक तो बगीचे का शान्त वातावरण, सामने ही पर्वत के ऊपर परम ध्यानी वैराग्यमूर्ति बाहुबली भगवान, गुरुदेव के साथ की यात्रा और ऐसी सरस वैराग्यमय भक्ति... इसलिए यात्रियों को कोई अलग ही आनन्द आता था। बहुत उमंगपूर्वक भक्ति होने के पश्चात् सबने बाहुबली नाथ की मुद्रा का बारम्बार अवलोकन किया। बाहुबली प्रभु के एक चरण के निकट हाथ जोड़कर खड़े हुए गुरुदेव और दूसरे चरण के निकट हाथ जोड़कर खड़े हुए भक्त—अहा, मानो धर्मपिता की गोद में उनके छोटे-से बालक खड़े हों, ऐसा वह दृश्य था... साध्य की छाया में खड़े हुए साधकों का यह भावभीना दृश्य निहारकर भक्त अति हर्षित होते थे। यह साध्य-साधकों का मिलन वस्तुत: अद्‌भुत था!

शाम को गुरुदेव का भोजन आश्रम में ही हुआ था... भोजन के पश्चात् गुरुदेव वहाँ घूमते थे, इतने में चन्दाबाई वहाँ आ पहुँची... प्रथम तो अपने आश्रम में गुरुदेव के

पधारने से उन्होंने बहुत प्रसन्नता व्यक्त की और पश्चात् दूसरी अनेक धर्मचर्चा हुई... गुरुदेव भी बहुत प्रसन्नतापूर्वक बातचीत करते थे... बातचीत के दौरान आरा के और सोनगढ़ के ब्रह्मचर्य आश्रम सम्बन्धी बात निकलने पर पूज्य गुरुदेव ने बहिनश्री-बहिन का खास परिचय प्रदान करते हुए कहा कि—***हमारे सोनगढ़ में चम्पाबेन और शान्ताबेन दो बहिनें बहुत पवित्र हैं... बीस बालब्रह्मचारी लड़कियाँ उनकी छाया में ही रहती हैं। उन दोनों बहिनों की अनुभूति की क्या बात ? विशेष परिचय करने से मालूम पड़े, ऐसी बात है। उनका हृदय गहरा है...*** इत्यादि अनेक बातें कीं। गुरुदेव के श्रीमुख से यह बात सुनकर ब्रह्मचारिणी चन्दाबाई ने प्रमोद व्यक्त किया। तत्पश्चात् जैन बालाश्रम की बालाओं की ओर से गुरुदेव के अभिनन्दन का कार्यक्रम था। उसमें प्रथम हार समर्पण करके, पश्चात् बालाओं ने वाजिन्त्रसहित अभिनन्दन गीत गाया। तत्पश्चात् गुरुदेव ने आश्रम की बालाओं को सम्बोधन करके इतना ही सद्बोध दिया... इस प्रसंग पर वहाँ सौ-डेढ़ सौ लोगों की सभा एकत्रित हुई थी। बालकों को उत्साह प्रेरित करे ऐसा बोध प्रदान करते हुए गुरुदेव ने कहा—**देखो बच्चे! इस देह के भीतर में आत्मा है, वह छोटा-बड़ा नहीं है, आत्मा तो सभी का समान है। हमारे सौराष्ट्र में ववाणिया ग्राम में श्रीमद् राजचन्द्र हुए हैं... जब वे सात वर्ष के थे, तब उनके पड़ोसी एक वृद्ध आदमी को सर्प ने डस लिया और वह मर गये... श्मशान में उनकी देह को जलती देखकर वह सात वर्ष का लड़का देह और आत्मा की भिन्नता के गहरे विचार में चढ़ गया... और उसी समय मात्र सात वर्ष की छोटी उम्र में उन्हें अपने पूर्व भव का भान हुआ, यह आत्मा इस भव के पहले कहाँ था, उसका उसे भान हो गया और फिर मात्र सोलह वर्ष और पाँच माह की वय में 'मोक्षमाला' नामक एक पुस्तक लिखी है, जिसमें 108 पाठ हैं। उसमें एक पाठ में कहते हैं कि 'हूं कोण छूं ? क्यां थी थयो ? शुं स्वरूप छे मारुं ख़रु ?' अर्थात् मैं कौन हूँ, कहाँ से हुआ, मेरा सच्चा स्वरूप क्या है ? इसका विचार करो... क्या यह देह 'मैं' हूँ ? नहीं। मैं तो देह से भिन्न आत्मा हूँ... मैं कहाँ से हुआ ? मैं नया नहीं हुआ हूँ, मैं तो अनादि से हूँ, मैं... यह देह नया हुआ है और उसका नाश हो जाएगा। लेकिन मैं आत्मा न तो नया हुआ हूँ और न मेरा कभी नाश ही होता है... मैं देह से भिन्न ज्ञानस्वरूप हूँ... यही मेरा सच्चा स्वरूप है। इस प्रकार आत्मा का विचार करके सच्ची पहिचान करनी चाहिए।**

बालकों को सम्बोधनकर गुरुदेव ने कहा—**ऐसी पहिचान स्त्रीपर्याय में भी हो**

सकती है... ऐसा मत समझना कि हम तो स्त्री हैं। हम क्या कर सकती हैं ? स्त्री का देह तुम नहीं, तुम तो आत्मा हो, इसलिए अपनी आत्मा की पहिचान करना, यही कर्तव्य है। गुरुदेव का ऐसा सुन्दर और सरल उपदेश सुनकर बालाएँ प्रसन्न हुई थीं। पण्डित चन्दाबाई ने कहा : हमने सुना है कि सोनगढ़ का वातावरण बहुत पवित्र है, सारे दिन सब लोग बस धर्मचर्चा और भक्ति में ही रहते हैं। पश्चात् अपने आश्रम की बहिनों को सम्बोधन करते हुए उन्होंने कहा : देखो, यह सोनगढ़ की बहिनों की बात! ऐसा पवित्र जीवन बनाने का ध्येय रखना चाहिए... तुम सब इनका अनुकरण करो... अपनी आत्मा को पहिचानकर कल्याण करना, यही तो कर्तव्य है। इसके बिना आश्रम में रहने का क्या प्रयोजन ?

प्रसन्न वातावरण में गुरुदेव के मुख से आज की विविध चर्चा सुनकर उपस्थित भक्तों के अन्तर में बहुत-बहुत प्रमोद हुआ था... वास्तव में आज का प्रसंग, वह एक यादगार प्रसंग था। तत्पश्चात् आश्रम की बालाओं ने फिर से दूसरा राष्ट्रगीत के राग का अभिनन्दन गीत 'शिवपुर पथ परिचायक जय है... सन्मतियुग निर्माता...' — यह गाया... रात्रि में पंचायती मन्दिर में तत्त्वचर्चा हुई थी... चर्चा में आरा शहर के हजारों जिज्ञासु भाई-बहिनों ने बहुत प्रेम से भाग लिया था। वे निश्चय-व्यवहार, उपादान-निमित्त की स्वतन्त्रता इत्यादि सम्बन्धी तत्त्वचर्चा सुनकर प्रभावित हुए थे और ऐसे सुन्दर तत्त्वज्ञान का लाभ बढ़ाने के लिये आरा शहर में दो-चार दिन अधिक रहने की आग्रह भरी विनती की थी।

अध्यात्म चर्चा के यहाँ जिज्ञासुओं का प्रेम देखकर गुरुदेव को भी प्रसन्नता हुई थी, परन्तु निश्चित कार्यक्रम में फेरफार नहीं हो सकता था। चर्चा के दौरान जैनपुरी के जैन समाज की ओर से पूज्य गुरुदेव को भावभीना अभिनन्दन-पत्र सेठ श्री निर्मलकुमारजी ने अर्पण किया था। चर्चा के बाद पण्डित चन्दाबाई ने पूज्य बहिनश्री-बहिन को अपने निवासस्थान में बुलाकर लगभग पौन घण्टे तक विध-विध चर्चा की थी... और सोनगढ़ के प्रति बहुत प्रेम व्यक्त किया था।

— इस प्रकार जैनपुरी आरा शहर का एक दिन का कार्यक्रम उल्लासपूर्वक पूरा करके संघ ने पटना शहर की ओर प्रस्थान किया।

★ ★ ★

सिद्धक्षेत्र पटना शहर

फाल्गुन कृष्ण तेरस

'पूज्य श्री कानजीस्वामी दिगम्बर जैन तीर्थयात्रा संघ' आरा से पटना की ओर जा रहा है... आगे पूज्य गुरुदेवश्री की कल्याणवर्षिनी मोटर आज कुछ धीमे-धीमे दौड़ी जा रही है। उसके पीछे ही शान्त भक्ति करती-करती दूसरी मोटरें दौड़ रही हैं। यात्रा-प्रवास में गुरुदेव के साथ ही साथ रहने से आज भक्तों को बहुत हर्ष होता है... आनन्द से प्रवास करते-करते पटना शहर आ गया... गंगा किनारे यह शहर बहुत लम्बा-लम्बा लगभग सात मील के विस्तार में व्याप्त है... गाँव शुरु होने के पश्चात् चार-पाँच मील चलने पर भी अन्त ही नहीं आता, इसलिए रास्ता भूल जाने की शंका हो, ऐसा था परन्तु आगे ही गुरुदेव की मोटर चली जा रही होने से भक्त भी निःशंकरूप से उसके पीछे-पीछे मोटर चलाते ही जा रहे थे... अन्त में पूरा गाँव निकलकर गुलजार बाग की धर्मशाला के पास मोटरें रुक गयीं। धर्मशाला में ही सुन्दर जिनमन्दिर है। आते ही गुरुदेव सहित सब भक्तों ने जिनालय में दर्शन करके अर्घ्य चढ़ाया।

इस पटना शहर में गुलजार बाग धर्मशाला के सामने लगभग दो फर्लांग दूर, ब्रह्मचारी सुदर्शन सेठ की मोक्षभूमि है... सुदर्शन सेठ चम्पापुरी में हुए। उनके सौन्दर्य पर मुग्ध होकर रानी ने कपट से उन्हें अपने महल में लाकर अनुचित याचना की... परन्तु धर्मात्मा सुदर्शन तो अपने ब्रह्मचर्य में सम्पूर्ण दृढ़ रहे... इससे झल्लाकर रानी ने उन पर मिथ्या कलंक लगाकर राजा से फरियाद की... राजा ने उन्हें देहान्त दण्ड की शिक्षा की... उसी समय उन अडिग ब्रह्मचारी और परम वैरागी धर्मात्मा ने प्रतिज्ञा कर ली कि यदि यह उपसर्ग दूर होगा तो मुनिव्रत धारण कर लूँगा। पुण्य प्रभाव से उपसर्ग दूर हुआ... तलवार के प्रहार के बदले पुष्प की माला हो गयी और सुदर्शन को सिंहासन पर बैठाकर देवों ने उनका सन्मान किया... राजा ने क्षमा माँगी... सुदर्शन सेठ संसार परित्याग कर रत्नत्रयधारक मुनि हुए... मुनि होने के पश्चात् फिर भी एक गणिका ने उन पर ऐसा ही उपसर्ग किया, उस समय भी अडिग रहकर उन्होंने ऐसी प्रतिज्ञा की कि यह उपसर्ग दूर होगा तो फिर से नगर में नहीं जाना, संन्यास लेकर वन में ही रहना। अन्त में वह उपसर्ग भी दूर हुआ और

वह अडिग वीर केवलज्ञान प्रगट करके यहाँ से पौष शुक्ल पंचमी को मोक्ष प्राप्त हुए... यहाँ उनकी मोक्षभूमि में एक मन्दिर में उनके चरण-कमल की स्थापना है। अपनी यात्रा में यह दसवीं सिद्धभूमि है, चौदहवाँ तीर्थधाम है और 43 वाँ दिन है।

पटना - सिद्धक्षेत्र की यात्रा

जिनमन्दिर में दर्शन-पूजन के बाद सब हिल-मिलकर गुरुदेव के साथ भक्ति गाते-गाते सुदर्शन मुनिराज की मोक्षभूमि की यात्रा को चल दिये... खेत के बीच में सकड़ी पगडण्डी पर गुरुदेव के पदचिह्नों पर सैकड़ों भक्तों का कारवाँ गीत गाते-गाते जा रहा था—

कोनां पगले पगले चाले मुक्तिनी वणझार...
कहानगुरुना पगले चाले मुक्तिनी वणझार...
चालो जइअे सुदर्शन की मोक्षभूमि मोझार...

—इत्यादि गाते-गाते कहान गुरु जैसे बाल ब्रह्मचारी सन्त के साथ में सुदर्शन जैसे दृढ़ ब्रह्मचारी—धीर-वैराग्यवन्त सन्त की सिद्धभूमि में जाने से यात्रियों को उत्साहपूर्वक ब्रह्म-वैराग्य भावनाएँ जागृत होती थीं। उस सिद्धभूमि में पहुँचकर सबने सुदर्शन भगवान के चरणकमल के दर्शन करके अर्घ्य चढ़ाया... तत्पश्चात् सुदर्शन भगवान की पूजन की।

जम्बुद्वीप भरत आरज में देश बिहार सुहावे,
पटना नगरी उपवन में शिव सेठ सुदर्शन पाये...
—नित पूजो रे भाई... या श्रावक कुल में आय के....

— इत्यादि पूजन के बाद भक्ति हुई। भक्ति में प्रथम 'आज मैं महावीरजी आया तेरे दरबार में...' यह स्तवन गवाया था... उसमें—

बन गया शूली से सिंहासन सुदर्शन के लिये,
हो रहा गुणगान अब उस शेठ का संसार में... आज०
राज्य की नहीं चाह मुझे चाह नहीं संसार की,

ध्यान आसन की जगह दे दे तेरे दरबार में... आज०
दूर हो इस जग के सारे झंझटे मुझ से प्रभु,
शिवरमा सौभाग्य वरलुं यह तेरे दरबार में... आज०

— इत्यादि कड़ी पूज्य बहिनश्री-बहिन ने बहुत भाव से गवायी थी, तत्पश्चात् दूसरा स्तवन गवाया—

आवो आवो जी... हां.. हां.... आवो आवो जी... जैन जग सारे... सुदर्शन-मुनि मोक्ष गये...
गुण गावोजी हां.. हां.. गुण गावोजी सकल नरनारी प्रभु शिवथान गये... आवो...

नेमिनाथ प्रभु के निर्वाण का यह स्तवन कितने ही शब्द बदलकर गवाया गया था और भक्ति की सरस धुन चलती थी... वहाँ 'धन्य धन्य यादवकुलभूषण....' कड़ी आने पर उसके शब्द बदलकर दूसरा जोड़कर दोनों बहिनें बोलें उससे पहले तो भक्ति के उत्साह ही उत्साह में आशु कवि की भाँति गुरुदेव ने ही 'धन्य-धन्य वणिककुलभूषण' कहकर तुरन्त पूरा कर दिया और उल्लासपूर्वक भक्ति आगे चली।

धन्य धन्य वणिककुलभूषण... दृढ़ ब्रह्मचारी नेता
वृषभसेठ श्री जिनमति नंदन जय जय कर्म विजेता... आवो०
-दृढ़ ब्रह्मचारी-परमवैरागी.. जय जय कर्म विजेता... आवो०

वीतराग निर्ग्रंथ दिगम्बर मुनिमुद्रा तपधारी...
आतमध्यान लगा कर पावन कर्म सैन्य को मारी... आवो०

अजर अमर अविचल अविनाशी निजानंद पदधारी
सिद्ध हुये यहाँ शेठ सुदर्शन तिन प्रति ढोक हमारी... आवो०

नगर पटन के उपवनमांहीं चरण प्रभु का सोहे...
दूर दूर से यात्री आकर देख प्रभु मन मोहे... आवो०

आनन्दपूर्वक यह स्तवन पूरा होने पर तीसरा स्तवन गुरुदेव ने गवाया...

पाये पाये जी... हाँ... हाँ... पाये पाये जी सुदर्शन दर्शन जिया हरषायेजी०
सब टले हमारे पातक पुण्य कमाये जी... पाये पाये जी०

गुरुदेव ने सिद्धिधाम में भावभीनी भक्ति करायी, इसलिए सबको बहुत आनन्द

हुआ; बहुत उत्साहपूर्वक भक्ति पूरी होने पर, सुदर्शन भगवान इत्यादि के जोरदार जय-जयकारपूर्वक इस सिद्धक्षेत्र की यात्रा पूर्ण हुई।

पटना सिद्धक्षेत्र से सिद्धि प्राप्त श्री सुदर्शन भगवान को नमस्कार हो...
इस सिद्धिधाम की यात्रा करानेवाले कहान गुरुदेव को नमस्कार हो...

★ ★ ★

सुदर्शन सिद्धिधाम की यात्रा करके गुरुदेव के साथ वापस मुड़ते हुए भक्तजन आनन्द से अपना हर्ष व्यक्त करते थे... और उमंग से गाते थे

भवि भावे ते सिद्धयात्रा ग्या 'ता... गुरुजीनी साथमां रे...
त्यां दर्शन कर्या शुद्ध भावे... सुदर्शन धामना रे....
त्यां पूजन कर्या बहु भावे.... गुरुजीनी साथमां रे...
त्यां भक्ति करी बहु भावे.... सुदर्शन धाममां रे....
रोज नवनवा तीर्थ भेटाय.... गुरुजीनी साथमां रे....
आ यात्रा अपूर्व थाय.... सुदर्शन धाममां रे....

विविध तीर्थों में गुरुदेव के साथ की मंगल यात्रा और फिर बहिनश्री-बहिन की भक्ति की उमंग... इसलिए तो बस! मानों सोने में सुगन्ध मिली। भक्तों को बहुत आनन्द होता... गुरुदेव के अन्तरपट खोलकर आनेवाले वैराग्य के उद्‌गार और भक्ति के प्रसंग उस-उस तीर्थस्थान में बने हुए पूर्व प्रसंगों का साक्षात् दृश्य खड़ा कर देता था। अहा, 'जहाँ हमारा भक्ति का भाव उल्लसित हुआ, वहाँ हे भगवान! आपके साथ भाव से अन्तर नहीं तो क्षेत्र और काल से अन्तर कैसे रह सकेगा!'—इस प्रकार ज्ञानी भक्ति के बल से सिद्ध भगवान को ऊपर से यहाँ उतारते थे... सभी को ऐसा ही लगता था कि वाह! गुरुदेव के साथ की इस यात्रा की बलिहारी है! इस जीवन का एक सुनहरी प्रसंग है!

यात्रा करके धर्मशाला में आने के पश्चात् पूज्य गुरुदेव के भोजन का प्रसंग बहिनश्री-बहिन के यहाँ बना... ऐसे प्रसंग की पूर्व तैयारी में भी सेवकों को कैसी उमंग होती है, वह यहाँ दृष्टिगोचर हुआ... यात्रा के प्रसंगों में महापुरुष के आहारदान का लाभ प्राप्त होने पर धर्मात्मा को जो आनन्द होता है, वह अकथ्य है। आज यात्रा के पश्चात्

गुरुदेव को जीमाने का आकस्मिक लाभ प्राप्त होने से भक्तों को बहुत हर्ष हुआ। अब राजगृही, पावापुरी, सम्मेदशिखरजी और चम्पापुरी जैसे मुख्य तीर्थों की यात्रा आती है; इन महत्त्व के तीर्थों की यात्रा में गुरुदेव साथ में जुड़े, इसलिए पाँच सौ से अधिक यात्रियों को लेकर एक स्पेशल ट्रेन अहमदाबाद से रवाना हुई, वह आज यहाँ पटना शहर आ पहुँची और दूसरे भी कितने ही यात्री आ पहुँचे; इससे संघ के यात्रियों की संख्या एक हजार से अधिक हो गयी। गुरुदेव के प्रभाव से ऐसा विशाल यात्रासंघ बहुत शोभायमान होता था।

पटना शहर के म्यूजियम में जमीन में से निकली हुई मौर्यकालीन प्राचीन दिगम्बर जैन प्रतिमाएँ हैं, उनका भी गुरुदेव ने अवलोकन किया था। इस पटना शहर का पुराना नाम पाटलिपुत्र है, यहाँ पाँच जिनमन्दिर हैं। दोपहर डेढ़ बजे यहाँ के समाज की ओर से गुरुदेव का स्वागत हुआ, तत्पश्चात् गुरुदेव का प्रवचन हुआ। प्रवचन के बाद संघ ने राजगृही की ओर प्रस्थान किया। बीच में बिहार शरीफ गाँव में गुरुदेव भोजन के लिये रुके थे और दूसरे यात्री सीधे राजगृही पहुँच गये थे।

★ ★ ★

राजगृहीनगरी

फाल्गुन कृष्ण तेरह से फाल्गुन शुक्ल एकम्

रा.. ज.. गृ.. ही.. न.. ग.. री..! अहा, तीर्थंकर भगवान के समवसरण का पवित्रधाम! इस राजगृही के धर्म दरबार में जाने पर किसे आनन्द नहीं होगा? नौ बसें और तीस मोटरों में 600 यात्री हर्षपूर्वक गाते-गाते इस पावन तीर्थ की ओर जा रहे हैं।

हो चालो ने... जइये श्री राजगृहीधाममां... हो चालो ने... जइये श्री वीर दरबारमां...
हो चालो ने.... जइये श्री कहानगुरु साथ मां....
गुरुदेव साथमां, श्री वीरप्रभु पासमां; वीरप्रभु पासमां, श्री राजगृहीधाममां...
— हो चालो ने०
राजगृहीधाममां ने दिव्यध्वनि सुणवा, दिव्यध्वनि सुणवा, ने रत्नत्रय पामवा
— हो चालो ने०
रत्नत्रय पामवा ने भवभ्रमण टाळवा; भवभ्रमण टाळवा, ने मोक्षसुख पामवा...
— हो चालो ने०

अहा! भगवान के समवसरण धाम की ओर जा रहे हैं; भगवान के दरबार में जाएँगे और रत्नत्रय को साधेंगे। भगवान के दरबार में जाने पर भक्तों को भक्ति उछले बिना कैसे रहे? आज सब यात्रियों में भक्ति का वातावरण व्याप्त था; बड़ी बसें या छोटी मोटरें—सबमें यात्री भक्ति करते थे। पूज्य बहिनश्री-बहिन मोटर में 'समवसरण' को याद कर-करके अन्तर में से विध-विध भक्ति व्यक्त करते थे। अहा, शान्त भक्ति! मानो जिन गुणों का मधुर गीत गुंजन! दूर-दूर राजगृही की पंच पहाड़ी दिखती थी और मोटरें शीघ्रता से उसे भेंटने के लिये दौड़ती थी। समवसरण धाम के नजदीक जाने पर जैसे-जैसे क्षेत्र का अन्तर टूटता जाता था, वैसे-वैसे साथ-साथ में काल का अन्तर भी टूटता जाता था और वह समवसरण मानो वर्तमान गोचर होने लगता था; यह रहा समवसरण... यह बैठे महावीर भगवान! यह आये गौतम... और यह... छूटा दिव्यध्वनि का नाद! चैतन्य वैभव का श्रवण करते हुए सर्वत्र हर्ष छा रहा है... और साधक जीवों की परिणति तो आनन्द से

नाच उठी – ऐसा ही हर्ष आज गुरुदेव के साथ इस धाम में आने पर सर्व यात्रियों में छा रहा है... और साधक जीवों की परिणति तो आनन्द से नाच रही है।

अहा, जिनके प्रताप से ऐसे तीर्थधामों की यात्रा होती है, ऐसे गुरुदेव के उपकार को हृदय किस प्रकार व्यक्त करे? संक्षिप्त में मात्र इतना ही कहना बस है कि भावतीर्थ और द्रव्यतीर्थ ऐसी इस 'मंगल तीर्थयात्रा' के प्रणेता गुरुदेव ही हैं; इसलिए तीर्थयात्रा में कदम-कदम पर भक्तों के हृदय में से गुरुदेव का उपकार व्यक्त होता है और हृदय की धड़कन भी मानो गुरुदेव के उपकार गीत में ताल भर रही है।

ऐसा करते-करते तीन बजे राजगृहीनगरी आ पहुँचे। मुनिसुव्रतनाथ की जन्म नगरी में हर्षसहित सब यात्री उतरे। दिगम्बर जैन धर्मशाला में निवास था। धर्मशाला में एक छोटा जिनमन्दिर है और बगल में एक विशाल जिनमन्दिर अनेक वेदियों से शोभित हो रहा है। इन जिनमन्दिरों के दर्शन करने के बाद सभी यात्री गुरुदेव के स्वागत के लिये तैयार हुए।

★ ★ ★

इस ओर, पटना से प्रस्थान करके बीच में बिहारशरीफ गाँव में भोजन के लिये रुके हुए गुरुदेव कल्याणवर्षिनी में राजगृही की ओर आ रहे हैं। अहा, पहली ही बार विपुलाचल की ओर पधार रहे गुरुदेव के अन्तर में आज अनेक ऊर्मियाँ जागृत हो रही हैं... कैसा होगा वह समवसरण का धाम! और कैसी होगी वह गणधरादि सन्तों की सभा! कैसी होगी वह ॐकारध्वनि... और कैसे होंगे उसके झेलनेवाले!—ऐसे तीर्थंकरों का सम्पूर्ण वैभव अपने हृदय में चितारकर गुरुदेव गहरे-गहरे स्मरणों में लवलीन हैं; कल्याणवर्षिनी मोटर अभी कितनी शीघ्रता से समवसरण की ओर दौड़ती है, इसका भी लक्ष्य नहीं है। अचानक सैकड़ों यात्रियों का जयनाद सुनकर गुरुदेव ने बाहर नजर की, वहाँ तो सामने ही विपुलाचल!

विपुलाचल और राजगृहीनगरी को देखने पर जैसे गुरुदेव को अति हर्ष हुआ, उसी प्रकार राजगृही में पधारे हुए गुरुदेव को देखकर यात्रियों को भी अति हर्ष हुआ और जय-जयकार से राजगृहीनगरी को गजा कर उत्साहपूर्वक सबने स्वागत किया। स्वागत में तथा

संघ की व्यवस्था में कलकत्ता के भाईयों ने उत्साहपूर्वक भाग लिया था। हिन्दुस्तान के इस पूर्व प्रदेश में शाम बहुत जल्दी पड़ती है। चार-साढ़े चार बजने पर तो सूर्यास्त हो जाता है और छह बजने से पहले तो एकदम अन्धकार हो जाता है।

रात्रि में जिनमन्दिर में भक्ति हुई। दिव्यध्वनि के इस धाम में महावीर भगवान के प्रति बहुत ही भक्ति उल्लसित होती थी। पूज्य गुरुदेव ने भी भगवान के समवसरण का भजन बहुत प्रमोद से गवाया था। अहा, मानो अभी ही महावीर भगवान की दिव्यध्वनि खिरती हो और उसके रणकार अभी सन्तों के हृदय में गूँजते हैं—ऐसा भाववाही वातावरण था। जिनमन्दिर में भगवान के दरबार में प्रवेश करते ही वीरनाथ को देखकर भक्त हृदय की सितार गूँज उठी कि —

आज में महावीरजी आया तेरे दरबार में...
साथ ही मैं भक्ति लेकर आया तेरे दरबार में...

और पश्चात् भक्ति की धुन बढ़ने पर भक्त हृदय में से आनन्द के रणकार उठे—

महावीरा तेरी धुन में आनन्द आ रहा है... आनन्द आ रहा है।

अजब भक्तिपूर्वक ये दो स्तवन गवाये थे। भगवान के दरबार में हुई यह भक्ति, आराधक जीव ही करा सकें, ऐसी अपूर्व थी।

भक्ति के पश्चात् अभी तो राजगृहीनगरी का वर्णन लिखना शुरु भी नहीं किया, वहाँ तो भगवान महावीर और गौतम गणधर, बाह्य वैभव से विरक्त करनेवाली माता दिव्यवाणी और अचिन्त्य वैभव से युक्त समवसरण, और मुनिसुव्रतनाथ के चार कल्याणक तथा तेईस-तेईस तीर्थंकरों के समवसरण, श्रेणिक, चेलना और अभय, तो दूसरी ओर जम्बुस्वामी का वैराग्य—इन सबके सुस्मरण एक साथ आकर मन के ऊपर हल्ला करते हैं—एक कहता है : हमें पहले लिखो और दूसरा कहता है कि हमें पहले लिखो। मन कहता है : अरे, संस्मरणों! तुम सब एक साथ हल्ला मत मचाओ, थोड़ी देर शान्त होओ। पहले मुझे मेरे गुरु के साथ इस विपुलाचल इत्यादि तीर्थ की मंगल यात्रा कर लेने दो—इस प्रकार मन में उभरते राजगृही के चारों ओर के संस्मरणों को शान्त करके सवेरे गुरुदेव के साथ विपुलाचल धाम की यात्रा के लिये तैयारी की।

★ ★ ★

राजगृही तीर्थधाम—सिद्धिधाम की यात्रा

फाल्गुन कृष्ण चौदह : सवेरे पूज्य गुरुदेव के साथ राजगृही के पंच पहाड़ी तीर्थ की मंगल यात्रा शुरु हुई। शासन के नायक श्री महावीर तीर्थंकर ने जहाँ से पहली-पहली धर्मदेशना प्रदान की—ऐसे इस पवित्र धाम में गुरुदेव के साथ विचरते हुए हजारों यात्री हर्ष विभोर बने थे।

'अभी गुरुदेव के साथ हम कहाँ विचरते हैं?—कि राजगृहीधाम में।' अहा राजगृही!—रत्नत्रय का धाम—यहाँ तीर्थंकरों के पावन उपदेश से अनेक जीव रत्नत्रय के आराधक बने; गौतम जैसे अनेक जीव रत्नत्रय को प्राप्त हुए और श्रेणिक जैसे अनेक जीव सम्यक्त्व को प्राप्त हुए—ऐसा यह पवित्रधाम! रत्नत्रय तीर्थ का यहाँ प्रवर्तन हुआ... वीर शासन का धर्म चक्र यहाँ से शुरु हुआ। गुरुदेव के साथ ऐसे रत्नत्रयधाम में आकर हम भी अब खाली हाथ वापस जानेवाले नहीं हैं। ऐसी भावना के साथ यात्री हर्षपूर्वक गुरुदेव के साथ यात्रा करने जा रहे हैं। पर्वत का कण-कण मानो कि राजगृही की पावन कथा सुनाता हो—ऐसे कदम-कदम पर राजगृही के संस्मरण ताजा होते हैं :

यह राजगृही भारत की अति प्राचीन और समृद्धिशाली नगरी है; भगवान महावीर के समय में तो इसकी समृद्धि चरम सीमा पर थी। मगध राज्य की यह राजधानी महावीर भगवान की दिव्यध्वनि के कारण सम्पूर्ण भारत के जैनशासन की राजधानी का गौरव प्राप्त थी। यहाँ के राजा श्रेणिक, वे महावीर भगवान के मात्र 'मौसा' ही नहीं—परन्तु परम उपासक थे। पाँच सुन्दर पर्वतों की तलहटी में स्थित इस राजगृही का महाभारत के सभा पर्व में तथा दूसरे हिन्दु पुराणों में 'गिरिब्रज' रूप से उल्लेख आता है। जैन पुराणों के अनुसार यह राजगृहीनगरी श्री वासुपूज्य के अतिरिक्त तेईस तीर्थंकर भगवन्तों के पुनीत आगमन से पावन हुई है। मुनिसुव्रत भगवान के चार कल्याणक यहीं हुए हैं। अन्तिम केवली श्री जम्बुस्वामी* तथा वीर प्रभु के कितने ही गणधर यहाँ से मुक्ति प्राप्त हुए हैं।

* जम्बुस्वामी के मोक्षस्थानरूप से मथुरा तथा राजगृही दोनों का उल्लेख देने में आता है। इसलिए इस पुस्तक में दोनों स्थानों का उल्लेख किया गया है। उनके जन्म का तथा विवाह के दूसरे दिन ही वैराग्य से विद्युत्प्रभादि पाँच सौ राजकुमारों सहित दीक्षा का प्रसंग इस राजगृही में ही बना था। — लेखक

इसलिए यह 'सिद्धक्षेत्र' है। यशोधर मुनिराज का उपसर्ग महारानी चेलना ने दूर किया और श्रेणिक राजा जैनधर्मी बने—यह प्रसंग भी इसी नगरी के उद्यान में बना था। श्री कृष्ण के प्रतिस्पर्धी जरासंध प्रतिवासुदेव की राजधानी भी यहीं थी। ईस्वीसन से पूर्व – अर्थात् आज से लगभग दो हजार वर्ष पहले, सोपारा से एक आर्यिका संघ यहीं तीर्थ वन्दना के लिये आया था, धीवरी पूतगन्धा भी उसमें थी, उसने क्षुल्लिका व्रत ग्रहण करके यहाँ की नीली गुफा में समाधिमरण किया था। जैन, हिन्दु और बौद्ध—सर्व इस राजगृही को पवित्र मानते हैं। यहाँ पर्वत में से आते हुए गर्म पानी के झरने और कुण्ड अनेक रोगों को मिटानेवाला माना जाता है। अहा! इस भूमि में जिननाथ के श्रीमुख से प्रवाहित श्रुतगंगा जहाँ भव रोग का भी नाश करनेवाली है, वहाँ दूसरे रोग की क्या बात? महावीर भगवान होने से पहले भी यह राजगृहीनगरी तीर्थरूप से प्रतिष्ठा प्राप्त कर चुकी थी, उनके भूगर्भ में रहे हुए महावीरकालीन या उससे भी पहले के जैन संस्कृति के अवशेष खुदाई करते हुए मिल जाते हैं और वे प्राचीन जैनधर्म की गौरव गाथा प्रसिद्ध करते हैं।

— ऐसी इस राजगृहीनगरी में पाँच पर्वत शोभित हो रहे हैं : (1) विपुलाचल, (2) रत्नगिरि, (3) उदयगिरि, (4) स्वर्णगिरि (सोनागिरि अथवा श्रमणगिरि) और (5) वैभारगिरि। भगवान वीरसेनस्वामी ने श्री धवलाटीका में बहुमानपूर्वक इस पंचशैलपुर (राजगृही) का उल्लेख किया है। वैशाख शुक्ल दशमी को जाम्भगाम में ऋजुकुला नदी के किनारे* केवलज्ञान प्राप्त करने के पश्चात् भगवान महावीर वहाँ से विहार करके राजगृहीनगरी में पधारे... विपुलाचल पर समवसरण रचा गया... बारह सभाएँ भरी... हजारों-लाखों जीवों के झुण्ड के झुण्ड आये और भगवान का उपदेश सुनने के लिये आतुर बने। अन्त में 66 दिन बाद श्रावण कृष्ण एकम् को जब श्री इन्द्रभूति गौतम आये, तब भगवान के सर्वांग से दिव्यध्वनि के मेघ बरसे और भव्य जीवों के आनन्द का पार नहीं रहा। जैसे प्रथम वर्षा होने पर हर्षित मयूर कला सहित नाच उठता है, उसी प्रकार धर्म की प्रथम वर्षा होते ही भव्य मयूर ज्ञानकला खिला-खिलाकर आनन्द से नाच उठे; गौतमस्वामी रत्नत्रय को प्राप्त हुए और गणधर होकर बारह अंग रचे। अहा, यह उनकी दीक्षा भूमि, यह उनके गणधरपद की भूमि, यही उन्हें चार ज्ञान प्रगट हुए और यहीं उन्होंने

* यह स्थान सम्मेदशिखर के मधुवन से दसैक मील दूर है; नदी किनारे का दृश्य बहुत रमणीय है।

बारह अंग की रचना की, अर्थात् शास्त्र रचना की भी यही भूमि—इस प्रकार, तीर्थंकरदेव, गणधरदेव और जिनवाणी, इन तीनों के सर्वोत्तम संगम से शोभित यह भूमि, आज भी गुरुदेव के संघसहित आगमन से मानो कि ऐसी ही शोभ रही है।—'मानो आज ही यहाँ तीर्थंकर-गणधर और जिनवाणी साक्षात् विराजमान हो,—ऐसे प्रमोद से सब यात्री गुरुदेव के साथ यात्रा कर रहे हैं। इस स्थान का रजकण-रजकण पवित्र है। इस तीर्थ की वन्दना करते हुए (और वह भी गुरुदेव जैसे आराधक जीवों के साथ वन्दना करते हुए) हृदय में जागृत आराधना की उत्तम भावनाओं द्वारा अन्तर आत्मा पावन होता है।

(1) विपुलाचल तीर्थधाम की यात्रा

अहा! धन्य भाग्य-धन्य घड़ी! आज गुरुदेव के साथ विपुलाचल धाम की यात्रा होती है, भगवान के समवसरण में गुरुदेव अपने को ले जाते हैं। गुरुदेव ने जहाँ विपुलाचल पर पहला कदम रखा, वहाँ वीर प्रभु के जयनाद से पर्वत गाज उठा। पर्वत की शुरुआत में ही वीर प्रभु के धर्म प्रवर्तन सम्बन्धी स्मृति लिखी हुई नजर पड़ती है, मानो कि पर्वत ही अपने मुख से यह संस्मरण कहता हो। **इस पर्वत के ऊपर आज से लगभग छठी शताब्दी ईस्वी पूर्व श्रावण कृष्ण एकम के दिन जैनधर्म के अन्तिम तीर्थंकर भगवान महावीर की प्रथम देशना हुई थी।**—यह संस्मरण पढ़कर झटपट विपुलाचल पर पहुँचने के लिये यात्रियों के पैर में जोम आता है और फिर बीच-बीच में गुरुदेव भी वीरनाथ के स्मरण याद कर-करके यात्रियों को आनन्द कराते हैं। आज वीरनाथ की भूमि में विचरते हुए गुरुदेव को बहुत ही प्रमोद और प्रसन्नता होती है और प्रसन्नता के प्रतिच्छन्द भक्तों के हृदय में पड़ते हैं। इस प्रकार हर्षमय वातावरण में गुरुदेव के पदचिह्नों पर हजारों यात्रियों का लम्बा-लम्बा कारवां विपुलाचल पर चला जा रहा है। अहा! कैसा आनन्दकारी दृश्य! समवसरण ओर जीवों के झुण्ड के झुण्ड जाते होंगे—उस समय का दृश्य कैसा होगा?—उसका नमूना अभी दिखता है। पूर्व रात्रि में थके हुए यात्रियों को ऐसा लगता था कि सवेरे पाँच पर्वत कैसे चढ़े जाएँगे? परन्तु यह तो समवसरण की भूमि, और फिर

गुरुदेव जैसे सद्‌पुरुषों का संग, उसमें थकान कहाँ से लगे ? पर्वत चढ़ते समय वह सब थकान विस्मृत हो गयी, जैसे अज्ञानदशा की थकान ज्ञानदशा होने पर भाग जाती है, उसी प्रकार।

थोड़ा सा चढ़े वहाँ बीच में प्राचीन काल के विशाल चरण पादुका के दर्शन हुए; महावीर भगवान के इस चरण पादुका के दर्शन से हर्ष हुआ। भगवान के पदचिह्न पहिचान-पहिचान कर सन्त उनके पदचिह्नों पर जा रहे हैं और यात्री भी उन पदचिह्नों को सिर झुकाकर तथा उनकी चरणरज मस्तक पर चढ़ाकर गुरुदेव के पदचिह्नों पर जा रहे हैं।

गुरुदेव के साथ समवसरण धाम की ऐसी अपूर्व यात्रा से पूज्य बहिनश्री-बहिन को अपार हर्ष होता था और भक्ति द्वारा अपना हर्ष व्यक्त करती थीं। आनन्दमय भक्ति द्वारा यात्रा का उत्सव अलग ही शोभायमान था। एक ओर आकाश में सोनेरी सूरज उग रहा था... तो दूसरी ओर विपुलाचल पर बहिनें गाती थी कि—

आज मारे सोना समोरे सूरज ऊगीयो... रे...
मारे यात्रा अपूर्व गुरुजी साथ... मारे...

भगवान के दरबार में गुरुदेव के साथ जाने से यात्रियों को तो उमंग होती है... परन्तु ऐसी महान प्रभावशाली यात्रा देखकर डोलीवाले लोग भी उत्साह में आ जाते और 'भगवान की तथा समवसरण की जय बुलाते'—इस प्रकार आनन्दपूर्वक गुरुदेव के साथ सब विपुलाचल पर आ पहुँचे, अहा! भगवान के दरबार में आ पहुँचे। गुरुदेव तो उस धाम को बहुत देर तक निहारते ही रहे। विपुलाचल पर तीन-चार मन्दिर हैं। उनमें श्री महावीर भगवान, चन्द्रप्रभ भगवान इत्यादि की प्रतिमाजी तथा वीरप्रभु के चरणकमल स्थापित हैं। सबने वहाँ दर्शन करके अर्घ्य चढ़ाया और फिर प्रभुजी के चरण सन्मुख पूजन की। पूजन के पश्चात् भक्ति हुई। पहले गुरुदेव ने निम्न भजन गवाया—

वीरसभा मां अहीं गौतम पधार्या... अमृत वरस्या मेहरे... वीरजीनी वाणी छूटी रे...
रत्न अमोलक गणधरदेव श्री शोभाव्या शासन रे... वीरजीनी वाणी छूटी रे...
तरस्यां चातक देव मानव तीर्यंचनी तत्त्वपिपासा छिपाय रे... वीरजीनी वाणी छूटी रे...
दरशन ज्ञान ने चारित्र केरा मोंधेरा फाल्या फाल रे.... वीरजीनी वाणी छूटी रे...

मोंधो मारग ज्यां मुक्तितणो त्यां जीवोनां जूथ ऊभराय रे... वीरजीनी वाणी छूटी रे...
धन्य नगर धन्य समवसरण धन्य धन्य सभा नरनार रे... वीरजीनी वाणी छूटी रे...
दिव्यध्वनिना वह्या प्रवाह अे धन्य दिवस धन्य रात रे.... वीरजीनी वाणी छूटी रे...
साक्षात् सुणवा अे दिव्यध्वनिने मन मारूं तलसाय रे... वीरजीनी वाणी छूटी रे...

अहा, हजारों यात्रियों के हर्ष और भक्ति भरे कोलाहल से विपुलाचल का वातावरण समवसरण जैसा बन रहा था। मानो कि अभी ही यहाँ वीरप्रभु की धर्मसभा भरायी हो, गौतमस्वामी आते हों और प्रभु की वाणी के धोध बहते हों, अपने भी धर्मसभा में बैठे-बैठे वह दिव्यवाणी सुनने में लवलीन हों, ऐसे भाव से गुरुदेव भक्ति करा रहे थे। एक तो वीर प्रभु का विपुलाचल धाम और फिर गुरुदेव की भक्ति! यात्रियों के लिये यह सुनहरी घड़ी थी। गुरुदेव के हृदय में उल्लसित जिनेन्द्रभक्ति श्रोताओं को भी जिनमार्ग के प्रति परम बहुमान जागृत करती थी। अहा, गुरुदेव के साथ वीर सभा में बैठकर भक्ति करने का यह धन्य अवसर था। एक स्तवन पूरा हुआ और तुरन्त गुरुदेव ने दूसरा स्तवन शुरु किया : **'प्रभुनी वाणी जोर रसाळ, मनडुं सांभळवा तलसे'** दिव्यध्वनि के इस धाम में गुरुदेव को दिव्यध्वनि के स्मरण ताजा होते थे। इसलिए गुरुदेव बहुत ही भावभीने हृदय से भक्ति गवाते थे और मानो कि भगवान की बारह ही सभाएँ भरी हों और गणधरादि सन्तजनों के चरणसमीप में बैठकर उनके साथ ही भक्ति करते हों – ऐसे वातावरण के बीच यात्री परम उत्साह से भक्ति झेलते थे। गुरुदेव की उल्लास भरी भक्ति से सब यात्रियों को बहुत आनन्द हुआ और चारों ओर जय-जयकार गाज उठा। तत्पश्चात् गुरुदेव की आज्ञानुसार दोनों पूज्य बहिनों ने भी अद्भुत भक्ति करायी... भक्त हृदय के तार झनझना उठे और वीतराग रस भीना संगीत शुरु हुआ।

अहीं दिव्यध्वनि छूटी वीरमुखथी रे.... अहीं ॐध्वनि छूटी वीरमुखथी रे....
अनंत जीवोना तारणहार... आज दिव्य०.... सहु महोत्सव करीये आज... आज दिव्य०
आज पात्र गौतमजी पधारीया रे... प्रभु दिव्यध्वनिना छूट्या धोध... अहीं दिव्य०
विपुलाचले समोसरण जामीया रे... श्रेणीक राजानी राजधानी मांही... आज दिव्य०
रुडी राजगृही नगरी मांही... आज दिव्यध्वनि छूटी वीर मुखथी रे...
चार तीर्थध्वनि रसे तरबोळ थया रे... गणधरमुनि-श्रावकना थया वृंद... अहीं दिव्य०
आत्म आनन्दमां नाची उठ्या आज... अहीं दिव्यध्वनि छूटी वीर मुखथी रे।

— इस स्तवन के समय 'भगवान के दरबार' की धुन तो कोई अजब थी। अहा! इस विपुलाचल की यात्रा भक्ति गुरुदेव के साथ कोई अनोखे भाव से हुई है। सबको ऐसा ही होता है कि वाह, गुरुदेव जैसे ज्ञानी-महात्मा के साथ यात्रा की वास्तविक बलिहारी है। मानो महावीर भगवान यहाँ विराजते हों, दिव्यध्वनि खिरती हो और सभा में बैठकर अभी सुनते हों, ऐसा साक्षात् दृश्य खड़ा हो गया था। दिव्यध्वनि सुनकर सब आनन्द करते हों—ऐसा उल्लास सबको यात्रा में आता था। अहा, ज्ञानियों के भक्ति और भाव अचिन्त्य कोई अलग ही हैं! वे भाव जगत से भिन्न छंट जाते थे। ये अपूर्व दृश्य और अपूर्व भाव निहारने का सद्भाग्य मिलने से सबको आनन्द होता था... धन्य हुआ जीवन... कि गुरुदेव के साथ ऐसी यात्रा हुई! आज के सूर्योदय का सुनहरी दृश्य भी कोई अनोखा था—वास्तव में आज जीवन का सुनहरी दिवस था।

गुरुदेव इस भूमि का अवलोकन करके माहात्म्यपूर्वक कहते थे कि साक्षात् तीर्थंकर परमात्मा यहाँ विराजते थे और ऊपर से इन्द्रों के झुण्ड यहाँ भगवान की सेवा करने उतरे थे; भगवान की वाणी सुनकर बहुत जीव धर्म प्राप्त करते थे—इस प्रकार बहुत ही महिमा करते थे। दिव्यध्वनि का यह धाम निहारकर किसी पावन हृदय में ऐसी ऊर्मि जागृत होती थी—मानो कि अभी ताजा ही भगवान की दिव्यध्वनि सुनी हो। कभी तो यह ऊर्मि इतनी उग्र बनती—मानो कि अभी ही भगवान की सभा में बैठे-बैठे ॐकार नाद सुन रहे हों!—इस प्रकार देह स्तब्ध बन जाती थी।

और दूसरे कोई यात्री पर्वत का अवलोकन करते, नैनों द्वारा पर्वत के साथ बातें करते और पर्वत से पूछने का मन होता कि अरे पर्वत! तूने तो वीरनाथ भगवान की दिव्यवाणी सुनी है—कह तो सही... कैसी थी वह वीर प्रभु की वाणी! तब पर्वत ने भी मानो वाणी फूटती हो—ऐसे उसमें से प्रतिच्छन्द उठते हैं कि 'अहा, उस वाणी की क्या बात! चैतन्य का अपार वैभव बताकर आत्मा को अन्तरमग्न करनेवाली वह वाणी सुन-सुनकर बहुत जीव सम्यग्दर्शन प्राप्त करके आत्मा में लीन होते थे। अरे हमें भी ऐसा मन हो जाता था, परन्तु हम तो जड़; हमें ऐसी लीनता कहाँ से हो? तो भी हमारे धन्य भाग्य कि प्रभु के चरण की निकटता से हम पावन हो गये।'—यह सुनकर यात्रियों को भी ऐसा लगता था कि धन्य यह पर्वत! और धन्य यह धूल—ऐसा कहकर प्रभु चरण से पावन हुई

रज को सब अपने मस्तक पर चढ़ाते। गुरुदेव बारम्बार भावपूर्वक प्रभु चरणों का स्पर्श करते... कितनी बार ? तीन बार नहीं परन्तु सात बार!

— इस प्रकार गुरुदेव के साथ विपुलाचल तीर्थधाम की बहुत भावभीनी यात्रा की... और सैकड़ों-हजारों यात्रियों के हृदय में से जय-जयकार ध्वनि गाज उठी; 'बोलिये.... श्री महावीर भगवान की जय हो! बोलिये... श्री गौतमगणधर देव की जय हो! दिव्यध्वनि जिनवाणी मात की.... जय हो! भगवान के समवसरण की... जय हो! मंगल यात्रा करानेवाले गुरुदेव की... जय हो!'—पर्वत के हृदय में से भी इस जयध्वनि के ऐसे धीर-गभीर प्रतिच्छन्द उठे... मानो कि पर्वतराज ने भगवान की दिव्यध्वनि को अभी अपने हृदय में 'रिकार्डिंग मशीन' की भाँति सम्हाल रखी हो... और अभी गौतम जैसे पात्र भक्तों को देखकर वह ध्वनि उन्हें सुना रहा हो—ऐसा कान में गूँज रहे दिव्यध्वनि के नाद सहित पहले पर्वत की यात्रा पूर्ण करके सबने दूसरी पहाड़ी की ओर प्रस्थान किया।

विपुलगिरि के वैभवस्वरूप वीरवाणी को नमस्कार हो!

विपुलगिरि तीर्थधाम की यात्रा करानेवाले कहान गुरुदेव को नमस्कार हो!

★ ★ ★

(2) रत्नागिरि तीर्थधाम की यात्रा

पूज्य गुरुदेव के साथ एक हजार यात्रियों का संघ विपुलाचल तीर्थ की यात्रा करके अब दूसरे रत्नागिरि पर्वत की ओर जा रहा है। संघ का एक छोर रत्नगिरि के ऊपर है तथा दूसरा छोर विपुलाचल के ऊपर है, यात्रियों की लम्बी हारमाला से दोनों पर्वत जुड़ गये हैं। पूज्य बहिनश्री-बहिन को पूज्य गुरुदेव के साथ यात्रा करने में विशेष आनन्द आता है, इसलिए वे चलते-चलते भक्ति गवा रहे हैं :

तुज पाद पंकज अहीं थया... आ देशने पण धन्य छे;
तुज पादथी स्पर्शाइ एवी आ धूलीने पण धन्य छे।

विपुलाचल से नीचे उतरने में यात्रियों के पैर झट उठते नहीं थे, क्योंकि यात्रियों को ऐसा लगता था कि हे भगवान! जब आप यहाँ समवसरण में साक्षात् विराजमान थे, तब यहाँ आपके पास बहुत जीव आते थे और ऊपर आने के बाद फिर से उन्हें नीचे उतरना नहीं होता था। आपकी दिव्यवाणी सुनकर चैतन्य में ऐसे लीन हो जाते थे कि ऊपर के ऊपर ही केवलज्ञान पा जाते थे। अहा! आपके पास आकर अनेक जीव आपके जैसे हो गये। हे भगवान! हम भी आपके जैसे होने के लिये ही आपके पास आये हैं।

अहा! धन्य वह तीर्थंकर... और धन्य वह समवसरण, धन्य वह ॐकार नाद और धन्य उसके श्रोता, धन्य वह मुनिवरों की सभा और धन्य वह श्रेणिक राजा, धन्य यह राजगृही और धन्य यह विपुलाचल! इस प्रकार महिमापूर्वक भक्ति करते-करते सभी यात्री रत्नागिरि की ओर चल रहे हैं, चल नहीं रहे परन्तु दौड़ रहे हैं क्योंकि सबको गुरुदेव के साथ ही रहने का उत्साह है। तीर्थंकरों के धाम नजरों से निहारकर गुरुदेव को बहुत प्रसन्नता हुई है, वे डोली में बैठे-बैठे भी तीर्थधाम की महिमा करते जाते हैं और यात्रा की प्रसन्नता व्यक्त करके सबको आनन्द कराते हैं।

— इस प्रकार गुरुदेव के साथ आनन्द करते हुए सब यात्री दूसरे रत्नागिरि पर्वत पर आ पहुँचे। इस रत्नागिरि पर मुनिसुव्रत भगवान के केवलज्ञान कल्याणक का स्थान है। मुनिसुव्रत भगवान के गर्भ-जन्म-तप और ज्ञान ये चार कल्याणक इस राजगृही नगरी में हुए हैं। रत्नागिरि पर्वत के ऊपर एक छोटे से मन्दिर में उनकी प्रतिमा है तथा वीर प्रभु के पवित्र चरणों की स्थापना है। मन्दिर का प्रवेश द्वार बहुत छोटा है, इसलिए सबने एक के बाद एक अन्दर जाकर दर्शन किये, अर्घ्य चढ़ाया; गुरुदेव इत्यादि ने भी भावसहित रत्नागिरि पर रत्नमिश्रित अर्घ्य चढ़ाया। रत्नत्रयमार्ग के पथिक पूज्य गुरुदेव और उनके सेवक थोड़ी देर रत्नागिरि धाम में बैठे और यात्रा की आनन्दकारी चर्चा की। फिर बीसवें और चौबीसवें तीर्थंकर के जय-जयकारपूर्वक तीसरी पहाड़ी की ओर प्रस्थान किया।

रत्नागिरि पर विराजमान मुनिसुव्रतनाथ भगवान को नमस्कार हो!

रत्नागिरि तीर्थ की यात्रा करानेवाले कहान गुरुदेव को नमस्कार हो!

★ ★ ★

(3) उदयगिरि तीर्थधाम की यात्रा

माघ कृष्ण चौदह के दिन कहान गुरुदेव का यात्रासंघ राजगृही में तीर्थयात्रा करते-करते दूसरी पहाड़ी से उतरकर तीसरी पहाड़ी की ओर जा रहा है। यह उतराई जरा लम्बी है, तत्पश्चात् तीसरी पहाड़ी उदयगिरि आती है। एक पहाड़ से दूसरे पहाड़ में, और दूसरे से तीसरे पहाड़ में जाते हुए रास्ते में भक्ति तो चालू ही होती है। गुरुदेव के आनन्दकारी उद्‌गार झेलना और बहिनश्री-बहिन की भक्ति सुनने के लिये यात्री दौड़ा-दौड़ करते थे, परन्तु दौड़ते-दौड़ते भी भक्ति की ताल के साथ पैर के ताल मिलना नहीं चूकते थे। इस प्रकार लम्बा रास्ता भी भक्ति की तान में शीघ्र पूरा करके तीसरी पहाड़ी के निकट आ पहुँचे। जिस प्रकार क्षपकश्रेणी का काल तो छोटा है परन्तु पुरुषार्थ बहुत है; उसी प्रकार यह उदयगिरि पहाड़ी तो छोटी है परन्तु इसकी चढ़ाई बहुत कठिन है—परन्तु जिस प्रकार चैतन्यपरमात्मा को ध्येयरूप रखकर साधक जीव अन्तर्मुहूर्त में क्षपकश्रेणी चढ़ जाता है, उसी प्रकार भगवान को सामने ध्येयरूप रखकर यात्री अन्तर्मुहूर्त में ही ऊपर पहुँच गये। भगवान के प्रति उल्लास का बल भक्तों को ऊपर ले गया। 'जहाँ सच्चा उल्लास होता है, वहाँ मार्ग विकट नहीं लगता।' भगवान को ध्येयरूप रखकर और गुरुदेव को साथ में रखकर उदयगिरि पर आ पहुँचे। मार्ग में भले थकान लगे परन्तु ध्येय स्थान में पहुँचने पर फिर थकान दूर हो जाती है, उसी प्रकार उदयगिरि पर पहुँचकर जिननाथ के दर्शन करने से मार्ग की थकान दूर हो गयी। यहाँ महावीर भगवान, चन्द्रप्रभ भगवान, शान्तिनाथ भगवान तथा पार्श्वनाथ भगवान विराजते हैं; उनके दर्शन करके गुरुदेवसहित सबने अर्घ्य द्वारा पूजन की। वीतरागी दिगम्बर जैनधर्म के साक्षात् मूर्तिवन्त खड्‌गासन प्रतिमाओं के प्रति यात्रियों का ध्यान आकर्षित कर गुरुदेव भावपूर्वक कहते थे कि : **देखो, जैनमार्ग में मुनियों की दशा भी ऐसी ही होती है**—इस प्रकार गुरुदेव यात्रा करते-करते भगवन्तों का और मुनिवरों का स्वरूप भी दिखलाते जाते थे, इससे यात्रियों को बहुत प्रमोद आता था। अहा, गुरुदेव के साथ की महान यात्रा में यात्रीगण के हर्ष का पार नहीं था, दुनिया के

वातावरण से दूर-दूर कोई धर्मयुग में वर्त रहे हों—ऐसा सबको लगता था। इस प्रकार आनन्दपूर्वक राजगृही में दूसरे उदयगिरि पहाड़ की यात्रा पूर्ण हुई।

उदयगिरि तीर्थधाम की यात्रा करानेवाले गुरुदेव को नमस्कार हो!

★

उदयगिरि की यात्रा करके सब यात्री भक्ति करते-करते नीचे आये। इस पर्वत की तलहटी में विश्राम स्थान है। वहाँ दिगम्बर तथा श्वेताम्बर दोनों की ओर से यात्रियों को नाश्ता दिया जाता है। बहुत से यात्री यहाँ विश्राम लेने के लिये रुके और यात्रा की खुशहाली में आनन्द भरा उत्सव करते हों, वैसे सबने नाश्ता किया। इस प्रकार आनन्दपूर्वक तीन पहाड़ की यात्रा करके धर्मशाला में आये।

★ ★ ★

इस प्रकार माघ कृष्ण चौदह के दिन राजगृही नगरी में पूज्य गुरुदेव ने संघसहित दिव्यध्वनि के धाम विपुलाचल तीर्थ की यात्रा की, विपुलाचल पर वीर प्रभु के समवसरण के और दिव्यध्वनि के धाम को हृदय की गहरी ऊर्मियोंपूर्वक नजर से निहारा और दिव्यध्वनि छूटने के उस धन्य प्रसंग को याद करके भावभीनी अद्भुत भक्ति की। तत्पश्चात् अब नीचे पधारकर जिनमन्दिर में हजारों यात्रियों की सभा के बीच प्रवचन में श्रुतज्ञान का झरना बहा रहे हैं और राजगृही का भावभीना वर्णन करके वीर प्रभु के समय का साक्षात् वातावरण खड़ा कर रहे हैं। अहा, क्या यह अद्भुत वाणी! वीर प्रभु के धाम में गुरुदेव की यह वाणी सुनकर भक्तों को दिव्यध्वनि के श्रवण जैसा हर्ष होता है। अरे, राजगृही में अभी जिनमन्दिर के चौक में बैठे हैं? ....या ....तीर्थंकर भगवान के समवसरण में?—यह भी विस्मृत हो जाता है। प्रवचन में बहुत भाव से गुरुदेव कहते हैं कि : **यह राजगृही पवित्र तीर्थ है; तेईस-तेईस तीर्थंकरों के समवसरण यहाँ आये हैं। अनेक गणधर भगवन्त यहाँ विचरे हैं, भगवान की ॐकारध्वनि पहले-पहले यहीं खिरी है और बारह अंग यहीं रचे गये हैं। यहीं भगवान की वाणी झेलकर अनेक जीव सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्ररूप तीर्थ को प्राप्त हुए हैं।**

आत्मध्यान में अनुरक्त सन्तों के चरणों से स्पर्शित भूमि, वह तीर्थ है। आत्मा के

ज्ञान-आनन्द को प्राप्त जीव जिस भूमि में विचरे, उस भूमि को देखकर आत्मा के ज्ञान-आनन्द का स्मरण जागृत होता है कि अहो! आत्मा के अतीन्द्रिय ज्ञान और आनन्द को प्राप्त सर्वज्ञ और सन्त यहाँ इस भूमि में विचरे हैं, इसलिए यह भूमि भी तीर्थ है। भाव तीर्थ तो आत्मा के ज्ञान-ध्यानरूप परिणाम है और वे ज्ञान-ध्यानवाले सन्त जहाँ विचरे, उनके चरणों से जो भूमि स्पर्शित हुई, वह भूमि भी तीर्थ है। जिस काल में वे विचरे, वह काल भी मंगल है और उनका आत्मद्रव्य भी मंगल है। ऐसी तीर्थ भूमि को देखकर आत्मा के ज्ञान-आनन्द को लक्ष्य में लेकर उस ज्ञान-आनन्दस्वभाव की ओर जो जीव झुकता है, वह जीव स्वयं तीर्थरूप होकर भव से तिर जाता है।

तिरने के स्वभाववाले सन्त (सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्रधारक परमात्मा) जहाँ विचरे, वहाँ उन भाव तीर्थ का आरोप करके भूमि को भी तीर्थ कहा। अहो, आत्मा के ज्ञान-ध्यान में लीन सन्त जिस भूमि में विचरे, वह भूमि जगत में तीर्थ है, उन सन्तों के चरणों से जो धूल स्पर्शित हुई, वह धूल भी तीर्थ है। जिसे आत्मा के ज्ञान-ध्यान का प्रेम है, वह ज्ञान-ध्यान का स्मरण करके ऐसी भूमि का भी बहुमान करता है कि अहो! ज्ञान-ध्यान धारक आराधक जीव यहाँ विचरते थे।

वीर प्रभु की राजगृही में गुरुदेव का धर्म दरबार बहुत ही शोभता था; भारत के हजारों यात्री गुरुदेव की वाणी सुनकर और गुरुदेव के साथ यात्रा करके, समवसरण में आने जैसा ही हर्ष अनुभव कर रहे थे। प्रवचन के बाद पटना शहर और गया शहर के जैन समाज की ओर से गुरुदेव को अभिनन्दन पत्र अर्पण किया गया था। तत्पश्चात् सायंकाल राजगृही के दर्शनीय स्थलों का गुरुदेव इत्यादि ने अवलोकन किया; उसमें विशेषरूप से राजमहल के प्राचीन अवशेष, उससे लगते पुराने किले की दीवारें, बौद्धमन्दिर, जेल, आयुधशाला, पुराना कुआँ इत्यादि स्थान देखे। चीन के यात्री फाह्यन (ईस्वी सन् लगभग 1200) के विवरण अनुसार राजगृही को लगती लगभग आठ मील की घेरावाली दीवार थी, उसके अवशेष आज भी दृष्टिगोचर होते हैं। गरम पानी का कुण्ड यहाँ का एक आकर्षण है। बहुत से यात्री उसमें स्नान करके थकावट दूर करते थे।

रात्रि को जिनमन्दिर में अति आनन्द भरी भक्ति का प्रसंग बना। पंचशैलपुर में पाँच वेदी से शोभित जिनमन्दिर यात्रियों से भरचक था; गुरुदेव भी हर्षपूर्वक भक्ति में भाग ले रहे थे। अहा! उस भक्ति की क्या बात! ॐकारध्वनि के धाम में सन्तों का हृदय सहज

भक्ति से उल्लसित हो जाता था। मानो भगवान के समवसरण में बैठे हों... अभी ही भगवान की दिव्यवाणी सुनी हो... और फिर भक्ति करते हों—ऐसे उत्कट भाव से भक्ति कराते थे। पूज्य बहिनश्री-बहिन ने 'भगवान के दरबार का स्तवन बहुत हर्षोल्लास से गवाया था।'

आज मैं महावीरजी.... आया तेरे दरबार में,
साथ ही में भक्ति लेकर आया तेरे दरबार में...
अेक छोटी सी तमन्ना ले तेरे दरबार में...
वीर जिन आया है बंदा यह तेरे दरबार में... आज०

लाखों मुख से सुन चुका हूँ तूने लाखों की सुनी,
आज का अवसर है मेरा यह तेरे दरबार में... आज०
राज्य की नहि चाह मुझे चाह नहीं संसार की,
ध्यान-आसन की जगह दे दे तेरे दरबार में... आज०

तत्पश्चात् 'हे वीर! तुम्हारे द्वारे पर यह भक्त तुम्हारे आये हैं' इत्यादि स्तवन भी अद्भुत धुन से गवाकर गुरुदेव के साथ की यात्रा का हर्षोल्लास व्यक्त किया था। यात्रा के दौरान ऐसे विरल भक्ति प्रसंग निहारकर यात्रियों को ऐसा लगता था कि वाह! गुरुदेव जैसे सत्पुरुषों के साथ अपूर्व यात्रा की बलिहारी है। धन्य है सन्तों की अपूर्व दशा को! कुन्दकुन्दस्वामी ने सत्य ही कहा है कि साधक के हृदय में सिद्ध भगवन्तों की स्तुति उत्कीर्ण है। ज्ञान और वैराग्य की भाँति साधकों की भक्ति भी अलग प्रकार की होती है—उस भक्ति प्रसंग का दर्शन भी मार्ग की उपासना के प्रति परम उत्साह जगानेवाला था। भक्ति पूर्ण होने पर राजगृही के जिनमन्दिर में झूल रहा घण्टे का तोरण मंगल नाद से गाज उठा और जिनमन्दिर में चारों ओर जय-जयकार हो गया। इस प्रकार पहले दिन का यात्रा-भक्ति का कार्यक्रम बहुत हर्षोल्लास से पूर्ण हुआ। दूसरे दिन....

(5) वैभारगिरि तीर्थधाम की यात्रा

माघ कृष्ण अमावस्या : राजगृही तीर्थधाम के तीन पहाड़ों की यात्रा गत दिवस करके, अब बाकी रहे दो पहाड़ों की यात्रा करने के लिये आज गुरुदेव संघसहित पधारे। पहले पाँचवीं पहाड़ी की यात्रा करके फिर चौथी पहाड़ी की यात्रा की। पाँचवीं पहाड़ी का नाम है वैभारगिरि। इस रमणीय पहाड़ी का चढ़ाव भी सुगम है; जैसे गुरु के मार्गदर्शन द्वारा शास्त्र का रहस्य सुगम बन जाता है और शिष्यजन आनन्दित होते हैं; उसी प्रकार गुरु के मार्ग में वैभारगिरि का वैभव निहारते हुए यात्रीजन आनन्दित होते थे। यात्रियों को दुगुना आनन्द था—एक तो ऐसे महान तीर्थों की यात्रा, और फिर ऐसे महान गुरुदेव का साथ। अकेले-अकेले तीर्थों की यात्रा कर आवें, वह अलग वस्तु है और गुरुदेव जैसे सन्त-महात्मा के साथ विचरते-विचरते यात्रा करें, वह कोई अनोखी वस्तु है। गत दिवस की यात्रा और भक्ति के रणकार अभी यात्रियों के हृदय में गूँजते थे, इसलिए आज की यात्रा में गुरुदेव के साथ पहाड़ी चढ़ते हुए यात्रियों को ऐसा लगता था—मानो कि गुरुदेव फिर से भगवान के समवसरण में ले जा रहे हैं। यात्री हर्षपूर्वक गाते थे कि—

आनन्द मंगल आज हमारे... आनन्द मंगल आज जी...
गुरुदेव साथे यात्रा करतां आनन्दनो नहि पार जी....
तीर्थंकरदेवने भेटवा काजे गुरुजी पधारे जो....
राजगृहीना धाम नीरखतां सेवक हैया उल्लसे जो....

इस प्रकार भक्ति करते-करते ऊपर पहुँचे... मानो समवसरण में आये। अहा! उस समय का दृश्य! हजार से अधिक यात्रियों से भरा हुआ वैभार पर्वत छोटे से समवसरण जैसा शोभित होता था। चारों ओर का वातावरण प्रसन्न था; मन्दिर में आसपास यात्रियों का बड़ा दरबार भरा था, लाउडस्पीकर दुन्दुभी की तरह गर्जना करता था और दूर-दूर से यात्रियों को आकर्षित कर रहा था। जिनमन्दिर में एक शिला पर उत्कीर्ण चौबीस भगवन्त विराजमान हैं, तथा दूसरे अनेक जिनबिम्ब तथा चरण पादुका है। वहाँ दर्शन तथा अभिषेक करके बहुत भावपूर्वक चौबीस तीर्थंकरों का सामूहिक पूजन किया।

चौबीसों श्री जिनचन्द आनन्दकन्द सही
पद जजत हरत भवफंद पावत मोक्ष मही।

[ॐ ह्रीं श्री गुरुदेव के साथ यात्रामहोत्सवे राजगृही-वैभारगिरिस्थ श्री चोबीस जिनेन्द्रदेव चरणकमलपूजनार्थे महा अर्घ्यं निर्वपामीति... स्वाहा.]

पूजन के पश्चात् बहुत महान भक्ति हुई। मानो साक्षात् तीर्थंकर के समवसरण में आये हैं और भक्ति करते हैं, ऐसी अद्भुत उमंग से गुरुदेव गवाते थे कि—

आश धरीने अमे आवीया रे... अमने उतारो भवोदधि पार रे... जिनराज लगन लागी रे।
समवसरणे अमे आवीया रे... अमने उतारो भवोदधि पार रे... जिनराज लगन लागी रे।
प्रभुजी साथे प्रीत बांधी रे... पुण्य फल्या अपार रे... जिनराज लगन लागी रे।

पाँचवीं पहाड़ी पर भक्ति कराते-कराते गुरुदेव कहते हैं : **विपुलाचल पर वीर भगवान की वाणी खिरी; अभी तो वहाँ जगह थोड़ी है परन्तु भगवान का समवसरण तो इतने में सर्वत्र विस्तरित होगा। अहा! उस काल में यहाँ धर्म का प्रपात बहता था। इन्द्र, गौतम को लेकर आये, मानस्तम्भ देखकर उनका मान गल गया, मुनिपना लिया, मनःपर्ययज्ञान प्रगट हुआ और बारह अंग की रचना की - यह सब यहाँ बना था। अहा, उस काल और उस दशा की क्या बात! यह क्षेत्र देखते हुए मानो वह सब यहाँ नजरों में तैरता है।** —ऐसे-ऐसे भक्ति भरे उद्गारों सहित गुरुदेव भक्ति कराते थे। गुरुदेव का भक्ति का रंग देखकर यात्रियों को ऐसा होता था कि अहा! जीवन में देखा हुआ सब विस्मृत हो जाएगा परन्तु यह यात्रासंघ कभी भी विस्मृत नहीं होगा। जैसे हमने कभी नहीं अनुभव किया हुआ आत्मतत्त्व गुरुदेव दर्शा रहे हैं, उसी प्रकार जीवन में कभी नहीं देखे हुए भक्ति प्रसंग गुरुदेव के साथ की यात्रा में देखने को मिलते हैं और भक्तों को हर्ष होता है कि वाह, यात्रा सफल हुई! जीवन सफल हुआ।

— ऐसा नहीं कि अकेले यात्री ही ऐसा हर्ष अनुभव करते थे, यात्रा के हर्ष में गुरुदेव भी यात्रियों के साथ ही थे। कोई कहे कि 'यह कहाँ से खबर पड़ी?' तो—चालू भक्ति में गुरुदेव के श्रीमुख से बारम्बार जो उद्गार निकलते, वे उनके अन्तरंग हर्ष और भक्ति को व्यक्त करते थे। एक स्तवन के पश्चात् दूसरा स्तवन भी गुरुदेव ने ऐसी ही महा भक्ति से गवाया—

प्रभुनी वाणी जोर रसाल मनडुं सांभळवा तलसे...
'सजल-जलद' जिम गाजतो जाणुं वरसे अमृतधार... मनडुं०
वाणी सीमंधरजिणंदनी छे मुक्तिनी दातार... मनडुं०
वाणी श्री वीरजिणंदनी छे मुक्तिनी दातार... मनडुं०
वाणी श्री सन्मतिनाथनी छे मुक्तिनी दातार... मनडुं०
साक्षात सुणवा अे दिव्यध्वनिने मन मारुं तलसाय... मनडुं०
फरी सुणवा अे दिव्यध्वनिने मन मारुं तलसाय... मनडुं०

बीच में 'सजल-जलध' शब्द आने पर गुरुदेव कहते हैं : **देखो, भगवान की वाणी मेघ की भाँति गाजती थी; मेघ मात्र गाजे ऐसा नहीं परन्तु 'सजल' अर्थात् कि पानी से भरपूर। इसी प्रकार भगवान की वाणी खिरे, वह 'सजल' है। अर्थात् वाणी खिरे और कोई जीव धर्म न प्राप्त करे - ऐसा नहीं होता; वाणी खिरे और खाली जाए, ऐसा नहीं होता। वाणी ही गौतम आने के पश्चात् खिरी थी। गणधर जैसे झेलनेवाले के बिना वाणी नहीं खिरती। अहा! वह वाणी खिरी, इसलिए तो मानो अमृत की धारा वर्षी।**—गुरुदेव के ऐसे उद्गार सुनकर बहिनश्री-बहिन ने बहुत हर्षपूर्वक जयनाद से वैभारगिरि को गजा दिया... और हजारों यात्रियों ने उसमें साथ दिया।

वैभारगिरि पर भावभीने हृदय से दिव्यध्वनि की भक्ति करानेवाले गुरुदेव की जय हो।

राजगृही में गुरुदेव के अन्तर की भावभीनी भक्ति की जय हो।

तत्पश्चात् गुरुदेव की आज्ञानुसार पूज्य बहिनश्री-बहिन ने बहुत हर्षोल्लास से निम्न मंगल बधाई गवायी—

आज तो बधाई व्हाला वीरप्रभु दरबारजी....
वीर प्रभु दरबार व्हाला वीर प्रभु दरबारजी... आज तो बधाई०
केवलज्ञान गुणाकर प्रगट्या, प्रगट्या चैतन्यदेवजी,
ॐकार ध्वनिना धोध छूट्या उछल्या समुद्र अगाधजी... आज तो बधाई०
इन्द्रोअे मळि महोत्सव कीनो, घर घर मंगलाचारजी,
गौतमस्वामी अहीं पधार्या छूट्या ध्वनिना धोधजी... आज तो बधाई०
भव्यो बहु आतुर हता ने मल्या अमृतपानजी,

विपुलाचलमां समोसरण ने आश्चर्य भरते थाय जी... आज तो बधाई०
राजगृहीमां आनन्दमंगल ठाठ तणो नहि पारजी,
सभाभूमिमां मुनि अरजिका सुरपति नरपतिवृंदजी... आज तो बधाई०
लयलीन बन्या सौ प्रभुध्वनिमां अंतरआतम उछळयाजी,
श्री तीर्थंकर वैभव केरा गुणो केम गवायजी... आज तो बधाई०
कहानगुरुना परमप्रभावे जिनेश्वर नीहाल्याजी,
कहानगुरुना संग आजे यात्रा अपूर्व थायजी... आज तो बधाई०

अहा! हजार-हजार यात्रियों के साथ ऐसी मंगल बधाई सुनकर पूरा पर्वत मानो आनन्दित होता था। ऐसे तीर्थधामों में गुरुदेव जैसे पावन सन्त के चरणसान्निध्य में बैठकर अद्‌भुत भक्ति-पूजा सहित यात्रा करते हुए बहुत आनन्द होता था।

भक्ति-पूजन के बाद, इस पाँचवीं पहाड़ी पर भूगर्भ में से निकले हुए दो हजार वर्ष से भी अधिक प्राचीन जिनमन्दिर के अवशेष तथा अनेक दिगम्बर जिनप्रतिमाओं का गुरुदेवसहित सबने अवलोकन किया। दो हजार वर्ष पुराने जिनवैभव को देखने पर गुरुदेव के मुख में से अनेक बार उद्‌गार निकलते थे कि जमीन में से निकली हुई यह मूर्तियाँ भी दिगम्बर जैनधर्म की साक्षी देती है। अनेक यात्रियों को गुरुदेव प्राचीन दिगम्बर प्रतिमाएँ बतलाकर कहते थे कि देखो, जगह-जगह ऐसी हजारों वर्ष पुरानी प्रतिमाएँ जमीन में से निकली है, वह बताती है कि सच्चा धर्म कौन सा है! ग्वालियर के किले में तो कैसी विशाल-विशाल प्रतिमाएँ थीं! यहाँ गुरुदेव ने यह पुरानी प्रतिमाएँ बताकर भक्तों को पूछा कि तुम यात्रा करने आये, तब यह देखा था? वे कहने लगे : नहीं साहेब, हम आये तब यह नहीं था; यह सब अभी निकला है। यात्रा में आपके प्रताप से बहुत नया-नया देखने को मिलता है। अहा! जैसे कदम-कदम पर जमीन में से निधान निकले, वैसे यहाँ गुरुदेव के साथ यात्रा में जगह-जगह जिनवैभव के दर्शन होते हैं; जहाँ-तहाँ नहीं विचारे हुए अनेक महान जिनबिम्बों के दर्शन प्राप्त हो जाते हैं, इसलिए यात्री अपने को महाभाग्यवन्त मानते हैं। इस प्रकार बहुत उल्लास से यात्रा सफल होती आगे चली जाती है। यात्रियों को ऐसा लगता है कि अहा! शिखरजी जाते हुए यहाँ बीच-बीच के तीर्थों में भी ऐसा आनन्द होता है तो मूल सम्मेदशिखरजी तीर्थधाम की यात्रा तो कैसी अद्‌भुत

आनन्दकारी होगी! सम्मेदशिखरजी को देखने पर और उस भूमि में विचरते गुरुदेव कैसे खिल उठेंगे! अहा, सन्तों का ध्येय तो परम आनन्दमय है और उस ध्येय की ओर जाता हुआ मार्ग भी वास्तव में आनन्दमय है। जैसे-जैसे शिखरजी के निकट पहुँचते हैं, वैसे-वैसे पथिकजनों के अन्तर में आनन्द का ज्वार होता जाता है। जैसे साधक जीव रत्नत्रय तीर्थ में जैसे-जैसे आगे बढ़ते जाते हैं, वैसे-वैसे उनका आनन्द भी बढ़ता जाता है, उसी प्रकार यहाँ गुरुदेव के साथ तीर्थयात्रा में जैसे-जैसे आगे बढ़ते जाते हैं, वैसे-वैसे यात्रा का आनन्द भी बढ़ता जाता है। यात्रा के आनन्द में यात्री ऐसे लवलीन बने हैं कि घर में-परिवार में-सोनगढ़ में या सौराष्ट्र देश में क्या हो रहा है, वह भी याद नहीं आता।

— इस प्रकार वैभारगिरि पर बहुत ही आनन्द से यात्रा करके तथा वैभारगिरि का वैभव निहारकर अब बाकी रही श्रमणगिरि पहाड़ी की ओर जाने के लिये सब भक्ति की धुन गाते-गाते उतरने लगे। 'जय महावीरा... जय महावीरा...' पाये-पाये जी वीर के दर्शन... और आज मारे सोना समोरे सूरज ऊगियो... इन सब गायनों के उपरान्त वाहवा.... जी वाहवा... की धुन द्वारा यात्री विशेष उल्लास व्यक्त करते थे। पूज्य बहिनश्री-बहिन गवाते थे और यात्री झेलते थे—

गुरुदेव साथ यात्रा कीधी, वाहवा... जी.... वाहवा!
राजगिरिना धाम देख्या, वाहवा... जी.... वाहवा!
वीरप्रभु दरबार देख्या, वाहवा... जी.... वाहवा!
दिव्यध्वनिना धाम देख्या, वाहवा... जी.... वाहवा!
आ दिव्यध्वनिना धोध छूटे, वाहवा... जी.... वाहवा!
मुनिसुव्रतधाम देख्या, वाहवा... जी.... वाहवा!
समोसरण दरबार देख्या, वाहवा... जी.... वाहवा!
गुरुदेवे भक्ति करावी, वाहवा... जी.... वाहवा!
अद्‌भुत तीर्थो गुरुजी बतावे, वाहवा... जी.... वाहवा!
आनन्दकारी यात्रा करावे, वाहवा... जी.... वाहवा!

वैभारगिरि तीर्थधाम की यात्रा करानेवाले गुरुदेव को नमस्कार हो।

★ ★ ★

राजगृही में पूज्य कानजीस्वामी के साथ एक हजार यात्रियों का संघ पाँचवीं टूंक की यात्रा पूर्ण करके चौथी टूंक की ओर जा रहा है। वैभारगिरि से श्रमणगिरि (सोनागिरि) की ओर जाते हुए बीच में लगभग दो मील सीधे रास्ते चलने का आता है। जाते-जाते मार्ग में एक जगह यात्रियों की भीड़ थी, वहाँ जाकर देखा तो मुनियों की गुफा! दो गुफाएँ देखकर आनन्द हुआ। अहा, क्या यह रमणीय गुफाएँ! शताब्दियों पुरानी इस विशाल और शान्त गुफा में प्रवेश करते ही ऐसा लगता है कि यहाँ पूर्व में अनेक सन्त-मुनि बसते होंगे और आत्मध्यान करते होंगे। मुनिवरों की उपशान्त परिणति मानो अभी भी इस गुफा में विराजती हो, ऐसी शान्त गुफा है। गुफा की चारों दीवारों पर तीर्थंकर भगवन्तों इत्यादि के जैन चित्र उत्कीर्ण हैं। गुफा के अन्दर प्रवेश द्वार के सन्मुख एक स्तम्भ पर चार भगवन्त (ऋषभ-अजित-सम्भव-अभिनन्दन) खड्गासन से स्थित हैं, वह दृश्य सुन्दर है; दूर से देखने पर मानो चार मुनि गुफा में ध्यानस्थ खड़े हों! ऐसा लगता है। प्रवेश द्वार के दोनों ओर भी अनेक चित्र (जिनबिम्ब इत्यादि) उत्कीर्ण हैं। अहो, इन गुफाओं में अनेक सन्त मुनिवरों ने आत्मध्यान किया होगा, अनेक धर्मात्माओं ने परम वैराग्य भावना भायी होगी और निर्विकल्परूप से सिद्ध भगवन्तों के साथ बैठ-बैठकर आत्मा का अतीन्द्रिय स्वाद चखा होगा - इस प्रकार गुफा में मुनिवर बहुत याद आते थे और ऐसा होता था कि अभी इस गुफा में एकाध मुनि साक्षात् बैठे हों तो कैसा अच्छा! गुरुदेव भी गुफाएँ देखकर प्रसन्न होते थे; गुफा में प्रवेश करके कहा कि—**मुनि ऐसे स्थान में रहते हैं और चैतन्य में तल्लीन होते हैं। अहो, सन्तों की ध्यान भूमि आज भी हितमार्ग की प्रेरणा देती है।** एक गुफा के बगल में दूसरी भी एक गुफा खण्डित जैसी है, उसकी दीवारों पर भी चौबीस भगवन्तों की आकृति उत्कीर्ण है—जिसमें से कितनी ही घिस गयी है और कितनी ही स्पष्ट दिखायी देती है। गुफाओं का अवलोकन करके मुनिवरों के धाम समान श्रमणगिरि के पास शीघ्रता से आ पहुँचे।

★ ★ ★

(4) श्रमणगिरि (सोनागिरि) तीर्थ की यात्रा

चौथी पहाड़ी का नाम श्रमणगिरि है (उसे सुवर्णगिरि अथवा सोनागिरि भी कहते हैं)। यह पहाड़ी कुछ बड़ी है। हजार एक वर्ष पहले यहाँ आये हुए चीनी यात्री लिखते हैं कि उस समय यहाँ लगभग सात सौ श्रमण-मुनि बसते थे और ज्ञानाध्ययन करते थे। अहा! वह काल कैसा होगा कि जब मुनिवरों का इतना समूह इस भरतभूमि को पावन करता होगा! अनेक मुनिवरों के चरणों से पावन हुई इस श्रमणगिरि की भूमि भी फिर से ऐसे धन्य काल के लिये उत्सुक हो रही है। उन मुनिवरों के स्मरण से गुरुदेव को भी बहुत भावनाएँ जागती थीं और प्रमोद से भक्तिपूर्वक मुनिवरों की चर्चा करते थे। ऊपर भगवान के दर्शन करके अर्घ्य चढ़ाने के बाद गुरुदेव ने मुनिवरों की भक्ति गवायी थी।

मारा परम दिगम्बर मुनिवर आव्या... सब मिल दरशन कर लो...
हाँ... सब मिल दरशन कर लो...
बार बार आना मुशकिल है... भावभक्ति उर धर लो...
हाँ... भावभक्ति उर धर लो...

भक्ति के समय गुरुदेव की धुन देखकर सब यात्री बहुत प्रसन्न हुए थे। पहाड़ के ऊपर से उतरते-उतरते भी गुरुदेव धीमे-धीमे मुनिवरों की भक्ति बोलते थे और यात्रा की हर्ष भरी चर्चा द्वारा यात्रियों को आनन्द कराते थे। इस प्रकार आनन्दपूर्वक पंच पहाड़ी तीर्थधाम की यात्रा पूर्ण हुई।

श्रमणगिरि पर विचरे हुए श्रमण भगवन्तों को नमस्कार हो।

श्रमणगिरि तीर्थधाम की यात्रा करानेवाले गुरुदेव को नमस्कार हो।

यात्रा करके आनन्दपूर्वक निम्न गीत गाते-गाते यात्री धर्मशाला की ओर चल दिये।

आश धरीने अमे सुवर्णपुरीथी आव्या यात्रा ने काज रे... धन्य दिन आजे ऊग्यो रे...
सद्गुरुदेवना परम प्रतापथी यात्रा अपूर्व थई आज रे... धन्य दिन आजे ऊग्यो रे...
अपूर्व करुणाधारी अमोने यात्रा करावी रुडी आज रे... धन्य दिन आजे ऊग्यो रे...
राजगृहीमां वीर प्रभु विचर्या आजे विचरे छे गुरु-संत रे... धन्य दिन आजे ऊग्यो रे...
गणधर-मुनियो अहीं विचरता आजे विचरे छे साधकसंत रे... धन्य दिन आजे ऊग्यो रे...

साधकसंतना चरणकमलथी भूमि आजे हरखाय रे... धन्य दिन आजे ऊग्यो रे...
धन्य श्री वीरप्रभु धन्य श्री गौतम धन्य श्री कहानगुरुदेव रे... धन्य दिन आजे ऊग्यो रे...
धन्य समोसरण धन्य राजगृही धन्य सभा नरनार रे... धन्य दिन आजे ऊग्यो रे...
तीरथयात्रा संतोना साथमां जीवन सफल थाय रे... धन्य दिन आजे ऊग्यो रे...

★ ★ ★

पंच पहाड़ी से मुक्ति प्राप्त सिद्ध भगवन्तों को नमस्कार हो!

राजगृही के पंच पहाड़ी तीर्थधाम में विचरे हुए तीर्थंकरों-सन्तों को नमस्कार हो!

वीरनाथ की दिव्यध्वनि जिनवाणी माता हमें बोधि समाधि प्रदान करो!

देव-गुरु शास्त्र के पावन धाम की यात्रा करानेवाले गुरुदेव को नमस्कार हो!

★ ★ ★

राजगृही तीर्थधाम की यात्रा करके सब धर्मशाला में आये, आज की यात्रा आनन्दकारी हुई। यात्रा के बाद गुरुदेव को जीमने का लाभ श्री नेमीचन्दजी पाटनी को प्राप्त हुआ था। लगातार दो दिन की यात्रा के कारण आज यात्री कुछ थके हुए थे, परन्तु थकान उतारने के लिये सरस साधन जैसा गर्म पानी का कुण्ड भी यही होने से बहुत से यात्री उसमें स्नान करके तरोताजा हो जाते थे। सायंकाल गुरुदेव ने राजगृही नगरी का अवलोकन किया। श्रेणिक राजा के महल का स्थान, राजगृही को घेरता हुआ श्रेणिक राजा ने बँधाया हुआ गढ़ इत्यादि स्थल देखे। कोई यात्री गर्म पानी का कुण्ड देखने गये। कुण्ड देखकर उसमें नहाने का भी मन हो जाता। रात्रि में जिनमन्दिर में उत्तम भक्ति हुई; गुरुदेव के साथ पवित्र तीर्थधाम की अद्‌भुत यात्रा हुई, उसकी प्रसन्नता में यात्री भक्ति द्वारा व्यक्त करते थे। 'महावीरा तेरी धुन में आनन्द आ रहा है।' और 'तिहारे ध्यान की मूरत अजब छवि को दिखाती है।'—इत्यादि स्तवनों के पश्चात् नीचे के स्तवन में यात्रा का उल्लास मिलाकर पूज्य बहिनश्री-बहिन ने अद्‌भुत भक्ति करायी थी—

मारा वीरप्रभुजी सुंदर मूरत मारे मन भाई जी...
मारा वीरप्रभु का सुंदर समोसरण मारे मन भाया जी...

मारा वीरप्रभु की सुंदर दिव्यध्वनि मारे मन भाई जी...
गौतमस्वामीने तुमको ध्याया मोक्ष का मार्ग दिखायाजी... मारे।
मारा मुनिसुव्रतजी की सुंदर मूरत मारे मन भाई जी...
मारा त्रेवीस प्रभु की सुंदर मूरत मारे मन भाई जी...
मारा त्रेवीस प्रभु का सुंदर समोसरन मारे मन भाई जी...
मारो त्रेवीस प्रभु की सुंदर दिव्यध्वनि मारे मन भाई जी...

अहा, यात्रा और भक्ति के समय वर्तमान के सन्त, भूतकाल के महान सन्तों को भी वर्तमान में खड़ा कर देते थे। वास्तव में वर्तमान सन्त द्वारा ही भूतकाल के महान सन्त पहिचाने जाते हैं। अन्तिम भक्ति के समय तो पूरे वातावरण में लीला लहर व्याप्त हो गयी थी।

आज लीला लहेर... हूई प्रभु महेर, आज जिनेन्द्र वृंदो देखीया जी रे... आज०
मेंतो जिनवरना मुख़डा भाळीया, में तो भवकेरा दुःखडा टाळीआ।
आज आनंद मंगल वधामणां जी रे... आज लीला लहेर०
मुने पंचमकाले जिन भेटीआ मारा आतममां सुख उलटीआ,
प्रभु मोंधेरा दर्शन देखीया जी रे... आज लीला लहेर०
आज गुरुवर यात्रा पधारीया जी रे... आज लीला लहेर०
आज जिनेन्द्र दरबार देखीया जी रे... आज लीला लहेर०
आज दिव्य देहधारी प्रभु देखीया जी रे... आज लीला लहेर०
अहो, दिव्य जिनेन्द्र देखीया जी रे... आज लीला लहेर०
अनन्त चतुष्टयवन्त ए परमेश्वरा, दिव्यध्वनिना नाद बरसावता,
आज दिव्य अवतारी प्रभु देखीया जी रे... आज लीला लहेर०
धन्य धन्य मंगल दिन आजना मारा गुरुवर यात्रा पधारीया,
गुरुराजे जिनेन्द्र ओळखावीया जी रे... आज लीला लहेर०
अहो, साक्षात् समोसरण देखीया जी रे... आज लीला लहेर०
आज जिनेन्द्र महिमा नीरखता, मारा गुरुवर हैडामां हरखता,
जाणे चौथा आरा फरी आवीया जी रे... आज लीला लहेर०
मारे चौथा आरा रे फरी आवीया, मारे कहान जेवा रे गुरु पाकीया,

जेणे जगतमां अमृत बरसावीया जी रे... आज लीला लहेर०
आज लीला लहेर.... हुई प्रभु महरे
आजे जिनेन्द्रवृन्दो देखीया जी रे....

माघ कृष्ण अमावस्या के दिन राजगृही में हुई इस भक्ति की झनझनाहट आज भी हृदय में आनन्द उत्पन्न करती है। दूसरे दिन—फाल्गुन शुक्ल एकम के सवेरे जिनमन्दिर में समूह पूजन हुई थी और यात्रा की प्रसन्नता में विशाल रथयात्रा निकली थी। तब ऐसा लगता था कि इस राजगृही में जब चेलना रानी रथयात्रा निकलवाती होंगी, तब कैसा भव्य उसका दिखाव होगा! आज की रथयात्रा में गुरुदेव भी साथ में थे। रथयात्रा के बाद 108 कलशों से जिनेन्द्र अभिषेक हुआ। इस प्रसंग पर पटना शहर और गया शहर के जैन समाज की ओर से गुरुदेव को सन्मान-पत्र समर्पण किया गया। विशाल संघसहित गुरुदेव के पदार्पण से मगधदेश की यह प्राचीन राजधानी गौरवान्वित हो रही थी।

इस प्रकार राजगृही नगरी में लगभग तीन दिन तक बहुत-बहुत भावपूर्वक गुरुदेव के साथ यात्रा और भक्ति करके, उसके मधुर स्मरण हृदय में भरकर दोपहर को संघ ने पावापुरी की ओर प्रस्थान किया।

कुण्डलपुर तथा नालन्दा

राजगृही से पावापुरी जाते हुए बीच में कुण्डलपुर तथा नालन्दा आता है। कुण्डलपुर अर्थात् वीर प्रभु का जन्मधाम।* अभी कुण्डलपुर में खास आबादी नहीं है। एकाध मील दूर निर्जन स्थान में महावीर प्रभु का दिगम्बर जैन मन्दिर है, वहाँ दर्शन करके वीर प्रभु को अर्घ्य चढ़ाने के बाद गुरुदेव कहते हैं—**आज बहुत समय है, इसलिए बराबर भक्ति जमाओ।** लगभग एक घण्टे रुककर गुरुदेव ने वीर प्रभु की भक्ति करायी थी, तथा बहिनश्री-बहिन ने वीर प्रभु के जन्म कल्याणक की बधाई की धुन गवायी थी।'कुण्डलपुरी के मझार... छाया हर्ष अपार...' इस स्तवन के समय कुण्डलपुरी में यात्रियों को वास्तव में अपार हर्ष छा रहा था। भक्ति के पश्चात् वीर प्रभु के जय-जयकार करते हुए सबने वहाँ से प्रस्थान किया और नालन्दा आये।

कुण्डलपुरी से एक मील की दूरी पर नालन्दा है, वहाँ खुदाई करते हुए बौद्धों की बहुत विशाल प्राचीन विद्यापीठ के खण्डहर निकले हैं। इस विद्यापीठ में श्री अकलंक-निकलंक गुप्त वेष में पढ़ते थे और पकड़े जाने पर उन्हें कोठरी में बन्द कर दिया था, वहाँ से छिटककर जाते हुए निकलंक का बलिदान दिया गया, पश्चात् तो अकलंकस्वामी ने वाद-विवाद में बौद्ध को पराजित कर जैनधर्म का जोरदार प्रभाव फैलाया; और मुनिदशा अंगीकार करके असाधारण प्रतिभासम्पन्न न्याय साहित्य की रचना की।—यह सब इतिहास नालन्दा विद्यापीठ के अवलोकन के समय ताजा होता था। और यात्री लगनवश बन जाते और हृदय जैनधर्म के प्रति भक्ति से भर जाता था। अकलंक-निकलंक की कोठरी इत्यादि

---

* **अभी तक कुण्डलपुरी के जिनमन्दिर के स्थान में वीरप्रभु का जन्मधाम गिनने में आता था, इसलिए इसी लक्ष वहाँ भक्ति आदि की गयी थी। बाकी अभी तो बिहार में 'विसालियो' यही महावीर प्रभु का जन्मधाम वैशाली होना निर्णीत हुआ है। महावीर तीर्थंकर के प्रति यहाँ के अजैन भी बहुमान रखते हैं। वहाँ भगवान महावीर का जन्मोत्सव मनाने के लिये लाखों की संख्या में जनता एकत्रित होती है; बिहार सरकार भी उसमें रस लेती है। वैशाली के इस स्थान में दो एकड़ जमीन को पवित्र मानकर वहाँ के जमीनदार उसमें वंश परम्परा से हल नहीं चलाते। ईस्वी सन् 1952 में भारत के राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्रप्रसादजी के सुहस्त से यहाँ 'वैशाली विद्यापीठ' का शिलान्यास हुआ है और एक शिलापट्ट पर महावीर तीर्थंकर की स्मृति उत्कीर्ण की गयी है।**

स्थानों का अवलोकन करके गुरुदेव सबको बताते थे। विद्यापीठ में एक प्राचीन कुआँ है जिसका पानी अकलंकदेव ने पीया होगा। यहाँ बुद्धमूर्ति के अवशेष जगह-जगह दृष्टिगोचर होते हैं। विद्यापीठ का अवलोकन करके सामने के भाग में म्यूजियम (संग्रहस्थान है), उसमें वीर प्रभु इस भूमि में अनेक बार विचरे थे, उनके प्राचीन उल्लेख तथा प्राचीन जिन प्रतिमाओं इत्यादि का शीघ्रता से अवलोकन करके वहाँ से पावापुरी की ओर प्रस्थान किया और सायं काल लगभग चार बजे पावापुरी आ पहुँचे।

पावापुरी सिद्धिधाम

फाल्गुन शुक्ल एकम् : जैसे आराधक सन्तों की परिणति मोक्ष को भेंटने के लिये दौड़ती है, उसी प्रकार यात्रासंघ की मोटरें वीरनाथ के मोक्षधाम को भेंटने दौड़ रही हैं। वीर प्रभु इस बिहार प्रदेश में बहुत विचरें हैं। भगवान के विहार के कारण जिसका नाम 'बिहार' पड़ा है, ऐसी इस पावन भूमि में गुरुदेव के साथ यात्रा विहार करते हुए मन आनन्दित होता था। मोटरें तो दौड़ती जाती थीं परन्तु यात्रियों की नजर तो बिहार भूमि को निरखने में ही स्थिर हो गयी थी। वह पवित्र भूमि हृदय की गहराई में से-गम्भीर वैराग्यवाले आर्यिका माता की भाँति-वीर प्रभु के विहार की मंगल गाथा मानो विरह के वेदनपूर्वक सुना रही थी और उसे सुनते हुए यात्रियों का हृदय क्षण भर तो ढाई हजार वर्ष को भेद कर वीरनाथ की स्मृति की गहराई में उतर जाता था।

थोड़ी देर हुई, वहाँ पावापुरी दिखायी दी... सरोवर के मध्य शोभित जलमन्दिर भी दिखायी दिया। अहा, यह तो अपने भगवान का मुक्तिधाम! और यह रहे भगवान! दूर से भी महावीर भगवान की मुक्तिनगरी देखने से यात्रियों को आनन्द हुआ; जैसे साधक को सिद्धि के दर्शन से आनन्द होता है, उसी प्रकार। जिसके मध्य में निर्वाणधाम है, ऐसे पद्म सरोवर को लगभग प्रदक्षिणा देती-देती मोटरें पावापुरी में प्रवेश करती थीं। तब ऐसा लगता था कि अपने भगवान इस स्थल पर ऊपर सिद्ध भगवन्तों के देश में मुक्तिपुरी में विराज रहे हैं, यह वही मुक्तिपुरी है। हम भगवान के देश में आ गये हैं और संसार को भूल गये हैं। भगवान के देश में किसे आनन्द नहीं होगा? आज तो मुक्तिधाम में मुक्तिमार्ग प्रदर्शक गुरुदेव भी साथ ही हैं, इसलिए बहुत आनन्द होता है। पावापुरी का दिखाव अद्भुत है, उसमें भी पूज्य गुरुदेव के पधारने से चारों ओर का वातावरण आनन्द-मंगल से भरा-भरा बन गया है। मंगल वाजिंत्र नाद गाज रहे हैं। हजारों यात्रियों से हर्ष भरा वातावरण हृदय को प्रसन्न करता है। बहुत वर्षों से सुनी हुई और चित्त में देखी हुई वीरनाथ की निर्वाणभूमि को साक्षात् निहारते हुए और उस भूमि में विचरते हुए गुरुदेव भी अनोखा आह्लाद अनुभव कर रहे हैं।

यहाँ लगभग दो मील के घेरे में रमणीय पद्म सरोवर है, उसके मध्य में वीरनाथ के मोक्षस्थान में मार्बल का उज्ज्वल मन्दिर अनेक स्वर्ण कलशों से शोभ रहा है और यात्रियों के चित्त को आकर्षित कर रहा है। पद्म सरोवर के किनारे विशाल दिगम्बर जैन धर्मशाला में संघ का आवास था। इस धर्मशाला के मध्य में ही विशाल जिनमन्दिर है। गुरुदेव अनेक यात्रियों सहित जिनमन्दिर में दर्शन करने पधारे। सबसे पहले एक प्रतिमाजी को देखते ही आनन्द से हृदय पुलकित हो गया। गुरुदेव तो एकटक देखते ही रहे, मानो महावीर भगवान साक्षात् खड़े हों, ऐसा अद्भुत दीदार है, वाह! इन भगवान को देखने पर कैसा अपार हर्ष होता है! मुद्रा तो कोई दिव्य... प्रशान्त... और प्रसन्नता से झरती है। स्वरूपमग्न स्थिर नयन देखने से, मानो कि अभी ही मोक्ष में जाने की तैयारी करके अयोगीरूप से खड़े हों, ऐसी ध्यानमूर्ति वीर वीतरागी भगवान के दर्शन होते हैं, उनके सन्मुख देखने पर 'भगवान यह यहाँ ही खड़े' ऐसा ही लगता है। लटकते लम्बे हाथ मानो कि भक्तों के सिर पर मुक्ति के मंगल आशीर्वाद बरसा रहे हैं। धन्य भगवान... आपका यह दिव्यदर्शन! हे नाथ! गुरुदेव के प्रताप से आपके दर्शन से मेरी मुक्ति निकट आयी; मेरे चक्षु सफल हुए, मेरा जीवन धन्य हुआ।

इस प्रकार बहुत-बहुत भाव से गुरुदेव के साथ महावीर भगवान के दर्शन किये। आसपास दूसरी वेदियों में श्री चन्द्रप्रभ इत्यादि भगवन्त विराजते हैं। ऊपर के भाग में भी अनेक वेदियाँ हैं, उनमें एक जगह तीन गोख हैं, बीच के गोख में श्री महावीरादि भगवन्त विराजते हैं, उसके पास महावीर प्रभु के छोटे से चरण पादुका हैं, भगवान के दायें बाजू चौबीस तीर्थंकर भगवन्तों के चरण पादुका (उन-उन भगवान के वर्ण अनुसार वर्ण के हैं) उसका दृश्य बहुत सरस है। उसकी प्रशस्ति में **पद्मसरोवस्थ निर्वाणभूमौ स्थापितम्...** इत्यादि लिखा है। यह चरण पादुका पहले पद्म सरोवर के बीच में जल मन्दिर में स्थापित थे परन्तु अमुक कारण से उन्हें धर्मशाला के मन्दिर में विराजमान करना पड़ा है। भगवान के दूसरी ओर श्री गौतमस्वामी-गणधर प्रभु के बहुत ही सुन्दर चरण पादुका हैं। उन तीर्थंकरों के और गणधरदेव के चरणकमल देखकर यात्रियों का अन्तर आनन्दित हुआ और बारम्बार भक्तिपूर्वक उन चरणों का स्पर्शन किया।

रात्रि में महावीर प्रभु के दरबार में अद्भुत भक्ति हुई; लगभग हजार यात्रियों से

महावीर प्रभु का दरबार शोभता था। गुरुदेव को यात्रा का रंग और था। भगवान की वास्तविक माया लगी थी। इसलिए भक्ति में भी आपश्री हृदय के भाव खोलकर गवाते थे।

त्रिशलाना जायानी लागी मने माया...
महावीरना मीठां संभारणां...
वीर प्रभु साथे में तो बांधी छे प्रीतडी,
दीलमां वसी गई मूरति अलबेलडी,
धरुं संयम केरा चीर... मीठां संभारणां....

बहुत-बहुत भाव से गुरुदेव ने भक्ति करायी और पश्चात् बहिनश्री-बहिन को भक्ति बोलने को कहा। यात्रा महोत्सव में मानो भगवान को साक्षात् बुलाते हों-ऐसी उमंग से बहिनश्री-बहिन ने भक्ति शुरु की।

व्हाला वीरजी तुं आव मारा मनोमंदिरे...
ज्योति भक्तिनी जगाव मारा मनोमंदिरे...
दिव्य ज्ञान प्रगटाव मारा मनोमंदिरे...
तारा सुगुणो वसाव मारा मनोमंदिरे...
तारा शासन ने शोभावे मारा कहानगुरुजी देव,
व्हाला वीरजी तुं आव तारुं शासन जोवाने...

तदुपरान्त दूसरे भी अनेक स्तवनों द्वारा अद्भुत भक्ति हुई थी। भक्ति के बाद अब आगामी कल गुरुदेव के साथ जलमन्दिर निर्वाणधाम की यात्रा करने के लिये यात्री आतुर हैं; जैसे साधक सिद्धि को लालायित है, वैसे यात्री सिद्धिधाम की यात्रा के लिये लालायित हैं।

पावापुरी सिद्धिधाम की यात्रा

फाल्गुन शुक्ल दूज : सवेरे मंगल दर्शन करके, वीर प्रभु के सिद्धिधाम की यात्रा के लिये एक हजार लगभग यात्रियों के साथ गुरुदेव ने जल मन्दिर की ओर प्रस्थान किया। जयगान करते हुए यात्रियों की हारमाला इतनी लम्बी थी कि जब एक छोर जल मन्दिर में पहुँचा तब दूसरा छोर अभी धर्मशाला में था। दरवाजे के पास आने पर नजदीक में जल मन्दिर देखकर चित्त उपशान्त होता है। सुन्दर जल से भरे हुए और अनेक कमलों से शोभित विशाल पद्म सरोवर के मध्य रमणीय जलमन्दिर अपनी निराली छटा से शोभित हो रहा है, सरोवर में खिले हुए कमल मानो मुख उघाड़कर कह रहे हों कि भगवान तो संसार से अलिप्त थे और भगवान के संग से हम भी अलिप्त हो गये। ये कमलपुष्प पत्तेरूप हाथ चौड़ा करके मानों कि भगवान के पास ले जाने को अपने को कहते हों—ऐसा दृश्य है। अलिप्त स्वभाववाले कमल देखकर भगवान के आत्मा के अलिप्तपने का स्मरण होता है। अहा, भगवान संसार से अलिप्त होकर मुक्ति यहाँ से ही प्राप्त हुए। अरे! भगवान के चरण से स्पर्शित यहाँ की धूल भी अलिप्त स्वभाववाली होकर कमलपत्र रूप से उग निकली है। समयसार की 14वीं गाथा में भी अलिप्त कमलपत्र के दृष्टान्त से आत्मा का शुद्धस्वभाव समझाया है, वह इन कमलपत्रों को देखकर स्मरण होता था। कमलपत्र पर पड़े हुए पानी के किसी-किसी बिन्दु असली स्फटिक की कणी जैसे जगमगाते थे। कमल से व्याप्त यह सरोवर बारह महीने पानी से भरचक रहता है। बीच के जल मन्दिर में जाने के लिये एक दिशा में सुशोभित पुल है। मोक्षधाम के आसपास की अद्‌भुत शोभा निहारते-निहारते और भगवान की दिव्यता की महिमा करते-करते, पुल के ऊपर होकर जलमन्दिर आये। मन्दिर को घेरे हुए विशाल चौक है, चारों कोनों में चार देहरियाँ हैं, सरोवर के बीच में मन्दिर का प्राकृतिक दृश्य देखकर 'यहाँ ही भगवान विराजे हैं' ऐसा भास होता है। अन्दर मन्दिर में बीच में छोटा से जिनमन्दिर है, नीचे नमकर अन्दर जाया जाता है, वहाँ तीन देहरियाँ (गोख) है, बीच की देहरी में श्री महावीर प्रभु के पवित्र चरण पादुका हैं; अगल-बगल की दोनों देहरियों में गौतमस्वामी तथा सुधर्मस्वामी के चरण पादुका हैं। वहाँ जाकर दर्शन करके अर्घ्य चढ़ाया। पश्चात् प्रभुजी के चरण सन्मुख

अतिशय भीड़भाड़ में जैसे-तैसे करके सब बैठ गये। शुरुआत में गुरुदेव ने कहा : **देखो, भगवान यहाँ से मोक्ष पधारे... यहाँ से ऊपर सिद्धालय में भगवान विराजते हैं**—ऐसा कहकर हाथ ऊँचा करके सिद्धालय बताया। और पश्चात् भगवान की भक्ति शुरु की—

आजे वीरप्रभुजी निर्वाण पदने पामीया रे...
अहींथी वीरप्रभुजी निर्वाण पदने पामीया रे...
श्री गौतम गणधरजी पाम्या केवलज्ञान...
.... सुरनर आवो आवो निर्वाण महोत्सव ऊज्ववा रे...
चरम तीर्थंकर वीरप्रभु, चोबीसमा जिनराय;
भारतना वीतरागजी, विरह पडया दुःखदाय।

भगवान के विरह की बात आने पर गुरुदेव गद्‌गद् हो गये थे और वह गद्‌गद्ता भरी हुई भक्ति भक्तों के हृदय को भी विचलित करती थी। चारों ओर गम्भीरता छा गयी थी। अहा, उस समय के वातावरण में तो बस वैराग्य! वैराग्य! वैराग्य!! गुरुदेव की भावभीनी भक्ति सुनकर सबके हृदय के तार झनझना उठते थे। वैराग्य भीने भक्तिरस से गुरुदेव के नयन भी भींग रहे थे; बहिनश्री-बहिन के सामने देखो तो वे भी वैराग्यरस में सराबोर! और हजारों यात्रियों की ओर देखने पर प्रत्येक यात्री भक्ति में तल्लीन!

भक्ति के समय ऐसे स्तब्ध वातावरण में मानो कि भक्त गुरुदेव को पूछ रहे हैं कि हे गुरुदेव! भगवान यहाँ से किस प्रकार-किस मार्ग से मुक्ति पधारे? वह हमें बताओ। तब गुरुदेव भक्ति द्वारा बताते हैं कि—

अहीं पावापुरमां समश्रेणी प्रभु आदरी रे
मुक्तिमां विराज्या वीरप्रभु भगवंत...
...आंही भरतक्षेत्रे तीर्थंकर विरहा पडया रे॥

भगवान जहाँ से मुक्ति प्राप्त हुए, उसी धाम में बैठे-बैठे यह भक्ति चल रही है। वीर प्रभु के पद्‌चिह्नों पर मुक्तिमार्ग में चलते-चलते गुरुदेव भक्तों को बता रहे हैं कि भगवान ने तो तीस वर्ष की कुमार अवस्था में तप आदरा और उग्र आत्मध्यान कर-करके केवलज्ञान प्रगट किया, पश्चात् अनेक भव्य जीवों को उगार कर, यहाँ से समश्रेणी माँडकर मोक्षधाम पहुँचाया।

त्रीस वर्षे तप आदर्या, लीधां केवलज्ञान;
अगणित भव्य उगारीने पाम्या पद निर्वाण।

भगवान के समक्ष बालक की भाँति भक्ति करते-करते हाथ जोड़कर सन्त कहते हैं हे नाथ!

अम बालकनी आपे लीधी नहिं संभाल,
अमने केवलना विरहामां मूकी चालीया रे...

अन्त में बेधड़करूप से आत्मसाक्षी से कहते हैं कि हे नाथ! आप मुक्ति भले प्राप्त हुए; हम भी आपके बालक हैं और आपके शासन को शोभाते-शोभाते हम भी आपके पास चले आ रहे हैं।

ऐसे भावपूर्वक गुरुदेव ने भावभीनी भक्ति करायी, ऐसे तीर्थधाम में गुरुदेव की ऐसी उत्तम भक्ति देखकर सभी यात्रियों को बहुत आनन्द हुआ। वीतराग परमात्मा के प्रति धर्मात्माओं के आत्मप्रदेश से जो सहज भक्ति निरन्तर उल्लसित हो रही है वह कभी ऐसे यात्रा इत्यादि के विशेष प्रसंगों में व्यक्त होती है और मुमुक्षु को धर्मात्मा की अन्तर परिणति स्पष्ट देखने का सद्भाग्य प्राप्त कराती है, जिसे देखकर आनन्द की ऊर्मियाँ जागृत होती है और चैतन्य की आराधना के प्रति सुमधुर तरंगें उठती हैं! अहा! पावापुरी में भक्ति प्रसंग पर मुमुक्षु हृदय में उल्लसित लहरें अभी भी शमन नहीं हुई है।

गुरुदेव की भक्ति के बाद पूज्य बहिनश्री-बहिन ने भी महा उल्लास से भक्ति करायी।

निर्वाणमहोत्सव थया आंही, ...वीरप्रभु सिद्ध थया छे।
वीरप्रभुजी सिद्ध थया छे, गौतम केवलज्ञान... वीर प्रभु सिद्ध थया छे।
समश्रेणी प्रभु पावापुरीमां, मुक्तिमां विराज्या नाथ... वीर प्रभु सिद्ध थया छे।
पुनित पगलां काल हता भरतमां, आजे थया चिद्‌बिंब... वीर प्रभु सिद्ध थया छे।
काले वीरजी अरिहंत हता, आजे सिद्ध भगवान... वीर प्रभु सिद्ध थया छे।
भरतक्षेत्रे पावापुरीमां स्मरण वीरना थाय... वीर प्रभु सिद्ध थया छे।
हे वीर! हे वीर! भरतक्षेत्रमां सेवक करे तुने साद... वीर प्रभु सिद्ध थया छे।
सिद्धमंदिरे नाथ विराज्या, शासनमां जाग्या कोई संत... वीर प्रभु सिद्ध थया छे।

आतम आधार अे अमसेवकना, शिवपुरनो अे साथ... वीर प्रभु सिद्ध थया छे।
वीरप्रभुजी सिद्ध थया छे, गौतम केवलज्ञान... वीर प्रभु सिद्ध थया छे।

अहा! गौतम गणधर के केवलज्ञान की भी यही भूमि है। विपुलाचल पर महावीर प्रभु का तीर्थंकर पद और गौतमस्वामी का गणधर पद, वहाँ से आगे आने पर इस पावापुरी धाम में महावीर प्रभु का सिद्धपद और गौतमप्रभु का यहाँ अरहन्त पद—इस प्रकार तीर्थंकर-गणधर की सरस जोड़ी के पावन धामों के दर्शन से बहुत आह्लाद होता था... और हृदय नम पड़ता था कि—

श्रमणो, जिनो, तीर्थंकरो अे रीत सेवी मार्गने,
सिद्धि वर्या, नमुं तेमने; निर्वाणना आ धामने।

जैसे तीर्थंकरदेव के समवसरण में मुक्ति के लिये जीवों का झुण्ड उमड़ता है उसी प्रकार यहाँ गुरुदेव के साथ भक्ति के लिये जीवों का झुण्ड उमड़ पड़ा है और गुरुदेव बारम्बार गवा रहे हैं कि—

वीरप्रभुजी मोक्ष पधार्या गौतम केवलज्ञान रे... वीरजीनुं शासन झूले रे।
पावापुरी सिद्धक्षेत्र प्रभुजी समश्रेणी कहेवाय रे... वीरजीनुं शासन झूले रे॥

गुरुदेव भक्तिरूपी डोरी द्वारा भगवान के शासन को झुला रहे हों ऐसा इस भक्ति का वातावरण था और सभी यात्री भक्ति के रंग में डोल उठे थे। उस समय ऐसा लगता था कि अहा, सन्त धर्मात्माओं के साथ तीर्थ की यात्रा करने का और कैसी अद्‌भुत भक्ति करने का कोई विरल प्रसंग में ही बनता है। अपना धन्य भाग्य है कि इस काल में उत्कृष्ट धर्मप्रसंग अपने को देखने मिलते हैं... और गुरु प्रताप से आत्मलाभ का शुभ अवसर आया है।

भक्ति के पश्चात् गुरुदेव ने अन्दर जिनमन्दिर में जाकर वीर प्रभु के चरणों का अभिषेक किया। बाहर आकर कहा—यह यात्रा ही जिन्दगी में पहली-पहली होती है, इसलिए अपने को तो सब नया ही है। वास्तव में गुरुदेव के साथ की यात्रा में सब नवीनता और अपूर्वता ही लगती थी। गुरुदेव, भगवान के चरणों का भाव भीना हृदय से अभिषेक करते थे और भावभीना हृदय से दर्शन करते थे, यह दृश्य अपूर्व था, यह दृश्य

देखकर भक्तों का हृदय आनन्द से प्रफुल्लित हो जाता था। भक्ति-अभिषेक के बाद सामूहिक पूजन हुई। पुराणों में बड़े-बड़े पूजन महोत्सवों का वर्णन आता है—ऐसा ही एक यह पूजन प्रसंग था। सिद्धक्षेत्र में लगभग हजार यात्री गुरुदेव के साथ अर्घ्यं... स्वाहा कर रहे थे और गुरुदेव के साथ जिनेन्द्रदेव की पूजन का आनन्द ले रहे थे। वीरनाथ की स्तुति में समन्तभद्रस्वामी ने कहा हुआ वचन उस समय याद आता था कि हे जिनेन्द्र! तेरे चरण की यथार्थ सेवा ज्ञानी ही करते हैं।

वर पद्मवन भर पद्मसरवर बहिर पावाग्राम ही।
शिवधाम सन्मति स्वामी पायो जजों जो सुखदा मही॥

यह पूजन करते-करते फल पूजा आयी; गुरुदेव के हाथ में पूजन के लिये श्रीफल देने लगे। थोड़ी देर विचार करते-करते अन्त में गुरुदेव ने फल पूजन करने के लिये श्रीफल हाथ में लिया... जीवन में पहली ही बार श्रीफल लेकर हँसते-हँसते गुरुदेव ने मोक्षफल प्राप्तये फलं... स्वाहा किया और एकसाथ हजार जितने यात्रियों के 'स्वा...हा' का प्रतिछन्द ठेठ मोक्षधाम तक पहुँचा।

★ ★ ★

— इस प्रकार पावापुरी सिद्धिधाम में अति उल्लास भरे भक्ति पूजन सहित यात्रा हुई। चौबीस भगवन्तों में से तेईस भगवन्तों का निर्वाणधाम तो पर्वतों के ऊपर है, जबकि यह भगवान का निर्वाणधाम पानी के मध्य में है। भगवान के समय तो सपाट भूमि थी परन्तु पश्चात् तालाब बन गया। इस सम्बन्ध में ऐसा कहा जाता है कि भगवान मोक्ष पधारने के बाद उस पावनभूमि की पवित्र रज असंख्य भावुक भक्तों ने इतने अधिक भावपूर्वक ली कि वहाँ बड़ा गड्ढा होने से तालाब बन गया। यात्रा के बाद गुरुदेव ने चारों ओर ऊपर-नीचे सिद्धिधाम का अवलोकन किया और यात्रियों को भी बताया : **देखो, यहाँ से सीधे समश्रेणी में ऊपर लोकाग्र में भगवान विराजते हैं, उनके स्मरण के लिये यह यात्रा है। भगवान को अयोगी गुणस्थान यहाँ वर्तता था; कैसा ?—कि**

मन वचन काया ने कर्मनी वर्गणा, छूटे जहां सकल पुद्‌गल संबंध जो;
अेवुं अयोगी गुणस्थानक 'अहीं' वर्ततुं, महाभाग्य सुखदायक पूर्ण अबंध जो।

एक परमाणु मात्रनी मले न स्पर्शता, पूर्ण कलंक रहित अडोल स्वरूप जो;
शुद्ध निरंजन चैतन्यमूर्ति अनन्यमय, अगुरुलघु अमूर्त सहज पदरूप जो...

और पश्चात् —

पूर्व प्रयोगादि कारणना योगथी, ऊर्ध्वगमन सिद्धालय प्राप्त सुस्थित जो;
सादिअनंत अनंत समाधि सुखमां, अनंत दर्शन ज्ञान अनंत सहित जो...

देह से छूटकर भगवान सिद्धपद प्राप्त हुए और उसी क्षण में ऊर्ध्वगमन करके सिद्धालय में - अनन्त सिद्ध भगवन्तों के मेले में पधारे; वहाँ सादि अनन्त काल तक आत्मा के अनन्त ज्ञान-दर्शन और सुखसहित विराजमान रहेंगे। धन्य वह दशा! ऐसी दशा भगवान को यहाँ प्रगट हुई। ऐसे परमध्येय को याद करने के लिये और उसकी भावना ताजा करने के लिये यह तीर्थयात्रा होती है।

गुरुदेव के भक्ति भरे उद्गार सुनकर हजार यात्रियों ने उत्साहपूर्वक सैकड़ों जय-जयकार द्वारा हर्ष व्यक्त किया; तत्पश्चात् पूज्य बहिनश्री-बहिन परम भक्ति से जलमन्दिर सिद्धिधाम को प्रदक्षिणा देने लगी। पलभर में तो सैकड़ों यात्री प्रदक्षिणा में जुड़ गये और उमंग भरी धुन गाते-गाते तीन के बदले छह प्रदक्षिणा दी गयी।

त्रिशलामाताना जाया हो देव! वर्द्धमान पाया....
वर्द्धमान पाया प्रभु वर्द्धमान पाया, भक्तिनी धून मचाया हो देव...
पावापुरीमां शिवधाम पाम्या, सिद्धबिंब तें पूरण पाया... हो वीर...
पावापुरीमां मोक्षधाम पाम्या, चिद्बिंब तें पूरण पाया... हो वीर...

अहा, मानो ऊपर से सिद्ध भगवान को भक्ति के बल से हृदय में उतारते थे; जगत को भूलकर एक सिद्धपद की ही लगन में लवलीनता थी। प्रदक्षिणा के बाद घुटनभर होकर भावभीने चित्त से दोनों बहिनों ने सिर लगाकर-ऊपर हाथ जोड़कर सिद्ध भगवान को नमस्कार किया... मानो कि नमस्कार मन्त्र के बल से सिद्ध भगवन्तों को आत्मा में पधराया। अहा, ज्ञानियों के ये अतीन्द्रिय आनन्दसहित के भक्ति के भावों का चितार करने के लिये जगत में कोई शब्द उपलब्ध नहीं है। देह भान भूलकर भगवान के प्रति लयलीनता से होती यह भक्ति देखकर हृदय ऐसा उल्लसित होता था कि धन्य यह भक्ति!

कब ऐसे अपूर्व भावसहित भगवान की भक्ति करेंगे... और कब इनके जैसा हमारा जीवन बनेगा! अरे! ऐसी भक्ति नजरों से देखने को प्राप्त हो, यह भी कोई महान भाग्य है।

हृदय में भरपूर भक्ति भरकर जलमन्दिर से धर्मशाला की ओर जाते-जाते बीच में पुल के ऊपर भी 'हे वीर! तुम्हारे द्वारे पर एक दर्श भिखारी आया है' यह भक्ति की अद्भुत धुन जमी थी, यात्री एकतान हो गये थे; नजरों से निहारनेवालों के हृदय में यह प्रसंग उत्कीर्ण हो गया है। उसका यह स्मरण लिखते समय भी आँखें भक्तिरस से भींग रही है—तो उस प्रसंग की क्या बात! नजरों से नहीं देखनेवालों के लिये तो वह एक कल्पना का ही विषय है—जैसे बिन अनुभवी के लिये सिद्ध भगवन्तों का सुख वह मात्र कल्पना का ही विषय है, उसी प्रकार।

अन्त में भक्ति की पूर्णाहुति करते हुए यात्रियों ने जय-जयकार से पावापुरी गजा दी... और ठेठ सिद्धलोक तक सुनायी दे, ऐसे गगनभेदी नाद से सब यात्री बोले—

महावीर सिद्ध भगवान की... जय...

वास्तव में सिद्धालय में बैठे-बैठे वीर भगवान भी यह जयनाद सुन रहे थे।

पावापुरी से सिद्धि प्राप्त श्री महावीर भगवान को नमस्कार हो

पावापुरी सिद्धिधाम की यात्रा करानेवाले श्री कहान गुरुदेव को नमस्कार हो

सिद्धिधाम की उल्लास भरी यात्रा करके यात्री धर्मशाला की ओर जा रहे थे, परन्तु हृदय में जहाँ यात्रा का अपार हर्ष उभराता हो, वहाँ यात्री गूँगे कैसे रह सकते हैं? इसलिए निम्न धुन द्वारा सब अपना हर्ष व्यक्त करते थे।

पावापुरी धाम देख्या... वाहवा जी वाहवा! मुक्तिनां आ धाम देख्या... वाहवा जी वाहवा!
गुरुदेवनी साथे देख्या... वाहवा जी वाहवा! गुरुदेवे भक्ति करी... वाहवा जी वाहवा!
गुरुदेवे पूजन कीधां... वाहवा जी वाहवा! प्रभु चरणने भेट्या आज... वाहवा जी वाहवा!
अद्भुत आनंद आव्यो आज... वाहवा जी वाहवा! अद्भुत भक्ति देखी आज... वाहवा जी वाहवा!
संतो साथे यात्रा थई... वाहवा जी वाहवा! अनंतकालनी भूख भांगी... वाहवा जी वाहवा!
अद्भुत भावो उल्लस्या आज... वाहवा जी वाहवा! फरी फरीने यात्रा करावो.... वाहवा जी वाहवा!

यात्रा के बाद धर्मशाला में आकर गुरुदेव के निकट सब अपना प्रमोद व्यक्त कर रहे थे। एक हजार यात्रियों के साथ की तीर्थयात्रा का यह एक महान ऐतिहासिक प्रसंग है। आज की यात्रा से गुरुदेव भी बहुत प्रमोदित थे। यात्रा की धुन में यद्यपि सोनगढ़ विस्मृत हो गया था परन्तु यात्रा के बाद जब खबर पड़ी कि आज तो फाल्गुन शुक्ल दूज... सोनगढ़ में सीमन्धर भगवान की प्रतिष्ठा का महामंगल दिवस!! तब गुरुदेव प्रमोद से कहते हैं कि **वाह! कैसा सुमेल! अपने को याद रह जाएगा कि फाल्गुन शुक्ल दूज को पावापुरी में थे और अभिषेक किया था। सीमन्धर भगवान की प्रतिष्ठा के दिन महावीर प्रभु के मोक्षधाम की यात्रा हुई।**

— इस प्रकार हर्षपूर्वक विध-विध तीर्थों की यात्रा करते-करते... और उसके मधुर स्मरण हृदय में भरते-भरते सम्मेदशिखर की ओर जा रहे हैं। ध्येय के मुकाम में पहुँचे तब के आनन्द की तो क्या बात! परन्तु उस ध्येय स्थान में पहुँचने के मार्ग की मुसाफिरी भी कैसी मजेदार है!! जैसे ध्येयरूप सिद्धपद तो परम उत्तम है और उसका मार्ग भी महा आनन्ददायक है। ध्येय के मार्ग की मुसाफिरी में बीच में आनेवाली कठिनाईयाँ पथिक को रोक तो नहीं सकतीं परन्तु उल्टे उसे ध्येय के प्रति पहुँचने के उत्साह में उत्तेजित करती है, चाहे जैसी कठिनाईयों को उल्लंघकर उत्साह-उत्साह से ध्येय को हासिल करने के लिये वह मार्ग में आगे बढ़ता है। गुरुदेव के साथ तीर्थयात्रा में आगे बढ़ते-बढ़ते यात्रियों को ऐसा लगता है कि अहा, मार्ग के तीर्थों में भी जहाँ ऐसा महा आनन्द होता है, तो साक्षात् सम्मेदशिखरजी तीर्थधाम में कैसा आनन्द होगा! मुमुक्षु जैसे मोक्ष के लिये लालायित हैं, वैसे यात्री मोक्षधाम ऐसे सम्मेदशिखरजी तीर्थ के प्रति लालायित हो रहे हैं : कब सम्मेदशिखरजी पहुँचें... और गुरुदेव के साथ उस महान तीर्थ की यात्रा करके पावन होवें।

दोपहर को पूज्य गुरुदेव के साथ यात्री समवसरण मन्दिर के दर्शन को गये। पावापुरी में जलमन्दिर दरवाजे के सामने वर्धमान तीर्थंकर की अन्तिम देशना का स्थान है, वहाँ भी तीन पीठिका सहित एक मन्दिर है, उसे समवसरण मन्दिर कहा जाता है। आसपास में विल्व फल के वृक्ष इत्यादि रम्य दृश्यों से मन्दिर शोभित हो रहा है और उसके मध्य में श्री वीर प्रभु के बहुत प्राचीन (दो हजार वर्ष से भी अधिक प्राचीन) चरण पादुका है। इस प्राचीन और विशाल चरण पादुका के भाववाही दृश्य देखकर समवसरण

का दीदार नजर के समक्ष खड़ा होता है। अहा, धनतेरस को अन्तिम-अन्तिम बार भगवान ने जब ॐकार नाद द्वारा चैतन्य का सन्देश सुनाया होगा और गौतम गणधर जैसे श्रोताजनों ने उसे झेला होगा, वह दृश्य कैसा होगा! गुरुदेव के साथ इस पावन धाम को निहारते हुए, हृदयोर्मियाँ 2483 वर्षों के कालपट को भेद कर ठेठ वीर प्रभु के पास पहुँच जाती थी। वीर प्रभु के चरणों में मस्तक नवाकर बारम्बार भावपूर्वक सब चरणस्पर्श करते थे। गुरुदेव इत्यादि के साथ समवसरण की प्रदक्षिणा करते हुए आनन्द होता था। प्रदक्षिणा के समय पूज्य बहिनश्री-बहिन समवसरण की भक्ति गाती थीं।

दोपहर को धर्मशाला में गुरुदेव का अपूर्व प्रवचन हुआ। वीर प्रभु के मोक्षधाम में गुरुदेव ने मोक्ष का सन्देश सुनाया। 'महावीर भगवान ऐसा कहते थे' ऐसा कह-कहकर गुरुदेव महावीर प्रभु को तादृश करके उनका मार्ग प्रकाशित करते थे और साथ-साथ में यात्रा का भाववाही उल्लेख करके वीरनाथ के प्रति परमभक्ति को साथ ही मिलाते थे। वीर प्रभु के धाम में वीरनाथ का सन्देश सुनते हुए सबको प्रसन्नता हुई। प्रवचन के पश्चात् वीर प्रभु के धाम में यात्री हरते-फिरते कल्लोल करते थे। उद्यान जैसी पावापुरी में पद्मसरोवर के किनारे संध्या का वातावरण बहुत रम्य था। उस पद्मसरोवर के किनारे बैठे-बैठे यह यात्रा के संस्मरण लिखे जाते थे। पूर्व के समय में राजाओं ने तालाब के किनारे पड़ाव डाला हो और वहाँ सहज मुनिराज के आहारदान का प्रसंग बन जाता... उसका (वज्रजंघ-श्रीमती इत्यादि) अद्भुत रोमांचकारी वर्णन पुराणों में आता है, वह यहाँ तालाब के तीर पर याद आता था और ऐसी भावनाएँ जागृत होती थी।

सन्ध्या तो गयी और उसका साम्राज्य लेने के लिये रात्रि आ पहुँची परन्तु जहाँ भगवान विराजते हों वहाँ रात्रि का साम्राज्य कहाँ से होगा? अनेक दीपमाला के प्रकाश से जगमगाता जलमन्दिर रात्रि के साम्राज्य को दूर कर डालता था। सरोवर के जल में इन दीपकों के प्रतिबिम्ब पवन की लहरों से झूल रहे थे और उससे वह सरोवर ऐसा लगता था कि मानो आँखें उघाड़ बन्द कर-करके वीरनाथ के वैभव को निहारने तरस रहा हो! दीपमाला के शृंगार से जलमन्दिर बहुत शोभित होता है, उसमें भी दीपावली के उत्सव प्रसंग में तो सरोवर के बीच प्रकाश से जलहलता मन्दिर मानों की अपनी सब शोभा एकत्रित करके भगवान की मुक्त दशा को अभिनन्दन कर रहा हो!—ऐसा शोभित हो

उठता है। ऐसा सुशोभित जलमन्दिर दीपकों के प्रकाश द्वारा दूर-दूर से यात्रियों को आकर्षित कर रहा था।

रात्रि में गुरुदेव के साथ जलमन्दिर में भक्ति करने गये। चारों ओर रोशनी के प्रतिबिम्ब के कारण सरोवर के पानी में से भी प्रकाश की किरणें दृष्टिगोचर होती थी और पानी में रोशनी दिखायी दे, वह ऐसी लगती थी कि मानो सरोवर हजार-हजार आँखें खोलकर भगवान की मुक्ति को निहार रहा हो। इस मंगलकारी वातावरण में आत्मा बहुत आनन्दित होता था। अहो, मानो मुक्ति का यहाँ स्वयंवर रचा हो, महावीर प्रभु मुक्ति को वरने की तैयारी में हैं और गौतम गणधर धीर-गम्भीररूप से आत्मध्यान में अधिक और अधिक एकाकार होते-होते वीर प्रभु की सर्वज्ञता का उत्तराधिकार लेने की तैयारी कर रहे हैं—ऐसा सब चितार यहाँ खड़ा होता था। प्रभु का मोक्षकल्याणक भी वास्तव में कैसा मंगलकारी है, वह यहाँ ख्याल में आता था। मोक्ष होने पर यद्यपि यहाँ के जीवों को भगवान का विरह होता है, तथापि मोक्ष जाते-जाते अन्त तक भी भगवान हजारों-लाखों जीवों को आत्मजागृति कराते जाते हैं : अरे जीवो! आत्मा का अन्तिम ध्येय जो सिद्धदशा, संसार के सर्व बन्धन से रहित परम इष्ट उत्कृष्ट पद, वही प्राप्त करनेयोग्य है—ऐसा दर्शाते-दर्शाते भगवान मुक्ति में चले जाते हैं... और भगवान का यह मुक्तिगमन नजरों से निहारकर अनेक भव्य जीव भी उस मुक्तिमार्ग में लग जाते हैं। 'हमें ऐसे मुक्ति महोत्सव का धाम गुरुदेव के साथ देखने को मिला!'—ऐसे यात्रियों को अपार उल्लास होता है और मोक्षगामी पुरुषों के पवित्र पदचिह्नों पर मोक्षमार्ग में जाने की भावना जागृत होती है, आत्मा अन्तर से उसके लिये उछलता है। वास्तव में गुरुदेव के साथ इस सिद्धिधाम में आकर सिद्ध भगवन्तों के साथ प्रीत बाँधी है। ऐसी प्रीत बाँधी है कि मोक्षधाम में मुक्ति का कोलकरार किया... भगवान! आप हमें छोड़कर भले मोक्ष में चले गये, परन्तु आपके पास मोक्ष में आने का मार्ग आप हमें दिखा गये हैं, इसी मार्ग से हम भी आपके पास चले आ रहे हैं।

जलमन्दिर को भूलकर हम ठेठ सिद्ध भगवान के पास पहुँच गये! अब इस ओर जलमन्दिर में रात्रि को वीरनाथ की भक्ति चल रही है। जैसे भगवान के समवसरण में मुक्ति के लिये जीवों के झुण्ड उमड़ते थे, वैसे गुरुदेव के साथ यात्रा में भक्ति के लिये जीवों के झुण्ड उमड़ते हैं; क्षण पहले जहाँ चिड़िया भी नहीं फिरकती हो, वहाँ गुरुदेव के पधारते ही ऐसी भीड़ जमती है कि खड़े रहने को भी जगह मुश्किल से मिलती है।

जलमन्दिर में भरचक भीड़ और उमंग भरे वातावरण के बीच फाल्गुन शुक्ल दूज की रात्रि में गुरुदेव ने भावभीनी भक्ति करायी—

प्रभु आशधरीने अमे आवीयारे अमने उतारो भवोदधि पार रे... जिनराज लगन लागी रे।
प्रभुजी साथे प्रीत बांधी रे व्हाला पुण्य फळद अपार रे... जिनराज लगन लागी रे।
मनमंदिरे वेला आवजो रे आप साथ किधो छे खरो स्नेह रे... जिनराज लगन लागी रे।
सहकार आगे शी मागणी रे जिनजी मोंधे काळे मल्या आज रे... जिनराज लगन लागी रे।
पाका वोळावा मने भेटिआ रे जिनभक्तना सिध्यां काज रे... जिनराज लगन लागी रे॥

गायन गुजराती भाषा होने से बीच-बीच में गुरुदेव उसका भावार्थ भी हिन्दी लोगों को समझाते जाते थे। 'सहकार आगे...' आने पर गुरुदेव ने प्रसन्नतापूर्वक कहा कि **सहकार अर्थात् आम! हे भगवान! आप तो आम्बा (आम का वृक्ष) जैसे हो। आपके पास वह माँगना पड़े ? जैसे आम्र (वृक्ष) के पास आम माँगना नहीं पड़ता, उसका स्वभाव ही ऐसा है कि वह स्वयं ही सहज आम देता है और आम पकने पर वह आम्र वृक्ष ऐसा नीचे नम जाता है कि छोटे-बड़े बच्चे भी आम ले सकें; इसी प्रकार हे नाथ! हम तो आपके बच्चे हैं और आप आम के वृक्ष जैसे हो। हमको आम दो ऐसा माँगना नहीं पड़ता, किन्तु आपकी सच्ची भक्ति से मोक्ष तो हो ही जाता है।** इस प्रकार भगवान के समक्ष अपने को बालक जैसा वर्णन कर गुरुदेव भक्ति करते, तब यात्री भी गुरुदेव के समक्ष छोटे बालक जैसे बनकर हर्षित होते थे। इस प्रकार सन्तजनों के अन्तर में जैसे निश्चय-व्यवहाररूप (निर्विकल्प-सविकल्प) द्विधा भक्ति वर्तती है, उसी प्रकार यहाँ भी गद्य-पद्यमय द्विधा भक्ति चलती थी। 'प्रभुजी साथे प्रीत बाँधी रे...' यह पद आने पर गुरुदेव ने गद्य में कहा कि **हे नाथ! हे वीतरागी चैतन्य परमात्मा! हमने तो आपके साथ प्रीति बाँधी है, राग की और संसार की प्रीति तोड़कर हमने तो आपकी ही प्रीति बाँधी है। अब राग को तोड़कर, आपके जैसे होकर आपके पास आयेंगे ही।**

इस प्रकार मोक्षमार्ग के प्रति उल्लासमान करे, ऐसे गुरुदेव के उद्‌गारों से यात्रियों को यात्रा का वास्तविक आनन्द मिलता था। वास्तव में तीर्थयात्रा का उद्देश्य भी यही है कि मोक्षमार्गी सन्तों का स्मरण और परम बहुमान जागृत हो और अपने को भी वैसे मोक्षमार्ग का उत्साह जागृत हो। ज्ञानी सन्त के साथ यात्रा में यह उद्देश्य सहजता से सफल होता था।

गुरुदेव की भावभीनी भक्ति के बाद पूज्य बहिनश्री-बहिन ने भी 'महावीर-

अष्टक' इत्यादि स्तवन गवाये थे—जिसमें ऐसी भावना थी कि हे महावीरस्वामी! हमें साक्षात् दर्शन दो। अन्त में, निम्न स्तवनों द्वारा भगवान को लाखों-करोड़ों प्रणाम करके भक्ति पूर्ण हुई।

महावीर दया के सागर तुमको लाखों प्रणाम... तुमको क्रोडो प्रणाम...
पावापुरी के वासी प्रभु को लाखों प्रणाम... प्रभु को क्रोडो प्रणाम....
तुम दर्शन की भारी प्यासा, सदा रहे मिलन की आशा,
तेरा तो सिद्धालय वासा, पावपुरतें शिवपद पाया,
संतहृदय विराजित तुमको लाखों प्रणाम... तुमको क्रोडो प्रणाम...
गुरु-हृदय विराजित तुमको लाखों प्रणाम... तुमको क्रोडो प्रणाम....

— इस प्रकार जलमन्दिर में भावभीनी भक्ति करके और बारम्बार आने की भावना साथ में लेकर सब धर्मशाला में आये। यात्रा के आनन्द की चर्चा करते-करते सोये हुए यात्री रात्रि को नींद में भी यात्रा के ही मधुर दृश्य निहारते थे।

दूसरे दिन, फाल्गुन शुक्ल तीज के सवेरे दर्शन-पूजन के बाद यात्रा की खुशहाली में पावापुरी में भव्य रथयात्रा निकली। रथयात्रा धर्मशाला से शुरु होकर पद्मसरोवर के किनारे-किनारे घूमती हुई जलमन्दिर में आयी; वहाँ जिनेन्द्र अभिषेक हुआ... और महान जयनादपूर्वक पावापुरी सिद्धिधाम का यात्रा महोत्सव पूर्ण हुआ। साधकों के हृदय में जिनकी परम स्तुति उत्कीर्ण है, ऐसे हे सिद्ध भगवन्तों! आपको मेरा नमस्कार हो, मेरे आत्मा में आप विराजो... **सिद्धा सिद्धि मम दीसंतु।**

भगवान तो अपने धर्मपिता हैं; हम कोई परदेश में नहीं परन्तु अपने धर्मपिता के धाम में आये हैं; हम भगवान के और सन्त के पुत्र हैं और यह अपने धर्मपिता का देश है। अपने धर्मपिता यहाँ विचरे थे, यह उनकी आत्मसाधना की भूमि है। अपन भी उनके मार्ग में चलकर आत्मा को साधेंगे। जैसे गौतमस्वामी ने वीर प्रभु का अनुसरण किया, वैसे हम भी करेंगे। भगवान ने कहा हुआ मुक्ति का मार्ग कहान गुरु अपने को दर्शा रहे हैं, यह उनका महान उपकार है। मोक्षमार्गदर्शक भगवान आज अपने सन्मुख नहीं तो भी भगवान ने दर्शाया हुआ मार्ग तो आज भी जीवन्त प्रवर्त रहा है; गुरुदेव के साथ-साथ उस मार्ग में जाकर आत्महित साधेंगे... ऐसी भावनाएँ भाते-भाते यात्रियों ने दोपहर को पावापुरी से गुणावा की ओर प्रस्थान किया, वीरधाम में से गौतमधाम की ओर चल दिये।

गौतमधाम गुणावा सिद्धक्षेत्र

पावापुरी से लगभग पन्द्रह मील दूर 'गुणावा' वह गौतमस्वामी का मोक्षधाम है। भगवान महावीर जिस दिन मोक्ष सिधारे, उसी दिन गौतमगणधर केवलज्ञान को प्राप्त हुए और अरिहन्तरूप से अनेक वर्षों विचरकर, अनेक भव्य जीवों को प्रतिबोध करके, इस गुणावाधाम से सिद्धपद को प्राप्त कर इसे सिद्धक्षेत्र बनाया। दोपहर को यात्रासंघ इस सिद्धक्षेत्र में आ पहुँचा। गुणावा में आने पर मानो गणधर प्रभु के धाम में आये। यह स्थान शान्त... सुन्दर... और रमणीय है। जैसे सन्त धर्मात्मा का समागम मुमुक्षु को आह्लाद उत्पन्न करता है, उसी प्रकार यह धाम यात्रियों के हृदय को आह्लादित करता है। धर्मशाला के आसपास ऊँचे-ऊँचे ताड़ वृक्षों के झुण्ड मानो कि भक्ति की मस्ती में झूलते-झूलते गणधर के गुणगान कर रहे हैं। धर्मशाला में कुँआ भी मात्र तीन-चार हाथ की गहराई में ही बिना कष्ट के मीठा जल प्रदान कर यात्रियों का स्वागत करता है। व्याप्त रमणीय उपशान्त वातावरण के बीच जिनमन्दिर शोभायमान हो रहा है, उसमें कुन्थुनाथ भगवान की बड़ी प्रतिमाजी विराजमान है तथा महावीर भगवान की प्रतिमाजी तथा चौबीस तीर्थंकरों के चरण पादुका शोभित हो रहे हैं। मन्दिर की एक ओर देहरी है, उसमें श्री गौतम गणधरदेव के चरण पादुका स्थापित होनेवाले हैं। गणधरदेव के धाम में गणधरदेव के पवित्र चरणों के दर्शन से बहुत आनन्द हुआ। मन्दिर की दूसरी ओर छोटा सा मानस्तम्भ है, उसमें ऊपर चारों ओर खड्गासन भगवन्त विराजमान हैं। जिनमन्दिर से जरा सा दूर छोटा सा सुशोभित सरोवर के बीच जलमन्दिर है, असल पावापुरी का नमूना है; जैसे महावीर भगवान का अनुकरण गौतमस्वामी ने किया, वैसे पावापुरी का अनुकरण गुणावा ने किया है। जलमन्दिर में पार्श्वनाथ भगवान की छोटी प्रतिमा तथा गौतमस्वामी के चरण पादुका स्थापित हैं।

यात्रासंघ ने आते ही जिनमन्दिर में दर्शन किये, अर्घ्य चढ़ाया और फिर भक्ति शुरु हुई। प्रथम कुन्थुनाथ भगवान का स्तवन गवाया, पश्चात्—

भज भज! प्यारे भज भगवान जो तुं चाहे निजकल्याण...
श्री अरहंता सिद्ध महान है परमातम धरिये ध्यान...
भज भज गौतम गुरु भगवान कुन्दकुन्द आचार्य महान...

इस स्तवन में गौतमस्वामी का नाम आने पर गौतमधाम में पूज्य बहिनश्री–बहिन ने बहुत भाव से भक्ति करायी थी। एक ओर तो भक्ति की धुन चल रही थी, तब दूसरी ओर यात्री दर्शन–वन्दन करके तथा जलमन्दिर की यात्रा करके गया शहर की ओर प्रस्थान कर रहे थे क्योंकि यहाँ की धर्मशाला में सम्पूर्ण यात्रासंघ का समावेश नहीं हो सकता था, इसलिए सायंकाल से पहले तो बहुत सी मोटरें और बसें गया शहर की ओर विदा हो गयी। बच्छराजजी सेठवाली आश्रम की बस कोडरमा गाँव होकर सम्मेदशिखर की ओर गयी। सायंकाल तो गुणावा में पूज्य गुरुदेवश्री और थोड़े से ही यात्री रहे। ऐसे तीर्थयात्रा के प्रसंग में छोटी सी झोंपड़ी में पधारकर गुरुदेव भोजन करें—इस दृश्य से बहुत आनन्द होता था। भोजन के बाद गुरुदेव धर्मशाला में टहल रहे थे और एक तरफ भक्तजन भोजन कर रहे थे। टहलते–टहलते आसपास का अवलोकन करते हुए गुरुदेव की नजर जहाँ इन्द्रभूति गौतम की कुटीर का स्थान था, वहाँ पड़ी, तुरन्त आश्चर्य से भक्तों को वह स्थान बतलाया कि देखो, सामने दिखता है उस स्थान में गौतमस्वामी की कुटीर थी, और महावीर भगवान के समवसरण में ले जाने के लिये इन्द्र यहाँ उनके पास आया था। गुरुदेव ने बतायी हुई यह 'गौतमकुटीर' का स्थान देखकर सबको बहुत प्रसन्नता हुई... और गणधरदेव के जयकार से गुणावा गाज उठा।

गुणावा... एक तो सहज ही शान्तधाम, उसमें गुरुदेव के निकट समागमपूर्वक वास, और गणधरदेव के जीवन के मधुर संस्मरण... यह अनोखा प्रसंग तो यात्रा की एक मधुर पूँजी है। सायंकाल गुरुदेव और गुणावा में रुके हुए थोड़े से यात्री फिर से जलमन्दिर में सिद्धिधाम के दर्शन करने गये। सरोवर किनारे शान्त वातावरण में यात्रा की हर्ष भरी चर्चा करके गुरुदेव ने सबको आनन्द कराया। रात्रि को जिनमन्दिर में बहुत भक्ति हुई, उसमें कुल नौ स्तवन गवाये गये। गुणावा पूजन की जयमाला, तथा 'प्रभु पतित पावन मैं अपावन चरण आयो शरणजी' इत्यादि स्तवन गुरुदेव ने गवाये। तथा—

(1) आवो आवोजी.. हाँ हाँ.. आवो आवोजी.. जैन जग सारे.. गौतमप्रभु मोक्ष गये..

(2) तेरी राह धरके.. भव पार करके.. मुझे आना तुमारे आंगना.. मुझे आना तुमारे आंगना..

इत्यादि स्तवनों द्वारा बहिनश्री–बहिन ने भी बहुत–बहुत भक्ति करायी थी। मन्त्रीजी नेमिचन्दजी पाटनी और उनका परिवार, पण्डितश्री हिम्मतलाल, ब्रजलालभाई इंजीनियर

और उनका परिवार, ब्रह्मचारी चन्दुलालभाई इत्यादि तथा पूज्य चम्पाबेन, पूज्य शान्ताबेन इत्यादि को यहाँ गुरुदेव के साथ सायंकाल यात्रा-भक्ति का लाभ मिलने से बहुत आनन्द हुआ था। इस प्रकार गुणावा सिद्धक्षेत्र में आधे दिन में भी अलग ही आनन्द आया और यात्रा पूर्ण हुई।

गुणावा सिद्धिधाम से मोक्ष प्राप्त श्री गौतम गणधरदेव को नमस्कार हो

गुणावा सिद्धिधाम की यात्रा करानेवाले कहान गुरुदेव को नमस्कार हो।

★ ★ ★

गया शहर

फाल्गुन शुक्ल चौथ : सवेरे साढ़े पाँच बजे पूज्य गुरुदेव ने गुणावा से गया शहर की ओर प्रस्थान किया। बीच में नवादा गाँव में जिनमन्दिर में दर्शन करके आठ बजे गया शहर पधारने पर वहाँ के जैन समाज तथा यात्रियों ने भव्य स्वागत किया। मेघराज भी दौड़ते हुए स्वागत में भाग लेने आये, परन्तु वे जरा लेट हुए, इसलिए स्वागत पूरा होने के पश्चात् पहुँचे। एक विशाल अगासी में सुसज्जित मण्डप था, उसमें गुरुदेव ने मंगल प्रवचन किया।

गया शहर में दो दिगम्बर जिनमन्दिर हैं, तदुपरान्त वैष्णवों का और बौद्धों का यह बड़ा धाम है, जगह-जगह मन्दिर और नहाने के कुण्ड हैं। बुद्ध-गया में गौतम बुद्ध का बोधित्सववृक्ष तथा विशाल बौद्धमन्दिर, बौद्ध मठ, पुस्तकालय, संग्रहालय इत्यादि का अवलोकन किया। गुरुदेव के साथ ज्योजी नामक एक अंग्रेज बौद्ध साधु की मुलाकात हुई। दोपहर को गुरुदेव का प्रवचन हुआ तथा गया शहर के जैन युवक मण्डल की ओर से अभिनन्दन पत्र दिया गया। प्रवचन के बाद यात्रियों ने यात्रा के ध्येयरूप ऐसे तीर्थराज श्री सम्मेदशिखर धाम की ओर प्रस्थान किया।

★

इस ओर गया शहर में जब गुरुदेव का स्वागत चलता था, तब सम्मेदशिखर मधुवन में क्या होता था?—आश्रम की बस के यात्री गुणावा से सीधे यहाँ पहुँच गये थे और पूरे दिन गुरुदेव को याद कर-करके यात्रा सम्बन्धी चर्चा-भावना में समय व्यतीत करते थे। गुणावा से गया के बदले सीधे शिखरजी की ओर जाते हुए बीच में कोडरमा गाँव आये, वहाँ ताजा-ताजा ही पंच कल्याणक महोत्सव हुआ था; जिनमन्दिर में ताजा ही प्रतिष्ठित हुए भाववाही भगवान के दर्शन किये, वहाँ की समाज ने गुरुदेव की प्रशंसा सुनी, उनके आग्रह से थोड़ी देर जिनमन्दिर में भक्ति करने रुके। उन्होंने आग्रह करके बस के यात्रियों को भोजन के लिये रोका। वहाँ से प्रस्थान करके रात्रि के बारह बजे सम्मेदशिखरजी धाम की गोद में-जैसे माता की गोद में बालक समा जाता है—उसी प्रकार समा गये। दूसरा पूरा दिन सम्मेदशिखर सिद्धिधाम को निहार-निहार कर उसकी छाया में

भक्तिभावनापूर्वक व्यतीत किया। गया शहर से प्रस्थान करके यात्रासंघ की कितनी ही मोटरें और मोटरबसें क्रम-क्रम से शिखरजी धाम की ओर आने लगी। 'सत्सेविनी' के यात्री भी गया शहर से शाम को प्रस्थान करके शिखरजी धाम की ओर आ रहे थे। मधुवन आने से पहले 15 मील लम्बी घनी झाड़ियों के बीच प्रवास करते समय पूज्य बहिनश्री-बहिन को बहुत ही प्रसन्नता होती थी। पूज्य गुरुदेव के साथ अनेक यात्राएँ की और पूज्य गुरुदेव के साथ सम्मेदशिखर की महान यात्रा करेंगे—ऐसे जीवन के धन्य सुनहरी प्रसंगों के-मीठे स्मरण करते-करते और मधुर भावना भाते-भाते चले आ रहे थे, तथा शिखरजी धाम के प्रति हाथ जोड़-जोड़कर वे भक्ति भी कर रहे थे। अनन्त सन्तों की चैतन्य साधना का धाम, चैतन्य साधक जीवों को परम प्रसन्नता उपजाता है। भाईश्री हिम्मतभाई तथा ब्रजलालभाई इत्यादि भी शिखरजी के दर्शन से बहुत ही प्रसन्न हुए। वे शिखरजी धाम में आ पहुँचे, फिर मूसलाधार वर्षा शुरु हुई।

एक ओर तो गर्जना करती वर्षा बरस रही थी और दूसरी ओर गया शहर से रवाना हुई अनेक मोटरें और मोटर बसें तो अभी मार्ग में थी। इसलिए शिखरजी में सब उनकी चिन्ता कर रहे थे परन्तु यात्रियों के अन्तर में रहा हुआ ध्येय की ओर का जोर अन्धकार में भी मोटरों को शीघ्रता से दौड़ा रहा था, इसलिए रात्रि के अन्धकार में भी गर्जना के साथ बरसात की झड़ी और पवन की आँधी के बीच भी घनघोर जंगल को भेदती हुई यात्रियों की मोटरें मध्य रात तक में मधुवन आ पहुँची। वास्तव में सिद्धिपन्थ के पथिक को संसार का कोई झंझावात रोक नहीं सकता तो सिद्धिधाम के यात्रियों को ये झंझावात कैसे रोक सकता है। झंझावात के बीच भी उत्साह से प्रवास करते-करते यात्री शिखरजी धाम में आ पहुँचे। इस प्रकार यात्रासंघ की आठ मोटरबसों के उपरान्त अनेक मोटरें भी शिखरजी धाम में आ पहुँची; जिसमें मुरब्बी श्री नानालालभाई, रामजीभाई, तथा नेमीदासभाई, नेमीचन्दजीभाई पाटनी और वजुभाई तथा हिम्मतभाई, मोहनभाई जसाणी, बच्छराजजी सेठ, खीमचन्दभाई, महेन्द्रकुमार मीठालालजी सेठी, तलकसीभाई, मूलजीभाई, मोहनभाई करांचीवाले, भूरालालभाई तथा प्रेमचन्दभाई, बच्छराजभाई, दुलीचन्द खेमराजजी, खेमराज कपूरचन्दजी, मलूकचन्दभाई, मगनलाल सुन्दरजी, रिखवदासजी, मोहनभाई तथा जेचन्दभाई, छगनभाई, कुलचन्दभाई इत्यादि अनेक यात्री शिखरजी धाम में आ पहुँचे। यात्रा प्रवास का सबको उत्साह था। तदुपरान्त श्री प्रेमचन्दभाई, नानचन्दभाई खारा, सेठ

जेठालाल संघजी, मणिलालभाई, मुकुन्दभाई इत्यादि अनेक भाई भी स्पेशल ट्रेन इत्यादि द्वारा गुरुदेव के साथ यात्रा करने उत्साहपूर्वक सम्मेदशिखरजी आ पहुँचे थे और सबके उत्साह के कारण इस महातीर्थ में यात्रा महोत्सव का अनोखा वातावरण जमा था।

गया शहर से सम्मेदशिखरजी की ओर आते समय बरसती बरसात में वन-जंगल के बीच रात्रि के अन्धकार में हुई मुसाफिरी प्राचीन काल की यात्रा को याद कराती थी। अहा! पचास-सौ वर्ष पहले का वह जमाना-जिस समय ट्रेन या मोटरें नहीं थी, उस समय पैदल चलकर अथवा बहुत तो गाड़ा में बैठकर सैकड़ों हजारों मील की मुसाफिरी करनी पड़ती थी, जब चोर लुटेरों का भी भय था, जब तार-पत्र की भी व्यवस्था नहीं थी, घर से निकलकर दो-तीन वर्ष में मुश्किल-मुश्किल से यात्रा स्थान में पहुँचा जाता था। और यात्रा करके घर में पाँच वर्ष में वापस आया जाता था। इतने लम्बे काल तक घरबार या व्यापार-धन्धा की उपाधि से दूर, जहाँ सन्देश भी नहीं मिले, ऐसे यात्रा प्रसंग कैसे होंगे! तथापि तब भी भविक जीव आनन्द से तीर्थयात्रा करते थे; यात्रा में जानेवालों को पूरा गाँव बहुमानपूर्वक विदा देता था और यात्रा करके आवे तब भी बहुमान से सम्मान करता था—ऐसी महिमा उस समय तीर्थयात्रा करनेवालों की थी, उसमें भी जो यात्रासंघ निकाले, उसका तो विशिष्ट बहुमान होता था। वास्तव में तीर्थयात्रा इस जीवन में गौरव भरा एक महान प्रसंग है... यात्री अपनी यात्रा के मधुर संस्मरणों को जीवन भर भूलता नहीं; जीवन में चाहे जैसी परिस्थिति के समय भी यात्रा के मधुर संस्मरण उसे आह्लादित करते हैं। साक्षात् तीर्थ पर विचरते हों, उस यात्रा के आह्लाद की तो क्या बात! वह तीर्थयात्रा की चर्चा भी आह्लादकारी होती है, जैसे चैतन्य के साक्षात् अनुभव के आनन्द की तो क्या बात! उस चैतन्य के अनुभव की वार्ता भी जिज्ञासु को अतिशय आह्लादित करती है।

बरसती बरसात के बीच वन-जंगल में प्रवास करके शिखरजी धाम की गोद में पहुँचे हुए यात्रियों में खेद नहीं ज्ञात होता था परन्तु आह्लाद दृष्टिगोचर होता था; चाहे जैसी कठिनाई लाँघकर भी हम हमारे इष्ट-तीर्थधाम में आ पहुँचे।—ऐसी सफलता की उमंग थी और उस उमंगभरे हृदय से भक्त इन्तजार कर रहे थे कि कल सवेरे गुरुराज इस तीर्थराज को भेंटने आ पहुँचेंगे.... और अपन उत्साह-उत्साह से स्वागत करेंगे।

★ ★ ★

अनन्त सिद्धेभ्यो नमः

सम्मेदशिखर धाम में

(संवत् 2013 फाल्गुन शुक्ल पंचमी :)

अहा! भरतक्षेत्र का यह तीर्थाधिराज 40-40 मील दूर से दर्शन देकर भव्य जीवों को आकर्षित कर रहा है। गया शहर से प्रस्थान करके 121 मील दूर शिखरजी धाम की ओर गुरुदेव पधार रहे हैं। बहुत-बहुत दिनों से जिसकी राह देखते थे, उस पावन तीर्थधाम में पहुँचने के लिये आज का प्रवास बहुत प्रसन्नकारी था। बस, अब इष्ट धाम में पहुँचना है... ऐसा इष्ट के प्रति गुरुदेव के प्रमोद के कारण कल्याणवर्षिनी मोटर भी आज तो अधिक द्रुतगति से दौड़ रही थी। गुरुदेव के अन्तर में मोक्षगामी तीर्थंकरों और सन्तों के स्मरण घूमते थे और बाहर में उनके नयन शिखरजी की ओर नजर लगा रहे थे। अभी शिखरजी दिखेगा... अभी दिखेगा! कैसा होगा वह धाम!!—ऐसी रटनपूर्वक गुरुदेव बारम्बार पूछते थे कि शिखरजी दिखता है? थोड़ी देर आँखें बन्द करके गुरुदेव शिखरजी धाम पर विचरे हुए साधक-सन्तों के झुण्ड को अन्तर में निहारते, थोड़ी देर मानो शिखरजी के ऊपर से सन्तों की आवाज सुनायी देती हो—ऐसे दूर-दूर नजरें लम्बाकर निहारते। इतने में 30-40 मील दूर से सम्मेदशिखर... सिद्धिधाम के दर्शन होने पर गुरुदेव का हृदय प्रसन्नता से नाच उठा।

अहा, इस सिद्धिधाम के प्रथम दर्शन की ऊर्मियों की क्या बात! जैसे चन्द्र दूर रहकर भी समुद्र को आनन्द से उछालता है और अपनी तरफ खींचता है, उसी प्रकार सम्मेदशिखरजी धाम दूर होने पर भी भक्त हृदयों में आनन्द की तरंग उछालता हुआ उन्हें अपनी ओर खींच रहा है... अथवा तो सिद्धालयवासी सिद्ध भगवन्त मानो कि साधकों के हृदय को सिद्धपद की ओर उल्लसित करते हों!—ऐसी सरस ऊर्मियाँ जागृत होती थीं। दूर-दूर का दर्शन भी गुरुदेव के हृदय में आनन्द उत्पन्न करता था, जैसे थोड़ी सी दूर रही हुई मुक्ति का दर्शन

भी मोक्षार्थी को आनन्द उत्पन्न करता है, उसी प्रकार। अहो! भेंटा... भेंटा... आज सिद्धिधाम! सम्यग्दर्शन हो और निर्विकल्प ध्यान में सिद्धपद की अपने अन्तर में ही भेंट होने पर जो आनन्द अनुभव में आता है, वह शीघ्र व्यक्त नहीं होता परन्तु धर्मात्मा के हृदय की गम्भीरता में ही समाहित रहता है, उसी प्रकार जीवन में शिखरजी के प्रथम दर्शन से उल्लसित कोई अकथ्य आनन्द की ऊर्मियाँ थोड़ी देर वाणी को बन्द कर देती है और हृदय की गम्भीरता में ही वे ऊर्मियाँ समाहित हो जाती हैं। अहा, कैसा अद्‌भुत वह दर्शन!

गुरुदेव तो पारसनाथ टूंक पर नजर लगाकर निहार ही रहे हैं; पारस टूंक के ध्येय से पन्थ तो शीघ्रता से कटता जाता था—जैसे सिद्धपद के ध्येय से चिदानन्दस्वभाव में नजर लगाने से साधक का पन्थ शीघ्रता से कट जाता है उसी प्रकार। माता को देखकर जिस प्रकार बालक उसे भेंटने को दौड़ता है, उसी प्रकार मोटरें शिखरजी को भेंटने दौड़ रही है। अब गुरुदेव की मोटर सोलह मील लम्बी घांटी झाड़ियों के बीच से गुजर रही है। वन के वृक्ष भी अनोखे प्रकार से खिल उठे हैं। मानो कि वे वृक्ष वनवासी साधक सन्तों को ताप से रक्षण के लिये मधुर छाया बिछाकर उनकी सेवा कर रहे हैं। रमणीय पहाड़ी और गहन झाड़ियों के बीच से मोटरें गुजरती थीं, तब न तो आकाश दिखता और न जमीन दिखती, मात्र झाड़ियों के ऊपरी भाग दिखते, नीचे के भाग नहीं दिखते। मानो दुनिया के वातावरण से दूर-दूर कोई गम्भीर-अगम्य गहराई में उतरे हों! वनराज की छाया से आच्छादित सोलह मील का यह मार्ग ऐसा मनोहर है—मानो उपशमभाव की छाया बिछी हो। विध-विध रंग के पुष्पों से शोभित वनराजी भी मानों रत्नत्रय के पुष्प प्रदान करने की तैयारी हो—वैसे बहुत सुशोभित और प्रफुल्ल है। ऐसे प्रसन्न और प्रशान्त वातावरण में अनन्त साधकों को साधनाभूमि को निहारते हुए यात्रियों का हृदय भी प्रसन्न और प्रशान्त होकर साधना के विचारों के हिलोरों में चढ़ता है। सिद्धिधाम की छाया में आये इसलिए तो बस! मानो सिद्ध भगवन्तों के नजदीक आये... और अब अनन्त सिद्धों की बस्ती में जाने की तैयारी हुई। अहा, ऐसा सम्मेदशिखरजी के

आसपास का वैभव देखने पर शिखरजी तीर्थ की बहुत-बहुत महिमा आती थी। शिखरजी अर्थात् मानो सिद्ध भगवान, और वे सब आसपास के छोटे पहाड़, वे मानो कि सिद्धि के साधक मुनिवर; सिद्ध भगवान के आसपास मानो कि मुनियों के झुण्ड लिपटकर बैठे हों! ऐसे शिखरजी पर्वत के आसपास अनेक छोटे पर्वत लिपटे हुए हैं और जैसे साधक जीव सिद्ध भगवान की महत्ता को प्रसिद्ध करते हैं, वैसे वे छोटे पर्वत विशाल शिखरजी धाम की महिमा को प्रसिद्ध कर रहे हैं और सबसे ऊँचा स्वर्णभद्र टूंक तो मानो पुकार कर रही है कि 'आओ... रे... आओ... यह रहा भारत का शाश्वत् सिद्धिधाम!' उसे निहारकर शिखरजी धाम को भेंटने की अत्यधिक चटपटाहट जागृत होती है। जिस प्रकार मुनि की परिणति मोक्ष की ओर दौड़ती है, उसी प्रकार 'कल्याणवर्षिनी' मोक्षधाम की ओर दौड़ रही है और शिखरजी को नजरों से देखने के बाद तो वह ऐसी दौड़ी... ऐसी दौड़ी... कि जैसी क्षपकश्रेणी में मुनि की परिणति केवलज्ञान की ओर दौड़ती है। जैसे-जैसे नजदीक से सिद्धिधाम के स्पष्ट दर्शन होते हैं, वैसे-वैसे गुरुदेव का हृदय आनन्द से उछलता है। बोले बिना भी उनकी मुखमुद्रा में से प्रसन्नता के ऐसे भाव उठते हैं कि अहा, मेरे प्रिय नाथ की आज भेंट हुई... धन्य घड़ी! धन्य जीवन!

★ ★ ★

सबसे ऊँची पार्श्वनाथ प्रभु की (सुवर्णभद्र नामक) टूंक है। वह तथा एक दूसरी टूंक—ऐसे दो टूंक दूर से दिखायी देती है। जीवन की एक अभिलाषा आज पूर्ण होती है, इसलिए अन्तरंग आनन्द से प्रफुल्लित था। दूर से शिखरजी धाम के दर्शन करते-करते मार्ग कब पूरा हो गया, इसकी भी खबर नहीं पड़ी। मधुवन आ पहुँचा। दूर से कल्याणवर्षिनी को देखते ही हजारों यात्रियों के जयनाद और वाजिन्त्रों के मंगल नाद के सुर शिखरजी के पहाड़ के साथ प्रतिघोषित होकर वापस आने लगे... मानो कि पर्वत भी अपने हृदय में से वाजिन्त्र के नाद द्वारा स्वागत में साथ देता हो! पर्वतराज यद्यपि स्वभाव से ही पावन है तथा पावन पुरुषों के प्रति शिष्टाचार के लिये तथा यात्रा महोत्सव की

पूर्व तैयारी के लिये पूर्व रात्रि में मेघ जल द्वारा नहाकर स्वच्छरूप से तैयार होकर शोभित हो रहा था—मानो कि प्रशान्त रस का पुँज! इस ओर गुरुदेव की नजर तो शिखरजी पर ही थी, जब 'कल्याणवर्षिनी' रुक गयी और जयनाद गजाते यात्रियों ने मोटर को घेर लिया, तब गुरुदेव को खबर पड़ी कि शिखरजी तलहटी में आ पहुँचे हैं। 'जय भगवान...' कहते हुए गुरुदेव मोटर में से उतरे और सर्व प्रथम शिखरजी के प्रति हाथ जोड़कर बहुत-बहुत भाव से वन्दन किया।

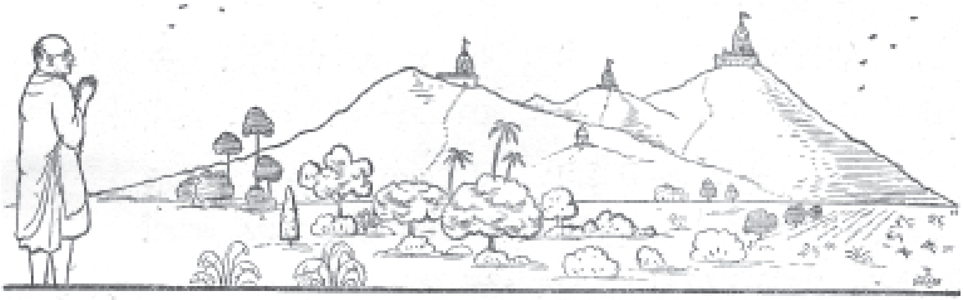

जिस प्रकार मुनिराज के दर्शन से मुमुक्षु जीव आनन्दित होता है, जिस प्रकार सीमन्धरनाथ के दर्शन से कुन्दकुन्दस्वामी आनन्दित होते हैं, जिस प्रकार आत्मदर्शन से आत्मार्थी जीव आनन्दित होता है, जिस प्रकार गुरु को देखकर शिष्य आनन्दित होता है, जिस प्रकार माता को देखकर बालक आनन्दित होता है, जिस प्रकार आदिनाथ को देखकर भरत आनन्दित होते हैं, जिस प्रकार एक धर्मात्मा को देखकर दूसरे धर्मात्मा आनन्दित होते हैं; उसी प्रकार शिखरजी धाम को देखकर कहान गुरु आनन्दित हुए और कहान गुरुराज को शिखरजी धाम में देखकर हजारों यात्री आनन्दित हुए।

गुरुदेव शिखरधाम—मधुवन में पधारते ही देश-देश के हजारों यात्रियों ने उमंग भरा स्वागत किया। गुरुदेव जैसे पवित्र आत्मा और शिखरजी जैसा पवित्र धाम—फिर स्वागत के उत्साह में क्या बाकी रहे? भारत भर के प्रान्त-प्रान्त में से एकत्रित हुए यात्रियों ने कैसे उमंग से स्वागत किया, यह निम्न स्वागत गीत से ख्याल आयेगा—

आज पधार्या आज पधार्या, श्री गुरुवरजी आज पधार्या...
आज पधार्या आज पधार्या, तीर्थयात्रा आज पधार्या...

आज पधार्या आज पधार्या, सम्मेदाचल गुरु आज पधार्या...
भक्तजनोना भाव पूराया, सम्मेदाचल गुरु आज पधार्या...

कुमकुम पगले नाथ पधारे, यात्रा दिने मंगल थाये,
भक्तजनो जयजयकार गावे, श्री गुरुवरजी आज पधार्या...

श्री गुरुवरजीए तीर्थ बताव्या, सिद्धिकेरा धाम बताव्या,
अपूर्व यात्रा गुरुवर साथे, सम्मेदाचल गुरु आज पधार्या...

सम्मेदाचल-गिरिनयणे देख्या, जिनवरप्रभुना धाम नीरख्या,
सुवर्ण दिन आजे उग्या, सम्मेदाचल गुरु आज पधार्या...

देवदुंदुभी वाजिंत्र वागे... श्री जिनवरनो महिमा गाजे।
दिव्य गंधोदक अमृत वरसे, सम्मेदाचल गुरु आज पधार्या...

सोना सूरज आजे ऊगे... तीर्थयात्रा गुरुजी पधारे...
सेवकजनना मन हरखाये, सम्मेदाचल गुरु आज पधार्या...

— ऐसे आनन्द मंगल भरे वातावरण के बीच शिखरजी की सुन्दर छाया में गुरुदेव का भव्य स्वागत हुआ परन्तु गुरुदेव का ध्यान स्वागत में नहीं था, उनका ध्यान तो सामने अडोल खड़े हुए परम पावन सिद्धिधाम पर ही लगा हुआ था। सिद्धिधाम का यह पहला-पहला दर्शन उनके हृदय को अतिशय आकर्षित कर रहा था। हृदय में प्रमोद और प्रसन्नता इतनी उभर रही थी कि वाणी भी उसे व्यक्त नहीं कर सकती थी। ऐसी प्रसन्नतापूर्वक स्वागत दिगम्बर जैन तेरापन्थी कोठी में आ पहुँचा। वहाँ के मुख्य जिनमन्दिर में पुष्पदन्त प्रभु के तथा पार्श्वनाथ प्रभु के अतिशय भक्ति से दर्शन किये, पश्चात् मधुवन के छोटे से बाजार में से गुजर कर स्वागत यात्रा दिगम्बर जैन बीस पन्थी कोठी में खड़े किये गये विशेष मण्डप में आ पहुँची और वहाँ तीन-चार हजार श्रोताजनों की सभा में मांगलिक सुनाया। अहा! मंगलधाम शिखरजी की मंगल छाया में

मंगलमूर्ति गुरुदेव की पहली-पहली मंगल वाणी सुनकर सबको बहुत आनन्द और उल्लास हुआ। मांगलिक में गुरुदेव ने प्रसन्नतापूर्वक कहा कि :—

''अनन्त तीर्थंकर और सन्त मुनिवर रत्नत्रयरूप तीर्थ की आराधना द्वारा संसार को तिरकर यहाँ से मोक्ष प्राप्त हुए हैं, इसीलिए यह सम्मेदशिखरजी मंगल तीर्थ है। देखो, यहाँ से ऊपर अनन्त सिद्ध भगवन्त विराजमान हैं। आत्मा का ज्ञान-आनन्दस्वभाव जिस भाव से प्रगट हुआ, वह सम्यग्दर्शनादि भाव भी मंगल है। धवला टीका में श्री वीरसेनाचार्य कहते हैं कि भविष्य में मोक्ष प्राप्त करनेवाला आत्मद्रव्य भी त्रिकाल मंगल है, अल्प काल में होनेवाले केवलज्ञानादि मंगल पर्याय के साथ जुड़ा हुआ है और जिस काल में आत्मा मुक्ति को प्राप्त हुआ या मुक्ति का मार्ग प्राप्त हुआ, वह काल भी मंगल है। जिसने आत्मा के ज्ञानानन्दस्वभाव की प्रतीति करके अपने आत्मा में सम्यग्दर्शन-ज्ञानरूप मंगल प्रगट किया, वह जीव भगवान को भी अपने मंगल का कारण कहता है और भगवान जहाँ से मोक्ष पधारे ऐसे इस सम्मेदशिखरजी इत्यादि तीर्थधाम को भी वह मंगल कहता है। ऐसी निर्वाणभूमि देखने पर उसे मोक्षतत्त्व का स्मरण होता है, इसलिए मोक्षतत्त्व की प्रतीति में और स्मरण में यह भूमि निमित्त है, इसलिए यह भूमि भी मंगलरूप तीर्थ है। इसकी यात्रा के लिये यहाँ आये हैं। इस प्रकार द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव सर्व प्रकार से मांगलिक किया।''

तीर्थधाम में ऐसा उल्लास भरा मांगलिक सुनकर सबको बहुत आनन्द हुआ था। गुरुदेव इस तीर्थधाम में पधारने पर यहाँ का पूरा वातावरण बहुत उमंग भरा और प्रफुल्लतामय लगता था। इष्ट धाम में आने का सबको सन्तोष था। धर्मपिता के धाम में धर्मात्माओं को आनन्द से विचरते देखकर जिज्ञासु भक्तों का हृदय उल्लसित होता था। यहाँ यात्रासंघ में 1500 लगभग यात्री हो गये थे और दूसरे यात्री भी दो हजार लगभग थे। गुरुदेव के साथ इस शाश्वत् सिद्धिधाम को भेंटने सबके हृदय आतुर हो रहे थे। कब सिद्धिधाम को भेंटेंगे! और कब गुरुदेव के साथ यात्रा करके सिद्धिधाम के वैभव को देखेंगे! इस प्रकार सब

भावना भा रहे थे। सिद्धिधाम के कदम-कदम पर सिद्धों का और साधकसन्तों का स्मरण होता था। सिद्ध का स्मरण संसार को भुला देता है, उसी प्रकार सिद्धिधाम में पहुँचे हुए यात्री संसार के वातावरण को भूल गये थे। जिस प्रकार सिद्धपद प्राप्त करने से पहले भी साधक को उसका आनन्द होता है, उसी प्रकार सिद्धिधाम की यात्रा करने से पहले भी उसकी छाया में यात्रियों को यात्रा जैसा आनन्द होता था। वास्तव में तो यात्रा की शुरुआत पर्वत पर चढ़ें, तब नहीं परन्तु यात्रा का संकल्प करके घर से निकले, तब से ही यात्रा की शुरुआत हो गयी और पर्वत पर पहुँचे, तब तो उस संकल्प का फल आया—जैसे यथार्थ निर्णय का फल अनुभव आता है, उसी प्रकार।

इस शाश्वत् तीर्थधाम में गुरुदेव को आहारदान का महान लाभ पवित्र आत्माओं—पूज्य चम्पाबेन तथा पूज्य शान्ताबेन को प्राप्त हुआ था, यह प्रसंग स्मरणीय था। सम्मेदशिखर धाम में पूज्य गुरुदेव आठ दिन रहे थे, उस दौरान आहारदान का महान लाभ सम्मेदशिखर में आये हुए मेहमानों तथा नेमीचन्दजी पाटनी, तलकशीभाई सेठ इत्यादि यात्रियों को प्राप्त हुआ था, वह प्रसंग सबको उल्लासकारी था।

दोपहर को एक बजे पूज्य गुरुदेव ईसरी आश्रम में पधारे थे; जिनमन्दिरों के दर्शन करने के बाद श्री गणेशप्रसादजी वर्णीजी के साथ लगभग आधे घण्टे वात्सल्यपूर्वक बातचीत हुई थी। इस प्रसंग पर पण्डित फूलचन्द्रजी, पण्डित सुमेरचन्दजी (भगत), पण्डित राजकिशनजी, पण्डित रतनलालजी, पण्डित खुशालचन्दजी, पण्डित नन्दलालजी तथा बाद में पण्डित मक्खनलालजी इत्यादि उपस्थित थे। पूज्य गुरुदेव के साथ यात्रासंघ के अनेक यात्री, पण्डित हिम्मतलालभाई, रामजीभाई, खीमचन्दभाई, नेमीचन्दभाई, पूज्य बहिनश्री चम्पाबेन, पूज्य बहिन शान्ताबेन तथा ब्रह्मचारी भाई इत्यादि थे। चर्चा-वार्ता के बाद ईसरी आश्रम में ब्रह्मचारी तपासीबाई इत्यादि ने पूज्य बहिनश्री-बहिन के प्रति बहुत प्रमोद प्रदर्शित किया था। यहाँ मधुवन में अनेक त्यागी और विद्वान पण्डित पूज्य गुरुदेव के परिचय में आये थे और उनके परिचय से बहुत प्रसन्न

और प्रभावित हुए थे। इन्दौर के पण्डित बंशीधरजी तथा काशी के पण्डित कैलाशचन्द्रजी तथा पण्डित फूलचन्द्रजी इत्यादि ने बहुत प्रेम दर्शाया था।

दोपहर को मधुवन में गुरुदेव का प्रवचन हुआ। शिखरजी की शीतल छाया में प्रवचन सभा का दृश्य बहुत भव्य था। अनेक त्यागी, विद्वान तथा प्रतिष्ठित गृहस्थोंसहित तीन-चार हजार जितने श्रोताजनों से सभा बहुत सुशोभित लगती थी। 'नमः समयसाराय' इस श्लोक पर अद्भुत भाव भरा प्रवचन हुआ था... उसमें गुरुदेव ने स्वानुभूतिरूप सिद्धि का मार्ग दर्शाया था। सिद्धिधाम में सिद्धि का मार्ग सुनकर सबको प्रमोद हुआ। गुरुदेव भक्तिपूर्वक शिखरजी के प्रति हाथ लम्बाकर बारम्बार कहते कि देखो, यहाँ से अनन्त जीव सिद्धपद को प्राप्त हुए हैं। वे इस स्वानुभूति के मार्ग से ही सिद्धपद को प्राप्त हुए हैं। उस मार्ग के स्मरण के लिये यह सिद्धिधाम की यात्रा है। अहो, सिद्धिधाम में विचरे हुए सन्तों की परिणति कैसी थी... और वह अनुभूति कैसे प्रगट हो, उसका वर्णन सिद्धिधाम में ही बैठकर सुनते हुए बहुत हर्ष हुआ। वास्तव में सम्मेदशिखरजी धाम में ऐसी महान सभा और ऐसे विशाल संघसहित यात्रा यह आधुनिक जैन इतिहास में एक महान प्रसंग बना।

रात्रि में जिनमन्दिर में बहुत उल्लासपूर्वक भक्ति हुई। शिखरजी जैसे धाम में गुरुदेव के साथ की यह पहली-पहली भक्ति सिद्ध भगवन्तों के प्रति और मुनिवरों के प्रति हृदय में रोमांच जगाती थी, और उनके मार्ग में गमन करने की प्रेरणा करती थी। भगवान के प्रति लयलीनता से पूज्य बहिनश्री-बहिन जो अलौकिक भक्ति की धुन द्वारा वैराग्य के समुद्र को उछालती, उसे देखकर लोग आश्चर्यचकित हो जाते; चारों ओर से यात्रियों के झुण्ड वह भक्ति सुनने एकत्रित हो जाते और विरोधी विचारवाले जीव भी यह वैराग्यरस झरती भक्ति देखकर आश्चर्य को प्राप्त हो जाते। इस प्रकार शिखरजी सिद्धिधाम में गुरुदेव के साथ का पहला दिन बहुत आनन्दोल्लासपूर्वक व्यतीत हुआ। यात्रा सम्बन्धी कार्यक्रमों की विचारणा के लिये रात्रि ग्यारह बजे यात्रासंघ के कार्यकर्ताओं की मीटिंग आयोजित की गयी।

★

दूसरे दिन (फाल्गुन शुक्ल छठवीं को) सवेरे अनेक भक्तजनोंसहित गुरुदेव तलहटी के जिनमन्दिरों के दर्शन करने पधारे। गुरुदेव के साथ जिनमन्दिरों के दर्शन करते-करते हृदय हर्ष से पुकार उठा कि—

आज मारा हृदयमां आनन्द सागर ऊछले,
जिनवृंदनां दर्शन वड़े संसारताप सहु टळे;
सिद्धिधामनां दर्शन वड़े संसारताप सहु टळे।

यहाँ अनेक जिनमन्दिर हैं, उनमें सबसे मुख्य मन्दिर में मूलनायकरूप से सुविधिनाथ भगवान विराजते हैं। तदुपरान्त पीछे के भाग में उपशमरस झरते विशाल पार्श्वनाथ भगवान विराजते हैं। अहा, श्यामवर्णीय पार्श्वप्रभु की मुद्रा वैराग्यरस से अभिसिंचित हो रही है। इस शिखरजी धाम से मोक्ष प्राप्त करनेवाले तीर्थंकरों में सबसे अन्तिम (विक्रम संवत् के पूर्व में लगभग 700 वर्ष पहले) पार्श्वनाथ भगवान मोक्ष प्राप्त हुए हैं, इसलिए उनके नाम से इस पर्वत का नाम भी पार्श्वनाथ हिल ऐसे नाम से बिहार में प्रसिद्ध है। यहाँ के रेलवे स्टेशन का नाम भी 'पारसनाथ' है। जिनमन्दिर में पार्श्वनाथ प्रभु की मुद्रा यात्रियों को अपनी ओर आकर्षित कर लेती है। अहो, क्या यह भव्य प्रतिमा है! इनकी चरणछाया में बैठे हों, तब प्रभुजी अपने पर उपशान्तरस भरी अमी दृष्टि बरसाते हैं... और भगवान की वह प्रसन्न दृष्टि निहारने से भक्त पावन हो जाते हैं। भगवान की चरण छाया से दूर हटने का मन ही नहीं होता। अहो नाथ! तुम्हारे दर्शन से मेरा मन प्रसन्न हुआ। इस प्रकार बहुत प्रसन्नता से इन भगवान के दर्शन करके गुरुदेव ने सुवर्ण रकावी में अर्घ्य चढ़ाया।

महावीर भगवान और चौबीस तीर्थंकर भगवन्तों के दर्शन भी बहुत ही आनन्दकारी हैं। महावीर भगवान (लगभग दस फीट उन्नत) खड्गासन में कुमार अवस्था में ध्यानस्थ विराजमान हैं; चैतन्य की अद्‌भुत वीरता से उनकी मुद्रा ऐसी शोभित हो रही है कि मानो... 'इस प्रकार ध्यान द्वारा हम सिद्धि को प्राप्त हुए' ऐसे यात्रियों को दर्शा रही हो। उनके आसपास चौबीस तीर्थंकरों के एक सरीखे लगातार प्रतिमाजी खड्गासन हैं, यह दृश्य बहुत ही सुन्दर है। उन्हें

देखते ही गुरुदेव कहते हैं—'वाह! कैसा सरस दृश्य है!' मानों कि चौबीस तीर्थंकर भगवन्त एक साथ प्रसन्न होकर सन्मुख पधारे हैं, उनके दर्शन होते ही कुन्दकुन्द प्रभु की वन्दना याद आती है।

ते सर्व ने साथे तथा प्रत्येकने प्रत्येकने,
वंदुं वळी हुं मनुष्यक्षेत्रे वर्तता अर्हंतने।

मानो तीर्थयात्रा के मंगल महोत्सव में सब भगवन्त एक साथ पधारकर आशीर्वाद प्रदान करते हैं। अहो, यह तीर्थंकरों का मेला वास्तव में दर्शनीय है, परम भक्ति से वन्दनीय है। जैनधर्म के ऐसे भक्तों को भी धन्य है कि जिन्होंने भक्तिपूर्वक ऐसे जिनवैभव की प्रतिष्ठा करायी है। गुरुदेव के साथ इन भगवन्तों के दर्शन करते हुए सबको बहुत ही प्रमोद हुआ और बहुत भक्ति से गुरुदेव के साथ अर्घ्य चढ़ाया।—

चौबीसों श्री जिनचंद आनन्दकन्द सही,
पद जजत हरत भवफंद पावत मोक्ष मही।

ऊपर जिन्हें अभिवन्दना की है, उन श्री पार्श्वनाथ प्रभु तथा महावीर प्रभु का अभिषेक भी बहुत भावपूर्वक किया था। अभिषेक में भगवान का साक्षात् स्पर्श होने पर बहुत प्रसन्नता से रोमांच होता था।

मन्दिर में दोनों ओर चौमुखी मन्दिर (तीन पीठिका सहित समवसरण) है; एक में श्री चन्द्रप्रभ विराजमान हैं और दूसरे में श्री पार्श्व प्रभु विराजमान हैं। इस प्रान्त में प्रत्येक जगह चन्द्रप्रभ और पार्श्वनाथ भगवन्तों की बहुत विशेषता है। शिखरजी से मोक्ष प्राप्त करनेवाले अन्तिम तीर्थंकर श्री पार्श्वनाथ भगवान हैं, इसलिए उनकी विशेषता है—यह तो स्पष्ट है, और चन्द्रप्रभ भगवान की विशेषता के लिये ऐसा लगता है कि समन्तभद्रस्वामी की स्तुति के प्रताप से चन्द्रप्रभ भगवान प्रगट हुए, उनके प्रभाव से जगह-जगह चन्द्रप्रभस्वामी की स्थापना होती आयी होगी। एक वेदी में नेमीनाथ प्रभु तथा आसपास खड्गासन में शान्तिनाथ प्रभु इत्यादि भगवन्त शोभित हो रहे हैं। सरस्वती भवन (स्वाध्यायशाला) भी शान्त और विशाल है, अन्दर जाते ही जिनवाणी माता की

गोद में शान्ति से स्वाध्याय और सामायिक करने का दिल हो जाता है। स्वाध्यायशाला की दीवाल में मार्बल पर तत्त्वार्थसूत्रजी, भक्तामरस्तोत्र तथा पद्मनन्दि पच्चीसी इत्यादि उत्कीर्ण है। एक मन्दिर में सहस्रकूट चैत्यालय की सुन्दर रचना है—जिसमें कुल 1008 प्रतिमाएँ हैं; उनके दर्शन करते हुए यात्री को ऐसा लगता है कि अहो! जिनेन्द्रों की महान बस्ती में मैं आया, सर्व भगवन्त एक साथ मेरे सन्मुख हुए और मन्दिर के बगल में पंचमेरुसहित नन्दीश्वरद्वीप के बावन सुशोभित उन्नत मन्दिरों की सुन्दर रचना के भी दर्शन हुए। बीच में ऊँचे-ऊँचे पाँच मेरु शोभित होते हैं और घुमाव में 52 जिनालयों की अतिशय मनोरम्य रचना है। अष्टाह्निका के प्रसंग पर ऐसे नन्दीश्वर जिनधाम की रचना के दर्शन होने पर बहुत आनन्द हुआ। पंच मेरु को और नन्दीश्वरधाम को भक्ति से प्रदक्षिणा की। गुरुदेव ने सभी रचना का भावपूर्वक अवलोकन किया और भक्तों को भी बताकर कहा कि यह नन्दीश्वरधाम की रचना पूरी होकर इसमें जब भगवन्तों की प्रतिष्ठा होगी, तब यह एक बहुत ही अद्‌भुत रचना होगी।

तलहटी के वैभव में यहाँ तक जिसका वर्णन किया, वह सब वैभव एक ही मूल मन्दिर में समाहित हो जाता है; मन्दिर बहुत विशाल और सुशोभित है। बीच में बड़ा चौगान है। रात्रि में बिजली के प्रकाश में इस मन्दिर के भगवन्तों का दृश्य बहुत सरस लगता है। इस मन्दिर के सन्मुख के बड़े चौक में एक रमणीय मानस्तम्भ है। 51 फीट उन्नत पूरा मानस्तम्भ कारीगरीवाला है, यह मानस्तम्भ लाडनूँवाले सेठ श्री बच्छराजजी गंगवाल और उनके भाईयों ने बनाया है। उसमें चारों ओर चन्द्रप्रभ भगवान विराजमान हैं। मानस्तम्भ की पीठिकाएँ तथा चौक इत्यादि सुशोभित है। मानस्तम्भ की छाया में आने पर आह्लाद होता है। सबने भक्तिभाव से गन्धकुटी स्थित भगवान के दर्शन-वन्दन किये; किसी ने प्रदक्षिणा की और किसी ने भक्ति से रास भी लिया।

उसी चौक में मानस्तम्भ के निकट दूसरा एक जिनमन्दिर है। उसमें चन्द्रप्रभ भगवान विराजमान हैं और उस मन्दिर की दायीं ओर की खिड़की में चित्त को अत्यन्त प्रसन्नकारी ऐसे श्री सीमन्धरस्वामी-चरणपादुका विराजमान है। संवत् 2003 के फाल्गुन शुक्ल तीज को उनकी स्थापना हुई है। अहो,

अचानक रूप से सीमन्धरनाथ के चरण की प्राप्ति होने पर अपार हर्ष हुआ... सीमन्धरनाथ के चरण का स्पर्श होने पर हृदय आनन्दित हुआ; मानो कि भगवान ने कृपा करके भरतक्षेत्र के भक्तों को चरण की शरण प्रदान की। 'अहा! भरतक्षेत्र के साधकों की भक्ति से प्रसन्न होकर सीमन्धर भगवान ने भरतक्षेत्र में पधारकर साक्षात् चरण सेवा का लाभ प्रदान किया।' यात्रा के लिये सोनगढ़ से निकलते हुए ऐसी भावना भायी थी कि—'सम्मेदशिखरजी पूर्व में है और विदेहक्षेत्र भी पूर्व में है—इसलिए शिखरजी जाते हुए पूर्व विदेह की ओर सीमन्धर भगवान के नजदीक और नजदीक जा रहे हैं—मानो विदेह की ओर जाते-जाते मार्ग में शिखरजीधाम को वन्दन करते हैं।' हे नाथ! मेरे प्रिय भगवान! आपके चरणकमल मेरे हृदय में स्थापित है और मेरा हृदय सदा आपके चरण में ही रहा है, इसलिए प्रसन्न होकर भरतक्षेत्र में भी जगह-जगह इन बालकों को दर्शन देकर आप सम्हाल लेते हो... ऐसी-ऐसी अनेक भक्ति ऊर्मियों से भगवान के चरणकमल के दर्शन किये।

पश्चात् दूसरे चौक में एक मन्दिर है, उसमें भी चन्द्रप्रभ भगवान विराजमान हैं। चार-पाँच फीट के विशाल भगवान चन्द्रप्रभ पूरे ही मन्दिर में शान्त... शान्त... शीतल चाँदनी फैला रहे हैं और उस चन्द्र-चाँदनी में भव्य भक्त संसार के आताप को भूल जाते हैं। यह सब ही वैभव तेरापन्थी धर्मशाला में है। अहो, जैसा गौरवशाली शाश्वत् सम्मेदशिखर धाम है, वैसा ही उसकी तलहटी का वैभव है। बस, ऊपर देखो तो अनन्त सिद्धों का मेला और नीचे देखो तो अरिहन्तों का मेला! वाह... भगवान... वाह! आपकी नगरी में आकर मेरा जीवन सफल हुआ... मेरा चित्त प्रसन्न हुआ... मेरा भ्रमण मिट गया। यहाँ सिद्धिधाम तो हरते और फिरते नजर के समक्ष ही तैरता है।

— इस प्रकार गुरुदेव के साथ अपार उत्साह से सिद्धिधाम का वैभव निहारा। अहो, जिनधाम में आ पहुँचे... बस! अब मानो इस जिनधाम में ही रहें, और जिनमार्ग की उपासना करके भगवान के साथ सादि-अनन्त सम्बन्ध जोड़ दें। गुरुदेव के साथ जिनधाम के दर्शन करते हुए भक्ति से हृदय भर जाता था

: अहो, आज मेरे नाथ को भेंटा... मेरे भगवान की नगरी में मैं आया। अनन्त सिद्धों की साधनाभूमि ऐसा यह तीर्थधाम... और फिर गुरुदेव का साथ।— वाह, धन्य अवसर!

गुरुदेव के साथ जिनवैभव के दर्शन के बाद अपार भक्तिपूर्वक जिनमन्दिर में समूह पूजन हुई। अहा! उस पूजन का दृश्य! एक हजार जितने यात्री एक साथ उस समूह पूजन में भाग ले रहे थे। गुरुदेव भी बहुत भावपूर्वक पूजन करते थे। सोनगढ़वाले यात्री कितने भाव से पूजन करते हैं—यह दृश्य देखकर दूसरे यात्री आश्चर्य को प्राप्त होते थे और टकटकी नयनों से हर्षपूर्वक यह भावभीनी पूजा देख रहे थे। सबसे पहले सम्मेदशिखरजी सिद्धिधाम का पूजन किया—

सम्मेद गढ़ गीरनार चम्पा पावापुरी कैलास को,
पूजों सदा चौबीस जिन निर्वाणभूमि निवास को;
पूजों सदा अनंत जिन निर्वाणभूमि निवास को,
पूजों सदा शाश्वत तीर्थ निर्वाणभूमि निवास को॥

जैसे सोनगढ़ में रहकर विदेहीनाथ सीमन्धर प्रभु के परोक्ष वन्दन-पूजन प्रतिदिन करते हैं परन्तु यदि विदेहक्षेत्र में ही जाकर सीमन्धरनाथ के साक्षात् वन्दन-पूजन करने का प्रसंग बने तो कितना आनन्द होगा! इसी प्रकार सोनगढ़ में रहकर परोक्षरूप से तो बहुत बार सम्मेदशिखरजी की पूजन करते थे परन्तु आज तो प्रत्यक्षरूप से शिखरजी धाम में ही उसकी पूजन होती थी, इसलिए अनोखा उत्साह था। पूज्य बहिनश्री-बहिन की वैराग्य और भक्ति भरपूर पूजा करवाने की शैली सबको मुग्ध कर देती थी। वे जब स्वाहा... मन्त्र बोलतीं, तब 1-2 नहीं, 25-50 नहीं परन्तु एक साथ हजार-हजार पूजक उसमें उत्साह से स्वर मिलाकर अर्घ्यं... स्वाहा करते थे। जिनेन्द्र पूजन का यह महायज्ञ मडा था। यह भव्य पूजन महोत्सव अपूर्व था। एक साथ इतने यात्रियों ने पूजन की हो, ऐसा प्रसंग इस जिनमन्दिर में कदाचित् पहला ही होगा। आज तो गुरुदेव के साथ सिद्धिधाम में महा पूजन का प्रसंग इसलिए एक-दो पूजा से कैसे सन्तोष हो? लगातार पाँच पूजन करायी गयी। सम्मेदशिखरजी इत्यादि सिद्धिधाम में

पूजन के बाद अनन्त सिद्ध भगवन्तों का और साथ ही साथ सीमन्धर भगवान की पूजन की।

सीमंधर भगवन्त गुणातम शुद्ध सही;
श्री सिद्धप्रभु भगवंत गुणातम शुद्ध सही;
तुम ध्यावत मुनिजन सन्त पावत मोक्षमही।

अहो, सिद्ध भगवन्तों! अनन्त मुनिवरों-सन्तजनों! आत्मा को ध्या-ध्याकर यहाँ से सिद्धपद प्राप्त हुए हैं, उन्हें नमस्कार हो। हे प्रभु! मैं भी आपको ध्या-ध्याकर सिद्धपद लेने आपकी सिद्धभूमि में आया हूँ।—ऐसे भाव से गुरुदेव के साथ सिद्ध पूजन करते हुए यात्रियों को आनन्द होता था। जिनेन्द्र पूजन की वास्तविक महिमा यहाँ दृष्टिगोचर होती थी। सिद्धपद के साधकों को सिद्ध भगवन्तों के प्रति कैसे भाव उल्लसित होते हैं, वह यहाँ देखने को मिलता था।

दूसरी पूजा के बाद फिर से सिद्ध भगवान की एक तीसरी पूजा की; फिर चौथी पूजा चौबीस भगवन्तों की की और अन्त में फिर से शिखरजी शाश्वत् तीर्थधाम की पूजा की—

श्री विंशति तीर्थंकर मुख मुनि असंख्यात जहँते शिव पाय।
सम्मेदाचल तीर्थराज में, पूजत तिनको ध्यान लगाय॥

पूजन में एक हजार जितने यात्री उत्साह से भाग ले रहे थे। ऐसा व्यवस्थित और प्रभावशाली कार्यक्रम देखकर लोग आश्चर्य को प्राप्त होते थे; उसमें भी जब खबर पड़ी की इन पूजन करानेवालों में बहुभाग यात्री पहले मूर्ति पूजा को नहीं माननेवाले (स्थानकवासी) थे, वे ही अभी ऐसे भाव से जिनेन्द्र पूजन कर रहे हैं, तब गुरुदेव का ऐसा महान प्रभाव देखकर दिगम्बर जैन समाज को बहुत प्रमोद होता था। पूजन के बाद 'निर्वाणकाण्ड स्तोत्र' बोले थे। इस प्रकार पूज्य श्री कानजीस्वामी सहित हजार जितने यात्रियों ने सम्मेदशिखरजी सिद्धिधाम में महान भक्ति से पूजन की। बीस पन्थी धर्मशाला में भी अनेक जिनमन्दिर हैं, वहाँ भी दर्शन किये।

दोपहर को एक मुनि तथा दूसरे अनेक त्यागी-विद्वान पूज्य गुरुदेव को मिले और सबने उनके प्रति बहुत प्रेम दर्शाया। श्री गणेश दिगम्बर जैन विद्यालय (सागर) का स्वर्णजयन्ती महोत्सव यहाँ पूज्य गुरुदेव की छाया में मनाना निश्चित हुआ था; उस सम्बन्धी आमन्त्रण करने के लिये तथा उसके कार्यक्रम सम्बन्धी विचार-विमर्श करने के लिये दोपहर में श्री पण्डित फूलचन्द्रजी, पण्डित पन्नालालजी, पण्डित खुशालचन्द्रजी तथा पण्डित दयाचन्द्रजी गुरुदेव के पास आये थे। वे कहते थे कि वर्णीजी महाराज आपकी प्रसन्न मुद्रा के बारम्बार गुणगान करते हैं और कहते हैं कि इनकी प्रसन्न मुद्रा मुझे बहुत पसन्द आयी; और मुझे ऐसा लगा कि इस आत्मा के द्वारा समाज का कल्याण होगा। तदुपरान्त उन विद्वान भाईयों ने बहुत लगनपूर्वक प्रवचन तथा पूजन-भक्ति के कार्यक्रमों की प्रशंसा करते हुए कहा कि आपका प्रवचन और पूजन-भक्ति का कार्यक्रम देखकर दो दिन में तो यहाँ का सारा वातावरण पलट गया। ऐसा व्यवस्थित और भावपूर्ण कार्यक्रम और ऐसी भक्ति हमने कहीं नहीं देखी। तब गुरुदेव कहते हैं कि हमारी दो बहिनें हैं, वे ही सब करती हैं; उनकी अनुभूति, उनका सम्यग्दर्शन इत्यादि दूसरा बहुत है, लेकिन यह बात अन्तर की। इस प्रकार दोपहर में गुरुदेव के साथ की बातचीत में सब विद्वान प्रसन्न हुए थे।

दोपहर को 02.30 से 03.30 बजे मधुवन में गुरुदेव का प्रवचन हुआ। प्रवचन के लिये बीसपन्थी कोठी के चौगान में विशाल मण्डप बाँधा गया था। अनेक त्यागी तथा विद्वानों सहित तीन-चार हजार लोगों की विशाल सभा का दृश्य बहुत भव्य था। सिद्धिधाम की छाया में गुरुदेव के प्रवचन भी बहुत भावभीने आते थे। एकदम निकट में विराजमान सिद्धिधाम की ओर बारम्बार दिग्दर्शन करके गुरुदेव कहते—कि देखो, आत्मा के परमार्थ स्वभाव के आश्रय से ऐसा मुक्तिमार्ग साध-साधकर अनन्त जीव इस सम्मेदशिखरजी से मुक्ति को प्राप्त हुए हैं और यहाँ से ऊपर समश्रेणी में विराज रहे हैं। अब आगामी कल तो अपने को भी सिद्धिधाम पर जाना है, वहाँ ऊपर के सिद्ध भगवान दिखायेंगे। गुरुदेव के ऐसे उद्गार सुनकर श्रोताजन मुग्ध बन जाते... और

सिद्धिधाम की यात्रा के लिये तथा सिद्ध भगवान को निहारने के लिये हृदय में उमंग जागृत होती।

शिखरजी धाम की छाया में (मधुवन में) तीन धर्मशाला-कोठी है, एक दिगम्बर तेरापन्थी, दूसरी बीसपन्थी, और श्वेताम्बर; तीनों धर्मशाला बहुत विशाल है। पहले भय था कि इतने बड़े यात्रा संघ को जगह के लिये कठिनाई होगी, परन्तु विशाल धर्मशालाओं में यात्रा संघ के लिये समुचित बन्दोबस्त हो गया था। पूरे यात्रा संघ की भोजन व्यवस्था भी वहीं थी। चारों ओर यात्रा संघ का वातावरण दृष्टिगोचर होता था; बहुत यात्री आगामी कल की यात्रा की तैयारी में लग गये थे, कोई डोली के लिये खोज में था तो कोई नहाने-धोने की तैयारी में थे, कोई अर्घ्य की सामग्री तैयार करते थे, तो कोई भक्ति-पूजा सम्बन्धी तैयारी करते थे। कोई ऊपर जाकर क्या करेंगे और कैसी भावना भायेंगे, इसकी मन में संरचना करते थे—सबको एक ही धुन... कि कल गुरुदेव के साथ अपूर्व आनन्द से इस महान तीर्थधाम की यात्रा करना है। भारत के उत्कृष्ट तीर्थ की भारत के उत्कृष्ट सन्त के साथ की यात्रा का यह सुनहरा अवसर है। कल गुरुदेव के साथ भारत के सर्वोत्कृष्ट सिद्धिधाम सम्मेदशिखरजी की यात्रा करनी है.... और अधिक से अधिक आत्मलाभ का कारण हो, ऐसे उत्तम भाव से वह यात्रा करनी है। गुरुदेव जैसे सन्त के साथ सिद्धिधाम की यात्रा का ऐसा सुनहरा अवसर मिला है, उसे सफल करना है।

— इस प्रकार यात्रा की धुन में देरी तक तैयारी करके यात्री सोये; नींद तो कैसी हो ? तन्द्रा में भी सिद्धिधाम के दृश्य मानस पटल पर तैरते थे। गुरुदेव को भी यात्रा की उमंग कोई अनोखी थी। कैसी उमंग थी ?—कि यात्रा के लिये प्रस्थान का समय प्रातः चार बजे का रखा था, उसके बदले साढ़े बारह बजे तो गुरुदेव जाग गये और डेढ़ बजे तो तैयार होकर धर्मशाला में आकर यात्रियों के उमंग भरे कोलाहल का अवलोकन करते थे। गुरुदेव के पधारने की खबर पड़ते ही यात्री बिजली वेग से तैयार हो गये। पूज्य बहिनश्री-बहिन चम्पाबेन-शान्ताबेन भी बहुत आनन्दपूर्वक तैयार हो गयी थीं। एक तो सम्मेदशिखर जैसे

सिद्धिधाम की यात्रा... और फिर गुरुदेव का साथ... फिर आनन्द की क्या कमी हो!

गुरुदेव को आज सिद्धिधाम को भेंटने की कितनी आतुरता है कि साढ़े बारह बजे से जागकर राह देखते बैठे हैं—अभी यात्रा करने जाएँगे। निर्धारित समय से बहुत पहले तैयार होकर बैठे हैं—जैसे बिछुड़ा हुआ बालक अपनी माता को देखने के पश्चात् धैर्य नहीं रख सकता और अत्यन्त आतुरता से प्रेमपूर्वक उसे भेंटने दौड़ता है... उसी प्रकार सिद्धिधाम को निहारने को बहुत दिन से तरसते गुरुदेव उसकी शीघ्र यात्रा करने के लिये आज बहुत आतुर थे। आहाहा! अनन्त सिद्धों का जो सिद्धिधाम... अनन्त तीर्थंकर जहाँ विचरे... उस सिद्धिधाम में आज विहार करेंगे और बहुत-बहुत भाव से यात्रा करेंगे—ऐसे गुरुदेव सिद्ध भगवन्तों का स्मरण करते थे, तब गुरुदेव के साथ यात्रा के लिये हाथ में लकड़ी लेकर खड़े पैर कटिबद्ध हुए हजारों यात्री गुरुदेव के साथ की यात्रा कैसी महान होगी, उसकी कल्पना में झूलते थे... वहाँ तो... एक साथ हजारों यात्रियों के कोलाहल से चारों ओर का वातावरण गूँज उठा... अत्यन्त आनन्दकारी जयकार के साथ गुरुदेव ने सिद्धिधाम की ओर प्रथम कदम बढ़ाया...

'मं...ग...ल... ती...र्थ...या...त्रा...' का प्रारम्भ हुआ।

सम्मेदशिखर—शाश्वत् सिद्धिधाम

मंगल तीर्थयात्रा

सम्मेदशिखर सोहामणो रळियामणो रे....
ज्यां सिध्या तीर्थंकर वीस तीरथ ते नमुं रे...

(संवत 2013 के फाल्गुन शुक्ल सप्तम, शुक्रवार)

अहा, सिद्धिधाम को भेंटने की कहान गुरुदेव की भावना आज पूरी होती है। गुरुदेव के साथ सम्मेदशिखर शाश्वत् सिद्धिधाम की यात्रा करने की हजारों यात्रियों की भावना आज उल्लासपूर्वक पूर्ण होती है। मंगल तीर्थयात्रा का यह पवित्र प्रसंग जीवन में सिद्धिपन्थ के प्रति पुनीत प्रेरणा सदा दिया करो... हे सिद्ध भगवन्तों! कहान गुरु के साथ की इस सिद्धिधाम की अपूर्व यात्रा के भाव झेलने की मुझे शक्ति प्रदान करो... और मुझे भी सिद्धिपन्थ के प्रति ले चलो।

卐 卐 卐

अनन्त सिद्ध भगवन्तों की जय हो... शाश्वत् सिद्धिधाम की जय हो...
रत्नत्रय साधक-सन्तों की जय हो... सिद्धिधाम के यात्री गुरुदेव की जय हो...
सिद्धिधाम की अपूर्व यात्रा करानेवाले कहान गुरुदेव की जय हो...

ऐसे सैकड़ों-हजारों जय-जयकार सहित और पंच परमेष्ठी के णमोकार मन्त्र के स्मरणसहित आनन्द भरपूर वातावरण में गुरुदेव ने सिद्धिधाम की यात्रा का मंगल प्रारम्भ किया। सिद्धिधाम के प्रति पहला कदम रखते ही अद्‌भुत आनन्द जागृत होता है... रोम-रोम में कोई नयी ही झनझनाहट व्याप्त हो जाती है। जैसे नवीन समकिती चैतन्य को भेंटे और आनन्दित हो, वैसे गुरुदेव इस तीर्थ को भेंटकर आनन्दित हुए। गुरुदेव के पदचिह्नों पर चल रहे

यात्रियों को भी आज अद्भुत हर्ष था। पहाड़ चढ़ने के प्रारम्भ में मानो पराक्रम का कोई नया ही युग प्रारम्भ हुआ था। सिद्धों और साधकों का स्मरण होता था। पंच परमेष्ठी के प्रति प्रणमन होता था, रत्नत्रय की भावनाएँ जागृत होती थीं। ऐसी भावनासहित गुरुदेव के साथ सिद्धों को हृदय में स्थापित करके सिद्धिधाम के प्रति कदम बढ़ाये। अहो, सिद्ध भगवन्तों! मेरे गुरु के साथ आपके पवित्र धाम के प्रति मैंने प्रस्थान किया। कदम-कदम पर प्रभुजी का स्मरण होता है और हृदय में ऐसी झनझनाहट जागृत होती है—मानो कि सिद्ध भगवान को देखकर प्रदेश-प्रदेश से कर्म खिर रहे हों! जीवन का यह पवित्र प्रसंग मुमुक्षु हृदय में उत्कीर्ण हो गया है।

साधकजनों के साथ सिद्धिधाम की यात्रा की शुरुआत करते हुए मानो कि साधक भाव की ही शुरुआत करते हों—ऐसी उमंग होती थी और वास्तव में, गुरुदेव की कृपा से उनके साथ हुई इस यात्रा को मुमुक्षु साधकभाव का ही निमित्त बनायेंगे। मुमुक्षु हृदय में से उपकार के ऐसे नाद उठते हैं कि हे गुरुदेव! आप जैसे सन्तों ने ही सिद्धिधाम का मार्ग स्पष्ट किया है और प्रोत्साहन देकर हमें उस मार्ग में लिया है... जैसे सिद्धिधाम की यात्रा करायी, वैसे आत्मसिद्धि का मार्ग बताकर हमें उस मार्ग में ले जाना।

गुरुदेव के साथ सिद्धिधाम की यात्रा का प्रारम्भ करते हुए बहिनश्री चम्पाबेन तथा बहिनजी शान्ताबेन भी बहुत ही प्रसन्नता से हृदयोर्मि व्यक्त करती थीं कि अहा! बहुत दिनों से पूज्य गुरुदेव के साथ इस तीर्थ की यात्रा करने की भावना हमारे हृदय में थी, वह बस! आज पूर्ण होती है। पहले जब इस शिखरजी धाम को नजरों से निहारा नहीं था और छवि में उसके दर्शन करते थे, तब हृदय में ऐसा हो जाता था कि अहा! भरतक्षेत्र में ऐसा शाश्वत तीर्थ है कि जहाँ अनन्त जिनेन्द्रों के निर्वाण कल्याणक इन्द्रों ने मनाये हैं, अनन्त साधक जहाँ सिद्धपद को प्राप्त हुए हैं, मुनियों और अनन्त तीर्थंकर केवली भगवन्तों के समूह जहाँ विचरे हैं; ऐसा यह पवित्र तीर्थ है, इस जिन्दगी में एक बार अवश्य देखना ही है, उसकी यात्रा करनी ही है, वह

अवसर कब आयेगा? कब शाश्वत् तीर्थधाम में जाएँगे? कब उसे वन्दन करेंगे और कब उसकी पावन रज को मस्तक पर चढ़ायेंगे?

इन्द्र मेरुपर्वत पर जिनेन्द्र भगवन्तों का जन्मकल्याणक मनाने जाते हैं, शाश्वत् नन्दीश्वर द्वीप में भक्ति करने जाते हैं,—वे जैसे शाश्वत् तीर्थ हैं, वैसे भरतक्षेत्र में यह सम्मेदशिखरजी शाश्वत् निर्वाणभूमि का महान तीर्थ है; इस तीर्थ की वन्दन-यात्रा आज गुरुदेव के साथ हो रही होने से भक्तों की भावना फलीभूत होती है; और उल्लासपूर्वक पूज्य बहिनश्री-बहिन पर्वत चढ़ते-चढ़ते गवा रही है कि—

चालो चालो... सहु होंशे हळीमळी आज सिद्धगिरिवर चढीए...
चालो चालो... सहु गुरुवर संगे आज सम्मेदाचल जइये...
चालो चालो... सहु गुरुवर संगे आज जिनवरधाम नीरखीए... चालो०

चालो चालो... श्री जिनेन्द्रदेवना आदर्श आज उरमां भरीए...
चालो चालो... श्री मुनिवरना आदर्श आजे उरमां भरीए...
चालो चालो... ए साधक जीवन आदर्श आजे उरमां भरीए... चालो०

भक्तिभावे होंशे दर्शन आज करीने पावन थइए...
भक्तिभावे तीर्थंकर-चरणरज आज होंशे मस्तक धरीए...
मीठा मीठा स्मरण तीर्थंकर देवना आज होंशे शिखरजी नीरखीए... चालो०

(यह भावभीना पूरा गीत अन्यत्र दिया हुआ है।)

जिस प्रकार मोक्षमार्ग के पथिक को पर्याय-पर्याय में नवीन आनन्द की स्फुरणा होती है, उसी प्रकार सिद्धिधाम में यात्रियों को कदम-कदम पर नवीन हर्ष की ऊर्मियाँ जागृत होती हैं। जैसे-जैसे शाश्वत तीर्थ का आरोहण करते हैं, वैसे-वैसे गुरुदेव सबके हृदय में आनन्द कराते हैं। जरा से चलते ही वनराजी शुरु होता है। पूरा ही सम्मेदशिखर पर्वत अतिशय घना मनोहर वनराजी से व्याप्त है। अहा, मुनिवरों ने जिसके बीच बैठकर आत्मसाधना की ऐसी यह वनराजी बहुत ही शोभ रही है। सुन्दर वनराजी के ये अद्भुत दृश्य! सुन्दर वृक्ष-पत्र और पुष्पों से खिला यह वन-मानों कि मुनिदर्शन की प्रसन्नता

अभी भी अनुभव कर रहा हो, ऐसा प्रफुल्ल लगता है। इस प्रफुल्लित वनराजी के बीच से गुजरते समय हृदय में वनवासी दिगम्बर महामुनि, स्वरूप में झूलनेवाले वे सन्त, जब यहाँ विचरते होंगे, वह दृश्य खड़ा होता है और मुमुक्षु हृदयों में उस दशा की भावना जागृत होती है। जिस प्रकार सुप्रभात में कमल खिले, उसी प्रकार इस वन में ज्ञानियों के हृदय कमल संयम भावना से खिल उठते हैं। तीर्थंकर-मुनिवरों के प्रताप से सम्मेदशिखरजी पहाड़ तो शोभित और पूजित है परन्तु इसके ऊपर का एक-एक वृक्ष, उसके पुष्प और पत्ते भी कैसे सुन्दर शोभायमान हो रहे हैं! और यहाँ विचरनेवाले सन्तों के हृदय में विकसित रत्नत्रय परिणति की तो क्या बात! अहो, गहन वन में गुप्तरूप से रत्नत्रय के अतीन्द्रिय आनन्द का स्वाद लेनेवाले वे सन्त! इस गहन वन में से गुजरते हुए धर्मात्माओं को भावना होती है—मानों कि यहीं रहें और मुनि तथा आर्यिका हो जाएँ, फिर किसी के नजर में भी न पड़ें।

कहान गुरु के साथ दो हजार से अधिक यात्रियों का संघ सम्मेदशिखरजी सिद्धिधाम के ऊपर चढ़ रहा है, गगन में ताराओंरूपी आँखें मलकाता हुआ आकाश इस यात्रा महोत्सव को निहार रहा है। तीर्थंकरों और मुनिवरों के स्मरण कदम-कदम पर ताजा होते जाते हैं... और हृदय इस भूमि के प्रति नम्रीभूत हो जाता है कि वाह! धन्य यह भूमि! इस भूमि में मध्यरात्रि में भी ज्ञानियों के सम्यक् किरणों से सुप्रभात खिल रहा है। यात्रा की धुन में रात है या दिन—यह विस्मृत हो जाता है और दो बजे धुन बोलते-बोलते यात्री पहाड़ चढ़ रहे हैं।—

बोलो सम्मेदशिखर की जय... बोलो निर्वाणभूमि की जय...
बोलो अनन्त तीर्थंकरकी जय... बोलो जय जय जय...
बोलो गणधरों की जय... बोलो मुनिवरों की जय...
बोलो कहानगुरु की जय... बोलो जय जय जय...

अहा, इस यात्रा संघ में गुरुदेव के भावों की क्या बात! गुरुदेव अपूर्व भाव से सिद्धिधाम को निहार रहे हैं और यात्रियों में बालकवत् भक्ति और

उमंग देखकर स्वयं भी प्रसन्न होते हैं; बारम्बार कहते हैं कि अपने तो यह पहली-पहली यात्रा है। सिद्धिधाम का और सिद्धिपद साधक सन्तों का यह मिलन कोई अनोखा प्रेरणादायी है। जैसे सिद्धस्वरूप के साक्षात्कार से साधक परम आनन्दित होता है, उसी प्रकार यहाँ सिद्धिधाम के साक्षात्कार से साधकों का हृदय परम आह्लादित होता है। जैसे गुरुदेव का अन्तर भूत-भावि के इतिहास से गम्भीर है, उसी प्रकार इस पर्वतराज का हृदय भी अनन्त तीर्थंकर-सन्तों की आत्मसाधना के इतिहास से गम्भीर है। एक शाश्वत् स्थिर महान तीर्थ, और एक चलता-फिरता तीर्थ, दोनों तीर्थों के प्रथम मिलन का दृश्य अद्‌भुत है। जिस प्रकार दो महान पुरुषों के मिलन को अन्य जन उत्सुकता से निहारते हैं, उसी प्रकार शिखरराज और गुरुराज के मधुर मिलन का दृश्य यात्री उत्सुकता से निहार रहे हैं। पर्वतराज मानो कि वनराजीरूपी चँवर द्वारा मधुर हवा डालकर आतिथ्य कर रहा है। गुरुदेव के साथ सिद्धिधाम में पहला कदम रखते ही मुमुक्षु हृदयों के तार झनझना उठे कि धन्य आज का अवसर! हे सिद्ध भगवन्तों! मेरे गुरु के साथ आपके निकट आता हूँ। आपके पदचिह्नों पर आता हूँ, आपके पवित्र मार्ग में आता हूँ। तीर्थयात्रा में जहाँ जाएँ वहाँ ऐसा ही होता है कि मानो भगवान के घर में ही आये हैं। भगवान के घर में ही उतरे हैं और भगवान के ही मेहमान बने हैं। अहो! साधकों ने भगवान को साथ ही रखा है; जीवन में भगवान और गुरु अपने साथ ही हैं। शौरीपुर में नेमिनाथ भगवान के घर में उतरे थे, तो गुणावा में गौतम प्रभु के घर में मेहमान हुए थे। अयोध्या में आदिनाथ प्रभु के यहाँ और पावापुरी में महावीरप्रभु के यहाँ— और यह सम्मेदशिखरजी में तो अनन्त तीर्थंकर और अनन्त सिद्ध भगवन्तों के मेहमान हुए हैं। बस, मानो भगवान के देश में अनन्त सिद्ध भगवन्तों की बस्ती के बीच गुरुदेव के साथ विचर रहे हैं—ऐसी उत्कट भावना से यात्री गुरुदेव के पदचिह्नों पर 'मंगल तीर्थयात्रा' कर रहे हैं। जिस प्रकार जीवन की किसी विरल क्षण में हुआ चैतन्यवेदन धर्मात्मा के जीवन में कभी विस्मृत नहीं होता और जब-जब याद करे, तब-तब उन्हें प्रमोदित करता है; उसी प्रकार जीवन में प्राप्त हुआ यह मंगलयात्रा का विरल प्रसंग मुमुक्षु जीवन में कभी विस्मृत

नहीं होगा और जब-जब याद करेंगे, तब-तब उसे प्रमुदित करेगा।

अभी पूरे पहाड़ की यात्रा तो बाकी है परन्तु पहाड़ पर पैर रखते ही कैसे आनन्द से हृदय उछलने लगता है! जैसे सिद्धि प्राप्त करने से पहले भी साधक के अन्तर में आनन्द की स्फुरणा हो जाती है, उसी प्रकार सिद्धिधाम की यात्रा करने से पहले भी उस धाम में विचरते हुए यात्रियों को हर्ष की ऊर्मियाँ जागृत होती हैं। साक्षात् पूरे पर्वत की यात्रा के आनन्द की तो क्या बात! परन्तु नजदीक से पहले ही कदम पर उसके प्रथम स्पर्श से जो अद्‌भुत आह्लाद जागृत होता है, वह भी कभी विस्मृत न हो, ऐसा है। जैसे चिदानन्द भगवान के साक्षात् अनुभव के आनन्द की तो क्या बात! परन्तु विशिष्ट बहुमान से उसकी स्पर्शना होने पर भी जो कोई अद्‌भुत आह्लाद जागृत होता है, वह जीवन भर विस्मृत नहीं होता।

मंगल तीर्थयात्रा की यह पुस्तक प्रकाशन करने से पहले इसका कितना ही लेखन गुरुदेव को वांचन के लिये दिया था, उसे पढ़कर गुरुदेव गद्‌गद् हो गये थे और कहा था कि '**अहा! यात्रा तो अलौकिक हुई; पढ़ते हुए सब सामने तादृश खड़ा होता है और कितनी ही बार आँसू बह जाते हैं। मुम्बई से निकले, तब से वापस आये, वहाँ तक के परिणाम!! अहो, वह उल्लास अलग था। साक्षात् दर्शन जैसा उल्लास था... उसके स्मरण से आज आँसू आ जाते हैं।**' गुरुदेव के इन उद्‌गारों से ख्याल आयेगा कि उन्होंने कितने भाव से तीर्थयात्रा की होगी!

गुरुदेव के साथ ऐसी महान तीर्थयात्रा के प्रसंग में भक्तों का अन्तरंग भी आनन्द से प्रफुल्लित हो रहा है। अहा! जीवन की एक मधुर अभिलाषा आज पूरी हो रही है। आनन्द भरे जय-जय घोष से पर्वत गाज रहा है; पर्वत भी आनन्द की प्रतिध्वनि करता है। गुरुदेव के साथ हजार-हजार यात्रियों ने सिद्धों को हृदय में स्थापित करके सिद्धिधाम के प्रति कदम बढ़ाये हैं। अहो सिद्धभगवन्तों! आपके पवित्र धाम की यात्रा का महोत्सव माँडा है, उसमें आप हमारे हृदय के आँगन में पधारो। गुरु प्रताप से यह धन्य अवसर आया

है। कदम-कदम पर गुरु का उपकार विस्मृत नहीं होता; हे गुरुदेव! इन बालकों को सिद्धिधाम की यात्रा में साथ रखा, वैसे आत्मसिद्धि का मार्ग बताकर सिद्धिपन्थ में भी साथ ही रखो।

— इस प्रकार बहुत ही भक्ति से, बहुत ही भाव से, हृदय के उल्लास से, आत्मा के उल्लास से यात्रा में आगे बढ़ रहे हैं। शिखरजी धाम की छटा और घटा कोई निराली है। घनघोर घटा के बीच चलते हुए नहीं दिखता ऊपर आकाश और नहीं दिखती नीचे धरती—बस! सन्मुख एक सिद्ध भगवान ही है; भगवान ही मार्गदर्शक हैं और भगवान ही ध्येयरूप हैं। कभी-कभी झाड़ी को भेदकर ऊपर आकाश में एकाध चमचमाहट होता तारा दिखायी देता है, तब मानो ऊपर विराजमान सिद्ध प्रभुजी दर्शन देते हों—ऐसा लगता है। यहाँ दुनिया नहीं दिखायी देती। संसार याद नहीं आता; बस, हृदय में एक प्रिय सिद्ध भगवान ही विराजते हैं,—कब प्रभुजी को भेंटेंगे! कब सिद्ध होंगे! सन्तों की आराधना के इस धाम में आराधक सन्तों के साथ विचरते हुए आराधना के लिये भावनाएँ सेवन की जाती है। वास्तव में आराधना के लिये जीवन, वही वास्तविक जीवन है।

—इस प्रकार बहुत ही हर्षोल्लासपूर्वक गुरुदेव के साथ सम्मेदशिखर पर्वत पर आरोहण हो रहा है। चलते-चलते थोड़े दूर जाने पर जोरदार आवाज सुनायी देने लगी; पहले तो ट्रेन की आवाज जैसी खलबलाहट लगी परन्तु फिर थोड़ी देर में खबर पड़ी कि यह तो पानी के झरने की खलबल आवाज है। तुरन्त गान्धर्व नाला आया, उसमें झरझर पानी बहता है। शान्त वातावरण में वह झरना बहुत रमणीय लगता है। जिस प्रकार मुनिवरों के हृदय की गहराई में अपूर्व शान्तरस भरा होता है, उसी प्रकार मुनिसम अचल ऐसा यह गिरिराज भी अपने अन्तर में शान्तरस से भरपूर है और उसमें से यह झरना बह रहा है। इस प्रकार झरझर झरता झरना कलरव करता हुआ मानो कि भगवान का पवित्र इतिहास ही सुना रहा हो और सन्तों के गुणगान गा रहा हो—ऐसा लगता है।

वहाँ से आगे चलते हुए लगभग साढ़े तीन मील सीतल नाला (सीता

नाला) आता है, वह भी भगवान के गुणों को याद करके—कि वापिस हमारे जैसे साधर्मी भक्तजनों के आनन्द को देख-देखकर—आनन्द से खलबलाहट करता था। अनेक यात्रियों ने भी उसके आनन्द में साथ देने के लिये अपने हाथ-पैर उसमें डूबो दिये और अनेक यात्री इस झरने के पानी में अर्घ्य धोते थे।

यद्यपि यह शाश्वत तीर्थराज स्वभाव से ही सुशोभित है, उसमें भी आज तो गुरुदेवसहित भक्तिमान यात्रियों से छा गयी पर्वत की ऊष्मा कोई अनोखी है, पूरा पर्वत जीवन्त-चेतनवन्त लगता है; आगे-पीछे दूर-दूर तक यात्रियों के हर्षनाद और जयनाद सुनायी दे रहे हैं। एक ओर पूज्य बहिनश्री-बहिन गवाती है और ब्रह्मचारिणी बहिनें इत्यादि का समूह गा रहे है कि—'आज म्हारे सोना समो रे सूरज ऊगीयो रे... म्हारे यात्रा थाये गुरुजीनी साथ मां रे....' तो दूसरी ओर पूर्वाकाश में उदित हो रहा सप्तमी का सूर्य सुनहरी किरणों द्वारा गगन चौक में केसरी रंग की अत्यन्त सुन्दर रंगोली पूर कर यात्रियों का स्वागत कर रहा है। सिद्धिधाम की यात्रा में कदम-कदम पर यात्रियों का आनन्द बढ़ता जाता है। जैसे मोक्ष के साधक का आनन्द पर्याय-पर्याय में बढ़ता जाता है, उसी प्रकार मोक्षधाम के यात्री कदम-कदम पर आनन्दित होते हैं। आनन्द और भक्ति की प्रबलता के कारण भूत-वर्तमान-भावि का भेद विस्मृत हो जाता है अर्थात् भूतकाल में यहाँ विचरे हुए तीर्थंकरों और गणधरादि सन्त मानो अभी ही यहाँ साक्षात् विचरते हों, ऐसे उत्साह से तीर्थभूमि की यात्रा होती है।

सम्मेदशिखर के मार्ग की पगडण्डी सुन्दर है। दोनों ओर घनघोर घटा की शान्त छाया के बीच रमणीय पगडण्डी चली जा रही है। पर्वत की चढ़ाई छह मील जितनी लम्बी होने पर भी कुदरत के अति रम्य और उपशान्त वातावरण के कारण लम्बा चलने पर भी थकान नहीं लगती। तीर्थ भक्ति का जोर यात्रियों को ऊपर ले जाता है। मार्ग के आसपास ऊँचे-नीचे विविध वृक्ष पंच रंगी पुष्पों द्वारा पथिक का अभिनन्दन कर रहे हैं। विकट पर्वत की रमणीय पगडण्डी मार्ग को सुलभ बनाती है। दोनों ओर विभावों जैसे ऊँची-नीची टेकरियों के बीच निरन्तर कोमल पगडण्डी चली जा रही है—जैसे

मोक्षमार्ग के पथिक को बीच में बाह्य ज्ञेयरूप विविध विभावों होने पर भी उसकी दृष्टि का पन्थ तो सुन्दर-निष्टकंटक निरन्तर चला जाता है। अहा, घनी झाड़ियों से आच्छादित पर्वत की गम्भीरता... वह तो मानो मुनिवरों की परिणति की गम्भीरता! ऐसे गम्भीर पर्वत की घनी झाड़ियों के बीच रात्रि के तीन बजे विचरते हुए भी भय नहीं होता परन्तु आनन्द होता है। मुनि तो हृदय में साथ ही हैं, कुदरत भी मानो कि इस सिद्धिधाम के गुणगान करती हो, वैसे घनी झाड़ियों के बीच से प्रवाहित होते पवन के सुरसुराहट द्वारा सुमधुर संगीत रचता है। अनन्त भगवन्तों के चरण की संगिनी होने से यह भूमि गौरववन्ती दृष्टिगोचर होती है और भगवान के भक्तों को देखकर हँसती हुई प्रभु के पावन गुणगान कर रही है। इस भूमि के रजकण-रजकण मानो कि रत्नत्रय का प्रेरणाकारी सन्देश सुना रहे हैं। झरनों के मीठे कलरव द्वारा पूरा पर्वत मानो कि तीर्थंकरों का गुणगान गा रहा है और भक्तों को कहता है—हे भक्तजनों! अपने भगवान यहाँ मेरे सिर पर विराजते थे; भगवन्तों ने यहीं समश्रेणी मांडी थी, उसका मैं साक्षी हूँ—ऐसे-ऐसे स्मरणों से मुमुक्षु यात्रियों के हृदय में ऐसा लगता था कि वाह, धन्य यह भूमि! यह पूरा पर्वत महान तीर्थ है। इसके रजकण-रजकण पूज्य हैं। तीर्थ के प्रति जैसा वास्तविक पूज्य भाव ज्ञानी को आयेगा, वैसा अज्ञानी को नहीं आयेगा, क्योंकि ज्ञानी ने रत्नत्रयरूप भाव तीर्थ को भी जाना है।—इस कारण से ज्ञानियों के साथ की तीर्थयात्रा की बलिहारी है। एक तो ज्ञानी का आत्मा स्वयं तीर्थ है और फिर उनके साथ भारत के सर्वोत्कृष्ट तीर्थधाम की यात्रा होती है, ऐसी इस मंगल तीर्थयात्रा के आनन्द की क्या बात!!

'सम्मेदशिखर!' जिसके दर्शन करने से अनन्त सिद्ध भगवन्तों का स्मरण होता है... और सिद्धपद को साधनेवाले तीर्थंकरों तथा सन्तों का समूह स्मृति समक्ष तैरता हुआ अपने को मोक्षमार्ग की प्रेरणा जागृत करता है... ऐसे इस सिद्धिधाम की यात्रा, वह मुमुक्षु जीवन का एक आनन्द प्रसंग है। रत्नत्रय तीर्थ के प्रवर्तक तीर्थंकरों और उसके साधनेवाले सन्त इस भूमि पर विचरे हैं; उन तीर्थस्वरूप सन्तों के पवित्र चरणों के प्रताप से इस भूमि का रजकण-

रजकण पावन तीर्थरूप से जगत में पूज्य बना है। ऐसी भारत की इस शाश्वत् तीर्थभूमि की मंगल यात्रा करने के लिये तरस रहे भक्तों के हृदय आज तृप्त होते थे—अहा, अकेली इस चौबीसी में ही बीस तीर्थंकर और 1648,000,12317173475 (सोलह सौ अढ़तालीस कोड़ाकोड़ी उपरान्त बारह अरब इकतीस करोड़ इकहत्तर लाख, तीहत्तर हजार चार सौ पिचहत्तर) मुनिवर यहाँ से मोक्ष प्राप्त हुए हैं। ऐसी मोक्षभूमि में गुरुदेव के साथ यात्रा का आज धन्य अवसर है, सिद्धिधाम मानो कि आवाज दे-देकर सन्त भक्तों को बुला रहा है। प्रकृति का सौन्दर्य आनन्द का उत्सव मना रहा है। आकाश में से मानो कि भूमण्डल पर कल्याण बरस रहा है। भक्तजनों के हृदय में हर्ष का सागर उल्लसित हो रहा है और आनन्द मंगल गाया जा रहा है।

आनन्द मंगल आज हमारे आनन्द मंगल आज जी...
गुरुदेव साथ यात्रा करतां आनन्दनो नहि पार जी...
शाश्वत तीर्थनी यात्रा करतां आतम उल्लसी जाय जी...
सम्मेदशिखरने नजरे नीहाळी गुरुदेव उल्लसी जाय जी...
सिद्धोनां धाम नजरे नीहाळी गुरुदेव उल्लसी जाय जी...
मुनिवरधाममां गुरुवर विचरे आनन्दनो नहि पार जी...
आनंद मंगल आज हमारे आनन्द मंगल आज जी...

आज फाल्गुन शुक्ल सप्तमी : आज का दिन अनेक प्रकार से मंगलरूप है; नन्दीश्वर अष्टाह्निका का शाश्वत पर्व भी आज ही शुरु हो रहा है। साथ ही साथ चन्द्रप्रभ भगवान के मोक्ष कल्याणक का मंगल दिवस भी आज ही है। इस प्रकार मंगल दिवस, मंगल आत्माओं के साथ, मंगल भावनाओं पूर्वक, मंगल तीर्थ की यात्रा हो रही है। पहले टूंक के दर्शन की उत्कण्ठा से यात्री उत्साह-उत्साह से पर्वत चढ़ रहे हैं... जैसे अपना परमइष्ट परम प्रिय ऐसा सिद्धपद साधते-साधते साधक को थकान नहीं लगती, अपितु आनन्द बढ़ता जाता है, उसी प्रकार सिद्धिधाम की ओर जाने के लिये पहाड़ चढ़ते-चढ़ते यात्रियों को थकान नहीं लगती परन्तु उल्टा उत्साह बढ़ता जाता है। लगभग

साढ़े पाँच बजे थोड़ा-थोड़ा प्रकाश हुआ। अभी पहली टूंक आने में थोड़ी देर थी। वहाँ दूर-दूर एक टूंक के दर्शन हुए। इसे देखते ही गुरुदेव ने कहा— **देखो, यह... टूंक दिखती है!** टूंक के दर्शन होने पर यात्री हर्षोल्लास में आ गये। जैसे चन्द्र को देखकर समुद्र उल्लसित होता है, उसी प्रकार तीर्थधाम की टूंक के दर्शन से उसे भेंटने के लिये भक्त हृदय में हर्ष का समुद्र उल्लसित होने लगा। दूर-दूर से दिखायी देनेवाली वह सबसे ऊँची 'स्वर्णभद्र' टूंक थी। पारसनाथ की उस सबसे ऊँची टूंक के दर्शन होने पर सबने झुक-झुककर पूरे शिखरजी तीर्थ को भक्ति से वन्दन किया। और जयघोषपूर्वक पहली टूंक में पहुँचने के लिये शीघ्रता से आरोहण किया। जिस प्रकार दर्शनसहित के पुरुषार्थ में अलग ही जोर होता है। उसी प्रकार टूंक के दर्शन के बाद यात्रियों के आरोहण में अलग ही जोर आया... और थोड़ी ही देर में पहली टूंक पर आ पहुँचे।

★ ★ 卐 ★ ★

पहली टूंक कुन्थुनाथ भगवान की है; इसका नाम है ज्ञानधर टूंक। वाह! नाम भी कैसा मंगल है! ज्ञानधारी सन्तों ने जहाँ ज्ञायकभाव की उपासना की, ऐसी इस ज्ञानधर टूंक को देखकर सब भक्ति से नम्रीभूत हो गये। उसके बगल में ही दूसरी टूंक है, उसे 'गणधर टूंक' कहा जाता है; उसमें पारसनाथ प्रभु के दस गणधरों के तथा गौतम गणधर के तथा चौबीस तीर्थंकरों के चरण पादुका स्थापित है। सम्मेदशिखर पर्वत के ऊपर कुल पच्चीस टूंक है, उन सभी टूंकों में भगवान के चरण पादुका ही स्थापित है, पर्वत पर कहीं जिनबिम्ब नहीं है। प्रत्येक टूंक का दर्शन वीतरागता प्रेरक है—मानो उपशान्त भाव की छाया से आच्छादित हो, ऐसी टूंक में आने पर अहो! मानो सिद्धों की बस्ती में आये। नीचे देखो तो अरिहन्त और ऊपर देखो तो सिद्ध बस, तीसरा कुछ दिखता नहीं। भगवान और भगवान के गणधर अभी ही यहाँ से मोक्ष पधारे और उनके ताजा-ताजा चरण मानो कि अपने को मोक्ष का पन्थ बता रहे हों! ऊपर नजर करने पर मानो कि सिद्ध भगवन्त बुला रहे हों! ऐसा लगता है।

इस टूंक पर एक विश्रामधाम है। पूज्य गुरुदेव अनेक-अनेक यात्रियों

के साथ पहली टूंक पर आ पहुँचे, परन्तु अभी पीछे भी यात्रियों की विशाल हारमाला चली आ रही थी। इसलिए पूजनभक्ति के कार्यक्रम में वे सब यात्री पहुँच जाएँ—इसलिए गुरुदेव विश्रामस्थान में थोड़ी देर बैठ गये। सैकड़ों यात्रियों की बहुत ही भीड़ से विश्रामस्थान भर गया; उसमें बैठे-बैठे गुरुदेव ने इस यात्रा सम्बन्धी बहुत ही प्रमोद व्यक्त करते हुए कहा: **आज यह महामंगल प्रसंग है। द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव सब मंगल है—**

卐 यहाँ से अनन्त जीव मोक्ष प्राप्त हुए, इसलिए यह सम्मेदशिखर भूमि मंगल है।

卐 आज भगवान के मोक्ष का दिन है, इसलिए यह काल भी मंगल है।

卐 आत्मद्रव्य अल्प काल में मोक्ष पानेवाला है, वह द्रव्य मंगल है; तीर्थंकरादि के आत्मा को त्रिकाल मंगल द्रव्य कहा है।

卐 आज का भाव भी मंगल है। इस प्रकार अपने सब मंगल है।

गुरुदेव के श्रीमुख से शाश्वत् तीर्थराज की यात्रा के प्रारम्भ में इस प्रकार मांगलिक सुनते हुए सबको बहुत आनन्द प्रमोद हुआ। तदुपरान्त गुरुदेव ने यहाँ चौबीस तीर्थंकरों सम्बन्धी भी सुन्दर अर्थ किये थे। तत्पश्चात् पहली टूंक पर हजारों यात्रियों की भीड़ के बीच पूजन भक्ति शुरु हुए। —

कुंथुनाथ जिनराज का कूट ज्ञानधर जेह,
मन वच तन कर पूजहुं शिखरसम्मेद यजेह (1)

ॐ ह्रीं श्री सम्मेदाचल सिद्धक्षेत्रे ज्ञानधरकूट ऊपर श्री कुन्थुनाथ जिनेन्द्रादि 96 क्रोडाक्रोड, छियानवे करोड, बत्तीस लाख, छियानवे हजार सात सौ बयालीस मुनिराज सिद्धपद प्राप्त हुए, उनको मन-वचन-काया से बारम्बार नमस्कार हो.... गुरुदेव के साथ यात्रा महोत्सव में उनके चरणकमल पूजनार्थे महाअर्घ्यं निर्वापमीति.... स्वाहा...

जैसे ही पूज्य बहिनश्री-बहिन स्वाहा का मन्त्र बोले कि तुरन्त ही कुन्थुनाथ प्रभु के चरण के पास अर्घ्य का विशाल ढ़ेर हो गया; गुरुदेव ने भी

बहुत भाव से स्वर्णरकाबी में अर्घ्य लेकर प्रभु चरणों में चढ़ाया और बारम्बार भगवान के चरणों का स्पर्शन किया। इस ज्ञानधर टूंक से वैशाख शुक्ल एकम् को कुन्थुनाथ भगवान मोक्ष प्राप्त हुए हैं; कुल 9600000963296742 मुनिवर इस टूंक से इस चौबीसी में मुक्ति प्राप्त हुए हैं। ऐसा मुक्तिधाम निहारते हुए गुरुदेव बहुत प्रमोदित हुए, भक्ति से उनका पूरा शरीर प्रभु चरणों में झुक गया। उन्होंने भावपूर्वक सम्पूर्ण शिखरजी धाम का अवलोकन किया। एक ओर सबसे ऊँची पार्श्वप्रभु की टूंक (स्वर्णभद्र टूंक) दिखायी देती है, तो दूसरी ओर चन्द्रप्रभ की टूंक (ललितकूट) दिखायी देती है। इन मुख्य टूंकों के उपरान्त दूसरी भी अनेक टूंकें दिखायी देती हैं। जगह-जगह मुक्तिधाम देखकर भव्यात्माओं आनन्दित हैं। चारों ओर मोक्षसाधक धर्मात्माओं से घिरे हुए तीर्थंकरदेव समवसरण में जैसे शोभित होते हैं, वैसा यह शिखरजी धाम चारों ओर मोक्ष की साधना के स्थान से शोभित हो रहा है; इसका कण-कण सन्तों की आत्मसाधना का पुनीत सन्देश सुना रहा है और मुमुक्षु यात्रियों के हृदय में उस आत्मसाधना की भावनाएँ जागृत करता है। पहली टूंक पर अर्घ्य द्वारा पूजन करके फिर पूरे सम्मेदशिखर तीर्थधाम का भी भक्ति से अर्घ्य चढ़ाकर पूजन किया। पूजन के बाद भक्ति हुई, तीर्थभक्ति के खास स्तवन पूज्य बहिनश्री-बहिन ने बनाये हुए, उनमें से एक स्तवन पूज्य गुरुदेव ने गवाया:—

(चाल : ते गुरु मेरे मन बसो - यह राग)

शिखर सम्मेद सोहामणा (सुहावना) तीरथराज सुखदाय,
ऊँचों गगन विहारी है... अद्भुत रमणीक धाम... शिखर (1)

शिखर सम्मेद वनवृक्षों की, शोभा वरणी न जाय,
शाश्वत तीरथधाम है... नित्य अनादि अनंत... शिखर (2)

अजीत-सम्भव-पद्मजिणंदजी, आ युगना (चौबीसीना) जिन बीस,
मुक्ति भया शिखरसम्मेद से धन्य धन्य आ धाम... शिखर (3)

अनन्त तीर्थंकर आ भूमिमां, सिद्ध हुआ भगवान,
अनन्त होशे भविष्यमां... शाश्वत तीर्थ महान... शिखर (4)

अणु अणु शिखर का पावन भया, (जिनवर) प्रभुजी पधार्या अनन्त,
पुनित चरण भगवंतना पावन हुआ तीरथराज... शिखर (5)
कै चारणमुनि आय है......., जिन वन्दन काज,
ध्यान धरे शुभ धाम में....., पावे शिवपुरराज... शिखर (6)
कै श्रुतमुनि आवते (कै गणधरमुनि आवते) ध्यान करन को काज,
केवल पामी सिद्धि वरे... ऐसे हुए अनन्त... शिखर (7)
प्रत्यक्ष जिनवर दर्शन करे, प्रत्यक्ष सुने जिनवैन,
प्रत्यक्ष कल्याणीक निरखे, धन्य धन्य ते जीव.. शिखर (8)
इत्यादिक महिमा घणी, केम करी वरणाय,
सहस्त्र जीभ जो किजिये, तो हु पार न पमाय..... शिखर (9)
अनन्त चौबीस जिनेश्वरा, गणधर मुनि सुरनर वृन्द,
पुनीत प्रसंग तीर्थराज पर, ऐना स्मरणो अहीं थाय... शिखर (10)
धन्य भूमि धन्य धूलने, धन्य हुआ अम भाग्य,
गुरुवर साथे दर्शन थया, नीरख्या पवित्र धाम.... शिखर (11)
साक्षात् जिनवर दर्शन थया, मेरु जैसा देख्या धाम,
साक्षात् सिद्धने निरख्या, अेवो आनंद अपार.... शिखर (12)
सम्मेदशिखरनी सेवा करे, देवगणोना रे वृन्द,
पावन पावन धाम है, शिखर मंगलकार... शिखर (13)
धन्य धन्य दिन आजनो, धन्य धन्य प्रसंग,
आजे शिखर नीहाळीया, शरणे रखो नाथ.... शिखर (14)
मोंधेरो गुरुजी साथजी मळयो, शरणे राखो नाथ... शिखर (15)

असंख्य प्रदेशों में सिद्ध भक्ति के परम आह्लाद से चैतन्य के तार झनझनाकर भक्ति गवाते-गवाते हुए बीच में गुरुदेव ने कहा कि — **देखो, यहाँ से अनन्त तीर्थंकर और मुनिवर मोक्ष पधारे हैं और अनन्त सिद्ध भगवन्त अभी ऊपर विराज रहे हैं... ऊपर पंक्ति में (समश्रेणी में) अनन्त सिद्ध**

भगवन्त विराजते हैं, उनका यहाँ स्मरण होता है। —ऐसे उद्‌गारपूर्वक गुरुदेव ने सम्मेदशिखरजी की पहली टूंक पर स्तवन गवाया। शाश्वत् तीर्थधाम की यात्रा के प्रारम्भ में ही गुरुदेव के हर्ष भरे उद्‌गार और भावभीनी भक्ति सुनकर सभी यात्री आनन्दित हुए। गुरुदेव की भक्ति के बाद पूज्य बहिनश्री-बहिन ने भी बहुत उल्लास भाव से शाश्वत तीर्थाधिराज की भक्ति गवायी।

अहो आज शाश्वत तीर्थाधिराजने रे, देखी देखी हैडुं हरखाय... आज०
अहो दर्शन थया जिनधामनां रे, श्री शाश्वत जिनना धाम... आज०
अहो दर्शन थया सिद्धिधामनां रे, अनादि अनन्त शाश्वत धाम... आज०
साक्षात् तीर्थंकरो आ भूमिमां रे, पधार्या अनंता देव... आज०
सिद्धस्वरूप साध्युं आ भूमिमां रे, पाम्या अनंता पूर्णानन्द... आज०
शाश्वत अकृत्रिम आ तीर्थ छे रे। अेनी महिमा तणो नहि पार... आज०
अेना रजकण रजकण पावन थया रे, पुनित चरणो थकी पवित्र... आज०
पुनित पगला थया तीर्थनाथना रे, अनन्त जिनेन्द्रनां सिद्धिधाम... आज०
अेवुं दृश्य अद्‌भुत (अहो) आ भूमिमां रे, अेना स्मरणो अंतर ऊभराय आज०
जिनभूमि भेटंता जिन जाणे भेटीया रे, जाणे देख्या विदेहनां धाम... आज०
सम्मेदशिखरधाम ने देखीया रे, जाणे देख्या मेरुनां धाम... आज०
सिद्धप्रभुनां सिद्धिधाम देखीयां रे, जाणे नजरे नीहाळया आ धाम... आज०
धन्य भूमि अने धन्य धूळ छे रे, पुनित पगला थकी पवित्र... आज०
अहो, अपूर्व यात्रा आज थाय छे रे, अम अंतरमां आनंद ऊभराय... आज०
अहो, अपूर्व यात्रा गुरुजी साथ मां रे, अम अंतरमां आनन्द ऊभराय... आज०

भक्ति के बाद गुरुदेव कहते हैं—**यह कुन्थुनाथ प्रभु की टूंक है। 'कुन्थु' अर्थात् पृथ्वी में स्थिर; अपने ज्ञान-आनन्द इत्यादि अनन्त गुणोंरूप जो स्थिर चैतन्य भूमि-चैतन्य पृथ्वी, उसमें भगवान स्थिर हैं। भगवान निज चैतन्यधाम में स्थिर हुए, उसका यह स्थान है। तेरहवें गुणस्थान में भगवान यहाँ विराजते थे; पश्चात् चौदहवाँ अयोगी गुणस्थान और सिद्धपद भी भगवान यहीं प्राप्त हुए थे। इस प्रकार तो यहाँ की कंकरी-कंकरी से अनन्त जीव मोक्ष गये हैं—पूरा ढाई द्वीप, वह सिद्धक्षेत्र है, परन्तु नजदीक के काल**

के हिसाब से वर्तमान चौबीसी में श्री कुन्थुनाथ तीर्थंकर तथा अनेक क्रोडाक्रोड मुनिवर यहाँ से मोक्ष प्राप्त हुए हैं। मोक्षपद जगत में सबसे श्रेष्ठ है, इसलिए सिद्ध भगवन्त लोक में सबसे श्रेष्ठ-ऊँचे स्थान में विराजते हैं। —इस प्रकार कहकर गुरुदेव ने ऊपर हाथ जोड़कर सिद्ध भगवन्तों को नमस्कार किया। इस प्रकार बहुत-बहुत प्रकार से गुरुदेव सिद्ध भगवन्तों की महिमा करते थे। 'अहो! ऐसे सिद्ध भगवन्तों को हमारे हृदय में स्थापित करके उनका ध्यान करेंगे।'—ऐसी प्रेरणा यात्रियों के हृदय में जागृत होती थी। हजारों यात्रियों से भरा हुआ तीर्थधाम कदम-कदम पर जय-जयकार से गाज रहा था। मार्ग यात्रियों से आच्छादित हो गया था। पर्वत की शोभा आज अनोखी थी। भक्ति के भावों का रंग आज कोई अलग ही था।

यह कुन्थुनाथ प्रभु की टूंक सम्मेदाचल के लगभग मध्य में है, इसके पूर्व की ओर लगभग 14 टूंक हैं और पश्चिम की ओर लगभग 10 टूंक हैं। यहाँ से एक ओर दूर-दूर चन्द्रप्रभ की ललित टूंक के दर्शन होते हैं और दूसरी ओर के छोर पर दूर-दूर ऊँची पार्श्वनाथ प्रभु की स्वर्णभद्र टूंक के दर्शन होते हैं। इन दो महान टूंकों के बीच में सम्मेदाचल पर खड़े हुए यात्री अपने इष्ट ध्येय को नजर-समक्ष देखकर कृतार्थता अनुभव करते हैं। इन दो महान टूंकों के उपरान्त आसपास की दूसरी अनेक टूंकों के भी यहाँ से दर्शन होते हैं। चारों ओर हरी भरी झाड़ियों से दर्शक के हृदय को स्थिर करते पर्वतराज के बीच में कन्दोरा जैसी छोटी पगडण्डी से शोभित हो रहा है। 4480 फीट उन्नत पर्वतराज की ऐसी महानता देखकर इसके गौरव के समक्ष यात्रियों को अपनी लघुता का भान होता है कि अरे, मुझे तो अभी बहुत साधना करना बाकी है! वास्तव में मनुष्य ऊपर चढ़े, तब ही उसे अपनी लघुता का वास्तविक दर्शन होता है और उसी लघुता में से पूर्णता की ओर जाता है। यहाँ से पूरे सिद्धिधाम का दृश्य बहुत ही सरस दिखायी देता है। वह पावन दर्शन यात्री को आह्लादित करके तीर्थधाम के प्रति पूज्य भाव जागृत करता है। अहा, यहाँ विचरे हुए तीर्थंकरों और सन्तों की तो क्या बात! इस मुक्तिधाम में बसनेवाली धूल को भी धन्य है—ऐसा

कहकर चरण रज को भक्तों ने मस्तक पर चढ़ाया। अहो, जो जिनेन्द्रदेवों और साधकसन्तों के चरणों से स्पर्शित धूल हजारों-लाखों वर्षों के बाद भी चक्रवर्ती के भी मस्तक पर चढ़े, उन जिनेन्द्रों और सन्तों के आत्मवैभव की क्या बात! धन्य है हमारा यह दिन... कि गुरुराज के साथ आपके वैभव के दर्शन हुए। गुरुदेव के साथ इस महान सिद्धिधाम को भेंटने की अभिलाषा आज पूर्ण हुई। धन्य गुरुदेव! आपने हम बालकों को सिद्धिधाम दिखाया—इस प्रकार लगनपूर्वक बहुत ही भाव से पर्वत का निरीक्षण करते थे। चारों ओर के दर्शन करते-करते यात्रियों का सिर सम्पूर्ण तीर्थधाम के प्रति झुक पड़ता था। झुक-झुककर चारों दिशा में तथा ऊपर बहुत ही भक्तिपूर्वक सब बारम्बार नमस्कार करते थे। इस प्रकार सम्मेदशिखर सिद्धिधाम में ज्ञानधर टूंक पर बहुत ही भाव से कुन्थुनाथ प्रभु के चरणों में पूजनभक्तिपूर्वक कहान गुरु के साथ पहली टूंक की यात्रा पूर्ण हुई और जय-जयकार से वह पावन तीर्थ गूंज उठा।

शाश्वत सिद्धिधाम की जय हो..
अनन्त सिद्ध भगवन्तों की जय हो...
सिद्धपद साधक सन्तों की जय हो...

★ ★ ★

कुन्थुनाथ प्रभु की ज्ञानधर टूंक की बगल में ही 'गणधर टूंक' है; उसमें पार्श्वनाथ प्रभु के दस गणधरों की तथा चौबीस तीर्थंकरों के गणधरों की चरण पादुका स्थापित है, यात्रियों को सबसे पहले दर्शन इस टूंक के होते हैं। इस टूंक पर भी बहुत भावपूर्वक पूजन-भक्ति हुए थे।

चौबीसों जिनराज के गणनायक है जेह
मन वच तन कर पूजहूं शिखरसम्मेद यजेह (2)

चौबीस तीर्थंकर भगवन्तों के सर्व गणधर भिन्न-भिन्न पर्वत, उद्यान इत्यादि से मोक्ष पधारे। उनका स्मरण करके इस टूंक पर अर्घ्य चढ़ाया जाता है। यद्यपि गौतमादि गणधर भगवन्त मोक्ष तो अन्य स्थलों से प्राप्त हुए हैं, परन्तु यात्रा

महोत्सव के मण्डप में कोई बाकी न रह जाए और सर्व सन्त मानो यहीं साक्षात् पधारे हों, ऐसा ही यात्रियों को लगे, इस प्रकार से इस शिखरजी सिद्धिधाम पर एक टूंक में गणधरों की स्थापना है, तथा ऋषभादि चार तीर्थंकर—जो कैलाशगिरि इत्यादि से मोक्ष पधारे हैं—उनकी भी स्थापना इस सम्मेदशिखर की चार टूंकों पर है। अन्तर इतना है कि जो बीस तीर्थंकर यहाँ से मोक्ष पधारे हैं, उन तीर्थंकरों की बीस टूंकों के खास नाम (ज्ञानधर टूंक, स्वर्णभद्र टूंक, आनन्द टूंक, कुन्दप्रभ टूंक इत्यादि नाम) है, जबकि दूसरे चार तीर्थंकरों की और गणधरों की टूंक—इन पाँच टूंकों के कोई खास नाम नहीं परन्तु उन-उन भगवन्तों की टूंक के नाम से ही (ऋषभदेव की टूंक, गणधरों की टूंक इत्यादि नाम से ही) वे टूंकें पहिचानी जाती हैं। सबसे पहली ज्ञानधर टूंक पर ज्ञानियों के साथ एक घण्टे तक आनन्दपूर्वक पूजन-भक्ति करके फिर अन्य टूंकों की यात्रा के लिये आगे बढ़े। गुरुदेव के साथ इस शाश्वत् तीर्थधाम की यात्रा में अपूर्व आह्लाद था।

अहा, यह यात्रा महोत्सव अनोखा है; छह मील चढ़ने की थकान तो कहीं दिखती ही नहीं।—दिखता है तो मात्र सिद्धिधाम... और उसके साधकसन्त! सिद्धिधाम का प्राकृतिक दृश्य प्रफुल्ल वनराजी के कारण ऐसा लगता है कि मानो आनन्द से उभराता हो! और वन के उपशान्त वातावरण के कारण ऐसा दिखायी देता है कि मानो चारों ओर वीतरागता छा रही हो! ऐसे आनन्द भरे वीतरागी धाम में विहार करते हुए मुमुक्षु के परिणाम में बहुत उज्ज्वलता होती है; उसकी यात्रा से मनुष्य जन्म की सार्थकता होती है—इस प्रकार परिणाम की उज्ज्वलता करते-करते यात्री दूसरी टूंक की ओर जा रहे हैं। दो-तीन मिनिट में ही दूसरी टूंक आ गयी। इस टूंक का नाम 'मित्रधर टूंक'। किन भगवान की होगी यह टूंक!—ऐसा प्रश्न उठे, इससे पहले तो टूंक स्वयं ही मानो पुकार करती हो, वैसे टूंक से नमीनाथ भगवान की जयकार सुनाई दी। इक्कीसवें नमिनाथ भगवान यहाँ से चैत्र कृष्ण चतुर्दशी के दिन मोक्ष प्राप्त हुए हैं। टूंक के दर्शन करते-करते एक यात्री दूसरे यात्री से पूछता है कि इस मित्रधर टूंक से कितने मुनि मुक्ति को प्राप्त हुए? तब दूसरा यात्री पुस्तक में देखकर कहता है

कि इस मित्रधर टूंक से नमिनाथ तीर्थंकरादि 900 क्रोड़ाक्रोड़ी, एक अरब, पैंतालीस लाख सात हजार नौ सौ ब्यालीस मुनिवर मोक्ष प्राप्त हुए हैं। सब टूंकों में इस टूंक से सर्वाधिक जीव मोक्ष प्राप्त हुए हैं। इतने अधिक जीव यहाँ से मोक्ष प्राप्त हुए!—यह सुनकर बहुमानपूर्वक सबने वन्दन किया। कोई-कोई यात्री प्रत्येक टूंक में चरण पादुका का अभिषेक भी करते थे। गुरुदेव प्रत्येक टूंक में भावपूर्वक नमस्कार करके पाँच -छह बार चरण स्पर्श करते; कहीं-कहीं शिलालेख पढ़ते और फिर स्वर्ण रकाबी में अर्घ्य लेकर पूजन करते—

नमिनाथ जिनराज का कूट मित्रधर जेह
मन वच तन कर पूजहूं शिखरसम्मेद यजेह (3)

प्रत्येक टूंक पर स्वाहा... मन्त्र पूज्य बहिनश्री-बहिन बोलतीं; गुरुदेव के साथ प्रत्येक टूंक पर अत्यन्त भावपूर्वक वे पूजन करातीं। इस प्रकार सम्मेदशिखरधाम की तीन टूंकों की यात्रा करके जय-जयकार करते हुए चौथी टूंक पर चले। कितने ही यात्री आगे थे और बहुत से यात्री पीछे थे। प्रत्येक टूंक पर यात्रियों की भीड़ जमती। सबसे अधिक भीड़ गुरुदेव के आसपास में रहती। सबको गुरुदेव के साथ रहने की और वे क्या बोलेंगे, यह सुनने की उत्कण्ठा, इसलिए वहाँ सबसे अधिक भीड़ रहती। यात्रा के दृश्य अभूतपूर्व थे। यात्रियों की अलग-अलग मण्डली में कोई गाता हो, कोई जयकार गजाकर गानेवाले को भी दबा देता हो, तो कोई यात्रा सम्बन्धी आनन्द विनोद में तल्लीन हो; कोई आसपास की वनझाड़ी देखता हो तो कोई बन्दरों के साथ मजा करता हो—ऐसे वातावरण में चौथी टूंक पर आ पहुँचे। इसका नाम 'नाटक टूंक' अरहनाथ भगवान, इस टूंक से चैत्र शुक्ल ग्यारस को मोक्ष सिधारे हैं।

अरहनाथ जिनराज का नाटक कूट है जेह
मन वच तन कर पूजहूं शिखरसम्मेद यजेह (4)

यह श्लोक बोलकर सबने अर्घ्य स्वाहा किया। इस नाटक टूंक से संसार का नाटक पूरा करके 99,99,99,999 (एक अरब में एक कम) मुनिवर

मुक्ति प्राप्त हुए हैं। उन मुनिवरों के पावन पथ को अभिनन्दन करते हुए और उनके पावन चरणों को अभिनन्दन करते हुए जय-जयकार पूर्वक 'सम्बल' टूंक पर आये। इस पाँचवीं टूंक से उन्नीसवें तीर्थंकरसहित छियानवें करोड़ मुनिवर मुक्ति को प्राप्त हुए हैं; मल्लिनाथ भगवान फाल्गुन शुक्ल पंचमी को यहाँ से मुक्ति प्राप्त हुए हैं—

मल्लिनाथ जिनराज का संबलकूट है जेह
मन वच तन कर पूजहूं शिखरसम्मेद यजेह (5)

इस प्रकार पाँचवीं टूंक पर विधि अनुसार दर्शन, वन्दन, अर्घ्य, चरणस्पर्शन और जयनाद—ऐसी पंचविध यात्रा करके छठवीं टूंक की ओर चले। गुरुदेव बारम्बार अपना प्रमोद व्यक्त करते थे। हम तो पाँच टूंक की यात्रा करके छठी टूंक की ओर जा रहे हैं तब कितने ही यात्री तो अभी पहली टूंक की वन्दना कर रहे हैं और कितने ही बहादुर यात्री आगे छठवीं-सातवीं टूंक पर पहुँचकर जगह रिजर्व करके गुरुदेव की राह देखते हुए खड़े हैं। छठी टूंक का नाम है 'संकूल टूंक' इस टूंक से श्रावण शुक्ल पूर्णिमा को श्रेयांस नाथ तीर्थंकर मुक्ति को प्राप्त हुए हैं। कुल 9,60,00,00,96,96,09,542 मुनिवर इस टूंक से इस चौबीसी में मुक्ति प्राप्त हुए हैं। अहा! ये सब भगवन्त अभी अपने सिर पर लोकाग्र में विराज रहे हैं। लोकाग्र में विराजमान उन भगवन्तों को आत्मध्यानरूपी मन्त्र द्वारा अपने अन्तर में उतारकर साधक-सन्त पूजते हैं —

श्रेयांसनाथ जिनराज का संकूलकूट है जेह
मन वच तन कर पूजहूं शिखरसम्मेद यजेह (6)

गुरुदेव जैसे धर्मात्माओं के साथ यात्रा करते हुए मुमुक्षु यात्रियों को कोई अद्‌भुत भाव उल्लसित होते हैं और ऐसा लगता है कि वाह! गुरुदेव कैसे भाव से भगवान की यात्रा कर रहे हैं! ऐसे भाव से तीर्थयात्रा करनेवाले को भव का छेद हो जाए, उसमें क्या आश्चर्य!

जैसे साधक रत्नत्रय के मार्ग में अपने जीवन के अनेक ऊँचे-नीचे प्रसंगों को लाँघकर अन्ततः चैतन्य को साधता है, उसी प्रकार मनोहर मार्ग में

ऊँचे-नीचे पर्वत चढ़ते-उतरते और प्राकृतिक दृश्य देखते-देखते, शिखरजी धाम की गोद में उछलते-कूदते यात्री सिद्धिधाम की यात्रा में आगे बढ़ते जा रहे हैं। जैसे माता की गोद में बालक आनन्दित होता है, उसी प्रकार सम्मेदशिखरजी धाम की प्राकृतिक गोद में यात्री आनन्दित होते हैं, संसार की कोई झंझटें या जगत की कोई उपाधि यहाँ दिखायी नहीं देती... यहाँ दिखती है, मात्र प्रसन्नता और मुनियों के मार्ग में जाने की उत्कण्ठा।

अब आये सातवीं टूंक पर। शुरुआत की कितनी ही टूंक निकट-निकट है, इसलिए थोड़ी-थोड़ी देर में ही नयी-नयी टूंकें आती जाती हैं। प्रत्येक टूंक पर शान्ति से भावसहित वन्दना-नमस्कार करके अर्घ्य चढ़ाते हुए और भक्ति तथा जयकार नाद से पूरा पहाड़ सतत गूंजा करता था। पीछे रहे हुए यात्री जयकार नाद द्वारा अपने आगमन को प्रसिद्ध करे, तो आगे के यात्री अधिक जोर से जयकार द्वारा उनका जवाब देकर अपनी विजय को प्रसिद्ध करे। यात्री बहिनों में भक्ति के गीत गान तो सतत चालू ही हों। ऐसे वातावरणपूर्वक पुष्पदन्त प्रभु की टूंक पर आ पहुँचे। आसोज शुक्ल अष्टमी के दिन पुष्पदन्त स्वामी इस सुप्रभ टूंक से सिद्धालय में सिधारे हैं; कुल एक क्रोड़ाक्रोड़ी निन्यानवें लाख सात हजार चार सौ अस्सी मुनिवर यहाँ से मोक्ष प्राप्त हुए हैं। प्रत्येक टूंक में भगवान के चरण पादुका ही है। भाव से उनके दर्शन वन्दन करके अर्घ्य चढ़ाया।

पुष्पदंत जिनराज का सुप्रभकूट है जेह
मन वच तन कर पूजहूं शिखरसम्मेद यजेह (7)

गुरुदेव के साथ प्रत्येक टूंक की यात्रा करते-करते और सम्मेदशिखरजी धाम की पावन चरण रज से मस्तक को पावन करते-करते आठवीं टूंक पर आये। अहा, सम्मेदशिखरजी महान तीर्थ... उसकी यात्रा करते हुए पैरों की सफलता हुई, उसे नयनों से निहारते हुए आँखें पावन हुईं, उसे अर्घ्य चढ़ाते हुए हाथ सफल हुए। उसका गुणगान करते हुए जीभ कृतार्थ हुई, उसे वन्दन करते हुए मस्तक पावन हुआ, इस प्रकार भावभीनी यात्रा से सर्वांग पावन हुए। यहाँ

विचरे हुए सन्तों के स्मरण से मन पवित्र हुए और प्रत्यक्षीभूत सन्तों के अन्तेवास से जीवन भी पावन हुआ। इस प्रकार तन-मन और जीवन को पावन करते-करते, मोह को नाश करनेवाली ऐसी 'मोहन टूंक' पर आये। इस मोहन टूंक से माघ कृष्ण चतुर्दशी के दिन पद्मप्रभ भगवान मुक्ति को प्राप्त हुए हैं। कुल 998743727 मुनिवर इस टूंक से मोक्ष प्राप्त हुए हैं। अहा! ये भगवन्त तो मोहरहित थे ही... और उनके चरण के प्रसाद से यहाँ की पृथ्वी भी निर्मोह होकर 'मोह-न' नाम को प्राप्त हुई, तो फिर उनके आत्मसान्निध्य से चेतनवन्त जीव निर्मोह हो जाएँ—इसमें क्या आश्चर्य!

पद्मप्रभजिनराज का मोहनकूट जेह
मन वच तन कर पूजहूं शिखरसम्मेद यजेह (8)

इस शाश्वत तीर्थ की कोई अचिन्त्य महिमा है और इसकी भावसहित वन्दना का विशिष्ट फल दर्शाया है। पच्चीस टूंकों में सबसे ऊँची टूंक पार्श्वनाथ भगवान की है, परन्तु वहाँ से सबसे कम (828445742) जीव मोक्ष प्राप्त हुए हैं और सबसे अधिक (9000,000,100,4507942) जीव मित्रधर नामक तीसरी टूंक से मोक्ष प्राप्त हुए हैं। ज्ञाननयन से देखने पर यहाँ के कंकर-कंकर में अनन्त सिद्ध भगवन्त दिखायी देते हैं; अनन्त चौबीसी के अनन्त तीर्थंकर भगवन्त और दूसरे अनन्त मुनिश्वरों की मोक्षसाधना का पावन इतिहास इस पर्वत के पावन पट पर आलेखित है। इस सिद्धिधाम का प्रत्यक्ष दर्शन मुमुक्षु के हृदय में सिद्धि की साधना की कोई अद्‌भुत ऊर्मियाँ जागृत करता है। पूर्व में सगर चक्रवर्ती, सागर चक्रवर्ती, मधवा, सनतकुमार, आनन्द, प्रभुसेन, ललितदन्त, कुन्दसेन, सैन्यदत्त, वरदत्त, सोमप्रभ, चारुसेन, इत्यादि हजारों राजाओं ने तथा सीताजी इत्यादि अनेक धर्मात्माओं ने सम्मेदशिखरजी की यात्रा की है। पूर्व में एक जमाना ऐसा था कि शिखरजी की वन्दना के लिये अति विकट प्रवास करके पाँच वर्ष में मुश्किल से वापस घर जाया जाता था; अभी कोई चाहे तो (हिन्दुस्तान के किसी भी कौने से) शिखरजी की वन्दना करके आठ दिन में तो वापिस घर आ सकता है, ऐसी सुविधा है।

शिखरजी धाम की जब साक्षात् यात्रा करते हों, तब उसकी सब महिमा तादृशरूप दिखायी देती है और बहुत ही महिमा से हृदय शिखरजी के प्रति नम्रीभूत होता है।

— इस प्रकार अपार महिमापूर्वक गुरुदेव के साथ यात्रा करते-करते, आठ टूंक की यात्रा करके अब नौवीं टूंक की ओर जा रहे हैं। निर्मोहता द्वारा निर्जरा होती है, इसी प्रकार आठवीं निर्मोह (मोह-न) टूंक के पश्चात् नौवीं 'निर्जर' टूंक आती है। श्री मुनिसुव्रत भगवान और दूसरे निन्यानवें क्रोड़ीक्रोड़ी, 970900999 मुनिवर इस निर्जरा टूंक से सम्पूर्ण कर्मों की निर्जरा करके मोक्ष में सिधारे हैं। भगवान मुनिसुव्रत तीर्थंकर माघ कृष्ण बारह के दिन यहाँ से सर्व कर्मों की निर्जरा करके मोक्ष प्राप्त हुए हैं। भगवान जब मोक्ष पाते हैं, तब इन्द्र आकर निर्वाण कल्याणक मनाते हैं और निर्वाण स्थान पर वज्र से चरण चिह्न उकेरते हैं। इस प्रकार अनन्त तीर्थंकरों के निर्वाण कल्याणक इस पर्वत पर मनाये गये हैं। ऐसा यह निर्वाणधाम अनन्त तीर्थंकरों का स्मरण जागृत करता है। इस तीर्थ की वन्दना के लिये देवों का भी आगमन सतत् हुआ करता है। अच्छे काल में तो देव प्रगट होते थे। इस काल में भाग्य से ही प्रगट होते हैं—परन्तु घड़ी भर तो देवों की भक्ति को भी विस्मृत करा दे, ऐसे उत्तम भाव से सन्त इस तीर्थधाम की यात्रा-पूजा करा रहे हैं—

मुनिसुव्रत जिनराज का निरजर कूट है जेह
मन वच तन कर पूजहूं शिखरसम्मेद यजेह (9)

ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखर शाश्वतधाम की निरजर टूंक से मुनिसुव्रतनाथ आदि अनेक कोड़ाकोड़ी मुनिवर मुक्ति प्राप्त हुए, उनके चरणारविन्द में मन-वचन-काया से हमारा बारम्बार नमस्कार हो, उनके चरण-कमल पूजनार्थे महार्घ्य निर्वपामीति... स्वाहा...

शिखरजी धाम की पूर्व दिशा में एक के बाद एक टूंक की यात्रा करते हुए आगे बढ़ रहे हैं। बहुत-बहुत भक्ति से और हृदय की उमंग से प्रत्येक टूंक पर तीर्थंकर भगवन्तों के साथ उस टूंक से मोक्ष प्राप्त अनेक क्रोड़ाक्रोड़ी मुनि

भगवन्तों को भी अर्घ्य चढ़ाते हैं। बहुत यात्री अपने सगे-सम्बन्धियों को याद करके उनकी ओर से भी अर्घ्य चढ़ाते हैं। मोक्षगामी मुनिवरों की करोड़ो-अरबों की महान संख्या जानकर आनन्द से ऐसा लगता है कि वाह! यहाँ से इतने अधिक मुनिवर मुक्ति में सिधारे... अब मैं भी थोड़े समय में उनकी बस्ती में मिल जानेवाला हूँ। इस प्रकार गुरुदेव के साथ नौ टूंकों की यात्रा करके दसवीं टूंक की ओर आगे बढ़े। नौ टूंक तो लगातार आयी परन्तु दसवीं टूंक आने में देर लगी। यात्री चल रहे हैं और विचार रहे हैं कि दसवीं टूंक कब आयेगी?—कौन से भगवान की होगी वह टूंक? पर्वत के बीच एक मनुष्य की पगडण्डी पर हजारों यात्रियों की हारमाला गाते-गाते चली जा रही है—यह दृश्य मनमोहक लगता है। पर्वत की अति विशालता के समक्ष यात्री तो छोटी बूँद जैसे लगते हैं, परन्तु उनकी मोटी आवाज पूरे पर्वत को गजा देती है—

आज मारे सोना समो रे सूरज ऊगीयो रे...
वरस्या आजे अमृतना वरसाद रे, तीर्थयात्रा गुरुवर साथमां रे लाल....
— सम्मेदाचलयात्रा गुरुवर साथमां रे लाल...

आजे नयणे नीरख्या सिद्धिधामने रे...
नीरख्या मुनिवर केरा धाम रे, सिद्धगिरि यात्रा गुरुवर साथमां रे लाल...
नीरख्या तीर्थंकर केरा धाम रे, अपूर्व यात्रा गुरुवर साथ में रे लाल...

— इस प्रकार भक्ति करते-करते ऊँचे-नीचे रास्तों को लांघते हुए यात्री चले जा रहे हैं; दूर एक टूंक दिखायी दे रही है, वह है दसवीं टूंक। नौ टूंक तो एक दूसरे के निकट-निकट होने से समूह में है, जबकि यह दसवीं टूंक दूसरी सभी टूंकों से अलग अकेली-अकेली खड़ी है और मानो कि प्रसन्न रूप से यात्रियों को दूर-दूर से बुला रही है : यात्रियों! आओ रे आओ! देखो, इस एकत्वभावना को साधने का स्थान! यात्री दूर से उस टूंक को देखकर प्रसन्न होते हैं। एक यात्री दूसरे यात्री से कहता है कि आज फाल्गुन शुक्ल सप्तमी है, इसलिए इस टूंक की यात्रा करने में बहुत मजा आयेगा। दूसरा यात्री पूछता है कि ऐसा क्यों? तब पहला यात्री कहता है कि इस बात की उस टूंक पर जाने

के बाद तुम्हें खबर पड़ेगी। दूर-दूर से दिखायी देती वह टूंक थोड़ी देर में एकदम नजदीक आ गयी। जैसे-जैसे टूंक के नजदीक आते गये, वैसे-वैसे चढ़ाई कठिन लगती गयी। टूंक थोड़ी दूर रह गयी, वहाँ डोलीवालों ने डोली रोक दी और कहा कि अब आगे डोली नहीं चल सकेगी। पर्वत की बाकी की चढ़ाई कठिन थी, इसलिए वयोवृद्ध यात्रियों को ऊपर टूँक तक पहुँचना कठिन था; इसलिए कितने ही यात्री विचारते थे कि अब क्या करना ?—ठेठ ऊपर जाना या यहाँ से ही दर्शन कर लेना—इस प्रकार हिचकिचाते थे परन्तु जब इस दसवीं टूंक के महत्त्व की खबर पड़ी कि तुरन्त उनके पैरों में नया जोम आया और लकड़ी के सहारे टक-टक करते हुए ऊपर पहुँच गये। ऊपर जाकर एक यात्री ने दूसरे यात्री को पूछा—मार्ग में तुम कहते थे कि इस टूंक की यात्रा करने में विशेष मजा आयेगा, उसका क्या कारण ? वह यात्री जवाब दे उससे पहले तो गुरुदेव उवाच—**यह चन्द्रप्रभ भगवान की टूंक है; चन्द्रप्रभ भगवान के मोक्ष का यह धाम है और ठीक आज ही उनके मोक्ष का दिन है। इस प्रकार सहज मेल है।** गुरुदेव के मुख से यह बात सुनकर चन्द्रप्रभस्वामी के जयकार से ललित टूंक गूंज उठी और पीछे रहे हुए यात्री भी आनन्दोत्सव में भाग लेने शीघ्रता से आ पहुँचे। (वींछिया-सौराष्ट्र में चन्द्रप्रभ स्वामी की प्रतिष्ठा भी इसी दिन हुई थी)। इस टूंक का वातावरण अलग ही था; यात्रियों के भाव भी अलग ही थे। जैसे जिनेन्द्रदेव के चरण को भाव से भेंटने पर संसार की थकान उतर जाती है, उसी प्रकार यहाँ प्रभु के पावन चरणों को भेंटते ही यात्रा की थकान उतर जाती थी और मात्र यात्रा के आनन्द का ही वेदन रहता था। जैसे निर्विकल्पदशा में पहले के विकल्पों की चिन्तवन की थकान नहीं रहती; आनन्द का ही वेदन रहता है, उसी प्रकार पर्वत चढ़ने की पूर्व तैयारी की अनेक मनोमन्थन अभी गुम हो गयी थी, दूसरे विचार छूटकर अभी तो बस यात्रा के आनन्द का ही वेदन था। अहा! आज फाल्गुन शुक्ल सप्तमी को यहाँ से ही चन्द्रप्रभ भगवान मोक्ष पधारे, वह काल और उस क्षेत्र के साथ भगवान के मोक्ष गमन का भाव भी मुमुक्षु हृदयों में तादृश खड़ा होता था। ऐसे भगवान के मोक्ष का धाम और काल नजरों से दिख रहे थे, उसी प्रकार मानो कि वह मोक्षगमन

का रत्नत्रय भाव भी यहीं अभी अपने समक्ष भगवान सेवन कर रहे हों, और अपने को वह मार्ग उपदेश कर रहे हों—ऐसा इस टूंक का वातावरण था। भगवान के इस मार्ग का उपदेश झेलकर इस मार्ग को साधनेवाले सन्त आज इन भगवान के धाम को शोभित कर रहे थे; इसलिए उनके साथ की यात्रा अद्‌भुत उमंग से होती थी। मानो मोक्षधाम में मोक्षकल्याणक मनाया जाता था—

सातों सुदी फागुन के महिना सम्मेदाचल श्रृंग महान,
ललित कूट ऊपर जगपतिने पायो आतम शिवकल्याण।
सुरसुरेश मिलि पूज रचाई गायो गुण हर्षित चित्त ठान,
सुगुरु समन्तभद्र के स्वामी देहु हम सबको सत ज्ञान॥

दर्शन-वन्दन के बाद, आज के दिन की और आज की यात्रा की महिमापूर्वक सबने अर्घ्य चढ़ाया।

चन्द्रप्रभ जिनराज का ललितकूट है जेह
मन वच तन कर पूजहूं शिखरसम्मेद यजेह (10)

जहाँ से नौ सौ चौरासी अरब बहत्तर करोड़ अस्सी लाख चौरासी हजार पाँच सौ पिच्यानवें मुनिवर मुक्ति को प्राप्त हुए हैं, ऐसी इस दसवीं टूंक पर हजारों यात्रियों ने अर्घ्य चढ़ाया। चरणपादुका अर्घ्य के नीचे दब गये। यहाँ के बन्दर यात्रियों की अहिंसकता को जानते हों, ऐसे निर्भयरूप से वर्तते हैं और चरणपादुका के पास जो अर्घ्य चढ़ाया हो, वह अर्घ्य वहाँ आकर उसी समय खा जाते हैं। यह दृश्य देखकर ऐसा लगता है कि अरे रे! कहाँ इस बेचारे पशु की पामरता! और कहाँ मेरे भगवान की प्रभुता! हे नाथ! धन्य है आपकी दशा को। प्रभो! संसार की ऐसी हीन-पामर दशा में से आपने हमें छुड़ाया।

इस टूंक पर बहुत-बहुत भक्ति हुई। पूज्य बहिनश्री-बहिन की भक्ति की उमंग अद्‌भुत थी! अन्तिम धुन अद्‌भुत थी, उस धुन के समय तो यात्री भक्ति की तान में मानो आसपास का भान भूल गये थे। इस भक्ति के समय गुरुदेव भी बहुत प्रसन्न थे और यात्रियों का भी लक्ष्य खींचते थे कि देखो, कैसी भक्ति है! गुरुदेव ने भी इस टूंक पर चन्द्रप्रभ की स्तुति बहुत प्रमोद से गवायी

थी। भक्ति के पश्चात् गुरुदेव ने इस टूंक से पूरे सम्मेदशिखरजी पर्वत का अवलोकन किया। इस ऊँची-ऊँची टूंक से सिद्धिधाम का बहुत ही सुन्दर और मनमोहक दृश्य निहारकर गुरुदेव बहुत प्रसन्न हुए। पश्चिम की ओर दूर-दूर मानो कि इस टूंक के साथ हरिफाई करती हो, ऐसी ऊँची-ऊँची स्वर्णभद्र टूंक (पारसप्रभु की) शोभायमान हो रही है। खुले आकाश में सामने ही खड़ी हुई ये टूंकें मानो कि मुमुक्षु यात्रियों को मोक्ष में आने का आमन्त्रण दे रही है और पारसप्रभु का पन्थ दर्शा रही है। पूर्व की ओर दूसरी अनेक टूंकें एक साथ दिखाई देती है। ऊँची-नीची अनेक टूंकों सहित शिखरजी तीर्थधाम यहाँ से उसके विराट स्वरूप में प्रतिभासित होता है। उस विराट स्वरूप के दर्शक को जब लक्ष्य में आता है कि वह स्वयं अभी इस विराट स्वरूप की टोंच पर खड़ा हुआ है, तब उसे शिखरजी तीर्थधाम के साथ आत्मीयता का अनुभव होता है। चारों ओर के दृश्य अद्‌भुत रमणीयता से भरपूर हैं; इस उपशान्तता का ढ़ेर देखने पर नयन और हृदय शान्त होते हैं और आत्मा मोक्षमार्ग की उपशान्त भावनाओं में झूलने लगता है। तीर्थधाम के ये पावन दृश्य देखकर गुरुदेव बहुत ही प्रसन्न हुए थे, यात्रियों को भी बहुत प्रमोद था। दुनिया में ताजमहल इत्यादि के सौन्दर्य की भले महिमा की जाती हो, परन्तु उसके दर्शन से क्षणिक ऊर्मि मुमुक्षु हृदय में टिक नहीं सकती, जबकि यहाँ के प्राकृतिक वातावरण के बीच जागृत मोक्षगामी सन्तों के स्मरण के गहरे भाव मुमुक्षु हृदय में ऐसे उत्कीर्ण हो जाते हैं कि जीवन भर विस्मृत नहीं होते और मोक्षमार्ग की ओर ले जाते हैं। इस टूंक पर बहुत देर रुककर पूजन-भक्ति की तथा तीर्थ का वीतरागता प्रेरक प्राकृतिक सौन्दर्य नयन भर-भरकर निहारा। जीवन में देखा हुआ बहुत विस्मृत होगा परन्तु इस शिखरजी धाम का विराट दर्शन कभी विस्मृत नहीं होगा। जैसे सिद्धपद का साधक सम्पूर्ण संसार को भूलेगा, परन्तु अपने चैतन्य पद को कभी नहीं भूलेगा; उसी प्रकार इस सिद्धिधाम का यात्री सम्पूर्ण संसार को भूलेगा परन्तु तीर्थधाम के विराट दर्शन को कभी नहीं भूलेगा; जीवन साधना की यह एक सुनहरी पूँजी है।

इस प्रकार आनन्दोल्लासपूर्वक सम्मेदशिखर शाश्वत् सिद्धिधाम की

इस दसवीं टूंक की यात्रा पूर्ण हुई और चन्द्रप्रभ भगवान के जय-जयकार गाज उठे।

आज मोक्षकल्याणक प्राप्त श्री चन्द्रप्रभ भगवान की जय हो...
यहाँ से सिद्धपद प्राप्त श्री चन्द्रप्रभ भगवान की जय हो...
ऊपर विराजमान चन्द्रप्रभ सिद्ध भगवान की जय हो...
अनन्तानन्त चैतन्यबिम्ब सिद्ध भगवन्तों की जय हो
महान तीर्थ शाश्वत् सिद्धिधाम सम्मेदशिखर की जय हो
सिद्धपद के महान यात्री साधक-सन्तों की जय हो
कहान गुरु के साथ आज की मंगल तीर्थयात्रा की जय हो।

— ऐसे-ऐसे सैकड़ों जयकारपूर्वक यात्रा का एक भाग पूरा हुआ और दसवीं टूंक की ओर से ग्यारहवीं टूंक की ओर कदम बढ़ाये। तीर्थधाम में कदम-कदम पर प्रभु के गुणों का स्मरण होता था—

पगले पगले प्रभुनां गुणो संभारतां... गुणो संभारतां, अंतरना विसरे उचाट रे...
तीर्थधाम भेट्या अलबेलडा... सिद्धिधाम भेटया अलबेलडा...
आतमा अनन्त प्रभु आपे ऊगारिया... तारो सेवकने भवपार रे...
तीर्थधाम भेट्या अलबेलडा... सिद्धिधाम भेटया अलबेलडा...

एक टूंक से दूसरी टूंक पर जाते-जाते मार्ग में चलती यात्रा में भी रोम-रोम उल्लसित हो जाए, ऐसी भक्ति बहिनश्री-बहिन गवाती थीं; अनेकविध नयी-नयी धुन से यात्रियों में उत्साह का संचार हो उठता था। —

बोलो सम्मेदशिखर की जय, बोलो सिद्धप्रभु की जय...
बोलो मुनिवरों की जय, बोलो जय जय जय....
अनन्त तीर्थंकरों की जय, अनन्त मुनिवरों की जय...
शाश्वत तीर्थधाम की जय, बोलो जय जय जय...
अनन्त सिद्धभूमि की जय, पावन तीर्थभूमि की जय....
बोलो चैतन्यप्रभु की जय, बोलो जय जय जय...

ऐसी धुन द्वारा तीर्थंकरों, सिद्धों और मुनिवरों का विशाल समूह मानों नजर-समक्ष हाजराहजूर हो, ऐसा लगता था। महापुरुषों को भक्तिपूर्वक याद करते-करते और कदम-कदम पर उनकी जय-जयकार गजाते-गजाते यात्री पहाड़ पर एक टूंक से दूसरी टूंक पर जा रहे हैं। चन्द्रप्रभु की टूंक से वापस मुड़ते हुए एक स्थल पर दो रास्ते इकट्ठे मिलते हैं, वहाँ लोहखंडी बोर्ड में लिखा है कि **जलमन्दिर जाने का रास्ता**। जलमन्दिर का नाम पढ़ने पर पावापुरी का जलमन्दिर याद आता है और मानो वैसा ही जलमन्दिर यहाँ देखने को मिलेगा— ऐसी आशा में यात्री आगे बढ़ते हैं; वहाँ तो थोड़ी देर में ग्यारहवीं टूंक आती है। आदिनाथ प्रभु की यह टूंक एक छोटे से शिखर पर शोभित हो रही है, और उस पर आदिनाथ प्रभु के चरणकमल विशाल और सुन्दर हैं; उन्हें देखते ही भाव उल्लसित होते हैं कि मानो साक्षात् ही आदिनाथ प्रभु के चरण हों! ऊपर खुला आकाश और नीचे टूंकों का दृश्य अद्‌भुत दिखता है। खुले आकाश की अनन्तता में सिद्धालय की ओर नजर करते हुए मुमुक्षु हृदय में सिद्धस्वरूप का चिन्तवन जागृत होता है। अहो! हम सिद्ध भगवान के धाम में आये हैं; हम भी कब सिद्ध होंगे! हमारे आत्मा में भी सिद्धपना भरा हुआ है, इसलिए आत्मा में सिद्धपना स्थापित करके सिद्ध भगवान का परम बहुमान करते हैं। अहो, धन्य वह सिद्धदशा! यह बाह्य संयोग या अन्तर के संकल्प-विकल्प, वे अब स्वप्न में भी नहीं चाहिए। उन सबसे पार मैं एक ज्ञान ही हूँ। संयोग और संकल्प-विकल्प निकालकर बाकी जो अकेला ज्ञान रहता है, वह मैं हूँ। वह ज्ञान, आनन्द से भरपूर है। इन सिद्ध भगवन्तों में जो कुछ बाकी रहा है, उतना ही मेरा स्वरूप है। 'सिद्धोहं'... 'सिद्धा सिद्धि मम दीसन्तु'—

एक परमाणुमात्रनी मळे न स्पर्शता,
पूर्ण कलंकरहित अडोल स्वरूप जो।
शुद्ध निरंजन चैतन्यमूर्ति अनन्यमय,
अगुरुलघु अमूर्त सहज पदरूप जो...
अपूर्व अवसर एवो क्यारे आवशे?

अहो ऐसे अयोगी पद और सिद्धपद की यह भूमि है। भगवान आदिनाथ तो कैलाशपर्वत पर (पौष कृष्ण चौदह के दिन) मुक्ति को प्राप्त हुए, तथापि उनके चरण-कमल आज अरबों-असंख्य वर्षों बाद यहाँ पूजे जाते हैं। यह धूल चक्रवर्ती के भी मस्तक पर चढ़ती है। रत्नमणि के मार्ग पर चलनेवाले चक्रवर्ती इस धूली को अपने मस्तक पर उत्साह से चढ़ाते हैं।—किसलिए? क्योंकि जहाँ यह धूली है, वहाँ एक बार परमात्मा का अतीन्द्रिय भाव था; भगवान के अतीन्द्रिय भाव की अचिन्त्य महिमा की तो क्या बात, परन्तु उस भाव के साथ रही हुई ऐसी यह जड़ धूली भी आज वन्दनीय हो गयी है। यह धूली पूर्णानन्दी आत्मस्वभाव की प्रसिद्धि कर रही है। भक्ति से इस धूली को सिर पर चढ़ानेवाला, धूली का बहुमान नहीं करता परन्तु आत्मा के अतीन्द्रिय भाव का स्मरण करके, उसका बहुमान करता है, उसके प्रति अपनी रुचि को प्रसिद्ध करता है। इत्यादि भावनापूर्वक भगवान की पवित्र चरणरज को मुमुक्षु अपने सिर पर चढ़ाते थे। दर्शन, वन्दन और चरणस्पर्शन करके फिर गुरुदेवसहित सबने अर्घ्य चढ़ाया।

ऋषभदेव जिन सिद्ध हुए गिरि कैलास से जोय
मन वच तन कर पूजहूं शिखर नमूं पद दोय (11)

कैलाशपर्वत से श्री आदिनाथ भगवानसहित दस हजार मुनिवर मुक्ति को प्राप्त हुए हैं। मानो कि कैलाशपर्वत पर आदिनाथ प्रभु का पूजन करते हों— ऐसे भाव से सबने इस शिखरजी धाम की ग्यारहवीं टूंक से आदिनाथ प्रभु को अर्घ्य चढ़ाया। दूसरी टूंकों की भाँति इस ऋषभदेव प्रभु की टूंक का दूसरा कोई खास नाम नहीं है। अब बाद में आनेवाली टूंकों में वासुपूज्य भगवान की (पन्द्रहवीं), नेमिनाथ भगवान की (चौबीसवीं) और महावीर भगवान की (बीसवीं) इन तीनों टूंकों में भी इसी प्रकार से है। क्योंकि ये चार भगवन्त सम्मेदशिखर से नहीं परन्तु कैलाशगिरि-मन्दारगिरि-गिरनारगिरि और पावापुरी से मुक्ति को प्राप्त हुए हैं, ऐसा होने पर भी यहाँ इन चारों तीर्थंकरों की टूंक की स्थापना होने से बीस तीर्थंकरों के निर्वाणधाम शिखरजी की यात्रा करने पर यात्री को दूसरे चार तीर्थंकरों का भी स्मरण और यात्रा हो जाती है।

आदिनाथ भगवान की टूंक की यात्रा करके बारहवीं टूंक की ओर चल दिये। सम्मेदशिखर के ऊपर के भाग में पच्चीस टूंकों की यात्रा करते हुए लगभग छह मील जितनी प्रदक्षिणा होती है। छह मील चढ़ाई, छह मील घूमना, और छह मील उतरना। ऐसे अठारह मील की यात्रा* होने पर भी रमणीय कोमल रास्ते और शीतल उपशान्त वातावरण के कारण यात्री को थकान ज्ञात नहीं होती। जैसे साधक के लिये सिद्धिधाम का मार्ग सुगम है, उसी प्रकार इस सिद्धिधाम तीर्थ की कोमल भूमि में यात्री का मार्ग सुगम है। ऐसे सुगम मार्ग में गुरुदेव के साथ उत्साह-उत्साह से मंगल गीत गाते-गाते एक टूंक से दूसरी टूंक पर जाते थे। गुरुदेव के साथ ऐसी तीर्थयात्रा के दौरान पूज्य बहिनश्री और पूज्य बहिन दोनों भक्तिपूर्वक अनेक प्रकार के गीत बारम्बार गाती थीं। —

चालो चालो सहु होंशे हळीमळी आज सिद्धगिरि वंदन जइअे....
चालो चालो सहु गुरुवर संगे आज सम्मेदाचल (चडीअे) जइअे...
चालो चालो सहु गुरुवर संगे आज यात्रा जिनधामनी करीअे...
चालो चालो सहु गुरुवर साथे आज श्री जिनधाम नीरखीये...
चालो चालो श्री जिनेन्द्रदेवना आदर्श आजे उरमां भरीये...
चालो चालो... श्री मुनिवरना आदर्श आजे उरमां भरीये।
भक्तिभावे होंशे दर्शन करीने आज पावन थईअे...
भक्तिभावे तीर्थंकर-चरणरज आज होंशे मस्तक धरीअे...
भक्तिभावे त्रिलोकीनाथ चरणरज आज होंशे मस्तक धरीअे...
चालो चालो सिद्धदर्शन करीने आज सहु सिद्ध समरीअे...
होंशे होंशे मुनिकुळ सिद्धिधाम आज नयण नीरखीअे...
चालो चालो अे साधकजीवनआदर्श आजे उरमां भरीअे...
चालो चालो अे जिननाथ चरणरज आज होंशे मस्तक धरीअे...

---

* 'जैन प्रचारक' अप्रैल 1953 के अंक में लिखता है कि .....जानकारी करने से ज्ञात हुआ कि यहाँ ग्यारह फर्लांग का मील है। अतः वन्दना लगभग चौबीस-पच्चीस मील हो जाती है।

मीठा मीठा स्मरण तीर्थंकर देवना आज होंशे शिखरजी नीरखीऐ...
चालो चालो ऐ सिद्धजीवन आदर्श आजे होंशे समरीऐ...
भक्तिभावे होंशे दर्शन करीने आज पावन थइऐ...
भक्तिभावे मुनिकुळ चरणरज आज होंशे मस्तक धरीऐ...

— इस प्रकार शिखरजी जैसे सिद्धिधाम की घनी झाड़ियों के बीच भावभीने गीत गाते-गाते पूज्य दोनों बहिनें, गुरुदेव के साथ संघसहित तीर्थयात्रा कर रही थीं; ज्ञान-वैराग्यसहित की भक्ति के ये भाव जीवन में कभी विस्मृत नहीं होंगे। बहुमान-भक्ति-हर्ष और उल्लाससहित यात्रा करते-करते बारहवीं टूंक पर आ पहुँचे। इस टूंक का नाम विद्युत्वर टूंक; आसोज शुक्ल अष्टमी को श्री शीतलनाथ भगवान इत्यादि अठारह क्रोड़ाक्रोड़ी, बयालीस करोड, बत्तीस लाख बयालीस हजार नौ सौ पाँच मुनिवर इस टूंक से मोक्ष पधारे हैं। उनका पूजन करके अर्घ्य चढ़ाया।

शीतलनाथ जिनराज का कूट विद्युतवर जेह
मन वच तन कर पूजहूं शिखरसम्मेद यजेह (12)

जिस तरह विद्युत को और शीतल मेघ को सुमेल है, इसी प्रकार इस विद्युत टूंक पर शीतलधाम का सुमेल है; जगत के जीवों को बिजली जैसा ज्ञानप्रकाश और मेघ जैसी शीतलता देनेवाले शीतलनाथ भगवान इस विद्युत टूंक से मुक्ति प्राप्त हुए, उनको हमारा नमस्कार हो।

विद्युत टूंक के पश्चात् आये स्वयंभू टूंक पर। तेरहवें गुणस्थान में विराजमान स्वयंभू भगवान इस तेरहवीं स्वयंभू टूंक पर पधारे और (फाल्गुन कृष्ण चौथ को) इन चौदहवें भगवान ने यहाँ चौदहवाँ गुणस्थान प्राप्त किया... पश्चात् वे अनन्तनाथ भगवान यहाँ से अनन्त सिद्धों की बस्ती में सिधारे।

अनन्तनाथ जिनराज का कूट स्वयंभू जेह
मन वच तन कर पूजहूं शिखरसम्मेद यजेह (13)

सम्मेदशिखरजी की पच्चीस टूंकों के हिसाब से गिनने पर यह टूंक बीच की है; यहाँ से अनन्तनाथ आदि अनन्त मुनिवर मुक्ति को प्राप्त हुए हैं। इस

चौबीसी में छियानवें क्रोड़ाक्रोड़ी, सत्तर करोड़, सत्तर लाख, सत्तर हजार, सात सौ मुनिवर यहाँ से मोक्ष प्राप्त हुए हैं। उन्हें अर्घ्य चढ़ाकर चौदहवीं टूंक पर आये।

इस टूंक का नाम धवल टूंक; धवल आकाश के नीचे चैतन्य के तीसरे धवल ध्यान द्वारा सम्भवनाथ भगवान ने इस टूंक को भी धवल बनाया। चैत्र शुक्ल छठवीं के दिन इस चौदहवीं टूंक पर चौदहवें गुणस्थान में भगवान विराजते थे और फिर यहाँ से ही वे तीसरे तीर्थंकर ने चौथे शुक्लध्यान द्वारा पंचम गति छठवीं के दिन प्राप्त की और सप्तमी के दिन ऐसे इस सिद्धिधाम की यात्रा हो रही है।

संभवनाथ जिनराज का धवल कूट वर जेह
मन वच तन कर पूजहूं शिखरसम्मेद यजेह (14)

श्री सम्भवनाथ आदि नौ क्रोड़ाक्रोड़ी, बहत्तर लाख, बयालीस हजार पाँच सौ मुनिवर इस धवल टूंक से मुक्ति को प्राप्त हुए हैं। इस सिद्धिधाम की वन्दना करके पन्द्रहवीं टूंक पर आये। यह टूंक वासुपूज्य भगवान की है। भाद्रशुक्ल चौदस (अनन्त चतुर्दशी) के दिन बारहवें तीर्थंकर वासुपूज्य आदि एक हजार मुनिवर मन्दारगिरि (चम्पापुरी) से मुक्ति को प्राप्त हुए हैं, उनका स्मरण करके इस टूंक पर अर्घ्य चढ़ाया। —

वासुपूज्य जिन सिद्ध भये चंपापुर से जेह
मन वच तन कर पूजहूं शिखरसम्मेद यजेह (15)

जहाँ वासुपूज्य भगवान के पंच कल्याणक हुए हैं, ऐसी चम्पापुरी तीर्थधाम की साक्षात यात्रा तो तीन दिन बाद होनेवाली है परन्तु उससे पहले यहाँ शिखरजी धाम पर बैठे-बैठे उन भगवान का पूजन करने से आनन्द होता है। पर्वत पर प्रत्येक टूंक पर प्रत्येक भगवान की चरण पादुका है, उसमें इस टूंक पर इतनी विशेषता है कि एक के बदले पाँच चरणपादुका स्थापित है, क्योंकि वासुपूज्य प्रभु के एक ही स्थल पर पाँच कल्याणक हुए हैं, इसलिए पाँच कल्याणक सूचक पाँच चरणपादुका स्थापित है। इसी प्रकार नेमनाथ प्रभु के

भी निर्वाण कल्याणक इत्यादि तीन कल्याणक एक ही स्थल पर हुए हैं, इसलिए उनकी टूंक पर भी चरणपादुका की तीन जोड़ी स्थापित है।

अब जिसे अभिनन्दन करते हुए आनन्द हो, ऐसी आनन्दकूट पर आये। इस सोलहवीं टूंक को दूर से देखकर 'कौन से भगवान की होगी यह टूंक!' यह प्रश्न उठे, उसका जवाब देने के लिये जिस भगवान की यह टूंक है, उनके जीवन्त चिह्न टूंक के आसपास घूम रहे हैं; छलांग मारकर ठकाठक करते हुए और यात्रियों को देखकर आनन्द से कूदते हुए उन चिह्नों को देखकर खबर पड़ जाती है कि यह टूंक अभिनन्दन भगवान की है।—

अभिनन्दन जिनराज का आनन्दकूट है जेह
मन वच तन कर पूजहूं शिखरसम्मेद यजेह (16)

'आनन्दकूट'... 'आनन्द का शिखर!' कैसा मजेदार नाम! और कैसा सरस धाम! यह मंगल नाम और मंगल धाम चैतन्य के परम आनन्द का स्मरण कराता है। अहो, चैतन्य के पूर्ण अतीन्द्रिय आनन्दसहित अभिनन्दनस्वामी यहाँ विराजते थे, इसलिए यह टूंक भी 'आनन्द' मय बन गयी। अभिनन्दनस्वामी की यह आनन्ददशा अभिनन्दनीय है और उनके प्रताप से यह टूंक भी अभिनन्दनीय बन गयी है। उन आनन्दमूर्ति भगवान के चरण सान्निध्य से, अरे! यह पत्थर के पहाड़ भी 'आनन्द' नाम को प्राप्त हुए तो फिर उन भगवान के ध्यान द्वारा चैतन्य आत्मा आनन्दमय बने, उसमें क्या आश्चर्य!

इस आनन्द टूंक से अभिनन्दनस्वामी वैशाख शुक्ल छठवीं को परम आनन्दमय और अभिनन्दनीय ऐसे सिद्धपद को प्राप्त हुए। अभिनन्दनस्वामी के इस आनन्दधाम में से बहत्तर क्रोड़ाक्रोड़ी सत्तर करोड़, सत्तर लाख, बयालीस हजार, सात सौ मुनिवर आनन्दधाम में (सिद्धालय में) सिधारे हैं। शिखरजी की टूंकों के ऐसे सरस नाम तथा वहाँ से मुक्ति प्राप्त मुनिवरों की विशाल संख्या और प्रत्येक टूंक की नयी-नयी प्राकृतिक शोभा के अवलोकन से गुरुदेव इत्यादि को बहुत प्रसन्नता होती थी। कहाँ विचर रहे हैं, यह भी विस्मृत हो जाता था। दुन्यवी वातावरण से पार अहा! मानों सिद्ध भगवन्तों के

धाम में घूम रहे हैं, और गुरुदेव सिद्धभगवन्तों का देश दिखा रहे हैं। 'मानो सिद्ध सभा में आ बैठे'। सम्मेदशिखर की महिमा प्रसिद्ध है कि 'एक बार वन्दे जो कोई, ताई नरक पशु गति नहीं होई।'—अरे, नरक-पशुगति तो दूर रहो, अनन्त ऋषि-मुनियों की इस ध्यानभूमि को निहारते हुए सम्पूर्ण संसार विस्मृत हो जाता है और सिद्धपद में ही मन लग जाता है; सिद्ध प्रभु में जिसका मन लगा, उसे संसार ही पूरा छूट जाता है—फिर नरक-तिर्यंच गति की क्या बात!!

यह आनन्द टूंक इस पूर्व दिशा की अन्तिम टूंक है। इस आनन्द टूंक से आनन्द से अभिनन्दनस्वामी को अभिनन्दन करके सोलहवीं टूंक की यात्रा पूरी की। शाश्वत् तीर्थधाम के और तीर्थंकरों के जयनाद से पूरा यात्रासंघ गाज उठा; पर्वत ने भी प्रतिध्वनि करके उसका अभिवादन किया। इस प्रकार पूर्व की ओर की यात्रा पूर्ण होने पर अब पश्चिम की ओर नवकूट की यात्रा बाकी रही। पश्चिम की ओर वापिस घूमते हुए पहले बीच में 'जलमन्दिर' आता है। यह जलमन्दिर यात्रियों के विश्रामस्थान जैसा है। पूर्व दिशा की विजय करने के बाद यात्री यहाँ ही जरा विश्राम लेकर फिर पश्चिम दिशा की विजय के लिये हाथ में लकड़ी लेकर प्रस्थान करते हैं। पश्चिम की ओर जाते हुए बीच में पहली टूंक फिर से आती है, इसलिए यहाँ तक की तीर्थवन्दना लगभग प्रदक्षिणा आकार की बन जाती है।

पहले तो थोड़े दूर से टूंक देखते ही यात्री हर्षित होकर दौड़ते हैं कि यह सत्रहवीं टूंक आयी। परन्तु जहाँ नजदीक जाकर देखते हैं, वहाँ क्षोभ और आश्चर्य के बीच बोल उठते हैं कि अरे, यह तो पहले दर्शन किये थे वही टूंक! यह क्या? वही टूंक फिर से? दूसरे जानकार यात्री स्पष्टीकरण करते हैं कि हाँ भाई, शिखरजी की टूंक की रचना ही ऐसी है कि दर्शन करते-करते फिर से इस स्थान में दूसरी बार आते हैं। यह जानकर स्वयं मार्ग भूले नहीं—ऐसा निर्णय होने से यात्री हर्षपूर्वक फिर से उस टूंक की वन्दना करने लग जाते हैं। यहाँ फिर से गणधर भगवन्तों के चरणकमल के दर्शन करते हुए आनन्द होता है। भक्ति से गणधरों के चरणस्पर्श करने पर ऐसा लगता है कि अहो

गणधरो! इस सेवक पर आपकी परम प्रसन्नता है; आपके चरण प्रसाद से यह सेवक सुखपूर्वक सिद्धिमार्ग को साधता है। अहो, भगवान के गणधर भगवान के पास आकर भगवान जैसे ही हो गये, मोक्ष में भी भगवान के साथ ही गये और अभी ऊपर सिद्धालय में सब एकसाथ विराजते हैं। इसी प्रकार हे भगवन्तो! आपके चरण शरण में आया हुआ यह बालक भी आप जैसा ही होनेवाला है। अभी तो पामर हूँ, परन्तु आपके चरण की भक्ति के प्रसाद से अल्प काल में आपके जैसा ही होने का कोलकरार करता हूँ। हे प्रभु! आपकी पूर्णता और मेरी शुरुआत —इतना ही अन्तर है।

इस प्रकार पुनः गणधर टूंक को वन्दन करके अब पश्चिम की ओर आगे बढ़ते हुए यात्रियों को ऊँची-ऊँची स्वर्णभद्र टूंक नजर के समक्ष ही रहा करती है... और मानो वह टूंक आवाज देकर यात्रियों को बुला रही है। दूर से भी उस भव्य उन्नत टूंक का दर्शन यात्री के आत्मा को आह्लादित करता है। जैसे समकित-साधक को मोक्ष का दर्शन आनन्दकारी है, उसी प्रकार इस मोक्षधाम का दर्शन यात्री को आनन्दकारी है। अहा, पूरे पहाड़ का प्राकृतिक सौन्दर्य-मानो कि मुनिवरों की आत्मसाधना देखने की प्रसन्नता से अभी भी यह पहाड़ अनुभव कर रहा हो! यहाँ विचरते, स्वरूप में झूलनेवाले उन सन्तों का जीवन ज्ञान में तैरता है और मुमुक्षु हृदय में उस दशा की भावना जागृत होती है, इसलिए मुख में से सहज उद्‌गार निकल जाते हैं कि —

चालो... चालो... अे सिद्धजीवन-आदर्श आजे उरमां भरीअे।
चालो... चालो... अे आत्मजीवन-आदर्श आजे उरमां भरीअे।

अहा, ज्ञानी सन्तों के हृदय तो यहाँ संयम भावना से खिल उठते हैं और रत्नत्रय भावना के वे दृश्य देखकर यात्रियों के रोम-रोम उल्लसित हो जाते हैं... अहा, धन्य जीवन और धन्य अवसर कि ऐसे वीतरागी भाव देखने को मिले।

— ऐसी धन्यता अनुभव करते हुए यात्री तीर्थधाम की वन्दना कर रहे हैं। 'सम्मेदशिखर सोहामणुं रळियामणुं रे... सिद्ध्या तीर्थंकर बीस तीरथ ते नमूं

रे...' ऐसा स्तुति में तो गाते परन्तु आज तो उस सुहावना रमणीय शिखरजी धाम को साक्षात् निहारने का और गुरुदेव के साथ उस धाम में विचरने का सुनहरी अवसर आया है, इसलिए इस स्तुति द्वारा शिखरजी धाम को प्रत्यक्ष वन्दना करते हुए आज अद्भुत हर्ष होता है। ऐसे हर्षनाद और जयनादपूर्वक मंगल गीत गाते-गाते एक टूंक से दूसरी टूंक पर जा रहे हैं। यात्रियों का कारवां इतना लम्बा है कि मानो पारस टूंक और जलमन्दिर के बीच एक सांकल रच गयी हो! तीर्थधाम में यात्रियों की इतनी लम्बी हारमाला देखकर नीचे की पंक्ति सहज स्मरण हो आती है।

कोना पगले पगले चाले मुक्तिनी वणझार?
कहानगुरुना पगले चाले यात्रिकनी वणझार...
सम्मेदशिखरना तीरथधाममां केवी छे वणझार?
'सिद्धगिरिना यात्रिक' केरी शोभे आ वणझार...

प्रातः ढाई बजे से पहाड़ चढ़कर लगभग छह बजे टूंकों की यात्रा शुरु की थी, वह अभी लगभग ग्यारह बजे हैं; पाँच घण्टे में सोलह टूंकों की यात्रा हुई। पहली ज्ञानधर टूंक, फिर मित्रधर, नाटक, संबल, संकुल, सुप्रभ, मोहन, निरजर, ललित, आदिनाथ प्रभु की टूंक, विद्युत, स्वयंप्रभ, धवल, वासुपूज्य प्रभु की टूंक और आनन्द टूंक—इस प्रकार सोलह टूंक की आनन्दकारी यात्रा करके अब सत्रहवीं धर्मनाथ प्रभु की सुदत्तवर टूंक की ओर जा रहे हैं। ज्येष्ठ शुक्ल चौथ को धर्मनाथ भगवान ने जहाँ धर्मसाधना सम्पूर्ण की, ऐसी इस टूंक की ओर जाते हुए धर्म भावनाएँ जागृत होती हैं। —

धर्मनाथ जिनराज का कूट सुदत्तवर जेह
मन वच तन कर पूजहूं शिखरसम्मेद यजेह (17)

इस टूंक से धर्मनाथ जिनेन्द्रादि उनतीस क्रोड़ाक्रोड, उन्नीस करोड़, नौ लाख, नौ हजार, सात सौ पिच्यानवे मुनिवर सिद्धि को प्राप्त हुए हैं; उनकी अर्चना करके अठारहवीं टूंक पर आये।

सुमतिनाथ जिनराज का अविचलकूट है जेह
मन वच तन कर पूजहूं शिखरसम्मेद यजेह (18)

सुमतिनाथ भगवान की यह अविचल टूंक चैत्र शुक्ल ग्यारह के दिन भगवान के मोक्ष कल्याणक से पावन हुई है। कुल एक क्रोड़ाक्रोड़ी चौरासी करोड़, बहत्तर लाख, इक्यासी हजार, सात सौ मुनि इस टूंक से मोक्ष पधारे हैं। इन्द्र आकर भगवान के मोक्ष कल्याणक मनाता है और वह वज्र से चिह्न करता है। यह तो प्रसिद्ध है कि सम्मदेशिखर शाश्वत् तीर्थ है और इसके नीचे शाश्वत् स्वस्तिक है।

प्रश्न :— अमुक वर्ष पहले शिखरजी के दर्शन किये, उसमें और अभी के में बहुत अन्तर पड़ गया है। पर्वत की रचना में तथा झाड़ी इत्यादि में बहुत अन्तर नजर में पड़ता है, तो वह शाश्वत् तीर्थ किस प्रकार कहलायेगा?

उत्तर :— जम्बू द्वीप की जो मूल पृथ्वी है, उसका नाम चित्रा पृथ्वी है और अभी जो पृथ्वी की बढ़-घट दिखायी देती है, वह तो चित्रा पृथ्वी के ऊपर नये जमे हुए परत हैं। भरतक्षेत्र इत्यादि में जब (पाँचवें काल के अन्त में) काल का विशिष्ट परिवर्तन (प्रलय) होता है, तब विशिष्ट बरसात और पवन से चित्रा पृथ्वी के ऊपर के परत छूटकर बिखर जाते हैं, उसके साथ सब कृत्रिम रचनाएँ भी नष्ट हो जाती हैं और मूल चित्रा पृथ्वी खुल्ली होती है; वह पृथ्वी स्फटिक जैसी उज्ज्वल है, उस पर मेरुपर्वत, सम्मेदशिखर पर्वत इत्यादि शाश्वत् रचनाएँ कायम रहती हैं। उसमें अयोध्या के स्थान और सम्मेदशिखर पर्वत के नीचे शाश्वत् स्वस्तिक है। इस प्रकार सम्मेदशिखर शाश्वत् तीर्थ है। जैसे तीर्थंकरों के जन्म का शाश्वत् तीर्थ अयोध्या है और जन्माभिषेक का शाश्वत् तीर्थ मेरुपर्वत है, वैसे मोक्ष का शाश्वत् तीर्थ सम्मेदशिखर है। अहा, इस भरतक्षेत्र का महान तीर्थ अचिन्त्य महिमावन्त है। वास्तव में जीवन में उसकी यात्रा अवश्य करनेयोग्य है। बारम्बार भी उसकी यात्रा करने से आनन्द होता है। चाहे जितनी बार उसकी यात्रा करें तो भी उकताहट नहीं लगती—जैसे जिनेन्द्रदेव का समवसरण चाहे जितनी बार देखें

तो भी उकताहट नहीं आती अपितु जिनेन्द्रदेव का समवसरण बारम्बार देखने का मन होता है, इसी प्रकार शिखरजी तीर्थ की बारम्बार यात्रा करने का मन होता है।

अब सामने दिखायी देती ऊँची-ऊँची स्वर्णभद्र टूंक यात्रियों को बहुत ही आकर्षित कर रही है और शीघ्रता से वहाँ पहुँचने के लिये यात्रियों का दिल उत्सुक हो रहा है। इसलिए शीघ्रता से यात्रा चल रही है। पार्श्वप्रभु की टूंक पर पहुँचने के लिये अब बीच में छह ही टूंक बाकी है। जैसे साधक सिद्धि को चाहता है और उसकी परिणति शीघ्र से उस ओर दौड़ती है, उसी प्रकार यात्रियों की नजर उस पारस टूंक पर लगी हुई थी और शीघ्रता से उस ओर जा रहे थे। मोक्ष की ओर जाते हुए बीच में जैसे शान्ति की आनन्दकारी भूमिकाएँ आती हैं, उसी प्रकार यहाँ भी बीच में शान्तिनाथ भगवान की आनन्दकारी टूंक आयी, उस टूंक का नाम 'कुंदप्रभु टूंक।' वाह, कैसा सरस नाम! नाम सुनते ही मानो कुन्दकुन्द प्रभु यहाँ पधारे हों—ऐसा हर्ष होता है। दूसरी टूंकों की अपेक्षा इस टूंक की देहरी विशाल है। किसी-किसी टूंक के चरणपादुका खुले आकाश के नीचे है तो किसी-किसी जगह देहरी के अन्दर हैं। यह कुन्दप्रभ टूंक की विशाल देहरी में अन्दर प्रवेश करते ही एकदम शीतल शान्ति अनुभव में आती है; यात्री का चित्त यहाँ स्थिर होता है और दो घड़ी बैठे रहने का मन होता है। इस उन्नीसवीं टूंक से शान्तिनाथ भगवान वैशाख कृष्ण चौदह के दिन मुक्ति को प्राप्त हुए। भगवान जिस दिन जन्में, उसी दिन मुनि हुए और उसी दिन मुक्ति को प्राप्त हुए। इस टूंक से कुल नौ क्रोडाक्रोड, नौ लाख, नौ हजार, नौ सौ निन्यानवें मुनिवर मुक्ति में पधारे हैं। उन्हें अर्घ्य चढ़ाकर पूजन किया।

शांतिनाथ जिनराज का कुंदप्रभकूट है जेह
मन वच तन कर पूजहूं शिखरसम्मेद यजेह (19)

अहो शिखरजी की यात्रा में नयी-नयी टूंकों पर नया-नया आह्लाद जागृत होता है। यात्रियों को ऐसा लगता है कि भव-भव के पुण्य इकट्ठे हुए हैं कि ऐसे महान तीर्थ के दर्शन हुए, ऐसे महान सन्तों का योग मिला। वास्तव में

संसार के सर्व क्लेश भुला देने के लिये जगत में दो वस्तु महान शरणभूत है— एक तो सन्त और दूसरा तीर्थ। इस सम्बन्ध में एक कवि का गजल पद याद आता है—

सदा संसारनो दरियो तुफानी फेनी अंधारो,
दीवादांडी समा बे त्यां अडग छे संत ने तीर्थो।
भूल्याना भोमिया अे छे, विसामो थाकनारानो,
डूब्याना तारनारा बे सफळ छे संत ने तीर्थो।

सर्व जिज्ञासुओं को अनुभव की बात है कि सन्त की शरण में जीवन के सर्व क्लेश विस्मृत हो जाते हैं और जीवन आनन्दित बनता है। इसी प्रकार तीर्थधाम में जाने पर भी जीवन के क्लेश विस्मृत हो जाते हैं और आराधक जीवों की आत्मसाधना के प्रति बहुमान जागृत होकर स्वयं को भी आराधना का उत्साह प्रगट होता है। सन्त धर्मात्मा स्वयं भावरूप तीर्थ हैं और वे जिस भूमि में विचरे, वह स्थापना तीर्थ है। सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्ररूप पूर्ण तीर्थ की महिमा की तो क्या बात! परन्तु मात्र सम्यग्दर्शन धारक सन्त धर्मात्मा की भी कितनी अगाध महिमा है, वह 'भगवती आराधना' तथा समयसारादि अनेक शास्त्रों में बतलाया है। वीतरागी आचार्यों ने सम्यग्दृष्टि की जो महिमा की है, उसे पढ़ने पर भी जिज्ञासु को रोम-रोम में अत्यन्त प्रसन्नता होती है तो ऐसे धर्मात्मारूप तीर्थ के साक्षात् दर्शन की क्या बात! इस काल में तो साक्षात् भगवान के दर्शन जितना ही धर्मात्मा के दर्शन की महिमा है। अहा, आत्मा का साक्षात्कार प्राप्त जीवों की मुद्रा का साक्षात् दर्शन प्राप्त होना, वह परमात्मा का साक्षात्कार होने के समान है। जिस प्रकार तीर्थ के दर्शन के लिये जीव चाहे जितनी कठिनाई को भी उत्साह से भोगकर भी तीर्थयात्रा करता है, उसी प्रकार आत्मार्थी जीव धर्मात्मा के दर्शन और सत्संग के लिये जगत की चाहे जितनी कठिनाई को भी उत्साह से भोगकर धर्मात्मा का साक्षात्कार करता है। साक्षात् धर्मात्मा के प्रति परम प्रीति-भक्तिरूप उल्लास भाव न जगे, उसे तीर्थ के प्रति भी वास्तविक उल्लास भाव नहीं होता। धर्मात्मा के प्रति भक्तिरहित तीर्थ

महिमा तो भावलिंग से रहित द्रव्यलिंग के समान है। तीर्थ का सम्बन्ध तो धर्मात्मा के गुणों के साथ है। धर्मात्मा की पहिचान और बहुमानपूर्वक ही वास्तविक तीर्थयात्रा होती है, क्योंकि जगत में जो कुछ भी तीर्थ हो, वह कोई भी आराधक सन्त के निमित्त से तीर्थ बना होता है, तो फिर जहाँ आराधक सन्त स्वयं विराजते हैं, वह स्थान तीर्थधामरूप से पूजित हो—इसमें क्या आश्चर्य है! धर्मात्मा जहाँ-जहाँ विराजते हैं, वह सब तीर्थ ही है। उनके वचन भी तीर्थ ही हैं, उनकी देह भी तीर्थ ही है और उनका आत्मा भी तीर्थ है; जिस काल में वे विचरें, वह काल भी तीर्थ है। जगत में सन्त और तीर्थ ये दोनों वस्तुएँ महान कही है; आज तो जगत की दोनों महान वस्तुएँ एक साथ प्राप्त हुई... वहाँ मुमुक्षु के हर्ष की क्या बात! ऐसा महान पावन सुनहरी सुयोग आधुनिक दुनिया में इस भारत के अतिरिक्त कहीं नहीं है। अहा! विश्व के श्रेष्ठ सुयोग की प्राप्ति से आनन्दित हुए मुमुक्षु भव-भव के बन्धन को शिथिल कर डालते हैं और मुक्ति के पुरुषार्थ के प्रति उनका परिणमन होता है।

सन्त और तीर्थों की चाहे जितनी महिमा लिखने पर भी लेखक को सन्तोष नहीं होता, क्योंकि सन्त और तीर्थों की अगाध महिमा उनके साक्षात् सेवन द्वारा ही ख्याल में आ सकती है; उसका वर्णन शब्दों से पूरा नहीं पड़ता। जैसे चैतन्य की अगाध महिमा को पकड़ने के लिये इन्द्रिय-मन के विकल्पों को चाहे जितना दौड़ाओ परन्तु अन्ततः तो चैतन्य की अगाधता के समक्ष थककर वे वापिस ही फिरते हैं। अतीन्द्रियता द्वारा ही चैतन्य की अगाधता की गहराई मपती है; उसी प्रकार सन्त और तीर्थों की महिमा के सम्बन्ध में चाहे जितना लिखने पर भी अन्त में कलम थक जाती है और ऐसा लगता है कि अरे, लेखन में तो यह महिमा किस प्रकार उतर सकेगी? साक्षात् सन्तों की तो कितनी अधिक महिमा और शब्दों में तो कितना थोड़ा आवे!—यात्रा में तो कितना अधिक देखा—अनुभव किया और लेखन में तो कितना थोड़ा आया! इस प्रकार लेखन में अतृप्ति ही रहा करती है। सन्त के समागम की और तीर्थयात्रा की वास्तविक मौज उनके साक्षात्कार द्वारा ही मनायी जा सके ऐसी है और वह

मौज गुरुप्रताप से आज बहुत यात्री मना रहे हैं। किस स्थल में ? कि सम्मेदशिखर जैसे शाश्वत् तीर्थधाम में शान्तिनाथ भगवान की टूंक पर, फाल्गुन शुक्ल सप्तमी के दिन दिनांक (8-3-1957) गुरुदेव के साथ की यह मं...ग...ल... ती...र्थ...या...त्रा... संसार के सर्व क्लेशों को भुला देती है, सर्व थकान को उतार देती है और सिद्धपद के साथ मैत्री कराती है।

सिद्धप्रभु साथे में तो बांधी छे प्रीतडी,
संसार असार मारे तारी छे गोठडी...

— ऐसे भावों का रटन करते-करते शिखरजी तीर्थधाम की यात्रा होती है। शान्तिनाथ प्रभु की टूंक पर बहुत भाव से दर्शन-वन्दनादि करके अब बीसवीं टूंक पर आये हैं। बीसवीं टूंक है वीर प्रभु की—

महावीर जिन सिद्ध भये पावापुर से जोय
मन वच तन कर पूजहूं शिखर नमुं पद दोय (20)

वीर प्रभु कार्तिक कृष्ण चतुर्दशी की पिछली रात्रि में पावापुरी से मुक्ति प्राप्त हुए तथा दूसरे छब्बीस मुनिवर वहाँ से मोक्ष प्राप्त हुए हैं। अभी ही (पाँच दिन पूर्व ही) इस सिद्धिधाम की उमंग भरी यात्रा कर आये हैं; उसके संस्मरण अभी हृदय में गूँज रहे हैं, वहाँ तो यहाँ फिर से वीर प्रभु की टूंक के दर्शन होने से बहुत आनन्द हुआ। वहाँ यात्रा करके अब सातवें सुपार्श्व प्रभु की टूंक पर आये। इस इक्कीसवीं टूंक का नाम प्रभासकूट है। यहाँ से सुपार्श्वनाथ प्रभु सहित उनचास क्रोड़क्रोड़ी, चौरासी करोड़ बहत्तर लाख सात हजार सात सौ बयालीस मुनिवर मुक्ति को प्राप्त हुए हैं। आज ही भगवान के मोक्ष कल्याणक का दिवस है, ऐसा समझकर इस सुपार्श्व प्रभु की टूंक पर विशेष भक्ति-पूजन आदि किये—

सुपार्श्वनाथ जिनराज का प्रभासकूट है जेह
मन वच तन कर पूजहूं शिखरसम्मेद यजेह (21)

इस प्रभास टूंक पर आने पर अनोखा उत्साह था; मानो 'आज' ही

भगवान यहाँ से मोक्ष प्राप्त हुए हों, ऐसे उत्साह से इस टूंक पर पूजन-भक्ति हुए। [यद्यपि सुपार्श्व प्रभु का मोक्ष कल्याणक का दिन तो माघ कृष्ण सप्तमी (शास्त्रीय फाल्गुन कृष्ण सप्तमी) का है। परन्तु तीर्थ पूजा की पुस्तक में फाल्गुन शुक्ल सप्तमी का उल्लेख है इसलिए चन्द्रप्रभु की तरह इस सुपार्श्व प्रभु की टूंक पर भी आज ही उनका मोक्ष कल्याणक समझकर उत्साहपूर्वक पूजनादि किये गये थे।] सुपार्श्व प्रभु की टूंक आते ही यात्री हर्ष से जय-जयकार करने लगे। पूरी टूंक यात्रियों से भरचक थी। किसी ने कह दिया कि आज इन भगवान का मोक्ष का दिन है... बस! पवन की तरह यात्रियों में यह बात फैल गयी और आज ही भगवान के मोक्ष कल्याणक का दिन समझकर सब हर्ष व्यक्त करने लगे। अभी तो गुरुदेव प्रभु चरणों में वन्दन करते हैं, वहाँ किसी यात्री ने गुरुदेव के हाथ में पानी का कलश दिया और गुरुदेव ने प्रमोद से सुपार्श्व प्रभु के चरणों का अभिषेक किया। सम्मेदशिखर में गुरुदेव के सुहस्त से अभिषेक देखकर यात्रियों में बहुत हर्षनाद छा गया। अभिषेक के पश्चात् उल्लासपूर्वक पूजन करके सबने अर्घ्य चढ़ाया और पूज्य बहिनश्री-बहिन ने थोड़ी देर भक्ति करायी, उसमें भगवान के मोक्ष की तथा यात्रा के आनन्द की बधाई व्यक्त की।

मारा नाथनी बधाई आजे छे मारा नाथनी बधाई आंही छे...
एना जयनाद गगनमां गाजे छे... मारा नाथनी बधाई आजे छे...
गुरुदेव हस्ते अभिषेक थाये छे... सुपार्श्वनाथनी बधाई आजे छे...
सम्मेदशिखर धाम केवा सोहे छे! गुरुदेव साथे यात्रा आजे छे...
सेवकनां हैया हरखे उछळे छे... मारा नाथनी बधाई आजे छे....

इस टूंक पर मंगल बधाई का हर्षनाद सुनकर पीछे रह गये थके हुए यात्री भी दौड़ते हुए आ पहुँचे। यात्रासंघ इस टूंक पर थोड़ी देर बैठा! सब यात्री इन्तजार करते हैं कि अब क्या होगा! वहाँ गुरुदेव ने भावपूर्वक आँखें बन्द करके अध्यात्म भावना शुरु की। मोक्ष की टूंक पर मोक्ष के कारणरूप अध्यात्म भावना का प्रवाह गुरुदेव के श्रीमुख से बह रहा है।

हुं एक शुद्ध सदा अरूपी ज्ञानदर्शनमय ख़रे,
कंई अन्य ते मारुं जरी परमाणु मात्र नथी अरे।

बारम्बार यह भावना घुंटने पर गुरुदेव ने कहा—**देखो, यह शुद्धात्मा की भावना! गिरनार की यात्रा के समय (संवत् 1996 में) पाँचवीं टूंक पर यह भावना बोले थे।** फिर टूंक के सामने देखकर भावपूर्वक गुरुदेव ने कहा—**देखो! भगवान ने अयोगी पद यहाँ और आज ही प्रगट किया। यहाँ ही भगवान सिद्ध हुए और यहाँ से ही समश्रेणी से सिद्धालय में ऊर्ध्वगमन किया। अभी ठीक ऊपर अनन्त सिद्ध भगवन्तों के साथ विराजते हैं। अहा! चैतन्य गोला देह से अत्यन्त भिन्न पड़ गया और सर्व परभाव छूट गये—उस चैतन्य दशा की क्या बात! यहाँ उस सिद्धपद का स्मरण होता है और उसकी भावना भाने योग्य है। ऐसे सिद्धपद की पहिचान और भावना करने के लिये यह यात्रा है**—इस प्रकार गुरुदेव ने भक्ति भीने हृदय से बहुत महिमा की, उसे सुनकर यात्रियों का अन्तर परमात्मा के स्मरण में एकाग्र होकर नम्रीभूत हो गया। अहा, इन परमात्मा की पूर्णानन्द दशा की क्या बात! इस अचिन्त्यदशा की जैसी महिमा साधक कर सकेंगे, वैसी अज्ञानी नहीं कर सकेगा। कैसी थी भगवान की दशा... कि —

चार कर्म घनघाती ते व्यवच्छेद ज्यां
भवनां बीज तणो आत्यंतिक नाश जो।
सर्व भाव ज्ञाता दृष्टा सह शुद्धता,
कृतकृत्य प्रभु वीर्य अनन्त प्रकाश जो...

— ऐसी अपूर्व सर्वज्ञदशा तो भगवान को बहुत वर्ष पहले प्रगट हो गयी थी और उस सर्वज्ञतासहित विचरते-विचरते दिव्यध्वनि द्वारा जगत के असंख्य जीवों को प्रतिबोधते-प्रतिबोधते आयुष्य का अल्प काल बाकी रहा, तब भगवान यहाँ सम्मेदशिखर धाम में पधारे और चौथे शुक्लध्यान द्वारा चौदहवाँ अयोगी गुणस्थान प्रगट किया। कैसा है गुणस्थान ? ...कि —

मन वचन काया ने कर्मनी वर्गणा
छूटे जहाँ सकल पुद्गल संबंध जो,
अेवुं अयोगी गुणस्थानक अहीं वर्ततुं
महाभाग्य सुखदायक पूर्ण अबंध जो...

अहा, भगवान को अयोगी गुणस्थान यहाँ प्रगट हुआ था, जहाँ भगवान अयोगी पद को प्राप्त हुए, उसी स्थान में बैठे-बैठे आज साधकों के साथ यात्री भी उसी पद की भावना भा रहे हैं कि 'अपूर्व अवसर ऐसा किस दिन आयेगा?' साधकों का साथ... और सिद्धपद की भावना; सिद्धदशा का क्षेत्र और आज ही सिद्धपद का समय... वाह, कैसा मंगल अवसर!

सुपार्श्व प्रभु के चरण के समक्ष नजर झुकाकर गुरुदेव वैराग्यरस झरती मधुर वाणी से यह भावना गा रहे हैं और उसे सुनकर बहिनश्री-बहिन की भी भक्ति उभर जाती है। अहा, उस समय के भाव! उपशान्तरस का कैसा वातावरण व्याप्त हो गया है! यात्री तो यह दृश्य देखकर स्तब्ध बन गये हैं। क्षण पहले के हर्ष के कोलाहल के बदले एकदम शान्ति पसर गयी है। परमात्मपद की भावना के प्रवाह के बीच में गुरुदेव कहते हैं—**देखो, ऐसी दशा भगवान ने यहाँ ही प्रगट की थी, उसका यहाँ स्मरण होता है**—ऐसा कहकर सिद्धपद को याद करते-करते और वैराग्यरस में झूलते-झूलते गुरुदेव दूसरी कड़ी बोले—

एक परमाणुमात्रनी मळे न स्पर्शता
पूर्ण कलंकरहित अडोल स्वरूप जो...
शुद्ध निरंजन चैतन्यमूर्ति अनन्यमय,
अगुरुलघु अमूर्त सहजपदरूप जो... अपूर्व०

ऐसी दशा में अल्प काल विराजकर और पाँच लघुस्वर (अ इ उ ऋ लृ) बोला जाए इतने उस काल में तो चौथे व्युपरतक्रिया निर्वृति ध्यान द्वारा बाकी की पिच्यासी प्रकृतियों का क्षय करके भगवान सर्व कर्मरहित मुक्त हुए... आज ही और इस क्षेत्र में ही भगवान अभूतपूर्व सिद्धपद को प्राप्त हुए... वाह, धन्य-धन्य

वह दशा! धन्य-धन्य वह काल! और धन्य-धन्य यह भूमि! भगवान जैसे सिद्ध हुए कि उसी समय स्वाभाविक ऊर्ध्वगमन करके लोक के सर्वोत्कृष्ट स्थान में पधारे। भगवान के उस मुक्तिगमन प्रसंग का वर्णन भगवान के मुक्ति धाम में ही बैठे-बैठे गुरुदेव के श्रीमुख से यात्री सुन रहे हैं; ऐसा लगता है कि मानो अपने नजरों के समक्ष ही भगवान का मुक्तिगमन हो रहा हो।

पूर्व प्रयोगादि कारणना योगथी
ऊर्ध्वगमन सिद्धालय प्राप्त सुस्थित जो,
सादि अनन्त अनन्त समाधि सुखमां,
अनन्त दर्शन ज्ञान अनन्त सहित जो... अपूर्व०

गुरुदेव ने प्रमोद से कहा—**ऐसी दशा भगवान ने यहाँ से ही प्रगट की थी, मोक्षदशा का-सिद्धालय में जाने के लिये ऊर्ध्वगमन भगवान ने इसी स्थान से किया था। अपने को याद रह जाएगा कि यात्रा में यहाँ ऐसे सिद्धपद को याद करके उसकी भावना भायी थी।** हजारों यात्री गुरुदेव की इस भावना में साथ दे रहे थे।

अेह परमपद प्राप्तिनुं कर्युं ध्यान में
गजा वगर ने हाल मनोरथरूप जो...
तो पण निश्चय राजचंद्र मनने रह्यो,
प्रभु आज्ञाअे थाशुं ते ज स्वरूप जो...
अपूर्व अवसर अेवो क्यारे आवशे!

इस प्रकार सुपाार्श्व प्रभु की टूंक पर बहुत भक्तिभावपूर्वक गुरुदेव के साथ भावना भाते हुए बैठे थे। वहाँ से उठने का मन नहीं होता था, परन्तु ऊँची-ऊँची स्वर्णभद्र टूंक से पार्श्वप्रभु की आवाज सुनायी दे रही थी कि इस टूंक पर जल्दी आओ। ग्यारह तो बज गये थे और अभी सबसे ऊँची मुख्य टूंक की यात्रा बाकी थी। इसलिए अन्त में यात्रियों ने इस टूंक से जय-जयकारपूर्वक प्रस्थान किया। टूंक को वहाँ रहने दिया परन्तु वहाँ भायी हुई भावनाओं को तो साथ ही लेते आये। पूज्य बहिनश्री-बहिन ने तथा दूसरे सैकड़ों यात्रियों ने बहुत ही

प्रमोद से जय-जयकार करके यात्रा का हर्ष व्यक्त किया... इस जयनाद से पहाड़ गूँज रहा था जिसकी प्रतिध्वनि अभी भी सुनायी देती है।

बोलिये... सुपार्श्वनाथ भगवान की जय हो....
बोलिये... सम्मेदशिखर सिद्धिधाम की जय हो....
बोलये... आज के महामंगल सोनेरी दिन की जय हो...
बोलिये... गुरुदेव साथे अपूर्व तीर्थयात्रा की जय हो...
बोलिये... गुरुदेव के साथ भायी सिद्धपदनी भावना की जय हो...
बोलिये... अनन्तानन्त सिद्धभगवान की जय हो....
बोलिये... सिद्धपद-साधक सर्वे सन्तों की जय हो....

यात्री बहुत ही जोर से जयनाद पुकारते थे... वाह भई वाह! प्रिय पाठक! तू भी इस टूंक से आगे बढ़ने से पहले एक बार जोर से बोले—

शाश्वत्‌सिद्धिधाम सम्मेदशिखरजी की जय हो....

— और पूर्व की ओर हाथ जोड़कर उस तीर्थराज को नमन कर... फिर चल दूसरी टूंक पर।

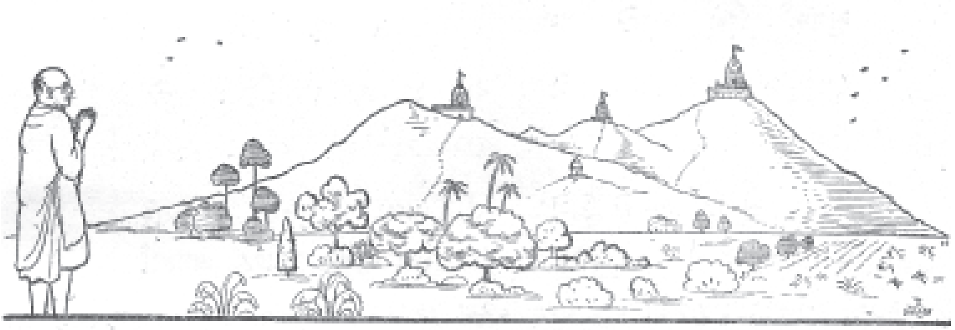

यह टूंक है विमलनाथ भगवान की। इस बाईसवीं टूंक का नाम सुवीर टूंक है। लो, हाथ में अर्घ्य और करो इसकी पूजन!—

विमलनाथ जिनराज का कूट सुवीर है जेह
मन वच तन कर पूजहूं शिखरसम्मेद यजेह (22)

भगवान विमलनाथ ज्येष्ठ कृष्ण अष्टमी के दिन यहाँ से मुक्ति प्राप्त हुए।

कुल सत्तर क्रोड़ाक्रोड़ी, साठ लाख, छह हजार, सात सौ बयालीस मुनिवर इस टूंक से विमल–पद को प्राप्त हुए हैं और उनके पद कमल के प्रताप से यह टूंक 'विमल' बनी है। ऐसी इस विमल टूंक पर विमल भावसहित दर्शन–वन्दन करके 'सिद्धवरकूट' आये।

पाठक! सिद्धवरकूट का नाम सुनते ही आपको नौकाविहारवाला सिद्धवरकूट याद आया होगा। अहा, कैसी आनन्द भरी थी वह यात्रा! वहाँ से दो चक्रवर्ती, दस कामदेव और साढ़े तीन करोड़ मुनिवर मुक्ति को प्राप्त हुए हैं। परन्तु अभी हम जिस सिद्धवरकूट पर हैं, वह तो सम्मेदशिखर के ऊपर का सिद्धवरकूट—मानो सिद्ध भगवन्तों का ऊँचा शिखर! सम्मेदशिखर की इस तेईसवीं टूंक से 1,80,5400000 मुनिवर लोकशिखर को सिधारे हैं। दूसरे तीर्थंकर श्री अजितनाथ भगवान चैत्र शुक्ल पंचमी के दिन यहाँ से मुक्ति प्राप्त हुए हैं।

अजितनाथ जिनराज का सिद्धवरकूट है जेह
मन वच तन कर पूजहूं शिखर सम्मेद यजेह (23)

पार्श्व प्रभु की स्वर्णभद्र टूंक पर जल्दी पहुँचने की धुन में गुरुदेव ने यात्रा जरा शीघ्रता से बनायी है, ऐसा होने पर भी दर्शन, वन्दन, चरणस्पर्श, अर्घ्य और जयकार—ऐसे पंचविध यात्रा प्रत्येक टूंक पर होती है। एक टूंक से दूसरी टूंक के बीच के अन्तराल में चलते–चलते भक्ति करते, जिससे भक्ति की धुन चढ़ने पर चलने की थकान उतर जाती।

तुमसे लगनी लागी जिनवर तुमसे लगनी लागी...
शाश्वत तीर्थ नयणे नीहाळी तुमसे लगनी लागी...
सम्मेदशिखरमां गुरुजी पधार्या आनन्दभेरी वागी...
भक्तिथी अम हैया ऊछळे तीर्थधाम नीहाळी... तुमसे०
जिनेश्वरना धाम नीरखता जिनवर आजे भेट्या....
विदेहसरख़ा सम्मेदशिखरजी शाश्वतधाम नीहाहळया... तुमसे०

आनन्दपूर्वक भक्ति गाते–गाते चौबीसवीं टूंक पर आ पहुँचे। यह टूंक

नेमिनाथ भगवान की है। नेमिनाथ भगवान सौराष्ट्र देश के गिरनार पर्वत के ऊपर से आषाढ़ शुक्ल सप्तमी के दिन मुक्ति प्राप्त हुए हैं। गिरनार पर उनके तीन कल्याणक हुए और इस टूंक की देहरी में प्रभु के चरणपादुका की तीन जोड़ी स्थापित है; श्यामवर्णा प्रभु के शुक्लवर्णा चरण शोभित हो रहे हैं। इस टूंक पर आने पर ऐसा लगता है कि अहो, यह तो अपने सौराष्ट्र के भगवान की टूंक! आनन्द से उस टूंक के दर्शन करके अर्घ्य चढ़ाया।—

नेमिनाथ जिन सिद्ध भये सिद्धक्षेत्र गिरनार
मन वच तन पूजहूं भवदधि पार उतार (24)

गिरनार से मात्र नेमिनाथ प्रभु ही नहीं परन्तु शम्भु, प्रद्युम्न, अनिरुद्ध, आदि कृष्णकुमारों सहित बहत्तर करोड़ सात सौ मुनि मुक्ति को प्राप्त हुए हैं। उनका भी यहाँ स्मरण होता है। वाह, धन्य सौराष्ट्र की वह धरा! कि जहाँ से बहत्तर करोड़ मुनिवर मुक्ति प्राप्त हुए। जहाँ से नेमिनाथ और राजुलमति ने जगत को वैराग्य का सन्देश दिया... और संसार का मोहपाश तुड़ाया... आज भी सौराष्ट्र भूमि सन्तजनों से शोभित हो रही है—ऐसे गौरवसहित नेमिनाथ प्रभु के स्मरणपूर्वक सौराष्ट्र के यात्रियों ने नेमिनाथ टूंक की यात्रा की; और अब अन्तिम एक ही टूंक बाकी रही, वहाँ पहुँचने के लिये जय-जयकारपूर्वक प्रस्थान किया। आनन्दपूर्वक यात्रा पूरी होने में अब एक ही टूंक बाकी है; यात्रियों का हर्ष समाता नहीं है, परस्पर सब अपना हर्ष व्यक्त कर रहे हैं। गुरुदेव भी प्रसन्नतापूर्वक यात्रा की चर्चा कर रहे हैं। साधक सखियाँ आनन्दपूर्वक यात्रा करते हुए मानो कहती हैं कि —

चलो सखी वहाँ जइये जहाँ सिद्धोनां धाम,
यात्रा करीने साधीअे निज रत्नत्रयनां काम,
यात्रा गुरुजी साथमां आनंद अपरंपार,
सिद्धप्रभु ने ध्यावतां सखी! जइये भवोदधि पार।

अहा, शिखरजी के ये पावन दृश्य! और पावन चरण! मानो कि मुमुक्षु यात्रियों को मोक्ष में आने को आमन्त्रित कर रहे हों। सामने दिखायी देती भव्य

उन्नत स्वर्णभद्र टूंक का शिखर साधकों को आवाज देकर सत्कार कर रहा है। सौम्य नजर से इस सिद्धिधाम को देखते हुए साधक के हृदय के मनोरथ आज सफल हुए हैं... और भव की भवावली टूट गयी है। गुरुप्रताप से और महाभाग्य से ऐसे तीर्थ की यात्रा होती है। ऊँचे-नीचे रास्तों को लाँघते-लाँघते यात्री गा रहे हैं कि—

भक्ति भरीने अमे सुवर्णपुरीथी आव्या यात्रा ने काज रे...
धन्य दिन आजे ऊग्यो रे...
सद्‌गुरुदेवना परम प्रतापथी यात्रा अपूर्व थाय आज रे...
धन्य दिन आजे ऊग्यो रे...
सम्मेदशिखरना पवित्र धाममां विचर्या तीर्थंकर अनंत रे...
धन्य दिन आजे ऊग्यो रे...
धन्य तीर्थंकर धन्य समोसर्ण धन्य धन्य आ धाम रे...
धन्य दिन आज ऊग्यो रे...
शाश्वत तीर्थने नयणे नीहाळी जीवन धन्य आज थाय रे...
धन्य दिन आजे ऊग्यो रे...

पूज्य श्री चम्पाबेन-शान्ताबेन इस तीर्थ की पूरी भूमि निरख-निरख कर बहुत ही प्रसन्न होती थीं और अनन्त तीर्थंकर-सन्तों को स्मरण में लाकर बारम्बार गाती थीं कि—

तुज पादपंकज अहीं थया आ देशने पण धन्य छे,
ते मात कूळ ज वंद्य छे ते गाम पूरने धन्य छे।
तारा कर्यां दर्शन अरे, आ जीवन अम कृतकृत्य छे,
तुज पादथी स्पर्शाई एेवी आ धूलीने पण धन्य छे।

इस प्रकार गाते-गाते वहाँ की रज को भक्तिपूर्वक अपने मस्तक पर चढ़ातीं और दूसरे यात्रियों को भी वह पावन रज स्वहस्त से देतीं; और उस समय निम्न श्लोक का स्मरण होता था कि तीर्थ के मार्ग की रज को पाकर मनुष्य रजरहित हो जाता है, तीर्थ में भ्रमण करते हुए जीव को भ्रमण नहीं होता,

तीर्थ के लिये खर्च की जानेवाली सम्पदा स्थिर हो जाती है और तीर्थनाथ की पूजा करने से यह यात्री जगत से पूज्य बनता है।—

श्री तीर्थपान्थरजसा विरजी भवन्ति,
तीर्थेषु विभ्रमणतो न भवे भ्रमन्ति,
तीर्थव्ययादिह नराः स्थिरसम्पदः स्युः
पूज्या भवन्ति जगदीशमथार्चयन्तः॥

अहा, आचार्यों ने तीर्थ की पवित्रता का कैसा मधुर भावभीना वर्णन किया है! गुरुदेव के साथ यात्रा के समय यात्री को वास्तव में ऐसे ही भाव उल्लसित होते थे। तीर्थ की पवित्रता महान है, एक तो धर्मात्मा सन्त और दूसरा तीर्थधाम, ये दो वस्तु जगत में महान है। सन्त, वह जंगम तीर्थ है और सिद्धिधाम इत्यादि तीर्थ, वह स्थावर तीर्थ है; ऐसे तीर्थों की चरणरज को मस्तक पर चढ़ाने से मोहरज दूर भागती है; मोक्षधाम में भ्रमण करते-करते भवभ्रमण से छुटकारे की भावना जागृत होती है; तीर्थधाम में लक्ष्मी खर्च करने से ऐसा लगता है कि मेरी जीवन की कमाई सफल हुई, मेरी सम्पत्ति का उत्तम सदुपयोग हुआ और जिनेन्द्रदेव के प्रति तथा उनके मार्गरूप रत्नत्रय तीर्थ के प्रति परम भक्ति-बहुमान जागृत होता है, मोक्ष के प्रति सम्वेग (उत्साह) जागृत होता है और संसार से निर्वेग (वैराग्य) होता है। तीर्थयात्रा के ऐसे मधुर फल का साक्षात्कार करते-करते यात्री पारसप्रभु की टूंक की ओर जा रहे हैं। ऊँचे-नीचे और चारों ओर तीर्थधाम की शोभा निहारते हुए पारस टूंक पर पहुँचे। अन्त-अन्त में मानो यात्रियों की कसौटी करनी हो, वैसे इस टूंक पर पचास जितनी सीढ़ियाँ हैं... परन्तु यात्री जिसका नाम! वह थकता नहीं, हिम्मत हारता नहीं। प्रतिकूलता से डरता नहीं; वृद्ध यात्री भी लकड़ी के टेके से टक-टक करते हुए पचास-एक सीढ़िया उल्लंघकर पहुँचे पार्श्व प्रभु के द्वार। बस, यह पारस प्रभु की टूंक आते ही यात्रियों को यात्रा की अद्भुत तृप्ति अनुभव में आती है... यात्रा के भाव यहाँ पराकाष्ठा में पहुँचते हैं; अभी शिखरजी महा तीर्थ की सर्वोच्च टूंक पर हम खड़े हैं, ऐसे गौरव से उनका हृदय पुलकित होता है परन्तु चारों ओर घनी झाड़ियाँ

और भव्य पहाड़ों से घिरे हुए इस महा तीर्थधाम की अत्यन्त भव्यता और विशालता के समक्ष नजर करने पर उसके गौरव के समक्ष यात्रियों का हृदय झुक पड़ता है... और मनोमन अनन्त बार नमस्कार हो जाता है।

ऊँची-ऊँची यह स्वर्णभद्र टूंक... मानो शिखरजी का स्वर्णकलश हो, ऐसी शोभित हो रही है। इसकी सोपान श्रेणी चढ़ते हुए मानो मोक्ष की श्रेणी में चढ़ते हों, ऐसा आह्लाद होता है। सम्मेदशिखर अर्थात् मानो मोक्षमहल में जाने की सीधी सीढ़ी! यहाँ से मोक्ष की सीढ़ी समान सीधी श्रेणी मांडकर अनन्त जीव सिद्धालय में सिधारे हैं। ऐसे इस स्थान में अभी हम गुरुदेव के साथ खड़े हैं। सम्मेदशिखर अर्थात् भारत का सर्वोच्च तीर्थ और उसकी भी सर्वोच्च ऐसी यह स्वर्णभद्र टूंक, वहाँ भारत के सर्वोच्च सन्त के साथ यात्रा करते हुए यात्रियों को जो आनन्दोल्लास जागृत होता है, वह जीवन भर विस्मृत नहीं होता। जीवन में भाग्य से ही देखने या सुनने को मिले ऐसे धर्मात्मा के उत्कृष्ट भक्तिभाव और भावनाएँ यहाँ साक्षात् देखने और सुनने को मिले हैं। यात्रियों के हृदय में से शिखरजी के दर्शन का आनन्द उभराता है—

आज गिरिराज निहारा... धनभाग्य हमारा... आज०
श्री सम्मेद नाम है जाको... भूपर तीरथ प्यारा... आज०
यहाँ बीस जिन मुक्ति पधारे, अवर मुनीश अपारा,
आर्यभूमि शिखा मणि सोहे, सुरनर मुनिमन प्यारा... आज०
तहाँ स्थिर योग धार योगीश्वर निज पर तत्त्व विचारा,
निज स्वभाव में लीन होय कर सकल विभाव निवारा... आज०
दो हजार तेरह विक्रम के चंद्रप्रभु मोक्ष दिना,
कहानगुरु साथ वन्दन करते आनन्द भरभर पीना... आज०

शिखरजी की अपार महिमा के सम्बन्ध में जो पढ़ा था, जो सुना था और जिसकी भावना भायी थी, वह सब आज नजरों से निहार रहे हैं; जैसे ज्ञानी से सुना हुआ, शास्त्र में पढ़ा हुआ और मन में भाया हुआ चैतन्य तत्त्व अन्तर में नजर से निहारने पर मुमुक्षु आनन्दित होता है, उसी प्रकार शिखरजी धाम को नजरों

से निहार कर यात्री आनन्दित होता है—ऐसा आह्लाद जागृत होता है कि मानो अभी ही यहाँ ही आत्मा की उत्कृष्ट धुन जगाकर कृतकृत्य दशा प्रगट कर लें। मुमुक्षु को यहाँ आत्मरस उत्कृष्ट रूप से घोलन होता है। जैसे अध्यात्म के अनुभव में मस्त मुनियों के लिये वन-गुफा योग्य निवासस्थान है, इसी प्रकार अध्यात्म की गहरी भावना के लिये यह अध्यात्म तीर्थधाम सर्व प्रकार से योग्य है, और उसमें भी आध्यात्मिक सन्तों का साथ मिल गया, फिर तो पूछना ही क्या!

प्रिय पाठक! स्वर्णभद्र टूंक की यात्रा का वर्णन पढ़ने के लिये तुम्हारा हृदय अधीर हो रहा होगा, परन्तु शिखरजी धाम ऐसा अलौकिक है कि उसके प्रति की ऊर्मियाँ रोकी नहीं जा सकती। हृदय में हजारों-लाखों ऊर्मियाँ जागृत होती हैं। चलो, उन ऊर्मि भरे हृदय से पहले स्वर्णभद्र टूंक की वन्दना कर लें—

पार्श्वनाथ जिनराज का स्वर्णभद्र है कूट
मन वच तन कर पूजहूं जाउं करम से छूट (25)

ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखर-सिद्धिधाम में स्वर्णभद्र टूंक पर फाल्गुन शुक्ल सप्तमी दिने गुरुदेव के साथ यात्रा महोत्सव में पार्श्वनाथ जिनेन्द्र आदि करोड़ों मुनिवरों के चरणकमल पूजनार्थे महाअर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा....

पार्श्वप्रभु की इस पच्चीसवीं टूंक से 82,85,45,742 मुनिवर मुक्ति प्राप्त हुए हैं। पार्श्वनाथ प्रभु श्रावण शुक्ल सप्तमी के दिन मुक्ति प्राप्त हुए हैं, उस दिन को '**मोक्ष सप्तमी**' कहा जाता है। इस तीर्थधाम में से मोक्ष प्राप्त करनेवाले तीर्थंकरों में पार्श्वनाथ भगवान अन्तिम हैं। इसलिए इस पहाड़ का नाम भी भगवान के नाम से 'पार्श्वनाथ हिल' रूप से अभी प्रसिद्ध है; यहाँ के रेलवे स्टेशन का नाम भी 'पारसनाथ' है।

सम्मेदशिखर की इस सबसे ऊँची स्वर्णभद्र टूंक पर एक शिखरबन्ध मन्दिर है। अनेक मिलों दूर से सबसे पहले इसके दर्शन होते हैं। इस मन्दिर की वेदी पर पार्श्वनाथ प्रभु के श्यामवर्णा चरणपादुका स्थापित है। इतिहासकार कहते हैं कि पहले इस मन्दिर में पार्श्वनाथ प्रभु की दिगम्बर प्रतिमाजी थीं।

'जैन तीर्थ और उनकी यात्रा' में बाबू कामताप्रसादजी इस सम्बन्ध में लिखते हैं कि ***'सम्मेदाचल यह महापवित्र तथा अत्यन्त प्राचीन सिद्धक्षेत्र है, जिसकी वन्दना करना प्रत्येक जैनी अपना अहो भाग्य समझता है। अनन्तानन्त मुनिगण यहाँ से मुक्त हुए हैं। अनन्त तीर्थंकर भगवान अपनी अमृतवाणी और दिव्यदर्शन से इस तीर्थ को पवित्र बना चुके हैं। इस युग के अजितनाथ आदि बीस तीर्थंकर भगवान यहाँ से मोक्ष पधारे हैं। निःसन्देह इस तीर्थराज की महिमा अपार है। इन्द्रादिक देव उसकी वन्दना करके अपना जीवन सफल हुआ समझते हैं।'***

'इस सिद्धाचल पर देवेन्द्र ने आकर जिनेन्द्र भगवान की निर्वाणभूमियाँ चिह्नित कर दी थी, उन स्थानों पर सुन्दर शिखरें चरणचिह्न सहित निर्माण की गई थी। कहते हैं कि सम्राट श्रेणिक के समय में (अर्थात् कि महावीर भगवान के समय में) वे अतीव जीर्णशीर्ण अवस्था में थी यह देखकर उन्होंने स्वयं उनका जीर्णोद्धार और भव्य टोंके निर्माण करा दीं। संवत् 1619 में यहाँ पर दिगम्बर जैनियों का एक महान जिनबिम्ब प्रतिष्ठा उत्सव हुआ था। पहले पालगंज के राजा इस तीर्थ की देखभाल करते थे... पार्श्वनाथ की टोंकवाले मन्दिर में दिगम्बर जैन प्रतिमा ही प्राचीनकाल से रही है। "Image of PARSVANATH to represent the saint sitting naked in the attitude of maditation." - H.H. Risley, Statisticial Act of Bengal XVI 207 ff.

उपरोक्त उल्लेख से ज्ञात होता है कि इस पार्श्वप्रभु की टूंक पर पहले जिनप्रतिमा थी, परन्तु अभी तो मात्र चरणपादुका ही है। इस पार्श्वनाथ टूंक से सम्पूर्ण पर्वत का दृश्य बहुत ही सुहावना लगता है; चन्द्रप्रभ की टूंक इत्यादि अनेक टूंकें यहाँ से दिखायी देती है। समुद्र के स्तर की अपेक्षा 4480 फीट ऊंचे पार्श्व प्रभु के चरणपादुका को सबने आनन्द से भेंटा और भक्ति से अर्घ्य चढ़ाया, फिर प्रभु के चरणस्पर्श करके आनन्द से गाते-गाते प्रदक्षिणा की—

जय पारस जय पारस जय पारस देवा...
सम्मेदशिखर पर आप विराजे हो देवन के देवा... जय०

बनारसी में जनम लिया प्रभो आनन्द मंगलकारा...
सम्मेदशिखर से मोक्ष पधारे वन्दन आज अमारा... जय०

पहले इस मन्दिर का अन्दर का भाग विशाल था परन्तु अब इसमें फेरफार कर दिया होने से अन्दर जगह सकड़ी है, अन्दर भक्ति करने के लिये यात्रियों का समावेश नहीं हो सकता था, इसलिए टूंक के पास बाहर के चौगान में भक्ति की गयी थी। पार्श्व प्रभु की इस टूंक की वन्दना पूरी होने पर सम्मेदशिखर तीर्थधाम की पच्चीसों टूंकों की वन्दना पूरी हुई और यात्रियों ने बहुत महान हर्षपूर्वक जय-जयकार से पहाड़ को गजा दिया—

बोलिये... पार्श्वनाथ भगवान की जय हो।
बोलिये... अनन्त तीर्थंकर भगवान की जय हो।
बोलिये महान तीर्थधाम सम्मदेशिखर की जय हो।
बोलिये... अनन्तानन्त मुनीश्वरों की जय हो।
बोलिये... अपूर्व यात्रा करानेवाले कहानगुरुदेव की जय हो।
बोलिये... सर्व आत्मसाधक सन्तों की जय हो।
बोलिये... आनन्द मंगलकारी यात्रा भक्ति की जय हो।

卐

— इस प्रकार जय-जयकार करके मन्दिर के बाहर आने पर बहुत से यात्रियों को ऐसा लगा कि यात्रा पूरी हो गयी, इसलिए वे तो पहाड़ उतरने लगे परन्तु भक्ति का एक महान प्रसंग तो अभी बाकी था; पूरे शिखरजी तीर्थ की यात्रा का हर्ष करनेवाली भक्ति अभी बाकी थी। सम्मेदशिखर की पच्चीस टोंकों की यात्रा पूर्ण करके उसके सर्वोच्च शिखर-स्वर्णशिखर पर यात्री बैठे और गुरुदेव यात्रियों के साथ यात्रा के आनन्द की चर्चा-वार्ता करने लगे। उस समय का दृश्य सुन्दर था। जैसे धर्मकाल में या विदेहक्षेत्र में कोई महान आचार्य-सन्त चारों ओर सैकड़ों मुनियों के समूह के बीच विराजमान हों और आनन्दपूर्वक चैतन्य की चर्चा करते हों—वह दृश्य कैसा अद्‌भुत होगा! उसी प्रकार यहाँ भी सिद्धिधाम के शिखर पर सैकड़ों मुमुक्षु यात्रियों के बीच विराजमान गुरुदेव जैसे

सन्त यात्रा की आनन्दकारी चर्चा करके अध्यात्मरस का पोषण करते थे, वह दृश्य अद्भुत था। उस वातावरण में सिद्ध भगवन्त और केवली भगवन्तों का समूह तथा साधक मुनिवरों का समूह भी मानो यहीं अभी इस यात्रा महोत्सव में पधारा हो... और उनकी मण्डली में ही सब बैठे हों, ऐसे उनके स्मरण जागृत होते थे। वे स्मरण हृदय में बहुत ही भक्ति जगाते थे। यहाँ प्रथम गुरुदेव ने प्रसन्नतापूर्वक भक्ति करायी। सम्मेदशिखर जैसा तीर्थ और गुरुदेव जैसे यात्री... फिर भक्ति में क्या कमी रहे ? तीर्थंकर इस भूमि में विचरे हैं और चारणमुनि यहाँ जिनवन्दना करने आते हैं—ऐसे-ऐसे वर्णन से भरपूर पूज्य बहिनश्री-बहिन ने बनाया हुआ गायन गुरुदेवश्री के श्रीमुख से भक्ति द्वारा सुनकर यात्रियों को तीर्थंकर और मुनियों के साक्षात् दर्शन जैसा आह्लाद होता था और ऐसा लगता था कि अहा, अपने जीवन का यह दिन धन्य है कि गुरुदेव के साथ ऐसे उत्तम भाव से ऐसे महान तीर्थ की यात्रा हुई। गुरुदेव को भी आज भक्ति की कोई अनोखी ऊर्मियाँ उल्लसित हो रही है। जैसे प्रभु के समवसरण में बैठे हुए जीव को वहाँ से हटने का जरा भी दिल नहीं होता, उसी प्रकार गुरुदेव के साथ सिद्धभूमि की टोंच पर बैठे हुए यात्रियों को भी नीचे उतरने का दिल नहीं होता था। बस, मानों यहीं रहकर सिद्ध भगवन्तों की उपासना ही करनी हो... और इसके अतिरिक्त दूसरा कुछ कार्य ही जीवन में न हो—ऐसी लवलीनता से गुरुदेव ने भक्ति करायी। 'पार्श्व जिणन्द को प्रीत से नित्य वन्दूं'—इत्यादि स्तवन जैसे-जैसे गवाते गये, वैसे-वैसे भक्ति का रंग बढ़ता गया... गुरुदेव के मुख से प्रवाहित वैराग्य से भरपूर भक्ति का झरना... उसके शान्तरस में मग्न बहिनश्री-बहिन इत्यादि को ऐसा लगता था कि अहा! ऐसी मधुर भक्ति सुनते ही रहें... दूसरे अनेक यात्री भी ऐसी सरस यात्रा भक्ति हुई, उस सम्बन्धी अपना उल्लास और प्रमोद गुरुदेव के समक्ष व्यक्त करते थे। सम्पूर्ण यात्रासंघ में हर्षोल्लास छा गया था... परन्तु गुरुदेव का ध्यान तो शिखरजी धाम की भक्ति में ही तल्लीन था... हृदय की गहरी भावना से दो स्तवन गवाकर फिर गुरुदेव ने बहिनों को भक्ति कराने को कहा। और पूज्य बहिनश्री-बहिन ने बहुत ही भक्तिभाव से दो स्तवन गवाये;—

विचरंता चोबीस जिनने वंदुं भावे......
शाश्वत जिनधामने वंदुं भावे, शाश्वता सिद्धिधामने वंदुं भावे...
सम्मेदशिखरनी अद्‍भुत अेवी शोभा, हांरे जिहाँ विचरंता जिनदेवा,
हांरे गणधर-मुनिवर करे जस सेवा, हांरे देखुं धन्य अे दृश्य...
....विचरंता चोबीस जिनने वंदुं भावे....
....शाश्वता सिद्धिधामने वंदुं भावे....

(और दूसरा स्तवन था भगवान की लगनी का)

તુમસે લગની લાગી જિનવર તુમસે લગની લાગી
સંમેત શિખરમાં ગુરુજી પધાર્યા આનંદ ભેરી વાગી
ભક્તિથી અમ હૈયાં ઉછળે તીર્થધામ નીહાળી-તુમસે.
જિનેશ્વરના ધામ નીરખતા જિનવર આજે ભેટ્યા
વિદેહ સરખા સમેતશિખરજી શાશ્વત ધામ નીહાળ્યા-તુમસે.
પાવન જિનના ચરણ ઉપાસ્યા કરી કરી પાવનકારી
સમેતશિખરના શુભ તટમાં સ્વસ્તિક મંગળકારી-તુમસે.
સાદિ અનંતનો સાધક ગુરુજી લગની તારી લાગી
નિત્યે ગુરુજી સંગે રહીએ ચરણોના બલિહારી-તુમસે.

इस प्रकार सम्मेदशिखर की स्वर्णभद्र नामक सर्वोच्च टूंक पर भावभीनी भक्ति हुई। जैसे ज्ञान के बाद का वैराग्य अलग ही प्रकार का होता है, उसी प्रकार गुरुदेव के साथ की यात्रा के बाद की यह भक्ति भी अलग प्रकार की थी। यात्रियों के साथ पर्वत ने भी प्रतिध्वनि करके उस भक्ति में साथ दिया। आज की भक्ति देखने पर ऐसा लगता था कि वाह! परोक्ष जिनवरों के प्रति भी साधकों को इतनी भक्ति उल्लसित होती है तो प्रत्यक्ष जिनवर की क्या बात!

गुरुदेव को आज की सम्मेदशिखर तीर्थ की यात्रा भक्ति में ऐसा अद्भुत आह्लाद आया... उसका अनुमान तो इससे ही हो जाता है कि जैसे ही यात्रा और भक्ति पूरी हुई कि यात्रा की पूर्णता के उल्लास में उन्होंने निम्नानुसार जय बुलायी—

सम्मेदशिखरजी तीर्थधाम की... जय हो।
श्री चंद्रप्रभु भगवान की......... जय हो।
श्री पारसनाथ भगवान की........ जय हो।
श्री शाश्वत निर्वाणधाम की....... जय हो।

अठारह वर्ष के परिचय में लेखक के ख्याल प्रमाण पूज्य गुरुदेव ने स्वयं जय बुलायी हो ऐसे मात्र तीन प्रसंग बने हैं। पहली बार संवत् 2005 में मगसिर कृष्ण अष्टमी को जब प्रवचन में (आठवीं बार) समयसार की समाप्ति हुई, तब गुरुदेव ने 'समयसार भगवान की जय' बुलायी थी। दूसरी बार संवत् 2010 में गिरनार यात्रा के समय गिरनार के जिनमन्दिर में 'गिरनार गिरि पर तीन कल्याणक प्राप्त नेमिनाथ भगवान की जय' बुलायी थी और तीसरी बार आज संवत् 2013 में फाल्गुन शुक्ल सप्तमी को सम्मेदशिखर की स्वर्णभद्र टूंक पर गुरुदेव ने जय बुलायी थी। अहा! ऐसी महान तीर्थयात्रा का अत्यन्त प्रमोद गुरुदेव ने जयकार द्वारा व्यक्त किया... वह जयनाद हजारों यात्रियों ने बहुत ही उमंग से झेला और यात्रियों के हृदय में से उस जयनाद की प्रतिध्वनि उठी कि—

सम्मेदशिखर तीर्थधाम की अपूर्व यात्रा करानेवाले
गुरुदेव की जय हो।

卐

पश्चात् वहाँ यात्रा सम्बन्धी चर्चा-वार्ता चली और शिखरजी तीर्थ की बहुत महिमा की गयी। गुरुदेव के श्रीमुख से शिखरजी की परम महिमा और सिद्धपद की ऊँची-ऊँची भावनाएँ सुनकर यात्रियों के हृदय आनन्द से डोल उठे थे। आनन्दकारी यात्रा की पूर्णता की उल्लास तरंगें चारों ओर फैल गयी थीं। अहा! मानो गुरुदेव के साथ सिद्ध भगवान को भेंट आये और अब तो बस! इस

सिद्धपद की आराधनामय ही अपना जीवन बन जाए—ऐसी ऊर्मियाँ अन्तर से वेदन में आती थीं। बहिनश्री–बहिन, दोनों ने भी कहा कि गुरुदेव के प्रताप से अद्‌भुत यात्रा हुई। अहा, इस यात्रा की क्या बात करना ? कितने ही आनन्दकारी प्रसंग ऐसे होते हैं कि जो वाणी से व्यक्त नहीं किये जा सकते। ऐसा ही जीवन का यह यात्रा का धन्य प्रसंग है। यहाँ मुरब्बी श्री नानालालभाई, रामजीभाई, खीमचन्दभाई, आनन्दभाई जसाणी, मूलजीभाई, प्रभुदासभाई तथा रतिभाई घीया, नेमिचन्दजी पाटनी, भाई श्री हिम्मतभाई तथा वजुभाई, ब्रह्मचारी भाई, ब्रह्मचारी बहिनें तथा बहुत गाँवों से आये हुए संख्याबन्ध यात्री भाई–बहिन गुरुदेव के साथ हुई अपूर्व यात्रा का आनन्द अनुभव करते थे और जीवन को सफल मानते थे।

रात्रि दो बजे से शिखरजी पर चढ़े हैं, पच्चीस टूंक की यात्रा आनन्दोल्लास से पूर्ण की है परन्तु गुरुदेव के साथ यात्रा करते हुए तीर्थभक्ति का ऐसा रंग चढ़ा है कि अब पहाड़ से नीचे उतरना सुहाता नहीं। जैसे वास्तविक आत्मार्थी को चैतन्य का ऐसा रंग चढ़ता है कि परभाव में कहीं उसे सुहाता नहीं है, उसी प्रकार यात्रियों को तीर्थधाम छोड़कर अन्यत्र कहीं जाना सुहाता नहीं है। अहा, मानो तीर्थधाम में ही रहें और साधकभाव के रंग से आत्मा को रंग दें। अनन्त साधकों ने जहाँ निजपद को साधा है, ऐसी इस साधनाभूमि में आये हैं तो यहाँ ही निजपद को साध लें! ऐसी अकथ्य गहरी ऊर्मियाँ जागृत होती थीं।

शाश्वत् सिद्धिधाम सम्मेदशिखरजी को भेंटने की भावना बहुत उल्लासपूर्वक पूरी करके गुरुदेव ने पर्वत से नीचे उतरने की शुरुआत की। हृदय में भरे हुए यात्रा के संस्कार हृदय के भनकार के साथ धप्–धप् होते थे... यात्रा का पवित्र प्रसंग जीवन में हमेशा याद रहेगा और सिद्धिपन्थ की पुनीत प्रेरणा हमेशा देता रहेगा—ऐसी लगन सब यात्रियों में दिखायी देती थी। अहो, सिद्ध भगवन्तों! आज बारह घण्टे मैंने आपके पवित्र धाम में वास किया... आपकी पवित्र सिद्धभूमि के स्पर्शन से मेरा आत्मा पावन हुआ... मुझे आपके पवित्र मार्ग की प्राप्ति हुई... और दुनिया तो मानो कहीं विस्मृत हो गयी! अनन्त तीर्थंकर

भगवन्तों की और सन्तों की पवित्र चरणरज को बारम्बार मस्तक पर चढ़ाकर तीर्थराज का बहुमान किया, इतना ही नहीं—'यह भी तीर्थ का अंश है और उसे जब देखूँगा, तब तीर्थ का ही स्मरण होगा'—ऐसा मानकर वहाँ की चरणरज को बहुमानपूर्वक साथ में ले लिया।

गुरुदेव के साथ इस सिद्धिधाम की यात्रा ऐसे भाव से हुई—मानो कि अदृश्य ऐसे सिद्ध भगवन्तों को दृश्यमान किया... सिद्धिधाम में विचरते हुए मुमुक्षु हृदय में कदम-कदम पर सिद्धस्वरूप का साक्षात् चितार खड़ा होता था... और मानो कि स्वयं उस सिद्धों की मण्डली के बीच ही बैठे हों, ऐसे अचिन्त्य भाव साधकों को उल्लसित होते थे। ऐसे धाम में से उतरने से पहले एक बार फिर से नयन भर-भरकर शिखरजी का अवलोकन किया और हृदय में उसकी अचिन्त्य महिमा भरी : वाह शिखरजी धाम! तुम्हारा स्थान भारत के तीर्थों में सर्वोत्कृष्ट है। अनन्त चौबीसी के अनन्त तीर्थंकर और अनन्त मुनिश्वरों ने यहाँ से सिद्धपद साधा है और उनकी साधना के प्रताप से यहाँ का कंकर-कंकर पूजनीक बन गया है। चारों ओर व्याप्त यह पूरा गौरवपुंज यहाँ स्वर्णभद्र टूंक से नजर समक्ष दिखायी देता है, यहाँ से मानो कि सिद्धलोक बहुत ही निकट हो, ऐसा लगता है और अनन्त सिद्धों तथा उनकी साधना स्मृति में आती है; जीवन में कभी विस्मृत न हो ऐसी उच्च भावनाएँ हृदय में उत्कीर्ण हो जाती है। उतरने से पहले सबने बारम्बार उस पावन सिद्धिधाम को नमस्कार किया... अयोगी भगवन्तों की इस भूमि को नमस्कार! सिद्धभूमि को नमस्कार! अहा, कैसा पवित्र देश! हे भगवान! आपके देश में आकर मैं दुनिया को भूल गया। दुनिया के दुःख दूर हो गये... आत्मा साधकभाव की ओर जागृत हुआ। अन्त में नमस्कार मन्त्र के शान्तिजाप करके मंगल जयनाद करते-करते, घण्टनाद गजाते-गजाते और बारम्बार उस तीर्थ की यात्रा करने की भावना भाते-भाते, भगवान के साथ निकट मुक्ति का कोल-करार करके आनन्द से यात्रा पूरी की।

उतरते-उतरते सब यात्री परस्पर में आनन्दकारी चर्चा करते हुए कहते थे कि वाह! यात्रा तो अद्‌भुत हुई... टूंक-टूंक पर अद्‌भुत भाव उल्लसित होते थे... धर्मात्मा को सिद्ध प्रभु के प्रति कैसी परम अद्‌भुत भक्ति होती है, यह आज

देखने को मिला... भूख-प्यास या थकान तो याद भी नहीं आते थे... समवसरण में भूख-प्यास या थकान कहाँ से लगे? ऐसी यात्रा महान भाग्य से ही होती है। जैसे तीर्थंकर के साथ उस काल के जो गणधरादि मुनि और श्रावक विचरण करते होंगे, उन्हें कैसा आनन्द होता होगा! वैसे यहाँ भी यात्रियों को गुरुदेव के साथ तीर्थधाम में विचरने पर आनन्द होता था। मानो पूर्व के दृश्य ही वर्तमान में नजरों में तैरते थे। गुरुदेव भी प्रमोद से कहते थे कि आज जीवन का एक अगत्य का प्रसंग बना; यह यादगार बनी रहेगी। यात्रा बहुत सरस हुई। यात्रा के आनन्द-मंगल गाते-गाते सब नीचे उतर रहे थे। उतरते-उतरते शिखरजी की शोभा निहारते हुए आँखें स्थिर होती थी... सम्मेदशिखर पर्वत बहुत बड़ा विशाल और भव्य है... उसकी दिव्य प्राकृतिक शोभा अद्‌भुत है, रास्ते भारी घनी झाड़ियोंवाले हैं। दो मिनिट का अन्तर हो तो भी लोग एक-दूसरे को नहीं देख सकते। उसमें भी छोटे पगडण्डी के रास्ते तो ऐसी घनी झाड़ियों के बीच से गुजरते हैं कि मानो गहरी गुफा में चलते हों, ऐसा लगता है। जगह-जगह केले इत्यादि के वृक्ष खड़े हैं, तदुपरान्त हरडे इत्यादि हजारों प्रकार की औषधियाँ और रंग-बिरंगी पुष्प लतायें चारों ओर छायी हुई है। रास्ते में जगह-जगह ध्यानयोग्य स्थल हैं... वे आज ध्यानस्थ मुनिवरों बिना खाली सूनसान लगते हैं। अहा, मुनिवर यहाँ विराजते हों... कोई मुनि भगवन्त मिल जाए... तो यहीं रह जाएँ और चैतन्य की अनुभूति को साधें—ऐसी ऊर्मियों से घड़ी भर तो पैर शिखरजी पर स्थिर हो जाते हैं। तीर्थभूमि की वे पावन झाड़ियाँ और पहाड़ी देखने पर ऐसा लगता है कि शिखरजी अपना ही तीर्थधाम है। वह कोई परदेश नहीं है। वह तो अपने अनन्त तीर्थंकरों का स्वदेश है... अपने धर्मपिता का यह साधनाधाम है... अनन्त तीर्थंकर मुनि यहाँ विचरे हैं और आत्मा के परमात्मपद को यहाँ से साधा है। वाह, धन्य है इस भूमि को! ऐसी भूमि में आराधक जीवों को तो आराधना की ऊर्मियाँ जागृत होती है और प्रमोदपूर्वक चैतन्य की चर्चा-वार्ता करता है। मुनियों के धाम में आकर मुनि जैसे होवें, केवलज्ञान साधें और सिद्धरूप बनें—ऐसी उत्तम भावनाएँ जगती हैं। यह तीर्थभूमि भी यात्रियों को ऐसी ही प्रेरणा दे रही है कि हे यात्री, अब तो बस! जीवन में आत्मध्यान कर-

करके आत्मा को साधना, वही करना है... वही आदर्श है, वही ध्येय है। यद्यपि ऐसी भावना के साथ शीघ्रता से पहाड़ उतरा जाता था परन्तु मुमुक्षु का मन पहाड़ उतरने में नहीं था... मुमुक्षु का मन तो ऐसी उत्तम भावनाओं में रुका हुआ था... और पहाड़ उतरने का काम तो पैर करते थे। एक-एक यात्री का हृदय यात्रा के उल्लास से उछलता था। पहाड़ चढ़ते समय गुरुदेव का साथ था और पहाड़ उतरने में भी गुरुदेव साथ में होने से यात्रियों को अद्‌भुत आनन्द आता था। सफल यात्रा की प्रसन्नता सबके मुख पर छायी हुई थी और वचन द्वारा भी सब हर्ष और भक्ति व्यक्त करते थे।

अहा, यह यात्रा तो वीतरागी भावना का एक महोत्सव था, वहाँ तीर्थ भक्ति के तोरण बँधे हुए थे और संयम भावना के वाजिन्त्र बजते थे। जीवन भर न भूली जा सके ऐसी यह उत्तम यात्रा जिनके प्रताप से हुई, उनके उपकार को भी यात्री भव-भव में नहीं भूलेंगे—सदा ही उनकी हृदय सितार में से झनकार उठा करेगी कि—

एवा संतनी चरणरजने मारे शिर चडावुं....
हुं सेवक छुं अे संतोनो मारे पण त्यां जावुं....
सोहे सम्मेदशिखरनां धाम... भावे करतां यात्रा... आजे उल्लसे आतमराम

卐 卐 卐

यात्रा की पूर्णता के प्रसंग पर भक्त यात्रियों के हृदय में ऐसा वेदन होता है कि हे भगवन्तों! हे अनन्त जिनेन्द्रों! आपके इस पवित्र मुक्तिधाम की यात्रा करने की हमारी भावना आज पूरी हुई... हमारा मनोरथ आज सफल हुआ... भगवन्तों की आज भेंट हुई... हे गुरुदेव! आपका इस जीवन में परम उपकार है... आज इस महा मंगल शाश्वत् तीर्थधाम की यात्रा हुई, वह आत्मा के हित का कारण है।

आनन्द-महोत्सवपूर्वक यात्रा करके पहाड़ से उतर रहे गुरुदेव जब रंग-बिरंगी पुष्प झाड़ियों के बीच से गुजरते थे, तब सुन्दर पुष्पों से झूलते पर्वत के ऊपर के वृक्ष ऐसे सुशोभित लगते थे मानो पर्वत गुरुदेव को पुष्पांजलि

चढ़ाकर आवकारता हो और फिर से शीघ्र-शीघ्र यात्रा करने पधारना—ऐसा आमन्त्रण प्रदान करता हो। उन्नत शिखरों और घनी झाड़ियों से आच्छादित धीर, गम्भीर, उपशान्त दृश्य 'यहाँ भगवान विचरे हैं' ऐसी प्रतीति कराते थे। ढलती शाम का उपशान्त वातावरण, मुनियों के ध्यान से पावन हुई भूमि चारों ओर पहाड़ों के बीच वन की नीरव शान्ति... यह सब सन्तों की ध्यानदशा का स्मरण कराता था। अहो, हमारे धर्मपिता यहाँ परमात्मध्यान करते थे। हे मेरे नाथ! मैं आपका पुत्र, आपके पदचिह्नों पर आपके निकट आ रहा हूँ। गुरुदेव को भी बहुत प्रसन्नतापूर्वक ऐसी भावनाएँ जागृत होती थी। इस प्रकार भगवन्तों की पवित्र भूमि देखते-देखते मुनियों की ध्यान दशा को याद करते-करते, और आत्महित की भावनाएँ भाते-भाते पर्वत से उतरते थे। लगभग तीन मील पर श्वेताम्बर तथा दिगम्बर दोनों के विश्राम स्थल आते हैं, वहाँ यात्रियों को नाश्ता भी दिया जाता है... और बगल में बहता हुआ एक झरना पर्वत की प्राकृतिक शोभा में वृद्धि करता है। मंगल गीत गाते-गाते लगभग दो बजे सब नीचे आ पहुँचे... हर्ष भरे जयघोष से शिखरजी तलहटी गूँज उठी... प्रातः दो बजे सिद्धधाम में गये, वे दोपहर दो बजे नीचे आये... अहा, बारह घण्टे आज का दिन तो मानो सिद्ध भगवन्तों के देश में जा आये।

हे सिद्ध भगवन्तों! हे तीर्थंकर भगवन्तों! हे गणधरादि मुनिवरों! इस 'मंगल तीर्थयात्रा' में आपश्री के पवित्र मोक्षधाम में जागृत आत्महित की उल्लासकारी भावनाएँ अखण्डरूप से जागृत रहकर आत्महित के मार्ग में आगे ले जाओ।

महामंगल सम्मेदशिखर शाश्वत सिद्धिधाम को नमस्कार हो....
सम्मेदशिखर से सिद्धि प्राप्त अनन्त सिद्ध भगवन्तों को नमस्कार हो....
सम्मेदशिखर सिद्धिधाम की 'मंगल तीर्थयात्रा' करानेवाले कहान गुरुदेव को नमस्कार हो...
आत्महितकारी 'मं..ग..ल.. ती..र्थ..या..त्रा..' की जय हो.. जय हो.. जय हो...

卐

सम्मेदशिखर धाम की मंगल तीर्थयात्रा करके नीचे आने के बाद यात्री पूरे दिन और रात्रि में भी यात्रा की ही धुन में रहे, जहाँ देखो वहाँ इसका ही रटन और इसकी ही चर्चा। रात्रि में भक्ति हुई थी, उसमें भी यात्रा का हर्षोल्लास और तीर्थधाम के प्रति परम भक्ति व्यक्त होती थी। दूसरे दिन (फाल्गुन शुक्ल अष्टमी के दिन) पूरा दिन पूजन, प्रवचन, भक्ति इत्यादि में व्यतीत हुआ; सभी कार्यक्रमों में यात्रा का आनन्द व्यक्त होता था। गुरुदेव प्रवचन में भी बारम्बार यात्रा के प्रमोदपूर्वक तीर्थ महिमा करते थे... **'वाह, शिखरजी पर अनन्त सिद्ध भगवन्त विराजते हैं। उन सिद्ध भगवन्तों का वहाँ स्मरण होता था... वही आत्मा का ध्येय है, और उसके स्मरण के लिये यह यात्रा है। यात्रा तो अलौकिक हुई... लोगों का उत्साह भी बहुत था। यह यात्रा तो जीवन में याद रह जाएगी।'**

— ऐसी यादगार और महिमावन्त तीर्थयात्रा को हृदय में भरकर, अब हम अंग देश के एक अति सुन्दर तीर्थधाम में जाते हैं।

चम्पापुरी-मन्दारगिरि तीर्थधाम

सम्मेदशिखर मधुवन से लगभग 160 मील दूर वासुपूज्य भगवान के पंच कल्याणक का पावन धाम चम्पापुरी (भागलपुर) आया हुआ है... गंगा किनारे आया हुआ यह एक मनोहर रमणीय तीर्थस्थान है। फाल्गुन शुक्ल नौ के सवेरे गुरुदेव ने तथा यात्रा संघ ने वासुपूज्य भगवान के पाँच कल्याणक धाम की यात्रा करने चम्पापुरी-भागलपुर की ओर प्रस्थान किया। सवेरे मधुवन से प्रस्थान करके गिरिडीह गाँव में रामचन्द्र सेठ के यहाँ थोड़ी देर रुके। रामचन्द्र सेठ गुरुदेव के परिचय से बहुत प्रभावित हुए। बीच में देवघर मुकाम में आहार करके दोपहर साढ़े तीन बजे भागलपुर पहुँचे, वहाँ जिनमन्दिर में दर्शन किये। उसमें कितनी ही प्राचीन प्रतिमाओं की आकृतियाँ देखकर गुरुदेव को प्रसन्नता हुई, वहाँ की प्रतिमाओं को गुरुदेव बहुत बार याद करते हैं।

फाल्गुन शुक्ल दस की सवेरे गुरुदेव तथा यात्री भागलपुर से दो मील दूर चम्पापुर (नाथनगर) जिनमन्दिर के दर्शन को पधारे... यहाँ विशाल जिनमन्दिर में पाँच वेदियाँ हैं, तथा चार कोनों में चार बड़े (लगभग 100 फीट उन्नत) स्तम्भ हैं—जिसमें से अभी दो स्तम्भ हैं। यहाँ वासुपूज्यस्वामी के कल्याणकधाम में यात्रियों ने आनन्द से दर्शन तथा पूजन किये... तथा वासुपूज्य भगवान का अभिषेक हुआ... अभिषेक के समय एक आनन्दकारी प्रसंग बना : गुरुदेव ने भी भगवान का अभिषेक भक्तिपूर्वक किया... यात्रा के दौरान बढ़वाणी में, पावापुरी में और शिखरजी की सुपाश्र्व टूंक पर गुरुदेव ने प्रभु चरणों का अभिषेक किया था और यहाँ तो साक्षात् वासुपूज्य भगवान की प्रतिमा का अभिषेक किया। गुरुदेव के जीवन में यह नवीनता थी और गुरुदेव को स्वयं को इसका कोई अद्‌भुत प्रमोद था। गुरुदेव के सुहस्त से जिनेन्द्र भगवान के अभिषेक का यह पहला ही प्रसंग देखकर सबको बहुत हर्ष हुआ। महान हर्ष और जय-जयकार से वातावरण गाज उठा। मानो भगवान के जन्माभिषेक का दृश्य देखते हों! ऐसा सबको आनन्द हुआ। सेठ श्री नानालालभाई इत्यादि को भी बहुत प्रसन्नता हुई और इस प्रसंग की खुशहाली में फण्ड की शुरुआत होने पर लगभग दो हजार रुपये का फण्ड तो उसी समय हुआ; और इस

फण्ड के उपयोग द्वारा यहाँ जहाँ पूज्य गुरुदेवश्री का निवास था, उस मकान का जीर्णोद्धार करना निश्चित हुआ। यहाँ एक वृक्ष पर लैंडी पीपर की बेल थी; गुरुदेव प्रवचन में आत्मा की शक्ति समझाने के लिये बहुत बार चौंसठ पहरी लैंडी पीपर का दृष्टान्त देते हैं, परन्तु उसकी बेल यहाँ पहली बार देखी... गुरुदेव ने यात्रियों का ध्यान उस ओर आकृष्ट किया और तत्पश्चात् जब-जब प्रवचन में लैंडी पीपर का दृष्टान्त आवे, तब तब गुरुदेव चम्पापुरी की इस बेल को याद करते हैं। यह चम्पापुरी की यात्रा होने पर अपनी यात्रा में कुल चौदह भगवन्तों के जन्मधाम, चौदह सिद्धिधाम और लगातार बीस तीर्थों की यात्रा हुई।

चम्पापुरी में दर्शन-पूजन-अभिषेक करके सब भागलपुर आये, वहाँ स्वागत हुआ तथा प्रवचन द्वारा गुरुदेव को भागलपुर के जैन समाज की ओर से अभिनन्दन पत्र दिया गया। रात्रि में जिनमन्दिर में भक्ति हुई थी। गुरुदेव ने वासुपूज्य भगवान का स्तवन गवाया था—

वासुपूज्य जिननाथ ने भावे वंदुं.... हां रे भावे वंदुं रे भावे वंदुं... वासु०
हां रे अे तो त्रिभुवननाथ विराजे, हां रे थया दरिशण नाथ.... वासु०
चंपापुरी नगरी बहु बहु सोहे, हां रे तिहां वासुपूज्यजी विराजे,
हां रे पंचकल्याणकमहोत्सव उजवाये, हां रे सुरनर इन्द्रोनां टोळां उतरे,
— हां रे धन्य मात ने तात... वासु०
बाल ब्रह्मचारी वासुपूज्यजी स्वामी, हां रे त्रण भुवनना छो जगनामी
हाँ रे मुनिनाथना अन्तरजामी, हां रे त्रिभुवनना शणगार... वासु०
— हां रे सेवकना शरणगार..... वासु०
चम्पापुरी नगरी पावनकारी (मनोहारी), हां रे प्रभुना पंचकल्याणक भारी,
हां रे गर्भ-जन्म-दीक्षा मंगलकारी, हां रे अे तो पावन दृश्य.... वासु०
— हां रे अे तो अद्भुत दृश्य.... वासु०
केवल कल्याणके शक्रेन्द्र अहीं उतरे, हां रे प्रभुना समवसरण रचावे,
हां रे प्रभुना दिव्यध्वनिनाद गाजे, हां रे सहुने आनंद थाय.... वासु०
शैलेशी करणे प्रभुजी अहो वळीया, हां रे समश्रेणीअे प्रभुजी चडीया,

हां रे प्रभु सिद्धिधामने वरीआ, आजे देख्या तीरथधाम... वासु०
— हां रे राखो सेवक ने साथ... वासु०
गुरुजी प्रतापे (सन्त प्रतापे) नीरख्या धाम... वासुपूज्य जिनराजने भावे वंदुं।
गुरुजी प्रतापे यात्रा थाय-वासु० गुरुजीनी साथे यात्रा थाय... वासु०

(अन्तिम लाईन में शब्द बदलकर गुरुदेव ने गवाया था। गुरुदेव की भावभीनी भक्ति सुनकर सब प्रसन्न हुए थे, तत्पश्चात् बहिनश्री-बहिन ने भी आनन्दकारी भक्ति करायी थी)।

मन्दारगिरि सिद्धिधाम की यात्रा

दूसरे दिन (फाल्गुन शुक्ल ग्यारह को) सवेरे संघ सहित गुरुदेव मन्दारगिरि सिद्धिधाम की यात्रा करने पधारे। भागलपुर से लगभग तीस-एक मील दूर मन्दारगिरि पर्वत स्थित है। इस पर्वत पर वासुपूज्य भगवान की दीक्षा-केवल तथा मोक्ष कल्याणक हुए हैं; भाद्र शुक्ल चौदह (अनन्त चतुर्दशी) के महान दिन भगवान यहाँ से अनन्त सिद्धों के धाम में सिधारे। यह मन्दारगिरि पर्वत सुन्दर रमणीय है, पर्वत की गोद में आया हुआ रमणीय सरोवर उसकी प्राकृतिक शोभा में कुछ ज्यादा ही अभिवृद्धि करता है। आसपास का वातावरण बहुत रमणीय और शान्त है। श्रवणबेलगोला में बाहुबली प्रभु के इन्द्रगिरि पहाड़ की भाँति एक ही पत्थर का पूरा पहाड़ है और सीढ़ियाँ भी उसमें से ही उत्कीर्ण की गयी है। पहाड़ का चढ़ाव सुगम है। बीस मिनिट में ऊपर पहुँचा जाता है। आनन्द से भक्ति करते-करते सब ऊपर पहुँचे। मार्ग में सरोवर इत्यादि बहुत सुन्दर दृश्य आते हैं। जैसे सौराष्ट्र में गिरनार वह एक बालब्रह्मचारी भगवान के तीन कल्याणक का धाम है, उसी प्रकार बंग के पास के अंग देश में यह मन्दारगिरि भी एक बाल ब्रह्मचारी भगवान के तीन कल्याणक का धाम है। कल्याणक भूमि की शोभा कोई अनोखी है। ऊपर नजर करने पर ठीक सामने वासुपूज्य भगवान का मन्दिर ऐसा दिखता है कि मानो भगवान आवाज देकर यात्रियों को बुला रहे हों; पहाड़ चढ़ते-चढ़ते साधकों को संयमदशा की भावनाएँ जागृत होती हैं।

इस प्रकार भावना भाते-भाते और भक्ति करते-करते भगवान के कल्याणकधाम में आ पहुँचे। यहाँ बगल-बगल में दो मन्दिर हैं... इसके अतिरिक्त पूरे पहाड़ का वातावरण ऐसा शान्त है कि मुनि की निर्विकल्प दशा का स्मरण कराता है। एक मन्दिर में तीन जोड़ी चरण पादुका है, जो भगवान के तीन कल्याणक सूचित करता है और दूसरे मन्दिर में एक चरण पादुका है। इस मन्दिर में मोक्षकल्याणक धाम गिना जाता है अथवा गणधरदेव के चरण पादुका होना भी कोई कहते हैं। यहाँ आनन्दपूर्वक दर्शन-पूजन तथा अभिषेक किया।

श्री वासुपूज्य जिनेन्द्र ने गर्भजन्म लिया चंपापुरी।
श्री तपसु ज्ञान अरन्य शैल मंदारतें शिवतीय वरी॥

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य पंचकल्याणकधाम पूजनार्थे अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा...।

मन्दिर के बाहर सरस गुफा जैसा गम्भीर वातावरण है। मानो मुनियों का निवास! ऐसे धाम देखकर गुरुदेव बहुत प्रमोद से यात्रा करते और गुरुदेव के भाव देखकर प्रत्येक जगह पूज्य बहिनश्री-बहिन भी आह्लादपूर्वक भक्ति कराती थीं। निश्चय-व्यवहार सहित के अद्‌भुत भाव गुरुदेव के साथ की यात्रा में दृष्टिगोचर होते थे। दोनों मन्दिरों में भाव से दर्शन-पूजन करके बाहर आने पर भगवान की ध्यानभूमि आती है, वह तप कल्याणक का दृश्य गिना जाता है, एक विशाल शिला का ढक्कन है और नीचे पोलाण में गुफा जैसा है; अन्दर प्रवेश करते ही भगवान के पवित्र चरण-कमल पर्वत के ऊपर ही उत्कीर्ण दिखायी देते हैं। इन विशाल और प्राचीन चरण पादुका के दर्शन से बहुत हर्ष हुआ। अहा! वासुपूज्य भगवान यहाँ आत्मध्यान करते-करते निर्विकल्प आनन्द में झूलते थे। क्षपकश्रेणी में आरूढ़ होकर उन बारहवें भगवान ने उत्कृष्ट साधकभावरूप बारहवाँ गुणस्थान यहीं प्रगटाया और फिर क्षण भर में केवलज्ञान प्रगटा कर स्वयं साध्यरूप हुए। ऐसे उत्तम भावों का यह स्थान देखकर मुमुक्षु का आत्मा शान्त हो जाता है और बाह्य भावों से उदासीन चिदानन्दस्वरूप आत्मा के स्मरण तथा ध्यान की ऊर्मियाँ जागृत होती हैं।

अहा, गुरुदेव के साथ इस पंच कल्याणक धाम की यात्रा करने पर आनन्द होता था, भगवान के पाँचों कल्याणक का यह धाम देखकर 'पंच कल्याणक' के प्रसन्नकारी स्मरण से गुरुदेव को भी अनेक आनन्द भरी ऊर्मियाँ जागृत होती थी और यहाँ के गुरुदेव के विशिष्ट उद्‌गार सुनकर यात्री भी बहुत ही प्रसन्न होते थे।

उत्सव किय पनवार जहां सुरगणयुत हरि आय
जजों सुथल वासुपूज्य सुत चंपापुर हर्षाय....

इस प्रकार आज फाल्गुन शुक्ल ग्यारह के मंगल दिन, चम्पापुरी तीर्थधाम में कहान गुरु के साथ पंच कल्याणक तीर्थधाम की आनन्दकारी यात्रा हुई... यात्री कहते कि वाह! आज का दिन सुनहरा है। श्रावण कृष्ण दूज के दिन वासुपूज्य भगवान जहाँ केवलज्ञान प्राप्त हुए, ऐसे इस चम्पापुरी पवित्र धाम में फाल्गुन शुक्ल ग्यारह के दिन कहान गुरु के साथ शान्तिदातार यात्रा हुई। गुरुदेव के साथ की आज की यात्रा के मधुर संस्मरण अविस्मरणीय बने रहेंगे। इस प्रकार यात्रा करके फिर हर्षपूर्वक मंगल गीत गाते-

गाते सब नीचे उतरने लगे... गुरुदेव भी आज की यात्रा का अद्‌भुत आनन्द व्यक्त करते थे। पूज्य बहिनश्री-बहिन गवाती थी कि—

आज मारे सोना समो रे सूरज ऊगीयो रे....
मारे यात्रा थई गुरुजीनी साथ........ मारे.....

सिद्धिधाम की आज की इस मंगलकारी यात्रा के संस्मरण हृदयपट में उत्कीर्ण कर सब यात्रियों ने गुरुदेव के साथ वापस सम्मेदशिखर धाम की ओर प्रस्थान किया और सायंकाल सम्मेदशिखर मधुवन में आ पहुँचे।

चम्पापुरी सिद्धिधाम से पंच कल्याणक प्राप्त वासुपूज्य भगवान को नमस्कार हो...

चम्पापुरी तीर्थधाम की यात्रा करानेवाले कहान गुरुदेव को नमस्कार हो...

शिखरजी की छाया-मधुवन में

फिर से शिखरजी की छाया में आये... अहा, इस सिद्धिधाम की छाया मुमुक्षु को अध्यात्म की तरंग जगाती है... बारम्बार मानो शिखरजी पर जाएँ और जगत न देखे ऐसे कोई अगम्य स्थान में आत्मसाधना में लवलीन बन जाएँ —ऐसी ऊर्मियाँ साधक हृदय में जगती है।

इस उत्सव प्रसंग पर मधुवन में फाल्गुन शुक्ल बारह-तेरह के दिन सागर (मध्यप्रदेश) के श्री गणेश दिगम्बर जैन संस्कृत विद्यालय ने अपना स्वर्ण जयन्ती महोत्सव रखा था। इस विद्यालय में दो सौ विद्यार्थी पढ़ते हैं। मधुवन से 550 मील जितना दूर होने पर भी उसका स्वर्ण जयन्ती महोत्सव यहाँ यात्रा महोत्सव प्रसंग पर मनाया गया, उसके विविध कार्यक्रमों से सबको प्रसन्नता हुई। फाल्गुन शुक्ल बारह के सवेरे जिनमन्दिर में समूह पूजन के बाद, आस्रव और आत्मा की भिन्नता पर गुरुदेव का सुन्दर प्रवचन हुआ; तत्पश्चात् गणेशप्रसादजी वर्णीजी ने कहा कि—***'मैं क्या बोलूँ? आपने आस्रव के ऊपर जो विवेचन किया, उसमें शंका को कोई स्थान नहीं रहता। फिर भी शंका हो किसी को तो समाधान कर लेना। चर्चा करना अच्छा है भैया!'*** आज दोपहर को भक्ति का कार्यक्रम था। भक्ति में गुरुदेव भी कभी-कभी प्रमोदपूर्वक स्तवन गवाते थे। भक्ति में बीच-बीच में भरत चक्री की आदिनाथ के प्रति भक्ति का तथा ऋषभ निर्वाण इत्यादि का वर्णन करते; तदुपरान्त कुन्दकुन्द प्रभु की सीमन्धर भगवान के प्रति महा भक्ति को याद कराकर कहते कि—अहो! कुन्दकुन्दाचार्य जैसे सन्त को भी तीर्थ की यात्रा का और भक्ति का भाव आया था, वे सदेह विदेहक्षेत्र जाकर साक्षात् सीमन्धर परमात्मा की यात्रा कर आये थे। ऐसे-ऐसे उद्‌गार द्वारा स्वयं भी तीर्थयात्रा का प्रमोद तथा तीर्थ भक्ति व्यक्त करते थे। भक्ति के पश्चात् शाम को भगवान की रथयात्रा निकली थी; उसमें बाबूभाई इत्यादि गुजरात के भाई तथा अनेक यात्री उल्लास से नाच उठे थे। पाण्डुकशिला के सन्मुख शिखरजी की अनेक टूंकों का नयनाभिराम दर्शन सबको प्रसन्नता उत्पन्न करता था। रात्रि में सागर विद्यालय की स्वर्णजयन्ती के निमित्त सागर विद्यालय का कार्यक्रम था, जिसमें गुरुदेव भी पधारे थे। फाल्गुन शुक्ल चतुर्दशी के सवेरे शिखरजी सिद्धिधाम की समूह

पूजन का आनन्दकारी प्रसंग बना। पाण्डुकशिला का स्थान-जहाँ से शिखरजी का अतिशय मनोहर दृश्य दिखायी देता है तथा उसकी दसैक टूंक का स्पष्ट दर्शन होता है, वहाँ बहुत उत्साह से पूजा हुई। पूजन प्रसंग पर गुरुदेव भी पधारे थे और यात्रीसंघ के सैकड़ों लोग थे। अहा, सन्मुख स्थित अडोल सिद्धिधाम यात्री के अन्तर में अद्‌भुत आह्लाद जागृत करता था। अनन्त तीर्थंकरों के निर्वाणमार्ग के साक्षीरूप इस निर्वाणधाम के दर्शन से ज्ञानीजनों के आत्म प्रदेशों में अपूर्व वैराग्य की धारा उठती है... पूजन के बाद सम्मेदशिखर की आरती भी उत्साह से हुई थी—

आरति उतारुं मैं तो शाश्वत तीर्थधाम की....
शाश्वत तीर्थधाम की सम्मेद शिखर धाम की..... आरति...

और आरती के पश्चात् पूजा की पूर्णता के प्रसंग पर पूज्य बहिनश्री ने हृदयोर्मि से जय-जयकार किया... भक्तों ने आनन्द से उसमें साथ दिया... प्रिय पाठक! तू भी अभी भक्ति से उसमें साथ देना—

बोलिये अनन्त जिनेश्वरों की ....जय....
बोलिये अनन्त सिद्ध भगवन्तों की ....जय....
बोलिये अनन्त मुनीश्वरों की ....जय....
बोलिये शाश्वत तीर्थधाम की ....जय....

अब आयी फाल्गुन शुक्ल पूर्णिमा... आठ-आठ दिन से गुरुदेव के साथ इस महान तीर्थयात्रा में रहे... मंगल तीर्थयात्रा की... सिद्धों का स्मरण किया... आराधना के मार्ग की भावना भायी... महान पूजा-भक्ति किये... इस प्रकार अनेक प्रकार से गुरुदेव इत्यादि के साथ जीवन का लाह्वा लिया। आज अष्टाह्निका का अन्तिम दिन... शिखरजी धाम में भी अन्तिम दिन... आगामी कल तो यहाँ से अन्यत्र प्रस्थान करना होगा... इसलिए शिखरजी धाम के प्रति आज लगनपूर्वक सब दर्शन करते... आज के प्रवचन में भी गुरुदेव बारम्बार सम्मदेशिखर सिद्धिधाम की महिमा करते... बारम्बार उस ओर निर्देश कर-करके कहते कि '**अहा! अनन्त सिद्ध भगवन्त यहाँ से सिद्धपद को प्राप्त हुए हैं। वे अभी ऊपर ही विराज रहे हैं और सादि-अनन्त काल तक वहीं विराजमान रहेंगे।**' अहा, यह सम्मेदशिखर! भारत का पहले नम्बर का तीर्थ! दूसरी चीज़ें भले आश्चर्यकारी गिनी

जाती हो, परन्तु यहाँ के दर्शन के साथ उन किसी की तुलना नहीं की जा सकती। ताजमहल या कोहिनूर हीरा इत्यादि चीज़ों का सरागी दर्शन तो सामान्य प्रवासी को भी मात्र क्षणिक आवेश की ऊर्मियाँ जगाता है, जबकि इसका वीतरागी दर्शन तो मुमुक्षु हृदय में ऐसा जड़ जाता है कि पूरा जीवन तदाकार करने का मन हो जाता है। आधुनिक दुनिया के किसी भी पहाड़ या किसी भी तीर्थ की अपेक्षा इसकी गौरवगाथा अजोड़ है। एक बार भी इसे देखने के बाद यात्री का हृदय बारम्बार इसके दर्शन करने तथा इस पावन भूमि में रहने के लिये तरसता है। ऐसे इस अजोड़ तीर्थधाम में पूर्णिमा की रात्रि को अजोड़ भक्ति हुई। कहान गुरु संघ के हजार यात्रियों का समूह जिनेन्द्र भक्ति में तन्मय होकर हर्ष से नाच उठा था... जिसे देखने पर रोम-रोम उल्लसित हो जाए, ऐसी यह जिनेन्द्र भक्ति थी। मानो समवसरण में ही प्रभु के सन्मुख भक्ति करते हों... ऐसी उमंग से बहिनश्री-बहिन भक्ति कराती थीं और पश्चात् गुरुदेव ने अपूर्व भावभीनी भक्ति करायी—उस समय का दृश्य अद्भुत था। सब कहते थे कि वाह! आज तो अपूर्व भक्तिभाव देखने को मिले... भक्तमण्डल हर्ष से नाच उठा... पण्डित आश्चर्य को प्राप्त हुए... आज पूर्णिमा होने से भक्ति के समुद्र में ज्वार आया था... भक्ति का समुद्र उछल रहा था... कोई चंवर से तो कोई डण्डिया रास से, कोई मंजीरा से तो कोई करताल से, कोई घुंघुरु से तो कोई दीप से, कोई पैर से तो कोई हाथ से—जिसे जो वाजिन्त्र हाथ आया, उससे सब भक्ति करने लगे। सिद्धभूमि में प्रभु का दरबार आनन्द मंगल से गाज रहा। साधकसन्तों द्वारा निश्चयसहित की भक्ति का अनोखा रंग जमा था। आज फाल्गुन शुक्ल पूर्णिमा को वास्तव में 'रंग मचा जिनद्वार' अष्टाह्निका आज पूर्ण होती थी। तीर्थधाम में संघ का भी आज अन्तिम (ग्यारहवाँ) दिन था। इस अष्टाह्निका का उत्सव शाश्वत तीर्थधाम में मनाया गया। अहा! जहाँ धर्मात्मा विराजते हों, वहाँ नित-नित कैसे आनन्द मंगल उत्सव बनते हैं! यह देखकर हृदय आनन्दित होता है, जितने यात्रियों ने इस यात्रा के संस्मरणों की नोंध की होगी, उन सबकी नोंध में एक वस्तु तो मुख्य छँटकर आयेगी कि गुरुदेव के साथ की ऐसी मंगल तीर्थयात्रा महाभाग्य से ही होती है।

तुमसे लगनी लागी जिनवर तुमसे लगनी लागी...
अनंत चोबीशीनी तीर्थभूमिमां तुमसे लगनी लागी...

सम्मेदशिखरमां गुरुजी पधार्या आनन्दभेरी वागी...
भक्तिथी अम हैया ऊछळे तीर्थधाम नीहाळी... तुमसे

ऐसे-ऐसे स्तवन भगवान की लगनपूर्वक पूज्य बहिनश्री-बहिन गवाती थीं और 'फळिया हो प्रभु फळिया मनोरथ मुझ' यह भक्ति देखकर ख्याल आता था कि उन्हें सम्मेदशिखर शाश्वत् तीर्थधाम की यात्रा के कैसे मनोरथ घुंटे होंगे! आज तो वे मनोरथ सिद्ध हुए, इसलिए बहुत हर्षोल्लास था। अहा, गुरुदेव के साथ निर्वाणभूमि निहारने के मनोरथ आज आनन्द से फलीभूत हुए! गुरुदेव भी गवाते थे कि—

शिखरजी दीसे छे आजना रळियामणा
दीठा में सिद्धगिरि धाम जो... गिरिवर भेटया अलबेलडा
पावन गिरिवर दर्शन करतां
सिद्धयां अमारां काज रे... गिरिवर भेटया अलबेलडा

तदुपरान्त दूसरे भी अनेक स्तवन गवाये थे, जिसमें से कितने ही निम्नानुसार हैं—

* **'अब सुणो सहु सन्देश प्रभु आदेश,**
  सदा सुखकारा... जीवन में वोही सहारा...'
* **मैं तेरे ढीग आया रे... पारस तेरे ढीग आया...**
* **मनहर तेरी मुरतियां... मस्त हुआ मन मेरा... मस्त हुआ मन मेरा...**
* **आवो आवो श्री पारसनाथ अम घेर आवो रे...**
  में भेट्या शाश्वत धाम जोई जोई हरखुं रे....
* **एकबार बोलो पार्श्वनाथ अबोलडा शाने लीधा रे....**
* **मारा नाथनी बधाई आजे छे... पार्श्वनाथनी बधाई आजे छे...**
  आजे स्वर्गेथी देवो आवे छे... आवी सम्मेदशिखर ने वधावे छे...

शाश्वत तीर्थ में डेढ़ दो घण्टे तक अभूतपूर्व भक्ति का जो प्रसंग बना, उसका वर्णन करने की कलम की शक्ति नहीं... एक-एक यात्री जगत को भूलकर भक्ति में मस्त बन गया था.. डेढ़ घण्टे में तो कितने ही स्तवन गवाये। पूज्य गुरुदेव ने भी बारम्बार भक्ति की उमंग से अनेक स्तवन गवाये। कितने ही भक्त नाच उठे। ऐसी धुन जमी। लोग तो

आश्चर्य से ठहर ही गये। भक्ति की आवाज से आकर्षित होकर दूर–दूर से भी बहुत लोग वहाँ भक्ति देखने के लिये दौड़ आये।

आनन्दकारी यात्रा महोत्सव की खुशहाली में अन्त में अद्‌भुत आनन्द मंगल बधाई गवायी और 'वाहवा जी वाहवा' के हर्ष भरे नाद से हजारों यात्रियों ने यह बधाई झेली—

वामादेवी बेटो जायो बाजत बधाईयाँ.... वाहवा जी वाहवा...
अश्वसेन राजा घर बाजत बधाईयाँ.... वाहवा जी वाहवा...
शाश्वत तीर्थधाम में बाजत बधाईयाँ.... वाहवा जी वाहवा...
सम्मेदशिखर धाम में बाजत बधाईयाँ.... वाहवा जी वाहवा...
तीर्थंकर मोक्ष गये बाजत बधाईयाँ.... वाहवा जी वाहवा...
मुनिवरो सिद्ध गये बाजत बधाईयाँ.... वाहवा जी वाहवा...
शाश्वतधाम का दर्शन पाया बाजत बधाईयाँ.... वाहवा जी वाहवा...
गुरुवर संगे यात्रा पाइया बाजत बधाईयाँ.... वाहवा जी वाहवा...
मनोवांछित भाव पूराया बाजत बधाईयाँ.... वाहवा जी वाहवा...
सिद्धप्रभु का दर्शन पाया बाजत बधाईयाँ.... वाहवा जी वाहवा...
आनन्द मंगल शाश्वत धाम में बाजत बधाईयाँ.... वाहवा जी वाहवा...

ऐसी आनन्द मंगलकारी बधाईपूर्वक जब पूज्य बहिनश्री–बहिन ने भक्ति पूर्ण की, तब भक्त यात्रियों के हृदय भी आनन्दित होकर पुकार उठे कि—

अपूर्व भक्ति आज देखी.............. वाहवा जी वाहवा....
अद्‌भुत आनंद उल्लस्यो आज...... वाहवा जी वाहवा....
सन्तजनोनी साथमां....................... वाहवा जी वाहवा....
अनंत मुनिधाममां......................... वाहवा जी वाहवा....
मोक्षपुरीना धाममां......................... वाहवा जी वाहवा....
जल्दी पाछा आवशुं......................... वाहवा जी वाहवा....
फरी फरी भेटशुं............................. वाहवा जी वाहवा....
गुरुजीनी साथमां.............................. वाहवा जी वाहवा....
शाश्वत तीर्थधाममां......................... वाहवा जी वाहवा....

भवभ्रमण टाळशुं............................ वाहवा जी वाहवा....
ने सिद्धपद पामशुं......................... वाहवा जी वाहवा....

ऐसी उत्तम भावनाओंपूर्वक अनहद जयनाद के बीच भक्ति पूर्ण हुई... प्रिय पाठक! तू भी तीर्थभक्ति की उमंग से निम्न जयनाद में साथ दे—

बोलिये शाश्वत सम्मेदशिखर सिद्धिधाम की... जय हो.....
बोलिये पारसनाथ भगवान की......................... जय हो.....
बोलिये अनन्ता तीर्थंकर भगवन्तों की............. जय हो.....
बोलिये अनन्ता मुनीश्वर भगवन्तों की........... जय हो....
बोलिये ऊपर विराजमान अनन्त सिद्धभगवन्तों की.. जय हो....
बोलिये गुरुदेव साथे अपूर्व यात्रा-भक्ति की............ जय हो.....
बोलिये महान तीर्थयात्रा करावनार कहानगुरु की....... जय हो.....

★ ★ ★

ऋजुवालिका के तीर

अब आगामी कल तो शिखरजी धाम से प्रस्थान होना है, उससे पूर्व शिखरजी के पड़ोस में आये हुए एक पावन धाम का थोड़ा-सा अवलोकन कर लेते हैं। मधुवन से दसैक मील दूर ऋजुवालिका नदी के किनारे महावीर प्रभु के केवलज्ञान की पवित्र भूमि है। इस नदी के किनारे प्रभुजी ने अप्रतिहत ध्यान धरकर क्षपकश्रेणी मांडकर वैशाख शुक्ल दसवीं को केवलज्ञान लिया है। नदी किनारे खुले आकाश के नीचे भगवान की ध्यान भूमि-ज्ञानभूमि शोभित हो रही है और कलबल-कलबल करती हुई बहती बड़ी नदी भगवान की मंगल कथा कलरव करती हुई सुमधुर नाद से सुना रही है। ऋजु नदी मानो कि अपनी साधर्मी बहिन हो-या निर्मल मनवाली आर्यिका हो और अपने जैसे साधर्मी को देखकर आनन्दपूर्वक भगवान की जीवन गाथा सुनाती हो! वहाँ नदी के साथ बहुत बातें करने की स्फुरणा होती है: अरे, नदी बहिन! तुमने तो मेरे वीर प्रभु को नजरों से निहारा है, भगवान के समय से तू तो यहाँ ही है... मुझे बता तो सही कि मेरे वीर प्रभु कहाँ ध्यान में खड़े थे? किस प्रकार क्षपकश्रेणी मांडी... और किस प्रकार केवलज्ञान लेकर गगनविहारी हुए? तब नदी बहिन कहती है—देखो! यहाँ भगवान ध्यान में विराजते थे... वैशाख शुक्ल दसवीं को भगवान चैतन्यपिण्ड में लीन होकर क्षपकश्रेणी पर बैठकर केवलज्ञान को प्राप्त हुए और गगनविहारी हुए... तब इन्द्र जय-जयकार करते हुए यहाँ आये थे और मैं भी आनन्द तरंग से उछलती थी।

आज भगवान के वियोग में नदी उदास और उपशान्त दिखती है... अहो, यह नदी भी भगवान के चरण सान्निध्य से पावन हुई है... ऐसी इस ऋजुका नदी के किनारे केवलज्ञान भूमि में भक्तों ने भगवान के केवलज्ञान कल्याणक का भक्ति से स्मरण किया:—

सकल प्रत्यक्ष ज्ञान अहीं पायो, सकल चराचर वस्तु लखायो;
पशु नर देव सुपूजन आये, हम इत मंजुल मंगल गाये,
भक्तजनो सौ पूजन आये, दिव्यध्वनि सुन समकित पाये...

— ऐसी भावनापूर्वक भगवान की चरणरज को मस्तक चढ़ाया... केवलज्ञान का

धाम देखने पर मुमुक्षु हृदय में केवलज्ञान की अचिन्त्य महिमा स्फुरायमान होती है। अहो, भगवान ने परमात्मदशा यहाँ प्रगट की... सातिशय सातवाँ गुणस्थान प्रगटाकर पश्चात् क्षपकश्रेणी में चढ़े... और आठ-नौ-दस-बारह और तेरह—इन गुणस्थानों को भगवान ने यहाँ ही प्रगट किया।

अहीं पराजय करीने चारित्रमोहनो, आव्या त्यां ज्यां करण अपूर्व भाव जो,
श्रेणी क्षपकतणी करीने आरूढ़ता... अनन्य चिंतन अतिशय शुद्ध स्वभाव जो।
मोह स्वयंभूरमण समुद्र तरी करी, स्थिति त्यां ज्यां क्षीणमोह गुणस्थान जो,
अंत समय त्यां पूर्ण स्वरूप वीतराग थई, प्रगटाव्युं निज केवलज्ञान निधान जो।
चार कर्म घनघाती ते व्यवच्छेद अहीं, भवनां बीज तणो आत्यंतिक नाश जो,
सर्व भाव ज्ञातादृष्टा सह शुद्धता, कृतकृत्यप्रभु वीर्य अनंत प्रकाश जो॥

मानो अभी ही भगवान यहाँ ध्यान में स्थित हों... और क्षपकश्रेणी द्वारा भव का नाश करते हों! स्व अनन्त चतुष्टय केवलज्ञान-केवलदर्शन-अनन्त वीर्य और अनन्त सुख भगवान ने इसी जगह प्रगट किये। ज्ञानादि की भावनापूर्वक वीर प्रभु के ज्ञानधाम का अवलोकन करके अब वापस मोक्षधाम-मधुवन में आते हैं... और प्रस्थान से पहले एक प्रभावशाली प्रसंग क्या बना, वह देखते हैं :

आज चैत्र कृष्ण एकम सवेरे भावभीने चित्त से शिखरजी के तथा जिनमन्दिरों के दर्शन-पूजन के बाद गुरुदेव का प्रवचन हुआ और दोपहर को यहाँ से प्रस्थान होने का कार्यक्रम प्रसिद्ध हुआ। प्रवचन के पश्चात् इन्दौर के पण्डितश्री बंशीधरजी सिद्धान्तशास्त्री ने अपने भाषण में कमाल किया... उन्होंने हिम्मतपूर्वक गद्गद् वाणी से स्पष्ट घोषित किया कि—***'अनन्त चौबीसी के तीर्थंकरों और आचार्यों ने सत्य दिगम्बर जैनधर्म अर्थात् मोक्षमार्ग को प्रगट करनेवाला जो सन्देश सुनाया, वही आपकी (कानजीस्वामी की) वाणी में अपने को सुनने में आ रहा है... महावीर भगवान ने जो कहा और कुन्दकुन्दादि आचार्यों ने जो कहा, वही आज ये महाराजश्री प्रसिद्ध कर रहे हैं... आपकी वाणी में तीर्थंकरों का और कुन्दकुन्दस्वामी का ही हृदय था... आपकी दृष्टि से जो तत्त्व प्रतिपादित होता है, वह जगत के लिये कल्याणकारी है।'*** (पूरे भाषण के लिये देखो गुजराती आत्मधर्म, अंक-164) पण्डितजी के इन भावभीनी उद्गारों से सारी सभा में हर्ष का

वातावरण छा गया था; उपस्थित त्यागी और विद्वान सभी आश्चर्यविभोर बन गये थे। पूरा वातावरण कोई अलग ही ढंग में पलट गया था। भारतवर्षीय दिगम्बर जैन विद्वतपरिषद के अध्यक्ष महोदय श्री पण्डित फूलचन्द्रजी ने तथा सागर विद्यालय के मन्त्री श्री पण्डित मुन्नालालजी ने भी अपने भाषण में भावभीनी श्रद्धांजलि व्यक्त की थी। (इन भाषणों के लिये देखो आत्मधर्म, अंक 164) तेरापन्थी कोठी के मैनेजर ने कहा कि हम आपकी पूरी सेवा नहीं कर सके... इतना बड़ा प्रबन्ध जीवन में कभी नहीं किया, यह पहला ही प्रसंग था। इस प्रकार कल्पनातीत हर्षोल्लासपूर्वक शिखरजी धाम के कार्यक्रम पूर्ण हुए। महान आनन्दपूर्वक शाश्वत् सिद्धिधाम का यात्रा महोत्सव मनाया गया... अपार तीर्थ भक्ति से, पूज्य गुरुदेव के महान उपकार की ऊर्मियों से, आत्महित की पावन भावनाओं से और मंगल तीर्थयात्रा के मधुर स्मरणों से असंख्य आत्मप्रदेशों का भण्डार भर-भरकर यात्रा संघ प्रस्थान की तैयारी करने लगा। ग्यारह दिन भगवान के देश में बसे और मानों भगवानमय हो गये... इसलिए अब इन भगवान के मोक्ष का देश छोड़कर अन्यत्र जाना रुचता नहीं था। इस सिद्धिधाम की मंगल छाया मानो आश्वासन देती थी कि बारम्बार इससे भी ऊँचे भाव से इस सिद्धिधाम की मंगल यात्रा होगी और आत्मसाधना का लाभ होगा। अन्त में भक्ति से सिर नवाकर, चरणरज मस्तक चढ़ाकर, हे नाथ! फिर से जल्दी-जल्दी दर्शन देना और इन बालकों के आत्मकल्याण के भाव को पूरा करना, ऐसी प्रार्थनापूर्वक विदा ली।

★ ★ ★

अनन्त सिद्ध भगवन्तों को नमस्कार हो...
शाश्वत सिद्धिधाम सम्मदेशिखरजी को नमस्कार हो...
सिद्धिपथ पथिक साधक सन्तों को नमस्कार हो...

सम्मेदशिखर वंदुं सदा सिद्धप्रभु उर धार,
अनंत तीर्थंकर सिद्ध थया मुनिओनो नहि पार।
साधकसंतथी शोभतुं अचिंत्य तीर्थ जगमांय,
रत्नत्रयनी भावना यात्रा करतां थाय।

अेकवीस सैके विक्रमे शुभ तेरमी साल,
फागण शुक्ला सप्तमी चंद्र-मोक्ष कल्याण।
बे हजार यात्रिक अे वंधा सिद्धगिरिधाम,
अंतरना बहु भावथी साधक सन्तनी साथ।
नमुं गुरुवर कहानने नमुं श्रुति, मुज मात,
संतचरण सेवुं सदा पामुं पद उपशांत।
हरि चहे अमृत पद अचिर शांति भरपूर,
ते जयवंत रहे सदा बाजे आनंद तूर।

★ ★ ★

परम पावन तीर्थयात्रा के भाव को पूरा करके, अनेक दिन सिद्धिधाम में रहकर, अब यहाँ से प्रस्थान करने का समय आया। भक्ति भरे हृदय से सिद्धिधाम को बारम्बार साष्टांग नमस्कार करके, चरण रज मस्तक पर चढ़ाकर सब मोटर में और बसों में बैठे। 'सम्मेदशिखर सिद्धिधाम की जय हो।'—ऐसे जयकार के साथ मोटरें जमशेदपुर की ओर चली... परन्तु यात्रियों का हृदय तो अभी सम्मेदशिखरजी में ही रुका हुआ था... नयनों की नजर भी उस ओर ही थी... मीलों के मील तक जब तक सम्मेदशिखरजी धाम के दर्शन हुए, तब तक नजर खींच-खींचकर एकटक से सिद्धिधाम के दर्शन किये ही किये... मोटर कहाँ जाती है, उसका लक्ष्य नहीं रहा। सब सम्मेदशिखरधाम की महिमा-भक्ति और यात्रा की चर्चा में तल्लीन थे। गुरुदेव भी बारम्बार सम्मेदशिखर की ओर नजर लम्बाकर उसकी महिमा करते थे। बारम्बार उस सिद्धभूमि के दर्शन के लिये अभिलाषित हृदय से सायंकाल छह बजे जमशेदपुर पहुँचे। यहाँ आने पर ऐसा लगा कि मानो भगवान के देश से दूर-दूर किसी अनजाने देश में आ पड़े! यात्रा की धुन के संस्कार अभी हृदय में ताजा ही थे, इसलिए यात्रियों का दिल अन्यत्र लगता नहीं था।

जमशेदपुर

जमशेदपुर का कार्यक्रम पहले से निश्चित नहीं था परन्तु कामाणी भाईयों तथा सौ० हेमकुँवर बहिन के विशेष वात्सल्य भरे आग्रह के कारण वहाँ का कार्यक्रम रखा गया था। पूज्य गुरुदेव और संघ जमशेदपुर पधारने पर सेठ श्री नरभेरामभाई की अगुआयी में वहाँ के गुजराती समाज ने उमंग भरा स्वागत किया और प्रेमपूर्वक संघ की सब व्यवस्था की... सबको ऐसा था कि अहो, हमारे गुजराती साधर्मी इतने दूर देश से हमारे आंगन में कहाँ से! जमशेदपुर में दो-तीन मील दूर एक टेकरी पर दिगम्बर जैन चैत्यालय है, वहाँ दर्शन करने गये थे... यहाँ की भारत प्रसिद्ध टाटा के स्टील उद्योग का कारखाना देखने के लिये भी गुरुदेव तथा यात्री गये थे... जहाँ लोहखण्ड के रस के प्रपात गिरते थे.... तथा लोहखण्ड गलाने की भट्टियाँ थीं। गुरुदेव बहुत बार इस जमशेदपुर की भट्टी का दृष्टान्त देते थे, वह भट्टी यहाँ नजरों से देखने पर सबको वैराग्य स्फुरित होता था कि अरे! नरक के दु:ख कैसे होंगे! और कारखाने की धमाल देखने पर ऐसा लगता था कि कहाँ सम्मेदशिखर की उपशमरस झरती शान्ति! और कहाँ यहाँ की धमधमाहट!! पूज्य गुरुदेव संघसहित दो दिन जमशेदपुर रहे, उस दौरान कामाणी कुटुम्ब ने बहुत उत्साह दर्शाया, गुजरात के संघ को देखकर गुजराती समाज भी बहुत हर्षित हुआ और सबने प्रवचन इत्यादि का लाभ लिया।

झरीआ तथा धनबाद

चैत्र कृष्ण तीज : जमशेदपुर से प्रस्थान करके पूज्य गुरुदेव झरीआ और धनबाद पधारे। यहाँ मोरबीवाले शान्तिलाल ऊमियाशंकर इत्यादि भाईयों ने उत्साह से संघ की व्यवस्था की थी। झरीआ में पूज्य गुरुदेव का प्रवचन हुआ था। यहाँ कोयले की खानें, रस्सियों का बियारण का कारखाना इत्यादि का अवलोकन किया। आकाश में तार के डोरे के आधार से कोयले के डिब्बे एक स्थान से दूसरे स्थान इलैक्ट्रिक योजना से जाते, वह

भी देखा... उस समय कुन्दकुन्द प्रभु का आकाशगमन याद आता था। यात्रा की धुन के कारण कारखाना इत्यादि देखने में कहीं चित्त नहीं लगता था। कोयले की खदान देखने के लिये लिफ्ट में बैठकर 200 / 300 फीट गहरे जमीन में उतरते, तब मानो किसी गहरी गुफा में जाते हों—ऐसा भाव होता था। 300 फीट गहरे जमीन के गर्भ में चारों ओर सैकड़ों फीट लम्बे मार्ग थे, उनके चारों ओर कोयले के ही दल। उसे खोदते जाएँ और गहरी-गहरी गुफाएँ होती जाएँ। वहाँ एकदम घना अन्धकार; दुनिया क्या है और कहाँ है, उसकी हवा भी वहाँ नहीं आती। यह सब देखकर वापिस लिफ्ट द्वारा ऊर्ध्वगमन करके ऊपर आये; गुजरात से हजारों मील दूर बसते गुर्जर बन्धु यात्रासंघ के गुजराती भाईयों को देखकर बहुत प्रसन्न हुए... और 'जहाँ-जहाँ बसे गुजराती, वहाँ-वहाँ गुजरात' का वात्सल्य भरा वातावरण सृजित हो जाता था। इस प्रकार धनबाद और झरीआ का एक दिन का कार्यक्रम पूरा करके कोलकाता की ओर प्रस्थान किया। कितने ही यात्री कोलकाता जल्दी पहुँच गये थे और गुरुदेव आसनसोल तथा चैन्सुरा होकर फाल्गुन कृष्ण चौथ को कोलकाता पधारे और बेलगछीया में रात्रि को रहे।

★ ★ ★

कोलकाता शहर

कोलकाता भारत का यह सबसे बड़ा शहर साठ लाख की जिसकी आबादी... भारत के सबसे बड़े तीर्थ की यात्रा करके भारत के सन्त इस भारत के बड़े शहर में संघसहित पधारे... तब कोलकाता के मुमुक्षु समाज ने उत्साह भरा स्वागत किया। मारवाड़ी तथा गुजराती सभी भाईयों ने उसमें उत्साह से भाग लिया... स्वागत प्रमुख श्री शान्तिप्रसादजी साहू थे और उपप्रमुख श्री गजराजजी गंगवाल थे। तदुपरान्त सेठ श्री बच्छराजजी गंगवाल और उनके भाई तथा मुमुक्षु मण्डल के प्रमुख श्री मोहनलालजी पाटनी, वीरचन्दभाई शाह इत्यादि बहुत प्रमुख व्यक्तियों ने बहुत ही उत्साहपूर्वक संघ की आगत-स्वागत की तैयारी की थी। यहाँ संघ का मुकाम लगभग दस दिन रहा था। स्वागत में बीच में जिनमन्दिर के दर्शन करते-करते मोहम्मद अली पार्क में बाँधे हुए सुसज्जित मण्डप में आये। वहाँ पाँच-छह हजार श्रोताजनों की भव्य सभा में गुरुदेव ने मंगल प्रवचन किया। अहा! गुरुदेव कोलकाता में!! और गुरुदेव की वाणी की मधुर वर्षा कोलकाता के आँगन में!... यह दृश्य देखकर मुमुक्षुओं का हृदय हर्ष से सराबोर हो जाता था। कहाँ कोलकाता नगरी का धमाल भरा जीवन... और कहाँ यह उपशान्त रस झरती वाणी!! मुनिवरों के प्रति परम भक्ति से छलकते अध्यात्म प्रवचन सुनकर गजराजजी सेठ इत्यादि श्रोताजन बारम्बार बहुत प्रमोद दर्शाते थे... प्रवचन सभा के समय पगड़ी सहित पंचरंगी पोशाक में सज्ज मारवाड़ी बन्धु और टोपी इत्यादि सादा पोशाक में सज्जन गुजराती बन्धु—ऐसा मिश्र सभा का वातावरण दृष्टिगोचर होता था और निश्चय व्यवहार की सन्धि सहित अनेकान्त के रहस्य से भरपूर प्रवचन सुनकर सब प्रसन्न होते थे और अनेक जीवों की शंका दूर होती थी। सूरत के 'जैनमित्र' के सम्पादक श्री मूलचन्द किशनदास कापड़ियाजी ने तो भाषण में कहा था कि आत्मा का और नौ तत्त्व का ऐसा विवेचन मैंने पचास वर्ष में कभी नहीं सुना। यात्री हमेशा सवेरे जिनमन्दिर में पूजन करते; रात्रि में भक्ति का या तत्त्वचर्चा का कार्यक्रम रहता; यात्रासंघ में पूज्य बहिनश्री-बहिन द्वारा होनेवाली भावभीनी भक्ति देखकर सब आश्चर्यमुग्ध बन जाते... लोग बोलते कि ऐसी भक्ति हमने कभी नहीं देखी। चैत्र कृष्ण सप्तमी के दिन रात्रि में बेलगछीया मन्दिर में तत्त्वचर्चा थी... यहाँ अब

तीर्थयात्रा के मुख्य प्रसंग पूर्ण हो गये, इसलिए अब बाद का कार्यक्रम किस प्रकार व्यवस्थित करना, इसकी चर्चा-विचारणा चलती थी... एक बार तो ऐसा भी लगता था कि यहाँ से सीधे ही सोनगढ़ पहुँच जाना... परन्तु फिर दीर्घ दृष्टि से विचार करने पर बीच के अनेक शहरों को भी लाभ मिले और भारत व्यापी प्रभावना हो, इस हेतु से बीच के मुख्य-मुख्य स्थलों का शीघ्र प्रवास से नया कार्यक्रम रचा गया।

अब अपने कोलकाता नगरी का थोड़ा सा अवलोकन कर लें। कोलकाता जैसे भारत के सबसे बड़े शहर में (जहाँ साठ लाख की आबादी और उसमें लगभग 20-25 हजार जैन बसते हैं वहाँ) चार दिगम्बर जिनमन्दिर हैं, उनमें बेलगछीया का मन्दिर सबसे विशाल और प्रसिद्ध है। (जिसका वर्णन आगे हम देखेंगे।) दूसरा (लोअर चित्तपुर रोड में) नया मन्दिर है, वह भी विशाल और सुन्दर है। इस मन्दिर में जाते ही स्वर्णदेही आदिनाथ भगवान के दर्शन होते हैं। महा सुन्दर मानो सोने के ही भगवान! भगवान की सौम्य प्रशान्त मुद्रा के दर्शन से मन प्रसन्न होता है और बगल में तीन पीठिका रूप समवसरण और उस पर चौमुखी चाँदी के चन्द्रप्रभ विराजते हैं, वह भी दर्शनीय है। तीसरा मन्दिर पुरानी वाड़ी में बड़ा मन्दिर कहलाता है, उसमें रथयात्रा इत्यादि का अनेक ठाठ है (इस ठाठ-बाट सहित कोलकाता की जो विश्व प्रसिद्ध रथयात्रा कार्तिक शुक्ल पूर्णिमा को निकलती है, उसका विवरण हम आगे देखेंगे)। चौथा मन्दिर पंचायती मन्दिर चावलपटी में है, जिसमें स्वागत के समय दर्शन करने गुरुदेव पधारे थे।*

यहाँ श्वेताम्बर समाज का रायबद्रीदासजी का मन्दिर कलाकारीगरी में विशिष्ट प्रसिद्ध है। कोलकाता से लगभग दस मील दूर (बोटोनिकल गार्डन में) विशला बरगद है। उसे देखने गुरुदेव सहित बहुत यात्री गये थे... यहाँ के एक म्यूजियम में प्राचीन जिनमन्दिर के कितने ही भव्य तथा दिगम्बर जिनप्रतिमा इत्यादि अनेक दर्शनीय वस्तुएँ देखीं। अमरतला इत्यादि के यादगार स्थल देखने पर आनन्द हुआ। यहाँ शहर में इलेक्ट्रिक ट्राम चलते हैं... यात्रियों ने अब घर जाने से पहले इस महान यात्रा के संस्मरणरूप से सगे -स्नेहीजनों को देने के लिये इस बड़े शहर में से विध-विध वस्तुओं की खरीदी की।

---

* इन जिनमन्दिरों के उपरान्त अब पूज्य गुरुदेवश्री के सातिशय प्रभावनायोग में दिगम्बर जैन मुमुक्षु मण्डल द्वारा पदक्कोपुर (भवानीपुर) में एक विशाल जिनमन्दिर और स्वाध्याय भवन का निर्माण कार्य हुआ है, जो कि दर्शनीय है।

गुरुदेव के दोनों समय के प्रवचनों के उपरान्त हमेशा जिनमन्दिर में दर्शन-पूजन तथा भक्ति का कार्यक्रम रहता था। छठवीं की रात्रि में नये मन्दिर में बहुत भक्ति हुई थी। अष्टमी और नौवीं की रात्रि में बेलगछिया मन्दिर में अद्‌भुत भक्ति हुई थी। पहले पूज्य गुरुदेव ने वैराग्य भरे स्तवन गवाये थे।

(1) मारा नेम पिया गिरनारी चाल्या मत कोई रोक लगा जो... हाँ मत कोई रोक लगा जो।

(2) जब चले गये गिरनार मेरे भगवान... ओ मेरी सहेली... मैं कैसे रहूं अकेली....

तत्पश्चात् बहिनश्री-बहिन ने 'तुमसे लागी लगन ले लो अपनी शरण... पारस प्यारा...' 'तू ही है पारस प्यारा रे' और 'मेरे मन मन्दिर में आज पधारो पारसनाथ भगवान।' ये स्तवन गवाये थे। गुजराती भाषा में स्तवन सुनने की यहाँ के मारवाड़ी समाज की विशेष माँग से निम्न स्तवन बहुत ही भक्ति की धुन से गवाया था।

अेक बार बोलो पार्श्वनाथ अबोलडा शाने लीधा छे!
भक्त बैठा छे तुम पास अबोलडा शाने लीधा दे!

बीच में हिन्दी में उसका भावार्थ समझाते हुए गुरुदेव ने कहा : **देखो! इसमें भगवान को विनती की जा रही है कि भगवान! आप बोलो!! एक बार बोलो! आप क्यों नहीं बोलते ? मौन क्यों हैं ? आपके भक्त आपके सामने बैठे हैं और विनती करते हैं— अब तो बोलो! बोलना ही पड़ेगा... हे प्रभो! आपके मिलने से मेरे लिये यह पंचम नहीं, किन्तु चौथा ही काल है... अब दिव्यध्वनि खिराओ...**—स्तवन का ऐसा मजेदार भावार्थ समझकर हजारों भक्त बहुत प्रसन्न हुए और भक्ति का रंग जमा... पूज्य बहिनश्री-बहिन ने जोरदार धुन उठायी।

गुरुदेव मारा विनति करे छे... वाणी छोड़ो ने वीतराग... अबोलडा छोड़ो प्रभुजी!
सम्मेदशिखर निर्वाणधामना दर्शन कीधा बहु भावे... अबोलडा छोड़ो प्रभुजी!
सम्मेदशिखर शाश्वतधामनी यात्रा कीधी बहु भावे... अबोलडा छोड़ो प्रभुजी!

भक्ति की ऐसी धुन जमी थी कि अभी मानो भगवान बोलेंगे और सर्वांग से ध्वनि का नाद गाज उठेगा... ऐसा वातावरण लगता था। सम्पूर्ण मन्दिर भरचक भर गया था और बाहर भी भक्तों की भीड़ जमी थी। बेलगछिया का पार्श्वनाथ भगवान का यह जिनमन्दिर शहर से दो-तीन मील दूर उपवन जैसे उपशान्त रमणीय वातावरण में बहुत ही रमणीय

लगता है; विशाल जगह में बगीचे और फब्बारों के बीच जिनमन्दिर देव विमान जैसा शोभित होता है। बड़े चौक में एक ओर कैलाशपर्वत की रचना है। मन्दिर के अन्दर पार्श्वनाथ प्रभु के पूर्व भवों के सुन्दर वैराग्य प्रेरक दृश्य हैं... भगवान की मुद्रा भी उपशान्त रस प्रेरक है। ज्ञान-ध्यान के लिये सरस स्थान है। एक दिन यहाँ बेलगछिया में संघ का भोजन रखा गया था। रात्रि में जिनमन्दिर में भक्ति के पश्चात् यह लेखक तथा दूसरे कितने ही यात्री—जो कारणवशात् गुरुदेव के साथ चम्पापुरी की यात्रा में नहीं जा सके थे वे ट्रेन में चम्पापुरी यात्रा के लिये गये और चम्पापुरी में फाल्गुन कृष्ण दस के दिन मन्दारगिरि तीर्थधाम की आनन्दकारी यात्रा की। कोलकाता से चम्पापुरी (भागलपुर) लगभग 250 मील है।

कोलकाताबन्दर गंगा नदी के किनारे बसा हुआ है... यहाँ निकट में ही गंगा नदी बंगाल के उपसागर को भेंटती है... फाल्गुन कृष्ण दसवीं के दिन यात्रियों का गंगाविहार हुआ जो अपूर्व था। इस प्रकार कोलकाता में यद्यपि यात्रा का प्रसंग नहीं था, तथापि विध-विध प्रसंगों में यात्रा के ताजा स्मरण सबको आनन्दित करते थे। कोलकाता में आठ दिन तो हो गये... अब फाल्गुन कृष्ण तेरस को अपना संघ एक सुन्दर गिरिगुफा के स्थल में जाता है... कल्पना करनी चाहिए—कहाँ जाता होगा ? मनरूपी पक्षी को कल्पनारूपी गगन में उड़ाओ तो ख्याल आयेगा कि गगनविहार करके गुरुदेव किस तीर्थ में जा रहे हैं !

खण्डगिरि-उदयगिरि तीर्थ की यात्रा

(चैत्र कृष्ण तेरस)

बिहार के मुख्य तीर्थों की हमने यात्रा की। बंगाल प्रदेश का मुख्य शहर देखा। अंग देश के तीर्थ चम्पापुरी की यात्रा की... अब यह पुस्तक बिहार और बंगाल के निकट आये हुए कलिंग (उड़ीसा) प्रान्त के एक ऐतिहासिक तीर्थक्षेत्र में अपने को ले जाती है। कलिंग देश का मुख्य शहर भुवनेश्वर कलकत्ता से लगभग 250 मील दूर है, वहाँ से चार-पाँच मील दूर खण्डगिरि और उदयगिरि ऐसी दो पहाड़ियाँ हैं। पर्वत में से खोदी हुई अनेक जैन गुफाएँ और उनमें उत्कीर्ण जैन प्रतिमाओं से भरपूर इस पहाड़ी पर भगवान महावीर का समवसरण आया था... उससे पहले जब जसरथ राजा का पुत्र तथा पाँच सौ मुनि यहाँ से मुक्ति प्राप्त हुए हैं इसलिए यह सिद्धक्षेत्र है। तदुपरान्त भगवान महावीर के पश्चात् लगभग 200 वर्ष बाद हुए कलिंग चक्रवर्ती जैन सम्राट एल. खारबेल-जो जैनधर्म के परम भक्त थे-उन्होंने तथा उनकी रानी ने इन पर्वतों में अनेक गुफाएँ, प्रतिमाएँ और लेख उत्कीर्ण कराये हैं, जिसमें उदयगिरि पर हाथी गुफा के ऊपर का विशाल शिलालेख विशेष प्रसिद्ध है। जैनधर्म की महत्ता से भरपूर इन शिलालेखों का अवलोकन करने भारत के एक बार के राष्ट्रप्रमुख डॉ. राजेन्द्रप्रसाद तथा प्रधानमन्त्री पण्डित जवाहरलाल नेहरु इत्यादि आ गये हैं। भारत के समुद्र किनारे का प्रसिद्ध रमणीय स्थल जगन्नाथपुरी यहाँ से मात्र बीस मील दूर है... खण्डगिरि-उदयगिरि यह दिगम्बर जैन तीर्थधाम है, दो हजार वर्ष से भी अधिक प्राचीन इस पहाड़ी पर मात्र दिगम्बर प्रतिमाएँ ही—तीर्थंकरों की और मुनिराज की उत्कीर्ण है।

पाठक ! इतना परिचय पढ़ने के बाद अब तुम्हें इस खण्डगिरि-उदयगिरि सिद्धक्षेत्र की यात्रा की उत्कण्ठा जागृत हुई होगी... चलो, हम वहाँ जाएँ। परन्तु गुरुदेव के साथ विमान में तो 27 सीट की ही जगह है और यात्री तो सैकड़ों हैं, इसलिए दूसरे यात्री कोलकाता से भुवनेश्वर की नौ रुपये की टिकिट कटाकर रेल से चैत्र कृष्ण बारह की रात्रि को रवाना हुए... और मुनिवरों के मंगल गीत गाते-गाते ट्रेन चल दी...

हिलमिलकर सब भक्तो चालो खंडगिरिके धाम में...
हिलमिलकर सब यात्रा चालो मुनिवरों के धाम में...

आत्मस्वरूपना ध्यान ज धरीने... चौबीस प्रभु की स्तुति करीने...
कुमतलिंग का खण्ड उडाया... चन्द्रप्रभु अद्‌भुत प्रगट्या....
ऐसे तीरथधाम में... संतजनों की साथ में... हिलमिलकर०

पाँचशतक मुनि की सिद्ध भूमि... गिरिगूफा छे त्यां बहु जुनी,
आत्मशान्तिना भाव भरेली... संतजनोनी पावनभूमि....
ऐसे पावनधाम में... संतजनों के साथ में... हिलमिलकर०

तेरस के सवेरे ट्रेन भुवनेश्वर पहुँची और वहाँ से खण्डगिरि-उदयगिरि पहाड़ की तलहटी में धर्मशाला में आये... सब नहा-धोकर जिनेन्द्रदेव के दर्शन करके, खण्डगिरि-उदयगिरि का अवलोकन करके भुवनेश्वर-विमानी मथक पर गुरुदेव का विमान आने की राह देखते हुए बैठे...

इस ओर कोलकाता में डमडम हवाई अड्डे से सवेरे सात बजे गुरुदेव का विशेष विमान चलने की तैयारी हो रही थी। इस विमान में कुल 27 यात्री थे। विमान की टिकिट रुपये 70 थी। गुरुदेव के साथ तीर्थयात्रा के निमित्त गगन-विहार के प्रसंग पर सबको बहुत प्रमोद था। गुरुदेव के साथ विमान में सेठ गजराजजी गंगवाल के पुत्र पन्नालालजी सेठ, मोहनलाल कालीदास जसाणी, सेठ मलूकचन्द छोटालाल और दूसरे कितने ही भाई-बहिन थे।

हवाई अड्डे पर सैकड़ों भक्तों ने जयनादपूर्वक विदा दी और विमान घरघराहट करता हुआ आकाश में उड़ गया। पूज्य गुरुदेव के साथ गगन-विहार के समय कुन्दकुन्द प्रभु की गगन विहारी विदेहयात्रा के मधुर स्मरण जागृत होते थे... और पूज्य बहिनश्री-बहिन विमान के अन्दर बहुत उत्साह से भक्ति कराती थीं।

जय बोलो जय बोलो श्री मुनिवरधाम की जय बोलो...
जय बोलो जय बोलो गुरुदेव साथे यात्रा की जय बोलो...
जय बोलो जय बोलो विमानयात्रा की जय बोलो...

नीचे समुद्र दिखता था। बंगाल के समुद्र से लगभग चार हजार फीट ऊँचे विमान गुजरता था, तब मानो कि गुरुदेव के साथ भवसागर को तैरते हों—ऐसी ऊर्मि जागृत होती थी। इस गगनयात्रा की आनन्दकारी यादें गुरुदेव के हस्ताक्षर चलते विमान में कराये। जमीन से चार हजार फीट ऊँचे आकाश में गुरुदेव ने निम्नानुसार हस्ताक्षर किये।

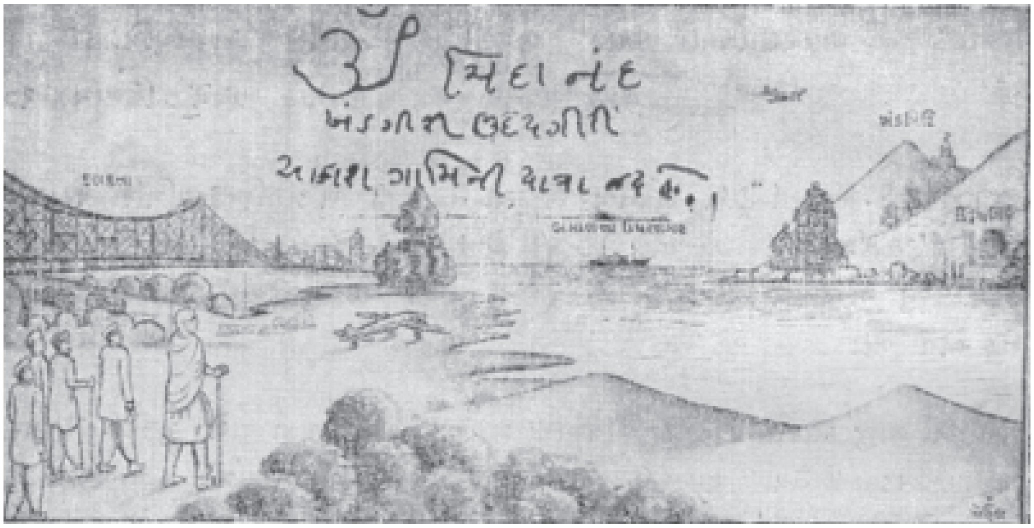

इस प्रकार आनन्द से गगन-विहार करके एक घण्टे में तो विमान भुवनेश्वर आ पहुँचा। भुवनेश्वर के विमानी मथक काग की तरह विमान का इन्तजार कर रहे सैकड़ों यात्रियों ने गगनविहारी गुरुदेव का गगनभेदी जयनाद द्वारा स्वागत किया... गुरुदेव प्रसन्नचित्त थे। सब धर्मशाला में आये और गुरुदेव तो तुरन्त ही तैयार होकर यात्रा के लिये भक्तों की राह देखते खड़े थे। थोड़ी देर में सब भक्त तैयार होकर आ पहुँचे और गुरुदेव के साथ आनन्दपूर्वक प्रस्थान किया।

धर्मशाला के बगल में ही आमने-सामने दो पहाड़ी है : एक का नाम खण्डगिरि और दूसरे का नाम उदयगिरि (जिसका प्राचीन नाम कुमारी पर्वत है)। इस पर्वत से भगवान महावीर ने उड़ीसा प्रान्त की जानता को दिव्यध्वनि का अमृतपान कराया था, इसलिए यह पावन तीर्थ है तथा जसरथ राजा के पुत्र इत्यादि 500 मुनिवरों का यह सिद्धिधाम है। एक बार द्वादशांग वाणी के उद्धार के लिये यहाँ श्रमणसंघ एकत्रित हुआ था। ऐसे इस प्राचीन तीर्थधाम की यात्रा करने गुरुदेव के साथ यात्री जा रहे हैं। पहले

खण्डगिरि पर आये... यह पर्वत लगभग 125 फीट ऊँचा है। मुनि भक्ति गाते-गाते पाव घड़ी में ऊपर पहुँच गये... ऊपर क्या होगा, यह देखने की सबको उत्कण्ठा थी... इस पर्वत पर दो मन्दिर तथा पाँचैक विशाल गुफाएँ (पर्वत में से खोदी हुई) है। जिनमन्दिर में विराजमान आदिनाथ भगवान इत्यादि प्राचीन जिनबिम्बों के दर्शन करके पूजन किया... थोड़ी देर सब शान्ति से बैठे... और फिर मुनिवरों के उपशान्त धाम में मानों नजर के समक्ष मुनिवर विराजते हों, ऐसे भाव से गुरुदेव ने भक्ति गवायी।

ऐसे मुनिवर देखे वन में... जाके रागद्वेष नहिं तन में
शीतकाल दरिया के किनारे... अेजी धीर धरै ध्यानन में... अैसे...
ग्रीषमकाल पर्वत के ऊपर... अेजी मगन रहे ध्यानन में... अैसे...
वर्षाकाल तरुतल ठाडे.... अेजी बुंद सहे छिनछिन में... अैसे...
अैसे मुनि को मैं नितप्रति ध्याऊँ... अेजी देत ढोक चरणन में... अैसे...

बगल के दूसरे मन्दिर में पार्श्वनाथ प्रभु की बारह फीट उन्नत खड्गासन प्रतिमा वीतराग ध्यान का सन्देश दे रही है... वहाँ भी आनन्द से दर्शन करके सबने अर्घ्य चढ़ाया... और फिर खण्डगिरि की गुफाएँ देखी। एक गुफा में चौबीस भगवन्त उत्कीर्ण हैं, दूसरी गुफा में नौ जिनबिम्ब तथा उनके नीचे नवगृह के नव देवता उत्कीर्ण किये गये हैं... दूसरी अनेक गुफाओं में भी जिनबिम्ब, पंच परमेष्ठी तथा मुनिवर इत्यादि पर्वत की दीवारों में ही उत्कीर्ण है। पूरा पर्वत जगह-जगह जिनेन्द्र महिमा को प्रसिद्ध कर रहा है। ये गुफाएँ देखकर गुरुदेव इत्यादि सब प्रसन्न हुए। कोई-कोई गुफा खाली (अन्दर में कुछ न होना) भी थी। ये गुफाएँ देखने पर गिरिगुफा वासी सन्तों का जीवन याद आता था... 'धन्य मुनिश्वर आतमहित में छोड़ दिया परिवार....' ऐसी भक्ति गाते-गाते पूज्य बहिनश्री-बहिन भावपूर्वक गुफाओं का अवलोकन करती थीं। चौबीस भगवन्तों की गुफा में भी यह स्तवन गवाया था। भगवन्तों, गुफाओं तथा आसपास के उपशान्त वातावरण का निरीक्षण करके प्रसन्नतापूर्वक बगल की दूसरी पहाड़ी पर आये।

इस उदयगिरि पहाड़ पर खास मन्दिर नहीं है, परन्तु गुफाओं की विशेषता है तथा यहाँ से पाँच सौ मुनिवर मुक्ति को प्राप्त हुए हैं, उनका कोई पृथक् स्थान नहीं है इसलिए पूरे ही पर्वत को सिद्धक्षेत्र समझकर उसकी यात्रा की। यह उदयगिरि पर्वत लगभग 110

फीट ऊँचा है और इसका विस्तार बहुत है। गुरुदेव के साथ गुफाएँ देखते-देखते पहाड़ के ऊपर चले जाते थे... किसी गुफा में घुसकर थोड़ी देर बैठ जाते थे... मुनिवरों के तथा सन्तों के ध्यान का स्मरण करते... उसकी भावना भाते-भाते सिद्ध परमात्मा को याद करते... गुरुदेव भी बारम्बार बहुमान से सन्तों का स्मरण करते थे। जाते-जाते मार्ग में सुन्दर झाड़ीवाला रमणीय स्थान आया। सबको वहाँ बैठने का मन हो गया। गुरुदेव कहें—बैठो, यहाँ सुन्दर स्थान है... ऐसे स्थान में मुनि ध्यान लगाकर बैठे हों—ऐसा कहकर गुरुदेव एक शिला को आसन बनाकर बैठे और सब भक्तजन भी शान्तिपूर्वक गुरुचरणों में बैठ गये। थोड़ी देर तो वातावरण एकदम उपशान्त बन गया—मानों सब ध्यान धरने बैठे। गुरुदेव कहते हैं : देखो, कैसा सरस शान्ति का धाम है... ध्यान धरने का मन हो जाए, ऐसा है। सन्तों के धाम में... गुरुचरणों में बैठे हुए भक्तमण्डल भी बहुत प्रसन्न था। सब कहते कि यहाँ से तो उठने का मन नहीं होता। परन्तु अभी पर्वत के बहुत भाग की यात्रा बाकी थी, इसलिए थोड़ी देर बैठकर फिर गुफाएँ देखते-देखते आगे चल दिये। किसी-किसी गुफा में प्रतिमा जी उत्कीर्ण किये हुए नजर पड़ जाते तब विशेष आनन्द होता था। एक गुफा में से (बाहर आये बिना) दूसरी गुफा में जाए, इस प्रकार से अनेक गुफाएँ एक-दूसरे के साथ जुड़ी हुई थी। इसलिए एक गुफा के द्वार में कोई बोले तो उसकी ध्वनि दूर-दूर की दूसरी गुफाओं तक टेलीफोन की भाँति सुनायी देती; वहाँ बोल-बोलकर सब आजमाईश करते थे... यात्रियों को गहरी-गहरी गुफा में बैठना बहुत रुचता था। किसी गुफा में जिनेन्द्र भगवान उत्कीर्ण किये हुए विराजमान हों, वहाँ यात्री उनके निकट जाकर बैठ जाए—गुफावासी सन्तों को याद करे, उन सन्तों के शुद्धात्मध्यान का भक्ति से स्मरण करे... उनके ध्यान के ध्येयभूत सिद्धपद को चिन्तवन करे। अहा, वह सिद्धस्वरूप का चिन्तवन! इसके ध्यान में सन्तों को होनेवाले आनन्द का अचिन्त्य वेदन!—इन सबका स्मरण और बहुत ही भावना होती थी। अहा! जैसा गहरा आत्मचिन्तन, वैसी ही गहरी गुफा। वह गहरी गुफा मानो दर्शा रही है कि आत्मा में अन्दर गहरे उतरकर होनेवाले आत्मचिन्तन का बहुत सामर्थ्य है। यह गुफावास सन्तों के सहवास जैसा आनन्द देता था। यह गुफावास इस यात्रा का एक विशिष्ट ऊर्मि भरा संस्मरण है। इन मुनिवरों के धाम की यात्रा में भक्ति उपरान्त वैराग्य भरपूर उपशान्त वातावरण की प्रधानता थी, और यह उपशान्त वातावरण आत्मार्थी को ज्ञान-वैराग्य और आत्मध्यान की प्रेरणा देता था।

अब यहाँ की प्रसिद्ध हाथी गुफा के निकट आ पहुँचे। इस हाथी गुफा के द्वार के दोनों ओर हाथी उत्कीर्ण हैं और द्वार के ऊपर की बड़ी छत में कलिंग नरेश जैन सम्राट खारवेल ने उत्कीर्ण कराया एक बड़ा लेख लगभग बीस फीट लम्बा और सात-आठ फीट चौड़ा है। उसमें जैनधर्म की महत्ता है। शुरुआत में 卐 स्वस्तिक (उभरा हुआ) उत्कीर्ण है। लगभग 2200 वर्ष प्राचीन (अर्थात् वीर प्रभु के पश्चात् तीन सौ वर्ष बाद का और कुन्दकुन्दाचार्यदेव से भी दो सौ वर्ष पूर्व का) यह प्राचीन शिलालेख ऐतिहासिक दृष्टि से बहुत महत्त्वपूर्ण है। इसका अवलोकन करके सबने गुफा में प्रवेश किया...

अभी चैत्र कृष्ण तेरस के दस बजे हम कलिंग देश में उदयगिरि पर्वत पर ऊपर की हाथी गुफा में गुरुदेव के साथ बैठे हैं। हाथी गुफा लगभग तीस फीट चौड़ी, बीस फीट गहरी और दसैक फीट ऊँची है। गुफा के अन्दर की छत पर किसी सन्त के विशाल चरण चिह्न उत्कीर्ण हैं। गुफा में एक ओर बैठक जैसा भाग है, वहाँ कहानगुरु बैठे हैं। आसपास सब यात्री भक्त बैठे हैं और शान्तचित्त से आसपास के शान्ति भरे वातावरण का अवलोकन करते हैं। पूज्य गुरुदेव को गुफा का ऐसा वातावरण देखकर बहुत प्रसन्नता होती है और हृदय में सन्तों का स्मरण जागृत होने पर अन्दर के विचार में उतर जाते हैं। गुफा में गुरुदेव के साथ भक्त बैठे हुए हैं, यह दृश्य बहुत भाववाही था। यहाँ की यात्रा के कितने ही स्मरण खण्डगिरि-उदयगिरि की गुफा में बैठे-बैठे ही लिखे गये हैं। थोड़ी देर गुफा की, यात्रा की और मुनिदशा की महिमा की चर्चा करके फिर भक्ति शुरु हुई।

मैं नित उठ ध्याऊँ गुण गाऊँ... परम दिगम्बर साधु... परम दिगम्बर साधु
महाव्रतधारी... धारी... महाव्रतधारी...
अैसे परम तपोनिधि जहाँ जहाँ जाते है जाते है,
परम शान्ति सुख लाभ जीव सब पाते हैं पाते हैं।
भव भव में सौभाग्य मिले, गुरुपद पूजुं ध्याऊँ... गुरुपद पूजुं ध्यावुं
भवजलतारी... तारी... भवजलतारी।

हाथी गुफा में सन्त मुनिवरों की अद्भुत भक्ति हुई और पश्चात्... अपनी यह 'मंगल तीर्थयात्रा' के साथ-साथ ही 'मोक्ष की मंगल यात्रा' का भी प्रारम्भ होता है... ऐसी

भावनापूर्वक खण्डगिरि–उदयगिरि सिद्धिधाम की यात्रा पूर्ण करके आनन्दमंगल गाते–गाते दस मिनिट में सब नीचे आ पहुँचे।

कलिंग देश के खण्डगिरि–उदयगिरि सिद्धिधाम को नमस्कार हो।

सिद्धिधाम से सिद्धि प्राप्त जसरथनन्दन आदि मुनिवरों को नमस्कार हो।

इस नवीन सिद्धिधाम की यात्रा करानेवाले कहान गुरुदेव को नमस्कार हो।

★ ★ ★

आनन्दपूर्वक इस सिद्धिधाम की यात्रा करके सब धर्मशाला में आये और यात्रासंघ ने एकदम सादा भोजन किया... केला, सन्तरा इत्यादि फल खाये... और धर्मशाला में वृक्ष के नीचे विश्राम किया। तत्पश्चात दोपहर को सब विमान मथक पर आ पहुँचे... लगभग ढाई बजे गुरुदेव पधारे और गगनविहार के लिये विमान में बैठे। तीन बजे सैकड़ों यात्रियों के जय–जयनाद के साथ घरघराहट द्वारा अपना साथ देता विमान उड़ा... सैकड़ों यात्री नीचे खड़े–खड़े ऊँची नजरों से वह गगनविहार देख रहे थे... शाम को गुरुदेव उड़ीसा (ओरिशा) की राजधानी में से बंगाल की राजधानी में आ पहुँचे। भुवनेश्वर में कितने ही यात्री भुवनेश्वर का प्रख्यात शिवमन्दिर देखने गये। इस शिव मन्दिर के लिये ऐसा सुनने में आया है कि समन्तभद्रस्वामी की स्तुति के बल से चन्द्रप्रभस्वामी की मूर्ति प्रगट होने का ऐतिहासिक प्रसंग इस मन्दिर में ही बना था... और उसके अमुक स्थानों पर दरारें आज भी दिखायी देती हैं... पुजारी लोग मन्दिर के अमुक भाग से आगे किसी को प्रवेश नहीं करने देते और जैनों को वे 'चन्द्रप्रभ को माननेवाला' ऐसा कहकर पहिचानते हैं। (समन्तभद्रस्वामी की स्तुति के बल से चन्द्रप्रभ भगवान प्रगट होने का प्रसंग बनारस–काशी में हुआ होने का भी कितने ही कहते हैं)। खण्डगिरि–उदयगिरि के पास धर्मशाला के अतिरिक्त दूसरी बस्ती विशेष नहीं है। कुछ चीज़–वस्तुएँ भी नहीं मिलती। पूज्य गुरुदेव इत्यादि विमान के यात्रियों को विदा देकर बाकी के ट्रेन में जानेवाले यात्री धर्मशाला में आये और गुरुदेव के बिना सुनमुन वातावरण में यात्रा की चर्चा करने बैठे... कितने ही यात्री फिर से खण्डगिरि–उदयगिरि पर गये... थोड़ी देर पहले गाजती गुफाएँ अभी शान्त थी। मुनिगुफा का यह शान्त–निर्जन वातावरण अध्यात्मप्रेरक था और समयसार

की गाथाओं को स्मरण कराता था... रात्रि में नौ बजे ट्रेन द्वारा भुवनेश्वर से कोलकाता की ओर रवाना हुए... यात्रा में बहुत बार इस प्रकार मार्ग के प्रवास में ही रात्रि जाती थी... लगभग बारह-एक बजे तक मोटर में प्रवास करने का तो बहुत बार बनता था, परन्तु यात्रा के उल्लास की उल्लास में थकान को कोई गिनता नहीं था। जहाँ दो-चार दिन रुकना हो और आराम जैसा जरा समय मिले, तब सबको बहुत चढ़े हुए थकान का ख्याल आता... चैत्र कृष्ण चतुर्दशी के सवेरे यात्री कोलकाता पहुँच गये... गुरुदेव तो विगत दिन शाम को पाँच बजे कोलकाता पहुँच गये थे।

अब यह चैत्र कृष्ण चतुर्दशी को कोलकाता का अन्तिम दिवस है और आगामी कल तो यहाँ से प्रस्थान करके शीघ्र प्रवास से घर की ओर जाना है... गुरुदेव ने अन्तिम दिन सुन्दर भावभीने प्रवचन किये। प्रवचन के बाद सेठ श्री शान्तिप्रसादजी जैन तथा सेठ श्री गजराजजी गंगवाल इत्यादि में भक्तिपूर्वक भावभीने सुन्दर भाषणों द्वारा गुरुदेव का बहुमान किया। तत्पश्चात् कोलकाता मुमुक्षु समाज की ओर से स्वागताध्यक्ष श्री शान्तिप्रसादजी के हस्ते गुरुदेव को अभिनन्दन-पत्र अर्पण किया गया। इस प्रकार कोलकाता का दस दिन का कार्यक्रम लगातार बहुत अच्छी प्रकार से सम्पन्न हुआ। कोलकाता में मुकाम के दौरान सेठ श्री बच्छराजजी गंगवाल (जिन्होंने सोनगढ़ में गोगीदेवी ब्रह्मचर्याश्रम का निर्माण कराया है, वे) तथा उनकी धर्मपत्नी सौ० मनफूलाबेन और उनके परिवारजनों का बहुत उत्साह था... सोनगढ़ आश्रम की बहिनों को अपने घर आये देखकर उन्हें बहुत वात्सल्यभाव और प्रमोद होता था। पूज्य गुरुदेव का आहार बच्छराजजी सेठ के यहाँ हुआ; तदुपरान्त सेठ श्री शान्तिप्रसादजी साहू, सेठ मोहनलालजी पाटनी, भाई श्री वीरचन्दभाई, मूलचन्दभाई जोबालिया इत्यादि के घर भी गुरुदेव आहार के लिये पधारे थे और ऐसे दूर देश में गुरुदेव के चरण अपने आँगन में होने पर सबने बहुत भक्तिभाव बताया था। गुरुदेव के साथ ऐसे महान तीर्थों की ऐसी सरस भावभीनी यात्रा हुई, इसलिए सेठ श्री नानालालभाई, जडावबहिन इत्यादि समस्त जसाणी परिवार को तथा तलकशीभाई, मणिलालभाई, प्रेमचन्दभाई, दलीचन्द हकुभाई संघवी, चुनीलाल हठीसंग सेठ इत्यादि सबको बहुत प्रमोद हुआ था। यात्रासंघ के लोग यात्रा की यादगिरि के लिये विध-विध वस्तु की खरीदी में और सगे-सम्बन्धियों को मिलने की धमाल में थे... अब यहाँ से संघ

के बहुत भाई–बहिन अलग होनेवाले थे, इसलिए तीन महीने साथ रहे हुए यात्री स्नेहपूर्वक वृत्तियुक्त हृदय से एक–दूसरे से हिलमिलकर विदा लेते थे... ये सब दृश्य लगनी भरे थे। बाकी रहे हुए संघ ने चैत्र कृष्ण अमावस्या के सवेरे प्रस्थान की तैयारी की। परन्तु—कोलकाता छोड़ने से पहले अभी अपने को दो बावतों को यहाँ याद करना है—एक तो कोलकाता की कार्तिकी पूर्णिमा की प्रसिद्ध रथयात्रा; और दूसरा सोनगढ़ से कोलकाता तक में हुई अभी तक की यात्रा।

कोलकाता की कार्तिकी पूर्णिमा की रथयात्रा

कोलकाता में प्रत्येक वर्ष कार्तिकी पूर्णिमा को श्वेताम्बर–दिगम्बर दोनों की संयुक्त भव्य रथयात्रा निकलती है, कोलकाता की यह एक विशेषता है। यह रथयात्रा डेढ़ सौ वर्ष से निकलती है और देश भर में बहुत प्रसिद्ध है। यह रथयात्रा देखने के लिये देश भर के हजारों यात्री यहाँ इकट्ठे होते हैं। सन्तजनों के प्रताप से इस पुस्तक के लेखक को भी संवत् 2010 में यह रथयात्रा नजर से देखने का और उसमें भाग लेने का सद्भाग्य प्राप्त हुआ था, उस समय उस रथयात्रा को साक्षात् निहारते–निहारते उसके वर्णन की जो नोंध की थी, उसमें से योग्य भाग यहाँ दिया है।

(कार्तिक शुक्ल चौदश) हमारी ट्रेन लगभग बारह बजे कोलकाता के हावड़ा स्टेशन पहुँची; मार्ग में एक जिनमन्दिर में महासुन्दर मानो कि सोना का ही हो, ऐसे भगवान के दर्शन करके आवास पर पहुँचे। दूसरे दिन रथयात्रा थी। रात्रि में अद्भुत शृंगारित कोलकाता नगरी देखी। ठीक कल ही रशियन पन्त प्रधान बलगेनी इत्यादि विदेशी मेहमान आनेवाले होने से पूरे शहर को बहुत शृंगार किया था। यह शृंगार देखकर ऐसा लगता था कि अरे, एक राजकीय मेहमान आने पर भी देश पूरे में कोलाहल और नगर पूरे में ऐसा शृंगार होता है तो त्रिलोकनाथ तीर्थंकर भगवान का जन्म होने पर पूरे विश्व में आनन्द का कोलाहल हो और पूरी नगरी सोने की रच जाए, इसमें क्या अधिकता! वे कल्याणक प्रसंग मानो कि प्रत्यक्षीभूत होते थे। रात्रि में लाखों दीपक के जगमगाहट में नगरी की शोभा अद्भुत थी। दूसरे दिन सवेरे बड़े मन्दिर गये, वहाँ रथयात्रा की तैयारी थी... चारों ओर रथ–गन्धकुटी–ध्वजाएँ–इन्द्रध्वज–पालकियाँ–छड़ी–चाँवर–

झरियन पोशाक इत्यादि का ठाठ देखकर बहुत हर्ष होता था। अभी तो रथयात्रा में जिनेन्द्र भगवान को दिव्य वैभवसहित विहार करते देखेंगे तब तो जिनेन्द्र महिमा में तल्लीन होंगे... आज पूरी कोलकाता नगरी अद्‌भुत प्रकार से शोभित हो रही है। जगह-जगह दरवाजे, ध्वजा पताका, लाईट, तोरण इत्यादि से शोभित है—मानो कि भगवान के श्री विहार के लिये ही नगरी सहज शृंगारित हो! हम आये और सहज ही ऐसा शृंगार हुआ... और ऐसे शृंगार से भरपूर नगरी में से जिनेन्द्रदेव के वैभवसहित रथयात्रा निकलेगी-उसके दर्शन होंगे, यह हमारा बहुत बड़ा सौभाग्य है... आज पूरा शहर आनन्द से खलबला उठा है... यहाँ लाखों जीव भगवान की रथयात्रा देखने को उमड़ पड़े हैं...

कार्तिक पूर्णिमा के सवेरे नौ बजे रथयात्रा शुरु हुई। श्वेताम्बर और दिगम्बर दोनों की रथयात्रा अमुक स्थल पर इकट्ठी हो जाती है और कितने ही समय तक साथ ही चलती है। अहा, क्या वह दिव्य रथयात्रा! क्या उसका महान ठाठ-बाट! मानो जिनेन्द्र भगवान का साक्षात् विहार... और जैन भक्तों की बेशुमार भीड़! बस, धर्म काल ही लगता था। पहले तो एक स्थल पर खड़े-खड़े पूरी रथयात्रा देख ली, पश्चात् भक्तिपूर्वक उसमें जुड़ गये। पच्चीस हजार लोगों से भरचक लगभग एक मील लम्बी और एक छोर से दूसरे छोर आने में आधा घण्टा लगे ऐसी रथयात्रा के रथ में श्री वासुपूज्य भगवान विराजते थे। प्रभुजी के साथ चलते हुए अहो! मानो भगवान के साथ विहार करने का सौभाग्य मिला। भगवान का ऐसा अपार वैभव देखकर भक्ति उछलती थी और बहुत बहुमान आता था। आसपास के साधर्मियों सहित प्रसन्नता से बहुत-बहुत भक्ति की। चलती रथयात्रा में बहुत भक्त रथ में रुपये भेंट रखते और धूप पूजा करते... रथयात्रा के दोनों छोर वायरलैस सन्देश सहित पुलिसवान साथ ही रहता। रथयात्रा की शुरुआत का बड़ा इन्द्रध्वज इतना ऊँचा था कि उसे नमाये बिना गुजरने के लिये कहीं-कहीं तार के डोरे काटने पड़ते थे।

एक ओर रशियन मेहमानों के स्वागत की भीड़! और दूसरी ओर श्री जिनेन्द्रदेव की इस रथयात्रा की भीड़! लाखों लोगों की बेशुमार भीड़ थी। जहाँ देखो वहाँ लोग, लोग... और लोग, लाखों लोग और शृंगार का तो पार ही नहीं। यह देखकर भगवान का समवसरण याद आता था। श्री प्रभुजी विहार करते-करते बेलगछिया मन्दिर में (पार्श्वनाथ प्रभु के वन मन्दिर में) पधारे। अहो, भगवान की ऐसी रथयात्रा देखकर मैं तो आनन्द से

चकचूर हो गया। छोटे से हृदय में नहीं समाता ऐसा महान उल्लास आँख में से हर्षाश्रुरूप से बाहर आता था। भगवान की रथयात्रा ऐसी सरस वैभव वन्ती,—तो फिर साक्षात् जिनेन्द्र के श्री विहार का वैभव तो छोटे मस्तिष्क की कल्पना में कहाँ से समाये ? प्रभुजी के वैभव को साक्षात् देखा है, ऐसे सन्त ही ऐसी रथयात्रा इत्यादि के महान उल्लास को पूरा समझ सकते हैं। यह रथयात्रा देखने पर ऐसा लगता था कि जब अकलंकस्वामी द्वारा जैनधर्म की विजय हुई और रानी ने पूरे ठाठ-बाट से राज्य में जिनेन्द्र भगवान की जो भव्य रथयात्रा निकाली, उसे देखकर अनेक जीव सम्यक्त्व प्राप्त कर गये... वह रथयात्रा कैसी होगी ? रथयात्रा में आये हुए समस्त जैन संघ का भोजन बेलगछिया मन्दिर में था... उस साधर्मी संघ के भोजन का दृश्य देखकर वात्सल्य होता था। बेलगछिया मन्दिर सुन्दर और मनोहर है। बड़ा चौक, बगीचे, सरोवर जैसी विशाल हौज, अनेक फव्वारे, लाईटें, ध्वजा-पताका इत्यादि से सुशोभित है... एक ओर कैलाशपर्वत की रचना है। पर्वत के ऊपर सुन्दर देहरी है, गुफा है। पर्वत ऊपर एक ओर से चढ़कर दूसरी ओर से उतरा जाता है, घुमती पानी की खाई है और पर्वत ऊपर से पानी का प्रपात गिरता है। और कैलाश के ऊपर चौबीस भगवान बताने के लिये चौबीस लाईटें लगायी थी... यह दृश्य बहुत सुन्दर था। यहाँ के मन्दिर में श्री पार्श्वनाथ प्रभु मूलनायक हैं। तदुपरान्त चन्द्रप्रभ इत्यादि भगवन्त विराजमान हैं, और पार्श्वनाथ प्रभु के दस भवों के सुन्दर चित्र हैं... उनमें कमठ उपसर्ग करता है और भगवान ध्यान में स्थित हैं, यह दृश्य सरस भाववाही है।

— ऐसे जिनमन्दिर में ठाठ-बाटपूर्वक मेरे नाथ की सवारी गाजते-बाजते आ पहुँची और चारों ओर जय-जयकार गाज उठे, भगवान की सवारी का वैभव निम्नानुसार था।

(1) सबसे पहले बड़ा बाजा मंगल नाद से गाजता था। (2) ध्वजाएँ, (3) धातु का बड़ा रथ, (4) चार इन्द्रध्वज, (5) मंगल बाजा, (दूसरा) (6) ऐरावत हाथी-सफेद बहुत सुन्दर है और ऊपर सोने का हौदा है, वह हाथी सूंड़ से चँवर ढोरता है, (7) रथ सुन्दर, बड़े मन्दिर जैसा; पूर्व में इस रथ में प्रभुजी को विराजमान करते थे, अब नया रथ बनाया है। (8) अनेक ध्वजाएँ (9) गन्धकुटी मेरु जैसी, (10) बैण्डबाजा (तीसरा), (11) चाँदी का ऐरावत हाथी छोटा, (12) गन्धकुटी चाँदी की, (13) अनेक बड़ी ध्वजाएँ, जरी की, (14) भजन विभाग, मण्डलियों की भक्ति, (15) ध्वजा-ध्वजा

(सैकड़ों), (16) गन्धकुटी चाँदी-सोना की, (17) ध्वजाएँ जरी की, (18) गन्धकुटी चाँदी की, (19) ध्वजाएँ जरी की, (20) बाजा - बड़ी बैण्ड पार्टी (चौथी), (21) सोना-चाँदी की गन्धकुटी—उसमें चारों ओर कल्पवृक्ष जैसा, उसमें कलश 108, (22) गन्धकुटी चाँदी की, (23) ध्वजाएँ, (24) पालकी सोना-चाँदी की, (25) ध्वजाएँ (26) गन्धकुटी, (27) कलशों का इन्द्रध्वज कल्पवृक्ष जैसा, (28) जरी की ध्वजाएँ बड़ी, कीमती, (29) गन्धकुटी की रचना, दो मंजिल के मन्दिर जैसा दृश्य, (30) ध्वजाएँ, (31) तोरण चाँदी का, (32) बहुत बड़ा बैण्डबाजा, इन्द्र जैसा, (पाँचवाँ), (33) कलशों का इन्द्रध्वज, सैकड़ों कलश, (34) चाँदी की छड़ी, लगभग 64, (35) सोना-चाँदी की गन्धकुटी, (36) छड़ी, (37) बड़ा तोरण सोना-चाँदी का, (38) बैण्ड-बाजा बहुत बड़े, (छटवाँ), (39) चौंसठ चँवर टंगे हुए, (40) छड़ी, (41) चाँदी का बड़ा कलश, (42) धूपदान जिसमें धूप क्षेपण करके रथयात्रा के समय धूप पूजा करते। हजारों भक्तोंसहित इतने वैभव-ठाठ-बाट से और जिनेन्द्र भक्ति के जयनाद से गुजरने के पश्चात् अब आया श्री जिनेन्द्रदेव का महान भव्य रथ... सोने से मढ़ा हुआ और हीरों से जड़ा हुआ... रथ में दो सुन्दर अश्व थे। उन अश्व के ऊपर पट्टा इत्यादि हजारों रुपये की कीमत के जरी के थे। रथ में श्री वासुपूज्य भगवान विराजते थे। चारों ओर इन्द्र चँवर ढोरते; छत्र सोना-चाँदी के और रत्नजड़ित थे... हीरा-माणिक की मालाएँ झूलती थीं। रथ सारथी इत्यादि से सुसज्ज था। अहो, इस रथयात्रा की शोभा! जगत की विभूति जिनेन्द्रदेव के चरण में इकट्ठी हुई थी। जिनेन्द्रदेव का वैभव देखने पर आत्मवैभव के प्रति उल्लास उछलता था और अन्तर में होता था कि वाह! मेरा प्यारा जैनधर्म! रथयात्रा में भी ऐसा आनन्द... तो साक्षात् कल्याणक के आनन्द की क्या बात!

कल्याणक काल प्रत्यक्ष प्रभु को लखें जे सुरनर घने
तिह समय की आनन्द महिमा कहत क्यों मुख सें बने!

अहो, जिनेन्द्र वैभव का दर्शन मुझे आत्मवैभव की प्राप्ति कराओ।

(इति रथयात्रा वर्णन) जयजिनेन्द्र!

★ ★ ★

इस प्रकार कोलकाता की भव्य रथयात्रा का अवलोकन किया; अब आगे बढ़ने से पहले अभी तक में अपने जिन-जिन तीर्थों की मंगल यात्रा की और गुरुदेव बारम्बार जिसे याद करते हैं, उसका थोड़ा-सा स्मरण कर लेते हैं।

सबसे पहले हर्ष प्रसंग यह बना कि संवत् 2012 के श्रावण शुक्ल एकम् को गुरुदेव सम्मेदशिखरजी यात्रा में जाने के निर्णय की बधाई दी... और मुमुक्षु मण्डल में हर्ष छा गया... पश्चात् संवत् 2013 के कार्तिक शुक्ल बारह के दिन नूतन जिनमन्दिर में भगवान नेमिनाथस्वामी की पुनः प्रतिष्ठा की... और कार्तिक शुक्ल पूर्णिमा को यात्रा के लिये सोनगढ़ से मंगल प्रस्थान किया।

सोनगढ़ से बल्लभीपुर, पाटणा, बरवाला, योलारपुर-भीमनाथ, धंधुका, खडोल, फेदरा, भोलाद, साबरमति नौका विहार करके गोलाना, खम्बात-बडवा, बोरसद, अगास, छाणी, बड़ोदरा, इटोला, मियांगाम, पालेज में वेदी प्रतिष्ठा करके भरूच, सजोद, अंकलेश्वर, कीम, सूरत, कतारगाम, यलसाणा, नवसारी, चीखली, बलसाड, वापी, तलासरी-वनविहार, कासा, मनोर, खुपरी, अम्बाडी, भीमण्डी, शिव होकर पौष कृष्ण चौदह के दिन गुरुदेव मुम्बई शहर में पधारे।

मुम्बई नगरी में पन्द्रह दिन रहकर, पौष शुक्ल पूर्णिमा के सुप्रभात में मंगल तीर्थयात्रा के लिए प्रस्थान करके, भीमण्डी होकर गजपन्था और मांगीतुंगी सिद्धक्षेत्रों की यात्रा की, पश्चात् धूलिया शहर होकर बढवाणी सिद्धक्षेत्र की यात्रा की, कुन्दकुन्द प्रभु को भेंटा; चौरासी फीट के भगवान देखे... पावापुरी-ऊँन सिद्धक्षेत्र के भोंयरा में त्रिपुटी भगवान देखे... खण्डवा और सनावद होकर, आनन्दकारी नौकाविहारपूर्वक सिद्धवरकूट सिद्धिधाम की यात्रा करके वापस इन्दौर आये...

इन्दौर के पश्चात् उज्जैन, सोनकच्छ होकर भोपाल, कुराना, नरसिंहगढ़, मक्षीपार्श्वनाथ, सारंगपुर-वन भोजन करके व्यावरा और राघवगढ़ होकर गुना शहर आये... बजरंगगढ़, बदरवास, कोलारस, सेसई और शिवपुरी होकर झाँसी। पश्चात् ललितपुर, थुवानजी, चन्देरी, बबीना-तालहबेट होकर सिद्धक्षेत्र सोनागिर आये और पर्वत पर सत्रह मन्दिरों की यात्रा की। ग्वालियर-लश्कर, धौलपुर होकर आगरा शहर आये।

पश्चात् शौरीपुर तीर्थधाम में नेमिनाथ प्रभु की यात्रा करके मथुरा सिद्धक्षेत्र में

जम्बुस्वामी और सप्तर्षि भगवन्तों के दर्शन किये। मुम्बई से निकले हुए को आज एक महीना हुआ है... और आठ तो सिद्धक्षेत्रों की यात्रा हुई। वाह!

पश्चात् फिरोजाबाद, मैनपुरी, कानपुर और लखनऊ होकर धर्मनाथस्वामी के जन्मधाम रत्नपुरी की यात्रा करके, जगतप्रसिद्ध, जगतवन्द्य शाश्वत् तीर्थधाम अयोध्या में आये... पाँच तीर्थंकरों के जन्मधाम की यात्रा करके बनारस / काशी आये... चन्द्रपुरी, सिंहपुरी की यात्रा की; पार्श्व और सुपार्श्व प्रभु के जन्मधामों की यात्रा की; पश्चात् डालमियानगर होकर पटना शहर में सुदर्शन सिद्धिधाम की वन्दना की... और फिर आये आनन्दकारी स्थान में... कहाँ? भगवान के समवसरण में—राजगृही।

फाल्गुन कृष्ण चतुर्दशी तथा अमावस्या के दिन विपुलाचल, रत्नगिरि, उदयगिरि, श्रमणगिरि और वैभारगिरि—इन पाँच पहाड़ी की यात्रा करके कुण्डलपुर तथा नालन्दा होकर प्रसिद्ध सिद्धिधाम पावापुरी में आये... जलमन्दिर की यात्रा की... फिर गौतम सिद्धिधाम गुणावा में आये... और गया शहर होकर परमध्येयरूप ऐसे शाश्वत् सिद्धिधाम सम्मेदशिखर पर पहुँचे... इस पावन तीर्थ के दर्शन से आनन्द-आनन्द छा गया... ईसरी जा आये और फाल्गुन शुक्ल सप्तमी को तो कैसी मजे की भावभीनी मंगल तीर्थयात्रा की!! वाह भाई वाह! इन पच्चीस टूंकों की यात्रा के उमंग भरे संस्मरण अभी भी हृदय में भरे हैं। जीवन भर न समाप्त हो ऐसा यह पाथेय है... यात्रा का यह अमर संस्मरण साधक भाव की मधुर प्रेरणा दे रहा है।

सम्मेदशिखर मधुवन में यात्रा, भक्ति, पूजन बहुत किये। बीच में चम्पापुरी भी जा आये, भागलपुर होकर मन्दारगिरि सिद्धिधाम की यात्रा की—फाल्गुन शुक्ल ग्यारस को। पश्चात् चार दिन सम्मेदशिखरजी में रहकर, अन्तिम दिन में अजोड़ भक्ति करके, चैत्र कृष्ण एकम को प्रस्थान किया... जमशेदपुर, धनबाद, झरिया होकर कोलकाता आये हैं... खण्डगिरि और उदयगिरि की आकाशगामिनी यात्रा भी कर आये... अब अभी कोलकाता से दिल्ली की ओर शीघ्र से प्रस्थान की नौबत बज रही है... पाठक! आपके हृदय में अभी शिखरजी के संस्मरण जागृत है न! तो आज भी अभी ही तुम्हें एकदम नजदीक से इस पावन तीर्थधाम के दर्शन होंगे। चल... तो मोटर में बैठ जा।

★ ★ ★

कोलकाता से दिल्ली की ओर

पूज्य श्री कानजीस्वामी दिगम्बर जैन यात्रासंघ ने पौष शुक्ल पूर्णिमा से चैत्र कृष्ण अमावस्या तक के ढाई महीने में मुम्बई से कोलकाता तक का प्रवास करके अनेक सिद्धक्षेत्रों, तीर्थधामों और दूसरे स्थलों की मंगल तीर्थयात्रा की; और चैत्र कृष्ण अमावस्या को कोलकाता से प्रस्थान किया। अब दिल्ली की ओर जाते हुए बीच में डालमियानगर, बनारस, कानपुर इत्यादि कितने ही गाँव-जो पहली बार के प्रवास में आये वे ही फिर से आते थे, इसलिए वहाँ कहीं विशेष रुकने का कार्यक्रम नहीं था; मात्र भोजन अथवा आराम के लिये रुककर शीघ्रता से प्रवास करना था। पूज्य गुरुदेव की कल्याणवर्षिनी मोटर तो जल्दी सवेरे जय-जयकार पूर्वक कोलकाता से आसनसोल की ओर रवाना हुई; 'सतसेविनी' भी रवाना हुई। आश्रमवाली बस बच्छराजजी सेठ के बंगले पर एकाध घण्टे रुककर लगभग नौ बजे रवाना हुई। कोलकाता से आसनसोल का रास्ता सम्मेदशिखरजी पहाड़ के अत्यन्त निकट से गुजरता है, इसलिए अनेक मीलों तक शिखरजी धाम का स्पष्ट दर्शन हुआ करता है... उसे देख-देखकर गुरुदेव के अन्तर में अद्‌भुत ऊर्मियाँ जागृत होती थी... अहा! जीवन में यह तीर्थ की यात्रा अलौकिक हुई... तीर्थ के दृश्य बहुत ही भावभीने थे... वे दृश्य देखकर सिद्धों का और तीर्थंकरों का स्मरण होता था... ऐसी-ऐसी अन्तर की ऊर्मि सहित शिखरजी के दर्शन करते-करते गुरुदेव आसनसोल पहुँचे... और वहाँ से चौपरान पहुँचे। सत्सेविनी के यात्री भी सम्मेदशिखरजी के निकट दर्शन से बहुत ही प्रसन्नतापूर्वक भक्ति करते थे... पीछे रही हुई आश्रम की बस सम्मेदशिखर के पास से आनन्दपूर्वक भक्ति करते-करते गुजरती थी, अहा! बारम्बार इस पवित्र तीर्थ के दर्शन करने से कैसा हर्षोल्लास होता है! लगभग पच्चीस मील तक दर्शन हुआ करते हैं... वहाँ से नजर हटती ही नहीं। नजर तो सम्मेदशिखरजी में स्थिर हो गयी परन्तु मोटर स्थिर नहीं थी... पहाड़ के पीछे के भाग की प्रदक्षिणा करते-करते मोटर एकदम तलहटी के नजदीक आ गयी... पीछे की छह-सात टूंकें स्पष्ट दिखायी देने लगीं। पारस टूंक का मन्दिर एकदम स्पष्ट दिखता था। ऐसे पावन तीर्थ को निहारते-निहारते शाम के लगभग पाँच बजे आनन्द से गुजर रहे थे, वहाँ तो अचानक टायर टूटने से मोटर रुक गयी... रुक

तो गयी परन्तु बराबर शिखरजी धाम के सामने ही आकर रुकी, इसलिए शिखरजी धाम के दर्शन से यात्रियों को प्रसन्नता हुई... जैसे वन–जंगल में भूले पड़े हुए कोई आत्मार्थी को किसी मुनिराज के दर्शन हो जाने पर हर्ष होता है, वैसा हर्ष यहाँ यात्रियों को शिखरजी के दर्शन से हुआ। सबने नीचे उतरकर भक्तिपूर्वक उस उन्नत तीर्थराज को नमस्कार किया। उसके निकट जाकर बहुत भक्ति की... ढाई घण्टे वहाँ रुके... शाम का भोजन भी वहीं किया। शिखरजी की गोद में बैठे–बैठे इस पावन धाम से मोक्ष पधारे हुए आत्मध्यानी सन्तों को बहुत–बहुत याद किया... मोक्ष की उत्तम भावनाएँ भायीं। अहा, सन्ध्या के शान्त–उपशान्त वातावरण में शिखरजी का दृश्य कैसा सरस था! विशालता और पवित्रता का वह पुंज मोक्षसाधक सन्तों के मार्ग की प्रेरणा दे रहा है। यहाँ जागृत ऊर्मियाँ शिखरजी की गोद में ही बैठे–बैठे छह–सात पृष्ठ भरकर लिखी। रात्रि में लगभग आठ बजे बस चालू हुई... थोड़ी ही देर में ईसरी आया... यहाँ 'कल्याणवर्षिनी' का समाचार मिला और 'सत्सेविनी' की भी भेंट हो गयी... इसलिए आनन्दित होकर आगे बढ़े और रात्रि में अमावस्या के अन्धकार में चौपारन पहुँचे... वहाँ रात्रि में रुककर दूसरे दिन सवेरे आगे प्रस्थान किया।

दोपहर को डालमियानगर पहुँचे। बीच में सोन नदी का दो–तीन मील लम्बा पुल आया। वह पुल लाँघने के लिये खास रेलवे की व्यवस्था है। मोटरें और बस इत्यादि वाहन भी रेल के डिब्बों में चढ़ाकर पुल लाँघकर डालमियानगर पहुँचे... वहाँ जिनेन्द्रदर्शन करके तथा अल्पाहार करके थोड़ी देर में प्रस्थान किया। यात्रियों की बस 35 मील तक गुरुदेव की मोटर के साथ रही और अन्त में पीछे रह गयी। शीघ्रता से मुसाफिरी करके बनारस आये; वहाँ जिनेन्द्र दर्शन तथा सायंकालीन भोजन की विधि निपटाकर रात्रि को इलाहाबाद पहुँचे। बीच में लगभग एक मील लम्बा विशाल पुल आता है। इलाहाबाद के नजदीक में गंगा–जमुना और सरस्वती का त्रिवेणी संगम होता है, वह स्थान 'प्रयाग' तीर्थरूप से प्रसिद्ध है। किले के अन्दर के एक वृक्ष को 'अक्षय वट वृक्ष' कहा जाता है। यहाँ भगवान श्री आदिनाथस्वामी की तपोभूमि है। शीघ्र प्रवास के कारण उस प्रयाग तीर्थ का स्थान देखने का अवसर नहीं मिला। भगवान के उस पावन तीर्थधाम को भक्तिपूर्वक नमस्कार करके तथा धर्मशाला के मन्दिरों के दर्शन करके दूसरे दिन सवेरे प्रस्थान करके

कानपुर आये। शिखरजी की ओर जाते समय के प्रवास में इस कानपुर का कार्यक्रम दो दिन के बदले एक ही दिन का रहा था, इसलिए कानपुर की जनता फिर से गुरुदेव के दर्शन के लिये लालायित थी। आज गुरुदेव के फिर से पधारने पर वहाँ की जनता को बहुत हर्ष हुआ। चैत्र शुक्ल एकम् के दोपहर को पूज्य गुरुदेव कानपुर से कुरावली पधारे; वहाँ हजारों की मानव भीड़ ने चर्चा में भाग लिया था। सत्सेविनी के यात्री भी गुरुदेव की चर्चा सुनने के लिये रुके थे। यहाँ एटा गाँव से भी लोग जय-जयकारपूर्वक गुरुदेव को एटा पधारने की प्रार्थना करने आये थे। गुरुदेव ने वह प्रार्थना स्वीकार करके दूसरे दिन दोपहर को एटा पधारे थे। एटा के जैन समाज ने बहुत उत्साह दिखाया था और गुरुदेव ने आधे घण्टे प्रवचन किया था। वहाँ से खुर्जा होकर बीच में एक गाँव के डाक बंगले में आहार करके, हस्तिनापुर की ओर प्रस्थान किया। कल्याणवर्षिनी मोटर के और सत्सेविनी मोटर के यात्री रात्रि को हस्तिनापुर पहुँच गये थे। हस्तिनापुर जाते हुए रास्ते में भगवान के जन्मकल्याणक को याद करके यात्री पालना झूलन गाते थे। हस्तिनापुर तीर्थधाम की यात्रा गुरुदेव ने चैत्र शुक्ल दूज को की।

★ ★ ★

हस्तिनापुर तीर्थधाम की यात्रा

उत्तरप्रदेश का यह पावन तीर्थधाम हस्तिनापुर अनेक ऐतिहासिक पावन प्रसंगों से भरपूर है। सबसे प्रथम युग की आदि में भगवान ऋषभ मुनिराज इस भूमि में विचरे हैं और वर्ष उपरान्त के उपवास के बाद इस युग में सर्व प्रथम आहारदान का प्रसंग भगवान के भव-भव के साथीदार इस हस्तिनापुर के युवराज श्री श्रेयांसकुमार के यहाँ बना था। अक्षय तृतीया जैसे महान पर्व की उत्पत्ति का यह स्थान देखने से असंख्य वर्षों पूर्व के वे प्रसंग ताजा हो रहे थे... पश्चात् शान्तिनाथ-कुन्थुनाथ और अरनाथ, ये तीन चक्रवर्ती तीर्थंकर इस पावन भूमि पर अवतरित हुए, उन्होंने इस भूमि में चक्रवर्ती पद त्याग-त्याग कर चैतन्य का सर्वज्ञ पद साधा है। अहा! मानो चक्रवर्ती पद साध-साधकर, उसे छोड़ने की परम्परा उस भूमि में प्रवर्तित थी। तत्पश्चात् तीर्थंकर श्री मल्लिनाथ भगवान का

समवसरण भी यहाँ आया था। पाण्डवराज जैसे धर्मात्माओं की यह राजधानी थी। अकम्पनस्वामी के 700 मुनियों के संघ से यह भूमि पावन हुई है। भरत चक्रवर्ती के सेनापति और आदिनाथ प्रभु के धर्म दीवान राजा जयकुमार तथा अकम्पन राजा इत्यादि अनेक बड़े-बड़े मोक्षगामी महापुरुष इस भूमि में हुए हैं। जब शान्तिनाथ भगवान पूर्व में तीसरे भव में विदेहक्षेत्र में धनरथ तीर्थंकर के पुत्र मेघरथ थे, तब दो मुर्गों के (देव हुए) जीवों ने उपकारबुद्धि से उन्हें ढाई द्वीप के तीर्थों की यात्रा करायी थी, उस समय विमान में से हस्तिनापुर बतलाते हुए कहा था कि तीसरे भव में जब आप भरतक्षेत्र के सोलहवें तीर्थंकर होओगे, तब आपके जन्म से यह नगरी पावन होगी। (पूरी कथा के लिये देखो आत्मधर्म अंक १७७) ऐसा-ऐसा वर्णन पुराण में से पढ़ते समय यह हस्तिनापुरनगरी देखने के लिये हृदय तरसता था। आज गुरुदेव के प्रताप से इस हस्तिनापुर तीर्थ की साक्षात् यात्रा करते हुए सबको बहुत आनन्द हुआ। दिल्ली से भी अनेक भाई यात्रा में भाग लेने आये थे।

कुरुजांगल देश के इस हस्तिनापुर तीर्थ में एक विशाल धर्मशाला तथा उसमें ही विशाल जिनमन्दिर है। मन्दिर में शान्तिनाथ-कुन्थुनाथ-अरनाथ तथा आदिनाथ और महावीर भगवान विराजते हैं। आस-पास जंगल जैसा प्राचीन वातावरण है। धर्मशाला से लगभग दो मील दूर कल्याणकभूमि के अलग-अलग चार स्थान हैं और उनमें शान्तिनाथ, कुन्थुनाथ, अरनाथ तथा मल्लिनाथ भगवन्तों के कल्याणक चिह्नरूप से उभरे हुए स्वस्तिक की स्थापना है। अहा! एक तो चक्रवर्ती और फिर तीर्थंकर-ऐसी दो-दो उत्तम पदवी के धारक तीन-तीन भगवन्तों के चार-चार कल्याणक लगातार इस भूमि में हुए, वाह, धन्य यह भूमि। गुरु के साथ ऐसे तीर्थस्थान के दर्शन करते हुए, भक्ति से अर्घ्य चढ़ाते हुए और उमंग से यात्रा करते हुए यात्रियों को बहुत आनन्द होता था। अयोध्या की भाँति यहाँ भी किसी पर्वत की यात्रा नहीं है। परन्तु जमीन पर ही यात्रा है। एक भगवान की टूँक की यात्रा करके दूसरे भगवान की टूँक में जाने से मार्ग में भगवान की भक्ति और जयकार चालू रहता था। मल्लिनाथ भगवान इत्यादि की टूँक में गुरुदेव ने भी भक्ति गवायी थी। अहा! तीन-तीन तीर्थंकरों ने यहाँ चक्रवर्ती के निधान को तृणवत् परित्यागकर चैतन्य के निधान साधे और धर्म के चक्रवर्ती हुए। इन्द्र भी यहाँ आ-आकर इन धर्म चक्रियों के

चरणों में नम्रीभूत हुए। ऐसे स्मरणों के साथ यात्रियों ने भावपूर्वक प्रत्येक टूँक की प्रदक्षिणा की और आनन्द से यात्रा करके सभी धर्मशाला में आये।

शान्तिनाथ-कुन्थुनाथ-अरनाथ भगवन्तों को नमस्कार हो।

आदिनाथ भगवान तथा मल्लिनाथ भगवान को नमस्कार हो।

हस्तिनापुर तीर्थधाम की यात्रा करानेवाले कहान गुरु को नमस्कार हो।

★ ★ ★

आनन्द से यात्रा करके धर्मशाला में आने के बाद गुरुदेव आहार के लिये पधारे और इस तीर्थभूमि में गुरुदेव के आहारदान का लाभ मिलने से पूज्य बहिनश्री-बहिन को बहुत हर्ष हुआ। दोपहर को जिनमन्दिर में शान्तिनाथ इत्यादि भगवन्तों की बहुत ही भक्ति की, पश्चात् पूज्य गुरुदेव ने पद्मनन्दिपंचविंशतिका के दान अधिकार पर प्रवचन किया। जिसमें भगवान आदिनाथ मुनिराज के आहारदान-प्रसंग का भावभीना वर्णन सुनते हुए भक्ति से रोम-रोम उल्लसित होता था। भगवान आदिनाथ प्रभु का जीवन चरित्र, श्रेयांसकुमार के जीव के साथ अनेक भवों का सम्बन्ध, हस्तिनापुर में प्रभु को देखते ही जातिस्मरणज्ञान और पश्चात् आहारदान, इन सबका वर्णन तथा तीन-तीन चक्रवर्ती तीर्थंकर नवनिधान त्याग-त्याग कर आत्मा को साधने के लिये चल निकले, उसका वर्णन इस हस्तिनापुर में बैठे-बैठे सुनते हुए बहुत भाव उल्लसित होते थे। यह तीर्थस्थान गुरुदेव को बहुत रुचिकर हुआ था... इसलिए कितनी ही टूँक की दोबारा यात्रा करने गये थे और कहते थे कि स्थान बहुत अच्छा है; इस तीर्थस्थान की भी यात्रा हो गयी, यह अच्छा हुआ। भगवान के जन्मधाम में 'गोदी ले ले...' इत्यादि भक्ति भी आनन्द से की। इस प्रकार आनन्द से हस्तिनापुर तीर्थधाम की यात्रा करके संघ ने दिल्ली की ओर प्रस्थान किया। बीच में मोदीनगर में श्री जिनमन्दिर में कमलासन पर विराजमान जिनेन्द्र भगवान के दर्शन करके चैत्र शुक्ल चौथ के दिन गुरुदेव दिल्ली पधारे।

★ ★ ★

भारत की राजधानी—

दिल्ली शहर में

चैत्र शुक्ल चौथ (दिनांक 4-4-1957) के दिन पूज्य गुरुदेव दिल्ली पधारने पर मुमुक्षु मण्डल सहित लगभग तीन हजार लोगों ने भव्य स्वागत किया। स्वागत प्रमुख लाला राजकृष्ण जैन थे तथा फर्स्ट क्लास मजिस्ट्रेट श्री कान्ताबेन जयसीराम प्रधानमन्त्राणी थे। स्वागत लाल मन्दिर में आया और वहाँ मंगल प्रवचन हुआ। प्रवचन के लिये परेड मैदान में खास मण्डप बाँधा गया था। प्रवचन में श्री उच्छरंगभाई ढेबर (तात्कालिक कांग्रेस प्रमुख तथा सौराष्ट्र के भूतपूर्व मुख्य प्रधान) भी आते थे और गुरुदेव के प्रति उन्होंने बहुत भक्तिभाव बताया था। उन्होंने दिल्ली में गुरुदेव का भावभीना स्वागत प्रवचन किया [जो गुजराती आत्मधर्म अंक 182 में (प्रकाशित है)]। गुरुदेव के दिल्ली पधारने पर दिल्ली मुमुक्षु मण्डल के सभी भाईयों को अत्यन्त उत्साह था। गुरुदेव का निवास वीर सेवा मन्दिर के नवे भवन में था; वहाँ श्री जुगलकिशोरजी मुख्तार इत्यादि ने प्रमोद बताया था। श्री ढ़ेबरभाई ने दोपहर को विशेष मुलाकात लेकर अनेकविध चर्चा की थी तथा गुरुदेव ने उनको सोनगढ़ के मुख्य व्यक्तियों का परिचय दिया था। चैत्र शुक्ल सप्तमी, वीर सेवा मन्दिर में, वीर सेवा मन्दिर की ओर से तथा भारतवर्षीय दिगम्बर जैन परिषद की ओर से पण्डित जुगलकिशोरजी मुख्तार के अध्यक्ष पद में गुरुदेव के सम्मान का समारोह हुआ था, उसमें गुरुदेव को अभिनन्दन पत्र अर्पण किया गया था। अभिनन्दन समारोह के बाद गुरुदेव ने कहा कि **स्वभाव का स्मरण और विभाव का विस्मरण, यही मांगलिक है और यही सन्तों का आशीर्वाद है।** श्री ताराचन्दजी प्रेमी, श्री प्रेमचन्दजी सेठ (जैना वॉच कम्पनीवाले) इत्यादि ने भी उत्साह से भाग लिया था। दिल्ली मुमुक्षु मण्डल की ओर से भी एक अभिनन्दन पत्र दिया गया था। प्रवचन के पश्चात् मण्डप में जिनेन्द्र भगवान को विराजमान करके भक्ति होती थी; भावभीनी भक्ति का कार्यक्रम देखकर सब प्रसन्न होते थे। 'नवभारत टाइम्स', इत्यादि पत्रों ने गुरुदेव के कार्यक्रम की तथा ढेबरभाई के भाषण इत्यादि की भावभीनी नोंध ली थी।

भारत की यह राजधानी पाण्डवों के समय में इन्द्रप्रस्थ कहलाती थी; प्राचीन काल से यह एक गौरवशाली नगरी रही है, और यहाँ जैनधर्म का पहले से अच्छा प्रभाव है।

अनेक विशाल जिनमन्दिरों से यह नगरी शोभ रही है। लाल किले के सामने लाल मन्दिर तथा धर्मपुरा का नया मन्दिर खास प्रसिद्ध है। नया मन्दिर संवत् 1957 में शुरु हुआ, वह पाँच लाख रुपये के खर्च से, (जिस जमाने में मजदूर की रोजी दो आना थी, उस जमाने में) सात वर्ष में तैयार हुआ है। इस मन्दिर की मुख्य वेदी में सच्चे बहुमूल्य पाषाण का मीनाकारी काम तथा बैलबूटा की बारीक कारीगरी अनुपम है। विदेश के प्रवासी भी इस वेदी की कारीगरी देखने आते हैं। सवा लाख रुपये की वेदी पर शोभते दस हजार के रमणीय कमल पर जिनेन्द्रदेव आदिनाथ भगवान विराजते हैं। वेदी के चारों दीवारों पर पौराणिक प्रसंगों के भावभीने दृश्य हैं। इसके अतिरिक्त दूसरे भी अनेक मन्दिरों के दर्शन गुरुदेव के साथ किये। किसी मन्दिर में नन्दीश्वर के पावन जिनालयों की सुन्दर रचना है। किसी मन्दिर में काँच के कीमती झूमर झूल रहे हैं, मानों हाथ पसारकर भगवान का अभिनन्दन कर रहे हों! किसी मन्दिर में अनेक स्फटिक प्रतिमाएँ शोभ रही हैं। जिनमन्दिरों के दर्शन उपरान्त दिल्ली के कितने ही दर्शनीय स्थल—राष्ट्रपति भवन, रेडियो हाऊस, संसद भवन, लाल किला, कुतुब मीनार, इत्यादि भी देखे... परन्तु यात्रा के महान पवित्र स्थल देखने के पश्चात् ऐसी लौकिक वस्तुएँ देखने में यात्रियों का दिल आकर्षित नहीं होता था... और ऐसा लगता था कि बस अब तो जगत के पदार्थ देख-देखकर थक गये! अब तो मोक्षदायक सन्तों की अन्तरंग साधना को देखकर उस ओर वृत्ति को झुकायें, कुतुब मीनार के पास प्राचीन खण्डहर हैं, वे स्पष्टरूप से जिनमन्दिरों के अवशेष हैं, उनकी छतों पर तथा स्तम्भ पर अनेक स्थलों में जिनप्रतिमाएँ उत्कीर्ण आज भी दृष्टिगोचर होती है—इन सबका अवलोकन किया।

★ ★ ★

सहारनपुर

चैत्र शुक्ल सप्तमी की शाम पूज्य गुरुदेव ने दिल्ली से सहारनपुर की ओर प्रस्थान किया। बीच में मुजफ्फरनगर में रात रहे। गुरुदेव मुजफ्फरनगर पधारने पर वहाँ के हजारों लोगों ने डेढ़ मील लम्बा उत्साहयुक्त स्वागत किया। प्रवास में कितनी ही जगह रास्ते में खड़े हुए भाई संघ की मोटरों को भी रोकते और कहते कि खड़े रहो, चाय-पानी पीते जाओ, ऐसा उनका प्रेम था। कितने ही यात्री दिल्ली से ट्रेन द्वारा यहाँ आये थे। हिमालय पर्वत यहाँ से बहुत दूर नहीं है; हिमालय की ठण्डी हवा यहाँ दिखायी देती थी। यहाँ बारह जितने जिनमन्दिर हैं और एक हजार जितने जैनों के घर हैं—जो सब ही दिगम्बर समाज के हैं। नूतन जिनमन्दिर भव्य है, उसमें विशाल प्रतिमाएँ विराजती हैं। अनेक मन्दिरों के दर्शन करने से आनन्द हुआ। गुरुदेव के पधारने से आसपास के अनेक गाँवों से हजारों लोग आये थे और पूरे दिन विशाल मेले जैसा वातावरण रहा था... लोगों का उत्साह अद्‌भुत था। दोपहर को एक बजे भरचक मन्दिर में पूज्य बहिनश्री-बहिन ने जोरदार भक्ति करायी थी। दोपहर के प्रवचन में पाँच-छह हजार लोग थे और समयसार का पहला कलश पढ़ा गया था। प्रवचन के बाद जैन समाज की ओर से बाबू जम्बुप्रसादजी ने अभिनन्दन-पत्र दिया था। जगह-जगह अनजाने जैसे गाँवों में भी हजारों की संख्या में ऐसा उत्साही जैनसमाज देखकर हर्ष और वात्सल्य की वृत्तियाँ जागृत होती थीं। सहारनपुर जाने का कार्यक्रम पहले नहीं था परन्तु वहाँ के समाज के अति आग्रह के कारण बाद में वह कार्यक्रम रखा गया था; आधे दिन का कार्यक्रम भी बहुत उत्साह से मनाया गया।

दोपहर के प्रवचन के बाद गुरुदेव ने सहारनपुर से दिल्ली की ओर प्रस्थान किया। बीच में मार्ग के छोटे-छोटे गाँवों में भी दिगम्बर जैन भाई मोटर के सामने आकर खड़े रहते और कहते कि स्वामीजी! थोड़ा प्रवचन करते जाओ। स्वामीजी मोटर में से नीचे उतरकर सड़क के बगल में थोड़ी देर प्रवचन भी देते। कितनी ही जगह तो आसपास के बहुत गाँवों में से गुरुदेव के दर्शनार्थ बैलगाड़ी जोत-जोतकर भाई-बहिन आते थे और रास्ते के बीच में मोटर खड़ी रखाकर गुरुदेव के दर्शन करके हर्ष मानते थे, जगह-जगह

गुरुदेव का ऐसा प्रभाव देखकर भक्तों को बहुत आनन्द होता था कि वाह! गुरुदेव का प्रभाव! शाम को खतौली गाँव में पधारने पर हजारों लोग दर्शन-स्वागत के लिये उमड़ पड़े। यद्यपि गुरुदेव के दर्शन, स्वागत और प्रवचन के लिये लोगों की बहुत भावना थी और अतिशय उत्साह तथा बेशुमार भीड़ थी, परन्तु समय न होने से वहाँ से प्रस्थान करके रात्रि में दिल्ली आ पहुँचे। दूसरे दिन संघ ने दिल्ली से प्रस्थान किया। उत्तरप्रदेश में से अब राजस्थान की ओर चल दिये। अब सबको शीघ्र सौराष्ट्र में पहुँचने की धुन थी... सोनगढ़ के भक्तजन रोज दिन गिन-गिनकर गुरुदेव के पधारने की राह देख रहे थे...

★ ★ ★

अलवर

चैत्र शुक्ल दशम — दिल्ली से प्रस्थान करके अलवर आये... वहाँ के जैन समाज ने उमंग भरा स्वागत किया। यहाँ तेरह जिनमन्दिर हैं। उनमें एक मन्दिर बहुत भव्य और रमणीय है, पाँच बालब्रह्मचारी भगवन्तों की एक साथ खड्गासन प्रतिमा तथा दूसरे अनेक भगवन्त विराजमान हैं। तदुपरान्त इस मन्दिर में भाववाही चित्र बहुत हैं। अकलंक-निकलंक, कुमुदचन्द्र द्वारा जिनमन्दिर की रक्षा (जिस प्रसंग में उन्होंने कल्याण मन्दिर-पार्श्वनाथ स्तोत्र की रचना की, उस प्रसंग का दृश्य) आहारदान, तिर्यंचों द्वारा अनुमोदना, अंजना को जंगल में मुनिदर्शन इत्यादि दृश्यों से मन्दिर का वातावरण बहुत ही भाववाही लगता है। प्रवचन इत्यादि में भी यहाँ के संघ ने बहुत प्रेम और उत्साह बताया... भोजनादि के बाद यहाँ से प्रस्थान करके यात्री जयपुर आये... और गुरुदेव आमेर में रुके।

आमेर, यह जयपुर की प्राचीन राजधानी है। अभी वह खण्डित जैसी दशा में होने पर भी स्थान-स्थान पर बिखरा हुआ वैभव दृष्टिगोचर होता है। यहाँ का शास्त्र भण्डार तथा किला प्रसिद्ध है। यहाँ सात प्राचीन जैन मन्दिर हैं। एक मन्दिर में नेमिनाथ प्रभु की अति भाववाही बादामी रंग की प्रतिमा है। उनके चक्षु के उपशान्तभाव विशिष्ट दर्शनीय और ध्यान प्रेरक है। दूसरे एक मन्दिर में (छाबड़ाजी के मन्दिर में) सीमन्धर भगवान की प्रतिमा है। एक मन्दिर छोटी पहाड़ी पर है। इन सब मन्दिरों के दर्शन किये और फिर भारत

के रमणीय शहर जयपुर आये... (आज चैत्र शुक्ल दस अर्थात् सोनगढ़ में मानस्तम्भ की प्रतिष्ठा का वार्षिक दिवस, ठीक उसी दिन यात्री मानस्तम्भ की इस जन्मभूमि में आये)।

★ ★ ★

जयपुर

जयपुर... जैनों के वैभव से भरपूर यह नगरी... अनेक भव्य जिनमन्दिरों से शोभित हो रही है। कदाचित् भारत में सबसे अधिक जिनमन्दिर इस शहर में होंगे और इस नगरी में लोगों की अपेक्षा जिनबिम्बों की संख्या अधिक होगी। जैनधर्म की जहोजलालीवाले इस जैनधाम में, जैनधर्म के एक सन्त आज पधार रहे हैं। गुरुदेव के पधारने पर नगरी के प्रमुख गृहस्थों ने भावपूर्वक स्वागत किया। पाँच-छह हजार लोग स्वागत में उमड़ पड़े थे। सांगानेर दरवाजे से झवेरी बाजार, त्रिपोलिया बाजार, चौड़ा रास्ता और अजमेरी गेट होकर रामलीला मैदान में विशिष्ट मण्डप में स्वागत यात्रा आयी। स्वागत के समय जयपुर के बड़े रास्ते लोगों की भीड़ से भर गये थे और वे चौड़े रास्ते आज सकड़े लगते थे। ऊँची-ऊँची अटारियाँ दर्शकों से भरी पड़ी थीं और भारत की सबसे सुशोभित ऐसी इस नगरी की शोभा आज और बढ़ गयी थी। पूज्य गुरुदेव जब मुम्बई थे, तब जयपुर से लगभग 300 प्रतिष्ठित सज्जनों के हस्ताक्षरों से गुरुदेव को जयपुर पधारने के लिये निवेदन आया था। सात-आठ हजार लोगों से भरे हुए मण्डप में गुरुदेव ने मंगल प्रवचन करते हुए कहा कि — **सर्वज्ञ का धर्म मंगलरूप है। सर्वज्ञ के धर्म को शरणरूप जानकर, हे जीव! तू बहुमानपूर्वक उसकी आराधना कर... उससे तेरा अनाथपना मिट जाएगा और तू सनाथ होगा।** जयपुर अनेक जिनमन्दिरों से दर्शनीय है, वहाँ सभी यात्री अपनी-अपनी अनुकूलता अनुसार दर्शन करने गये। पूज्य गुरुदेव भी दोपहर के समय बहुत मन्दिरों में दर्शन करने जाते थे। रात्रि में दीवानजी का बड़ा मन्दिर में बहुत ही भावभीनी भक्ति होती थी। वहाँ पाँच फीट उन्नत आदिनाथ प्रभु इत्यादि तीन भगवन्त विराज रहे हैं। भक्ति के समय मन्दिर का बड़ा चौक दो हजार से अधिक लोगों की भीड़ से भरचक भर जाता था। यहाँ भक्ति में पूज्य बहिनश्री-बहिन को अद्‌भुत भाव उल्लसित होते थे।

इस जयपुर राज्य में अनेक जैन दीवान हो गये हैं तथा अनेक विद्वान पण्डित भी यहाँ हो गये हैं और शास्त्र-स्वाध्याय इत्यादि की प्रवृत्ति यहाँ विशेष है। पण्डित जयचन्दजी, पण्डित टोडरमलजी इत्यादि विद्वान यहीं हो गये हैं। पण्डित जयचन्दजी ने समयसार की हिन्दी टीका के अन्त में इस नगरी का उल्लेख किया है। दूसरी विशेषता यह है कि बहुभाग के वीतरागी जिनबिम्बों की यह निर्माणभूमि है; यहाँ जिनबिम्बों की घडतल होती हो, उसे देखने योग्य है। मानस्तम्भ इत्यादि के कारीगर श्री मूलचन्द रामचन्द नाठा के यहाँ मूर्ति की कला देखकर गुरुदेव प्रसन्न हुए थे। सौराष्ट्र में प्रतिष्ठित हुए लगभग सभी जिनबिम्ब और मानस्तम्भ इस जयपुर में ही तैयार हुए हैं। गुरुदेव संघसहित जयपुर पधारने पर मीठालालजी सेठी, महेन्द्रकुमार सेठी तथा दूसरे अनेक भाईयों को बहुत प्रसन्नता हुई थी।

झबेरी बाजार में बड़ा मन्दिर तथा दूसरा एक मन्दिर जिसमें चौबीस भगवन्त (प्रत्येक भगवान के वर्ण प्रमाण रंग के) हैं, तथा स्फटिक के एक फीट जितनी बड़ी तीन प्रतिमाजी हैं, उनके दर्शन किये। एक मन्दिर, जिसके भोंयरा में चौबीस भगवन्त विराजमान हैं, उनके दर्शन करते हुए मानो कि सभी तीर्थंकर गुफा में बैठे-बैठे आत्मध्यान में लीन हों—ऐसे भाव उल्लसित होते हैं और प्रत्येक भगवान के सन्मुख जाकर ध्यान में बैठ जाएँ, ऐसी ऊर्मियाँ जागृत होती है। सभी भगवन्त प्राचीन और एक सरीखी मुद्रावाले (लगभग चार फीट के) हैं। उस प्रतिमा पर नजर पड़ते ही उस ओर हाथ लम्बाकर गुरुदेव के मुख से 'वाह' ऐसे उद्‌गार निकल पड़े! गुरुदेव के साथ इस चौबीसी भगवन्तों के दर्शन करने से सबको बहुत प्रसन्नता हुई और भक्ति से अर्घ्य चढ़ाया। मन्दिरों के दर्शन करते-करते भक्ति भी गाते जाते थे। गोपालजी का रास्ता के ऊपर मन्दिर में लगभग दस फीट के महावीर भगवान भी गुरुदेव को बहुत रुचिकर लगे। बड़े मन्दिर की बगल में दो मन्दिर हैं, उनमें एक मन्दिर उसके कारीगरी काम के लिये राजस्थान में भी महिमावान है, उसके भोंयरा में अनेक सुन्दर प्रतिमाएँ हैं। झवेरी बाजार में घीवालों का रास्ता-वृद्धिचन्दजी के मन्दिर में पण्डित टोडरमलजी के अपने हस्तलिखित अनेक ग्रन्थ हैं, उसमें से मोक्षमार्गप्रकाशक की मूल प्रति पूज्य गुरुदेव ने हाथ में लेकर उसका थोड़ा सा भाग पढ़ा था और पण्डित टोडरमलजी की महिमा की थी। कहते हैं कि पण्डित टोडरमलजी इस

मन्दिर में बैठकर शास्त्र लिखते थे। यहाँ के दूसरे मन्दिरों में भी अनेक सुन्दर सचित्र हस्तलिखित ग्रन्थ हैं। दो-तीन मील दूर खानियांजी में मन्दिर है, वह भी दर्शनीय है।

जयपुर की समाज ने बहुत भाव से संघ की आवभगत की थी। चैत्र शुक्ल बारह की रात्रि को यहाँ एक विशाल महिला सम्मेलन आयोजित था; उसमें बारह-तेरह हजार बहिनों की उपस्थिति थी। इस महिला सम्मेलन में आशीर्वादरूप से गुरुदेव ने दस मिनिट बहुत सरस प्रवचन किया था। उसमें कहा था कि **स्त्रियों का आत्मा भी अपने आत्मा का सुधार कर सकता है; पूर्व में आत्मा का भान करनेवाली अनेक स्त्रियाँ हो गयी हैं और अभी भी ऐसी स्त्रियाँ हैं। सर्वार्थसिद्धि के देव-कि जो मनुष्य होकर सीधे मोक्ष प्राप्त करनेवाले हैं, उन्हें चौथी भूमिका है और धर्मात्मा स्त्रियाँ अपने आत्मा के आनन्द का स्वसंवेदन करके देव से भी ऊँची भूमिका (पाँचवाँ गुणस्थान) प्रगट कर सकती हैं... आत्मा का भान करना, वही वास्तविक आशीर्वाद है। आत्मा का भान करे, उसे फिर से ऐसा स्त्री अवतार नहीं मिलता। आत्मा का स्वसंवेदन करो, यही हमारा आशीर्वाद है।** (पूरे प्रवचन के लिये देखो, आत्मधर्म, अंक-178) गुरुदेव का यह प्रवचन सुनकर सभा में सबको बहुत प्रसन्नता हुई।

चैत्र शुक्ल त्रयोदशी के दिन भगवान महावीर प्रभु का जन्म कल्याणक महोत्सव बहुत उल्लास से मनाया गया। सवेरे साढ़े छह से साढ़े नौ तक जन्मोत्सव के निमित्त जिनेन्द्र भगवान की भव्य सवारी निकली, जिसमें आगे हाथी पर झण्डा फहराता था और दसैक हजार लोगों ने भाग लिया था। वीर प्रभु के गुणगान गाते-गाते यह यात्रा मण्डप में आयी, वहाँ झण्डारोहण हुआ। जैनध्वज की छाया में वीर प्रभु के गुणगान करने एकत्रित हुए हजारों जैनों का विशाल मेला बहुत ही शोभा देता था। गुरुदेव ने भी महावीर भगवान के जीवन पर प्रकाश डालकर, उनकी अन्तरंग आत्मसाधना का स्वरूप समझाया था। आज जल्दी सवेरे गुरुदेव तथा यात्री पद्मपुरा जाकर पद्मप्रभ के दर्शन कर आये थे। यहाँ जमीन में से प्रतिमा निकली हुई है और एक बड़ा विशाल मन्दिर बन रहा है, वहाँ दर्शन करके वापिस घूमते हुए शिवराजपुर तथा सांगानेर के प्राचीन मन्दिरों के भी दर्शन किये। सांगानेर भी पुरानी राजधानी का शहर था। वहाँ प्राचीन जिनमन्दिर तथा अनेक जिनबिम्ब हैं। वहाँ दर्शन करके जयपुर महावीर जन्मोत्सव में शामिल हो गये। दोपहर में प्रवचन के

पश्चात् जिनेन्द्रदेव का महाभिषेक हुआ था तथा भक्ति हुई थी। रात्रि में लगभग दस-बारह हजार लोगों की भव्य सभा में राजस्थान के मुख्य प्रधान मोहनलालजी सुखाडिया तथा गृह प्रधान इत्यादि भी उपस्थित थे और गुरुदेव ने वीर प्रभु का 'अहिंसा परमो धर्मः' का सन्देश समझाया था।

आज संघ का भोजन सेठ सुन्दरलालजी ठोलिया के यहाँ था। उनके यहाँ चैत्यालय में सुन्दर कीमती हीरा-माणिक-पन्ना-मूँगा इत्यादि तथा सोना-चाँदी के बीस भगवन्त विराजते हैं। सोना के सिंहासन और स्फटिक के छत्रसहित जिनेन्द्रदेव के दर्शन से बहुत आनन्द हुआ। पूर्व में जिसकी प्रशंसा सुनकर दर्शन की अभिलाषा जागृत हुई थी, उनके साक्षात् दर्शन होने पर हृदय हर्ष से नाच उठा... और आनन्द से भक्ति की। उनका संग्रहालय भी स्फटिक की प्रतिमाजी इत्यादि अनेक कीमती वस्तुओं से शोभित हो रहा है। तदुपरान्त जयपुर में अनेक दर्शनीय स्थल हैं। म्यूजियम में प्राचीन मानस्तम्भ के अवशेष तथा जिनप्रतिमाएँ इत्यादि हैं।

यात्रासंघ जयपुर में कुल चार दिन रहा। जयपुर का कार्यक्रम आनन्द से पूर्ण करके और वहाँ का विपुल जैन वैभव निहारकर चैत्र शुक्ल चौदह की शाम अलीगढ़ की ओर प्रस्थान किया। संघ के प्रस्थान के समय वात्सल्य भरी विदाई का दृश्य भावभीना था...

अलीगढ़ - टोंक

जयपुर से अलीगढ़ की ओर प्रस्थान करते हुए बीच में निवाई गाँव में ताजा प्रतिष्ठित हुए मन्दिर और मानस्तम्भ के दर्शन किये! मानस्तम्भ में ऊपर की चार दिशा में आदिनाथ, चन्द्रप्रभ, शान्तिनाथ, और महावीर भगवान विराजमान हैं। सीढ़ी और मंच द्वारा ठेठ मानस्तम्भ पर चढ़कर भगवान के दर्शन करने से आनन्द हुआ। दूसरे भी तीन मन्दिर सुन्दर हैं। एक में तो सोनगढ़ जैसे ही तीन भगवन्त विराजमान हैं। तत्पश्चात् आगे जाने पर टोंक गाँव में जमीन में से निकले हुए 26 जिनबिम्बों के दर्शन किये। गुरुदेव रात्रि में टोंक रहकर दूसरे दिन सवेरे अलीगढ़ पधारे। अलीगढ़ में श्री दीपचन्दजी सेठिया इत्यादि की

प्रार्थना से गुरुदेव पधारे थे। गुरुदेव के पधारने पर सबको बहुत हर्ष हुआ और भाव से स्वागत किया। जिनमन्दिर के दर्शन किये। यहाँ खास मण्डप में गुरुदेव का प्रवचन हुआ। गुरुदेव का आहार श्री दीपचन्दजी सेठिया के यहाँ था। आसपास के अनेक गाँवों से गाड़ियाँ जोत-जोतकर लोग यहाँ गुरुदेव के दर्शन करने तथा प्रवचन सुनने आये हुए थे। प्रवचन के पश्चात् संघ ने अजमेर की ओर प्रस्थान किया। गुरुदेव रात्रि में नसीराबाद रुके थे।

अजमेर

बैशाख कृष्ण एकम को पूज्य गुरुदेव अजमेर पधारने पर भावभीना स्वागत हुआ। इस सम्बन्धी समाचार देते हुए अजमेर के 'आजाद' साप्ताहिक ने लिखा था कि—

तारीख 15 अप्रैल को भारत के महान आध्यात्मिक सन्त श्री कानजीस्वामी का नगर में अभूतपूर्व स्वागत हुआ, तथा विशाल जुलूस निकाला गया जिसमें लगभग 10 हजार व्यक्ति सम्मिलित थे। जुलूस के रास्ते में स्थान स्थान पर नागरिकों द्वारा पुष्पवृष्टि की गई, तथा विशेषरूप से दरगाह के ऊपर से मुसलमान बन्धुओं ने स्वामीजी के स्वागत में जो फूलवर्षा की, विशेष महत्त्व भातृभावना व एक ऐतिहासिक घटना है। लगभग 200 वर्ष पूर्व भी मुसलमान बन्धुओं ने जैन सन्त को इसी प्रकार अपने यहाँ विशेष सन्मान दिया था××× अजमेर के इतिहास में इतना विशाल जुलूस प्रथम बार देखने को मिला××× पुष्पवर्षा से रास्ता सुगन्ध से महक उठा,××× बाजार में जो चाँदी व गोटे के क्रमशः द्वार बनाये गये थे, वह भी विशेष उल्लेखनीय है।

इस प्रकार अजमेर में भव्य ऐतिहासिक स्वागत हुआ। इस प्रसंग पर बाहर से भी हजारों लोग आये थे। प्रवचन के लिये बड़ा धडाजी की नसिया में विशाल मण्डप बाँधा गया था। प्रवचन सुनकर सब प्रसन्न हुए थे। वहाँ स्वागत-गीत और मंगल प्रवचन के बाद सेठ श्री भागचन्दजी सोनी ने भावभीना स्वागत प्रवचन किया था। उन्होंने उसमें जैनधर्म की, सम्यग्दर्शन की और आत्मज्ञानी सन्त की महिमा करके फिर कहा था कि ***हमारा सौभाग्य है कि आत्मतत्त्व की इतनी विशद व सुन्दर व्याख्या करनेवाले सन्त का अजमेर में पधारना हुआ है।***

यहाँ अजमेर में अनेक भव्य जिनमन्दिर हैं; उसमें सबसे मुख्य मन्दिर सोनीजी की नसियारूप से प्रसिद्ध है। उस मन्दिर के दर्शन करने जाने पर दूर से 82 फीट उन्नत मानस्तम्भ का गगनगामी भाग दिखायी दिया और उस पर विराजमान जिनेन्द्रदेव के दर्शन हुए। इस मानस्तम्भ में ऊपर आदिनाथ, चन्द्रप्रभ, शान्तिनाथ तथा महावीर प्रभु विराजते हैं और नीचे चारों दिशाओं में आदिनाथ प्रभु खड्गासन में शोभित हो रहे हैं। पश्चात् मन्दिर में प्रवेश करते ही पाँच फीट विशाल भव्य सौम्य और प्रसन्न मुद्रावन्त आदिनाथ भगवान के दर्शन से हृदय तृप्त-तृप्त होता है। तदुपरान्त दूसरी अनेक प्रतिमाएँ भी हैं—जिनमें एक पन्ना की तथा एक सोने की प्रतिमाजी भी पूज्य गुरुदेव के हस्त से सौराष्ट्र में प्रतिष्ठित हुई है। मन्दिर की दीवारों पर भावभीने पौराणिक चित्र हैं; उनमें बहुत ही प्रिय ऐसे श्री आदिनाथ भगवान के दस पूर्व भवों के चित्र देखकर बहुत आनन्द हुआ। दो मुनियों द्वारा आदिनाथ प्रभु के जीव को भोगभूमि में सम्यक्त्व की प्राप्ति इत्यादि दृश्य निहारने पर आत्मा रोमांचित होता था और अनेक भावनाएँ जागृत होती थी। पश्चात् इस मन्दिर में अपार वैभव सम्पन्न अयोध्यापुरी की रचना देखी। सोनीजी की चार पैढी से चली आ रही यह अद्‌भुत रचना देखते ही भक्त हृदय में से आनन्दपूर्वक उद्‌गार निकल जाते हैं कि वाह! जिनेन्द्र वैभव की ऐसी रचना कराने के बदले सोनीजी के वंश को धन्य है! बड़ी-बड़ी मारवाड़ी सीढ़ियाँ चढ़कर थके-थके जहाँ ऊपर पहुँचते हैं, वहाँ तो अयोध्यापुरी की एक सरीखी विध-विध रचना और भव्य शोभा देखते ही चित्त वहाँ लग जाता है और सीढ़ियों की थकान विस्मृत हो जाती है—जैसे साध्य की सिद्धि होने पर साधकदशा के विकल्पों की थकान अलोप हो जाती है, उसी प्रकार। विशाल हॉल में अयोध्यापुरी की तथा आदिनाथ प्रभु के गर्भ-जन्म-तप कल्याणक की सुन्दर रचना शास्त्रोक्त रीति से की गयी है। इतनी सब रचना देखकर घड़ी भर तो दर्शक को ऐसा हो जाता है कि पहले यह देखूँ या पहले यह देखूँ! अयोध्या का विशाल राजमहल—सोने का, मरुदेवी माताजी, गर्भ कल्याणक, जन्म कल्याणक... उसमें भगवान का जन्म, जन्माभिषेक का जुलूस, पालना, मेरुपर्वत पर अभिषेक—ये सब प्रसंग बताये हैं। जन्माभिषेक के जुलूस की रचना दर्शनीय है; कोई हाथी पर बैठे हुए हैं तो कोई घोड़े पर बैठे हुए हैं; कोई बैलगाड़ी में भजन करते हैं, ऐसी भजनमण्डली बैठी हुई है, कोई अपने मकान की छत में से जन्माभिषेक की सवारी देखता है। यह सब भावभीना दृश्य बहुत आश्चर्यकारी है।

मेरुपर्वत विशाल सरस और ऊँचा है। उससे लगते तेरह द्वीप और उनके शाश्वत् जिनालय भी बताये हैं। उनमें पंच महाविदेह की रचना देखी, सीता-सीतोदा इत्यादि नदियाँ देखीं, सीमन्धरादि बीसों तीर्थंकरों के देश देखे; अहो! मानो विदेह के बीस तीर्थंकर एक साथ यहाँ से दिखते थे। पाँच मेरु और नन्दीश्वर के जिनालयों की रचना भी बहुत अच्छी लगती है। इन्द्र पाँचवें समुद्र में से पानी के कलश भर-भरकर मेरु पर भगवान का जन्माभिषेक करता है—यह भी स्पष्ट बताया है। महाराज ऋषभदेव की सभा में नीलांजनादेवी का नृत्य और देह-विलय, प्रभु का वैराग्य, दीक्षा, ध्यान, वर्षीतप और आहारदान—ये सब प्रसंग बताये हैं और वह रचना देखकर वह-वह कल्याणक नजर के समक्ष तैरते हैं।

पश्चात् भगवान को केवलज्ञान होता है और भगवान अन्यत्र विहार करते हैं—इसलिए समवसरण इस मन्दिर से दूर दूसरी जगह रचा है। समवसरण में कीमती रचना है, वहाँ तीन पीठिका है और प्रत्येक पीठिका पर स्फटिक के विशाल चार-चार भगवान विराजमान हैं। इसके अतिरिक्त दूसरे भी स्फटिक के भगवन्त बगल में ही विराजते हैं। यह समवसरण की रचना भी बहुत अद्‌भुत है। इसे देखने पर मुमुक्षु हृदय आनन्दित होता है।

पाँचवाँ निर्वाण कल्याणक-कैलाशगिरि की रचना नसियाजी में नीचे के भाग में है। इस प्रकार यहाँ अयोध्या नगरी के और आदिनाथ प्रभु के पाँचों कल्याणक के दर्शन हुए। गुरुदेव के साथ बहुत भावपूर्वक निरख-निरख कर यह सब पावन दृश्य देखे। इन्हें देखने से जैनशासन का सम्पूर्ण वैभव नजर समक्ष बिछा हुआ दिखता है और बहुत प्रसन्नता होती है। सर्व संघ और पूज्य बहिनश्री-बहिन भी बहुत प्रसन्नतापूर्वक सभी रचना विगतवार अवलोकन करती थीं। ऊपर की मंजिल में जाकर देखने से नीचे की सभी रचना एक साथ दिखायी देती है, यह दृश्य बहुत सुन्दर लगता है। ऊपर की छत में मेरु को प्रदक्षिणा करते सूर्य-चन्द्र-नक्षत्र इत्यादि की भी शास्त्रोक्त प्रमाणानुसार आकर्षक रचना है। यह सब रचना देखकर गुरुदेव को भी बहुत प्रमोद होता था और भगवान के जीवन प्रसंग देखकर उन्हें अद्‌भुत भाव उल्लसित होते थे। नीचे के भाग में जिनेन्द्र भगवान की रथयात्रा का ठाट-बाट और वैभव है। बड़े-बड़े कीमती कलामय चार-पाँच रथ, हाथी-घोड़ा-पालकी इत्यादि अनेक सामग्री है। एक ऐरावत हाथी बहुत सुन्दर है।

इस सब सामग्री के ठाट-बाट पूर्वक जब जिनेन्द्र भगवान की रथयात्रा निकलती है, तब वह बहुत दर्शनीय होता है। दोपहर के प्रवचन के बाद जिनेन्द्र अभिषेक हुआ था। भजन मण्डली के भाईयों ने मंगल बधाई गायी थी... यहाँ के जैन औषधालय का हीरक जयन्ती महोत्सव भी इन दिनों में मनाया गया था, तदुपरान्त महावीर पुस्तकालय इत्यादि देखने भी गुरुदेव पधारे थे। रात्रि में सोनीजी की नसिया में अद्‌भुत भक्ति हुई थी। भजन मण्डली के भजन-नृत्य के उपरान्त पूज्य बहिनश्री-बहिन ने भी भक्ति करायी थी, उसमें —

आवो आवो सीमन्धरनाथ अमघेर आवो रे...
आवो आवो श्री आदिनाथ अमघेर आवो रे...
रुडा भक्तिवत्सल भगवंत नाथ! पधारो ने....

— इस स्तवन के समय तो अनोखी अद्‌भुत धुन जमी थी। हजारों लोग प्रसन्नतापूर्वक वह भक्ति सुनने के लिये बहुत आतुर थे। रात्रि में फिर से इलेक्ट्रिक प्रकाश में गुरुदेव के साथ अयोध्यापुरी की रचना के दर्शन किये। इस प्रकाश में उन दृश्यों की अद्‌भुत शोभा दिखायी देती है। बारम्बार वे दृश्य देखकर आनन्द होता है। अजमेर से पाँचैक मील दूर पुष्कर तालाब है, उसके किनारे महावीर भगवान का जिनमन्दिर है। दूसरे दिन भी गुरुदेव के प्रवचन इत्यादि का अजमेर की जनता ने उत्साह से लाभ लिया। गुरुदेव का आहारदान सर भागचन्दजी सेठ इत्यादि के यहाँ हुआ था। गुरुदेव अजमेर पधारने पर भजन मण्डली के सदस्यों को भी बहुत उत्साह था। शाम को अजमेर से लाडनूं की ओर प्रस्थान किया था। लाडनूं के सेठ श्री तोलारामजी, बच्छराजजी, गजराजजी इत्यादि गंगवाल भाईयों के आग्रह के कारण वहाँ का कार्यक्रम रखा गया था। यात्री बस में भक्ति करते-करते रात्रि में लाडनूं जा रहे थे। यद्यपि रास्ता खराब था परन्तु रास्ते में भक्ति चलती होने से प्रवास आनन्दकारी था। यात्रा में इस प्रकार के प्रवास के समय किसी समय देर रात्रि में बस में सब यात्री झोंका (झपकी) खाते थे वहाँ अचानक जंगल की ओर नजर करके पूज्य बहिनश्री-बहिन (मानो कि मुनि को नजरों से देखती हों, ऐसे भाव से) भक्ति गातीं, यह सुनकर यात्री झपक उठते और होश से वह भक्ति झेल लेते—

अैसे मुनिवर देखे वन में जाके रागद्वेष नहीं तन में...
अैसे मुनिवर देखे वन में जाके नींद नहीं नैनन में...

आठों पहोर रहे जागृत में... अेजी केलि करे आनन्द में...
— अेजी केलि करे आतम में....
रात्रि चारों पहोर ध्याननमें... अैसी धन्य दशा मुनिवर की...
अैसे मुनि को मैं नित प्रति ध्यावुं... मैं भी मुनिवर झट बन जाऊँ...

— इस प्रकार आधी रात्रि में मुनिवरों का साक्षात्कार कराकर सबको जगाते हुए और मुनिवरों की जागृत दशा की बहुत-बहुत महिमा समझाती थीं। यात्री भक्ति करते-करते रात्रि में लाडनूं पहुँचे।

लाडनूं

वैशाख कृष्ण दूज : सवेरे जिनमन्दिर में समूह पूजन हुई थी। तत्पश्चात् पूज्य गुरुदेव लाडनूं शहर में पधारने पर बहुत उत्साह से भव्य स्वागत किया। यहाँ एक प्राचीन जिनमन्दिर जमीन में से निकला हुआ है। यह प्राचीन मन्दिर बहुत कारीगरीवाला है तथा इसकी प्रतिमाजी भी अत्यन्त मनोज्ञ है। इस मन्दिर के उपरान्त शहर से आधे मील दूर सुखदेव आश्रम गंगवाल भाईयों की ओर से बनाया गया है; उस आश्रम में संगमरमर का एक भव्य जिनालय लगभग पन्द्रह लाख रुपये के खर्च से बनाया था। जिनालय के सन्मुख भव्य मानस्तम्भ भी हुआ है। इस जिनमन्दिर में मार्बल का एक तोरण बहुत ही नक्काशी कामवाला लगभग रुपये 18000 की कीमत से हुआ है। उस समय इन जिनमन्दिर इत्यादि का काम चलता था। गुरुदेव का प्रवचन भी वहाँ रखा गया था। शहर से एकाध मील दूर मंगलपुरा में एकान्त स्थल है, वहाँ जिनमन्दिर में दर्शन करने के लिये सभी गये थे तथा वहाँ भक्ति भी हुई थी। प्रत्येक कार्यक्रमों से सबको बहुत प्रसन्नता हुई थी। सेठ गजराजजी गंगवाल ने मानपत्र अर्पण करते हुए पहले भाषण में कहा था कि ***महाराजजी का उद्देश्य तो तीर्थयात्रा है। भगवान के कल्याणकधाम और ध्यानभूमि इत्यादि का निरीक्षण करने के लिये वे संघसहित इस ओर पधारे तथा भव्य जीवों को उपदेश देकर कल्याण के पथ पर लगाया। इस मरुभूमि (मारवाड़) में प्रवास से बहुत***

जीवों का कल्याण के पथ पर लगाया। आपका झुकाव आत्मा की ओर है, वही महत्त्वशाली है, उसका हमें अनुकरण करनेयोग्य है...

यहाँ से 20–25 मील दूर सुजानगढ़ में समवसरण इत्यादि की प्रशंसा सुनकर यात्री वहाँ दर्शन करने गये थे। यहाँ महावीर प्रभु के समवसरण की सुन्दर रचना है। पंचायती मन्दिर में चाँदी की बीस जितनी प्रतिमाएँ हैं। मानस्तम्भवाले नसियाजी में नेमिनाथ प्रभु की सुन्दर प्रतिमा है—इन सबके दर्शन से गुरुदेव इत्यादि को प्रसन्नता हुई, वहाँ दर्शन करके वापस लाडनूं आ गये थे। लाडनूं में संघ दो दिन रहा। इस दौरान बहुत उत्साह से आवभगत की। वैशाख कृष्ण छठवीं की सवेरे यात्रासंघ ने कुचामन की ओर प्रस्थान किया। रास्ते में पूरा संघ इकट्ठा होने से सबको आनन्द होता था।

कुचामन

यहाँ सवेरे सोचा था उससे पहले पहुँच गये। प्रवचन के बाद गाजते–बाजते गुरुदेवसहित पूरा संघ जिनमन्दिरों के दर्शन करने चला। इस प्रकार गाते–गाते भक्तिपूर्वक जिनमन्दिरों के दर्शन करने से हर्ष हुआ। एक श्रावक के यहाँ चाँदी का रथ इत्यादि था, वह भी देखा। दोपहर में प्रवचन के बाद अभिनन्दन–पत्र दिया गया और शाम को भोजन के बाद सबने प्रस्थान किया। बीच में रूपमगढ़ में प्राचीन प्रतिमाओं के दर्शन करके रात्रि में किशनगढ़ पहुँचे।

किशनगढ़

पूज्य गुरुदेव किशनगढ़ पधारने पर रात्रि में स्वागत के निमित्त विद्यार्थियों ने खास कार्यक्रम रखा था। जिसमें स्वागत–गीत, महावीरजी नाटक, सर्प नृत्य, कमल–भ्रमर नृत्य इत्यादि कार्यक्रम था। पहले श्री नेमीचन्द्रजी पाटनी इत्यादि यही रहते थे। गुरुदेव का

निवास श्री लाडूलालजी के यहाँ था, इससे उन्हें बहुत प्रसन्नता हुई थी। दूसरे दिन सवेरे पूजन प्रवचनादि के बाद मन्दिरों के दर्शन किये। दोपहर में गुरुदेव ने यहाँ के स्कूल का अवलोकन किया तथा सन्मति वाचनालय का उद्घाटन किया। पश्चात् सुन्दर भक्ति हुई थी। यहाँ एक दिन के कार्यक्रम में संघ की आवभगत अच्छी की थी।

किशनगढ़ से शाम को प्रस्थान करके भक्ति करते-करते अजमेर आये थे, वहाँ रात्रि में नसियाजी में मानस्तम्भ के पास के चौक में डेढ़ घण्टे तक बहुत भावभीनी भक्ति हुई थी। अजमेर की भजन मण्डली के खास कार्यक्रम उपरान्त, 'आओ आओ सीमन्धरनाथ (आदिनाथ) अमघेर आओ रे...' यह गुजराती गायन फिर से सुनने की समाज की खास माँग से पूज्य बहिनश्री-बहिन ने यह स्तवन गवाया था।

भजन मण्डली की प्रार्थना से पूज्य गुरुदेव ने भी निम्न भावभीना स्तवन गवाया था—

धन्य दिवस धन्य आजनो धन्य धन्य घड़ी तेह,
धन्य समय प्रभु माहरो, दरिशण दीठुं आज
मन लाग्युं रे मारा नाथजी...

गुरुदेव के मुख से भावभीनी जिनेन्द्रभक्ति सुनकर सेठ भागचन्दजी सोनी को बहुत प्रसन्नता हुई और आनन्द भरे वातावरणसहित कार्यक्रम समाप्त हुआ।

ब्यावर

बैशाख कृष्ण सप्तमी के सवेरे, अजमेर से ब्यावर की ओर प्रस्थान किया। आज अजमेर की भजन मण्डली इत्यादि भी यात्रासंघ के साथ होने से प्रवास में भक्ति चालू ही रहती। भक्ति करते-करते ब्यावर पहुँचे। पुष्पवृष्टि इत्यादि द्वारा भव्य स्वागत हुआ। स्वागत गान तथा प्रवचन के बाद सबने जिनमन्दिरों के दर्शन किये। दोपहर में भी प्रवचन हुआ था; उसमें भी लोगों ने उत्साह से भाग लिया था। यहाँ से संघ शिवगंज गया था। गुरुदेव पाली गाँव में रात रहे थे।

शिवगंज में भाईश्री शुकनराजजी ने उत्साहपूर्वक संघ की व्यवस्था की थी। दर्शन-पूजन के लिये अजमेर से चाँदी की जिनप्रतिमा को यहाँ विराजमान किया था। सवेरे

गुरुदेव के पधारने पर उत्साह से स्वागत हुआ था। प्रवचन इत्यादि में लोगों ने उत्साह से भाग लिया था। यहाँ से संघ जावाल गया था; जावाल में भोजन के बाद तुरन्त वहाँ से आबू की ओर प्रस्थान किया था। (जावाल सम्बन्धी विशेष विवरण आबू के कार्यक्रम के बाद देखेंगे)।

आबू

जावाल से सिरोही होकर तीन बजे यात्रासंघ आबू पहुँचा और उसी समय बस द्वारा पर्वतारोहण करके ऊपर पहुँचा। टेढ़ी-मेढ़ी सड़क से पर्वत चढ़ते हुए बीच में पहाड़ी के रमणीय दृश्य दिखायी देते थे। साढ़े पाँच बजे ऊपर पहुँचे और जिनमन्दिर के दर्शन किये। दूसरे दिन सवेरे देलवाड़ा के मन्दिर देखे, विमलशा के मन्दिर, वस्तुपाल-तेजपाल का मन्दिर इत्यादि और श्वेताम्बर मन्दिर की प्रसिद्ध कारीगरी देखी। अनेक श्वेताम्बर मन्दिरों के बीच एक दिगम्बर मन्दिर है, वहाँ दर्शन-पूजन किये। यहाँ यात्रा सम्बन्धी दूसरा कोई खास कार्यक्रम नहीं था। दोपहर में गुरुदेव के पास यात्रा इत्यादि सम्बन्धी चर्चा-विचारणा हुई थी। शाम को नखीतालाब तथा सूर्यास्त के समय का दृश्य (Sunset point) देखने गये थे। रात्रि में जिनमन्दिर में भक्ति की थी। दूसरे दिन सवेरे आबू से चार मील दूर अचलगढ़ देखने गये थे।

दोपहर में पूज्य गुरुदेव का प्रवचन चलता था और श्रोताजन आबू पर यह प्रवचन सुन रहे थे... तब... अचानक शोर-शराबा हुआ और 'कानजीस्वामी की जय' करते हुए सैकड़ों लोग आते दिखायी दिये।—किसका था यह शोर-शराबा ? यह शोर-शराबा था जावाल की जनता का। परसों के दिन पूज्य गुरुदेव जावाल का कार्यक्रम रद्द करके आबू आये, इसलिए वहाँ की जनता का हृदय गद्‌गदित हो गया और किसी भी प्रकार गुरुदेव तथा संघ को फिर से जावाल ले जाना, ऐसा उन्होंने निर्णय किया, इसलिए गाँव की छत्तीस कौम के प्रमुख लोग तथा वहाँ के ठाकुरसाहब सहित सौ जितने भाई प्रार्थना करने आबू आये और सभा के बीच हृदय को हिला दे ऐसी गद्‌गद् वाणी से विनती करते हुए

कहा कि महाराज! आपके चले जाने से हमारे गाँव में अशान्ति हो गयी है, आप फिर से हमारे गाँव में पधारोगे और आपकी वाणी सुनाओगे, तब ही हमारे गाँव में शान्ति होगी; इसलिए आप संघसहित जरूर पधारो। विरोध करनेवाले भाईयों ने भी खड़े होकर गद्गद् भाव से भूल की माफी माँगकर प्रार्थना में साथ दिया और गुरुदेव ने संघ की सलाह लेकर हाँ कर दिया। जावाल की जनता प्रसन्न-प्रसन्न हो गयी और तुरन्त जावाल जाने के लिये तैयारी करके संघ ने प्रस्थान किया।

जावाल में पुनरागमन

जावाल जाने के लिये आबू के ऊपर से उतरते समय बस में सन्त-मुनियों की भक्ति करते थे, आनन्द से प्रवास होता था। रात्रि बारह बजे तो अभी आधे रास्ते में थे। संघ रात्रि में दो बजे जावाल पहुँच गया। दूसरे दिन सवेरे गुरुदेव के पधारने पर जावाल की जनता ने अत्यन्त उल्लासपूर्वक केसर और कंकू छिड़ककर भव्य स्वागत किया। यह भावभीना प्रसंग देखकर यात्री कहते कि जावाल अब आवाल बन गया। जावाल में पूज्य गुरुदेव को फिर से देखकर नगरी की जनता प्रसन्न-प्रसन्न हो गयी थी। इस प्रसंग के वर्णन की एक पत्रिका जावाल की जनता ने छपायी थी, जिसमें जावाल के ठाकुर साहेब तथा छत्तीस कौम के प्रमुखों के हस्ताक्षर थे। पत्रिका का लेख निम्नानुसार था—

जावाल (सिरोही) में सतगुरुदेव श्री कानजीस्वामी का भव्य स्वागत।
जैन ही नहीं, 36 जाति के लोगों ने अधिक संख्या में जुलूस के साथ स्वागत किया।

जावाल तारीख 23-4-57 को आध्यात्मिक उपदेशक श्री कानजीस्वामी को श्री ऋषभचन्दजी कपूरचन्दजी जावाल वाले ने यहाँ पधारने के लिये आमन्त्रित किया था। आपका संघ सम्मेदशिखर आदि धार्मिक तीर्थों में घूमता हुआ यहाँ जावाल में तारीख 23-4-57 को पधारे। आपके भव्य स्वागत हेतु श्री ऋषभचन्दजी ने भव्य समारोह किया। मण्डप रचना की छटा अद्वितीय थी। स्वामीजी के सुस्वागत हेतु प्रात: 6.30 बजे बड़ा जुलूस निकाला गया जिसमें गाँव के समस्त जाति के लोग शामिल थे। जुलूस में बैण्ड, सामयाना, ध्वज आदि का सम्पूर्ण समावेश किया गया था; जुलूस बाजार में होता

हुआ गलियों में घूमकर ज्यों ही मण्डप के समीप प्रवचन हेतु आया त्यों ही 5-6 विरोधी लोगों ने अशान्ति फैलाना शुरु किया, स्वामीजी के विरुद्ध नारे लगाये गये, यह देखकर स्वामीजी प्रवचन न देकर सीधे श्री रीकवचन्दजी के घर चले गये, और लोगों को शान्तिपूर्वक रहने के लिये उपदेश दिया। अन्य समस्त जाति के लोगों ने आपको प्रवचन देने हेतु अति आग्रह किया और कहा कि हम कुछ विरोधियों को यहाँ से हटा देते हैं। परन्तु स्वामीजी ने सभी नागरिकों को शान्ति ग्रहण करने का उपदेश दिया, आपने फरमाया कि ऐसा करने से गाँव में अशान्ति एवं वैमनस्य फैल जाएगा। आप सभी मेरे लिये बराबर हैं। मैं किसी की आत्मा को दु:खी नहीं करना चाहता। इसके पश्चात् ग्यारह बजे स्वामीजी ने यहाँ का कार्यक्रम अधूरा छोड़कर भोजनादि से निवृत्त होकर संघसहित माउन्टआबु प्रस्थान किया।

आपके प्रस्थान बाद यहाँ के नागरिकों में एक आत्मयोगी त्यागी महात्मा के वापस चले जाने से बड़ी ग्लानि पैदा हो गयी। रात्रि को 9 बजे सभी लोगों ने एकत्रित होकर यह निर्णय किया कि गुरुदेव श्री कानजीस्वामी को पुन: जावाल में लाया जाए और उनके अमृतरूपी वचनों का पान किया जाए। समस्त 36 जाति के लोगों ने दो बस और चार मोटरकार मंगवाई और सवेरे 6.30 बजे यहाँ से लगभग 100 मनुष्यों ने 66 मील प्रस्थान किया। जिसमें गाँव के ठाकुर साहेब भी साथ में थे। सब ने माउन्टआबु पहुँचकर सत्‌गुरुदेव श्री कानजीस्वामी को अनुनय विनय की एवं पुन: जावाल पधारकर जनता की अशान्ति दूर करने एवं जिज्ञासा को तृप्त करने हेतु प्रार्थना की। लोगों की भावुकता एवं असीम प्रेम देखकर गुरुदेव ने जनता की प्रार्थना स्वीकृत करके कृतार्थ किया और अपना आगे का प्रोग्राम स्थगित रखा।

केवल एक रात्रि में समस्त नागरिकों के संगठन से मण्डप आदि समस्त कार्यक्रम का पुन: निर्माण किया गया। तारीख 26-4-57 को पुन: आपका भव्य स्वागत जावाल के तमाम जाति के लोगों द्वारा सम्पन्न हुआ। प्रात: 6.30 बजे गाँव के करीब 4000 व्यक्तियों द्वारा आपका स्वागत किया गया। बैण्ड, ढोल, नगारों की ध्वनि आकाशमण्डल में गूँज रही थी। (केशर-कंकु छिड़कते थे) जुलूस सारे गाँव में निकाला गया और शान्तिपूर्वक सम्पन्न हुआ। फिर आप मण्डप में पधारे। लोगों की जय-जयकार से सारा मण्डप गूँज उठा। आपने जनता को आत्मधर्म के विषय में उपदेश दिये। सत्‌गुरुदेव श्री कानजीस्वामी

के अमृततुल्य मधुर वाणी को सुनकर समस्त श्रोताओं का मन प्रफुल्लित हो गया। सबने एक स्वर से आपकी मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की। आपके विरोधियों ने भी आपका प्रवचन सुनकर दिल का भेद निकाल दिया और वे भी आपके उपदेशात्मक प्रवचनों के प्रति श्रद्धावान हो गये। अन्त में स्थानीय ठाकुर साहेब राज श्री सुमरसिंहजी ने श्री सत्गुरुदेव के चरण कमलों में पत्र पुष्प के रूप में रुपये 25 समर्पित कर अपनी आत्मा को कृतकृत्य माना एवं स्वामीजी के साथ में आये हुए यात्रियों को स्थानीय एवं अन्य प्रतिष्ठित व्यक्तियों की ओर से स्वागत स्वरूप में एक-एक रुपये के साथ एक-एक श्रीफल भेंटरूप में दिया गया। अन्त में स्वामीजी को एक घण्टा फिर प्रवचन देने हेतु जनता ने सानुनय आग्रह किया परन्तु स्वामीजी ने समयाभाव से स्वीकार करना उचित नहीं समझा। तत्पश्चात् दोपहर को एक बजे जावाल से स्थानीय एवं अन्य सज्जनों के जयघोष के साथ आपका मंगलमय प्रस्थान हुआ।

जावाल से तारंगा

जावाल में शान्ति का उमंग भरा वातावरण प्रसारित करके और भावभीनी विदा लेकर गुरुदेवसहित यात्रियों ने आबू की ओर प्रस्थान किया। आज मोटरबस की अन्तिम यात्रा होने से प्रवास में मोटरबस में गाये जानेवाले खास स्तवन (पार लगा... पार लगा... इत्यादि) बारम्बार गा लिये। बीच में सिरोही के बाद एक गाँव आया। उसका नाम 'स्वरूपगंज', वहाँ 'स्वरूप विलास' भी है। आगे जाने पर मीठी ईमली के वृक्ष आये। यात्रासंघ चार बजे आबू स्टेशन आ पहुँचा। स्टेशन से थोड़े दूर दिगम्बर जैन धर्मशाला तथा जैन मन्दिर है, वहाँ दर्शन करके तथा भोजन करके, बाजार में से खरीदी करते-करते सब स्टेशन आये और पौने नौ बजे तारंगा सिद्धिधाम की जय-जयकारपूर्वक ट्रेन रवाना हुई। बीच में महेसाणा स्टेशन के पास चैत्यालय के दर्शन किये... महेसाणा से दूसरे दिन ग्यारह बजे ट्रेन रवाना हुई और दो बजे तारंगा स्टेशन पहुँचे। यहाँ से तारंगा हिल (पहाड़) पाँचैक मील दूर है। स्टेशन पर धर्मशाला में जिनदेव के दर्शन करके तथा अधिक सामान वहाँ रखकर बस द्वारा पूरा यात्री संघ तारंगा हिल पहुँचा।

तारंगा सिद्धिधाम

तारंगा गाँव बहुत सरस है; पहाड़ पर ही धर्मशाला तथा मन्दिर हैं। पर्वत पर दो शिखर है (1) कोटिशिला और (2) सिद्धशिला। यहाँ से वरदत्त-सागरदत्त इत्यादि साढ़े तीन करोड़ मुनिवर मुक्ति को प्राप्त हुए हैं। आमने-सामने दो पहाड़ियाँ सुन्दर और रमणीय हैं। दो पर्वत के बीच धर्मशाला, मानस्तम्भ मन्दिर और तालाब है, साधना का शान्तधाम है—ऐसे शान्त मुनिधाम में गुरुदेव के साथ आये। धर्मशाला के बगल में उपशान्त वातावरण से भरपूर गुफा है, उसे देखा। गुरुदेव को वह गुफा देखकर शान्त-शान्त भावों की ऊर्मियाँ जागृत होती थीं। गुरुदेव के श्रीमुख से गुफा की महिमा सुनकर सब यात्री भी वह गुफा देखने गये थे। गुफा का वातावरण देखकर सबको प्रसन्नता हुई। धर्मशाला के बगल में जिनमन्दिर है, वहाँ रात्रि में भक्ति हुई। शुरुआत में सम्भवनाथ स्वामी के स्तवन के बाद बहिनश्री-बहिन ने दूसरा वैराग्य रस झरता स्तवन गवाया। उस समय गुरुदेव भी वैराग्य की धुन में झूलते थे।

जंगल वसाव्युं रे जोगीए... तजी तनडानी आशजी,
वात न गमे रे आ विश्वनी आठे पहोर उदासजी... जंगल०
धन्य धन्य सागरदत्त आदि मुनि... ग्रह्युं स्वरूप निर्ग्रंथजी...
तारंगाथी ए सिद्ध थया... पाम्या सिद्ध स्वरूप... जंगल०
— तेने करुं नमनजी जंगल०

भक्ति के समय वीतरागी वनवासी निर्भय सन्तों के चरण में बहुत ही भक्ति से सिर झुक पड़ता था... वाह सन्त, धन्य तुम्हारी विदेही दशा! उस धन्य दशा के योग्य शान्त-वीतराग परिणति तो मुनियों को ही है और गुफा इत्यादि प्राकृतिक उपशान्त-मुक्त स्थान भी मुनियों का ही आवास है—इस प्रकार मुनिदशा की महिमा का रटन करते-करते... इस सिद्धिधाम की यात्रा की भावना के साथ यात्री सो गये...

तारंगा सिद्धिधाम की यात्रा

वैशाख कृष्ण चौदस को सवेरे जल्दी उठकर गुरुदेव और यात्रियों ने सिद्धिधाम की यात्रा के लिये मुनिवरों के जयनादपूर्वक प्रस्थान किया। पहले 'कोटिशिला' पर गये। पर्वत चढ़ने में लगभग आधा घण्टा लगता है। पहाड़ की चढ़ाई कुछ कठिन है परन्तु प्रकृति के दृश्य अतिशय रमणीय है। आबू की अपेक्षा भी इस पर्वत की रचना अधिक चित्ताकर्षक है। धर्मशाला के पीछे से पर्वत पर ऊपर जाने का रास्ता है। बाहर निकलते ही एक छोटा रमणीय सरोवर आता है, पर्वत चढ़ते-चढ़ते बीच में रमणीय गुफा जैसे स्थल आते हैं; कहीं-कहीं गुफा में होकर रास्ता गुजरता है। गुरुदेव इत्यादि के साथ 'मुनिवरों की ध्यानभूमि की जय' बुलाते हुए जब गुफा में से गुजरते थे, तब वैराग्य भरा दृश्य देखकर यात्री आनन्दित होते थे। इस प्रकार गिरिगुफा में से गुजरते-गुजरते छह बजे पहाड़ पर पहुँच गये। वहाँ पार्श्वनाथ प्रभु के दर्शन करके अर्घ्य चढ़ाया और फिर गुरुदेव ने 'ऐसे मुनिवर देखे वन में' यह स्तवन गवाकर मुनिवरों की भक्ति करायी। पश्चात् मुनिवरों के दूसरे स्तवनों द्वारा भी वरदत्त-सागरदत्तादि मुनिवरों की भक्ति हुई। बगल की देहरी में नेमिनाथ भगवान की खड्गासन प्रतिमा है तथा वरदत्त मुनि-जो श्री नेमिप्रभु के गणधर थे और जिन्होंने नेमिप्रभु को प्रथम आहारदान दिया था—उनके चरण भी (प्राय:करके) थे। यहाँ जाने के लिये रास्ते में सुन्दर गुफा मार्ग आता है। ऐसे मार्ग से गुजरते हुए सबको प्रसन्नता होती थी और बारम्बार सन्त-मुनियों के जयनाद से गुफा गूँज उठती थी। कोटिशिला की यात्रा पूरी करके आनन्दपूर्वक मुनिवरों की भक्ति गाते-गाते साढ़े छह बजे नीचे उतर गये।

थोड़ी देर आराम करके सवा सात बजे 'सिद्धशिला' पर जाने लगे। पूज्य गुरुदेव, सर्व यात्री और पूज्य बहिनश्री-बहिन सब साथ में थे और भक्ति से गाते-गाते, रमणीय पहाड़ की विशाल-विशाल शिलाएँ लाँघते-लाँघते सिद्धशिला की ओर जा रहे थे। यात्रियों को ऐसा लगता था कि अहा, सिद्धशिला में जा रहे हैं। बीच में बाहुबली भगवान की दो प्रतिमा, एक चौमुखी प्रतिमा, तथा मुनियों के चरणपादुका आये, वहाँ दर्शन करके अर्घ्य चढ़ाया, फिर आगे जाते हुए थोड़ी देर में सिद्धशिला में आ पहुँचे। यह सिद्धशिला लोकाग्र की नहीं परन्तु तारंगा की टोंच के ऊपर की, तथापि यहाँ भी ऐसा लगता था कि मानो

संसार को छोड़कर सिद्धों के शान्त धाम में आये। इस सिद्धशिला पर मल्लिनाथ प्रभु की खड्गासन प्रतिमा तथा मुनिवरों के चरणकमल हैं। दर्शन करके सिद्धिगामी सन्तों की पूजा की—

वरदत्तादिक ऊंठ कोटि मुनि जानिये।
मुक्ति गये तारंगागिरि से मानिये॥
तिन सबको शिर नाय सु पूजा ठानिये।
भवदधि तारन जान सु विरद बखानिये॥

वरदत्तादि साढ़े तीन करोड़ मुनिवर जहाँ से सिद्धशिला पर सिधारे हैं, ऐसी इस सिद्धशिला पर सिद्धपद साधक सन्तों ने करायी हुई सिद्ध भगवन्तों की अचिन्त्य स्तुति द्वारा मानो सिद्धों का साक्षात्कार होता था—

सुख सम्यक् दर्शन ज्ञान लहा, अगुरुलघु सूक्षम वीर्य महा,
अवगाह अबाध अधायक हो, सब सिद्ध नमो सुखदायक हो॥

सिद्धभूमि में विराजमान सिद्ध भगवन्तों की यह स्तुति बहुत शोभती थी; पश्चात् दूसरा एक स्तवन सिद्ध भगवान का बहुत भाव से गवाया—

बहु विनयथी वंदुं सिद्धने सिद्धिदाता
सुख अमित अनन्ते शान्तिमां छेक राता...

— कौन गवाता था यह स्तवन! गुरुदेव सिद्धस्वरूप की लवलीनता में यह गवाते थे। इस प्रकार सिद्धपद साधक सन्तों द्वारा सिद्धभूमि में सिद्ध भगवान की स्तुति हुई, उसके द्वारा यात्रियों को सिद्धपद प्राप्ति की प्रेरणा मिली। स्तुति के बाद उस साधनाभूमि के आसपास के प्राकृतिक वातावरण का अवलोकन किया और यात्रियों के साथ गुरुदेव ने सभी तीर्थधामों को याद किया। एक के बाद एक तीर्थ की सूची सुनते हुए आनन्द होता था। इस प्रकार मंगल तीर्थयात्रा के इस प्रवास में यह अन्तिम तीर्थ पूरा करके मंगल गीत गाते-गाते सबने प्रदक्षिणा की—

मुनिओनां धाम आ अद्‌भुत लागे छे,
अद्‌भुत लागे छे मुनि ध्यान रे... सिद्धिधाम भेट्या अलबेलडा।
गुरुवर साथे सिद्धिधाम भेटतां,

नवनवा तीर्थनी मंगलयात्रा करतां,
आनंद उल्लसी जाय रे... सिद्धिधाम भेट्या अलबेलडा...

इस प्रकार आनन्दपूर्वक इस तारंगा सिद्धिधाम की यात्रा करके, उल्लास गीत गाते-गाते शीघ्रता से सब नीचे उतरे। साढ़े नौ बजे नीचे पहुँचे और तीर्थयात्रा का एकत्रित हुआ अपार आनन्द अनहद जयनाद द्वारा व्यक्त किया। गुरुदेव के साथ अनेक तीर्थों की ऐसी सरस महान तीर्थयात्रा हुई, इसलिए यात्रियों का हर्षोल्लास अद्‌भुत था।

तारंगा सिद्धिधाम से सिद्धपद प्राप्त सिद्ध भगवन्तों को नमस्कार हो।
तारंगा सिद्धिधाम की यात्रा करानेवाले कहान गुरुदेव को नमस्कार हो।

★ ★ ★

नीचे आकर तलहटी में (पहाड़ पर ही) मन्दिरों के दर्शन किये, उनमें सम्भवनाथ इत्यादि भगवन्त विराजते हैं। चालीसेक फीट उन्नत मानस्तम्भ भी है (जो रुपये 2800 में हुआ है) उसमें ऊपर खड्गासन तथा नीचे पद्मासन भगवन्त हैं। मन्दिर के पास की गुफा में गुरुदेव बारम्बार घूमने जाते। दोपहर में सम्भवनाथ जिनालय के मण्डप में प्रवचन हुआ; उसमें मंगल तीर्थयात्रा महोत्सव का अन्तिम तीर्थ आज पूर्ण हुआ होने से गुरुदेव ने शान्तिनाथ भगवान की भावभीनी स्तुति पढ़ी। यहाँ सवेरे आहारदान का लाभ सेठ जीवणभाई बखारिया को प्राप्त हुआ और शाम के आहारदान का लाभ ब्रह्मचारी बहिनों को मिला था। दिगम्बर मन्दिर के बगल में एक बड़ा श्वेताम्बर मन्दिर 142 फीट उन्नत है। मन्दिर के अगल-बगल में प्राकृतिक गुफाएँ हैं। एक गुफा का नाम वरदत्त गुफा है, वह भी देखी; गुरुदेव उसमें थोड़ी देर बैठे। जिनमन्दिर में भक्ति हुई थी। शुरुआत में शान्तिनाथ भगवान की स्तुति के बाद यात्रा महोत्सव को अनुलक्ष कर निम्न स्तवन गवाया था—

आज मारा हृदयमां आनन्द सागर ऊछळे,
सर्व तीर्थना दर्शनवडे संसार ताप सहु टळे,
शाश्वत तीर्थनां दर्शनवडे आनंदसागर ऊछळे,
गुरुदेव संगे यात्रा करतां संसारताप सहु टळे।

अन्त में, 'आज म्हारे जिनवरजी को शरणो...' और 'बनियो म्हारे याही घड़ी में

रंग...' ये स्तवन गवाये और भक्ति पूरी हुई... और यात्रा की पूर्णता के निमित्त आनन्दपूर्वक जय-जयकार से तीर्थधाम गाज उठा।

बोलिये... सर्वे तीर्थधाम की जय....
'सर्वे भगवन्तो की कृपा की... जय....'
भारत के यात्रा महोत्सव की... जय...
सर्वे तीर्थधाम की यात्रा करानेवाले
मंगलमूर्ति गुरुदेव की.... जय....

वैशाख कृष्ण अमावस (दिनांक 24-9-1957) : आज यात्रा के तीर्थों की समाप्ति होती है। सवेरे तारंगा सिद्धक्षेत्र पर जिनमन्दिर में यात्रियों ने समूह पूजन किया; उसमें सम्मेदशिखर आदि निर्वाणक्षेत्रों की पूजा बहुत उल्लास से हुई और उस पर 'वाहवा... जी... वाहवा...' द्वारा अद्भुत भक्ति का कलश चढ़ाया—

जिनवर प्रभुनां दर्शन कर्या... वाहवा.... जी.... वाहवा....
गुरुदेव साथ यात्रा थई.... वाहवा.... जी.... वाहवा....
घणा घणा तीर्थों देख्या... वाहवा.... जी.... वाहवा....
सन्त मुनिनां धाम देख्या... वाहवा.... जी.... वाहवा....
फरी फरीने यात्रा थाय... वाहवा.... जी.... वाहवा....
भक्तोनां कोड पूरा थाय... वाहवा.... जी.... वाहवा....

भक्ति के पश्चात् गुरुदेव ने आधे घण्टे प्रवचन किया; तत्पश्चात् सेठ जीवणलाल बखारिया ने बहुत प्रमोद व्यक्त करके गुरुदेव को पुनः तारंगा पधारने की प्रार्थना की थी। इस प्रकार यात्रा महोत्सव पूर्ण होने पर सब अब घर की ओर जाने के लिये उत्सुक थे। भोजन करके ग्यारह बजे बस द्वारा पर्वत के ऊपर से उतरकर स्टेशन पहुँचे, तारंगा से ट्रेन द्वारा महेसाणा होकर अहमदाबाद आये।

★ ★ ★

अहमदाबाद

वैशाख शुक्ल एकम के सवेरे अहमदाबाद में चार–पाँच हजार जनता ने धामधूम से पूज्य गुरुदेव का भव्य स्वागत किया। गुरुदेव महान मंगल तीर्थयात्रा करके पधारे होने से और दूसरे ही दिन अहमदाबाद के आंगन में आपश्री की 68 वीं जन्मजयन्ती का उत्सव होने से अहमदाबाद के भाई मलूकचन्दभाई इत्यादि सबको बहुत उल्लास था। प्रवचन इत्यादि के लिये एक सुन्दर विशाल मण्डप बनाया गया था, उसमें जिनेन्द्र भगवान को भी विराजमान किया था। गुरुदेव के मंगलाचरण के बाद श्री मणिलाल जैसंगभाई सेठ ने स्वागत प्रवचनरूप से संक्षिप्त वक्तव्य दिया था। दोपहर के प्रवचन में पाँच–छह हजार लोग थे, और रात्रि में भक्ति का कार्यक्रम रखा गया था।

वैशाख शुक्ल दूज : पूज्य गुरुदेव का 68वाँ मंगलकारी जन्मोत्सव

आज कहान गुरु का 68 वाँ मंगल जन्मोत्सव! सवेरे मंगल नाद से मण्डप गूँजता था। जिनेन्द्रदेव की समूह पूजा के बाद बैण्डबाजों सहित गाते–गाते सब भक्त गुरुदेव को मण्डप में लेकर आये, वहाँ उत्साह भरे वातावरण के बीच 'गुरुराजनी बधाई आजे छे' इत्यादि मंगल बधाई पूज्य बहिनश्री–बहिन ने गवायी थी। गुरुदेव के प्रवचन के पश्चात् देश–देश के अभिनन्दन–सन्देश पढ़े गये और मुमुक्षु भक्तों ने अभिनन्दनरूप से भाषण किया। 68 की रकमों का फण्ड हुआ, दोपहर को चौबीस तीर्थंकरों की स्तुति पर (पद्मनन्दि में से) भक्ति भीना प्रवचन हुआ। शाम को अनेक दीपकों से जगमगाते मण्डप में जन्मोत्सव के निमित्त भक्ति हुई। इस प्रकार गुरुदेव का जन्मोत्सव अपनी नगरी में मनाने का भाग्य अहमदाबाद को प्राप्त होने से, वहाँ के अनेक भक्तजनों को बहुत प्रसन्नता हुई। यहाँ गुरुदेव के साथ यात्रियों ने अनेक जिनमन्दिरों के दर्शन किये। एक मन्दिर के भोंयरा में भी प्रतिमाएँ विराजमान हैं।

गुरुदेव के साथ मंगल तीर्थों की आनन्दकारी यात्रा करके तथा 68 वाँ जन्मोत्सव

मनाकर बहुत से यात्री वैशाख शुक्ल तीज को सोनगढ़ आये... और स्वर्णधाम में गुरुदेव के स्वागत की भावभीनी तैयारी होने लगी। साढ़े पाँच महीने से सूना पड़ा हुआ स्वर्णधाम फिर से प्रसन्न वातावरण से खिल उठा... यात्रा करके साढ़े पाँच महीने में सोनगढ़ में पैर रखते और सीमन्धरनाथ को निहारते हुए कोई अद्‌भुत प्रमोद और अद्‌भुत शान्ति होती थी। गुरुदेव वैशाख शुक्ल तीज और चौथ को भी अहमदाबाद रहे और अहमदाबाद का चार दिन का कार्यक्रम पूरा होने पर वैशाख शुक्ल पंचमी को पोलारपुर पधारे... और वैशाख शुक्ल छठवीं को... —

तीर्थधाम सोनगढ़ में

वैशाख शुक्ल छठवीं :—आज स्वर्णपुरी में सोना का सूरज उदित हुआ है। भारत के सम्मेदशिखर इत्यादि महान तीर्थों की मंगल तीर्थयात्रा करके और अजोड़ प्रभावना करके गुरुदेव आज पुनः सोनगढ़ पधार रहे हैं, भक्तों ने उत्साह से स्वर्णपुरी को जगह-जगह से शृंगारित किया है। जगह-जगह आसोपालव के तोरण, मण्डप, दरवाजा, ध्वजा, रंगोली, तुई के द्वार और चाँदी के दरवाजों से शोभित स्वर्णपुरी आज गुरुदेव का स्वागत करने को अधीर बनी है, भक्त बाट देख रहे हैं, थोड़ी देर में सा...रे...ग...म... के मधुर सुर बजाती 'कल्याणवर्षिनी' आ पहुँची और गुरुदेव स्वर्णधाम में पधारे। बैण्ड बाजा से और जय-जयकार से स्वर्णधाम गूँज उठा। सबने अन्तर की उमंग से गुरुदेव का भव्य स्वागत किया। मानस्तम्भ को दूर से देखते ही गुरुदेव ने भाव से नमस्कार किया... सबसे पहले जिनमन्दिर में आकर गुरुदेव ने सीमन्धरनाथ के दर्शन किये। अनेक तीर्थों को भेंटकर आज पौने छह महीने बाद सीमन्धर नाथ के दर्शन करते हुए गुरुदेव का चित्त भक्ति से भींग रहा था। पिता-पुत्र के मिलन का यह दृश्य अद्‌भुत था। एकटक से दर्शन कर-करके फिर गुरुदेव ने रत्नमिश्रित अर्घ्य चढ़ाया। पश्चात् स्वाध्यायमन्दिर में आकर गुरुदेव ने मांगलिक सुनाया... मांगलिक में बहुमानपूर्वक तीर्थों को भी स्मरण किया। यात्रा का प्रमोद व्यक्त किया। पश्चात् स्वागत-गीत तथा स्वागत-भाषण हुआ। भाईश्री

हिम्मतभाई ने भी भावभरा स्वागत-भाषण किया था और ऐसी भावना व्यक्त की थी कि गुरुदेव के चरणों की छाया में निशदिन रहें और आत्महित साधें। अन्त में पूज्य बहिनश्री-बहिन ने हार्दिक ऊर्मि भरा स्वागत-गीत गवाकर जय-जयकार किया था। इस प्रकार जय-जयकारपूर्वक श्री सम्मेदशिखर आदि तीर्थधामों की मंगल तीर्थयात्रा का महोत्सव पूर्ण हुआ।

अनन्त सिद्ध भगवन्तों की जय हो....

पंच परमेष्ठी भगवन्तों की जय हो....

सर्व कल्याणक तीर्थधामों की जय हो....

अपूर्व यात्रा करानेवाले गुरुदेव की जय हो....

गुरुदेव के साथ की मंगल तीर्थयात्रा की जय हो....

मंगल तीर्थयात्रा का उपसंहार

अनेक तीर्थों की उमंग भरी यात्रा करके आने के बाद स्वाध्याय मन्दिर में मांगलिक में अपूर्व शान्ति से गुरुदेव ने कहा कि **आत्मा का ज्ञान आनन्दस्वभाव है, वह मंगलरूप है। ऐसे स्वभाव को पहचानकर और साधकर जो सर्वज्ञ अरिहन्त परमात्मा हुए, वे मंगलरूप, शरणरूप और उत्तम हैं। सिद्ध भगवान विदेही मुक्त परमात्मा हैं, वे भी मंगल, शरण और उत्तम हैं। साधु अर्थात् ज्ञानानन्दस्वरूप आत्मा का भान करके उसे साधनेवाले सन्त, वे भी मंगल, शरण और उत्तम हैं तथा सर्वज्ञ भगवान द्वारा कथित आत्मा का परम स्वभाव-जिसमें परम आनन्द और शान्ति भरे हुए हैं—वह मंगल, शरण और उत्तम है। ज्ञायकभाव—परमपारिणामिकस्वभाव, वह त्रिकाल मंगलरूप है और उसके आश्रय से प्रगट हुई सम्यग्दर्शनादि निर्मल परिणतिरूप धर्म, वह मंगल, शरण और उत्तम है। ऐसे परमभाव की श्रद्धा-ज्ञान-रमणता द्वारा संसार से तिरा जाता है, इसलिए वह वास्तविक तीर्थ है और जहाँ से भगवान मोक्ष पधारे, ऐसे तीर्थ की यात्रा का-बहुमान का भाव, वह शुभभाव है-वह व्यवहार तीर्थ है। आनन्दभाव-शान्तिभाव, वह तो आत्मा का अन्तर का स्वभाव है, उसकी रुचि-ज्ञान-रमणता, वह मोक्ष के कारणरूप मंगल तीर्थ है। पौने छह महीने में छह हजार मील घूमकर अनेक तीर्थों की यात्रा की, उसकी पूर्णता में यह मांगलिक किया।**

— गुरुदेव का यह मांगलिक सुनकर हर्ष भरे जयकार से सभा गूँज उठी।

दोपहर को प्रवचन में शुद्धात्मभावनारूप संवर अधिकार की शुरुआत करते हुए गुरुदेव ने बारम्बार तीर्थयात्रा को याद करके भावपूर्वक कहा कि—**पौने छह महीने भारत में यात्रा करके आये... अब यह संवर की अपूर्व शुरुआत होती है। 'मैं शुद्ध ज्ञानानन्द से परिपूर्ण हूँ'—ऐसी अन्तर्दृष्टि के परिणमनरूप जो संवर, वह मंगल है। जिन्दगी में इतने तीर्थ और ऐसी यात्रा पहली बार हुई है। ओहो! जगह-जगह पुरातन मन्दिर और हजारों प्रतिमाएँ देखीं, यह एक ऐतिहासिक यात्रा हुई। लोगों का उत्साह बहुत था, सर्वज्ञ परमात्मा के मन्दिर, तीर्थस्थान, जन्मस्थान, मोक्षस्थान—इन सबके प्रति भक्ति का भाव उछले—ऐसे शुभभाव भूमिका के योग्य होते हैं। धर्मी की मूल अन्तर्दृष्टि तो**

चिदानन्दस्वभाव में है, उसके बल से संवर होता है। इसके अतिरिक्त दूसरा कोई पन्थ नहीं है। ज्ञानानन्दस्वरूप आत्मा की ओर ढलकर जो परमात्मा हुए - ऐसे सन्तों को - धर्मात्मा को मेरे हृदय में धारण करके मैं नमस्कार करता हूँ—ऐसा कहकर अपूर्व संवर अधिकार शुरु होता है। **यात्रा महोत्सव करके यह भक्ति का माणेकस्तम्भ रोपा है। 'स्वभाव, वह मैं और परभाव, वह मैं नहीं'—ऐसे भेदज्ञान द्वारा एक बार आत्मा जागृत हुआ, वहाँ संवर ज्योति जगी, उसे रोकनेवाला कोई नहीं है। उस संवर ने सदा विजय प्राप्त की है... संवरदशा 'प्रगटी, सो प्रगटी'... अब मोक्ष लेकर ही रहेगा। सम्यग्दर्शन हुआ, वहाँ मोक्ष के अप्रतिहत माणेकस्तम्भ आत्मा में रोप दिये गये। भाई! ऐसा भाव प्रगट कर, यह अपूर्व मंगल है।**

गुरुदेव के प्रवचन के बाद जिनमन्दिर में सीमन्धर भगवान के सन्मुख जो भक्ति हुई, वह अपूर्व थी... गुरुदेव के साथ हुई तीर्थयात्रा का अपार आनन्द पूज्य बहिनश्री-बहिन भक्ति द्वारा व्यक्त करती थीं। आज पूरे दिन महान उत्सव जैसा उमंग भरा वातावरण रहा था। मुमुक्षुओं के मुख से घर-घर में और जगह-जगह यात्रा की आनन्द भरी वार्ता सुनायी देती थी। वास्तव में गुरुदेव के साथ की यह तीर्थयात्रा इस मुमुक्षु जीवन का एक उल्लासकारी प्रसंग था। तीर्थों के आनन्दकारी स्मरण, वहाँ विचरे हुए आराधक सन्त, उनकी आराधना के प्रसंग—इन सबका स्मरण जागने पर हृदय में ऐसा होता था कि यह सब ही गुरुदेव का अचिन्त्य उपकार है कि उनके प्रताप से ऐसे मंगल प्रसंग प्राप्त होते हैं और ऐसी तीर्थयात्रा के बाद सोनगढ़ के शान्त वातावरण में निर्विकल्प अनुभूति की प्रेरक चैतन्य की आनन्दकारी वार्ता का श्रवण कोई अनोखी तृप्ति प्रदान करता था... शुद्धात्मा की भावना सुनते हुए ऐसा लगता था कि जो सिद्ध भगवन्तों के देश में जा आये, वे सिद्ध भगवन्तों के पास पहुँचने का निकट मार्ग गुरुदेव दिखा रहे हैं। अनेक दिनों तक तो यात्रा की धुन में अन्यत्र चित्त नहीं लगता था। चर्चा इत्यादि में प्रतिदिन गुरुदेव महिमापूर्वक तीर्थों को याद करते... भक्ति में भी उसके भनकार बजते... तीर्थयात्रा से जीवन में कोई नवीन रंग उभरा था। किसी-किसी समय बहिनों के वांचन के समय पूज्य बहिनश्री-बहिन पूज्य गुरुदेव के साथ की यात्रा के प्रसंगों का भावभीना वर्णन करतीं, तब श्रोताओं को यात्रा जैसा ही प्रमोद होता। अहा, जगह-जगह ये जिनेन्द्र भगवन्त—यह सम्मेदशिखर

धाम का महापवित्र परम उपशान्त वातावरण, यह पावापुरी और यह राजगृही, यह अयोध्या और यह चम्पापुरी... यह सब ही चित्त में साक्षात् की भाँति ही वर्तता रहता है। पौने छह महीने तक तीर्थों के संग में मानो इस संसार का अवतार ही विस्मृत हो गया। हे गुरुदेव! आपके साथ की हुई इस अद्‌भुत और आनन्दकारी तीर्थयात्रा को हमें आत्महित के पन्थ में परिणमन कराओ।

गुरुदेव के साथ की इस अभूतपूर्व तीर्थयात्रा में शुरुआत में सवा पाँच सौ यात्री थे और शिखरजी इत्यादि की यात्रा प्रसंग में दो हजार जितने यात्री थे... आठ बड़ी बसें और चालीस जितनी मोटरों में जब यात्रासंघ गुजरता था, तब वह महिमावन्त दृश्य देखकर लोग आश्चर्य से मुग्ध बनते... यात्रासंघ में मात्र सौराष्ट्र ही नहीं परन्तु भारतभर के अनेक प्रान्त के अग्रगण्य लोग थे... छह हजार मील के इस यात्रा-प्रवास दौरान सामान्य अन्दाज अनुसार दस लाख लोगों ने हर्षपूर्वक गुरुदेव का धर्म सन्देश सुना होगा और एक करोड़ लोगों ने गुरुदेव के दर्शन किये होंगे। यात्रासंघ जहाँ-जहाँ जाता, वहाँ-वहाँ जैन समाज गुरुदेव का और संघ का जो वात्सल्य की ऊर्मियों से सम्मान करते, उसे देखकर उनके प्रति धन्यवाद के उद्‌गार निकल पड़ते। जगह-जगह जैन समाज के धुरन्धर विद्वान और प्रमुखों द्वारा गुरुदेव का जो बहुमान होता, उससे गुरुदेव का ऐसा भारतव्यापी प्रभाव देखकर बहुत हर्ष होता था। गुरुदेव ने करायी हुई इस महान तीर्थयात्रा के वर्णन द्वारा रत्नत्रय की आराधना से पावन हुए तीर्थों का और रत्नत्रय साधक सन्तों की महिमा जगत में प्रसिद्ध हो—ऐसे मुख्य उद्देश्य से तीर्थों और सन्तों के प्रति भक्तिपूर्वक यह पुस्तक तैयार हुई है। वास्तव में तो सम्यग्दर्शनादिरूप परिणमन कर भवसागर से तर रहे जीव, वह स्वयं 'तीर्थ' है और ऐसे मंगल-तीर्थस्वरूप सन्त के चरणों में बसता मुमुक्षु अपना पूरा जीवन भी यात्रामय समझता है। अहा, जिन सन्तों की चरणरज ने पहाड़ों को पूज्य बनाया, उन सन्तों के साक्षात् चरण की क्या बात! सन्त में सब समाहित होता है; उनके हृदय में भगवान हैं, उनकी वाणी में शास्त्र है, उनकी कृपादृष्टि में कल्याण है और जहाँ उनके चरण हैं, वहाँ तीर्थ है। इसलिए आराधक जीवों के दर्शन को भी तीर्थयात्रा ही गिनने में आया है। ऐसे अपार महिमावन्त तीर्थस्वरूप पूज्य गुरुदेव जैसे सन्त चरण की शीतल छाया निशदिन रहकर आत्महित साधें—ऐसी भावना के साथ यह मंगलमय तीर्थयात्रा समाप्त होती है।

हे जिनेन्द्र भगवन्तों! हे सिद्धभगवन्तों! हे रत्नत्रयधारक सन्तों!
आपके आत्मवैभव को भक्तिपूर्वक नमस्कार करता हूँ।
हे तीर्थधामों, जिनालयों, जिनबिम्बो और जिनवाणी देवी!
आप सबको भी भक्तिपूर्वक नमस्कार करता हूँ।
हे परम करुणा से आत्महित के पंथ में ले जानेवाले गुरुदेव!
आपके चरणकमल में भक्तिपूर्वक नमस्कार करता हूँ।
हे परम उपकारी वात्सल्यवन्ता पूज्य माताओं!
आपके चरणों में भी भक्तिपूर्वक नमस्कार करता हूँ।
हे मेरे साधर्मी बन्धुओं! इस आनन्द प्रसंग पर
आप सबको भी बहुत वात्सल्यपूर्वक याद करता हूँ।

जय हो जैनशासन की।

जय हो रत्नत्रय धर्म की।

जय हो देवगुरुतीर्थ की।

यदर्थमात्रा पदवाक्यहीनं मया प्रमादाद्यदि किंचनोक्तम्।
तन्मे क्षमित्वा विदधातु देवी सरस्वती केवलबोधलब्धिम्॥
बोधिः समाधिः परिणामशुद्धिः स्वात्मोपलब्धिः शिवसौख्यसिद्धिः।
चिन्तामणिं चिन्तित वस्तदाने त्वां वंद्यमानस्य ममास्तु देवी॥

स्वा.... ग.... त.... गी....त

[वैशाख शुक्ल छठवीं को गुरुदेव यात्रा करके सोनगढ़ पधारे, उस प्रसंग में बहिनश्री-बहिन ने गवाया हुआ]

धन्य मंगल दिन ऊगीओ रे लाल...
गुरुजी पधार्या सुवर्णधाम जो... परम प्रभावी नाथ पधारीया रे लाल।

गुणो गहन गुरुदेवना रे लाल...
अद्वितीय अवतार गुरुदेव जो... गुरुजीनी जोड जगे नहि जडे रे लाल...

भारतखंडमां विचर्या रे लाल....
ऐतिहासिक यात्रा अद्‌भुत जो... हीरले वधावुं गुरुदेवने रे लाल....

ज्ञान आनन्द ने सेवता रे लाल...
परमप्रभावे जयविजय थाय जो... गुरुजीनी जोड जगे नहि जडे रे लाल...
जेना सेवनथी जयविजय थाय जो... धन्य मंगल दिन ऊगीयो रे लाल....

पावन यात्राये गुरु संचर्या रे लाल....
पावन कर्या हिन्दुस्तान जो... पावन गुरुनी महिमा शुं कथुं रे लाल....

भव्योना टोळाओ गुरु वधावीया रे लाल...
अेना पगलेपगले पुष्पना वरसाद जो... मोंघेरी यात्रा गुरुदेवनी रे लाल...

संघसहित गुरुजी चालीया रे लाल...
सेवकने देखाड्या तीर्थधाम जो... धन्य मंगल दिन ऊगीयो रे लाल....

सम्मेदशिखर (शाश्वतधामना) दर्शन कर्या रे लाल...
भावेथी भेट्या भगवान जो... धन्य मंगल दिन ऊगीयो रे लाल...

सिद्धप्रभुनां दर्शन कर्या रे लाल...
पामवाने सिद्धस्वरूप जो.... धन्य मंगल दिन ऊगीयो रे लाल....

तीर्थंकरदेवना दर्शन कर्या रे लाल...
साक्षात् भेट्या भगवान जो... आज पधार्या सुवर्णधाममां रे लाल...

पावापुरी राजगृही रळियामणा रे लाल...

अयोध्या शाश्वत धाम जो... धन्य मंगल दिन ऊगीयो रे लाल...
अनेक तीर्थना दर्शन कर्या रे लाल...
अनेक नगरमां बधाई जो... आदर्श कार्य गुरुदेवना रे लाल...

जय-विजय गुरुदेवनो रे लाल...
जीवोना जुथ उभराय जो... धन्य मंगल दिन ऊगीयो रे लाल...

पावन गुरुजी आज पधारीया रे लाल....
पावन कर्युं छे (आ) मारुं धाम जो... सोनेरी सूर्य सुवर्णधाममां रे लाल...

शा शा स्वागत करुं ताहरा रे लाल....
मारु हैडुं आनन्दथी उभराय जो... धन्य मंगल दिन ऊगीयो रे लाल....

मीठा स्मरणो यात्रा तणा रे लाल...
मीठा जीवनना प्रसंग जो... गुरुजीनी जोड जगे नहि जडे रे लाल...

नित्ये गुरुजीनी चरण सेवना रे लाल...
नित्ये होजो गुरुजीनो साथ जो... आजे पधार्या सुवर्णधाममां रे लाल....

रा.... ज....गृ....ही

आश धरीने अमे सुवर्णपुरीथी आव्या जात्राने काज रे... धन्य दिन आजे ऊग्यो रे...
सद्‌गुरुदेवना परम प्रतापथी जात्रा अपूर्व थई आज रे... धन्य दिन....
अपूर्व करुणाधारी अमोने जात्रा करावी रुडी आज रे... धन्य दिन....
राजगृहीमां प्रभु विचर्या आजे विचरे छे साधकसंत रे... धन्य दिन....
श्री गुरु-संतना चरणकमलथी भूमि आजे हरखाय रे... धन्य दिन....
धन्य सीमन्धर धन्य कुन्दकुन्दप्रभु धन्य श्री कहानगुरुराज रे... धन्य दिन....
धन्य समोसरण धन्य राजगृही धन्य सभा नरनार रे... वीर वाणी अहीं छूटी रे....

तीर्थयात्रा के लिये गुरुदेव का मंगल विहार

[कार्तिक शुक्ल चौदस के दिन पूज्य बहिनश्री–बहिन ने गवाया हुआ भावभीना गीत]

भरत भूमिमां सोना सूरज ऊगीयो... रे... जिनजी भारत आंगणे पधारे सद्गुरुदेव....
आजे दैवी वाजां वागीया रे... जिनजी!....
सम्मेदाचल उत्तम तीर्थराज छे रे... तेने भेटवा जाये उत्तम गुरुराज... आजे....
हिन्दुस्तान मंगल यात्रा थाय छे रे... मोंधेरा मारे सद्गुरुदेवना विहार... आजे....
हिन्दुस्तानमां पावन पगला गुरुदेवना रे... हिन्द जीवोना जाग्या सुलटा (महा) भाग्य... आजे....
गुरुदेवना विहारे भारत नाचशे रे... आव्यो आव्यो अद्भुत योगीराज... आजे....
अनुपम मूर्ति साक्षात् गुरुदेव छे रे... अनुपम कार्यो करे जीवन मांही... आजे....
भारत आंगण–आंगण तोरणो बंधाय छे रे... भव्य जीवोनां वृंदो ऊछली जाय... आजे....
शाश्वत तीर्थ दर्शने गुरु संचरे रे... अेने हैडामांही घणी छे हाम... मारे दैवी... आजे....
गुरुजीनो साथ मळवो बहु दोहीलो रे... महाभाग्ये मल्यो गुरुजीनो साथ... आजे....
तीर्थयात्रा गुरुजी संगे थशे रे... सेवकोना जनम सफल थाय... आजे....
कुमकुम पगले गुरुजी पधारता रे... आकाशे बहु देवदुंदुभी नाद... आजे....
मंगलकारी चंदनथी गुरुचरणो पूजुं रे... हीरलेथी वधावुं गुरुदेव... आजे....
देशोदेशना सज्जनो गुरुजी ने पूजशे रे... भक्तिभावे स्वागत रुडा थाय... आजे....
गुरुदेवनी न्यायवाणी अमर तपो रे... जैन शासनमां वर्तो जय जयकार... आजे....
वीतरागी मार्ग गुरुजी मारा स्थापता रे... गुरुदेवनो वर्तो जय जयकार... आजे....
शाश्वतयात्रा शाश्वत तीरथराजनी रे... शाश्वत होजो गुरुदेवनो साथ... आजे....

अयोध्या

आवो आवो ने सुरनर वृन्द हरखे आवो रे,
अहीं जन्म्या त्रिभुवननाथ अयोध्यानगरे रे....
नगरी अयोध्या धाम अति अति सोहे रे,
अेनी शोभा वरणी न जाय मनडुं मोहे रे...
त्रणकालनां त्रिभुवननाथ अयोध्या जन्मे रे,
अनादि अनंत (अे) तीर्थधाम कहीअे शुं वयणे रे...

जन्मकल्याणक अनंता थाय अयोध्या नगरे रे,
अे शाश्वत छे तीर्थधाम अंतर उछले रे...
अहीं नाभीरायना नन्द तीर्थंकर विराजता रे,
ऋषभ अजित सुमति अनन्त जिणन्द अयोध्या जन्म्या रे...
आ भूमिमां विचर्या जिनदेव केलि करता रे...
अे दृश्य अहो अद्‌भुत पावनकारी रे....
(अनादि अनंत पावनधाम कल्याणकारी रे...)
धन्य भूमि धन्य आ धाम धन्य आ धूलने रे...
पुनित पगलाथी पावनधाम मंगलकारी रे...
देव देवेन्द्रोना वृंद अहींया उतरे रे...
जन्मकल्याणक फरी फरी थाय... अयोध्यानगरे रे...
धन्य भाग्य अमारा आज गुरुवर संगे रे,
आ शाश्वत यात्रा थाय गुरुजी प्रतापे रे... आवो...

सम्मेदशिखर

आज पधार्या आज पधार्या श्री गुरुवरजी आज पधार्या...
आज पधार्या आज पधार्या तीर्थयात्रा आज पधार्या...
आज पधार्या आज पधार्या... सम्मेदाचल गुरु आज पधार्या...
भक्तजनोना भाव पूराया... सम्मेदाचल गुरु आज पधार्या...
कुमकुम पगले नाथ पधारे, यात्रा दिने मंगल थाये,
भक्तजनो जयकार गावे... श्री गुरुवरजी आज पधार्या...
श्री गुरुजी अे तीर्थ बताव्या, सिद्धिकेरा धाम बताव्या,
अपूर्व यात्रा गुरुवर साथे... सम्मेदाचल गुरु आज पधार्या...
सम्मेदाचल गिरि नयणे देख्या, जिनवर प्रभुना धाम नीरख्या,
सुवर्ण दिन आजे उग्या... सम्मेदाचल गुरु आज पधार्या....

देव दुदुंभी वाजिंत्र वागे, श्री जिनवरनो महिमा गाजे,
दिव्य गंधोदक अमृत वरसे... सम्मेदाचल गुरु आज पधार्या...
सोना सूरज आजे उगे तीर्थयात्रा गुरुजी पधारे,
सेवकजनना मन हरखाये... सम्मेदाचल गुरु आजे पधार्या...

चलों........ शिखरजी धाम में........

हिलमिलकर सब भक्तो चालो... सम्मेदशिखर जिनधाम में...
सम्मेदशिखर जिनधाम में... सम्मेदशिखर जिनधाम में... गुरुवरजी के साथ में०
हिलमिलकर सब भक्तो चालो सम्मेदशिखर जिनधाम में—

सम्मेदशिखर की शोभा न्यारी, मधुवन छे बहु मनोहारी,
उन्नत शिखर गगनविहारी, वनवृक्षों की घटा नीराली...
सम्मेदशिखर जिनधाम में... हिलमिल०

शाश्वत अकृत्रिम तीर्थ सोहंता, निर्वाणभूमि अनादि अनन्ता,
अनन्त मुनीश्वरे ध्यान लगाया, अनन्त तीर्थंकर मुक्ति पाया,
जय पावन सिद्धि धाम है (पावन पावन धाम है) हिलमिल०

धन्य दिवस धन्य भाग्य हमारा, आज अपूर्व अवसर आया,
गुरुवर सम्मेदशिखरजी पधार्या, भरतखण्डना भाग्य ज जाग्या,
हिन्दुस्तानना भाग्य ज जाग्या... जय जय हो गुरु कहाननी... हिलमिल०

गुरुवर साथे यात्रा करतां, हर्ष थाये अपरंपारा...
जय जय हो गुरुवर भगवंता, निशदीन हो गुरुवर का शरणा,
अे ज अरज गुरुदेवने—अे ज अरज भगवन्तने... हिलमिल०

श्रेयोमार्गस्य संसिद्धि प्रसादात् परमेष्ठिनाम्।
संस्मरणो वयं तेषां प्रणमामो मुहुर्मुहुः॥

मंगल तीर्थयात्रा

(द्वितीय विभाग)

वीर संवत् 2485 (विक्रम संवत् 2015) में
पूज्य श्री कानजीस्वामी द्वारा संघसहित
दक्षिण भारत के तीर्थक्षेत्रों की यात्रा के मधुर संस्मरण

गुजराती लेखक
ब्रह्मचारी हरिलाल जैन
सोनगढ़ (सौराष्ट्र)

: हिन्दी अनुवाद :
पण्डित देवेन्द्रकुमार जैन
बिजौलियाँ, जिला-भीलवाड़ा (राज.)

: प्रकाशक :
श्री कुन्दकुन्द-कहान पारमार्थिक ट्रस्ट
302, कृष्णकुंज, प्लॉट नं. 30, नवयुग सी.एच.एस. लि.
वी. एल. मेहता मार्ग, विलेपार्ले (वेस्ट), मुम्बई-400 056
फोन : (022) 26130820

अनुक्रमणिका

दक्षिण यात्रा का कार्यक्रम...	455
पूज्य गुरुदेव का मंगल प्रस्थान	466
मुम्बई नगरी में आयोजित अभूतपूर्व...	470
मुम्बई समाचार	474
कोल्हापुर	484
स्तवनिधि होकर बेलगाम	485
हुबली शहर	486
जोगफॉल्स	487
हुमच	488
कुन्दप्रभु का समाधि-स्थल	490
मूलबिद्री में रत्न प्रतिमा दर्शन	491
कारकल, वैणूर और हलेबीडु	492
श्रवणबेलगोल	493
चन्द्रगिरि की यात्रा	494
जिननाथपुरी	495
बाहुबली प्रभु की दूसरी यात्रा और...	496
मैसूर शहर, बैंगलोर सिटी	498
पुंडी नगरी, मद्रास शहर	499
अभिनन्दन पत्र	500
वांदेवास	503
अकलंक वसती	506
हैदराबाद के एक जिनमन्दिर के भगवंत	507
धाराशिव की जैन गुफाएँ	509
कुंथलगिरि का सुन्दर दृश्य	510
कुंथलगिरि सिद्धक्षेत्र	511
औरंगाबाद	514
जलगाँव शहर	515
मलकापुर, शिरपुर अन्तरीक्ष पार्श्वनाथ	516
कारंजा	517
परतवाडा, मुक्तागिरि सिद्धक्षेत्र	518
अमरावती होकर नागपुर की ओर	522
नागपुर	523
डोंगरगढ़-खैरागढ़	523
रामटेक	525
सिवनी, जबलपुर	526
मढ़ीयाजी	528
भेलुघाट	530
पनागर में जिनबिम्ब दर्शन और...	531
दमोह	531
कुण्डलगिरि सिद्धक्षेत्र	532
कुण्डलगिरि सिद्धधाम की यात्रा	532
शाहपुर	534
सागर शहर	535
नैनागिरि-रेशंदीगिरि सिद्धक्षेत्र	538
द्रोणगिरि सिद्धिधाम की यात्रा	540
खजराह	543
पपौराजी	544
ललितपुर, देवगढ़	547
बारां होकर चाँदखेड़ी	549
चाँदखेड़ी	550
झालरापाटन, कोटा शहर	553
नीमच, चित्तौड़	556
उदयपुर	557
केसरियाजी	558
ईडर	559
सोनासण	560
फतेपुर	561
फतेपुरनगरी में पूज्य गुरुदेवश्री	562
तलोद	562
रखियाल, देहगाम, कलोल	563
भावनगर	565
परिशिष्ट-1	568
परिशिष्ट-2	574

ॐ

परमात्मने नमः

मंगल तीर्थयात्रा

(द्वितीय विभाग)

वीर संवत् २४८५ (विक्रम संवत् २०१५) में पूज्य श्री कानजीस्वामी द्वारा संघसहित दक्षिण भारत के तीर्थक्षेत्रों की यात्रा के मधुर संस्मरण

तत्कालीन आत्मधर्म में प्रकाशित यात्रा सम्बन्धी सूचना एवं विवरण

दक्षिण यात्रा का कार्यक्रम और संक्षिप्त परिचय

परम पूज्य सद्गुरुदेवश्री कानजीस्वामी पौष शुक्ल अष्टमी के दिन सोनगढ़ से प्रस्थान करके पौष शुक्ल नवमी को पावागढ़ पधारेंगे। बड़ोदरा होकर मोटर बस से पावागढ़ जाया जाता है। इस पावागढ़-सिद्धक्षेत्र से रामचन्द्रजी के पुत्र लव-कुश तथा लाटदेश के राजा और पाँच करोड़ मुनिवर मोक्ष प्राप्त हुए हैं। पर्वत के ऊपर जिनमन्दिर तथा तालाब है और लव-कुश भगवन्तों के चरणपादुका हैं। पौष शुक्ल दशमी के दिन इस सिद्धक्षेत्र की यात्रा होगी। तत्पश्चात् पौष शुक्ल ग्यारह तथा बारह के दिन दाहोद, शुक्ल तेरह पालेज, शुक्ल चौदह सूरत तथा मनोर और शुक्ल पन्द्रह के दिन शिव होकर माघ कृष्ण एकम् रविवार के दिन पूज्य गुरुदेव मुम्बई शहर में प्रवेश करेंगे। वहाँ मुम्बादेवी रोड (झबेरी बाजार) में नवीन निर्मित भव्य दिगम्बर जिनमन्दिर का पंच कल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव होगा। प्रतिष्ठा का मुहूर्त माघ शुक्ल छठमीं का है। प्रतिष्ठा के पश्चात् माघ शुक्ल अष्टमी के दिन पूज्य गुरुदेव संघसहित यात्रा के लिये प्रस्थान करेंगे। मुम्बई के बाद आते हुए स्थलों का अभी तक प्राप्त हुआ परिचय यहाँ संक्षिप्त में दिया जाता है।

पूना (माघ शुक्ल ८-९) यहाँ तीन जिनमन्दिर हैं।

फलटन, दहिगाँव, कुम्भोज (माघ शुक्ल १०-११) फलटन में छह जिनमन्दिर, सहस्त्रकूट मन्दिर, लकड़ी की सीढ़ीवाला मानस्तम्भ इत्यादि हैं; दहिगाँव में बगीचे

के बीच भव्य मन्दिर है; जिनमन्दिर के भोंयरा में सीमन्धर आदि बीस विहरमान भगवन्तों के भव्य प्रतिमाजी विराजते हैं। बाहुबली-कुम्भोज में २८ फीट उन्नत बाहुबलीस्वामी के भव्य प्रतिमाजी हैं तथा समवसरण की रचना है जो सोनगढ़ और अजमेर के समवसरण को देखकर बनायी गयी है। तदुपरान्त यहाँ छोटे से पहाड़ पर जिनमन्दिर हैं, पहाड़ चढ़ने में लगभग बीस मिनिट लगते हैं; कुम्भोज में दूसरे भी जिनमन्दिर हैं।

कोल्हापुर (माघ शुक्ल १२) यहाँ छह जिनमन्दिर हैं।

स्तवनिधि होकर बेलगाँव (माघ शुक्ल १२) स्तवनिधि में पार्श्वप्रभु इत्यादि के प्राचीन प्रतिमाजी तथा मुनियों के निवास स्थान जैसी गुफाएँ हैं। बेलगाँव में छह जिनमन्दिर हैं; नेमिनाथ प्रभु की अति मनोज्ञ प्रतिमा है।

हुबली (माघ शुक्ल १४-१५) यहाँ अनेक जिनमन्दिर हैं।

जोगफोल्स होकर सागर (फाल्गुन कृष्ण १) जोगफोल्स में पानी के प्राकृतिक प्रपात हैं।

हुमच (फाल्गुन कृष्ण २-३) यहाँ तालाब किनारे पाँच प्राचीन मन्दिर हैं, छोटी सी पहाड़ी पर एक मन्दिर में बाहुबली भगवान की प्राचीन प्रतिमा सुन्दर है।

कुन्दनगिरि - कुन्दकुन्द पर्वत (यात्रा फाल्गुन कृष्ण ३) दक्षिण यात्रा में यह पहला तीर्थ आया। यहाँ घनी झाड़ियों से रमणीय कुन्दकुन्द पर्वत है; पर्वत की चढ़ाई लगभग तीन मील है। आधे तक निर्मित रास्ता है, पश्चात् झाड़ी के बीच पगडण्डी का रास्ता है। इस पर्वत पर कुन्दकुन्द प्रभु की तपोभूमि तथा निर्वाणभूमि है। वहाँ पापविध्वंसक कुण्ड के किनारे कुन्दकुन्दाचार्यदेव के प्राचीन चरण-कमल हैं; एक पुराना जिनमन्दिर तथा मानस्तम्भ इत्यादि है। पर्वत के ऊपर का दृश्य बहुत रमणीय और शान्त है।

जैसे पूर्व में बिहार प्रान्त यह मुख्यरूप से तीर्थंकरों की विहारभूमि है, वैसे दक्षिण प्रान्त यह मुख्यरूप से मुनिवरों के विहार की भूमि है। भगवान महावीर के पश्चात् अमुक वर्ष में उत्तर में जब बारह वर्ष का भीषण दुष्काल पड़ा था, तब भद्रबाहुस्वामी की अगुवाई में १२००० मुनिवर दक्षिण की ओर विहार कर गये थे... दक्षिण प्रान्त में शिलालेख इत्यादि में जगह-जगह मुनिवरों के विहार के

संस्मरण भरे हुए हैं और ताड़पत्र पर लिखे हुए प्राचीन शास्त्र भी दक्षिण प्रान्त में जगह-जगह दृष्टिगोचर होते हैं। ऐसे दक्षिण प्रान्त की यात्रा में सबसे पहले परम गुरुश्री कुन्दकुन्दाचार्य प्रभु के पवित्र चरणों से पावन हुई भूमि कुन्दकुन्दगिरि की यात्रा होगी। यात्रा के मुख्य तीर्थों में से यह सबसे पहला तीर्थ है। यहाँ की यात्रा करके वापस हुमच जाना है और हुमच से फिर वरांग जाना है।

वरांग (फाल्गुन कृष्ण ५) यहाँ १७ जिनमन्दिर हैं। तालाब के बीच एक रमणीय जिनमन्दिर है, उसमें चारों ओर खड्गासन भगवन्त दर्शनीय है। इस मन्दिर में दर्शन करने के लिये छोटी सी नौका में बैठकर जाया जाता है। यहाँ दर्शन करके कारकल की ओर जाना है।

कारकल (फाल्गुन कृष्ण ५) यहाँ १७ जिनमन्दिर हैं; लगभग ६० फीट उन्नत (एक ही पत्थर का) मानस्तम्भ है। एक छोटे से रमणीय पर्वत पर बाहुबली भगवान की ४१ फीट उन्नत भव्य प्रतिमाजी विराजमान हैं। पर्वत के ऊपर जाने में लगभग १० मिनिट लगते हैं। इसके पास के एक ही दूसरे पर्वत पर एक चौमुखी मन्दिर है, जो कि बहुत शान्त है और उसमें चारों दिशा में छह फीट के तीन-तीन भगवन्तों की त्रिपुटी अति मनोज्ञ और उपशान्त है। ये प्रतिमाएँ 'कसौटी' की हैं। मन्दिर की कारीगरी-कला भी उत्तम है। कारकल के पश्चात् अब आता है अपना यात्रा का दूसरा महान क्षेत्र मूलबिद्री।

मूलबिद्री (फाल्गुन कृष्ण ५ से ८) यहाँ के अति महत्त्व के आकर्षणों में एक तो रत्नमय जिनबिम्बों के दर्शन; दूसरा ताड़पत्र पर लिखे हुए सिद्धान्तशास्त्र; और तीसरा 'त्रिभुवनतिलकचूड़ामणि' मन्दिर। दूसरे बिहार प्रान्त में मुख्य तीर्थ—सम्मेदशिखर, राजगिरि और पावापुरी, इसी प्रकार दक्षिण प्रान्त के तीर्थों में सबसे मुख्य दो तीर्थ—एक तो श्रवणबेलगोला के बाहुबली भगवान; (जो अब बाद में आयेगा) और दूसरा यह मूलबिद्री। यहाँ लगभग २० जिनमन्दिर हैं, अनेक मानस्तम्भ तथा धर्मध्वज हैं। मन्दिरों में दो मन्दिर अति प्रसिद्ध हैं, एक 'त्रिभुवनतिलकचूड़ामणि' है। इसे एक हजार स्तम्भ थे। करोड़ों रुपयों के खर्च से निर्मित इस मन्दिर में अकृत्रिम चैत्यालयों की भाँति प्रेक्षागृह, सभामण्डप इत्यादि हैं, उनमें पंच धातु के

पाँच फीट उन्नत अति भव्य चन्द्रप्रभु के प्रतिमाजी हैं। तीसरी मंजिल पर स्फटिक की जिनप्रतिमाओं का दरबार है। दूसरे मुख्य मन्दिर का नाम 'सिद्धान्त भवन' अथवा तो 'गुरुवस्ती' है। चाँदी-सोना, हीरा-माणिक, पन्ना-नीलम-स्फटिक-वैडुर्यरत्न-गरुडमणि इत्यादि विधविध रत्नों के अति महिमावन्त जिनबिम्ब इस जिनमन्दिर में विराजमान हैं, इसके अति दुर्लभ दर्शन करते ही भक्तों के हृदय में भक्ति उभरती है और नेत्रों में से आनन्दरस झरने लगता है। इस मन्दिर में मूलनायक पार्श्वनाथ भगवान की दस फीट उन्नत भव्य प्रतिमा विराजमान है। तदुपरान्त ताड़पत्र पर लिखे हुए प्राचीन सिद्धान्तशास्त्र (षट्खण्डागम—धवल—महाधवल-जयधवल इत्यादि) भी इस मन्दिर में विराजमान हैं। ये शास्त्र कन्नड़ लिपि (भाषा संस्कृत-प्राकृत) में लिखे हुए हैं। मोक्षमार्गप्रकाशक में पण्डित टोडरमलजी ने लिखा है कि 'दक्षिण में गोम्मटस्वामी के निकट मूलबिद्रीनगर में श्री धवल-महाधवल-जयधवल ग्रन्थ अभी हैं, परन्तु वे दर्शनमात्र ही हैं।'—इस प्रकार टोडरमलजी साहब ने जिसका उल्लेख किया है, उनके साक्षात् दर्शन अपने को पूज्य गुरुदेव के साथ होंगे। यहाँ मात्र संक्षिप्त परिचय ही किया जाना है, इसलिए विशेष नहीं लिखते हैं। यात्री एक सूचना ध्यान में रखे कि यहाँ के गहरे-गहरे प्राचीन मन्दिरों के दर्शन करने जाते समय (इनमें भी) बैटरी या मोमबत्ती इत्यादि साधन साथ में ले जाना है।

वेणूर तथा हलेबिडु (फाल्गुन कृष्ण ९) वेणूर में अनेक जिनमन्दिर हैं तथा एक सुन्दर चौक में बाहुबली भगवान के लगभग ३७ फीट उन्नत भव्य प्रतिमाजी विराजमान है। हलेबिडु में प्राचीन जिनमन्दिर हैं, उसमें कसौटी पाषाण के एक स्तम्भ की शिल्पकला दर्शनीय है। दो मन्दिरों में १४-१४ फीट उन्नत कृष्ण पाषाण के अति उपशान्त पार्श्वनाथ और शान्तिनाथ भगवन्त विराजमान हैं। पहले यहाँ ७२० जिनमन्दिर थे; होटसलेश्वर मन्दिर की कारीगरी सर्वोत्तम गिनी जाती है।

अब आता है अपनी दक्षिण यात्रा के अगग्रण्य श्री बाहुबली भगवान.... कहाँ? श्रवणबेलगोल में।

श्रवणबेलगोल (फाल्गुन कृष्ण ९ से १२) यह श्रवणबेलगोल दो ओर इन्द्रगिरि तथा चन्द्रगिरि ऐसे दो रमणीय मनोहर पर्वतों और बीच में सुन्दर कल्याणी-सरोवर से

शोभित हो रहा है। एक पर्वत पर बाहुबली और दूसरे पर भरतजी दोनों आमने-सामने मानो कि आत्मानुभव की बातें करते ये खड़े हों! ऐसे शोभित हो रहे हैं।

इस श्रवणबेलगोल को 'जैनबिद्री' अथवा तो 'दक्षिण का काशी' भी कहा जाता है। ऐतिहासिक दृष्टि से भी यहाँ की प्रतिमाएँ तथा शिलालेख इत्यादि के कारण यह स्थान अति महत्त्व का है। अपने समयसार में श्री कुन्दकुन्दाचार्यदेव की महिमा सम्बन्धी प्रकाशित श्लोक (वंधो विभुर्भुवि न केरिह कौण्डकुंद.... इत्यादि श्लोक) भी यहीं के पर्वत के ऊपर के शिलालेख से ही प्राप्त हुए हैं। ऐसे इस अतिशय क्षेत्र में इन्द्रगिरि (अर्थात् विन्ध्यगिरि, बड़ी पहाड़ी) पर श्री बाहुबली भगवान की ५७ फीट उन्नत अति भव्य विश्व प्रसिद्ध प्रतिमा विराजमान है। यह प्रतिमा इस दुनिया की नौवीं आश्चर्यकारी वस्तु में गिनी जाती है, वस्तुतः नौवीं नहीं परन्तु सबसे पहली और सबसे महान आश्चर्यकारी वस्तु यह है। आधुनिक दुनिया में एक ही पत्थर में से उत्कीर्ण इतनी विशाल प्रतिमाजी अन्यत्र कहीं नहीं है। अहा! पर्वत के शिखर पर अडोल ध्यान में खड़े हुए इन बाहुबली भगवान की मुद्रा पर तैरते परम वैराग्य... शान्ति... अडोल पुरुषार्थ, महान धैर्य... प्रसन्नता... पूरे संसार के प्रति उदासीनता और आत्मिक आनन्द की तृप्तता... इत्यादि गम्भीर भावों का ख्याल तो साक्षात् नैनों से निहारनेवाले को ही आता है.... अडोलरूप से मोक्ष को साधनेवाले ये ध्यानस्थ वीर, मुमुक्षु दर्शकों को मौनरूप से भी मोक्षमार्ग का पावन सन्देश सुना रहे हैं। भारत के बड़े प्रधान (प्रधानमन्त्री) पण्डित नेहरु, और विदेशी प्रवासी इत्यादि भी इस प्रतिमा के दर्शन से आश्चर्यमुग्ध बन गये थे। आधुनिक विश्व में सबसे ऊँची यह प्रतिमा स्वयं मानो कि सम्पूर्ण विश्व को जैनधर्म का पवित्र सन्देश सुना रही है। (थोड़ा लिखा बहुत पढ़ना और नजरों से निहारना)

इस इन्द्रगिरि पर्वत पर दूसरे भी कितने ही मन्दिर हैं, अनेक खड्गासन भगवन्त गणधरदेव के नाजुक चरण-कमल, तथा पर्वत के विशाल शिलाओं में जिनबिम्ब और शिलालेख उत्कीर्ण हैं। पर्वत बहुत मनोहर है, और चढ़ने में बीस मिनिट लगते हैं, चढ़ाई सरल है।

सामने के चन्द्रगिरि पर्वत पर अनेक जिनमन्दिरों के उपरान्त अति महत्त्वपूर्ण प्राचीन शिलालेख पर्वत में ही उत्कीर्ण हैं तथा भद्रबाहुस्वामी गुफा है, उसमें उनके

पवित्र चरण-कमल स्थापित हैं। पर्वत चढ़ने में लगभग पन्द्रह मिनिट लगते हैं। तदुपरान्त नीचे गाँव में भी अनेक जिनमन्दिर हैं। कितने ही मन्दिरों की प्राचीन कारीगरी अद्भुत है। पास में ही (लगभग एक मील पर) 'जिननाथपुर' गाँव में भी प्राचीन जिनमन्दिर हैं, जिसमें शान्तिनाथ भगवान का कलामय मन्दिर दर्शनीय है, दूसरे मन्दिर में सप्तफणी पार्श्वनाथ प्रतिमा है।

म्हैसुर (फाल्गुन कृष्ण १२-१३) यहाँ का वृन्दावन बाग तथा रोशनी प्रसिद्ध है। मलयागिरि चन्दन की उत्पत्ति का यह केन्द्र है, तथा थोड़े दूर कृष्णराज सागर नामक रमणीय विशाल सरोवर है।

गोम्मटगिरि—यहाँ एक छोटी पहाड़ी पर विराजमान १५ फीट उन्नत चित्ताकर्षक बाहुबली भगवान के दर्शन करके वापस मैसूर जाना है।

बैंगलोर (फाल्गुन कृष्ण १४ तथा अमावस्या) यहाँ एक विशाल जिनमन्दिर है। बैंगलोर से लगभग ३० मील पर कोलर की सोने की खानें है।

चित्तूर (फाल्गुन शुक्ल १)

तिरुमले (फाल्गुन शुक्ल २) यहाँ एक सुन्दर पहाड़ पर अनेक जिनमन्दिर हैं, एक गुफा है। इसमें विशाल प्राचीन प्रतिमा विराजमान है। तथा श्री वृषभसेन गणधर के चरण-पादुका भी हैं। लगभग आधे घण्टे की चढ़ाई है। पर्वत पर नेमिनाथ प्रभु की अति मनोहर १६ फीट की प्रतिमा है।

मद्रास (फाल्गुन शुक्ल २ से ७) यहाँ एक जिनमन्दिर है तथा म्यूजियम में अनेक प्राचीन जिन प्रतिमाएँ हैं। विशाल समुद्र किनारा दर्शनीय है।

पौन्नूर (फाल्गुन शुक्ल ५) 'पौन्नूर' का अर्थ होता है—'स्वर्ण का पर्वत।' यहाँ कुन्दकुन्दाचार्यदेव की तपोभूमि है और पर्वत पर एक सुन्दर चम्पावृक्ष के नीचे आचार्यदेव के चरण-कमल विराजमान हैं। पर्वत पर चढ़ने में लगभग पन्द्रह मिनिट लगते हैं।

कांजीवरम (फाल्गुन शुक्ल ५) स्वामी समन्तभद्राचार्य की निवासभूमि है। वहाँ के दर्शन करके वापस मद्रास आना है।

मद्रास तक के यात्री यहाँ से दिनांक १६-३-५९ फाल्गुन शुक्ल सप्तमी के दिन मुम्बई की ओर वापस मुड़ेंगे और दिनांक २१ को मुम्बई पहुँचेंगे और बाकी का यात्री समूह पूज्य गुरुदेव के साथ आगे जायेगा।

नेल्लोर, बेझवाड़ा (फाल्गुन शुक्ल ७-८)—

हैदराबाद (फाल्गुन शुक्ल ९ से ११) यहाँ लगभग छह जिनमन्दिर हैं।

कुलपाकक्षेत्र (फाल्गुन शुक्ल १२) एक प्राचीन मन्दिर में हरे रंग के आदिनाथ भगवान विराजते हैं। जिन्हें 'माणिकस्वामी' कहते हैं।

सोलापुर (फाल्गुन शुक्ल १२-१३-१४) पाँच जिनमन्दिर हैं।

उस्मानाबाद-कलिकुंड (फाल्गुन शुक्ल १५) नगर से दो-तीन मील दूर धाराशिवकी गुफाओं में अनेक जिनबिम्ब हैं।

कुन्थलगिरि सिद्धक्षेत्र (फाल्गुन शुक्ल १५ से चैत्र कृष्ण २) देशभूषण और कुलभूषण मुनिवर यहाँ से मोक्ष प्राप्त हुए हैं। प्राकृतिक सौन्दर्य से सुशोभित छोटे से पर्वत पर दस जिनमन्दिर हैं, देशभूषण-कुलभूषण भगवन्तों के चरण-पादुका हैं; एक मन्दिर में भोंयरा है। पर्वत की चढ़ाई सरल है।

औरंगाबाद (चैत्र कृष्ण ३-४) छह मन्दिर हैं; एक विशाल मन्दिर में भोंयरा है और सैकड़ों प्रतिमाएँ हैं। यहाँ से डेढ़ मील दूर गोमापुरा है, वहाँ प्राचीन प्रतिमाएँ हैं, छोटे से पर्वत पर अनेक गुफाएँ और प्रतिमाएँ हैं।

इलोरा की गुफाएँ (चैत्र कृष्ण ४) मूल पर्वत को ही खोदकर गुफा-मन्दिर बनाये हुए हैं.... नम्बर ३० से ३४ तक के जैन गुफा-मन्दिर हैं.... गुफा मन्दिरों का वातावरण अति गम्भीर-उपशान्तरस से भरपूर है, मुनियों के निवासधाम जैसा है। एक साथ हजारों लोग रह सकें, इतनी विशाल गुफाएँ हैं। मन्दिर की विशाल प्रतिमाएँ भी पर्वत में से ही उत्कीर्ण हैं। 'कैलाशमन्दिर' इत्यादि का दृश्य अद्‌भुत-आश्चर्यकारी है; पर्वत की टोंच पर एक बहुत विशाल प्रतिमा (शत्रुंजय के अदबदनाथ जैसी) पार्श्वप्रभु विराजमान हैं।

अजन्ता की गुफाएँ (चैत्र कृष्ण ५) यहाँ एक पर्वत में से खोदी हुई गुफाएँ दर्शनीय हैं।

गुफा नम्बर १३ में जैनसंघ का चित्र है; गुफा नम्बर ३३ में बायें हाथ की ओर जैनमूर्ति उत्कीर्ण है।

जलगाँव (चैत्र कृष्ण ५-६)

मलकापुर (चैत्र कृष्ण ६-७)

बलदाणा-शेरपुर-अन्तरीक्ष पार्श्वनाथ (चैत्र कृष्ण ९) शेरपुर में धर्मशाला के बीच एक बड़ा प्राचीन मन्दिर है, उसमें बहुत प्रतिमाएँ हैं; उसमें से एक पार्श्वनाथ भगवान की प्रतिमा का बहुत कुछ भाग वेदी से अधर रहता होने से वह 'अन्तरीक्ष पार्श्वनाथ' रूप से प्रसिद्ध है। उसके पूजनादि के लिये श्वेताम्बर तथा दिगम्बर के तीन-तीन घण्टे के नम्बर हैं। तदुपरान्त दूसरा एक प्राचीन दिगम्बर जिनमन्दिर है।

कारंजा (चैत्र कृष्ण १०) यहाँ तीन जिनमन्दिर हैं तथा ब्रह्मचर्य आश्रम है; ब्रह्मचर्य आश्रम के चैत्यालय में चाँदी-सोना-स्फटिक-मूँगा-नीलमणि तथा गरुडमणि की प्रतिमाएँ विराजमान हैं।

ऐलिचपुर (चैत्र कृष्ण ११)

मुक्तागिरि सिद्धक्षेत्र (चैत्र कृष्ण ११-१२) जंगल और पर्वत में आये हुए इस क्षेत्र से साढ़े तीन करोड़ मुनि मोक्ष पधारे हैं। एक छोटा-सा पहाड़ है, उसके ऊपर गुफाओं में प्रतिमाएँ हैं... लगभग तीस मनोज्ञ मन्दिरों से पर्वत शोभित हो रहा है। एक मन्दिर 'मेंढगिरि' नाम से प्रसिद्ध है, उसमें शान्तिनाथ प्रभु की दस फीट की प्रतिमा अति मनोहर है... मन्दिर के निकट ही २०० फीट की ऊँचाई से पानी की धारा बरसती है। उस क्षेत्र के नाम के सम्बन्ध में ऐसी कथा प्रचलित है कि यहाँ मुनि ने सुनाये हुए नमस्कार मन्त्र के प्रभाव से एक मेढ़ा देव हुआ था। उसने यहाँ मुक्ता (मोती) की वृष्टि की थी, इसलिए इस क्षेत्र का नाम मुक्तागिरि अथवा मेढगिरि पड़ गया।

अमरावती-भातकुली (चैत्र कृष्ण १३) अमरावती में अनेक जिनमन्दिर हैं। एक प्राचीन मन्दिर में विधविध रत्न प्रतिमाएँ हैं। भातकुली में तीन विशाल मन्दिर हैं और विशाल प्राचीन प्रतिमाएँ हैं। कितनी ही प्रतिमाएँ चौथे काल की गिनी जाती हैं।

नागपुर (चैत्र कृष्ण १४ तथा अमावस्या) यहाँ अनेक जिनमन्दिर हैं।

खैरागढ़राज (चैत्र शुक्ल २) शहर से थोड़े दूर रामटेक पर्वत की तलहटी में जंगल है, उसमें दसैक जिनमन्दिर हैं। अगल-बगल दो मूर्तियों सहित शान्तिनाथ प्रभु की १५ फीट उन्नत प्रतिमा अति सुन्दर है। रामगिरि पर्वत पर रामचन्द्रजी इत्यादि ने देशभूषण-कुलभूषण मुनिराज की भक्ति की थी और अनेक मन्दिरों का निर्माण किया था। वह रामटेक यही होगा, ऐसा अनुमान होता है।

सिवनी (चैत्र शुक्ल ३) यहाँ दो जिनमन्दिर हैं; एक उन्नत मन्दिर में १३ वेदियाँ हैं।

जबलपुर-मढियाजी (चैत्र शुक्ल ४-५) जबलपुर में ४६ जिनमन्दिर हैं। छह मील दूर नर्मदा नदी का प्रपात है, उसके निकट में 'मढियाजी' नाम का एक जैनमन्दिर है। उसमें अति प्राचीन दो मेरु हैं और अनेक प्रतिमाएँ हैं।

दमोह (चैत्र शुक्ल ६) यहाँ पाँच विशाल मन्दिर हैं।

कुण्डलपुर (चैत्र शुक्ल ७) यहाँ कुण्डल-आकार के पर्वत पर तथा तलहटी में कुल ५९ मन्दिर हैं। मुख्य मन्दिर में महावीर भगवान की दस फीट की प्राचीन प्रतिमा विराजमान है, जो पहाड़ में ही उत्कीर्ण है।

सागर (चैत्र शुक्ल ८-९-१०) यहाँ ३७ जिनमन्दिर हैं और एक विशाल सरोवर है।

नैनांगिरि सिद्धक्षेत्र (चैत्र शुक्ल ११) यहाँ से वरदत्त आदि अनेक मुनिवर मोक्ष पधारे हैं; पार्श्वप्रभु का समवसरण यहाँ आया था। रेशंदीगिरि पर्वत पर २५ जिनमन्दिर हैं। पास में एक तालाब के बीच में मन्दिर है। गाँव में सात मन्दिर हैं।

द्रोणगिरि सिद्धक्षेत्र (चैत्र शुक्ल १२-१३-१४) यहाँ से श्री गुरुदत्त आदि मुनिवर मोक्ष प्राप्त हुए हैं पर्वत पर २६ मन्दिर और ६० प्रतिमाएँ हैं; पास में एक गुफा है, जो वरदत्त आदि मुनिवरों का निर्वाणस्थान माना जाता है। श्री महावीर प्रभु के जन्मकल्याणक का दिन इस द्रोणगिरि में मनाया जाएगा।

छतरपुर (चैत्र शुक्ल १५)

खजराहा (चैत्र शुक्ल १५) यहाँ २५ प्राचीन जिनमन्दिर हैं। शान्तिनाथ भगवान की विशाल प्रतिमा तथा मन्दिरों की कारीगरी दर्शनीय है।

टीकमगढ़ (चैत्र शुक्ल १५) यहाँ सात जिनमन्दिर हैं।

पपौराजी (वैशाख कृष्ण २) टीकमगढ़ से तीन मील दूर यह रमणीय तीर्थ है; वहाँ ८० जिनमन्दिर हैं।

आहार (वैशाख कृष्ण ३) यहाँ एक सरोवर के बगल में तीन पर्वत हैं। उन पर अनेक प्राचीन जिनमन्दिर हैं। पाणाशाह नामक श्रावक ने एक मासोपवासी मुनिराज को यहाँ आहारदान किया था, इसीलिए इस क्षेत्र का नाम 'आहारक्षेत्र' पड़ा है। आहारदान का अतिशय होने से उस पाणाशाह श्रावक ने यहाँ जिनमन्दिर बनाये थे। अठारह फीट उन्नत अति प्रशान्त श्री शान्तिनाथ भगवान खास दर्शनीय है। प्राचीन मूर्तियों का संग्रह स्थान भी यहाँ है। चक्रवर्ती तीर्थंकर त्रिपुटी की प्रतिमा भी अति मनोज्ञ है।

ललितपुर (वैशाख कृष्ण ३-४) यहाँ अनेक रमणीय जिनमन्दिर हैं, प्रत्येक मन्दिर में बहुत वेदियाँ हैं और विशाल प्रतिमाएँ हैं।

देवगढ़ (वैशाख कृष्ण ४) पहाड़ पर लगभग ४५ जिनमन्दिर हैं। शान्तिनाथ प्रभु की विशाल प्रतिमा दर्शनीय है। इस देवगढ़ को उत्तर भारत का जैनबिद्री कहा जाता है। पर्वत में मुनिवरों इत्यादि की भाववाही प्रतिमाएँ हैं; यहाँ जिनबिम्बों का इतना विशाल मेला है कि उसके लिये कहा जाता है कि चावल की पूरी बोरी भरी हो और प्रत्येक जिनबिम्ब के चरण में एक-एक चावल का दाना चढ़ाया हो तो भी वह चावल समाप्त हो जाते हैं।

चन्देरी (वैशाख कृष्ण ५) यहाँ प्राचीन मन्दिर हैं; एक मन्दिर में चौबीस तीर्थंकरों के रंग प्रमाण तीन-तीन फीट की प्रतिमाएँ अति भाववाही है। यहाँ से एक मील दूर 'खन्दारगिरि' पर्वत है, उसमें विशाल-विशाल प्रतिमाएँ उत्कीर्ण हैं। ऊपर गुफाओं में भी भाववाही जिनबिम्ब उत्कीर्ण हैं। बूढ़ी चन्देरी में अतिशय कलावन्त प्राचीन प्रतिमाएँ और मन्दिर दर्शनीय हैं।

थुबौनजी (वैशाख कृष्ण ५) यहाँ पच्चीस जिनमन्दिर हैं। यहाँ की प्रतिमाएँ सादी कारीगरी की हैं। एक मन्दिर में लगभग पच्चीस फीट की प्रतिमा आदिनाथ भगवान की है; तदुपरान्त 'थुबौनजी' में सोलह मन्दिर हैं, उनमें दस-पन्द्रह फीट की अनेक खड्गासन प्रतिमाएँ हैं।

शिवपुरी (वैशाख कृष्ण ६) यहाँ मन्दिर हैं, तथा थोड़े दूर छतरियाँ, बानगंगा इत्यादि दर्शनीय हैं।

बारां (वैशाख कृष्ण ६) एक जिनमन्दिर में मनोज्ञ प्रतिमाएँ हैं। यहाँ से थोड़े दूर जंगल में एक देहरी में चरणपादुका है, जो कुन्दकुन्दाचार्यदेव के, माने जाते हैं।

चाँदखेड़ी (वैशाख कृष्ण ७) यहाँ भोंयरा में प्राचीन मन्दिर है, जिसमें सैकड़ों प्रतिमाएँ हैं; पाँच-सात फीट की मनोज्ञ प्रतिमाएँ हैं।

कोटा (वैशाख कृष्ण ८-९-१०) यहाँ अनेक जिनमन्दिर हैं।

चित्तौड़ (वैशाख कृष्ण ११) यहाँ का प्राचीन किला तथा दिगम्बर जैन का बनाया हुआ ८० फीट उन्नत कीर्तिस्तम्भ इत्यादि दर्शनीय है... कीर्तिस्तम्भ में जैनमूर्तियाँ भी उत्कीर्ण हैं।

केसरियाजी (वैशाख कृष्ण १२) नदी किनारे प्राचीन मन्दिर में आदिनाथ प्रभु की प्रतिमा विराजमान है। दूसरी भी अनेक प्रतिमाएँ हैं।

उदयपुर (वैशाख कृष्ण १२-१३-१४) यहाँ आठ जिनमन्दिर हैं।

फतेहपुर (वैशाख कृष्ण अमावस्या-वैशाख शुक्ल १ तथा २) पूज्य गुरुदेवश्री की जन्मजयन्ती का ७०वाँ उत्सव यहाँ मनाया जाएगा। जन्मोत्सव मनाने के बाद शाम को प्रस्थान करके संघ ईडर आयेगा।

ईडर (वैशाख शुक्ल ३-४) यहाँ दो पर्वत हैं, एक पर्वत पर जिनमन्दिर है; दूसरे पर्वत पर श्रीमद् राजचन्द्रजी की ध्यानभूमि (सिद्धशिला) है। पर्वत के दृश्य मनोज्ञ हैं। ईडर शहर में भी जिनमन्दिर हैं।

सोनासण (वैशाख शुक्ल ५) **तलोद** (वैशाख शुक्ल छठवीं पहली तथा दूसरी) **रखियाल** (वैशाख शुक्ल ७) **देहगाम** (वैशाख शुक्ल ९) **कलोल** (वैशाख शुक्ल १०) इन पाँचों ही गाँवों में संघ पूर्व दिन शाम को पहुँच जाएगा।

सोनगढ़ (वैशाख शुक्ल ११) सुप्रभात में स्वर्णपुरी में प्रवेश।

श्री जिनबिम्ब प्रतिष्ठा और मंगल तीर्थयात्रा के निमित्त

पूज्य गुरुदेव का मंगल प्रस्थान

दक्षिण के तीर्थधामों की मंगल यात्रा के निमित्त तथा मुम्बई नगरी के पंच कल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव के निमित्त परम प्रभावी पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी ने सोनगढ़ से पौष शुक्ल छठवीं के दिन मंगल प्रस्थान किया। सवेरे ५ बजे पूज्य गुरुदेव ने अति भावभीने चित्त से देवाधिदेव श्री सीमन्धरनाथ इत्यादि भगवन्तों के दर्शन किये.... भक्त मण्डल ने मंगल गीतपूर्वक स्वाध्यायमन्दिर को प्रदक्षिणा करके गुरुदेव के दर्शन-स्तुति की। भक्तों ने मंगल यात्रा की सफलता की भावना भायी, तत्पश्चात् 'ॐ सहज आत्मस्वरूप' ऐसे हस्ताक्षर और स्मरणपूर्वक गुरुदेव ने स्वाध्यायमन्दिर से मंगल प्रस्थान किया.... 'मंगलवर्धिनी' मोटर के पास खड़े रहकर मांगलिक सुनाया... स्वयं मन में पंच परमेष्ठी भगवन्तों का स्मरण किया.... और अन्त में मानस्तम्भ पर विराजमान सीमन्धर प्रभु को वन्दन करके भावभीने चित्त से विदा लेकर मोटर में विराजमान हुए... और मंगलनाद करती हुई 'मंगलवर्धिनी' मंगलकार्य के लिये मंगलस्वरूप गुरुदेव को लेकर सोनगढ़ से रवाना हुई...

'मंगलवर्धिनी' के पीछे-पीछे थोड़ी ही देर में पूज्य बहिनश्री-बहिन की मोटर 'तीर्थगामिनी' भी जय-जयकारपूर्वक रवाना हुई।

पावागढ़ सिद्धक्षेत्र की यात्रा

धन्धुका, अहमदाबाद और पालेज होकर पूज्य गुरुदेव पौष शुक्ल अष्टमी के दिन पावागढ़ पधारे... भक्तों ने उमंग से स्वागत किया। दोपहर को प्रवचन तथा जिनमन्दिर में भक्ति हुई, रात्रि को चर्चा हुई थी।

यहाँ पावागढ़ सिद्धक्षेत्र से रामचन्द्रजी के दो पुत्र (लव-कुश) तथा लाटदेश के राजा और पाँच करोड़ मुनिवर सिद्धि को प्राप्त हुए हैं... पर्वत के ऊपर लगभग ६० जिनमन्दिर तथा लव-कुश मुनिवरों के चरणपादुका हैं। तलहटी में भी दो जिनमन्दिर, मानस्तम्भ इत्यादि हैं.. पौष शुक्ल ९ को रविवार के दिन सवेरे साढ़े पाँच बजे लगभग ४०० यात्रियों सहित पूज्य गुरुदेव ने पावागढ़ सिद्धक्षेत्र की यात्रा शुरु की....

अनन्त सिद्ध भगवन्तों की जय...

पंच परमेष्ठी भगवन्तों की जय...
रत्नत्रय आराधक सन्तों की जय...
रत्नत्रयमार्ग प्रकाशक गुरुदेव की जय....

— इत्यादि जय-जयकारपूर्वक गुरुदेव के पदचिह्नों पर सैकड़ों यात्री सिद्धिधाम की ओर चलने लगे... मार्ग में पूज्य बहिनश्री-बहिन विध-विध प्रकार की भक्ति गवा कर, गुरुदेव के साथ ही अपूर्व तीर्थयात्रा का आनन्द व्यक्त करती थीं... गुरुदेव के साथ आनन्द की इस यात्रा की महिमा करते-करते, पर्वत के ऊपर सात गढ़ लांघकर सिद्धिधाम में पहुँचे... बीच में तीन जिनमन्दिरों के दर्शन करके शिखर ऊपर के बड़े मन्दिर में आये... वहाँ से जिनमन्दिरों के दर्शन करके पार्श्वनाथ प्रभु के मन्दिर में गुरुदेव ने 'जंगल बसाव्युं रे जोगी....' यह भक्ति करायी... वैराग्यरस में झूलते-झूलते, नये-नये शब्द बदलकर गुरुदेव ने बहुत भावभीनी भक्ति भायी।

तत्पश्चात् गुरुदेव सहित सर्व यात्रियों ने उल्लासपूर्वक निम्न पूजन की—

पावागढ़ वन्दो, मन आनन्दो,
भवदुःख खंदो, चित्त धारी;
मुनि पाँच जु कोडं, भवदुःख छोडं,
शिखमुख जोडं, सुख भारी॥

भक्ति-पूजन के पश्चात् लव-कुश मुनिराज के चरणपादुका के समीप पूज्य बहिनश्री-बहिन ने थोड़ी देर भक्ति करायी —

धन्य लवकुश मुनि आतम हित में छोड़ दिया परिवार.....
- कि तुमने छोड़ा सब घरबार।

भक्ति के पश्चात् गुरुदेव ने तीर्थ के आसपास के वातावरण का अवलोकन किया.... इस प्रकार गुरुदेव के साथ आनन्दपूर्वक तीर्थयात्रा करके उल्लास से भक्ति गीत गाते-गाते सब नीचे आये... और पहले-पहले सिद्धक्षेत्र की मंगल यात्रा पूरी हुई...

पावागढ़ सिद्धक्षेत्र से सिद्धि प्राप्त सिद्ध भगवन्तों को नमस्कार!

पावागढ़ सिद्धक्षेत्र की यात्रा करानेवाले गुरुदेव को नमस्कार!

पावागढ़ में पूज्य गुरुदेव दो दिन रहे। इन दो दिनों के दौरान संघ का भोजन बड़ोदरा के भाई श्री तथा सूरत के भाई श्री फावाभाई की ओर से हुआ था।

पावागढ़ से पूज्य गुरुदेव दाहोद पधारे। दाहोद के जैन समाज ने उत्साहपूर्वक गुरुदेव का स्वागत किया... लगभग २००० लोग गुरुदेव के प्रवचन का लाभ लेते थे तथा गुरुदेव को अभिनन्दन-पत्र अर्पण किया गया था। दाहोद में चार दिगम्बर जिनमन्दिर हैं, जिनमन्दिर में भक्तों की अतिशय भीड़ के बीच एक दिन भक्ति हुई थी तथा रात्रि में तत्त्वचर्चा होती थी। आसपास के गाँवों से भी अनेक लोग लाभ लेने आये थे। दाहोद में दो दिन रहकर पौष शुक्ल १२ के दिन पूज्य गुरुदेव बड़वानीजी सिद्धक्षेत्र (बावनगजा तीर्थ) पधारे। 'मंगलवर्धिनी' और 'तीर्थगामिनी' दोनों मोटरें साथ-साथ ही थीं; बीच में मच्छवा द्वारा नर्मदा पार करते हुए भक्तों को आनन्द हुआ। लगभग ११ बजे पहाड़ी और वन-जंगल को पार करके पर्वत के ऊपर की धर्मशाला में पधारे... और जिनमन्दिरों के दर्शन करके भोजन किया। सिद्धक्षेत्र के उपशान्त वातावरण में गुरुदेव को आहारदान करते हुए भक्तों को बहुत हर्ष हुआ। तत्पश्चात् लगभग एक बजे पूज्य गुरुदेव थोड़े से भक्तजनों सहित वाबनगजा-आदिनाथ प्रभु की यात्रा को पधारे... आनन्दपूर्वक भगवान के दर्शन करके, सब प्रभु चरणों के समीप बैठे और अर्घ्य चढ़ाकर पूजन की। तत्पश्चात् पूज्य बहिनश्री-बहिन ने भक्ति करायी... इस प्रकार तीर्थ के अति शान्त वातावरण में गुरुदेव के साथ घूमकर तीर्थ की यात्रा होने से भक्तों को बहुत प्रसन्नता हुई। यात्रा के बाद मानस्तम्भ चौक के अनेक जिनमन्दिरों के भक्तिपूर्वक दर्शन किये तथा चूलगिरि सिद्धक्षेत्र को अर्घ्य चढ़ाया। इस प्रकार गुरुदेव के साथ दूसरे सिद्धक्षेत्र की यात्रा आनन्दपूर्वक पूर्ण हुई। सायंकाल ५ बजे बढ़वानी से प्रस्थान करके शिवपुरी आये और वहाँ से शुक्ल १३ के सवेरे नासिक की ओर प्रस्थान किया। नासिक जाते हुए मार्ग में मांगीतुंगी सिद्धक्षेत्र के भी अति निकट से दर्शन होते थे... इस प्रकार गुरुदेव के साथ प्रतिदिन नये-नये सिद्धक्षेत्र के दर्शन से बहुत हर्ष होता था... नासिक में गजपंथा सिद्धिधाम के दर्शन हुए... इसकी तलहटी में जाकर जिनमन्दिर के तथा मानस्तम्भ आदि के दर्शन किये... गजपंथा सिद्धक्षेत्र को भी अर्घ्य चढ़ाया... इस प्रकार सोनगढ़ से निकलने के पश्चात् सात दिन में चार सिद्धक्षेत्रों के दर्शन हुए। नासिक शहर में एक दिगम्बर जिनमन्दिर है, उसके भी दर्शन किये।

पौष शुक्ल १४ के दिन नासिक से भीमंडी शहर पधारे। अपने आँगन में पूज्य गुरुदेव के पधारने पर सेठ श्री मगनलालभाई को बहुत हर्ष हुआ और उल्लासपूर्वक स्वागत किया... तथा संघजीमण किया... मंगल प्रवचन और भोजनादि के बाद पूज्य गुरुदेव ने वहाँ से प्रस्थान किया.... बीच में मुम्रा (Mumra) में प्रतिष्ठित होनेवाले बाहुबली भगवान की लगभग ३० फीट की भव्य प्रतिमाजी का अवलोकन किया.... तथा सेठ श्री भाईचन्द रूपचन्द के यहाँ (मील में) थोड़ी देर रुककर मांगलिक सुनाया... तत्पश्चात् पूज्य गुरुदेव घाटकोपर पधारे बीच में आते हुए अनेक परामे (उपनगर) तथा घाटकोपर में भक्तमण्डल ने गुरुदेव का स्वागत किया। पौष शुक्ल पूर्णिमा को पूज्य गुरुदेव शिव (sion) पधारे। भक्तमण्डल ने उल्लासपूर्वक स्वागत किया। भाईश्री सुमनभाई दोशी के यहाँ भोजनादि के बाद दोपहर में २.३० से ३.०० बजे प्रवचन करके पूज्य गुरुदेव 'खार' पधारे... वहाँ भक्तमण्डल ने स्वागत किया... तथा सेठ श्री जेठालाल संघजी के यहाँ गुरुदेव का भोजन हुआ। दूसरे दिन सवेरे आठ बजने पर यहाँ से प्रस्थान करके पूज्य गुरुदेव ने मुम्बई नगरी में प्रवेश किया।

पूज्य गुरुदेव मुम्बई नगरी में पधारने पर हजारों भक्तजनों ने धामधूम से उमंग भरा भव्य स्वागत किया... स्वागत प्रसंग में जगह-जगह नये-नये शृंगार से मुम्बई नगरी शोभित हो रही थी... स्वागत के दौरान बीच में जिनमन्दिर के दर्शन करके मुम्बादेवी प्लॉट में 'महावीर नगर' में रचित भव्य मण्डप में पधारकर पूज्य गुरुदेव ने मांगलिक सुनाया था। मुम्बई नगरी के मुमुक्षु बहुत ही उल्लासपूर्वक पंच कल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव की तैयारी कर रहे हैं। माघ शुक्ल एकम् से छठवीं तक पंच कल्याणक महोत्सव होगा, तत्पश्चात् माघ शुक्ल अष्टमी के दिन पूज्य गुरुदेव यात्री संघसहित मुम्बई नगरी से मंगल प्रस्थान करेंगे।

पूज्य गुरुदेव का मंगल प्रभावना उदय जयवन्त वर्तो!

मुम्बई नगरी में आयोजित अभूतपूर्व पंच कल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव

दक्षिण के तीर्थधाम श्री बाहुबलीजी आदि पवित्र तीर्थधामों की यात्रा निमित्त मुम्बई नगरी के पंच कल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव के निमित्त परम प्रभावी पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी ने सोनगढ़ से पौष शुक्ल ६ के रोज प्रस्थान किया और जहाँ पाँच करोड़ मुनिवर सिद्धि को प्राप्त हुए ऐसे सिद्धक्षेत्र श्री पावागढ़ तीर्थ की यात्रा करके मार्ग में नासिक शहर आदि स्थलों में होकर मुम्बई शहर में पौष शुक्ल १५ के दिन पधारने पर हजारों भक्तजनों ने पूज्य गुरुदेव का उमंग भरा जो स्वागत किया उसके समाचार 'आत्मधर्म' के पौष माह के अंक में दिये गये हैं।

मुम्बई के दिगम्बर जैन मुमुक्षु मण्डल द्वारा मुम्बादेवी प्लॉट में निर्माण किये गये भव्य दिगम्बर जिनमन्दिर में तीर्थंकर परम देव १००८ श्री नेमिनाथ भगवान के वीतराग भाव प्रतिपादक जिनबिम्ब की पंच कल्याणकपूर्वक प्रतिष्ठा महोत्सव के निमित्त...

मुम्बई नगरी का भव्य प्रतिष्ठा मण्डप

जहाँ अभूतपूर्व पंच कल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव मनाया और जहाँ १५-१५ हजार की लोगों की संख्या ने पूज्य गुरुदेव के श्रीमुख से जिनेश्वर भगवन्तों का पवित्र धर्मसन्देश सुना, पूज्य गुरुदेव पधारे थे इसलिए मुम्बई नगरी के मुमुक्षु पंच कल्याणक महोत्सव भव्य रीति से शोभित करने के लिये बहुत ही उल्लासपूर्वक तैयारी कर रहे थे और यह पंच कल्याणक महोत्सव ऐसे ही उल्लासपूर्वक मनाया गया। मुम्बई के नागरिकों ने

पूज्य गुरुदेव मुम्बई पधारे, और उनका भावभीना स्वागत किया गया। तत्पश्चात् सेठश्री खीमचन्दभाई, सेठश्री मणीभाई इत्यादि के वहाँ दिनांक २७-२-१९७७ के दिन पूज्य गुरुदेवश्री आहार के लिए पधारे। उस प्रसंग का दृश्य,

हजारों की संख्या में इस महोत्सव को आवकार दिया और उद्गार व्यक्त किये कि — धन्य यह पंच कल्याणक महोत्सव, धन्य यह गुरुदेव की मंगल वाणी, धन्य यह भक्तजनों का उल्लास और धन्य यह शुभ घड़ी कि जब पंच कल्याणकों की भव्य शोभायात्रा-महोत्सव निहारकर मुम्बई के नागरिक भी वाह-वाह पुकार उठे।

माघ शुक्ल १ से ६ तक पंच कल्याणक महोत्सव का मंगल कार्यक्रम आयोजित किया गया था।

धर्म भावना के इस मंगल प्रसंग में श्री दिगम्बर जैन मुमुक्षु मण्डल की ओर से प्रेषित किये गये आमन्त्रण को मान प्रदान कर अनेक भक्तजन बाहर गाँव से प्रसंग पर विशेषरूप से पधारे थे।

महोत्सव को शानदार बनाने के लिये भक्तों का उल्लास भी अपूर्व था। उसके लिये १५ हजार की लोगों की भीड़ पूज्य गुरुदेव के श्रीमुख से जिनेश्वर भगवन्तों का पावन धर्म सन्देश सुन सके तदर्थ श्री महावीर नगर की भव्य रचना की गयी थी, यह मुम्बई नगरी में महत्त्वपूर्ण आकर्षण हो गया था और लोगों ने पंच कल्याणक महोत्सव के विविध भाववाही सुन्दर दृश्य निहारने का अमूल्य लाभ लिया था।

महोत्सव के प्रारम्भ से पहले ही शान्तिजाप, झण्डारोहण की मंगल विधि सेठ श्री खीमचंदभाई के शुभहस्त से हजारों लोगों के बीच की गयी थी। पूज्य गुरुदेव के सान्निध्य

में जब जिनशासन का धर्मध्वज महावीर नगर में फहराया गया तब भक्तजनों के हृदय आनन्द से प्रफुल्लित हो गये थे और हृदय के उल्लासपूर्वक सबके दिल बोल रहे थे 'लहरायेगा... लहरायेगा... झण्डा श्री महावीर का।'

झण्डारोहण की मंगल-विधि करने के साथ जल यात्रा का भव्य महोत्सव भी माघ शुक्ल एकम से पहले मनाया गया था।

माघ शुक्ल एकम् रविवार को नांदीविधान, इन्द्रप्रतिष्ठा, इन्द्रों की शोभायात्रा, याज्ञमण्डल विधान और गर्भकल्याणक की पूर्व क्रिया की गयी थी। और माघ शुक्ल २ सोमवार को गर्भकल्याणक; मन्दिर-वेदी-कलश-ध्वजशुद्धि की गयी थी। माघ शुक्ल ३ मंगलवार को बाईसवें तीर्थंकर परमदेव १००८ श्री नेमिनाथ भगवान का जन्म कल्याणक महोत्सव मनाया गया था।

मुम्बई में अपनी रूकावट के दौरान पूज्यपाद गुरुदेव शीव में ( ) भाईश्री सुखलालभाई रामजीभाई के वहाँ पधारे थे। उस समय का दृश्य

इस मांगलिक प्रसंग पर जन्मकल्याणक की एक विराट शोभायात्रा निकाली गयी थी। शोभायात्रा में भगवान श्री नेमिनाथ को हाथी पर सौधर्म इन्द्र की गोद में विराजमान किया गया था। और इन्द्र-इन्द्राणियाँ शोभायात्रा में सम्मिलित थे।

भगवान श्री नेमिनाथ स्वामी के माता-पिता होने का अहोभाग्य मुमुक्षु मण्डल के प्रमुख श्री मणिलाल जेठालाल सेठ को प्राप्त हुआ था और उस उपलक्ष्य में उन्होंने अपना आनन्द व्यक्त करके अपनी ओर से रुपये १०००१ की रकम संस्था को अर्पण की थी।

डेढ़ मील लम्बी हाथी, इन्द्र-इन्द्राणी और हजारों मुमुक्षुओं से शोभित शोभायात्रा

कालबा देवी से गुजर रही थी तब हजारों मनुष्यों की भीड़ उसे देखने के लिये उमड़ पड़ी और ऐसी विराट शोभायात्रा प्रथम बार ही देखने के लिये अपने आपको धन्य मानती थी।

शहर के मुख्य भागों में घूमकर शोभायात्रा आजाद मैदान के निकट विशिष्टरूप से रचित सुमेरुपर्वत के पास आयी थी और वहाँ १००८ स्वर्ण तथा चाँदी के कलशों द्वारा महान जन्माभिषेक की क्रिया उल्लासपूर्वक की गयी थी।

इस मंगल दिन ही पालना झूलन, श्री नेमिनाथ भगवान के विवाह की तैयारियाँ और राजाओं के आगमन का महोत्सव मनाया गया था। माघ शुक्ल ४, बुधवार को श्री नेमिनाथ प्रभुजी वैराग्य, जैनेश्वरी दीक्षा के लिये वन-गमन और दीक्षा कल्याणक की भव्य शोभायात्रा की विधि की गयी थी।

माघ शुक्ल ५, गुरुवार को आहारदान, अंकन्यास विधि, केवलज्ञान कल्याणक और समवसरण रचना की क्रिया उल्लासपूर्वक की गयी थी। पश्चात् माघ शुक्ल ६, शुक्रवार को निर्वाण कल्याणक करके प्रात:काल जिनवेदी में श्री जिनबिम्ब विराजमान किये गये थे तथा इस प्रसंग पर कलश तथा ध्वजारोहण, शान्तियज्ञ, रथयात्रा इत्यादि किये गये थे।

इस पंच कल्याणक महोत्सव की विस्तृत जानकारी, पोस्ट की गड़बड़ के कारण समय पर नहीं दी जा सकी, इसलिए यथासम्भव इतना संक्षिप्त में विवरण ऊपर प्रस्तुत किया गया है।

मुम्बई समाचार

झण्डा श्री महावीर का

माघ महीने में भारत की एक मुख्य नगरी मुम्बई शहर में अभूतपूर्व पंच कल्याणक महोत्सव मनाया गया... परम प्रभावी पूज्य श्री कानजीस्वामी की मंगल छाया में मनाया यह पंच कल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव मुम्बई के इतिहास में अभूतपूर्व था। पूज्य गुरुदेव के प्रताप से मुम्बई के दिगम्बर जैन मुमुक्षु मण्डल ने अत्यन्त उत्साहपूर्वक लगभग चार लाख रुपये के खर्च से झवेरी बाजार में भव्य जिनमन्दिर बनाकर पंच कल्याणक प्रतिष्ठा का महोत्सव मुम्बई नगरी में आयोजित किया। इस महोत्सव के दृश्य निहारकर हजारों-लाखों लोग आश्चर्यचकित बने थे। इस प्रतिष्ठा उत्सव में लगभग दो लाख रुपये का खर्च हुआ था और ढाई लाख रुपये की आमदनी हुई थी। इस प्रतिष्ठा महोत्सव के सभी प्रसंगों के विगतवार समाचारों का लगभग पचास पृष्ठ का एक लेख आत्मधर्म के गतांक में प्रकाशित करने के लिये भेजा था, परन्तु पोस्ट की गड़बड़ में वह गुम हो जाने से प्रसिद्ध नहीं हो सका; इसलिए इस प्रतिष्ठा महोत्सव के मुख्य-मुख्य प्रसंग फिर से

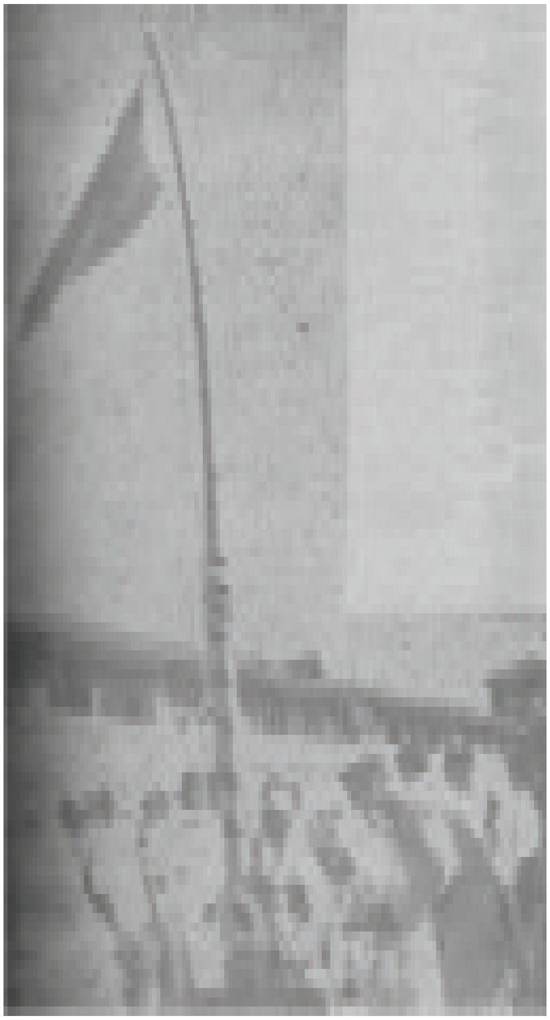

मुम्बई नगरी में अभूतपूर्व पंच कल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव की मंगल शुरुआत में 'महावीरनगर' प्रतिष्ठा मण्डप में झण्डारोपण हुआ इस प्रसंग के दृश्य चित्र में सेठ श्री खीमचन्दभाई इत्यादि झण्डारोपण कर रहे दृष्टिगोचर होते हैं।

संक्षेप में लिखकर भेजे गये हैं। यात्रा प्रवास में होने के कारण खड़ी हुई मुम्बई के समाचारों की परिस्थिति के बदले में आत्मधर्म का पाठकों से क्षमायाचना करते हैं।

—ब्रह्मचारी हरिलाल जैन

मुम्बई नगरी में पूज्य गुरुदेव के पधारने पर हजारों भक्तों ने उल्लास से स्वागत किया और प्रमुख श्री मणिलालभाई सेठ ने अति उल्लास से गद्‌गद्‌भाव से स्वागत प्रवचन करते गुरुदेव का स्वागत किया।

प्रतिष्ठा महोत्सव की शुरुआत के पहले छह भाईयों ने सजोड़े आजीवन ब्रह्मचर्य प्रतिज्ञा अंगीकार की; तदुपरान्त दूसरे भी अनेक भाईयों ने सजोड़े ब्रह्मचर्य प्रतिज्ञा अंगीकार की।

प्रतिष्ठा महोत्सव सम्बन्धी विधि के लिये मुम्बादेवी प्लॉट में 'महावीरनगर' नामक सुन्दर नगरी की रचना की गयी थी, इसमें प्रतिष्ठामण्डप बहुत ही सुशोभित होता था।

महोत्सव की शुरुआत में प्रतिष्ठामण्डप में श्री जिनेन्द्र भगवान को विराजमान करके झण्डारोपण इत्यादि विधि हुई थी। शुरुआत के पूजन-विधानरूप से 'श्री समवसरण मण्डलविधान' हुआ था। पूजन की पूर्णता होने पर श्री जिनेन्द्रदेव का महाअभिषेक हुआ था।

आचार्य अनुज्ञा तथा इन्द्रप्रतिष्ठा के बाद इन्द्रप्रतिष्ठा का जुलूस निकला था और इन्द्रों ने यागमण्डलपूजन की थी। माघ शुक्ल एकम से नेमिनाथ प्रभु के पंच कल्याणक के दृश्यों की शुरुआत हुई थी.... शुरुआत में गर्भकल्याणक के पूर्व दृश्य हुए थे। मंगलाचरण के बाद इन्द्रसभा में नेमिनाथ प्रभु के अवतरण सम्बन्धी चर्चा होती है, शिवादेवी माता को सोलह मंगल स्वप्न आते हैं, कुमारिका देवियाँ माता की सेवा करती हैं-इत्यादि दृश्य हुए थे। (प्रतिष्ठा महोत्सव में भगवान के माता-पिता होने का सौभाग्य सेठ श्री मणिलालभाई तथा उनकी धर्मपत्नी सूरजबेन को प्राप्त हुआ था और इसके उल्लास में में उन्होंने रुपये १००००) प्रतिष्ठा महोत्सव में अर्पण किये थे। सौधर्म इन्द्र होने का सौभाग्य सेठ श्री पूरणचंद्रजी झवेरी जयपुरवालों को प्राप्त हुआ।

माघ शुक्ल दूज के सवेरे गर्भकल्याणक का दृश्य हुआ था। देवियाँ शिवादेवी माता के साथ प्रश्नोत्तररूप से सुन्दर तत्त्वचर्चा करती हैं तथा अनेक प्रकार से सेवा करती हैं।

त्रिलोकनाथ बाईसवें तीर्थंकर नेमिप्रभु शिवादेवी माता के गर्भ में आने के कल्याणकारी समाचार प्राप्त होते ही इन्द्र आकर भगवान के माता-पिता का सम्मान करके स्तुति-पूजन करता है, इत्यादि दृश्य हुए थे।

दोपहर के प्रवचन के बाद बहुत उल्लास से जिनमन्दिर की वेदी-कलश-ध्वजा की शुद्धि की विधि हुई थी... इन्द्र-इन्द्राणियों ने तथा कुमारिका देवियों ने वेदिशुद्धि इत्यादि विधि की थी; तदुपरान्त संघ की विशिष्ट भावना से वेदीशुद्धि इत्यादि में कितनी ही महत्त्वपूर्ण क्रियाएँ पवित्रात्मा पूज्य बहिनश्री-बहिन (चम्पाबेन और शान्ताबेन) के सुहस्त से हुई थी। उन्होंने अतिशय भक्तिपूर्वक जब भगवान की वेदी-शुद्धि और स्वस्तिक स्थापन विधि की थी तब भक्तजन इसे देखकर अति हर्षपूर्वक भक्ति करते थे।

इस प्रतिष्ठा महोत्सव प्रसंग में अजमेर की प्रसिद्ध भजनमण्डली भी आयी थी; मण्डली के भाई विध-विध प्रकार के भजन-नृत्य इत्यादि के कार्यक्रम से इस प्रसंग को विशेष शोभित करते थे। जन्मकल्याणक की शोभायात्रा के समय की अद्भुत भक्ति तथा राजमती और उनके पिताजी का वैराग्य भरा संवाद इत्यादि प्रसंग देखकर हजारों लोग आश्चर्य को प्राप्त हुए थे। तदुपरान्त मण्डली ने सर्पनृत्य, मारवाड़ी नृत्य इत्यादि का नमूना भी बताया था। एक बालिका ने मयूर नृत्य किया था।

माघ शुक्ल तीज के दिन भगवान के जन्मकल्याणक का अद्भुत महोत्सव हुआ था... सवेरे बाईसवें तीर्थंकर भगवान श्री नेमिकुमार के जन्म की बधाई आते ही इन्द्र ऐरावत हाथी लेकर जन्मकल्याणक मनाने आये... और महावीरनगर को तीन प्रदक्षिणा करके... तत्पश्चात् भगवान नेमिकुमार को हाथी पर विराजमान करके मेरुपर्वत पर अभिषेक के लिये भव्य जुलूस निकला था... इस जन्मकल्याणक का जुलूस अपूर्व था। अनेक बैण्ड पार्टियाँ इत्यादि वैभव से सहित १५-२० हजार भक्तों की भक्ति से गाजता लगभग एक मील लम्बा यह जुलूस देखकर मुम्बई की जनता मुग्ध बन गयी थी... शोभायात्रा का सबसे बड़ा आकर्षण दो हाथी थे। हाथी सहित का ऐसा भव्य जुलूस मुम्बई के इतिहास में पहला ही था... हाथी के लिये अनुमति प्राप्त करने में सेठ मणिलालभाई ने दो लाख रुपये की जमानत दी थी। हाथी पर विराजमान नेमिप्रभु का यह भव्य जुलूस मुम्बई नगरी के जिन-जिन रास्तों से गुजरता था, वहाँ का वाहन-व्यवहार घड़ीभर रुक

जाता था... चारों ओर की अटारियाँ और रास्ते हजारों दर्शकों से भर जाते थे... जुलूस के दौरान पूरे रास्ते अजमेर भजन मण्डली का सुन्दर नृत्य चालू ही था... मूलचन्दजी की भक्तिभीनी कला ने मुम्बई की जनता को मुग्ध कर दिया था... नेमि प्रभु को हाथी पर देखकर भक्तजनों ने अद्‌भुत उल्लास से पूरे रास्ते जो भक्ति की है, उसका स्मरण आज भी हृदय को उल्लसित करता है... मुम्बई नगरी में जैनधर्म का यह प्रभावक दृश्य देखकर भक्त उल्लास से नाच उठे थे.... यहाँ एक बात का उल्लेख करते हुए हर्ष होता है कि जन्मकल्याणक के जुलूस के लिये दो हाथी 'कमला सर्कस' की ओर से उत्साहपूर्वक दिये गये थे... जब हाथी की माँग की गयी थी, तब इसके मालिक ने उत्साह से जवाब दिया कि 'भगवान के उत्सव में हमारे हाथी कहाँ से ?' और इस उपलक्ष्य में उन्हें एक हजार रुपये की भेंट देने लगे, तब उसका अस्वीकार करते हुए उन्होंने कहा कि—ऐसे धर्म के काम में हमारे हाथी उपयोग में आवे यह हमारा महाभाग्य है; ऐसे कार्य के लिये जब आवश्यकता पड़े तब हमें कहना, हम कहीं से भी हमारे हाथी भेजेंगे। उनकी इस भावना के लिये कमला सर्कस के मालिक अभिनन्दन योग्य है।

आजाद मैदान में मेरुपर्वत की रचना की गयी थी, वहाँ पहुँचने पर हाथी ने मेरुपर्वत को उत्साहपूर्वक तीन प्रदक्षिणा की... तत्पश्चात् पच्चीस हजार के जनसमुदाय के बीच अति आनन्दोल्लासपूर्वक श्री जिनेन्द्र भगवान का जन्माभिषेक हुआ... जन्माभिषेक प्रसंग का दृश्य अद्‌भुत रोमांचकारी था। जन्माभिषेक के बाद प्रतिष्ठामण्डप में आकर इन्द्र-इन्द्राणियों ने भक्ति से ताण्डव नृत्य किया था। दोपहर को बाल तीर्थंकर नेमिकुमार का पालना झूलन हुआ था... पूज्य बहिनश्री-बहिन ने अतिशय भक्ति और वात्सल्य से भगवान का पालना झुलाया था... और दूसरे हजारों भक्तों ने भी भक्ति से भगवान का पालना झुलाया था। रात्रि में नेमिकुमार के विवाह प्रसंग की राज्यसभा का भव्य दृश्य हुआ था... राजा-महाराजा रूप से अनेक प्रतिष्ठित गृहस्थों से सभा शोभायमान थी।

माघ शुक्ल चौथ के दिन भगवान का दीक्षाकल्याणक हुआ था; विवाह की तैयारी, रथ में प्रभुजी का गमन, पशुओं की पुकार, भगवान का वैराग्य, और इस प्रसंग में नेमि-सारथी का सुन्दर संवाद इत्यादि दृश्य बहुत ही भाववाले थे; वैराग्य होने पर लौकान्तिक देवों का आगमन, भगवान की स्तुति, और वैराग्य सम्बोधन इत्यादि दृश्य हुए थे।

तत्पश्चात् भगवान की दीक्षा के लिये वन यात्रा का अतिभव्य जुलूस निकला था। दीक्षा वन में (गोवालिया टैंक मैदान में) २०-२५ हजार की उपस्थिति के बीच भगवान की दीक्षाविधि हुई थी। दीक्षाविधि के बाद वहाँ दीक्षावन में गुरुदेव ने अद्भुत भावभीने प्रवचन द्वारा मुनिदशा की अपार महिमा करके उसकी भावना व्यक्त की थी। दीक्षाविधि के बाद प्रभु के केशों का समुद्र में क्षेपण किया गया था।

दीक्षाकल्याणक के दिन रात्रि में सुन्दर मुनिभक्ति तथा नेमि-राजुल का संवाद इत्यादि कार्यक्रम था... इस प्रसंग पर सभा में वैराग्य का वातावरण छा गया था। मुनिदशा में विराजमान नेमिप्रभु के दर्शन से भक्तों को भी बहुत आनन्द हुआ था। प्रतिष्ठामण्डप के प्रवेश द्वार के पास नेमिनाथ भगवान के वैराग्य सम्बन्धी एक बहुत सुन्दर रचना की गयी थी; नेमिनाथ कुमार का रथ, पशुओं के पिंजरे के पास आते ही भगवान को देखकर गर्दन ऊँची करके पशुओं की पुकार, वरमाला पहनाने के लिये राजुलमती इत्यादि सुन्दर रचना इसमें थी। तदुपरान्त दूसरी रचना में गुरुदेव के प्रताप से हुए सौराष्ट्र इत्यादि के जिनमन्दिरों का दृश्य था, तथा बाहुबली भगवान थे।

माघ शुक्ल पंचमी — आज सवेरे गुरुदेव के प्रवचन के बाद मुनिराज नेमिप्रभु के आहारदान का प्रसंग बना था... यह प्रसंग अद्भुत था... गुरुदेव की और सर्व भक्तों की मुनिभक्ति देखकर लोग स्तब्ध बन जाते थे... आहार प्रसंग सेठ श्री मणिलालभाई के कुटुम्बीजनों के यहाँ हुआ था... अनेक भक्त अतिशय भक्तिपूर्वक मुनिराज को आहारदान करते थे और अपने जीवन को धन्य समझते थे... नेमिनाथ मुनिराज के आहार का यह अति भावभीना प्रसंग निहारकर गुरुदेव का अन्तर भी मुनिभक्ति से उछलता था और उन्होंने अति भक्ति से स्वहस्त से मुनि भगवान को आहारदान दिया था। गुरुदेव के जीवन में यह प्रसंग अपूर्व था.... एक बालक की भाँति नम्रभाव से प्रसन्नचित्त से गुरुदेव जब मुनि भगवान के करकमल में आम के रस का दान कर रहे थे, तब बहुत ही भक्ति और हर्षपूर्वक हजारों भक्तजन इसका अनुमोदन कर रहे थे.... उत्तम पात्र और उत्तम दातार का ऐसा सुन्दर सुमेल देखकर सबका हृदय प्रफुल्लित हो रहा था। बहिनश्री चम्पाबेन ने और बहिन शान्ताबेन ने भी नेमिनाथ मुनिराज को अतिशय भक्तिपूर्वक आहारदान किया था। आज सोनगढ़ के ब्रह्मचर्य आश्रम का वार्षिक दिन था। ठीक सात वर्ष पहले इसी दिन

बहिनश्री-बहिन के घर नेमिप्रभु पधारे थे और यहाँ भी उसी दिन नेमिप्रभु को आहारदान करते हुए पूज्य बहिनश्री-बहिन को बहुत ही भक्ति, उल्लास और प्रसन्नता होती थी।

आहारदान के बाद, इस महाप्रसंग के उल्लास में सेठ श्री मणिलालभाई के परिवार की ओर से रुपये ५,५०१) घोषित किये गये थे तथा जयपुरवाले सेठ पूरणचन्दजी ने भी इस प्रसंग की खुशहाली में हर महीने रुपये १०१) (आजीवन) मुम्बई के सीमन्धर दिगम्बर जिनमन्दिर को अर्पण करने की घोषणा की। तदुपरान्त आहारदान की अनुमोदना

प्रतिष्ठा महोत्सव के दौरान जिनमन्दिर में 'कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन सरस्वती भवन' का उद्घाटन पूज्य गुरुदेवश्री के पवित्र कर-कमलों से हुआ। उद्घाटन के बाद जिनवाणी का अर्घ चढ़ाकर पूज्य गुरुदेवश्री ने समयसार आदि शास्त्रों में हस्ताक्षर किये। पूज्य गुरुदेवश्री बहुत भावपूर्वक समयसार में 'ॐ'कार दिव्यध्वनि का आलेखन कर रहे हैं। उसका भावभीना दृश्य

के लिये भक्तों ने हजारों रुपये की दान की झड़ी बरसायी थी... और भक्तजन अत्यन्त आनन्द से भक्ति करते थे। अतिशय भक्ति भरपूर मुनिराज के आहारदान का यह अद्भुत दृश्य देखकर देश-देश के भक्तजन आश्चर्यचकित हुए थे और सोनगढ़ के मुमुक्षु भक्तों की दिगम्बर मुनिवरों के प्रति इतनी परम भक्ति देखकर सब स्तब्ध बन गये थे। वस्तुतः मुनिभक्ति का यह एक धन्य प्रसंग था।

दोपहर में अंकन्यास विधान हुआ था, इस प्रसंग में पूज्य गुरुदेव के परम पावन हस्त से वीतरागी जिनबिम्बों पर मन्त्राक्षर लिखे गये थे। गुरुदेव बहुत ही भावपूर्वक जब

वीतरागी जिनबिम्बों पर पवित्र मन्त्राक्षर लिखते थे, तब गुरुदेव के हस्त से होनेवाले इस महान प्रभावक मंगलकार्य को देखकर सब भक्त देव-गुरु के जय-जयकारपूर्वक भक्ति करके सन्मान करते थे। अलग-अलग गाँवों के कुल २१ जिनबिम्ब प्रतिष्ठा के लिये आये थे।

इस प्रकार दस बार के पंच कल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सवों में गुरुदेव के हस्त से कुल १८८ वीतरागी जिनबिम्बों की मंगल प्रतिष्ठा हुई।

(जिनबिम्बों पर अंकन्यास की पूरी विधि तो प्रतिष्ठाचार्य पण्डित नाथुलालजी ने की थी, परन्तु मांगलिक रूप से 'ॐ अर्हं' इतना मन्त्र पूज्य गुरुदेव के सुहस्त से लिखाया था।)

अंकन्यास विधान के बाद तुरन्त भगवान का केवलज्ञान कल्याणक हुआ था... इस प्रसंग में सुन्दर समवसरण की रचना हुई थी... और पूज्य गुरुदेव का विशिष्ट प्रवचन हुआ था। रात्रि में भक्ति-भजन हुए थे।

माघ शुक्ल छठवीं को सवेरे निर्वाणकल्याणक हुआ था, उस समय मोक्षधाम गिरनार की सुन्दर रचना की गयी थी।

इस प्रकार मुम्बई में श्री जिनेन्द्र भगवान के पंच कल्याणक पूर्ण हुए... वह भव्य जीवों का कल्याण करो।

माघ शुक्ल छठवीं को निर्वाणकल्याणक के बाद तुरन्त जिनमन्दिर में जिन-भगवन्तों की वेदी प्रतिष्ठा हुई थी। जिनमन्दिर का विशाल हॉल संगमरमर की मनोज्ञ वेदी से शोभ रहा है। जिनमन्दिर में मूल नायकरूप से भी सीमन्धर भगवान हैं; उनके एक ओर श्री चन्द्रप्रभ भगवान विराजते हैं और दूसरी ओर श्री शान्तिनाथ भगवान विराजते हैं। तदुपरान्त श्री नेमिनाथ भगवान तथा आदिनाथ भगवान और महावीर भगवान विराजते हैं। भगवन्तों की प्रतिष्ठा अत्यन्त उल्लासपूर्वक हुई थी। गुरुदेव की उपस्थिति में भक्तजन अपने मस्तक पर लेकर जब भगवान को वेदी के ऊपर पधराते थे, तब ऐसे भाव व्यक्त होते थे कि अहा! गुरुदेव के प्रताप से हमें हमारे जीवन के नाथ जिनेन्द्र भगवान मिले!! भगवन्तों की प्रतिष्ठा के बाद कलश और ध्वजारोहण हुआ था। कलश और ध्वजा पर तथा

भगवान की वेदी के दोनों ओर पूज्य गुरुदेव के सुहस्त से मंगल स्वस्तिक हुए थे।

इस प्रकार जिनेन्द्र भगवन्तों की प्रतिष्ठा बहुत आनन्द और उल्लासपूर्वक हुई थी... और हजारों लोग प्रतिष्ठामण्डप में बैठे-बैठे इसका वर्णन लाउडस्पीकर द्वारा सुन रहे थे।

वेदी पर विराजमान सीमन्धर भगवन्त के दर्शन करते हुए भक्तों का हृदय हर्ष और भक्ति से गद्‌गद् हो जाता था। अनेक भक्तजन भगवान को देखकर नाच उठे थे... इस प्रसंग पर पूज्य बहिनश्री-बहिन ने भी अद्‌भुत भक्ति करायी थी। मुम्बई नगरी के इस भव्य उत्सव सम्बन्धी 'वाहवा जी वाहवा' वाली भक्ति करायी थी... तथा स्वयं हाथ में चंवर लेकर बहुत ही भावभीनी भक्ति की थी। यह भक्ति देखकर भक्तों के अन्तर में जिनेन्द्र महिमा की लहरें उल्लसित होती थी... और ज्ञानियों के अन्तर में जिनेन्द्र भगवान के प्रति कैसा अपार प्रेम है, वह दिखायी देता था। ऐसे विरल भक्तिप्रसंग नजरों से देखनेवालों को ही इसका ख्याल आता है।

जिनेन्द्र भगवन्तों की प्रतिष्ठा के बाद शान्तियज्ञ हुआ था और सायंकाल जिनेन्द्र भगवान की अति भव्य रथयात्रा निकली थी... इस रथयात्रा में मानो कि सम्पूर्ण मुम्बई नगरी का वैभव उमड़ गया हो - ऐसा लगता था... इसमें ११ बैण्ड पार्टी थी... तीन सुन्दर रथ थे। तदुपरान्त अजमेर की भजन मण्डली, इक्यावन मोटरें, अनेक छड़ी-ध्वजा-चंवर इत्यादि बहुत ही वैभव था... इस रथयात्रा ने पूरी नगरी में जिनेन्द्र महिमा फैला दी थी... नगरी के लाखों लोग हर्ष-भक्ति और आश्चर्य से यह रथयात्रा निहारने के लिये उमड़ पड़े थे। इस प्रकार भव्य रथयात्रापूर्वक यह महान प्रतिष्ठा महोत्सव सम्पन्न हुआ था।

इस प्रतिष्ठा महोत्सव के प्रसंग में इन्दौर के श्रीमान पण्डित श्री बंसीधरजी सिद्धान्तशास्त्री, तथा काशी के पण्डित श्री कैलाशचन्द्रजी सिद्धान्तशास्त्री और पण्डितश्री फूलचन्दजी सिद्धान्तशास्त्री आये थे... तीनों पण्डित यह प्रतिष्ठा महोत्सव देखकर बहुत ही प्रभावित हुए थे और उन्होंने १५-१५ हजार लोगों की सभा के बीच भाषण करके पूज्य गुरुदेव की महिमा और प्रशंसा की थी। पण्डित बंसीधरजी ने तो गद्‌गद् भावपूर्वक-बेधड़करूप से स्पष्ट कहा था कि ***बार-बार मैं कहता आया हूँ, शिखरजी में भी मैंने कहा था और फिर यहाँ पर भी मैं कहता हूँ कि महाराजजी (कानजीस्वामी) भेदज्ञान की जो***

बात सुना रहे हैं, यह उनके घर की नयी बात नहीं है, इस बात को तीर्थंकरों, भेदज्ञानी बड़े-बड़े आचार्यों ने और पूर्व के बड़े-बड़े पण्डितों ने कही है, वही बात आज आप सुना रहे हैं.... और यही सच्चा निखरा हुआ दिगम्बर जैनधर्म है....

प्रतिष्ठा महोत्सव के बाद दो दिन पूज्य गुरुदेव घाटकापेर, शिव इत्यादि उपनगरों में निवास करनेवाले मुमुक्षु-भक्तों के यहाँ पधारे थे। एक दिन माटुंगा में सेठ श्री केशवलालभाई पारेख के यहाँ गुरुदेव का आहार था, इसके उल्लास में केशवलालभाई ने रुपये १००१) पूज्य बहिनश्री-बहिन के हस्तक के आहारदान खाते में अर्पण किये थे; इसी प्रकार शिव में भाईश्री चम्पकलाल डगली (बरवालावाले) के यहाँ गुरुदेव का आहार होने पर उन्होंने भी ५२५०) (सवा पाँच हजार) अर्पण किये थे। इस प्रकार गुरुदेव के प्रताप से जिनशासन की महान प्रभावना वृद्धिगत हो रही है... वह जयवन्त वर्तो!

मुम्बई नगरी में पंच कल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव अति उत्साहपूर्वक मनाने के बाद माघ शुक्ल अष्टमी के मंगल दिन पूज्य गुरुदेव ने ६५० यात्रियों सहित दक्षिण के तीर्थधामों की यात्रा के निमित्त मंगल प्रस्थान किया... मुम्बई से संघसहित गुरुदेव पूना पधारे; पूना जाते हुए बीच में मुम्रा में बाहुबली प्रभु की २८ फीट की प्रतिमाजी (जिसकी प्रतिष्ठा होनी बाकी है) उसका अवलोकन करने के लिये संघ थोड़ी देर रूका था और वहाँ पूरे संघ को भोजन जीमाया था। मुम्रा से पूना आने पर वहाँ के दिगम्बर जैन समाज ने स्वागत किया था। पूना से दहीगाम जाते हुए फलटन गाँव में जिनमन्दिरों के दर्शन करने के लिये संघ रुका था। और पूज्य गुरुदेव का प्रवचन भी हुआ था। फलटन में छह जिनमन्दिर हैं। जिनमें विशाल मनोज्ञ प्रतिमा जी (रत्नत्रय भगवन्त इत्यादि) विराजमान हैं। तथा धरसेनाचार्यदेव की प्रतिमा और ताम्रपत्र पर उत्कीर्ण षट्खण्डागम भी है। यात्रासंघ यहाँ आया तब यहाँ पंच कल्याणक चल रहा था। यहाँ दर्शन करके संघ दहीगाम आ पहुँचा। मार्ग की थकान से थके हुए यात्रियों को दहीगाम में सीमन्धर आदि बीस विहरमान भगवन्तों के एक साथ दर्शन होने से बहुत आनन्द हुआ.... विदेह के बीस विहरमान भगवन्तों को भारत में एक साथ देखकर भक्तों का हृदय प्रसन्नता से नाच उठा... और यहीं दो दिन रुककर बहुत पूजन-भक्ति किये... भक्तों ने बीस भगवन्तों का अभिषेक किया... पूज्य गुरुदेव ने भी प्रमोदपूर्वक सुवर्णपात्र से प्रभु का चरणाभिषेक किया... यहाँ एक

विशाल जिनमन्दिर के भोंयरा में बीस विहरमान भगवन्तों के विशाल-विशाल भाववाही प्रतिमाजी विराजमान हैं। तदुपरान्त पार्श्वनाथ, आदिनाथ, महावीरनाथ इत्यादि भगवन्तों के भी विशालकाय प्रतिमाजी हैं; एक वेदी में चारों ओर त्रिपुटी भगवन्त शोभित हो रहे हैं। यहाँ बीस विहरमान भगवन्तों के धाम में गुरुदेव के साथ दर्शन-पूजन-भक्ति करते हुए यात्रियों को बहुत आनन्द हुआ। पूज्य बहिनश्री-बहिन ने भी बीस भगवन्तों के समीप विशिष्ट भक्ति की थी। दसमी की रात्रि में बीस भगवन्तों का नाम लेकर भक्ति करते हुए विशेष उल्लास हुआ था। यात्रा के दौरान ऐसे धाम में गुरुदेव को आहारदान का लाभ मिलने से भक्तों को बहुत प्रसन्नता हुई थी। इस प्रकार आनन्द से दर्शन-पूजन-भक्ति करके आठ मोटरबसें और चालीस मोटरों का संघ दहीगाम से बाहुबली (कुम्भोज) आया था। बाहुबली की ओर जाते हुए बीच मार्ग में कराड़ गाँव में पूरा संघ भोजन के लिये रुका था और वहाँ से लगभग तीन बजे बाहुबली क्षेत्र पहुँचने पर वहाँ के कार्यकर्ताओं और विद्यार्थियों ने भावपूर्वक गुरुदेव का स्वागत किया था। तथा गुरुदेव ने मंगल प्रवचन किया। प्रवचन इत्यादि के लिये शीतल सुशोभित मण्डप किया गया था। इस बाहुबली क्षेत्र में छोटा सा पर्वत है, उस पर जिनमन्दिर में चन्द्रप्रभ, शान्तिनाथ तथा आदिनाथ भगवन्तों की सुन्दर खड्गासन प्रतिमा विराजमान है। तदुपरान्त महावीर प्रभु का मानस्तम्भ है; क्षेत्र का दृश्य बहुत रमणीय है। (दक्षिण यात्रा के जो प्रसिद्ध बाहुबली हैं, वे तो श्रवणबेलगोल में हैं; इस क्षेत्र का 'बाहुबली' नाम एक मुनि के आधार से लगभग २५० वर्ष से पड़ा है)। यहाँ बाहुबली ब्रह्मचर्य आश्रम है, जिसकी व्यवस्था बहुत सुन्दर है। एक जिनमन्दिर में बाहुबलीस्वामी की सात फीट की मनोहर प्रतिमाजी है; ऊपर के भाग में आदिनाथ प्रभु की अति उपशान्त भावधारी प्राचीन प्रतिमाजी विराजमान है। बगल में समवसरण मन्दिर (महावीर प्रभु का) है, उसकी रचना बहुत सुन्दर है। तदुपरान्त यहाँ २८ फीट की विशाल मनोज्ञ बाहुबली प्रभु की प्रतिमाजी आयी हुई है, जिसकी प्रतिष्ठा अब होनेवाली है। इस प्रतिमाजी का वजन १८०० मण है और ८०,००० इसकी कीमत है। यहाँ सुन्दर तत्त्वचर्चा हुई थी तथा बाहुबलीस्वामी की उपरोक्त अति भव्य प्रतिमाजी जयपुर की खान में से यहाँ (बाहुबली आश्रम) तक लायी गयी, उसकी फिल्म दिखायी गयी थी। दूसरे दिन सवेरे पर्वत पर यात्रा की थी। यात्रा में गुरुदेव ने भक्ति गवायी थी।

दोपहर को प्रवचन के बाद विद्यार्थियों का कार्यक्रम था, रात्रि में तत्त्वचर्चा की। यहाँ का डेढ़ दिन का कार्यक्रम बहुत सरस था। शान्त वातावरण में सब यात्रियों को प्रसन्नता होती थी। बाहुबली क्षेत्र से दिनांक २१ के दिन सवेरे निकलकर कोल्हापुर आये। कोल्हापुर में तीन-चार विशाल जिन मन्दिर हैं। यहाँ गुरुदेव का स्वागत हुआ था।

बाहुबली में गुरुदेव का प्रवचन सुनने तथा दर्शन करने आस-पास के गाँवों से भी अनेक लोग आये थे। ब्रह्मचारी जिनदासजी ने संक्षिप्त भाषण द्वारा गुरुदेव द्वारा हो रही प्रभावना की बहुत सराहना की थी और यात्रा की सफलता चाही थी।

ब्रह्मचारी माणेकचन्द्रजी (जो कि बाहुबली ब्रह्मचर्याश्रम संस्था के एक विशिष्ट कार्यकर्ता हैं)—उन्होंने विदाई प्रवचन करते हुए कहा था कि इतने बड़े संघ के साथ यात्रा के प्रसंग में हमारे स्थान में स्वामीजी का दर्शन होना यह एक बड़े भाग्य की बात है। इसमें कोई शक नहीं कि पूज्य स्वामीजी का यहाँ आना इस संस्था का ऐतिहासिक प्रसंग गिना जाएगा, हमारी संस्था के इतिहास में यह प्रसंग अविस्मरणीय बना रहेगा, इतना ही नहीं, बल्कि संस्था के इतिहास में इसका बहुत उच्च स्थान रहेगा।

स्वामीजी जैनधर्म की बड़ी प्रभावना कर रहे हैं, स्वामीजी का जो प्रभाव हो रहा है, इससे यह बात निश्चित समझी जाएगी कि आपके द्वारा अभी इस प्रान्त में भी जैनधर्म की अच्छी प्रभावना होगी। हमारे यहाँ डेढ़ दिन कैसे बीत गये, यह भी हमें मालूम नहीं पड़ा.... हमारी भावना थी कि संघ यहाँ और भी एक दिन ठहरे... हम यात्रासंघ की सफलता की कामना करते हैं।

बाहुबली क्षेत्र के डेढ़ दिन के कार्यक्रम में सब यात्रियों को आनन्द हुआ था।

कोल्हापुर

दिनांक २१ के दिन संघ बाहुबली से कोल्हापुर आया था, गुरुदेव का स्वागत हुआ था, जिसमें प्रोफेसर अे. एन. उपाध्ये इत्यादि भी साथ में थे। स्वागत के बाद नगर पालिका के हॉल में मंगल प्रवचन हुआ था, यहाँ तथा कराड इत्यादि में संघ के भोजनादि की व्यवस्था सेठ लक्ष्मीचन्दभाई की ओर से की गयी थी। दोपहर को गुरुदेव के प्रवचन में हजारों लोगों ने लाभ लिया था। प्रवचन के बाद प्रोफेसर अे. एन. उपाध्ये ने स्वागत

प्रवचन करते हुए कहा कि— ***आज हमारा बड़ा सौभाग्य है और कोल्हापुर नगर के सभी लोगों का सौभाग्य है कि कानजीस्वामी महाराज यहाँ पधारे हैं; हम सब की ओर से— जो यहाँ उपस्थित हैं, उन सबकी अनुमति से एवं जो उपस्थित नहीं हैं उनकी भी अनुमति ही समझ करके कोल्हापुर नगर की सभी जनता की ओर से, मैं आपका व संघ का स्वागत करता हूँ। आप (पूज्य श्री कानजीस्वामी) सौराष्ट्र के होते हुए भी, उनकी वाणी का प्रभाव सारे भारत में फैल रहा है, और आत्मज्ञान में रस लेनेवाले लोगों के लिये उनकी वाणी बड़ी उपयोगी है। वर्तमान में जब सारे संसार में अशान्ति का वातावरण फैल रहा है, तब संसार से हम कैसे मुक्ति पावें, इसकी पूँजी हमें ऐसे महान प्रभावशाली महात्माओं से भी मिल सकती है। मैं फिर से आपका स्वागत करता हूँ। और आपके संघ की यात्रा में सफलता चाहता हूँ।***

कोल्हापुर में अनेक प्राचीन जिनमन्दिर हैं, जिनमें रत्नत्रय भगवन्त इत्यादि विराजमान हैं। कितने ही प्राचीन वैभवशाली मन्दिर आज भी भग्नावशेष जैसी स्थिति में हैं। कोल्हापुर में रात्रिचर्चा हुई, सैकड़ों लोगों ने लाभ लिया था।

स्तवनिधि होकर बेलगाँव

पूज्य गुरुदेव यात्रासंघ सहित कोल्हापुर से दिनांक २२ के दिन बीच में स्तवनिधि क्षेत्र में विराजमान पार्श्वनाथ आदि भगवन्त के दर्शन करके बेलगाँव पधारे थे, वहाँ गुरुदेव का स्वागत हुआ था। बेलगाम किले के प्राचीन जिनमन्दिर में श्री नेमिचन्द्र सिद्धान्त चक्रवर्ती के मंगल हस्त से प्रतिष्ठत श्री नेमिनाथ भगवान की अति उपशान्त मुद्राधारी भव्य प्रतिमा के दर्शन करके गुरुदेव को बहुत प्रसन्नता हुई थी। कहते हैं कि यहाँ किला में पहले १०५ जिनमन्दिर थे और यहाँ के राजा ने नेमिचन्द्रस्वामी के निकट दीक्षा ली थी। नेमिचन्द्र सिद्धान्त चक्रवर्ती जैसे जिनबिम्ब प्रतिष्ठा के मंगल कार्य आज कर रहे हैं और यहाँ उन नेमिचन्द्रस्वामी के हस्त से हुआ जैन प्रतिष्ठा का मंगल कार्य नजरों से निहारकर गुरुदेव को बहुत प्रमोद हुआ था... संघ के सभी यात्री भी पूज्य गुरुदेव की प्रेरणा से इस जिनमन्दिर के दर्शन करके आनन्दित हुए थे। प्रतिमाजी लगभग ४ फीट अर्द्ध पद्मासन में है और मन्दिर बहुत कलामय भव्य प्राचीन है। तदुपरान्त हुबली में दूसरे भी अनेक जिनमन्दिर हैं।

दोपहर को प्रवचन से पहले सेठ चन्द्रकान्त कागवाडी में स्वागत प्रवचन करते हुए कहा था कि— ***१८-२० साल से हम कानजी महाराज का नाम व कार्य सुन रहे थे और उनके दर्शन की हमें बहुत उत्कंठा थी; आज यहाँ पर उनके साक्षात् दर्शन पाकर हम बहुत खुश हुए हैं, हम महाराजजी के दर्शन से पावन बन गये हैं, हमारी नगरी पावन बन गयी है और आज हम अपने को धन्य समझते हैं। हम हृदय से पूज्य स्वामीजी का व संघ का स्वागत करते हैं।***

तत्पश्चात् कुमारी पुष्पाबहिन ने मराठी में स्वागत गीत (स्वागत करूँ या त्यागी वंराचे....) गाया था। तथा यात्रा के अग्रगण्य व्यापारी सेठ श्री जीवराजभाई (जो श्वेताम्बर समाज के अग्रगण्य हैं) उन्होंने भी गुरुदेव का स्वागत प्रवचन करते हुए कहा था कि— ***हमें हर्ष है कि यहाँ 'श्री महावीर जैनसंघ' की ओर से पूज्य स्वामीजी का स्वागत-सम्मान किया गया है। हमारे 'महावीर जैनसंघ' मैं श्वेताम्बर-स्थानकवासी व मूर्तिपूजक सभी शामिल है और सभी शामिल हो करके आज स्वामीजी का स्वागत कर रहे हैं। इतने बड़े संघ के साथ कानजी महाराज यहाँ पधारे हैं और यात्रा के लिये जा रहे हैं, इससे हमें बहुत खुशी है। हम सबकी ओर से मैं आपके स्वागत के साथ-साथ यह भावना करता हूँ कि आपकी सबकी यात्रा सफल हो।***

तत्पश्चात् जैन बोर्डिंग में गुरुदेव का प्रवचन हुआ था, इसमें लगभग तीन हजार लोग थे। यहाँ की जनता हिन्दी भाषा भी बराबर समझती न होने पर भी उत्सुकता से प्रवचन सुनती थी और गुरुदेव का प्रभाव देखकर लोग प्रसन्न होते थे।

हुबली शहर

बेलगाम से प्रस्थान करके संघ दिनांक २२ की रात्रि को हुबली शहर पहुँच गया था और पूज्य गुरुदेव २३ की सबेरे हुबली पधारे थे। गुरुदेव के पधारने पर भव्य स्वागत (चन्द्रप्रभ जिनमन्दिर जैन बोर्डिंग से) हुआ था... गुरुदेव मोटर में से उतरते ही दो छोटे से हाथियों ने सलामी देकर हार तोरण से गुरुदेव का स्वागत किया था... बीच में तीन जिनमन्दिरों के दर्शन करके स्वागत यात्रा शान्तिनाथ प्रभु के जिनमन्दिर में आयी थी; यहाँ शान्तिनाथ प्रभु के सुन्दर-सुन्दर प्राचीन तीन फीट की खड्गासन भगवान विराजमान हैं तथा पाँच बालब्रह्मचारी तीर्थंकर इत्यादि की सुन्दर (छोटी सी) प्रतिमाजी हैं। वहाँ दर्शन

करके तथा अर्घ्य चढ़ाकर गुरुदेव ने मांगलिक सुनाया था। लोग एक –दूसरे की भाषा भी न समझे ऐसे अनजाने देश में भी दो–दो हाथी सहित का गुरुदेव का भव्य स्वागत देखकर यात्रियों को बहुत हर्ष होता था। प्राचीन हुबली के सिद्धार्थ मठ में संघ का आवास था। प्राचीन हुबली में दो तथा नयी हुबली चार जिनमन्दिर हैं।

संघ का प्रस्थान आनंदपूर्वक चल रहा है। अब संघ कन्नड़ भाषा के प्रदेश में प्रवेश कर चुका है वहाँ के लोग हिन्दी भाषा भी नहीं समझ सकते। गुरुदेव जैसे महाप्रभावशाली सन्तों के साथ यात्रा करते हुए यात्री घर–बार को भूल गये हैं, देश से कितने दूर आ गये हैं। यह भी याद नहीं आता... जहाँ–जहाँ संघ का पड़ाव होता है, वहाँ–वहाँ मानो कि एक नयी ही छोटी सी नगरी बस जाती है... और जैनधर्म के प्रभाव से नगरी गाज उठती है... हजारों लोगों के झुण्डे आश्चर्य से संघ को निहारते हैं... इस प्रकार लगभग ७०० यात्रियोंसहित पूज्य गुरुदेव दक्षिण के तीर्थधामों की मंगल यात्रा के लिये विचर रहे हैं।

इस प्रकार पूज्य श्री कानजीस्वामी का यात्रासंघ आनन्दपूर्वक प्रस्थान कर रहा है.... सन्तों और साधर्मियों के साथ प्रतिदिन नये–नये जिनेन्द्र भगवन्तों को भेंटने से हर्ष होता है... (दिनांक २३–२–१९५९ सबेरे तक का)

हुबली शहर माघ शुक्ल १५ के दिन पूज्य गुरुदेव हुबली शहर में पधारने पर भव्य स्वागत हुआ... दोपहर को प्रवचन के बाद जैन समाज की ओर से वहाँ के विशिष्ट कार्यकर्ता श्री शांतिलाल ईगडे ने कन्नड़ में भाषण करते हुए गुरुदेव का स्वागत और अभिनन्दन किया था तथा गुरुदेव के प्रवचनों का सार कन्नड़ भाषा में समझाया था और संघ के आतिथ्य–सत्कार के निमित्त रुपये ५०१) यात्रासंघ को अर्पण करने की घोषणा की थी (परन्तु संघ ने वह रकम स्वीकार नहीं की थी) गुरुदेव हुबली शहर में पधारे और ऐसा सरस आध्यात्मिक ज्ञान दिया, तदर्थ जैनसमाज ने आभार मानकर गुरुदेव को अभिनन्दन दिया था।

जोगफॉल्स

फाल्गुन कृष्ण एकम के दिन हुबली से प्रस्थान करके बीच में सुन्दर रमणीय झाड़ियों–पर्वतों–चट्टानों और झरनों का रास्ता लाँघकर जोगफॉल्स (गेरसप्पा के प्रपात)

पहुँचे। प्रपात के प्राकृतिक दृश्यों का अवलोकन किया तथा इलेक्ट्रिक ट्रेन लगभग एक हजार फीट नीचे उतरकर पानी के बल से बिजली उत्पन्न होती है, वह स्थान देखा। रात्रि में संघ सागर पहुँच गया।

हुमच

फाल्गुन कृष्ण दूज के दिन जोगफॉल्स से सागर होकर पूज्य गुरुदेव हुमच पधारे और स्वागत हुआ। यहाँ पाँच जिनमन्दिर हैं... सरोवर के किनारे पंचबस्ती मन्दिर बड़ा है, उसमें पाँच वेदी में प्राचीन विशाल जिनप्रतिमाएँ विराजमान हैं। मन्दिर का वातावरण बहुत शान्त है और उन मुनिवरों की शांति के दर्शन कराता है। इस मन्दिर की प्राचीन प्रतिमाओं के दर्शन से गुरुदेव प्रसन्न हुए और कहा—**देखो, यह हजारों वर्ष प्राचीन प्रतिमा!—यह दिगम्बर जैन धर्म की प्राचीनता सिद्ध करती है। तदुपरान्त मन्दिर में जैनधर्म सम्बन्धी हजार वर्ष उपरान्त के प्राचीन शिलालेख भी हैं। तदुपरान्त दूसरे मन्दिरों के भी दर्शन किये थे।**

जिनमन्दिरों के दर्शन के बाद बड़े मन्दिर में (भट्टारकजी के मन्दिर में) ऊपर भक्ति हुई थी.... प्रथम पूज्य गुरुदेव ने 'उपशम रस बरसे रे, प्रभु तारा नयन मा....' यह स्तवन गवाया था; तत्पश्चात् पूज्य बहिनश्री-बहिन ने 'ले जो सेवा प्रभु की लेजो....' यह भक्ति गवायी थी। भक्ति के बाद हुबली के बीस जितने रत्न-मणि इत्यादि के जिनबिम्बों के दर्शन किये थे; रत्नबिम्बों के दर्शन से गुरुदेव को तथा सर्वयात्रियों को आनन्द हुआ था... और चौबीसों जिनेन्द्रों को सबने अर्घ्य चढ़ाया था।

आज प्रवचन का कार्यक्रम नहीं था परन्तु दर्शन और भक्ति के बाद वहाँ के भट्टारकजी ने प्रवचन के लिये माँग करते हुए गुरुदेव को कहा कि—***इतनी दूर से आप जैसे इतने बड़े विद्वान हमारे यहाँ आये और कुछ भी नहीं बोलेंगे ? आप इतने बड़े पुरुष हमारे यहाँ आये हो तो कुछ प्रवचन अवश्य कीजियेगा... हम आपकी वाणी सुनना चाहते हैं!*** गुरुदेव ने कहा—**परन्तु यहाँ तो कन्नड़ भाषा है, यहाँ हिन्दी समझेगा कौन ?** भट्टारकजी ने कहा—***हम सुननेवाले हैं, हम हिन्दी समझ सकेंगे मैं भी प्रवचन सुनने को बैठूँगा...*** इससे गुरुदेव ने पन्द्रह मिनिट प्रवचन किया था... प्रवचन सुनकर भट्टारकजी इत्यादि ने बहुत प्रसन्नता व्यक्त की थी।

प्रवचन के बाद यहाँ छोटी सी पहाड़ी पर जिनमन्दिर में पाँच फीट के बाहुबली भगवान विराजमान हैं, वहाँ दर्शन करने के लिये गुरुदेव पधारे थे... सुन्दर रमणीय झाड़ियों के बीच से गुरुदेव के साथ गुजरते हुए भक्तों को आनन्द होता था। ऊपर जाकर दर्शन करके सबने गुरुदेव के साथ अर्घ्य चढ़ाया था। इस प्रकार छोटी सी यात्रा के बाद, पूज्य बहिनश्री–बहिन के यहाँ भोजन करके गुरुदेव कुन्दापुर पहुँच गये थे। कुन्दापुर में श्री शंकरराव गोडे ने गुरुदेव के प्रति बहुत आदर दर्शाया था, तथा संघ की व्यवस्था में उत्साह से सहायता की थी।

★ ★ ★

कुन्दप्रभु का समाधि-स्थान

कुन्दाद्रि (कुन्दनगिरि) की यात्रा

(फाल्गुन कृष्ण तीज)

फाल्गुन कृष्ण तीज के दिन सवेरे कुन्दकुन्दाचार्य प्रभु के चरणों को भेंटने के लिये गुरुदेव ने कुन्दकुन्द पर्वत की यात्रा शुरु की... कुन्दकुन्द प्रभु जिस भूमि में विचरे, उस पवित्र भूमि में विचरते हुए गुरुदेव को बहुत भक्ति और प्रमोद भाव उल्लसित होता था... कुन्दकुन्द प्रभु की भूमि में गुरुदेव के साथ विचरते हुए पूज्य बहिनश्री-बहिन को भी अतिशय भक्ति और हर्ष होता था... यात्री भी हुमच से कुन्दगिरि आ पहुँचे थे।

यहाँ कुन्दपुर में एक सुन्दर रमणीय पर्वत है, उस पर कुन्दकुन्दाचार्यदेव का समाधि स्थान है। कुन्दकुन्द प्रभु के प्रताप से उसका नाम 'कुन्दाद्रि' (कुन्दगिरि) पड़ा है। पर्वत घनघोर झाड़ियों से आच्छादित है... हृदय में कुन्दकुन्द प्रभु का स्मरण और भक्ति करते-करते गुरुदेव के साथ भक्त ऊपर पहुँचे... पर्वत के ऊपर एक प्राचीन जिनालय है, उसमें पार्श्वनाथ इत्यादि भगवन्त विराजमान हैं; उनके सन्मुख मानस्तम्भ है; बाजू में एक सुन्दर कुण्ड है, उसके किनारे भगवान श्री कुन्दकुन्दाचार्यदेव के अति प्राचीन चरणपादुका उत्कीर्ण है। आसपास का दृश्य बहुत सुन्दर और भाववाही है। यहाँ पूज्य गुरुदेव को यात्रा में बहुत भाव उल्लसित हुआ था... कुन्दकुन्द प्रभु के पवित्र चरणों का उन्होंने भक्तिपूर्वक अभिषेक किया था... और भावभीने चित्त से भक्ति भी करायी थी... पूज्य बहिनश्री-बहिन ने भी यहाँ बहुत उमंग से भक्ति करायी थी... गुरुदेव के साथ कुन्दकुन्द प्रभु के इस पावन धाम की यात्रा से भक्तों को बहुत आनन्द और उत्साह आया था... और गुरुदेव के साथ इस महान ऐतिहासिक यात्रा के स्थायी स्मरण के लिये इस तीर्थधाम में कुछ यादगिरि बनाने के लिये लगभग बारह हजार रुपये का फण्ड हुआ था, जिसमें रुपये 5001 सोनगढ़ जैन स्वाध्यायमन्दिर ट्रस्ट में से (पूज्य बहिनश्री-बहिन हस्तक के खाते में से) घोषित किये गये थे। (फण्ड अभी चालू है)।

यात्रा के बाद वहाँ कुन्दकुन्दाद्रि तीर्थ की तलहटी में ही संघ भोजन हुआ था... यहाँ श्री शंकर राव गोडे इत्यादि ने गुरुदेव के प्रति तथा संघ की व्यवस्था के लिये बहुत

प्रेम दर्शाया था... हुमच के भट्टारकजी भी यहाँ आये थे। दोपहर में शंकर राव गोडे तथा भट्टारकजी की विशिष्ट माँग से गुरुदेव ने आधे घण्टे प्रवचन किया था... जिसमें कुन्दकुन्द प्रभु की परम महिमा और आदरभाव प्रसिद्ध किया था... प्रवचन के बाद एक बालक ने कन्नड़ भाषा में स्वागत गीत गाया था। तथा स्थानीय कार्यकर्ताओं की ओर से गुरुदेव का स्वागत और अभिनन्दन सम्बन्धी हुमच के भट्टारकजी ने बहुत भावभीना वक्तव्य किया था। तत्पश्चात् गुरुदेव ने तथा संघ ने मूळबिद्री की ओर प्रस्थान किया था... मार्ग में बीच में सुन्दर घाट और घनी झाड़ियों के रमणीय दृश्य आते हैं। ऊँचे-नीचे पर्वत, पानी के झरने, चट्टानों और झाड़ियों का शान्त रमणीय वातावरण वनवासी मुनिवरों की शान्त परिणति की याद दिलाता था। गुरुदेव सायंकाल मूळबिद्री पहुँच गये थे... और संघ रात्रि में पहुँचा था... दूसरे दिन गुरुदेव के साथ यहाँ की रत्नप्रतिमा के दर्शन करने की धुन में सोये हुए भक्त रात्रि में स्वप्न में भी रत्नमय जिनबिम्बों को देखते थे।

मूलबिद्री में रत्न प्रतिमा दर्शन

(फाल्गुन कृष्ण चौथ)

इस रत्नमय जिनेश्वरों के धाम में आने से भक्तों को आनन्द हुआ। सवेरे भक्तोंसहित गाजते-बाजते गुरुदेव ने यहाँ के जिनमन्दिरों के दर्शन किये; यहाँ एक हजार स्तम्भवाला प्रसिद्ध त्रिभुवनतिलकचूड़ामणि जिनमन्दिर अति भव्य और प्राचीन है। नीचे चन्द्रप्रभ भगवान के लगभग दस फीट के धातु के भव्य प्रतिमा है और ऊपर स्फटिक इत्यादि के जिनबिम्बों का दरबार है। तदुपरान्त यहाँ दूसरे अनेक जिनमन्दिर हैं, वहाँ दर्शन-पूजन किये।

दोपहर में सिद्धान्तवसती जिनमन्दिर में रत्नमय जिनबिम्बों के दर्शन के लिये गुरुदेव तथा यात्री आये... शुरुआत में जिनवाणी माता (ताड़पत्र पर प्राचीन धवल-महाधवल-सिद्धान्त शास्त्रों) के दर्शन कराये... और तत्पश्चात् अनुक्रम से पैंतीस विविध प्रकार के रत्नमणि के महा कीमती जिनबिम्बों के दर्शन कराये... और अन्त में एक साथ पूरा जिनेन्द्र दरबार (समवसरण दरबार) बताया... गुरुदेव के साथ इन जिनबिम्बों के दर्शन से भक्तों को बहुत ही हर्ष हुआ था... गुरुदेव भी इन जिनबिम्बों के दर्शन से बहुत ही प्रसन्न हुए थे और फिर से दूसरी बार भी दर्शन करने बैठे थे... चौबीस भगवन्तों की

पूजन तथा भक्ति हुई थी... गुरुदेव के साथ रत्नमय जिनबिम्बों के दर्शन से आनन्दित होकर पूज्य बहिनश्री-बहिन ने 'वाहवा जी वाहवा' वाली भक्ति करायी थी।

कारकल

मूलबिद्री में संघ तीन दिन रहा था... उस दौरान फाल्गुन कृष्ण सप्तमी के दिन मूलबिद्री से कारकल में दर्शन करने गये थे। यहाँ एक छोटी-सी पहाड़ी पर चालीस फीट की बाहुबली प्रभु की प्रतिमा है, वहाँ पूजन-भक्ति की थी। तदुपरान्त दूसरे अनेक जिनमन्दिर, मानस्तम्भ इत्यादि के दर्शन किये थे; और भुजबली ब्रह्मचर्याश्रम में गुरुदेव का मंगल प्रवचन तथा स्वागत समारोह हुआ था। वहाँ से वापस मूलबिद्री आये थे। रात्रि में त्रिभुवनतिलकचूड़ामणि मन्दिर में भक्ति हुई थी, उस समय हजारों दीपकों की कलामय रचना के बीच श्री चन्द्रप्रभ भगवान का दृश्य अद्‌भुत था, उसे देखकर सर्व भक्तों को बहुत आनन्द हुआ था।

वैणूर और हलेबीडु

फाल्गुन कृष्ण अष्टमी के दिन मूलबिद्री से प्रस्थान करके दस मील दूर वैणूर में स्थित 35 फीट के बाहुबली भगवान के दर्शन किये। वहाँ से हलेबीडु आये। हलेबीडु में उत्तम प्राचीन कारीगरीवाले तीन जिनमन्दिर हैं; उनमें 15-20 फीट के अति भव्य प्राचीन जिनबिम्ब हैं, शान्तिनाथ, पार्श्वनाथ इत्यादि के दर्शन करके थोड़ी देर भक्ति भी की थी। तत्पश्चात् गुरुदेव के हासन पधारने पर वहाँ के जैन समाज ने बहुत ही उमंग से गुरुदेव का स्वागत किया और आग्रह से गुरुदेव को वहीं रोका। स्वागत के समय बीच में एक सुन्दर जिनमन्दिर आने पर वहाँ दर्शन किये थे... एक भाई ने संस्कृत स्वागत गीत गाया था। संघ रात्रि में श्रवणबेलगोल पहुँच गया था।

बाहुबली भगवान की यात्रा का मुख्य धाम

श्रवणबेलगोल

फाल्गुन कृष्ण 9 के सवेरे पूज्य गुरुदेव हासन से श्रवणबेलगोल पधारने पर स्वागत हुआ। स्वागत के बाद तुरन्त पूज्य गुरुदेव संघसहित बाहुबली भगवान की यात्रा के लिये इन्द्रगिरि पर्वत पर पधारे... बहुत ही रमणीय यह पर्वत लगभग 400 सीढ़ी ऊँचा है और पन्द्रह मिनिट में ऊपर पहुँचा जाता है... ऊपर जाकर 57 फीट उन्नत बाहुबली नाथ को निहारते ही गुरुदेव आश्चर्य और भक्ति से स्तब्ध हो गये... बहुत ही भावपूर्वक बारम्बार इन वीतरागी नाथ को निहारा... और इन वीर-वैरागी बाहुबली नाथ के दर्शन कर-करके बहुत आनन्द व्यक्त किया। गुरुदेव के साथ बाहुबली नाथ की यात्रा करते हुए बहिनश्री-बहिन को भी बहुत ही उल्लास और भक्तिभाव जागृत होता था। प्रथम, बाहुबली प्रभु की सामूहिक पूजन हुई... तत्पश्चात् पूज्य गुरुदेव ने बाहुबली भगवान की भक्ति (ऐसे ऋषभनन्दन देखे वन में... इत्यादि) करायी। पश्चात् पूज्य बहिनश्री-बहिन ने भी भक्ति करायी थी।

'जेनी मुद्रा जोतां आत्मस्वरूप लखाय छे रे'

तत्पश्चात् गुरुदेव ने बारम्बार बाहुबली भगवान के दर्शन किये... और अनेकविध भक्ति भरे उद्गार व्यक्त किये (जो हम यात्रा के विस्तृत वर्णन के समय देखेंगे)। और

पर्वत के ऊपर विराजमान दूसरे अनेक भगवन्त, शिलालेख इत्यादि के दर्शन किये... इस प्रकार बहुत आनन्द, उल्लास और भक्तिभाव से श्रवणबेलगोल में बाहुबली भगवान की यात्रा करके संघसहित गुरुदेव नीचे पधारे।

बाहुबली नाथ की यात्रा करानेवाले गुरुदेव को नमस्कार हो!

★ ★ ★

दोपहर को प्रवचन के समय भी गुरुदेव बाहुबली भगवान की महिमा वर्णन करके यात्रा का हर्ष व्यक्त करते थे। श्रवणबेलगोल गाँव में भी अनेक जिनमन्दिर हैं, रात्रि में चौबीस भगवन्तों के मन्दिर में भक्ति हुई थी।

चन्द्रगिरि की यात्रा

फाल्गुन कृष्ण १० के सवेरे पूज्य गुरुदेव संघसहित श्रवणबेलगोल की दूसरी पहाड़ी चन्द्रगिरि की यात्रा को पधारे। इस पहाड़ी पर लगभग चौदह प्राचीन जिनमन्दिर, अति महत्त्व के प्राचीन शिलालेख, तथा भद्रबाहुस्वामी की गुफा है। यह पर्वत ५०० मुनियों का समाधि स्थान है। एक मन्दिर में पार्श्वप्रभु की विशाल प्रतिमाजी है; दूसरा एक मन्दिर जो चामुण्ड राजा का बनाया हुआ है, उसमें भद्रबाहु और चन्द्रगुप्त के जीवन सम्बन्धी प्राचीन चित्र उत्कीर्ण हैं; पर्वत पर यह सबसे प्राचीन मन्दिर है; और नेमिचन्द्रसिद्धान्त चक्रवर्ती ने गोम्मटसार की रचना इस मन्दिर में की थी। मन्दिरों के दर्शन के बाद शान्तिनाथ प्रभु (जो लगभग १५ फीट उन्नत हैं-उनके) सन्मुख पूजन-भक्ति हुए थे। यहाँ के अनेक प्राचीन शिलालेख (जो कन्नड़ लिपि में हैं) उनमें कुन्दकुन्दाचार्य का अति आदरपूर्वक उल्लेख है; एक शिलालेख में तो उन्हें 'तत्कालीन अशेष तत्त्वों के ज्ञाता' कहा है। तदुपरान्त **वन्धो विभुर्भुवि न कैरिह कौण्डकुण्ड** इत्यादि जो शिलालेख सोनगढ़ के समयसार इत्यादि में प्रकाशित है, वह शिलालेख यहाँ के पार्श्वप्रभु के मन्दिर में दायें हाथ के ऊपर है, उसका बहुत भावपूर्वक गुरुदेव और भक्तों ने अवलोकन किया। तत्पश्चात् भद्रबाहुस्वामी की गुफा देखी - जिसमें भद्रबाहुस्वामी के प्राचीन चरणकमल है, वहाँ दर्शन करके अर्घ्य चढ़ाया।

जिननाथपुरी

चन्द्रगिरिधाम की यात्रा के बाद उसकी दूसरी ओर तलहटी में आये हुए जिननाथपुर गाँव में दो जिनमन्दिरों के दर्शन करने गुरुदेव संघसहित पधारे थे। उनमें से एक मन्दिर में वे पार्श्वनाथ प्रभु विराजते हैं कि जिनके चित्र के सन्मुख पूज्य गुरुदेव ने सोनगढ़ में परिवर्तन किया था।

दोपहर में श्रवणबेलगोल शहर के दूसरे पाँच मन्दिरों के दर्शन करने गुरुदेव पधारे थे... उसमें अक्कनवसती और मंगावसती ये दो मन्दिर अक्का और मंगी (बड़ी बहिन और छोटी बहिन) इन दो बहिनों ने बनाये हैं। अक्कनवसती मन्दिर में कसौटी के स्तम्भ पर सुन्दर प्राचीन कारीगरी है, उसे देखने पर जैनधर्म के प्राचीन वैभव का ख्याल आता है।

तीर्थधामों में गुरुदेव को आहारदान का लाभ मिलने से भक्तों को बहुत आनन्द होता था। रात्रि में भट्टारकजी के मन्दिर में विविध प्रकार के जिनबिम्बों के दर्शन किये थे।

श्रवणबेलगोल में

बाहुबली प्रभु की दूसरी यात्रा और अभिषेक

फाल्गुन कृष्ण ११ के दिन फिर से इन्द्रगिरि (अर्थात् विन्ध्यगिरि) पर बाहुबली भगवान की यात्रा के लिये फिर से गुरुदेव संघसहित पधारे थे। आज गुरुदेव ने भावपूर्वक बाहुबली प्रभु के चरणों का अभिषेक किया था। तत्पश्चात् यात्रियों ने भी भक्तिपूर्वक अभिषेक किया था। इस अभिषेक सम्बन्धी उच्छामणि (बोलियों) में तथा रथयात्रा सम्बन्धी उच्छामणि में लगभग १०००० रुपये हुए थे। इन रुपयों का उपयोग यहाँ के पर्वत पर यात्रा के स्मरणार्थ किया जाएगा। अभिषेक के बाद गुरुदेव ने चारों ओर से घूम-घूमकर बाहुबलीनाथ को नयन भर निरखा... **निरखत तृप्ति न थाये...** बस, मानो भगवान को निरखा ही करें!—अभिषेक के बाद बहुत भक्ति की... इस प्रकार बाहुबली भगवान की दूसरी यात्रा और अभिषेक करके गुरुदेव के साथ आनन्द से भक्ति करते-करते भक्त नीचे आये... बाहुबली भगवान की इस दूसरी यात्रा से भक्तों को बहुत आनन्द हुआ।

दोपहर को प्रवचन में भेदज्ञान के निमित्तों की दुर्लभता का वर्णन आने पर गुरुदेव ने कहा—**देखो, यह निरावरण शान्त वीतरागी बाहुबली भगवान इस दुनिया में अजोड़ हैं, यह भेदज्ञान का निमित्त हैं; चैतन्य शक्ति को खुल्ली करके खड़े हुए ये बाहुबली**

भगवान साक्षात् चैतन्य को दिखाते हैं। व्याख्यान के पश्चात् दक्षिणी बहिनों ने रासपूर्वक भक्ति की थी। संघ के यात्री शाम को भोजन करके श्रवणबेलगोल की ओर रवाना हुए।

सर्च लाईट में बाहुबली दर्शन (तीसरी यात्रा)

सायंकाल बाकी के भक्तों सहित पूज्य गुरुदेव सर्च लाईट के प्रकाश में बाहुबली भगवान के दर्शन करने के लिये फिर से इन्द्रगिरि पर पधारे। गुरुदेव ने बहुत भाव से... बहुत लगन से... भक्तिभीने चित्त से दर्शन किये। शान्त वातावरण में जगमग कर रही इन वीर वीतरागी सन्त की मुद्रा निहारते ही सबको बहुत आनन्द हुआ। और...

प्यारा बाहुबलीदेव... जिन ने वन्दु बार हजार....
नाथ को वन्दु बार हजार....

यह भक्ति पूज्य बहिनश्री-बहिन ने बहुत उत्साह से करायी।

इस प्रकार उल्लास भरी भक्तिपूर्वक बाहुबलीनाथ के दर्शन करके नीचे आने पर श्रवणबेलगोल की जनता ने अति उमंगपूर्वक गुरुदेव को गाँव में घुमाकर स्वागत किया... गुरुदेव का ऐसा भावभीना स्वागत देखकर भक्तों को बहुत हर्ष हुआ। लोग कहते :— जैसे बाहुबली भगवान को देखकर आपको अतिशय आनन्द हुआ, वैसे ही हमको कानजीस्वामी को देखकर अतिशय आनन्द हुआ।

इस प्रकार अतिशय आनन्द और भक्तिपूर्वक बाहुबली भगवान की यात्रा करके गुरुदेव दूसरे दिन श्रवणबेलगोल से मैसूर पधारे।

★ ★ ★

भारत के सर्वोन्नत भगवान बाहुबलीनाथ को नमस्कार

बाहुबली भगवान की यात्रा करानेवाले कहान गुरुदेव को नमस्कार

मैसूर शहर

फाल्गुन कृष्ण १२ के दिन गुरुदेव मैसूर पधारने पर भक्तों ने भावभीना स्वागत किया... स्वागत में चार हाथी थे। मैसूर एक मनभावन शहर है; यहाँ दो जिनमन्दिरों के उपरान्त कितने ही स्थल दर्शनीय हैं। चन्दन के तेल की फैक्ट्री इत्यादि देखने के लिये यात्री गये थे। दूसरे दिन मैसूर से लगभग दस मील दूर श्रीरंगपट्टम में चौबीस भगवन्तों के दर्शन किये। सायंकाल गुरुदेव इत्यादि मैसूर से लगभग पच्चीस मील ऊपर आये हुए गोम्मटगिरि के दर्शन को गये थे। यहाँ १५ फीट सुन्दर (श्याम) बाहुबली भगवान हैं, उनके दर्शन-पूजन किये। बस के यात्री भी गोम्मटगिरि के दर्शन के लिये जाते थे परन्तु एक बस (नो. ७) बीच में अटक जाने से बसों को वापिस मुड़ना पड़ा था। रात्रि में प्रसिद्ध वृन्दावन गार्डन और कृष्णसागर तालाब देखने गये थे। रंग-बिरंगी प्रकाश के बीच विविध प्रकार के फब्बारे और पानी के प्रपात इत्यादि रचना से बगीचे का दृश्य बहुत आकर्षक है; कृष्णसागर तालाब के बीच लगभग ७५ फीट ऊँचा फब्बारा है। उसका अवलोकन करके वापस मैसूर आये।

बैंगलोर सिटी

फाल्गुन कृष्ण १४ के दिन गुरुदेव संघसहित बैंगलोर पधारने पर वहाँ के सैकड़ों प्रतिष्ठित लोगों ने भव्य स्वागत किया। बैंगलोर, वह भारत के उद्योगों का एक मुख्य शहर है; यहाँ एक जिनमन्दिर है, उसमें धातु के भगवान महावीर खड्गासन में बहुत ही शोभित हो रहे हैं। यहाँ के गुजराती समाज ने संघ को भोजन कराया था। यहाँ संघ दो दिन रहा था। दूसरे दिन टाउनहॉल में प्रवचन का दृश्य सुन्दर था; प्रवचन के पहले प्रोफेसर के.एस. धर्मेन्द्रैया ने ईंग्लिश स्वागत प्रवचन में गुरुदेव का जीवन परिचय देकर कहा था कि यह एक सुनहरी अवसर है कि बैंगलोर के आँगन में ७०० लोगों के संघसहित पूज्य कानजीस्वामी पधारे हैं। बैंगलोर की जनता की ओर से मैं उनका स्वागत करता हूँ। दूसरे एक भाई ने ईंग्लिश प्रवचन द्वारा अभिनन्दन करते हुए कहा कि अपना सद्भाग्य है कि कानजीस्वामी इतने दूर से संघसहित यहाँ पधारे हैं। २५०० वर्ष पहले भगवान महावीर ने जो सन्देश कहा था, वह आज वे सुना रहे हैं। अपने सबकी ओर से मैं स्वामीजी को

अभिनन्दन करता हूँ। गुजराती समाज की ओर से स्वागत प्रवचन करते हुए एक भाई ने कहा था कि—आज अपने बहुत आनन्द का धन्य दिवस है कि पूज्य गुरुदेव यहाँ दो दिन पधारे हैं। बैंगलोर शहर की ओर से मैं अभिनन्दनपूर्वक आपश्री का आभार मानता हूँ। गुरुदेव के प्रवचन में शहर के अनेक प्रतिष्ठित लोग उपस्थित थे.... और प्रवचन की गुजराती या हिन्दी कोई भाषा न समझते होने पर भी गुरुदेव की प्रभावशाली मुद्रा और भावभीनी चेष्टा देखकर बहुत प्रभावित होते थे। बैंगलोर शहर में ऐरोप्लेन बनाने का कारखाना, टेलीफोन का कारखाना इत्यादि बड़े उद्योग हैं।

बैंगलोर का दो दिन का कार्यक्रम पूरा करके फाल्गुन शुक्ल एक के सवेरे संघ ने वहाँ से प्रस्थान किया... बीच में कांजीवरम शहर में गाँव से एक मील दूर १२०० वर्ष प्राचीन जिनमन्दिर के दर्शन किये। पूज्य गुरुदेव रात्रि में यहाँ रुके थे। संघ रात्रि तक मद्रास पहुँच गया था।

पुंडी नगरी

पूज्य गुरुदेव बैंगलोर से मद्रास आते हुए बीच में पुंडीनगर में जिनमन्दिर के दर्शन करने पधारे; वहाँ के जिनमन्दिर में अति प्राचीन और सुन्दर छह फीट खड्गासन में पार्श्वनाथ भगवान विराजमान हैं तथा आदिनाथ प्रभु इत्यादि प्राचीन प्रतिमाएँ तथा नया मानस्तम्भ है। यहाँ आधे घण्टे व्याख्यान हुआ था और बाहर से ३००-४०० लोग गुरुदेव के दर्शन को आये थे।

मद्रास शहर

फाल्गुन शुक्ल दूज के शुभ दिन पूज्य गुरुदेव मद्रास पधारने पर दिगम्बर जैन समाज ने तथा गुजराती समाज ने भावभीना भव्य स्वागत किया... स्वागत के अवसर पर सबसे आगे हाथी था... नगरी में धूमधामपूर्वक घूमकर स्वागत सेन्डमेरी हॉल में आया था। वहाँ प्रवचन के लिये सुन्दर कलामय स्टेज की रचना की गयी थी। वहाँ लगभग ४००० लोगों की भीड़ के बीच गुरुदेव ने मंगल प्रवचन किया। मद्रास के भाईयों ने संघ के आवास-भोजन की सुन्दर व्यवस्था की थी। सवेरे तथा दोपहर को प्रवचन में दो हजार लोग होते थे। आज (फाल्गुन शुक्ल दूज) सोनगढ़ में सीमन्धर प्रभु की प्रतिष्ठा का मंगल

दिन होने से रात्रि में जिनमन्दिर में पूज्य बहिनश्री–बहिन ने विशिष्ट भक्ति करायी थी। फाल्गुन शुक्ल तीज के दिन मद्रास ऐसेम्बली के स्पीकर ने गुरुदेव के सम्मान का प्रवचन ईंग्लिश में किया था—जिसमें गुरुदेव की प्रवचन शैली की विशेष महिमा की थी। पण्डित भरत चक्रवर्ती पूज्य गुरुदेव के प्रवचन का तमिल भाषा में अनुवाद करके संक्षिप्त सार समझाते थे। फाल्गुन शुक्ल चार के दिन मद्रास दिगम्बर जैन समाज की ओर से पूज्य गुरुदेव को निम्न अभिनन्दन पत्र प्रदान किया गया था, जिसे पण्डित मल्लिनाथ शास्त्री ने पढ़ा था और सेठ कन्हैयालाल जैन के हस्त से अर्पण किया गया था।

॥ श्रीजिनाय नमः ॥

आदरणीय निश्चयतत्त्वप्रकाशक श्री कानजी स्वामी

के करकमलों में सादर समर्पित

❃ अभिनन्दन पत्र ❃

मान्यवर!

आप का शुभागमन मद्रास प्रान्त के लिये अहोभाग्य है। आप सौराष्ट्र प्रान्त के होने पर भी भारत भर के धर्मबन्धु कहा जाये तो कोई अत्युक्ति की बात नहीं है। महान अध्यात्म तत्त्व के जन्मदाता श्री कुन्दकुन्दाचार्य के समयसार आदि ग्रन्थों के प्रचार कार्य ही आप की निष्पक्षता एवं धर्मपरायणता का ज्वलन्त उदाहरण है। इससे स्वयं ही नहीं बल्कि हजारों नरनारियाँ स्व–पर तत्त्व को अवलोकन कर सद्धर्मानुयायी हैं।

निरभिमानसेवाव्रती!

वो सच्ची सेवा करते हैं, वे अभिमान को नाममात्र के लिये भी नहीं रखते, इसका आप प्रत्यक्ष उदाहरण हैं। इस पवित्र सेवाकार्य को करने में कई बाधाओं का सामना करना स्वाभाविक है। फिर भी आपने इस पर जो दृढ़ता दिखायी है, वह कम महत्त्व की बात नहीं है। आज यह महान कार्य बीजरूप में न होकर बृहद् वटवृक्ष का सा रूप धारण करने लगा है।

सरस्वतीसुत!

आपके दर्शनमात्र से ही आपकी आध्यात्मिक विद्वत्ता की झलक झलकने लगती है। यह 'वक्त्रं वक्ति हि मानसं' वाली नीति को चरितार्थ करती है। आप गुजराती तथा हिन्दी आदि भाषाओं के अच्छे ज्ञाता हैं। आपकी आध्यात्मिक प्रतिभा विशिष्ट प्रवचनशैली ने तो जनसाधारण को ही नहीं अपितु विद्वद्वृन्द को भी मुग्ध कर दिया है।

शुद्धात्मतत्त्वाराधक!

आपने अपनी स्वानुभूति के द्वारा संसार एवं विषयभोगों की क्षणभंगुरता को भलीभाँति जानकर शुद्धात्म तत्त्वाराधन का जो उच्च आदर्श उपस्थित किया है, यह प्रशंसनीय ही नहीं बल्कि अनुकरणीय भी है। इसी कारण से प्रेरित होकर अपना जैन समाज आज तत्त्वमार्गानुगामी बनता जा रहा है।

सद्धर्मप्रचारक!

आपने अपने निरीह प्रचार से जहाँ दिगम्बर जैन धर्म की महत्ता का मान नहीं के बराबर था वहाँ इसकी गरिमा को चमका दिया है। आज सौराष्ट्र भर में दिगम्बर जैन मन्दिर, स्वाध्यायशाला, विद्या-भवन, श्राविकाश्रम आदि धार्मिक संस्थायें कायम हो गयी हैं। यह काम इस मद्रास प्रान्त के उस समय को याद दिलाता है जबकि दिगम्बर जैन धर्म के उद्भट आचार्यवर्य श्री समन्तभद्र, कुन्दकुन्द, अकलंक आदि ने इस धरातल को अलंकृत कर दिगम्बर जैन धर्म का डंका सारी दुनिया में बजाया था। यही कारण है कि आज भी इसका महत्व जाज्वल्यमान है। नहीं तो यहाँ के साम्प्रदायिक संघर्षों के कारण इसका [दिगम्बर जैन धर्म] नाम तक रह नहीं पाता। यहाँ जो मधुर तमिल भाषा बोली जाती है इसकी उन्नति एवं रक्षा में जैन आचार्यों की सेवा अतुलनीय है। यहाँ के जितने भी व्याकरण, साहित्य आदि उत्तम ग्रन्थ पाये जाते हैं, वे सबके सब जैनाचार्यों के ही हैं। अतः इसकी रक्षा के लिये समुचित व्यवस्था करना परमावश्यक है। इस पुनीत कार्य में उत्तर भारत के जैन धनाढ्य को इस ओर आकर्षित कर, नश्वर सम्पत्ति को अविनश्वर बनाने का मार्ग दिखायेंगे तो आपकी सेवा चिरस्मरणीय रहेगी।

शान्तिप्रिय!

अन्तिम प्रार्थना आप से यह है कि आज अपने दिगम्बर जैन समाज में उपादान और निमित्त को लेकर जो चर्चा चल रही है, उसे अनुकूल वातावरण में निरोधकर शांति का साम्राज्य स्थापित किया जाये; जिससे समाज का संगठन मजबूत निरर्गलता के साथ आगे बढ़ सके।

मद्रास — आपके शुभागमन से प्रफुल्लित होनेवाला

१३-३-१९५९ — मद्रास दिगम्बर जैन समाज

वांदेवास

फाल्गुन शुक्ल पंचमी के दिन पौन्नुर की यात्रा को जाते हुए बीच में कांजीवरम होकर लगभग २००० लोग गुरुदेव के दर्शन तथा श्रवण के लिये एकत्रित हुए थे और गुरुदेव को तीन अभिनन्दन पत्र प्रदान किये थे। अनजाना देश, अनजाने लोग, और अनजानी भाषा, तथापि गुरुदेव जहाँ-जहाँ पधारे, वहाँ-वहाँ हजारों लोगों ने बहुत ही उमंग से गुरुदेव का सम्मान किया और गुरुदेव का महान प्रभाव देखकर बहुत प्रसन्न हुए।

कुन्दकुन्द प्रभु की पवित्र तपोभूमि पौन्नूरधाम की उल्लासभरी यात्रा

लगभग ९ बजे पौन्नूर पहुँच गये थे। यहाँ एक छोटा सा बहुत ही रमणीय पर्वत है... यह पर्वत कुन्दकुन्दाचार्यदेव की तपोभूमि है। आपश्री यहाँ ध्यान करते थे... इतना ही नहीं परन्तु ऐसी बात भी यहाँ के लोगों में प्रसिद्ध है कि आपश्री यहाँ से विदेहक्षेत्र में गये थे और यहीं परमागमों की रचना की थी। ऐसी कुन्दकुन्दप्रभु की पवित्र भूमि में आने पर गुरुदेव इत्यादि सबको बहुत ही आनन्द हुआ... अनेक चम्पा के वृक्षों से यह पौन्नूरधाम शोभित हो रहा है... 'पौन्नूर' का अर्थ होता है 'सुवर्ण का पर्वत' इस पर कुन्दकुन्दाचार्यदेव के महामंगल चरणपादुका है; कुन्दकुन्दप्रभु के पवित्र चरणों के प्रताप से यह पौन्नूरधाम सुवर्ण के पर्वत से भी अधिक सुशोभित लगता है। पूज्य गुरुदेव चलकर पर्वत पर चढ़ गये... पर्वत चढ़ने में दसेक मिनिट लगते हैं... पूज्य बहिनश्री चम्पाबेन और पूज्य बहिन शांताबेन भी चलकर पर्वत पर चढ़ी थीं और पर्वत का दृश्य देखकर बहुत प्रसन्न हुई थीं।

पर्वत पर आकर गुरुदेव ने बहुत भाव से उस पवित्र क्षेत्र का अवलोकन किया। पर्वत पर चम्पा के पाँच वृक्ष हैं... जहाँ कुन्दकुन्द प्रभु के चरणकमल स्थापित हैं, उनके बराबर ऊपर एक चम्पा का वृक्ष है और उससे खिरते हुए चम्पा-पुष्प सहज ही कुन्दकुन्दप्रभु के चरणों पर गिरते हैं—इस प्रकार ये चम्पा-पुष्प कुन्दकुन्दप्रभु की जगत्पूज्यता प्रसिद्ध कर रहे हैं।

शुरुआत में बहुत भाव से कुन्दकुन्दाचार्यदेव की सामूहिक पूजन हुई। उत्साह भरी पूजन के बाद गुरुदेव ने बहुत ही भक्तिभाव से निम्न स्तवन गवाया।

एवा कुन्दप्रभु अम मंदिरिये....
एवा आतम आवो अम मंदिरिये....
जेणे तपोवन तीर्थमां ज्ञान लाध्युं....
जेणे वन-जंगलमां शास्त्र रच्युं....
ॐ कार ध्वनिनुं सत्त्व साध्युं...
एवा कुन्दप्रभु अम मंदिरिये।
जेणे जीवनमां जिनवर चिंतव्या...
जेणे जीवनमां जिनवर ने देख्या...
जेणे जीवनमां सीमंधरप्रभु देख्या...
एवा कुन्दप्रभु अम मंदिरिये।

— इत्यादि भक्ति बहुत ही भावपूर्वक हुई थी... गुरुदेव के मुख से कुन्दकुन्द प्रभु की ऐसी सरस भक्ति सुनकर बहिनश्री-बहिन इत्यादि को बहुत ही हर्ष होता था। कुन्दकुन्द प्रभु के धाम की इस यात्रा से गुरुदेव को तथा एक-एक भक्तजन को हृदय में अद्भुत भक्ति और उल्लास की ऊर्मियाँ उछलती थीं।

तत्पश्चात्, कुन्दकुन्द प्रभु के इस पवित्र धाम की गुरुदेव की संघसहित महान यात्रा के एक संस्मरण निमित्त यहाँ कुन्दकुन्द प्रभु के चरणकमल पर एक मण्डप बनाने का विचार होने पर उसके लिये फण्ड हुआ था, उसमें लगभग चार हजार रुपये हुए थे; जिसमें १५५५ रुपये श्री जैन स्वाध्याय मन्दिर-सोनगढ़ की ओर से (पूज्य बहिनश्री-बहिन हस्तक फण्ड में से) घोषित किये गये थे।

तत्पश्चात् गुरुदेव ने बहुत उल्लास से अपने परमगुरु भगवान कुन्दकुन्द प्रभु के पावन चरणों का अभिषेक किया था... बहिनश्री-बहिन ने भी बहुत भाव से कुन्दकुन्द प्रभु के चरणों का अभिषेक किया था... अभिषेक प्रसंग में गुरुदेव इत्यादि के हृदय में कुन्दकुन्द प्रभु के प्रति कितनी परमभक्ति भरी हुई है, यह दृष्टिगोचर होता था;—मानो कि उनके अन्तर में भरी हुई भक्ति का प्रवाह ही जलरूप से बाहर आकर कुन्दकुन्द प्रभु के चरणों का अभिषेक करता हो!!

अभिषेकादि के बाद पहाड़ पर छोटी-छोटी तीन गुफाएँ, चम्पा के वृक्ष इत्यादि का अवलोकन करके सब नीचे उतरे थे... उतरते-उतरते... पूज्य बहिनश्री-बहिन आश्चर्यकारी भक्ति द्वारा आज की यात्रा का उत्साह और कुन्दकुन्द प्रभु के प्रति परम भक्ति व्यक्त करते थे... इस प्रकार पौन्नूर में कुन्दकुन्द प्रभु की पवित्र तपोभूमि की यात्रा, बहुत ही आनन्द से हुई... मानो साक्षात् कुन्दकुन्द प्रभु के ही दर्शन हुए हों—ऐसा आनन्द भक्तों को इस यात्रा में हुआ।

परम उपकारी कुन्दकुन्दाचार्य भगवान को नमस्कार हो...

कुन्दकुन्द प्रभु की पवित्र तपोभूमि पौन्नूर को नमस्कार हो...

कुन्द प्रभु के पवित्र धाम की यात्रा करानेवाले कहान गुरुदेव को नमस्कार हो...

यात्रा के बाद पौन्नूर पर्वत की तलहटी में ही मण्डप बाँधकर वहाँ गुरुदेव को अभिनन्दन-पत्र अर्पण किये गये थे... कुन्दकुन्द प्रभु के पवित्र धाम की इस उल्लास भरी यात्रा से गुरुदेव को विशेष उल्लास आने पर ऊपर जो १५५५ रुपये जैन स्वाध्यायमन्दिर की ओर से घोषित किये गये थे उसके बदले ५५५५ रुपये घोषित किये गये... यहाँ गुरुदेव के दर्शन इत्यादि के लिये आस-पास से डेढ़ हजार जितने लोग आ पहुँचे थे... पौन्नूर के आस-पास जैन धर्म का बहुत विस्तार है और वहाँ की जनता में इस पौन्नूर तीर्थ की बहुत महिमा है।

पौन्नूर-तलहटी में मंगल प्रवचन करते हुए गुरुदेव ने कुन्दकुन्द प्रभु की महिमा व्यक्त की थी।

इस प्रकार अद्भुत उल्लास-भक्ति और हर्ष से कुन्दकुन्द प्रभु की तपोभूमि की मंगल यात्रा करके गुरुदेव और संघ वांसखेड आये... और वहाँ के जैन समाज की ओर से संघ का भोजन हुआ... भोजन के बाद, अब मद्रास तक के यात्री मुम्बई जाने के लिये (चार बसों में) यहाँ से अलग हुए... गुरुदेव से और संघ से बिछुड़ते हुए यात्री गद्गद् हो जाते थे... और महीने तक इकट्ठे रहे यात्री एक-दूसरे को लगनपूर्वक विदा देते थे, वह दृश्य भी भावभीना था... चार बसें और अनेक मोटरें यहाँ से मुम्बई की ओर वापिस मुड़ गयी थीं... लगभग ४०० यात्री वापस रवाना हुए थे... और बाकी चार बसें तथा दस

मोटरों में लगभग २५० यात्री पूज्य गुरुदेव के साथ यात्रा में आगे जाने के लिये मद्रास की ओर चल दिये।

अकलंक वसती

मद्रास जाते हुए बीच में केरेन्डे (karandai) में दो जिनमन्दिरों के दर्शन किये... एक जिनमन्दिर का नाम 'अकलंक वसती' है। अकलंकस्वामी का बौद्धों के सामने बड़ा वाद-विवाद यहाँ हुआ था और वाद-विवाद में विजित होने के बाद उन्होंने यहीं ध्यान किया था... उस सम्बन्धी एक चित्र मन्दिर की दीवार में उत्कीर्ण है तथा अकलंकस्वामी का समाधि का स्थान भी यहीं है। गुरुदेव यहाँ पधारने पर आस-पास से हजार जितने लोग आये थे और अकलंक वसती में तमिल भाषा में गुरुदेव को स्वागत पत्रिका अर्पण की थी; तत्पश्चात गुरुदेव ने यहाँ मंगल प्रवचन करके अकलंकस्वामी, कुन्दकुन्दस्वामी इत्यादि सन्तों की महिमा की थी। प्रवचन के बाद गुरुदेव को अभिनन्दन पत्र दिया गया था। जैनधर्म के महान प्रभावक अकलंकस्वामी का स्थान निरखने पर गुरुदेव को और भक्तों को आनन्द हुआ था। इस प्रकार कुन्दकुन्दस्वामी और अकलंकस्वामी के पावन धामों की यात्रा करके सायंकाल वापस मद्रास आ गये थे।

हैदराबाद के एक जिनमन्दिर के भगवंत

बेजवाडा-हैदराबाद—

फाल्गुन शुक्ल छह (दिनांक १५ मार्च) के दिन मद्रास से नेल्लुर होकर बेजवाडा आये... फाल्गुन शुक्ल सप्तमी को गुरुदेव बेजवाडा पधारने पर गुजराती समाज ने स्वागत किया... यात्री फाल्गुन शुक्ल अष्टमी को हैदराबाद आ गये... और दो दिन से भगवान के विरह में पड़े हुए भक्त रिक्शा में बैठ-बैठकर भगवान को भेंटने के लिये आनन्दपूर्वक दौड़ पड़े। भगवान के दर्शन करने के लिये भक्तों का हृदय कैसा उत्कंठित है, वह यहाँ दिखायी दिया था। भक्तों ने उत्साह-उत्साह से प्रभुजी के दर्शन किये... और रात्रि में पूज्य बहिनश्री-बहिन ने (अष्टाह्निका निमित्त तथा यात्रा उत्सव निमित्त) भावभीनी नयी-नयी भक्ति गवायी थी। फाल्गुन शुक्ल नौ के दिन गुरुदेव हैदराबाद पधारने पर भक्तों ने स्वागत किया। गुरुदेव के साथ यहाँ के चार जिनमन्दिरों के दर्शन किये, उनमें सैकड़ों प्राचीन प्रतिमाएँ विराजमान है। तदुपरान्त यहाँ के विशाल म्यूजियम में श्री पार्श्वनाथ और महावीर भगवन्तों के (२४ भगवन्तों सहित) अति मनोज्ञ प्रतिमा देखी...

सोलापुर में फाल्गुन शुक्ल ११—

हैदराबाद से प्रस्थान करके संघ शाम को सोलापुर आ गया... रात्रि में राजुलदेवी श्राविकाश्रम के जिनालय में पूज्य बहिनश्री-बहिन ने भक्ति करायी... फाल्गुन शुक्ल १२ के दिन गुरुदेव सोलापुर पधारने पर जैन समाज ने उत्साहपूर्वक स्वागत किया... श्राविकाश्रम

की अधिष्ठाता पण्डित सुमतिबाई ने यात्रासंघ की व्यवस्था बहुत वात्सल्यपूर्वक की थी... पण्डित सुमतिबाई बालब्रह्मचारी है, वे सोनगढ़ के प्रति विशेष प्रेम रखती हैं। तदुपरान्त सेठ रावजीभाई, सेठ माणेकलालभाई इत्यादि ने भी उत्साहपूर्वक भाग लिया था। स्वागत प्रसंग में आश्रम के जिनालय में कुन्दकुन्द प्रभु का और गुरुदेव का त्रिरंगी रंगोली चित्र आलेखने में आया था, वह बहुत ही कलामय था, मानो असली फोटो ही नीचे बिछाये हों, ऐसा दिखता था; यह दृश्य नवीन था... गुरुदेव ने आदिनाथ मन्दिर में मांगलिक सुनाया... यहाँ पूज्य गुरुदेव के पधारने से और पूज्य बहिनश्री-बहिन के समागम से सुमतिबाई बहुत प्रसन्न हुई थीं। यहाँ गुरुदेव पधारने पर और सोनगढ़ तथा सोलापुर दोनों आश्रम की बहिनों का मिलन होने से सोनगढ़ जैसा वातावरण लगता था। यहाँ सात सुन्दर जिनमन्दिर हैं... उनमें रत्नमय भगवन्तों इत्यादि की सुन्दर प्रतिमा भी है। गुरुदेव का प्रवचन जैन बोर्डिंग में विशेष मण्डप में हुआ था, प्रवचन में हजारों लोग उत्साह से लाभ लेते थे। रात्रि में श्राविकाश्रम के मन्दिर में कमलासन महावीर प्रभु के सन्मुख भक्ति हुई थी... भक्ति के समय पूरा मन्दिर अन्दर और बाहर खचाखच भर गया था... और पूज्य बहिनश्री-बहिन ने वैराग्य तथा उल्लास से भरपूर बहुत भक्ति करायी थी। भक्ति के पश्चात् दोनों आश्रम की बहिनों ने परस्पर परिचय किया था तथा भक्तिपूर्वक रास लिया था तथा तात्त्विक प्रश्नोत्तर हुए थे। इस प्रसंग पर पारस्परिक परिचय से दोनों आश्रम की बहिनें बहुत प्रसन्न हुई थी।

फाल्गुन शुक्ल त्रयोदशी के सवेरे प्रवचन के बाद जैन बोर्डिंग में गुरुदेव के स्वागत का समारम्भ हुआ था और दोपहर को श्री आदिनाथ मन्दिर में सुन्दर भक्ति हुई थी; भावभीनी भक्ति में पूज्य बहिनश्री-बहिन की तन्मयता देखकर लोग आश्चर्य और आनन्द को प्राप्त हुए। रात्रि में श्राविकाश्रम में सुन्दर आध्यात्मिक तत्त्वचर्चा हुई थी और तत्त्वचर्चा के बाद आश्रम की ओर से विद्युलताबेन शाह (B.A.B.T. हेड मिस्ट्रेस) ने बहुत लगनपूर्वक भावभीना आभार दर्शन (मराठी भाषा में) किया था; विद्युलताबेन बालब्रह्मचारी है और सोनगढ़ के प्रति बहुत प्रेम रखती है। आभार दर्शन में उन्होंने सोनगढ़ के आध्यात्मिक वातावरण की प्रशंसा की थी और गुरुदेव संघसहित सोलापुर पधारे तथा श्राविकाश्रम में पधारकर उन्होंने अध्यात्मचर्चा का लाभ प्रदान किया इसके लिये प्रसन्नता से उन्होंने आभार माना था तथा पूज्य बहिनश्री-बहिन (-चम्पाबेन तथा शान्ताबेन) तीन दिन आश्रम में उतरे और भावभीनी भक्ति-चर्चा का बहुत लाभ प्रदान किया, उसके बदले उनका भी आभार माना था। पूज्य बहिनश्री-बहिन के तीन दिन के सहवास से आश्रम की सभी

बहिनें बहुत प्रभावित हुई थीं और उनकी ज्ञान–शान्ति–वैराग्य तथा भक्ति की तल्लीनता की मुक्तकण्ठ से प्रशंसा की थी। पूज्य गुरुदेव और बहिनश्री–बहिन के पधारने से आश्रम का वातावरण ही पलट गया था, चारों ओर आनन्द उत्सव और अध्यात्म चर्चा का वातावरण बन गया था। आश्रम का वातावरण सुन्दर, आनन्दी और उल्लास भरा है। पण्डित सुमतिबहिन की प्रमुखता में आश्रम की प्रत्येक बहिन और प्रत्येक कार्यकर्ता बहुत ही प्रेम और उत्साह से संघ के साथ मिलकर आगत–स्वागत करते थे। वास्तव में सोलापुर के दो दिन और उनमें भी राजुलदेवी श्राविकाश्रम के दो दिन संघ को बहुत याद रहेंगे।

इस प्रकार सोलापुर का कार्यक्रम पूरा करके, फाल्गुन शुक्ल १४ के सवेरे गुरुदेव ने संघसहित कुंथलगिरि सिद्धक्षेत्र की ओर प्रस्थान किया। आश्रमवासियों ने भावभीनी विदाई दी। ब्रह्मचारिणी सुमतिबेन ने विशेष भावभीनी विदाई दी। ब्रह्मचारी सुमतिबेन को विशेष भाव होने से वे कुंथलगिरि की यात्रा के लिये संघ के साथ आयीं।

धाराशिव की जैन गुफाएँ

सोलापुर से कुंथलगिरि जाते हुए बीच में उस्मानाबाद से तीन मील पर धाराशिव की गुफाएँ हैं, उन्हें देखने गये थे। यहाँ पर्वत में प्राचीन गुफाएँ उत्कीर्ण हैं। ये प्राचीन गुफाएँ करकण्डु राजा ने बनायी हुई मानी जाती हैं। अनेक गुफाओं में जिनबिम्ब विराजमान हैं... एक गुफा में पानी वावड़ी भी है। गुरुदेव इत्यादि वहाँ गुफाओं में पहले पहुँचे गये थे... पीछे रहे हुए सैकड़ों यात्री गुरुदेव को और गुफाओं को शोधते–शोधते चारों ओर घूम रहे थे... गुफावासी भगवन्तों की शोध में पूरे पर्वत पर भक्त अलग–अलग घूम रहे थे। भगवान की शोध में घूम–घूमकर थके हुए भक्तों को गुफा में प्रवेश करने से शान्ति हुई और जिनेन्द्र भगवन्त के दर्शन करते ही थकान उतर गयी... 'हर्षपूर्वक भगवान के दर्शन करके सबने भक्ति की... गुफाओं का वातावरण बहुत शान्त है... कोई–कोई गुफा तो ऐसी शान्त है कि अन्दर प्रवेश करते ही मानो किसी महामुनि के समीप में आये हों—ऐसी शान्ति लगती है। एक बड़ी गुफा में लगभग ७ फीट विशाल पार्श्वप्रभु विराजते हैं।

धाराशिव की जैन गुफाएँ देखकर उस्मानाबाद में पारसप्रभु इत्यादि के दर्शन करके कुंथलगिरि की ओर प्रस्थान किया... गुरुदेव उस्मानाबाद में रुके थे और वहाँ प्रवचन करने के बाद कुंथलगिरि पधारे।

कुंथलगिरि का सुन्दर दृश्य

कुंथलगिरि सिद्धिधाम की यात्रा के बाद की भक्ति का यह दृश्य है। जगह-जगह भक्ति इत्यादि द्वारा यात्रा के प्रसंगों का स्मरण करके यात्री यात्रा की भावना को उग्र बनाते थे और प्रवास की कैसी भी तकलीफ को भूल जाते थे।

कुंथलगिरि सिद्धक्षेत्र

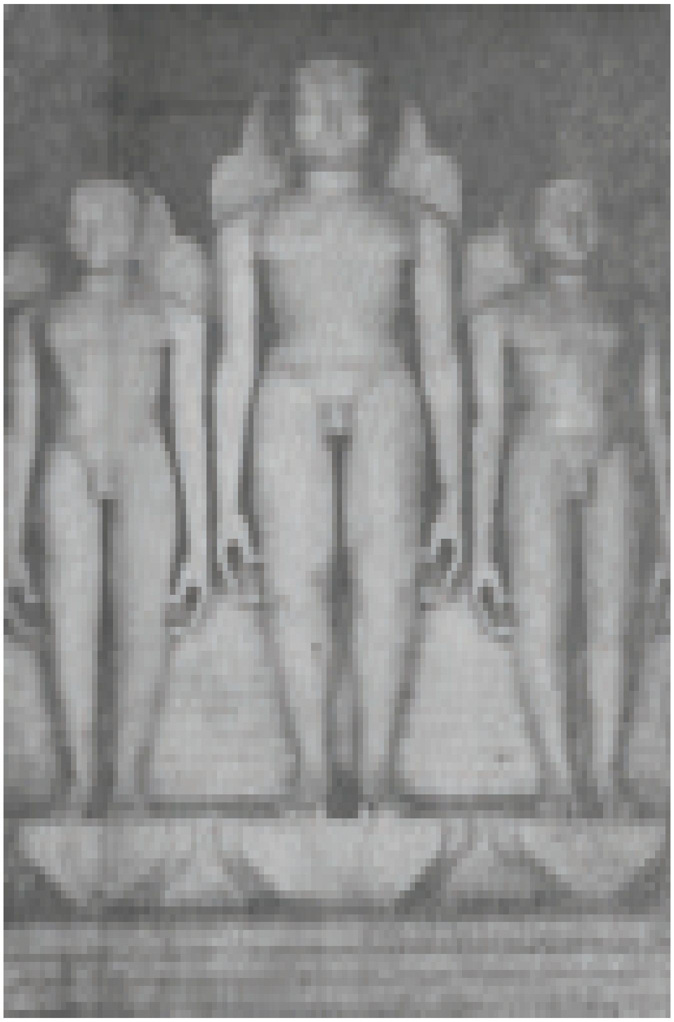

दूर-दूर से इस सिद्धक्षेत्र के दर्शन होने पर आनन्द होता है। सिद्धिधाम बहुत मनभावन है... तीर्थक्षेत्र को लगभग अर्ध चक्र लेकर गुरुदेव की मोटर आ पहुँचने पर भावभीना स्वागत हुआ... ब्रह्मचर्याश्रम के विद्यार्थियों ने संस्कृत में स्वागत गीत गाया... तत्पश्चात् जिनेन्द्र भगवान के दर्शन करके, समन्तभद्र महाराज के साथ गुरुदेव का मिलन हुआ और प्रसन्न वातावरण के बीच लगभग एक घण्टे तक प्रेम भरी बातचीत हुई। बातचीत के दौरान महाराजजी ने प्रमोद से कहा कि आपने आत्मा को साधा है और आप यहाँ आये हो तो हमें लाभ मिलना चाहिए। यहाँ कटनीवाले पण्डित जगन्मोहनलालजी शास्त्री भी आये थे और गुरुदेव के साथ बातचीत में बहुत प्रसन्न हुए थे।

इस कुंथलगिरि सिद्धिधाम से देशभूषण, कुलभूषण आदि करोड़ों मुनिवर मुक्ति को प्राप्त हुए हैं... पर्वत छोटा सा, रमणीय है... तलहटी में पाँच तथा पर्वत पर चार, इस प्रकार कुल नौ जिनमन्दिर हैं... ऊपर के मुख्य मन्दिर में देशभूषण-कुलभूषण मुनिवरों की अति भाववाही खड्गासन प्रतिमा विराजमान हैं मानो क्षपकश्रेणी लगाकर अभी ही केवलज्ञान प्राप्त करते हों—ऐसे भाव उनके दर्शन करने से भक्तों को जागृत होते हैं। इस

मन्दिर के ऊपर के भाग में सीमन्धर भगवान विराजमान हैं... नीचे के मन्दिर में अतिभाववाही रत्नत्रय भगवन्त विराजमान हैं।

कुंथलगिरि के रत्नत्रय भगवंत

बहुत से भक्त फाल्गुन शुक्ल १४ के सायंकाल ही ऊपर जाकर दर्शन कर आये थे। रात्रि में जिनमन्दिर में रत्नत्रय भगवन्तों के सन्मुख बहुत भाववाही भक्ति हुई थी। सिद्धक्षेत्र में पूज्य बहिनश्री-बहिन की वैराग्यमय भक्ति देखकर सबको आनन्द होता था—

आज अमोलक अवसर आया......
रत्नत्रय प्रभु दर्शन पाया......
गुरुदेव साथे यात्रा पाया......
मुनिवर सिद्धिधाम नीरख......
मैं आनंद पाया रे।
हाँ...हाँ मैं आनन्द पाया रे......

इत्यादि प्रकार से पूज्य बहिनश्री-बहिन गुरुदेव के साथ की यात्रा का आनन्द भी भक्ति द्वारा व्यक्त करती थीं।

फाल्गुन शुक्ल पूर्णिमा:—सवेरे साढ़े छह बजे पूज्य गुरुदेव संघसहित कुंथलगिरि सिद्धिक्षेत्र की यात्रा के लिये चल दिये... आज पूज्य गुरुदेव भी चलकर यात्रा करते थे, इसलिए गुरुदेव के साथ यात्रा में भक्तों को विशेष आनन्द आता था। दसैक मिनिट में पर्वत पर पहुँच गये... बहुत भक्तिभावपूर्वक दर्शन-पूजन-अभिषेक और भक्ति की। कुंथलगिरि पूजन तथा सिद्धपूजन के बाद गुरुदेव ने भक्ति गवायी। देशभूषण और कुलभूषण मुनिवरों की भक्ति कराते-कराते प्रमोद से गुरुदेव ने कहा कि—**'देश' अर्थात् असंख्य प्रदेश; उसका 'भूषण' अर्थात् शोभा; अर्थात् असंख्य प्रदेशी पवित्र चैतन्यधाम वह 'देशभूषण' है और 'कुलभूषण' अर्थात् अनन्त गुणरूपी कुल से शोभित ऐसा आत्मा, उसकी आराधना (श्रद्धा-ज्ञान-रमणता) वह वास्तविक यात्रा है।**

यहाँ गुरुदेव की भक्ति और भावभीने उद्‌गार सुनकर यात्रा में सबको बहुत उल्लास आया...

कुंथलगिरि पर्वत पर मुनिवरों के पास गुरुदेव

वंदो वंदो जी...... हाँ हाँ वंदो वंदो जी।
कुंथलगिरि तीरथ,
देशभूषण मोक्ष गये......
कुलभूषण मोक्ष गये......

—इत्यादि भक्ति हुई थी।

यात्रा के बाद नीचे उतरते हुए बीच में नन्दीश्वर मन्दिर आया... आज नन्दीश्वर अष्टाह्निका के अन्तिम दिन सिद्धिधाम में गुरुदेव के साथ नन्दीश्वर मन्दिर के दर्शन-यात्रा करते हुए बहिनश्री-बहिन इत्यादि सबको बहुत हर्ष हुआ... दोपहर में गुरुदेव के प्रवचन के बाद वहाँ सिद्धिधाम के सन्मुख भक्ति हुई।

भवि भावे कुंथलगिरि आवो सिद्धक्षेत्र जोवाने,
भवि भावे आ तीर्थधाम आवो... मुनिधाम जोवाने....

रात्रि में सुन्दर तत्त्वचर्चा हुई थी, उसमें अनेकविध प्रश्न चर्चित हुए थे।

चैत्र कृष्ण एकम:—पूज्य गुरुदेव को भाव आने से आज सिद्धक्षेत्र की दूसरी यात्रा हुई... तीन पूजन के बाद मुनिवरों की उल्लासपूर्ण भक्ति हुई... भक्ति के बाद मुनिवरों की चरणपादुका का अभिषेक भी बहुत से भक्तों ने किया। आनन्द से यात्रा करके सब गाते-गाते नीचे आये... यात्रा के बाद गुरुदेव ने विशेष प्रवचन किया... तत्पश्चात् आहारदान प्रसंग दर्शनीय था... दोपहर को एक से ढाई जातिस्मरण, सम्यग्दर्शन इत्यादि सम्बन्धी बहुत तत्त्वचर्चा हुई... तत्पश्चात् प्रवचन हुआ और सायंकाल पाँच बजे गुरुदेव ने कुंथलगिरि से औरंगाबाद प्रस्थान किया (बीच में कचनेरा गाँव में रुके। वहाँ पार्श्वनाथ भगवान तथा बीस विहरमान भगवन्तों इत्यादि के दर्शन किये।) कुंथलगिरि सिद्धक्षेत्र में रात्रि में पूज्य बहिनश्री-बहिन ने भक्ति करायी तथा रात्रि में फिर से पर्वत पर दर्शन करने गये... वहाँ मुनिपरिणति, सम्यग्दर्शन, यात्रा का हेतु इत्यादि सम्बन्ध में सुन्दर बातचीत हुई... बारम्बार

सन्तों के साथ इस सिद्धिधाम की यात्रा हुई, उसके उल्लास में भक्तों ने धर्मशाला में रासपूर्वक बहुत ही भक्ति करके अपना हर्ष व्यक्त किया।

कुंथलगिरि सिद्धिधाम की अपूर्व यात्रा करानेवाले गुरुदेव को नमस्कार हो

★ ★ ★

औरंगाबाद

चैत्र कृष्ण दूज के सवेरे कुंथलगिरि सिद्धिधाम में फिर-फिर से दर्शन करके यात्रियों ने औरंगाबाद की ओर प्रस्थान किया... बीच में कचनेरा गाँव में दर्शन तथा भोजन का कार्यक्रम था परन्तु रास्ता विशेष खराब होने से वहाँ नहीं जा सके और कचनेरा से पाँच मील दूर जंगल में वृक्ष के नीचे ही यात्रियों ने भोजन किया था और चार बजे औरंगाबाद पहुँच गये थे। औरंगाबाद आते हुए बीच में अडुल गाँव में सुन्दर गुलाबी पाषाण के बहुत ही चमकदार महावीर प्रभु के दर्शन करके गुरुदेव प्रसन्न हुए। औरंगाबाद में पाँच जिनमन्दिरों के दर्शन किये।

इलोरा की गुफाएँ (दिनांक २७ मार्च, चैत्र कृष्ण तीज)

सवेरे इलोरा की गुफाएँ देखने गये... गुफा नम्बर ३० से ३४ जैन गुफाएँ हैं, उनमें बाहुबली नाथ, पार्श्वनाथ इत्यादि भगवन्तों के सैकड़ों प्रतिमाएँ गुफा में उत्कीर्ण हैं... तथा दूसरी भी बहुत कारीगरी है। पर्वत में ही उत्कीर्ण भव्य और गहरी गुफाएँ तथा जिनबिम्ब देखकर गुरुदेव इत्यादि सब प्रसन्न हुए... गुफा में प्राचीन चित्र भी हैं दूसरी भी अनेक गुफाएँ हैं; गुफाएँ देखने के बाद वापस औरंगाबाद आ गये थे और रात्रि में यात्रासंघ की सभा भरी थी।

चैत्र कृष्ण चौथ सवेरे औरंगाबाद से प्रस्थान करके अजन्ता की गुफाओं का अवलोकन किया... यहाँ विशेष रूप से बौद्धों की ही गुफाएँ हैं। गुफाएँ देखने के बाद एक मील दूर बीच में एक मील के कम्पाउण्ड में संघ ने भोजन किया... और सायंकाल जलगाँव पहुँच गये... यहाँ एक जिनमन्दिर और दो गृहचैत्य हैं।

जलगाँव शहर

(दिनांक २९-३-१९५९)

सवेरे गुरुदेव के पधारने पर सुन्दर स्वागत हुआ... स्वागत में तथा संघ की व्यवस्था में शहर के तीनों सम्प्रदाय के जैन भाईयों ने संयुक्त होकर उत्साह से भाग लिया था। मांगलिक प्रवचन के बाद सेठ जयन्तीलाल अमुलकचन्द दोशी ने स्वागत-प्रवचन करते हुए कहा कि जलगाँव शहर में तीनों सम्प्रदाय के जैन इकट्ठे मिलकर पूज्य श्री कानजीस्वामी का स्वागत करते हुए हमें बहुत हर्ष होता है और पूज्य कानजीस्वामी यहाँ पधारे, उसे हम जलगाँव का महाभाग्य समझते हैं। तदुपरान्त सेठ भीखमचन्दजी जैन ने जलगाँव की जनता की ओर से स्वागत प्रवचन करते हुए कहा कि सौराष्ट्र में महान धर्म क्रान्ति करनेवाले आध्यात्मिक सन्त जलगाँव में आँगन में पधारे हैं यह जलगाँव की जनता का महाभाग्य है; जलगाँव की जनता की ओर से मैं आपका स्वागत करता हूँ। संघ के स्वागत में तथा प्रवचन आदि में जलगाँव की जनता ने बहुत उत्साह बताया था। दोपहर को प्रवचन के बाद भाई श्री आनन्दीलालभाई ने बहुत लगन से गुरुदेव का आभार मानकर भक्तिभावना व्यक्त की थी। यहाँ से सायंकाल प्रस्थान करके संघ मलकापुर आया था। मलकापुर के भाईयों ने बहुत ही वात्सल्यपूर्वक उमंग से संघ के स्वागत की व्यवस्था की थी।

मलकापुर

(दिनांक ३०-३-१९५९)

सवेरे गुरुदेव के पधारने पर 'जिनशासन मण्डप' में गुरुदेव के हाथ से धर्मध्वज लहराकर ध्वजवन्दन हुआ... तत्पश्चात् भव्य स्वागत यात्रा निकली... तीनों सम्प्रदाय के जैनों के उपरान्त अनेक नगरजनों ने स्वागत में भाग लिया था। सीमन्धर द्वार, महावीर द्वार, चन्द्रनाथ द्वार, सुमतिनाथ द्वार, पार्श्वनार्थ द्वार, कुन्दकुन्द द्वार, तीर्थभक्त द्वार, कानजीस्वामी द्वार इत्यादि अनेक द्वारों में से गुजरकर स्वागत यात्रा सुसज्जित जिनमण्डप में आयी। गुरुदेव के प्रवचन आदि के लिये यह विशेष मण्डप बनाया गया था। स्वागत बहुत उल्लास भरा था, यहाँ गुरुदेव का लाभ लेने के लिये सैकड़ों मील दूर-दूर से बहुत लोग आये थे। दोपहर में गुरुदेव को अभिनन्दन पत्र अर्पण हुआ।

चैत्र कृष्ण ७ के सवेरे जिनमन्दिर में समूह पूजन हुई। यहाँ दो जिनमन्दिर हैं; एक जिनमन्दिर में महावीर प्रभु की अतिभव्य विशाल प्रतिमाजी विराजमान है, वह सौराष्ट्र में वींछीया में पूज्य गुरुदेव के हस्त से प्रतिष्ठित होकर यहाँ आयी हैं। यहाँ गुरुदेव के उपदेश से प्रभावित होकर दो कुमार भाईयों ने ब्रह्मचर्य प्रतिज्ञा अंगीकार करने की भावना बतायी थी... तदुपरान्त नथुशा, रूपचन्दशा और नेमिचंदशा इन तीन भाईयों ने तथा कचरूशा रामुशा ने गुरुदेव के समक्ष सजोड़े ब्रह्मचर्य प्रतिज्ञा ली थी। जिनशासनमण्डप में पूज्य बहिनश्री-बहिन ने भक्ति करायी। दोपहर को समारम्भ करके यहाँ की महिला समाज ने पूज्य बहिनश्री-बहिन (चम्पाबेन-शान्ताबेन) को अभिनन्दन पत्र दिया था। इस प्रकार दो दिन के दौरान उल्लासपूर्वक अनेकविध कार्यक्रम आयोजित थे।

शिरपुर अन्तरीक्ष पार्श्वनाथ

'पूज्य श्री कानजीस्वामी दिगम्बर जैन तीर्थयात्रासंघ' २५० यात्रियों सहित दक्षिण के तीर्थधामों की यात्रा करके अब विदर्भदेश में विचर रहा है। दिनांक १-४-१९५९ के दिन मलकापुर से प्रस्थान करके, बीच में खामगाँव में चाय-पानी पीकर संघ शिरपुर आ पहुँचा। आकोला-वासीम इत्यादि सौ-सौ मील दूर से हजारों लोग गुरुदेव का लाभ लेने आये थे। यहाँ एक मन्दिर में पार्श्वनाथ आदि भगवन्त विराजमान हैं। भोंयरा में पार्श्वप्रभु

की प्रतिमा है, उसके दो कोनों का जरा सा भाग जमीन को स्पर्श करता है—वे भगवान 'अन्तरीक्ष पार्श्वनाथ' रूप से पहिचाने जाते हैं, उनके दर्शन-पूजन के लिये दिगम्बर और श्वेताम्बर का अमुक-अमुक समय का नम्बर है। दोपहर साढ़े बारह बजने पर गुरुदेव के साथ भक्त दर्शन करने आये और पूजन-भक्ति किये।

दोपहर को प्रवचन में तीन हजार के लगभग लोग थे। आसपास के गाँवों से गाड़ियाँ जोत-जोतकर हजारों लोग आये थे। प्रवचन के बाद गुरुदेव को अभिनन्दन पत्र दिये गये। सोनगढ़ के प्रति प्रेम रखनेवाले एक भाई ने 'परमपारिणामिकभाव की जय' बुलायी थी। शिरपुर में दूसरा एक प्राचीन दिगम्बर जिनमन्दिर है, वहाँ दर्शन करके संघ ने प्रस्थान किया और रात्रि में कारंजा पहुँचे। कारंजा की ओर आते हुए बीच में वासीम में गुरुदेव का स्वागत किया और गुरुदेव ने वहाँ के प्राचीन मन्दिरों में अमीझरा पार्श्वनाथ इत्यादि के दर्शन किये।

कारंजा (दिनांक २-४-१९५९)

चैत्र कृष्ण दसवीं के मंगल दिन पूज्य गुरुदेव कारंजा पधारने पर भावभीना भव्य स्वागत हुआ। यहाँ स्वागत के समय जीप-मोटर में गुरुदेव का दृश्य बहुत शोभित होता था।

कारंजा में तीन दिगम्बर जिनमन्दिर हैं, उनमें सैकड़ों भाववाही भगवन्त विराजमान हैं। एक मन्दिर में रत्न, पन्ना, नीलम, गरुड-मणि, सुवर्ण, चाँदी, स्फटिक इत्यादि की प्रतिमाएँ हैं और भोंयरा में पार्श्वनाथादि भगवन्त विराजमान हैं। दूसरे मन्दिर में शास्त्र भण्डार है। तदुपरान्त महावीर ब्रह्मचर्याश्रम में भी जिनमन्दिर है, उसमें महावीरादि भगवन्तों की मनोज्ञ प्रतिमाएँ विराजमान हैं, तथा रत्न इत्यादि की प्रतिमाएँ और धवल-जयधवल की हस्तलिखित प्रतियाँ भी हैं। इस ब्रह्मचर्याश्रम में गुरुदेव के स्वागत का समारोह हुआ था और गुरुदेव ने वहाँ दो सौ विद्यार्थियों के समक्ष दस मिनिट प्रवचन किया था। यहाँ संघ की व्यवस्था में गुजराती भाईयों ने भी भाग लिया था। यहाँ का समाज स्वाध्याय का प्रेमी है और गुरुदेव के प्रवचन सुनने के लिये बहुत रस रखता है। प्रवचन में तीन-चार हजार लोग हुए थे। पण्डित धन्यकुमारजी ने स्वागत अभिनन्दन का प्रवचन किया था।

रात्रि में सम्यग्दर्शन इत्यादि सम्बन्धी अध्यात्मरस भरपूर तत्त्वचर्चा हुई थी। तत्पश्चात् महिलाश्रम के चैत्यालय में शान्तिनाथ प्रभु के सन्मुख पूज्य बहिनश्री-बहिन ने सरस भक्ति करायी थी। आज के मंगल दिन भक्ति करते हुए भक्तों को बहुत आनन्द हो रहा था। मात्र एक दिन के कार्यक्रम में कारंजा के समाज ने बहुत प्रेमपूर्वक लाभ लिया था और यहाँ एक दिन अधिक रहने के लिये बहुत आग्रह किया था, अन्ततः एक घण्टे अधिक रुककर भी एक प्रवचन प्रदान करने की विनती की थी। यहाँ के समाज का तत्त्वश्रवण का प्रेम देखकर यहाँ के लिये एक दिन कम गिना जाता है परन्तु आगे के कार्यक्रम निश्चित हो गये होने से रुक सकना सम्भव नहीं था। अगास में विराजमान श्री चन्द्रप्रभ भगवान की प्रतिमा इस कारंजा के मन्दिर से आयी हुई है। महिलाश्रम में पूज्य गुरुदेव पधारे थे और पाँच-पाँच वर्ष की छोटी बालाओं ने अध्यात्म गीत द्वारा स्वागत किया था।

परतवाडा (ऐलचपुर)

चैत्र कृष्ण ११ के दिन सवेरे प्रस्थान करके परतवाडा (ऐलचपुर) में सेठ गेंदालालजी इत्यादि के विशेष आग्रह से संघ वहाँ भोजन के लिये रुका; गुरुदेव का सुन्दर स्वागत हुआ... श्याम थियेटर में प्रवचन हुआ, उसमें बाहर गाँव के सैकड़ों लोग आये थे। प्रवचन के बाद गुरुदेव मुक्तागिरि पधारने पर पूज्य बहिनश्री-बहिन इत्यादि भक्तजनों ने भावभीना स्वागत किया और कितने ही भक्त सायंकाल पर्वत पर जाकर सिद्धक्षेत्र के दर्शन कर आये।

मुक्तागिरि सिद्धक्षेत्र

मुक्तागिरि रमणीय, प्राचीन सौन्दर्य से भरपूर सिद्धक्षेत्र है। साढ़े तीन करोड़ मुनिवर यहाँ से सिद्धि को प्राप्त हुए हैं। रमणीय पर्वत पर ५१ जिनालय हैं; कोई-कोई जिनालय तो पर्वत की गुफा में हैं... दस नम्बर का मन्दिर पर्वत की विस्तृत गुफा में ही उत्कीर्ण है, चारों ओर दीवारों में भी जिनबिम्ब उत्कीर्ण है, और वर्षाऋतु में लगभग २०० फीट ऊँचे से गिरता पानी का प्रपात प्राकृतिक सौन्दर्य से जिनमन्दिर को शोभित करता है। चैत्र कृष्ण १२ के सवेरे ऐसे इस सिद्धिधाम की यात्रा गुरुदेव के साथ शुरु हुई। शुरुआत के १० मन्दिरों के बाद ११ से २६ मन्दिर एक विशाल चौक में हैं। उसमें एक मन्दिर में बाहुबली भगवान (लगभग १० फीट के) विराजमान हैं। नम्बर २५वाँ मन्दिर बहुत प्राचीन है और

अभी उसमें पार्श्वनाथ प्रभु की प्राचीन प्रतिमा विराजमान है, तदुपरान्त दीवारों में भी २४ भगवन्त इत्यादि उत्कीर्ण हैं। इस मन्दिर में बैठकर गुरुदेव के साथ सबने तीर्थपूजन (मुक्तागिरि सिद्धिक्षेत्र की पूजन) की। ३१ से ३५ मन्दिर पर्वत की टोंच पर हैं, उसमें यहाँ से मोक्ष प्राप्त मुनिवरों के चरणपादुका इत्यादि हैं। यहाँ का दृश्य बहुत शान्त और मनभावन है। यहाँ दर्शन करके भक्ति गाते-गाते सब नीचे उतरे... किसी मन्दिर में रत्नमय भगवान विराजमान हैं। ४८ तथा ४९ नम्बर के मन्दिर पर्वत की गुफा में आये हुए हैं, मानो कि पर्वत अपने हृदय में जिनेश्वर भगवान को स्थापित करके ध्यान करता हो, उस प्रकार इस गुफा में ८ फीट उन्नत प्राचीन भगवन्त विराजमान हैं। उन प्रभु के निकट जाने के लिये लम्बी-गहरी गुफा में से गुजरना पड़ता है... वहाँ से गुजरते समय इस संसार का वातावरण एकदम विस्मृत हो जाता है... मात्र एक भगवान का ही ध्यान रहता है... और थोड़ी ही देर में भगवान का साक्षात्कार होने पर भक्त हृदय प्रफुल्लित और आनन्दित होकर घड़ी भर वहीं स्थिर हो जाता है। जिनेन्द्रदर्शन के लिये गुरुदेव के साथ गुफा विहार करते हुए भक्तों को आनन्द हुआ... और जब गुरुदेव के प्रताप से भगवान को निहारा तब मुमुक्षु हृदय में से ऐसी भावना के भणकार उठे कि—

''हे जिनवर! तुम चरणकमल ना
भ्रमर श्री कहान प्रतापे,
'जिन' पाम्यो.....'निज' पामुं अहो,
मुझ काज पूरा सहु थाय''

गुफा के मन्दिरों में २४ भगवन्तों इत्यादि के दर्शन करते हुए भी आनन्द हुआ... तत्पश्चात बाहर आकर मन्दिर के चौक में सब बैठ गये... और गुरुदेव ने यात्रा सम्बन्धी प्रसन्नता व्यक्त की... पूज्य बहिनश्री-बहिन ने थोड़ी देर मुनिवरों की भक्ति करायी।

साढ़े तीन करोड मुनि मुक्तागिर में
जाके राग-द्वेष नहीं मन में...
ऐसे मुनि को मैं नितप्रति ध्यावुं...
अे जी देत ढोक चरणन में....

इस प्रकार आनन्द-उल्लासपूर्वक यात्रा-पूजा-भक्ति करके मंगल गीत गाते-गाते सब नीचे आये....

मुक्तागीरी मुक्तिधाम थी
मुक्ति प्राप्त संतो ने नमस्कार हो....
मुक्तागीरीनी मंगलयात्रा करावनार
गुरुदेव ने नमस्कार हो......

मुक्तागिरि में भोजनादि की व्यवस्था अमरावती के सेठ नथुसाब पासुशाब (जो इस क्षेत्र के अध्यक्ष हैं) उनकी ओर से की गयी थी।

पर्वत की तलहटी में ही विशाल धर्मशाला है और उसमें विशाल जिनालय है। उसमें बीच में चाँदी-सुवर्ण के भव्य सिंहासन में आदिनाथ प्रभु शोभित हो रहे हैं... वहाँ बहुत उल्लासपूर्वक भक्ति हुई थी... मुक्तागिरि की यात्रा के पश्चात् भावभीनी भक्ति करते हुए भक्तों को आनन्द होता था।

मैं तेरे ढीग आया रे.... मुनिवर के ढीग आया....
मैं तेरे ढीग आया रे.... सिद्धप्रभु ढीग आया....
मैं तेरे ढीग आया रे.... मुक्तागिरिधाम आया....
मैं तेरे ढीग आया रे.... गुरुवर के साथ आया....
गुरुवर के साथ आया रे.... मैं मुक्तागिरि में आया....

इत्यादि प्रकार से अन्तरभाव खोल-खोलकर पूज्य बहिनश्री-बहिन भक्ति कराती थीं। बहुत आनन्द से सुन्दर भक्ति हुई थी; तत्पश्चात् प्रवचन द्वारा गुरुदेव ने मुक्तागिरि धाम में मुक्ति का मार्ग दिखलाया था।

प्रवचन के पश्चात् उत्साही कार्यकर्ता भाईश्री बाबूरावजी ने श्रद्धांजलि अर्पण करते हुए कहा कि ***इस काल में ऐसे अध्यात्म तत्त्व का निरूपण करनेवाले सन्त को ऐसे मुक्तिधाम में देखकर हम अपना अहो भाग्य समझते हैं। मैं सोनगढ़ आया, तब मुझे लगा कि यहाँ चतुर्थ काल वर्तता है... चतुर्थ काल में समवसरण था, मैंने भी सोनगढ़ में समवसरण देखा... समवसरण में दिव्यध्वनि होती है, वहाँ पर भी मैंने वो ही भगवान***

की दिव्यध्वनि का सार गुरुदेव के मुख से सुना... अब मैं एक स्तुति के द्वारा सोनगढ़ के प्रति और गुरुदेव के प्रति मेरे अहो भाव को व्यक्त करता हूँ—ऐसा कहकर उन्होंने '**जय गुरुदेव... श्री कहान गुरुदेव**' इत्यादि काव्य गाया था।

तत्पश्चात् क्षेत्र की व्यवस्था कमेटी की ओर से आभार प्रदर्शन करते हुए कहा कि ***पूज्य श्री कानजीस्वामी मुक्तागिरि पधार रहे हैं, यह सुनकर हम पाँच महीने से चातक की तरह राह देखते थे... आज उनके दर्शन पाकर हम धन्य हुए हैं... उन्होंने स्वानुभूति का उपदेश समझाकर भवभव के रोगी को दवा दी है... आपश्री फिर से भी इस तीर्थक्षेत्र में पधारकर हमें दर्शन दें - ऐसी प्रार्थना है...***

गुरुदेव का लाभ लेने के लिये आस-पास के अनेक गाँवों से सैकड़ों लोग यहाँ आये थे। हीवरखेड के सेठ श्री शान्तिजी बण्ड जैन ने भी उल्लास भरे स्वागत प्रवचन द्वारा गुरुदेव का भावभीना सम्मान किया था।

यहाँ से प्रस्थान करके गुरुदेव परतवाडा रुके थे... मुक्तागिरि में रात्रि में सुन्दर भक्ति हुई थी... सिद्धिधाम में साधक-सन्तों के भाव सहज उल्लसित हो जाते थे....

गुरुदेव साथे यात्रा आज....
वाह वा जी... वाह वाह!
सिद्धप्रभुजी देख्या आज....
वाह वा जी... वाह वाह!
सिद्धप्रभु पासे आव्या आज....
वाह वा जी... वाह वाह!
सिद्धपद ने पाया आज....
वाह वा जी... वाह वाह!

ऐसी उल्लासभरी भक्ति हुई थी,

आज हम गुरुदेव तुम्हारी साथे आये....
आज हम मुनिराज तुम्हारी पासे आये....
आज हम सिद्धप्रभुजी तुम्हारी पासे आये....

— इत्यादि प्रकार से पूज्य बहिनश्री–बहिन अपना यात्रा सम्बन्धी उल्लास और भावना व्यक्त करती थीं।

★ ★ ★

अमरावती होकर नागपुर की ओर

चैत्र कृष्ण १३ के सवेरे सिद्धिधाम के दर्शन करके संघ ने अमरावती से प्रस्थान किया... बीच में भातकुली गाँव में पधारकर गुरुदेव ने आदिनाथ इत्यादि प्राचीन जिनबिम्बों के दर्शन किये। अमरावती में दिगम्बर जैन समाज ने तथा गुजराती भाईयों ने उत्साह से गुरुदेव का स्वागत किया। यहाँ पाँच जिनमन्दिर हैं। मन्दिरों के दर्शन तथा भोजनादि के बाद सायंकाल संघ ने नागपुर की ओर प्रस्थान किया... लम्बी मुसाफिरी में पूज्य बहिनश्री–बहिन किसी समय बस में बैठे तब, अद्‌भुत आत्मस्पर्शी भक्ति कराती थीं... और भक्त भक्ति में ऐसे तल्लीन बन जाते थे कि 'बस में बैठे हैं' यह भूल जाते... और मानो कि भगवान के निकट ही बैठे हैं, ऐसे भक्ति के आनन्द में लयलीन हो जाते... भक्ति करते–करते अनेक मीलों का लम्बा प्रवास कब पूरा हो जाता, इसकी भी खबर नहीं पड़ती थी। इस प्रकार भक्ति इत्यादि द्वारा पूज्य बहिनश्री–बहिन सब बालकों को आनन्द कराती थीं...

पूज्य श्री कानजीस्वामी दिगम्बर जैन तीर्थयात्रा संघ अमरावती से नागपुर की ओर जा रहा है... जाते–जाते बीच में बाजारगाँव आने पर सब मोटरबसें रुक गयीं... किसलिए? श्री जिनेन्द्र भगवान के दर्शन के लिये। बाजारगाँव में एक विशाल प्राचीन जिनमन्दिर है, उसमें नव वेदी पर अनेक जिनेन्द्र भगवन्त विराज रहे हैं... मूल नायकरूप से छह फीट के पद्मासन में श्री सुपार्श्वनाथ प्रभु की भव्य प्रतिमा विराजमान है... तथा दूसरे अनेक भगवन्त विराजमान हैं... जंगल में मंगल समान यह जिनमन्दिर शोभित हो रहा है... रात्रि में ९ बजे वहाँ जाकर पूज्य बहिनश्री–बहिन के साथ सबने आनन्द और भक्तिपूर्वक भगवन्तों के दर्शन किये... मानो छोटे से तीर्थ की यात्रा हुई... गुरुदेव भी यहाँ से निकले तब इस जिनमन्दिर के दर्शन करके प्रसन्न हुए थे... यहाँ दर्शन करके संघ रात्रि में नागपुर पहुँच गया।

नागपुर

(चैत्र कृष्ण १४-१५, दिनांक ६-७ अप्रैल)

सवेरे जिनेन्द्र भगवान के दर्शन-पूजन के बाद भक्त गुरुदेव के स्वागत के लिये तैयार हो गये... साढ़े आठ बजे गुरुदेव के पधारने पर नागपुर के हजारों नागरिकों ने गुरुदेव का भव्य स्वागत किया... चाँदी के दो रथ, बैण्ड, छड़ी, चँवर और जगह-जगह पुष्पवृष्टि इत्यादि से स्वागत शोभित होता था। गुरुदेव सुशोभित मोटर में बैठे थे। स्वागत के बाद मंगल प्रवचन हुआ। नागपुर में १३ जिनमन्दिर हैं; दोपहर को गुरुदेव के साथ ११ जिनमन्दिरों के दर्शन करते हुए भक्तों को आनन्द हुआ। तत्पश्चात् दोपहर २ से ३ गुरुदेव के स्वागत का समारोह था। गुरुदेव नागपुर में दो दिन रहे थे। दूसरे दिन सवेरे दो मन्दिरों के दर्शन किये, एक चैत्यालय में काँच की रचना से दृश्य सुन्दर लगता था।

★ ★ ★

डोंगरगढ़-खैरागढ़

चैत्र शुक्ल एकम को नागपुर से डोंगरगढ़ आये... सेठ श्री भागचन्दजी साहेब के विशेष आग्रह से यहाँ का प्रोग्राम रखा था... गुरुदेव के पधारने पर स्वागत हुआ... दोपहर को अभिनन्दन समारोह में सेठ भागचन्दजी ने गुरुदेव के प्रति बहुत अहोभाव व्यक्त किया। जिनमन्दिर में प्राचीन प्रतिमाओं के दर्शन किये। भोजन और प्रवचन के बाद संघ ने खैरागढ़ प्रस्थान किया। पूज्य गुरुदेव खैरागढ़ पधारने पर उल्लास भरा भव्य स्वागत हुआ... वेदी प्रतिष्ठा महोत्सव के मंगल प्रारम्भरूप में गुरुदेव के मंगल हस्त से झण्डारोहण हुआ... गुरुदेव को भावपूर्वक जैनधर्म का ध्वज लहराते देखकर सब भक्तों को बहुत आनन्द हुआ। रात्रि में शान्तिनाथ प्रभुजी के सन्मुख (प्रतिष्ठा मण्डप में) भक्ति हुई थी।

दूसरी चैत्र शुक्ल एकम के सवेरे वेदी प्रतिष्ठा सम्बन्धी विधि (मन्त्रजाप, इन्द्र प्रतिष्ठा, यागमण्डल पूजन, वेदी शुद्धि इत्यादि) हुई थी। गुरुदेव के प्रवचन के बाद दो कुमारिका बहिनों ने ब्रह्मचर्य प्रतिज्ञा अंगीकार की थी। यहाँ उभयखेमराजजी ने उत्साह से नया दिगम्बर जिनमन्दिर बनाया है, उसमें गुरुदेव के हस्ते शान्तिनाथप्रभु की प्रतिष्ठा हुई। इस सम्बन्धी समाचार इस प्रकार हैं—

खैरागढ़ मध्यप्रदेश में जिनबिम्ब वेदी प्रतिष्ठा महोत्सव

दक्षिण के तीर्थधामों की यात्रा करके मध्यप्रदेश के तीर्थों की यात्रा को जाते–जाते पूज्य गुरुदेव दिनांक ८–४–१९५९ के दिन खैरागढ़ गाँव पधारे। खैरागढ़ के भाई श्री डूलीचन्दजी, खेमराजजी तथा भाई श्री खेमराजजी कपूरचन्दजी की विशेष आग्रह भरी प्रार्थना से तीन सौ मील अधिक प्रवास करके पूज्य गुरुदेव संघसहित खैरागढ़ पधारे... गुरुदेव के पधारने पर नगरी को शृंगार कर उल्लास भरा स्वागत किया।

खैरागढ़ में उपरोक्त दोनों भाईयों तथा सेठ कंवरलालजी और घेवरचन्दजी की ओर से अनुमानित पन्द्रह हजार रुपये के खर्च से एक मनभावन दिगम्बर जिनमन्दिर बनाया गया है। पहले खैरागढ़ में दिगम्बर जिनमन्दिर और दिगम्बर जैनों की बस्ती नहीं थी परन्तु पूज्य गुरुदेव के हितकर उपदेश के प्रभाव से उपरोक्त भाईयों ने दिगम्बर जैन धर्म स्वीकार करके उत्साहपूर्वक खैरागढ़ में दिगम्बर जैन मन्दिर बनाया और पूज्य गुरुदेव खैरागढ़ पधारने पर आपश्री की मंगलवर्धिनी छाया में इस जिनमन्दिर में शान्तिनाथ भगवान की वेदी प्रतिष्ठा का उत्सव मनाया...

चैत्र शुक्ल एकम् (दिनांक ८ अप्रैल) के दिन भक्ति के बाद प्रतिष्ठा मण्डप के सन्मुख गुरुदेव के सुहस्त से धर्मध्वज का आरोहण हुआ। दूसरी चैत्र शुक्ल एकम् के दिन सवेरे इन्द्र प्रतिष्ठा, यागमण्डल विधान इत्यादि विधियाँ हुई थीं... पूज्य गुरुदेव के प्रवचन के बाद दो कुमारिका बहिनों ने ब्रह्मचर्य प्रतिज्ञा अंगीकार की थी... तत्पश्चात् श्री जिनमन्दिर में वेदी इत्यादि की शुद्धि की क्रिया हुई थी... इन्द्र–इन्द्राणियाँ और कुमारिका बहिनों के हस्त से वेदी शुद्धि हुई थी, तदुपरान्त यन्त्र स्थापन, स्वस्तिक इत्यादि विधियाँ पूज्य बहिनश्री–बहिन के मंगल हस्त से हुई थीं... दोपहर को सवा बारह बजे पूज्य गुरुदेव के मंगल हस्त से भगवान श्री शान्तिनाथ प्रभु को जिनमन्दिर की वेदी पर स्थापन किया था... गुरुदेव के हस्ते जिनेन्द्रदेव की महामंगल स्थापना का भावभीना दृश्य देखकर भक्तों को बहुत आनन्द होता था... जिनेन्द्र भगवन्तों की प्रतिष्ठा के अनेक मंगलकारी कार्य पूज्य गुरुदेव के सुहस्त से हो रहे हैं... सौराष्ट्र से हजार–हजार मील से भी अधिक दूर आये हुए नगर में भी गुरुदेव के प्रताप से दिगम्बर जिनमन्दिर और वेदी प्रतिष्ठा महोत्सव मनाया गया, यह हर्ष का विषय है। भगवान की वेदी प्रतिष्ठा बहुत ही उत्साह से हुई थी मात्र एक

ही दिन में भी अनेकविध कार्यक्रमों से प्रतिष्ठा उत्सव अत्यन्त शोभित हो उठा था।

इस प्रसंग पर यात्रा संघ के २५० लोगों के उपरान्त डूंगरगढ़ से स्पेशल बस में सेठ श्री भागचन्दजी इत्यादि अनेक लोग आये थे, आसपास के गाँवों से अनेक लोग आये थे तथा गाँव की जनता ने भी बड़ी संख्या में भाग लिया था। दोपहर को शान्तियज्ञ के बाद खैरागढ़ राज के जैन समाज ने गुरुदेव को अभिनन्दन पत्र दिया और प्रवचन के बाद श्री जिनेन्द्र भगवान की रथयात्रा निकली थी। इस प्रकार मात्र एक ही दिन में पूज्य गुरुदेव की उपस्थिति में बहुत उत्साहपूर्वक भगवान की वेदी प्रतिष्ठा का उत्सव मनाया गया था। इस प्रकार जिनमन्दिर बनाकर अपने आँगन में श्री जिनेन्द्र भगवान की पधरावणी कराने के उपलक्ष्य में उभय खेमराज सेठ तथा खैरागढ़ के सब मुमुक्षु धन्यवाद के पात्र हैं।

सायंकाल संघ की विदाईगिरि के समय मारवाड़ी पद्धति से विदाई का दृश्य भावभीना था। संघ ने सायं पाँच बजे खैरागढ़ से रामटेक की ओर प्रस्थान किया।

आज पूरी रात प्रवास करना था और पूज्य बहिनश्री-बहिन यात्रियों की बस में साथ में थीं, इसलिए सबको बहुत आनन्द हुआ... पूरी रात्रि विविध भक्ति चला करती थी... पूज्य बहिनश्री-बहिन अध्यात्मरस भरी आत्मस्पर्शी भक्ति कराकर भक्तों को अध्यात्म भावना में झुलाया था... भक्ति का यह एक विशिष्ट यादगार प्रसंग था... मानो कि अन्दर से आत्मपरिणति ही बोलती हो-ऐसी अद्भुत आत्मस्पर्शी, वह भक्ति थी। इस प्रकार पूरी रात्रि आनन्द से भक्ति और अन्ताक्षरी करते-करते, खैरागढ़ से सायं पाँच बजे निकले हुए यात्री दूसरे दिन सवेरे पाँच बजे रामटेक पहुँचे... और धर्मशाला खोजते-खोजते सवेरा हो गया... भक्त कहते थे कि आज यात्रा के निमित्त जागरण हुआ....

रामटेक (चैत्र शुक्ल दूज)

पूरी रात्रि जगे हुए भक्तों ने सवेरे नहा-धोकर शान्तिनाथ प्रभु के दर्शन-पूजन किये... गुरुदेव के पधारने पर स्वागत किया। तत्पश्चात् गुरुदेव के साथ जिनमन्दिरों के दर्शन किये... यहाँ धर्मशाला के विशाल चौक में ९ जिनमन्दिर और २१ वेदियाँ हैं। बीच के मुख्य मन्दिर में शान्तिनाथ प्रभु की १६ फीट उन्नत भव्य प्रतिमाजी हैं... और उनकी अगल-बगल में दोनों ओर भी शान्तिनाथ प्रभु की पाँच फीट की प्रतिमा विराजमान है...

एक मन्दिर की रचना समवसरण जैसी है; तीन पीठिका पर चन्द्रप्रभ विराजमान हैं, मानस्तम्भ भी है... १६ फीट के १६ वें शान्तिनाथ प्रभु के समीप आते ही भक्त हृदय में शान्ति का रस पड़ता है... दोपहर को शान्तिनाथ प्रभु के निकट सामूहिक पूजन तथा भक्ति हुई... तत्पश्चात् प्रवचन तथा रात्रि में तत्त्वचर्चा हुई थी।

★ ★ ★

सिवनी (चैत्र शुक्ल दूज, दिनांक ११-४-१९५९)

सवेरे शान्तिनाथ प्रभु के दर्शन करके रामटेक से सिवनी प्रस्थान किया। सिवनी में दो जिनमन्दिर हैं। बड़े मन्दिर में १८ वेदियाँ हैं। दूसरे मन्दिर में बीच में पंचमेरु की रचना है और चार कोनों में चार वेदियाँ हैं। स्वागत के पश्चात् गुरुदेव का प्रवचन हुआ... दोपहर को जिनमन्दिर में सामूहिक पूजन तथा भक्ति हुई। सौराष्ट्र के नेमिनाथ भगवान की पूजन सौराष्ट्र के यात्रियों ने बहुत उल्लास से की; तत्पश्चात् गुरुदेव ने भावभीनी भक्ति करायी।

मारा नेम पिया गीरनारी चाल्या,
मत कोई रोक लगाजो....
लार लार संयम अम लेशुं,
मत कोई प्रीत बढाजो....

सिवनी से प्रस्थान करके सायंकाल छपारा गाँव में आये... वहाँ विशाल जिनमन्दिर में छह वेदी तथा गंधकुटी में देवदर्शन करने के बाद भोजन करके यात्री जबलपुर पहुँच गये। गुरुदेव रात्रि को सिवनी रुके थे, वहाँ पण्डित सुमेरचन्दजी दिवाकर इत्यादि के साथ सुन्दर तत्त्वचर्चा हुई थी... सिवनी में पूरे दिन गुरुदेव के परिचय से तथा तत्त्वचर्चा से पण्डित सुमेरचन्दजी तथा रतनलालजी इत्यादि बहुत प्रसन्न हुए थे और उन्होंने भावभीना भाषण करते हुए कहा था कि हम अभी तक भ्रम में थे, स्वामीजी ने हमको नयी बात समझायी है।

जबलपुर (दिनांक १२-१३, चैत्र शुक्ल ४-५)

सवेरे ९.०० बजे गुरुदेव पधारने पर जबलपुर के जैन समाज ने शान्तिपूर्वक सादगी से स्वागत किया। जबलपुर जैन समाज बहुत उत्साही है और अनेकविध वैभव से

सम्पन्न है। गुरुदेव का बहुत ही जगह-जगह से भव्य स्वागत करने की उनकी भावना थी परन्तु उसी समय किन्हीं दुष्ट जीवों द्वारा वहाँ के एक जिनमन्दिर का खण्डन हो गया होने से जबलपुर के जैन समाज में उदासी छा गयी है, इसलिए शान्ति से सादगीपूर्वक अध्यात्म-गीत गाते-गाते गुरुदेव का स्वागत किया। खण्डित मन्दिर के हाल देखने पर भक्तों का हृदय गद्‌गद् हो जाता था... मन्दिर में चारों ओर छिन्न-भिन्न पड़े हुए काँच के ढ़ेरों में से भी मानो कि वीतरागता का नाद गूँज रहा था। गुरुदेव के स्वागत में अनेक प्रतिष्ठित अजैन भाईयों ने भी भाग लिया था, प्रवचनमण्डप लगभग पाँच हजार लोगों से खचाखच भर गया था। स्वागत प्रवचन करते हुए ऐडिशनल डिस्ट्रिक्ट जज श्री फूलचन्दजी साहेब ने कहा — ***मैं सोनगढ़ आ गया हूँ, शिखरजी भी आया था, मुम्बई भी आया और सोनगढ़ का दस वर्ष का साहित्य मैंने सूक्ष्मता से पढ़ा है; मैं अपने अनुभव से और अधिकार से यह कह सकता हूँ कि आज इस भारत के दार्शनिकों में जैनदर्शन का सर्वश्रेष्ठ दार्शनिक कानजीस्वामी है, अपनी अनोखी शैली से आपने समयसार आदि का रहस्य समझाया है, जैनदर्शन की जितनी ऊँची से ऊँची सेवा हो सकती है, वह स्वामीजी ने की है; इसलिए जैन समाज के ऊपर आपका बड़ा उपकार है। जैन समाज की ओर से मैं आपको किन शब्दों में श्रद्धांजलि दूँ! हिन्द भर के अनेक पण्डितों का मुझे समागम हुआ है, लेकिन मेरे आत्मा में गहरी तात्त्विक असर स्वामीजी की है; अभी प्रवचन सुनने पर आपको भी इस बात का अनुभव हो जाएगा। मैं स्वामीजी को श्रद्धांजलि दे रहा हूँ.... हमारे यहाँ कुछ ऐसी चीज़ हो गयी है कि हम आपका पूरा स्वागत नहीं कर सके, टूटा-फूटा स्वागत करके मैं आपसे क्षमा चाहता हूँ।***

गुरुदेव के मंगल प्रवचन के बाद दोपहर का भक्ति का कार्यक्रम घोषित करते हुए कहा था कि हमारे यहाँ पधारीं हुई सोनगढ़ की दो पवित्र बहिनें (बहिनश्री-बहिन) तन्मयता से ऐसी भक्ति करायेंगी कि वर्षों तक आपको याद रह जाएगा।

संघ के यात्रियों को भी भोजन के लिये अलग-अलग भाईयों ने विशेष निमन्त्रण देकर अपने घर में बुलाया था और बहुत वात्सल्य से यहाँ के रिवाज अनुसार माला पहनाकर तथा कपाल पर चन्दन लगाकर स्वागत किया था।

यहाँ तेरह मन्दिर हैं। मन्दिर बहुत विशाल हैं, प्रत्येक मन्दिर में स्वाध्याय तथा

सामायिक के विशेष स्थान देखकर 'सामायिक वाले जो.... ' इत्यादि वर्णन याद आता था। एक जिनमन्दिर में आठ वेदी है, उसमें दोपहर को पूज्य बहिनश्री-बहिन ने अद्‌भुत भक्ति करायी थी... भक्ति प्रसंग में विशाल मन्दिर खचाखच भर गया था, तदुपरान्त हजारों लोग मण्डप में बैठकर भक्ति सुनते थे... पूज्य बहिनश्री-बहिन की आश्चर्यकारी भक्ति देखकर सब मुग्ध हो गये थे।

यहाँ तालाब किनारे पंचायती मन्दिर बहुत विशाल है, उसमें बाईस वेदियों पर जिनबिम्ब समूह विराजमान है, जगह-जगह सामायिक और स्वाध्याय के स्थान हैं। उसमें महावीर भगवान की प्रतिमाजी अति प्राचीन और बहुत सुन्दर कारीगरीवाली हैं। गुरुदेव के साथ ऐसे विशाल जिनालयों के और जिनदरबार के दर्शन करते हुए भक्तों को बहुत आनन्द होता था। जिनमन्दिर इतना विशाल है कि पूरे मन्दिर में दर्शन करने पर लगभग एक घण्टा लगता है।

गुरुदेव के प्रवचन के लिये भर बाजार बीच में चौक में भव्य मण्डप किया गया था। पाँच-सात हजार लोगों की भीड़ से मण्डप भर जाता था और आसपास की बीस-पच्चीस बड़ी-बड़ी दुकानें भी श्रोताजनों से ठसाठस भर जाती थी... व्यापार स्थान के बदले वे दुकानें धर्मश्रवण का स्थान बन गयी थीं। गुरुदेव के प्रताप से पूरे बाजार का वातावरण एक धर्मदरबार के रूप में परिवर्तित हो गया था।

मढ़ीयाजी (चैत्र शुक्ल ४, दिनांक १२)

रात्रि को जबलपुर से पाँच मील दूर मढ़ीयाजी क्षेत्र के दर्शन करने गये थे। वहाँ छोटे से (तीन सौ फीट उन्नत पर्वत पर अनेक जिनालयों इत्यादि की सुन्दर रचना है। बीच में बाहुबली भगवान की नौ फीट की उन्नत प्रतिमा है; एक ओर मन्दिर में ढलती आँखोंवाले ध्यानस्थ महावीर प्रभु की सरस मुद्रा है, दूसरी ओर आदिनाथ भगवान शोभित हो रहे हैं और चौक में चौबीस देहरियों में एक सरीखे चौबीस भगवान (उन-उन भगवान के वर्ण में) शोभित हो रहे हैं, उससे पूरे पर्वत का वातावरण बहुत आकर्षक बन गया है। एक मन्दिर में कमलासन से जिनेन्द्र भगवान शोभित हो रहे हैं। दूसरे भी दो मन्दिर हैं, तथा मनोहर-शान्त गुफाएँ भी हैं, एक गुफा में मुनिवरों का चित्र है और दूसरी गुफा में छोटा सा

जिनबिम्ब मुमुक्षु को आत्मध्यान की प्रेरणा दे रहा है। 'पीसनहारी का मन्दिर' में दो छोटे जिनबिम्ब और गौतम गणधर के चरणपादुका है। तलहटी में मन्दिर में सुन्दर महावीर प्रभु विराजमान हैं और मानस्तम्भ है। यहाँ गुरुदेव के साथ हर्षपूर्वक सर्व मन्दिरों के दर्शन करके बाहुबली भगवान के समीप भक्ति की....

(१) जय बाहुबली जय बाहुबली
जय बाहुबली देवा...
माता तोरी सुनंदा ने पिता ऋषभदेवा...
(२) धन्य बाहुबली आतमहित में
छोड़ दिया परिवार...
कि तुमने छोड़ा सब संसार...
भारत छोड़ा.... वैभव छोड़ा....
छोड़ा सब राजपाट....
कि तुमने छोड़ा सब संसार....

इत्यादि बहुत ही भक्ति पूज्य बहिनश्री-बहिन ने करायी थी।

यहाँ अनेक मन्दिर और चौबीस भगवन्तों के दर्शन से सबको बहुत आनन्द हुआ... गुरुदेव के साथ एक नये तीर्थधाम की छोटी सी यात्रा हुई... जाते-जाते फिर से भी भक्ति करने का मन हुआ... इसलिए निम्न अनुसार भावभीनी भक्ति करायी....

आज हम जिनराज तुमारे द्वारे आये...
हाँजी हाँ हम आये आये...
चौबीस प्रभु के द्वारे आये...
जबलपुर की यात्रा आये...
चौबीस प्रभु के द्वारे आये...
गुरुजी की साथ में आये...

इत्यादि प्रकार से गुरुदेव के साथ की यात्रा का उल्लास भक्ति द्वारा व्यक्त किया... और पश्चात् जय-जयकार करते हुए वहाँ से जबलपुर आये।

भेलुघाट - कुदरती दृश्य

दिनांक १३ सवेरे भेलुघाट देखने गये... यहाँ एक प्राचीन जिनमन्दिर है तथा आसपास संगमरमर के पर्वत और पानी के प्रपात का प्राकृतिक सौन्दर्य है। संगमरमर की बड़ी-बड़ी चट्टानों के बीच से पानी के झरने बह रहे हैं और सौ फीट ऊपर से प्रपात गिरता है। यहाँ के प्राकृतिक सौन्दर्य के बीच भक्ति करते-करते गुरुदेव के साथ जलविहार प्रसंग में भक्तों को हर्ष हुआ था।

सवेरे गुरुदेव के प्रवचन के बाद 'सन्मति-सन्देश' पत्र के सम्पादक श्री प्रकाशचन्द भारिल्ल ने सजोड़े आजीवन ब्रह्मचर्य प्रतिज्ञा अंगीकार की थी... गुरुदेव के निकट ब्रह्मचर्य प्रतिज्ञा अंगीकार करते समय गद्‌गद् भाव से उनकी आँखों में से आँसू झर रहे थे। तत्पश्चात् सेठ हुकमीचन्दजी (महावीर साईकिल मार्ट वाले) ने गुरुदेव को श्रद्धांजलि अर्पण करते हुए कहा कि — ***हमारा बड़ा सौभाग्य है कि कानजीस्वामी यहाँ पधारे हैं और स्वामीजी ने यहाँ आ करके चैतन्य तत्त्व के चिन्तन का जो मार्ग अब तक नहीं मिला था, वह हमको दिखलाया है। स्वामीजी के प्रवचन से यहाँ की जनता को हितार्थ चीज़ समझने को मिली है। भारतवर्ष में सन्तों ने यही आध्यात्मिक बात समाज के समक्ष रखी है। सौराष्ट्र प्रान्त के महान सन्त कानजीस्वामी के प्रताप से सोनगढ़ आध्यात्मिक महान स्थान बन गया है; मैं स्वयं वहाँ गया, मुझे वहाँ जो शान्ति मिली उसका वर्णन करना मेरी शक्ति से बाहर है। उनके प्रवचन की मैं क्या बात कहूँ? अपनी नगरी में स्वामीजी को अभिनन्दन देते हुए हमें हर्ष हो रहा है।*** तत्पश्चात् जबलपुर के महिला समाज की ओर से सुन्दरीबहिन ने काव्यरूप श्रद्धांजलि अर्पण की थी, तथा रूपवतीबहिन ने भी काव्य द्वारा श्रद्धांजलि अर्पण की थी। तत्पश्चात् कवि हुकमचन्दजी 'अनिल' ने भी श्रद्धांजलि गीत गाया था... और पश्चात् जबलपुर के दिगम्बर जैन समाज की ओर से अभिनन्दन-पत्र अर्पण किया गया था।

दोपहर को पूज्य गुरुदेव के निवासस्थान में विशेष तत्त्वचर्चा का प्रोग्राम था, जबलपुर के अनेक विद्वान भाई उस समय उपस्थित थे और तत्त्वचर्चा से प्रसन्न हुए थे। चर्चा के बाद जिनमन्दिर में भक्ति और भक्ति के पश्चात् प्रवचन; भोजन के पश्चात् तुरन्त पनागर-जिनमन्दिरों के दर्शन को गये... इस प्रकार जबलपुर के दो दिन में विधविध बहुत

ही भरचक कार्यक्रम रहते थे। जबलपुर की जैन जनता धर्म के उल्लासवाली है और स्वाध्याय चर्चा की विशेष रसिक है।

★ ★ ★

पनागर में जिनबिम्ब दर्शन और स्वागत

सायंकाल छह बजे गुरुदेव पनागर पधारे, तब वहाँ के समाज ने बहुत उत्साह से गुरुदेव का स्वागत किया। पनागर जबलपुर से दस मील दूर है। यहाँ पाँच जिनमन्दिर हैं... एक मन्दिर में शान्तिनाथ प्रभु की विशाल प्रतिमा लगभग दस फीट उन्नत अति भव्य और प्राचीन है। इस अति उपशान्त जिनप्रतिमा के दर्शन से गुरुदेव और भक्त बहुत प्रसन्न हुए थे... अहा! इस उपशान्त चैतन्य मुद्रा के अवलोकन से चित्त में आत्मिक शान्ति का झरना बहने लगता है... संसार की थकान से थके हुए भक्त इन शान्तिनाथ प्रभु की शरण में शान्ति पाते हैं, तदुपरान्त दूसरे अनेक जिनबिम्ब वहाँ विराजमान हैं। एक मन्दिर में ऊपर के भाग में सम्मेदशिखरजी तीर्थधाम की अतिभव्य विशाल रचना है, उसमें पच्चीस टूँकों की रचना और चरणों की स्थापना है। यहाँ लगभग २०० यात्री बैण्डबाजों सहित गाते-गाते जिनमन्दिरों का दर्शन करने गये... और बहुत हर्ष से भक्ति की। गुरुदेव ने भी भक्तों को प्रेरणा दी कि यहाँ की प्रतिमा विशेष दर्शनीय है। जिनेन्द्र भगवान के दर्शन-भक्ति के बाद पनागर जैन समाज ने गुरुदेव को अभिनन्दन-पत्र दिया, तथा यात्रा संघ को भी अभिनन्दन-पत्र दिया... और प्रत्येक यात्री को माला पहनाकर और मेवा देकर यात्रा संघ का सम्मान किया। पनागर के जैन समाज ने बहुत भावभीना वात्सल्य बतलाया था। साधर्मी-साधर्मी के मिलन और वात्सल्य का भावभीना दृश्य देखकर सबको हर्ष हुआ था। संघ को विदाई भी धूमधाम से शोभायात्रा के रूप में दी थी। रात्रि को सब जबलपुर आ गये थे।

दमोह (चैत्र शुक्ल ६, दिनांक १४ अप्रैल)

जबलपुर से गुरुदेव दमोह पधारने पर वहाँ के समाज ने भव्य स्वागत किया। दोपहर को प्रवचन में लगभग तीन हजार लोग एकत्रित हुए थे; सैकड़ों लोग आसपास के गाँवों से आये थे... धर्मशाला में लोग समाते नहीं थे इसलिए रास्ते पर लोगों की भीड़ जम

गयी थी। धर्मशाला के ऊपर का हॉल भाईयों से खचाखच था, नीचे का भाग बहिनों से खचाखच था, धर्मशाला के कमरे भी श्रोताजनों से भर गये थे। यहाँ लगभग नौ जिनमन्दिर हैं, उनमें गुरुदेव के साथ दर्शन किये। संघ के भोजनादि की व्यवस्था दिगम्बर जैन समाज ने की थी। शाम को दमोह से कुण्डलगिरि की ओर प्रस्थान किया।

यात्रा के दौरान प्रवास के समय भक्त अध्यात्म भावनावाली भक्ति करते थे... जगतनगर की गली-गली में घूमकर, वन-जंगल में और गिरिगुफा में घूम-घूमकर, दुनिया में चाहे जहाँ से मैं मेरे आत्मस्वरूप को शोध निकालूँगा, दुनिया में नहीं मिले तो अन्तरस्वरूप में झुक-झुककर खोजूँगा। असंख्य आत्मप्रदेश की गली-गली में खोजूँगा। अकेला नहीं तो देव-गुरु को साथ में रखकर खोजूँगा - इत्यादि प्रकार की भावनावाली भक्ति सबको प्रिय थी। भक्ति करते-करते सायंकाल सब कुण्डलगिरि पहुँच गये।

कुण्डलगिरि सिद्धक्षेत्र

दूर-दूर से कुण्डलगिरि का सुन्दर दृश्य दिखायी देता था... गोलाकार पर्वत चारों ओर प्रकाश से भक्तों के चित्त को आकर्षित कर रहा था... पर्वत के ऊपर अनेक उज्ज्वल जिनमन्दिरों की शिखरमाला ऐसी शोभित हो रही है—मानो कि पर्वत को मन्दिरों की माला ही पहनायी हो! इस कुण्डलगिरि सिद्धक्षेत्र से श्रीधरस्वामी - जो कि अन्तिम केवलज्ञानी थे, वे मोक्ष को प्राप्त हुए हैं। कुण्डलाकार पर्वत पर ४६ और नीचे की धर्मशाला में १० जिनमन्दिर हैं। पर्वत के ऊपर मुख्य मन्दिर में 'कुण्डलपुर के बड़े बाबा' के रूप में प्रसिद्ध श्री महावीर प्रभु की बारह फीट की भव्य प्रतिमा पद्मासन में विराजमान हैं। बीच में 'वर्द्धमान सागर' नाम का विशाल रमणीय तालाब है। ऐसे रमणीय सिद्धिधाम में गुरुदेव के साथ यात्री आ पहुँचे... गुरुदेव के साथ सिद्धिधाम की शीतल हवा से सब यात्री प्रफुल्लित हुए। रात्रि में चर्चा के समय गुरुदेव यात्रा के मधुर संस्मरण याद करते थे।

कुण्डलगिरि सिद्धधाम की यात्रा (चैत्र शुक्ल सप्तमी)

गुरुदेव के साथ सिद्धिधाम की यात्रा करने के लिये भक्तों को इतनी उमंग थी कि चार बजे तैयार हो गये थे... और तीर्थयात्रा के लिये आतुर थे... पहले नीचे के कितने ही जिनमन्दिरों के दर्शन किये, तब रोजाना नये-नये जिनेन्द्र समूहों के दर्शन से प्रसन्नता व्यक्त

करते हुए गुरुदेव ने कहा कि—अहो... जगह-जगह जिनेन्द्रों का दरबार है! यात्रा के दौरान हजारों नहीं, परन्तु लाखों जिनेन्द्र भगवन्तों के दर्शन हुए... कहीं तो एक-एक मन्दिर में हजारों प्रतिमा के दर्शन थे।

आनन्द से जिनेन्द्र दरबार के दर्शन करके सवेरे पाँच बजे गुरुदेव के साथ सिद्धक्षेत्र की यात्रा शुरु हुई... श्रीधरस्वामी इत्यादि की जय-जयकार करते हुए चले, वहीं तालाब के किनारे पर्वत की चढ़ाई की और जिनेन्द्र भगवन्तों के दर्शन की शुरुआत हुई... यात्रा में कदम-कदम पर जिनेन्द्र भगवन्तों के दर्शन होने से भक्तों को बहुत आनन्द होता था... गुरुदेव भी प्रमोद से भक्तों को कहते कि यह तो भगवान का दरबार है... यात्रा में लाखों जिनेन्द्र भगवन्तों के दर्शन हुए हैं। दो मन्दिरों के दर्शन के बाद तीसरे मन्दिर में श्रीधर भगवान के चरणपादुका हैं। अनुक्रम से दर्शन करते-करते १९वें मन्दिर में आये... 'कुण्डलपुर के बड़े बाबा' इस मन्दिर में विराजमान हैं। बारह फीट के भव्य महावीर भगवान को निहारते ही भक्तों का सिर भक्ति के भार से झुक पड़ता है। भोंयरा में महावीर प्रभु के उपरान्त चारों ओर दीवार पर बड़े-बड़े अनेक प्राचीन जिनबिम्ब हैं। यहाँ संघ ने सामूहिक पूजन की... बहुत भाव से दर्शन-पूजन करके दूसरे मन्दिरों के दर्शन के लिये आगे चले... यहाँ गोलाकार (कुण्डलाकार) पर्वत माला है, इसलिए मन्दिरों के दर्शन करते-करते प्रदक्षिणा होती जाती है।

आज मारा हृदयमां आनंद सागर उल्लसे...
जिनदरबारना दर्शनवडे संसारताप सहु टले...
गुरुदेव साथ यात्रा करतां संताप सवि सहेजे टले...

यात्रा करते-करते बीच-बीच में उपरोक्तानुसार विविध मंगल गीत गाते हुए पूज्य बहिनश्री-बहिन यात्रा के उल्लास में वृद्धि करती थीं। ऐसे बहुत भाव से गुरुदेव के साथ पर्वत के ऊपर के ४६ जिनमन्दिरों की यात्रा की... अन्त में तालाब के किनारे जिनमन्दिरों के दर्शन किये... इस प्रकार कुण्डलगिरि सिद्धिधाम की यात्रा पूरी करके स्तुति गाते-गाते धर्मशाला के जिनमन्दिरों के दर्शन किये।

दोपहर में जिनमन्दिर में समूह पूजन हुई थी। आदिनाथ प्रभु की और सिद्धप्रभु की पूजा के बाद तीसरी पूजा सोलहकारणभावना की हुई थी –

दरश विशुद्धि भावना भाय...
सोलह तीर्थंकर पद पाय... परम गुरु हो...
जय जय नाथ... परम गुरु हो...

सोलहकारणभावना के और दशलक्षण पर्व के दिन चल रहे होने से और फिर गुरुदेव के साथ सिद्धक्षेत्र की यात्रा हुई होने से उपरोक्त पूजन करते हुए पूज्य बहिनश्री-बहिन इत्यादि भक्तों को बहुत उल्लास होता था। पूजन के बाद —

मैं परम दिगम्बर साधु को नित ध्याऊँ रे....

इत्यादि भक्ति भी हुई थी।

दोपहर को प्रवचन के समय तीर्थ प्रबन्धक कमेटी की ओर से गुरुदेव के प्रति आभार... अभिनन्दन व्यक्त किया था... रात्रि में तत्त्वचर्चा हुई थी... आसपास के गाँवों से सैकड़ों लोग यहाँ लाभ लेने आये थे।

कुण्डलगिरि सिद्धिधाम की यात्रा करानेवाले कहान गुरुदेव को नमस्कार हो...

★ ★ ★

शाहपुर (चैत्र शुक्ल अष्टमी)

सवेरे जिनेन्द्रदेव के दर्शन करके यात्रासंघ ने कुण्डलगिरि से प्रस्थान किया... बीच में वांसा गाँव के जैन समाज ने गुरुदेव का स्वागत किया... तथा संघ को चाय-पानी के लिये रोका... वहाँ जिनमन्दिर के दर्शन करके आगे सागर की ओर जाते हुए बीच में शाहपुर जाने के लिये सात मील का अन्तर पड़ता है; वहाँ मोटर बसें जा सकें, ऐसा रास्ता नहीं था परन्तु शाहपुर संघ के विशेष आग्रह से वहाँ का कार्यक्रम रखा था। रास्ता बहुत खराब होने पर भी शाहपुर समाज को उत्साह इतना अधिक था कि रातों-रात चालीस लोगों ने रुककर रास्ता व्यवस्थित कराया... वे कहते मोटर नहीं चले तो एक-एक व्यक्ति को कंधे पर बैठा-बैठाकर लायेंगे, परन्तु संघ को शाहपुर लायेंगे ही। सागर की सड़क पर दस बजे आकर शाहपुर जाने के लिये वाहन की राह देखते हुए उज्जड़ मैदान में दो-तीन घण्टे बैठे... और एक बजे शाहपुर पहुँचे... रास्ते इत्यादि की कहीं तकलीफ पड़ती तब यात्रा की भावना विशेष जागृत होती... और भक्ति इत्यादि द्वारा यात्रा के प्रसंगों का स्मरण

करके यात्री यात्रा की भावना को उग्र बनाते थे। शाहपुर समाज का उत्साह अलग ही था अनेक दरवाजों से छोटी सी नगरी को शृंगार करके उमंग भरा स्वागत किया था... और संघ के प्रति भी बहुत वात्सल्यभाव दर्शाया था... यहाँ के संघ का उत्साह और वात्सल्य देखकर यात्री मार्ग सम्बन्धी थकान भूल गये। भोजन के बाद तुरन्त जिनमन्दिर में भजन हुआ... भजन के समय मन्दिर खचाखच भर गया था... और पूज्य बहिनश्री-बहिन ने 'मैं जीवन दु:ख सब भूल गया...' इत्यादि भजनों द्वारा भावभीनी भक्ति करायी थी। दोपहर को प्रवचन के बाद शाहपुर की धर्मप्रेमी जनता ने गुरुदेव के प्रति अभिनन्दन की झड़ी बरसायी थी। अनेक भक्तों के हृदय में कविता गाने की स्फुरणा जागती थी और बहुत थोड़ा टाइम होने पर भी लगातार गाने की माँग आती थी। दो अभिनन्दन-पत्र अर्पण किये गये थे। गुरुदेव के संघसहित शाहपुर पधारने से जनता ने हृदय खोलकर हर्ष व्यक्त किया था।

शाम को भोजन के बाद ७-८ मील का रास्ता लाँघकर सड़क पर आये... और वहाँ से प्रस्थान करके रात्रि आठ बजे सागर पहुँचे।

सागर शहर (चैत्र शुक्ल ९ तथा १०)

सवेरे दर्शन-पूजन करके सब गुरुदेव के स्वागत के लिये गये। स्वागत के लिये सागर शहर को शृंगारित किया गया था। गल्ला बाजार का विशाल चौक 'मानवसागर' से उमड़ रहा था। गल्ला बाजार के व्यापारी (मात्र जैन ही नहीं परन्तु अजैन भी) दो दिन से राह देखते थे कि कब स्वामीजी पधारें! सात-आठ हजार लोगों की भीड़ गुरुदेव का स्वागत करने के लिये उत्सुक बनी थी। उल्लास भरे कोलाहल से विशाल चौक गाज रहा था। आठ बजे गुरुदेव शाहपुर से सागर पधारने पर उल्लासपूर्वक भव्य स्वागत हुआ। सम्मेदशिखर यात्रा में जैसा इन्दौर का स्वागत महान था, वैसा ही इस यात्रा में सागर का स्वागत महान था। गुरुदेव पधारने पर बैण्डबाजे गाज उठे। स्वयंसेवक दल ने सलामी देकर स्वागत किया और हजारों लोगों ने जय-जयकार से गगन गजा दिया... स्वागत मण्डप में अनेक विद्वानों ने पुष्पमाला द्वारा श्रद्धांजलि अर्पण करके गुरुदेव का स्वागत किया। पण्डित मुन्नालालजी ने सागर की जनता की ओर से स्वागत प्रवचन किया... साथ-साथ में संघ के यात्रियों का भी पुष्पमाला और कुमकुम तिलक द्वारा वात्सल्यपूर्वक सन्मान किया। सागर के अनेक विद्वान सभा में उपस्थित थे। मंगल प्रवचन करते हुए

गुरुदेव ने कहा कि—**शान्ति का सागर आत्मा है, उसकी श्रद्धा-ज्ञान-रमणतारूप धर्म वह उत्कृष्ट मंगल है।** इस प्रकार सागर में शान्ति का सागर गुरुदेव ने बताया। (यहाँ सागर जितना विशाल तालाब है, उससे इस गाँव का नाम सागर पड़ा है।)

मंगल प्रवचन के बाद स्वागत यात्रा शुरु हुई... सागर का मानवसागर स्वागत में उमड़ पड़ा। बहुत लम्बा भव्य स्वागत वर्णी भवन में आकर पूरा हुआ। गुरुदेव पधारे, उस निमित्त से जैन व्यापारियों ने दो दिन दुकानें बन्द रखी थीं। गुरुदेव की और संघ की व्यवस्था के लिये सागर के जैन समाज ने बहुत उत्साह बताया था। संघ को भोजन के लिये सेठ भगवानदासजी इत्यादि ने अपने यहाँ आमन्त्रण दिया था और भोजन के समय वात्सल्य के लिये प्रत्येक यात्री को कुमकुम तिलक किया था।

वर्णी भवन में दो जिनालय तथा मानस्तम्भ है, मानस्तम्भ के ऊपर जाने के लिये लकड़ी की सीढ़ी है। दोपहर को प्रवचन में वर्णी भवन पूरा भर गया था। बहुत से लोग आसपास के गाँवों से आये थे। लगभग दस हजार श्रोताजनों की सभा, अनेक त्यागी-ब्रह्मचारी, विद्वान पण्डित और प्रतिष्ठित प्रमुखों से शोभित होती थी।

गुरुदेव के आध्यात्मिक से भरपूर प्रवचन के बाद पण्डित मुन्नालालजी ने प्रवचन की प्रशंसा करते हुए कहा कि— ***स्वामीजी का प्रवचन अनोखे ढंग का है। ऐसा शुद्ध प्रवचन-जो केवल आत्मतत्त्व का निरूपण करता हो-मैंने आज ही सुना। अगर इसका ध्यान से श्रवण-मनन किया जाए तो आत्मा का अवश्य कल्याण हो जाएगा, यहाँ मुझे बारह वर्ष हुए, मैंने बहुत से नेताओं का प्रवचन सुना, अब तक मैं भी पण्डित कहलाता हूँ, मैं अपनी बात करता हूँ... जब पूज्यश्री का साहित्य पढ़ा तब मालूम पड़ा कि पुण्य अलग चीज़ है, धर्म अलग चीज़ है... बीच में पुण्य आते हैं लेकिन वह ध्येय नहीं... धर्म उनसे अलग है। हमारे सौभाग्य से हमें स्वामीजी का दो दिन का लाभ मिला है; हम लाभ लेंगे तो हमारा कल्याण होगा।***

सायंकाल गुरुदेव के साथ अनेक जिनमन्दिरों के दर्शन किये। रात्रि में अभिनन्दन समारोह में गुरुदेव को तीन अभिनन्दन-पत्र दिये गये। एक दिगम्बर जैन समाज की ओर से; दूसरा सागर विद्यालय की ओर से तथा तीसरा महिला आश्रम की ओर से—इस प्रकार एक ही गाँव में तीन-तीन अभिनन्दन-पत्र दिये गये, इससे गुरुदेव के प्रति जनता के उत्साह का ख्याल आ सकता है।

दूसरे दिन सवेरे चौधरनबाईवाले जिनमन्दिर में सामूहिक पूजा हुई थी। इस विशाल मन्दिर में अनेक वेदियाँ हैं, तथा ८-१० फीट उन्नत छह खड्गासन प्राचीन प्रतिमाएँ विराजमान हैं, उनका दिखाव सुन्दर है, मानो चैतन्यध्यान में मग्न मुनिवर श्रेणी मांडकर अरहन्त पद प्रगट करते हों! ऐसे जिनमन्दिर में आदिनाथ प्रभु की, चौबीस भगवन्तों की और सीमन्धरादि बीस भगवन्तों की समूह पूजा करते हुए सबको आनन्द हुआ।

सवेरे प्रवचन के बाद जिनमन्दिरों के दर्शन करने गये... यहाँ के प्रमुख सेठ भगवानदासजी उत्साहपूर्वक गुरुदेव के साथ रहकर जिनमन्दिर दिखलाते थे। ऊँचे धवल शिखरों से सुशोभित दस जिनमन्दिरों के दर्शन किये।

आज संघ का भोजन गुजराती सेठ लल्लुभाई के यहाँ था। भोजनोपरान्त पुष्पमाला द्वारा यात्रियों का सन्मान किया। लगभग १५०० लोगों को जीमाया, इतना ही नहीं परन्तु तदुपरान्त गुरुदेव पधारे, इसकी खुशहाली में ५०० रुपये गणेश विद्यालय को, ४०४ रुपये पूज्य बहिनश्री-बहिन हस्तक के खाते में तथा ३०० रुपये ब्रह्मचारी बहिनों-भाईयों को भेंटरूप से दिये। इस प्रकार गुरुदेव के प्रति एक अजैन भाई का भी इतना उत्साह देखकर सागर की जनता बहुत प्रभावित हुई थी।

दोपहर को प्रवचन के बाद मण्डप में पूज्य बहिनश्री-बहिन ने भक्ति करायी थी। रात्रि में आगम और अध्यात्म की शैली के सम्बन्ध में सुन्दर तत्त्वचर्चा हुई थी। उस समय यहाँ के वयोवृद्ध श्रीमान् सेठश्री कुन्दनमलजी सिंघई (जो वर्णीजी के बड़े भाईरूप से पहिचाने जाते हैं और सागर के प्रतिष्ठित प्रमुख हैं वे) बहुत भाव से गुरुदेव के दर्शन करने आये थे। आभारदर्शन में पण्डित मुन्नालालजी ने कहा कि—यहाँ पर स्वामीजी का जो

भव्य स्वागत हुआ, मैं सच कहता हूँ १२ वर्ष से मैं सागर में रहता हूँ लेकिन ऐसा स्वागत मैंने आज तक किसी सन्त का नहीं देखा... स्वामीजी की प्रवचनशैली अद्‌भुत है... भक्ति-पूजन का कार्यक्रम देखकर मेरा हृदय गद्‌गद्‌ हो गया।

इस प्रकार सागर का दो दिन का कार्यक्रम बहुत प्रभावशाली था और सागर के उत्साही समाज ने बहुत उत्साह से शोभित किया था। मध्यप्रदेश में जबलपुर में और सागर—ये दो शहर जैनधर्म की विशेष जहोजलालीवाले नगर हैं... और दोनों नगरों का जैन समाज धार्मिक प्रसंगों के उत्साह के लिये प्रशंसनीय है। दोनों शहरों में जैनों की बस्ती ८-१० हजार जितनी है।

नैनागिरि-रेशंदीगिरि सिद्धक्षेत्र (चैत्र शुक्ल ११)

सागर का दो दिन का कार्यक्रम पूरा होने पर गुरुदेव ने संघसहित नैनागिरि-रेशंदीगिरि सिद्धिधाम की ओर प्रस्थान किया। अब मध्यप्रदेश में से विदर्भ देश का प्रवास शुरु हुआ... इस समय विदर्भ में प्रसिद्ध डाकुओं का भय होने से संघ के साथ पुलिस-पार्टी का बन्दोबस्त रखा गया था।

सागर से नैनागिरि की ओर जाते हुए बीच में बण्डा गाँव में संघ को चाय-पानी के लिये रोककर गुरुदेव का सन्मान किया तथा दूसरे एक गाँव में भी गुरुदेव को थोड़ी देर रोककर सन्मान किया... इस प्रकार प्रवास के दौरान बीच में आनेवाले अनेक गाँवों में सैकड़ों लोग इकट्ठे होकर, गुरुदेव को बीच में रोककर स्वागत करते... ऐसे कितने ही गाँव हैं कि जिनके नाम भी याद नहीं।

लगभग ८ बजे नैनागिरि-रेशंदीगिरि पहुँचे। यहाँ आमने-सामने दो छोटे से पर्वत हैं... नैनागिरि धर्मशाला में १३ जिनालय हैं और सामने रेशंदीगिरि पर ३६ जिनालय हैं, इसके अतिरिक्त दो पहाड़ी के बीच कमलपत्र से आच्छादित विशाल मनोज्ञ सरोवर है, उस सरोवर के मध्य में एक जलमन्दिर है; इस प्रकार यहाँ कुल ५० जिनमन्दिर हैं। श्री वरदत्त आदि अनेक मुनि इस सिद्धिधाम से मोक्ष प्राप्त हुए हैं।

रेशंदीगिरि की चढ़ाई मुश्किल से लगभग सौ सीढ़ियाँ जितनी हैं, उसके मुख्य मन्दिर में १०-१२ फीट उन्नत गुलाबी रंग के पार्श्वनाथ प्रभु अति सुन्दर हैं, फिरते २४

भगवन्तों के कारण दृश्य बहुत भाववाला बन जाता है; तदुपरान्त तीन फीट के बाहुबली भगवान और वरदत्त मुनिराज की प्रतिमा भी वीतराग रस झरती मुद्रा द्वारा भक्त के हृदय को आकर्षित कर रही हैं। एक जगह गन्धकुटी पर वरदत्तादि मुनिवरों के चरण हैं। कितने ही मन्दिरों में अति प्राचीन सुन्दर कलामय प्रतिमाएँ विराजमान हैं... मन्दिरों के दर्शन के बाद पार्श्वप्रभु के सन्मुख रेशंदीगिरि सिद्धक्षेत्र की पूजन तथा सिद्धपूजन हुई। तत्पश्चात् पूज्य बहिनश्री-बहिन ने निम्न उल्लास भरी भक्ति करायी....

आवो आवो जी... हाँ हाँ... आवो आवो जी...
जैन जग सारे,
वरदत्त मुनि मोक्ष गये....

इस प्रकार पूजन-भक्तिपूर्वक उत्साह से सिद्धक्षेत्र की यात्रा पूरी हुई।

विदर्भ देश में नैनागिरि-रेशंदीगिरि सिद्धिधाम की
अपूर्व यात्रा करानेवाले गुरुदेव को नमस्कार हो।

★ ★ ★

प्रवचन के पहले स्वागत-समारोह हुआ था। बालकों के स्वागत-गीत के बाद क्षेत्र के मन्त्रीजी ने स्वागत प्रवचन में कहा कि—हमें आज अत्यन्त हर्ष है कि पूज्य कानजीस्वामी जैसे महापुरुष संघसहित आज यहाँ पधारे हैं... यह वही पुण्य स्थान है जहाँ वरदत्तादि मुनिवरों ने आत्मसाधना की थी... आज इस क्षेत्र पर कानजीस्वामी को देखकर हमें अत्यन्त आनन्द हो रहा है। कानजीस्वामी सोनगढ़ के ही नहीं, समस्त भारत की पूँजी है, आपने अध्यात्म की गंगा प्रवाहित की है। हम स्वामीजी का शत्-शत् अभिनन्दन करते हैं।

तत्पश्चात् क्षेत्र के सभापतिजी के प्रवचन के बाद, 'तीर्थराज की पुण्यधरा पर स्वामीजी आज पधारे....' यह स्वागत-गीत गाया गया था। पश्चात् तीर्थधाम में गुरुदेव का प्रवचन हुआ था... आसपास के सैकड़ों लोग गाड़ियाँ जोत-जोतकर आये थे। प्रवचन के समय बादल होने से उपशान्त वातावरण लगता था.... प्रवचन के दस मिनिट बाकी थे, तब थोड़े छींटे बरसे थे-मानो तीर्थक्षेत्र पर गंधोदक वृष्टि करके आकाश उसे पूज रहा हो! बरसते बरसात के बीच में आभार और अभिनन्दन विधि हुई... प्रवचन के पश्चात् तुरन्त

प्रस्थान करना होने से कितने ही यात्री तैयार होकर बस में बैठे-बैठे ही प्रवचन सुनते थे। नैनागिरि से द्रोणगिरि की ओर प्रस्थान हुआ, उस समय का दृश्य सरस था... संघ की सब मोटरें और बसें साथ ही थी। रास्ता पानी से छिड़का हुआ था, बादलवाला आकाश पृथ्वी पर शान्ति की छाया बिछा रहा था, सामने मन्दिरों से आच्छादित तीर्थधाम दिखायी देता था और पास ही कमलपत्र से आच्छादित सुन्दर सरोवर था... ऐसे रमणीय दृश्य के साथ भक्तों के दिल में यात्रा की उमंग थी... सबसे आगे गुरुदेव की मोटर 'मंगलवर्द्धिनी' तत्पश्चात पुलिस वाहन, तत्पश्चात् बहिनश्री-बहिन की मोटर 'सत्सेविनी' तत्पश्चात् महेन्द्रकुमार सेठी की 'अमर-किरण' इत्यादि मोटरें और तत्पश्चात् यात्रियों की चार बसें, इस प्रकार पूरे संघ की हारमाला विदर्भदेश में एक साथ विचरण कर रही थी... गुरुदेव के साथ ही साथ एक सिद्धिधाम से दूसरे सिद्धिधाम की ओर प्रवास करते हुए भक्तों का हृदय प्रफुल्लित था।

नैनागिरि से द्रोणगिरि की ओर जाते हुए बीच में दलपतपुरा गाँव में सैकड़ों लोगों ने गुरुदेव का सन्मान करके यात्रियों को दूध पिलाया... इसी प्रकार शाहपुर गाँव में भी गुरुदेव का स्वागत करके संघ को पाथेय दिया... आगे जाने पर दूसरे एक गाँव में संघ को रोककर गुरुदेव का स्वागत किया और यात्रियों को दूध पिलाकर माला पहनायी। सायंकाल मलहरा गाँव में गुरुदेव का स्वागत किया... वहाँ मात्र १० मिनिट के रुकाव में गुरुदेव को अभिनन्दन-पत्र प्रदान किया... संघ को भी थोड़ी देर रुकने का आग्रह किया था। संघ ने शाम का नाश्ता बस में ही कर लिया... शाम को द्रोणगिरि सिद्धिधाम पहुँच गये... यहाँ अनेक त्यागी थे, उन्होंने गुरुदेव को देखकर प्रसन्नता व्यक्त की।

द्रोणगिरि सिद्धिधाम की यात्रा (चैत्र शुक्ल १२)

सवेरे सवा पाँच बजे, गुरुदत्त मुनिराज के सिद्धिधाम द्रोणगिरि की यात्रा के लिये गुरुदेव सहित भक्तों ने प्रस्थान किया। पर्वत रमणीय है, चढ़ाई भी सरल है... दस मिनिट में ऊपर पहुँच गये और मन्दिरों के दर्शन शुरु हुए... पास-पास में २६ मन्दिर हैं, उनमें दर्शन करके अन्तिम मन्दिर में आये। यहाँ बड़ी गहरी गुफा है, वह गुरुदत्त मुनिराज का सिद्धिधाम गिना जाता है... उसके बगल में एक मन्दिर है, उसमें अनेक प्रतिमाओं के उपरान्त मुनिवरों के चरणपादुका है, बीच में बड़ी वेदी है, उसके चारों ओर मुनिवरों के

भाववाही दृश्य हैं। मुनिधाम वास्तव में शान्त और रमणीय है। इस मन्दिर और गुफा के सामने विशाल चौक है, वहाँ भक्ति-पूजन किये। पहले द्रोणगिरि सिद्धक्षेत्र की पूजन की, तत्पश्चात् सिद्ध भगवन्त मानो साक्षात् सन्मुख विराजमान हों—ऐसे उत्तम भाव से सिद्ध भगवन्तों की पूजन की। पूजन के बाद भक्ति हुई.....

धन्य मुनिश्वर आतमहित में,
छोड़ दिया परिवार....
कि तुमने छोड़ा सब घरबार....
धन छोड़ा.... वैभव सब छोड़ा....
समझा जगत असार....
कि तुमने छोड़ा सब संसार....

यह मुनि भक्ति गुरुदेव ने बहुत भावपूर्वक गवायी थी। तत्पश्चात मानो कि इस मुक्तिधाम में मुनिवरों को साक्षात् देखते हों, ऐसे उल्लासभाव से बहिनश्री-बहिन ने निम्न भक्ति गवायी थी

ऐसे गुरुदत्तमुनि देखे वन में
जा के राग-द्वेष नहीं मन में...

द्रोणगिरि तीर्थ दो नदियों के बीच आया हुआ है। पर्वत के पास ही चन्द्रभागा नदी कलरव करती हुई मानों कि मुनिवरों का गुणगान करती हो वैसे प्रवाहित होती है। पूजन-भक्ति के बाद गुफा का और तीर्थधाम के वातावरण का सबने भावपूर्वक अवलोकन किया। इस प्रकार आनन्दपूर्वक गुरुदेव के साथ सिद्धिधाम की यात्रा करके जय-जयकार करते हुए सब नीचे उतरे और द्रोणगिरि तीर्थ की यात्रा पूर्ण हुई।

द्रोणगिरि सिद्धिधाम की यात्रा करानेवाले
गुरुदेव को नमस्कार हो...

सागरवाले सेठ बालचन्दजी मलैया ने द्रोणगिरि आकर संघ की व्यवस्था में उत्साहपूर्वक भाग लिया था और संघ को भोजन कराया था तथा गुरुदेव के प्रति बहुत भक्तिभाव बताया था। तदुपरान्त मलहरा के भाईयों ने भी उत्साहपूर्वक संघ की व्यवस्था में भाग लिया था।

यहाँ गुरुदेव पधारे इस प्रसंग में, महावीर जन्म कल्याणक निमित्त पाँच दिन का विशेष मेला भरा था... बाहर गाँव से हजारों लोग आये थे और बाजार डेरा-तम्बू इत्यादि से मानो नयी नगरी रच गयी हो, ऐसा लगता था। मेले के स्थान में एक विशाल मण्डप में श्री जिनेन्द्रदेव को विराजमान किया था और रात्रि में वहाँ भक्ति हुई थी। वीरप्रभु के पालना झूलन का व वरदत्तादि मुनिवरों का स्तवन पूज्य बहिनश्री-बहिन ने गवाया था। मेले के बीच में मण्डप में सिद्धक्षेत्र के सामने भक्ति करते हुए आनन्द होता था... और भक्ति करके वापस मुड़ते हुए मानो कि भगवान का जन्म कल्याणक मनाकर आ रहे हों, इस तरह सब हर्षित होते थे।

चैत्र शुक्ल तेरस के दिन भगवान महावीर प्रभु के जन्म कल्याणक निमित्त सवेरे प्रभातफेरी के बाद मण्डप में सामूहिक पूजन हुई थी, पूजन के बाद भक्ति हुई थी—

कुण्डलपुरी के मंझार छाया हरष अपार....
भारतभूमि के मंझार छाया हरष अपार....
त्रिलोकभूमि के मंझार छाया हरष अपार....

भक्ति के बाद गुरुदेव का प्रवचन हुआ था। दोपहर में मेले के मण्डप में गुरुदेव के प्रवचन के बाद सेठ बालचन्दजी मलैया ने स्वागत-प्रवचन करते हुए कहा कि— ***सूर्य पश्चिम में नहीं उगते, लेकिन यह ज्ञानसूर्य तो पश्चिम में उदित हुआ है और हमको ज्ञानप्रकाश दे रहा है; अज्ञानरूपी अन्धकार को नष्ट करके इसने रात के बदले में दिन कर दिया है, तीर्थंकर भगवान के साथ में जैसे गणधरादि की सभा होती है, वैसे स्वामीजी के साथ में भी बड़ी सभा है, यह सब देखकर हम लोगों को बहुत आनन्द हो रहा है....***

यहाँ अत्यन्त वीरान जंगल जैसा था परन्तु गुरुदेव के पधारने से मेला भरने से जंगल में मंगल हो गया था।

छतरपुर के नरेन्द्रकुमार म. अ. की धर्मपत्नी साहित्य रत्न श्रीमती रमादेवी बहिन ने उल्लासपूर्वक भाषण करते हुए कहा— ***स्वामीजी के संघ के परिचय से मुझे चतुर्थ काल के समवसरण जैसा आनन्द आया... सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र का चतुर्थ काल जैसा योग यहाँ बना है... प्रवचन में सम्यग्ज्ञान की धारा बहती थी...***

आज चैत्र शुक्ल तेरस का दिन,
द्रोणगिरि जैसा पावन सिद्धक्षेत्र,
कानजीस्वामी जैसे ज्ञानी पुरुष,

ऐसा उत्तम मेल आज यहाँ हो गया है। कानजीस्वामी के सभा में बैठे हुए हम मानो महावीर प्रभु के दरबार में ही बैठे हों—ऐसा हमें हर्ष हो रहा है और हमें विश्वास है कि जैसी शान्ति सोनगढ़ की इन बहिनों को मिली है, वैसी ही शान्ति हमें भी प्राप्त होगी।

तत्पश्चात् पण्डित दयाचन्दजी ने श्रद्धांजलि काव्य गाया था और पण्डित दुलीचन्दजी ने इस प्रान्त की ओर से प्रदान किया गया अभिनन्दन-पत्र पढ़ा था; और तत्पश्चात् श्री जिनेन्द्र अभिषेक हुआ था। सायंकाल कितने ही यात्री फिर से सिद्धक्षेत्र की यात्रा को गये थे... रात्रि में तत्त्वचर्चा थी।

इस प्रकार द्रोणगिरि का दो दिन का कार्यक्रम आनन्द से पूरा हुआ।

खजराह (चैत्र शुक्ल १४)

द्रोणगिरि से प्रस्थान करके नौ बजे खजराह पहुँचे... यहाँ बहुत ही सुन्दर उत्कीर्णवाले अनेक प्राचीन जिनमन्दिर हैं और सैकड़ों प्राचीन जिनबिम्ब हैं। लगभग ८० फीट ऊँचे शिखरबन्धी मन्दिर अति कलामय उत्कीर्णता से शोभित हैं, कहीं-कहीं उत्कीर्णता अधूरी रह गयी है। हाल में मुख्य मन्दिर में लगभग १५ फीट उन्नत विशिष्ट पाषाण में उत्कीर्ण शान्तिनाथ भगवान खड्गासन से शोभित हैं... अहा! इन शान्तिनाथ भगवान को देखते ही आत्मिक शान्ति की भावनाएँ जागृत होती हैं। प्रतिमाजी संवत् १०८५ की हैं। मन्दिर के चौक में चारों ओर अनेक जिनबिम्ब विराजमान हैं। यहाँ कुल ३२ स्थानों के दर्शन के बाद शान्तिनाथ प्रभु के सन्मुख पूजन-भक्ति हुए।

मन्दिर के बाहर के चौक में अनेक बड़े-बड़े प्राचीन जिनबिम्ब के अवशेष हैं। खण्डित हालत में रहे हुए भव्य जिनबिम्बों के प्राचीन अवशेष भी दिगम्बर जैन धर्म के पुरातन वैभव की प्रसिद्धि करते हुए मुमुक्षु दर्शक के हृदय में वीतरागता की प्रेरणा जगाते हैं... एक ओर खण्डित दशा देखकर हृदय जरा सा खेदखिन्न होता है तो दूसरी ओर से जैनधर्म के भव्य प्राचीन वैभव के स्मरण से हृदय गौरवान्वित होकर वीतरागी भावना में रत बनता है। मन्दिरों के प्रवेश द्वार इत्यादि की कला बहुत आकर्षक है, कहीं माताजी के सोलह स्वप्नों का दृश्य है, कहीं देवियों द्वारा माताजी की सेवा का दृश्य है तो कहीं भगवान पंच परमेष्ठी का दृश्य है। शान्तिनाथ प्रभुजी के सन्मुख अति शान्त वातावरण है, ध्यानस्थ भगवान के अंगुली की कला विशिष्ट है हस्त में पद्मचिह्न भी दिखायी देता है। शान्तिनाथ प्रभुजी के सन्मुख बैठकर शान्त वातावरण में शान्तिनाथ प्रभु के यह स्मरण लिखे गये हैं।

दोपहर को भोजन के बाद वहाँ के म्यूजियम में सैकड़ों प्राचीन जिनबिम्ब देखे तथा बगल में अन्यमत के मन्दिरों की प्राचीन कारीगरी देखी। तत्पश्चात् संघ ने वहाँ से प्रस्थान किया। १ से २ गुरुदेव ने खजराह में प्रवचन किया।

खजराह से पपौराजी की ओर जाते हुए बीच में नवगाम मुकाम में मण्डप बाँधकर सैकड़ों लोगों ने गुरुदेव का स्वागत किया और वात्सल्यपूर्वक संघ को रोककर दूध पिलाया। टीकमगढ़ में भी बहुत उत्साह से स्वागत किया। वहाँ दर्शन करके रात्रि में संघ सहित गुरुदेव पपौराजी क्षेत्र में पहुँच गये।

पपौराजी

पपौरा सुन्दर क्षेत्र है, विशाल मैदान के चारों ओर धर्मशाला है और ७५ मन्दिर हैं। पहले ही मन्दिर में आदिनाथ प्रभु की छह फीट उन्नत खड्गासन प्रतिमा के दर्शन करते ही यात्रियों की थकान उतर जाती है और हर्ष से हृदय पुलकित होता है। मन्दिर विशाल है और कितने ही मन्दिर सुन्दर गजरथ के आकार के हैं।

(पपौराजी के ७५ मन्दिरों की वन्दना - चैत्र शुक्ल १५)

सवेरे गुरुदेव ने संघ सहित जिनमन्दिरों की वन्दना शुरु की... यहाँ पर्वत नहीं है

परन्तु विशाल मैदान में ही अलग-अलग ७५ मन्दिर हैं। तीन मानस्तम्भ हैं, कोई-कोई मन्दिर तीन पीठिका की रचनावाले (समवसरण मन्दिर) हैं।'जय जिनवर नमीअे आपने...' इत्यादि मंगल स्तुति गाते-गाते, गुफा जैसे प्रवेश द्वारों में होकर एक के बाद एक जिनमन्दिरों के दर्शन करते तथा अर्घ्य चढ़ाते हुए ३७ मन्दिरों की वन्दना करके ३८वें मन्दिर में आये। ७५ मन्दिरों में यह ठीक बीच का मन्दिर आया; यात्रा करके थके हुए भक्तों ने यहाँ शीतल छाया में गुरुदेव के चरणों में बैठकर थकान उतारी... और आगे के मन्दिरों की वन्दना शुरु की।

४३ मन्दिर के बाद ४४वाँ मन्दिर आया; यहाँ ४४ से ६८ मन्दिर एक साथ हैं और उन्हें चौबीसी मन्दिर भी कहते हैं। चंदेरी की चौबीसी के दर्शन के बाद भावना होने पर एक भक्त ने यह चौबीसी बनायी है, उसमें विशेषता इतनी है कि प्रत्येक मन्दिर को प्रदक्षिणा हो सकती है। विशाल मन्दिर में हारबन्ध २४ वेदी पर २४ भगवन्त (जिसमें विशेषतया पार्श्वनाथ भगवन्त) विराजमान हैं, बीच में खिड़की में से देखने पर अनेक मन्दिरों में से सीधे भगवान दिखायी देते हैं, मानो गहरी-गहरी गुफा में भगवान बैठे हों। फिरते २४ भगवन्तों के बीच चन्द्रप्रभ भगवान का मन्दिर है, उसमें पाँच फीट विशाल चन्द्रप्रभ भगवान विराजमान हैं।७५ मन्दिरों की वन्दना के बाद यहाँ पूजन-भक्ति हुई थी। चारों ओर भक्तों की भीड़ से मन्दिर भर गया था। पपौराजी क्षेत्र की पूजा तथा चन्द्रनाथ प्रभु की पूजा के बाद गुरुदेव ने उपशान्त वातावरण में यात्रा के उल्लासपूर्वक निम्न स्तवन गवाया था—

धन्य दिवस धन्य आज नो
धन्य धन्य घड़ी तेह,
धन्य समय प्रभु माहरो...
दरशन दीठुं रे आज... मन लाग्युं रे मारा नाथजी
सुंदर मुरत दीठी ताहरी,
केटले दिवसे आज,
नयन पावन थया माहरा,
पाप तिमिर गयां भाज....
मन लाग्युं रे मारा नाथजी!

गुरुदेव की भावभीनी भक्ति के बाद पूज्य बहिनश्री-बहिन ने भक्ति करायी थी।

नाथ हो लवलीन तुमारी महिमा गाये....
हाँ जी हाँ हम गाये गाये....
कहान गुरुजी की साथ में आये....
जात्रा करके आनंद पाये... नाथ हो....

इस प्रकार आनन्दपूर्वक पपौराजी जिनधाम की वन्दना हुई। पपौराजी टीकमगढ़ से तीन मील है; पपौराजी में संघ के भोजन इत्यादि की व्यवस्था टीकमगढ़ के जैन समाज ने की थी। दोपहर में टीकमगढ़ में प्रवचन था... टीकमगढ़ में ४-५ मन्दिर हैं। मुख्य मन्दिर में लगभग पाँच फीट के चिन्तामणि पार्श्वनाथ विराजते हैं। प्रवचन के बाद टीकमगढ़ जैन समाज तथा पपौराजी क्षेत्र कमेटी की ओर से अभिनन्दन-पत्र दिया गया था। तत्पश्चात् तुरन्त रवाना होकर आहारक्षेत्र पहुँचे... एक के बाद एक तीन विशाल सरोवर के बाद आहारक्षेत्र आता है। यहाँ आते ही, जैसे विरही बालक माता को भेंटने के लिये दौड़ता है उसी प्रकार भक्त शान्तिनाथ प्रभु को भेंटने के लिये दौड़े... और शान्तिनाथ प्रभु को देखते ही अत्यन्त आनन्दित हुए। लगभग १८ फीट के शान्तिनाथ भगवान और दोनों ओर १२ फीट के कुन्थुनाथ-अरनाथ भगवन्त, ये त्रिरंगी-त्रिपुटी भगवन्तों का दृश्य अद्भुत है। तदुपरान्त दूसरे सात मन्दिर और दो छोटे से मानस्तम्भ हैं। दस फीट उन्नत नव प्रतिष्ठित बाहुबली भगवान भी बहुत भाववाही हैं। गुरुदेव के साथ आनन्द से प्रत्येक जगह दर्शन किये। यहाँ के पुरातत्त्वसंग्रह में अनेक प्राचीन-प्रतिमाएँ हैं। मन्दिरों के दर्शन के बाद गुरुदेव के स्वागत का समारोह हुआ तथा अभिनन्दन-पत्र प्रदान किया गया, और गुरुदेव का मंगल प्रवचन हुआ। यहाँ क्षेत्र के सभी कार्यकर्ताओं ने उत्साह से भाग लेकर संघ के स्वागत की सुन्दर व्यवस्था की थी। संघ के आहार की व्यवस्था भी आहारजीक्षेत्र में ही हुई थी।

सायंकाल शान्तिनाथ भगवान के सन्मुख आहारक्षेत्र की पूजन तथा भक्ति हुई—

मैं तेरे ढीग आया रे....
शांतिनाथ ढीग आया....
मैं रटता रटता आया रे....
गुरुवर के साथ आया....

—इत्यादि भक्ति के बाद आहारजी से प्रस्थान करके सब टीकमगढ़ आये और वहाँ जिनमन्दिर के पास मण्डप में भक्ति हुई—

तुमसे लागी लगन.... ले लो अपनी शरन....
पारस प्यारा.... मेटो मेटोजी संकट हमारा....

भगवान की भक्ति के रंग से रंगे हुए भक्तों को इस प्रकार ऊपराऊपरी नये-नये धामों में जिनेन्द्रभक्ति करते हुए आनन्द होता था। भक्ति के बाद रात्रि में संघ पपौराजी आ गया।

इस प्रकार आज एक ही दिन में पपौराजी, आहारजी तथा टीकमगढ़ में वन्दन-पूजा-भक्ति हुए... इस प्रकार गुरुदेव के साथ लगातार नये-नये जिनधामों को भेंटते हुए भक्तों को अपने गाँव के स्मरण का अवकाश भी नहीं मिलता था... तीर्थवन्दना करते-करते एक ही प्रश्न उठता था कि अब कौन सा तीर्थ आयेगा ?

ललितपुर

वैशाख कृष्ण दूज के सवेरे, जिनेन्द्र देव के दर्शन करके आहारजी से ललितपुर की ओर प्रस्थान किया... बीच में एक गाँव में गुरुदेव का स्वागत करके संघ के यात्रियों को चाय-पानी के लिये रोका था। वहाँ जिनमन्दिर के दर्शन करके ललितपुर पहुँचे... गुरुदेव का स्वागत हुआ... विशाल मन्दिर में नव वेदी है तथा भोंयरा में भी प्राचीन प्रतिमाएँ हैं, मूलनायक श्री अभिनन्दनस्वामी हैं; मानस्तम्भ भी है। तदुपरान्त गाँव में दूसरे तीन विशाल मन्दिर अनेक वेदी सहित हैं। प्रवचन-भक्ति इत्यादि कार्यक्रम थे।

देवगढ़

दूसरे दिन (वैशाख कृष्ण ३) सवेरे ललितपुर से देवगढ़ के दर्शन करने गये (यहाँ डाकुओं का विशेष भय होने से ३० पुलिस की पार्टी संघ के साथ थी) देवगढ़ में छोटा-सा पर्वत है... देवगढ़ अर्थात् वास्तव में देवों का ही गढ़ है, गढ़ के अन्दर लाखों की संख्या में जिनदेव की प्रतिमाएँ हैं। लगभग बीस मिनिट में पर्वत पर चढ़ा जाता है। ऊपर तीन परकोटा हैं और ३२ मन्दिरों के दर्शन हैं। बिखरा हुआ अपार जैन वैभव जगह-जगह दृष्टिगोचर होता है। सुन्दर कलामय अद्भुत शान्त-सौम्य मुद्राधारक लाखों दिगम्बर

जिनप्रतिमाएँ यहाँ शोभित होती हैं—इसका बड़ा भाग खण्डित दशा में है। यहाँ इतनी जिनप्रतिमाएँ हैं कि चावल की पूरी बोरी भरी हो और प्रत्येक प्रतिमा के निकट मात्र एक-एक दाना रखा जाए तो भी वे चावल समाप्त हो जाएँ। बीच के मुख्य मन्दिर में शान्तिनाथ प्रभु की १२ फीट उन्नत प्राचीन प्रतिमा विराजमान हैं। इसके चारों ओर अनेक मन्दिरों की रचना देखकर ऐसा लगता है कि बीच के मुख्य मन्दिर को लगकर ५२ जिनालयों की रचना होगी यहाँ एक स्तम्भ पर जिनप्रतिमा है, बीच में मुनि प्रतिमा है और नीचे आर्यिकामाता उत्कीर्ण हो-ऐसा लगता है। कहीं माताजी १६ स्वप्न निहार रही हैं तो कहीं मोरपिच्छी-कमण्डल संयुक्त मुनि भगवन्त दृष्टिगोचर होते हैं - इस प्रकार पर्वत पर चारों ओर विविध प्रकार के भाववाही कलामय दृश्य दृष्टिगोचर होते हैं। तदुपरान्त एक मन्दिर में चक्रवर्ती राजवैभव छोड़कर मुनि हुए हैं, उनका दृश्य है। मुनिराज के चरणों के निकट छोड़े हुए नवनिधान और १४ रत्न (हाथी इत्यादि) पड़े हैं। अहा! मानो अभी ही यह सब वैभव छोड़कर चक्रवर्ती (शान्तिनाथ या भरतजी इत्यादि) मुनि होते हैं और वे निधान उनके चरणों के निकट दीनता से-अनाथरूप से लेट रहे हैं, परन्तु मुनिराज तो अपने आत्मध्यान में तल्लीन हैं —यह भावभीना दृश्य देखकर भक्त के हृदय में से सहज उद्गार निकल पड़ते हैं कि—

धन्य मुनिश्वर आतमहित में
छोड़ दिया परिवार....
कि तुमने छोड़ा सब घरबार....

धन छोड़ा, वैभव सब छोड़ा,
छोड़ा चक्रवर्ती राज....
कि तुमने छोड़ा नवनिधान....

इस प्रकार देवगढ़ में अनेकविध जिनवैभव के दर्शन करके सब नीचे आये। नीचे धर्मशाला में एक मन्दिर है, वहाँ मुनिराज की एक अद्भुत प्रतिमा विराजमान है। महासमर्थ प्रतिभासम्पन्न आचार्यमुनिराज दिगम्बर दशा में कोई परम अध्यात्मतत्त्व का उपदेश दे रहे हैं और मुनि उसे सुनते हैं... आचार्यदेव की मुद्रा वीतरागी दिगम्बर दशा का स्पष्ट दर्शन कराती है। उपदेश मुद्रा अतिशय वैराग्य से आच्छादित है, उस परम वीतरागी मुद्रा पर

रत्नत्रय की झलक झलक रही है मानो कि अभी बोलेंगे! ऐसी अद्‌भुत भाववाही मुद्रा है... जिसे देखते ही दिगम्बर मुनिमार्ग प्रतीति में आ जाता है और मुमुक्षु का हृदय सहज-सहज उन मुनिराज के चरणों में नम्रीभूत हो जाता है।

— यह अद्‌भुत वीतरागी मुनिप्रतिमा पहले पर्वत के ऊपर थीं परन्तु इसकी विशेष रक्षा के लिये अभी नीचे के मन्दिर में विराजमान की है। इस मुनि प्रतिमा के दर्शन से गुरुदेव को और भक्तों को बहुत आह्लाद हुआ... सबने भावपूर्वक अर्घ्य चढ़ाकर उन मुनि भगवन्त की पूजन की।

पर्वत पर लाखों प्रतिमाओं की अद्‌भुत कला भारत में विशेष महिमाशाली है... बहुत सी प्रतिमाएँ ८०० से १००० वर्ष प्राचीन हैं, कितनी ही प्रतिमाएँ उससे भी अधिक प्राचीन हैं। ऐसा भव्य जिनेन्द्र दरबार देखकर ऐसा लगता है कि अहा! ऐसी भव्य लाखों प्रतिमा जब निर्मित हुई होंगी वह काल दिगम्बर जैन धर्म की कैसी विशाल जहोजलाली का होगा! विशेष अन्वेषण किया जाए तो जैनधर्म की महिमा सूचक बहुत से ऐतिहासिक सन्दर्भ यहाँ से प्राप्त होना सम्भव है।

गुरुदेव के साथ ऐसे महान जिनदरबार के दर्शन करके सब वापस ललितपुर आये... बीच में रास्ते में एक गाँव में गुरुदेव का स्वागत करके संघ को दूध पिलाया।

ललितपुर में दोपहर ३ से ४ प्रवचन था... शाम को तत्त्वचर्चा थी... यहाँ से यात्रियों की दो बसें चन्देरी चौबीसी के दर्शन को गयी थी। (पूज्य गुरुदेव इत्यादि ने सम्मेदशिखरजी यात्रा के समय चन्देरी चौबीसी के दर्शन किये थे, उसका वर्णन शिखरजी की यात्रा के वर्णन में है।)

बारां होकर चाँदखेड़ी (वैशाख कृष्ण ४, रविवार)

सवेरे जिनेन्द्र दर्शन के बाद ललितपुर से बारां की ओर प्रस्थान किया... विदर्भ के घने जंगल जैसे प्रदेशों में आज ढाई सौ मील लम्बा प्रवास था.... दोपहर को शिवपुरी में पाथेय खाकर आगे बढ़े। बीच में छोटे-छोटे गाँवों में भी गुरुदेव के दर्शन के लिये अनेक लोग रास्ते पर एकत्रित हुए थे। पूरा दिन यात्रा करके सायं पाँच बजे बारां पहुँचे। जैन समाज ने तथा गुजराती भाईयों ने प्रेम से स्वागत करके संघ को जीमाया। गाँव के बाहर

मन्दिर में ही आवास था। पूरे दिन के प्रवास से थके हुए यात्री विशाल भगवन्तों को देखकर प्रफुल्लित हुए... थके हुए के विश्राम भगवान के निकट जाकर दो घड़ी बैठे। गाँव से बाहर एकान्त स्थल में रमणीय मन्दिर में लगभग १२ फीट उन्नत शान्तिनाथ प्रभु (खड्गासन में) तथा ६ फीट उन्नत नेमिनाथ प्रभु (पद्मासन में) ८०० वर्ष प्राचीन विराजमान हैं। तदुपरान्त कुन्दमुनि के प्राचीन चरणकमल हैं, परन्तु यह कुन्दमुनि कौन से, इस बाबत में कोई प्रमाणभूत हकीकत नहीं मिलती। चौक में भी चबूतरे पर प्राचीन चरणपादुका है। गाँव में भी एक मन्दिर है। यहाँ जिनमन्दिर के दर्शनादि करके सायं सात बजे यात्री ऊबड़ खाबड़ रास्ते में धीमे-धीमे रास्ता खोजते-खोजते रात्रि को दस बजे चाँदखेड़ी पहुँचे। पूज्य बहिनश्री-बहिन की 'सत्सेविनी' मोटर भी साथ में ही थी। घनघोर जंगल, अंधेरी रात्रि, डाकुओं के भयवाला स्थान और खराब रास्ता, और बीच में कभी मोटर रुक जाए या रास्ता भूल जाए—इस प्रकार यात्रा करके रात्रि को दस बजे चाँदखेड़ी पहुँचे। सवेरे ४ बजे से रात्रि १० बजे तक १८ घण्टे के प्रवास के बाद, चाँदखेड़ी के भोंयरा में विराजमान अति विशाल और अत्यन्त ही मनोज्ञ श्री आदिनाथ प्रभु के दर्शन से भक्तों को शान्ति और प्रसन्नता हुई। गहरी-गहरी गुफा जैसे भोंयरा में उतरकर जिननाथ को निहारने से संसार भ्रमण की थकान उतर जाती है और चित्त प्रशान्त होता है।

चाँदखेड़ी (वैशाख कृष्ण पंचमी)

सवेरे पूज्य गुरुदेव के पधारने पर स्वागत और मंगल प्रवचन हुआ। तत्पश्चात् जिनमन्दिरों में सामूहिक पूजन हुई। यहाँ जिनमन्दिरों में सीमन्धर प्रभु के समवसरण की सादी रचना है और सोनगढ़ की तरह भगवान श्री कुन्दकुन्दाचार्यदेव विदेहक्षेत्र में सीमन्धर प्रभु के दर्शन कर रहे हैं, यह दृश्य है तथा मन्दिर के नीचे लगभग २५ फीट गहरा विशाल भोंयरा है, उसमें आदिनाथ प्रभु की सवा छह फीट उन्नत अतिमनोज्ञ मुद्रावाली प्रतिमा पद्मासन में विराजमान है। ऐसी भाववाही मुद्रावाली प्रतिमा बहुत विरल देखने में आती है। इसके अतिरिक्त भगवान महावीर की भी अति मनोज्ञ प्रतिमा विराजमान है। भोंयरे के शान्त वातावरण में अति प्रशान्त जिनभगवन्तों के सन्मुख मुमुक्षु भक्तों को सहज ध्यानभावना जागृत होती है... इन भाववाही प्रतिमाओं के दर्शन से गुरुदेव इत्यादि सबको बहुत

प्रसन्नता हुई थी और बारम्बार उनके दर्शन करने आये थे। भोंयरा में चौबीसी इत्यादि दूसरे भी अनेक भगवन्त विराजमान हैं, उनकी अद्‌भुत कारीगरी दर्शनीय है।

समवसरण के सन्मुख समूहपूजन में—

(१) समवसरण के मध्य श्री
जिनेन्द्र देव निहार के,
मन-वचन भक्त लगाय पूजो
हर्ष बहु हिय धारके....

(२) कुन्दकुन्द आदि ऋद्धिधारक
मुनिन की पूजा करूँ,
ता करी पातक हरुँ
सारे सकल आनन्द विस्तरुँ।

(३) आदिनाथ जिन चरण कमल पर
बलि बलि जाऊँ मन वच काय,
हो करुणानिधि भवदुःख मेटो
याते मैं पूजुं प्रभु पाय।

उपरोक्त तीन पूजाएँ हुई थीं।

खानपुरा गाँव के बगल में ही चाँदखेड़ी है। भोंयरा में विराजमान आदिनाथ प्रभु की विशाल मनोज्ञ प्रतिमा कोटा के एक श्रावक को स्वप्न में आने पर गहन वन में से मिली थी और लगभग ३०० वर्ष पहले यहाँ उसकी स्थापना की गयी है। इस मूर्ति की स्थापना के समारोह के समय लगभग पाँच लाख रुपये का खर्च हुआ था। कोटा और बूँदी के महाराजा उसमें सम्मिलित हुए थे, ११ भट्टारक और लाखों दर्शनार्थी आये थे, रथयात्रा के रथ में आठ हाथी जोते गये थे; मूर्ति विरोधी औरंगजेब के शासनकाल में यह मन्दिर निर्मित हुआ है (इस प्रकार का उल्लेख झालरापाटन के सरस्वती भण्डार के एक प्राचीन पुस्तक में है)। चाँदखेड़ी के बगल में ही रूपली नदी है, चातुर्मास में वह रूपली नदी भोंयरा में प्रवेश करके अपने जल द्वारा आदिनाथ प्रभु के चरण का अभिषेक कर जाती है। मन्दिर के चारों ओर विशाल धर्मशाला है, वहाँ पुष्पवाटिका में चम्पा-चमेली के

लगभग ९० वर्ष प्राचीन वृक्ष हैं। इस क्षेत्र में वरीयाली बहुत पकती है। खानपुरा गाँव में दो मन्दिर हैं। यहाँ गुरुदेव पधारे तब चार दिन का मेला भरा था। रात्रि में समवसरण में अद्‌भुत उल्लास भरी भक्ति हुई थी।

(१) मारा ऋषभ जिनेश्वर, नैया मारी भव से पार लगाजो.... हां....

(२) मारा आदिप्रभुजी की सुंदर मूरत मारे मन भाईजी....

भरतचक्री ने तुमको ध्याया, मोक्ष का मारग पायाजी....

बाहुबलीजी ने तुमको ध्याया, मोक्ष का मारग पायाजी....

- सिद्धस्वरूप को ध्यायाजी....

(३) अय सीमन्धरनाथजी! मैं आया तेरे दरबार में

ये स्तवन अत्यन्त उल्लास भरी भक्ति से पूज्य बहिनश्री-बहिन ने गवाये थे। भगवान का दरबार चारों ओर खचाखच था। अद्‌भुत भक्ति देखकर पूरा दरबार हर्ष से उल्लसित हो रहा था। स्तवन पूरा करते-करते अन्त में भगवान के साक्षात् दर्शन की भावना भाते हुए बहिनश्री-बहिन ने गवाया कि—

कब दरशन तेरा होगा... आपके दरबार में

आज की अद्‌भुत भक्ति देखकर सब भक्त बहुत आनन्दित हुए थे। चाँदखेड़ी में दूसरे दिन (वैशाख कृष्ण ६) भी सवेरे भावभीना सामूहिक पूजन हुआ था। चाँदखेड़ी क्षेत्र स्थित सर्व जिनबिम्बों की पूजा तथा बीस विहरमान भगवन्तों की पूजा इत्यादि पूजाएँ हुई थीं। तत्पश्चात् गुरुदेव के सुहस्त से ॐकार तथा स्वस्तिक कराकर यहाँ के 'सरस्वती भवन' का शिलान्यास हुआ था। प्रवचन के बाद जिनेन्द्रदेव की रथयात्रा निकली थी, उसमें हाथोंहाथ भगवान का रथ खींचते भक्तों को बहुत आनन्द होता था। दोपहर को महिला सम्मेलन के बाद मंगल आशीर्वादरूप से आधे घण्टे गुरुदेव का प्रवचन हुआ था। प्रवचन के बाद संघ ने यहाँ से प्रस्थान किया।

★ ★ ★

झालरापाटन

चाँदखेड़ी से प्रस्थान करके सायंकाल पाँच बजे झालरापाटन पहुँचे। गाँव के बाहर विशाल भव्य मन्दिर है, परन्तु वह बन्द था, उसके द्वार के ऊपर चार जिनबिम्ब उत्कीर्ण थे। वहाँ से गाँव में जाकर एक अति भव्य जिनालय के दर्शन किये। शान्तिनाथ प्रभु को निहारते ही भक्त हर्ष से प्रफुल्लित हुए और थोड़ी देर तो शान्तिनाथ प्रभु के शरण में शान्ति से बैठ गये। लगभग १२ फीट उन्नत भाववाही भगवान हैं और ११०० वर्ष प्राचीन हैं। मन्दिर के दरवाजे पर हाथी जितने बड़े दो सफेद हाथी हैं, चारों ओर विशाल चौगान में अनेक वेदियाँ जिनबिम्बों से शोभायमान हैं। एक जिनमन्दिर की वेदी चाँदी की कलामय है और दोनों ओर दर्पण से अद्‌भुत शोभायमान है—मानों कि अकृत्रिम जिनालयों की हारमाला हो! उसके दर्शन करते हुए भक्तों को बहुत आनन्द होता है। पूज्य बहिनश्री-बहिन इस विशाल मन्दिर को निहारकर बहुत प्रसन्न हुईं। समय होता तो इस मन्दिर में भक्ति-पूजन करने की सबकी भावना थी। दर्शन के बाद अकृत्रिम चैत्यालयों को स्मरण करके पूज्य बहिनश्री-बहिन जय-जयकार कराती थीं। इस मन्दिर के दर्शन से मानो एक तीर्थ की यात्रा की हो ऐसा सबको आनन्द हुआ। मन्दिर का कलामय शिखर १०० फीट उन्नत है और ऊपर २१ स्वर्ण कलशों से शोभायमान है।

जिनमन्दिर के दर्शन के बाद यहाँ के एक विशाल रमणीय बाग के निकट सबने शाम का नाश्ता-पानी कर लिया और वहाँ से प्रस्थान करके कोटा पहुँचे। झालरापाटन यहाँ के झालावाड़ जिले का एक मुख्य गाँव है, यहाँ दूसरे भी दो मन्दिर हैं। गुरुदेव रात्रि में यहीं रहे थे।

★ ★ ★

कोटा शहर (वैशाख कृष्ण ७ और ८)

सवेरे गुरुदेव पधारने पर हजारों की संख्या में जनता ने भावभीना स्वागत किया। स्वागत जुलूस में सबसे पहले हाथी पर धर्मध्वज लहराता था। शुरुआत में जुगलकिशोर युगल ने स्वागत प्रवचन तथा स्वागत काव्य द्वारा पूज्य गुरुदेव का तथा संघ का स्वागत किया। सेठ पूनमचन्दजी, बाबू ज्ञानचन्दजी इत्यादि की ओर से संघ के भोजनादि की

सुन्दर व्यवस्था थी। बाबू जम्बूकुमारजी ने बहुत प्रेमपूर्वक सब व्यवस्था सम्हाली थी।

कोटा शहर चम्बल नदी और एक विशाल सरोवर के किनारे आया हुआ है और रमणीय उद्यान से शोभित हो रहा है। यहाँ लगभग १६ जिनमन्दिर हैं, उनमें से पाँच मन्दिर एक ही गली में पास-पास स्थित हैं। एक मन्दिर में आदिनाथ प्रभु के दो विशाल (पाँच फीट के) भाववाही जिनबिम्ब हैं। इस मन्दिर दूसरे दिन समूह पूजन हुई थी। दूसरे मन्दिर में धातु के सप्तर्षि भगवन्त तथा धातु की नन्दीश्वर रचना है। एक मन्दिर में शान्तिनाथ प्रभु की प्राचीन खड्गासन प्रतिमा लगभग १० फीट उन्नत है; दूसरे अनेक मन्दिर पुरानी हालत में हैं। यहाँ दोपहर में प्रवचन के समय देह की क्षणभंगुरता का एक प्रसंग बना... रात्रि में बड़े जिनमन्दिर में पार्श्व प्रभु के सन्मुख बहुत रंग भरी भक्ति हुई थी।

वैशाख कृष्ण ८ के दिन श्रद्धांजलिरूप से अनेक प्रवचन हुए थे। जिसमें कोटा दिगम्बर जैन समाज की ओर से श्री गट्टुलालजी ने तथा अशोकनगर दिगम्बर जैन समाज की ओर से पण्डित हुकमीचन्दजी ने श्रद्धांजलि अर्पण की थी। दोपहर में बाबू ज्ञानचन्दजी और पण्डित जुगलकिशोरजी के उपोद्घात के पश्चात् बाबू जम्बूकुमारजी ने अभिनन्दन-पत्र पढ़ा था और सेठ पूनमचन्दजी ने अर्पण किया था। रात्रि में तत्त्वचर्चा थी। कोटा के जैन समाज ने प्रवचनों में तथा तत्त्वचर्चा में उत्साहपूर्वक भाग लिया था। गुना, अशोकनगर, बूंदी इत्यादि अनेक गाँवों से बहुत लोग लाभ लेने आये थे। रात्रि में चर्चा के पश्चात् पूज्य बहिनश्री-बहिन (चम्पाबेन तथा शान्ताबेन) और महिला समाज की ओर से अभिनन्दन-पत्र प्रदान किया गया था। अभिनन्दन समारोह में अनेक बहिनों ने भावभीने हृदय से बहुत भक्तिभाव व्यक्त किया था और भावना भाते हुए कहा था कि हमारा जीवन भी पूज्य बहिनश्री-बहिन की तरह आध्यात्मिक उन्नति में लगे रहे - यही हमारी भावना है, उनके ज्ञानविराग की बात हम क्या कहें ? और उनकी भक्ति तो अनुपम है। वैसी भक्ति हमने कहीं नहीं देखी। राजकुमारी न्यायतीर्थ ने अभिनन्दन-पत्र पढ़ा था और सेठानीजी द्वारा वह पूज्य बहिनश्री-बहिन को अर्पण हुआ था। उस समय महिला सभा में हजार से अधिक बहिनों की उपस्थिति थी। अभिनन्दन के बाद महिला सभा की विशेष प्रार्थना से पूज्य बहिनश्री-बहिन ने अति गम्भीर और वैराग्य झरती वाणी में दस मिनिट बोली थीं... उनके सन्देश का हम भी थोड़ा सा रसास्वादन करते हैं।

अनेक काल में जीव ने बहुत कुछ किया, लेकिन आत्मा का कल्याण नहीं किया... आत्मा कौन है, मैं कौन हूँ, इसका विचार नहीं किया, मेरा क्या स्वभाव है, मुझे आत्मा का सुख कैसे मिले - यह विचार कभी नहीं किया। सब कुछ बाहर में किया, आत्मा में ही सुख है, आत्मा ही सुख का समुद्र है, लेकिन दृष्टि नहीं की, बाहर दृष्टि की, बाहर से मुझे ज्ञान और सुख मिलेगा - ऐसा मानकर बाहर में ही देखा। आत्मा में से ही आत्मा का ज्ञान-सुख मिलता है - ऐसा विचार भी जीव ने नहीं किया।

आत्मा शरीर से भिन्न है, शरीर तो कुछ जानता नहीं। शरीर से भिन्न, शुभाशुभवृत्ति से भिन्न, सबका ज्ञायक, और ज्ञान-सुख से भरपूर आत्मा का स्वभाव है। 'मेरा स्वभाव क्या है' - ऐसी जिज्ञासा करे, रुचि करे तो उसका उपाय मिलता ही है। जो खरी (सच्ची) जिज्ञासा करता है, उसको उसका उपाय मिल ही जाता है। आत्मा का विचार भी नहीं करे और बाह्य में त्याग करे तो ऐसे त्याग करने से वह प्राप्त नहीं होता। पहले जिज्ञासा और रुचि बढ़ाना चाहिए कि मैं कौन हूँ, मेरा आत्मा का क्या स्वरूप है! त्याग बाद में होता है, उसके पहले आत्मा की श्रद्धा होती है, परन्तु अनन्त काल से उसका विचार ही नहीं किया है।

करने का क्या है ? - आत्मा का विचार करना है, मैं कौन हूँ - यह विचार करके निर्णय करना, यही पहले करने का है। शुभ होता तो है। यात्रा का, पूजा का भाव आता है, किन्तु उससे मेरा आत्मा भिन्न है, मेरा स्वभाव सिद्धसमान है। नारियल में टोपरा का गोला की तरह मेरा आत्मा देह से भिन्न, राग से भिन्न चैतन्यमूर्ति है, ऐसे आत्मा का विचार करके श्रद्धा करना, यही कल्याण का मार्ग है।

विशेष में पूज्य बहिनश्री-बहिन ने कहा था कि—**हम लोगों का जो कल्याण होता है और होनेवाला है, यह सब हमारे गुरुदेव के प्रभाव हैं। सोनगढ़ में जो कुछ है, वह गुरुदेव के प्रताप से ही है। हमारी दृष्टि पलटती है, उन्हीं के प्रताप से, हमारा जीवन पलटता है, वह उन्हीं के प्रताप से; उन्हीं के प्रताप से यह सब प्रभावना हो रही है। स्वामीजी के स्वागत में आप सबने अच्छा उत्साह दिखाया है, वास्तव में तो स्वामीजी जो कहते हैं, इसका स्वीकार करना, वही उनका स्वागत है। यथार्थ मार्ग में विचार करने से आत्मा का पता चलता है। आत्मा का जो स्वाभाविक अंश प्रगटते हैं, वही धर्म है। आत्मा के स्वाभाविक ज्ञान-दर्शन-सुख में ही धर्म है। गुरुदेव का परिचय करके आत्मा**

का कल्याण करना यही है तो मनुष्यजन्म का कार्य है, इसी कार्य करने के लिये यह मनुष्य अवतार मिला है, इसलिए इस मनुष्यजन्म में सच्चे देव-गुरु की भक्ति बढ़ाकर, आत्मा का विचार कर। आत्मा का कल्याण करना, यही कर्तव्य है।

(आत्महित सम्बन्धी पूज्य बहिनश्री-बहिन के सन्देश का यहाँ मात्र सारांश ही प्रस्तुत किया गया है।) पूज्य बहिनश्री-बहिन का अति भाववाही सारगर्भित उपदेश सुनकर पूरी महिला सभा बहुत प्रसन्न हुई थी तथा यात्रा दौरान आज लम्बे काल में पूज्य बहिनश्री-बहिन का उपदेश सुनने को मिला, इसलिए यात्रियों को भी बहुत हर्ष हुआ था। तत्पश्चात् जय-जयकारपूर्वक महिला सभा समाप्त हुई थी और कोटा शहर का दो दिन का कार्यक्रम पूरा हुआ था।

नीमच (वैशाख कृष्ण ९, दिनांक १-५-१९५९)

सवेरे कोटा से संघ ने प्रस्थान किया। भक्तों ने भावभीनी विदाई दी। गुरुदेव कोटा से बूँदी पधारे थे, वहाँ समाज ने सुन्दर स्वागत किया था। यात्री उदयपुर से बीच में भानपुरा चाय-नाश्ता करके नीमच आये थे। नीमच के भाई गुरुदेव का स्वागत करने और प्रवचन सुनने को बहुत ही इन्तजार में थे और आसपास के गाँवों से भी बहुत लोग आये थे, परन्तु गुरुदेव नहीं पधारने से वे थोड़े हताश हुए थे। उन्होंने यात्रियों का वात्सल्यपूर्वक सम्मान किया था। दोपहर में शान्तिनाथ प्रभु के दरबार में पूज्य बहिनश्री-बहिन ने सरस भावभीनी भक्ति करायी थी। जिनमन्दिर में सुन्दर चित्र हैं; एक चित्र में, मृत्यु के समय जीव शरीर से कहता है कि 'तेरे लिये मैंने बहुत किया है, इसलिए तू मेरे साथ चल!' तब शरीर जवाब देता है कि 'हमारा स्वभाव ही ऐसा है कि तेरे साथ नहीं आना।' ऐसे भाव का दृश्य है। जिनमन्दिर में पूजन-भक्ति के बाद संघ चित्तौड़ आया और कलेक्टर की नयी बन रही कचहरी में उतरा। चित्तौड़ की ओर आने पर दूर-दूर से किला के ऊपर दो ऊँचे स्तम्भ ध्यान आकर्षित करते हैं—एक तो है राणा मानसिंह का जयस्तम्भ और दूसरा है जैनधर्म का कीर्तिस्तम्भ अर्थात् मानस्तम्भ।

चित्तौड़ (वैशाख कृष्ण दसम)

सवेरे साढ़े आठ बजे गुरुदेव चित्तौड़ पधारे और सीधे किला देखने गये... यात्री भी किला देखने के लिये गये थे। सात गढ़ पार करने के बाद किले पर पहुँचा जाता है...

शुरुआत में प्रवेशद्वार के पास ही एक दिगम्बर जिनालय में मल्लिनाथ प्रभु के दर्शन होते हैं। इस ऐतिहासिक किला पर १२२ फीट उन्नत जयस्तम्भ है तथा सात मंजिलवाला ८० फीट उन्नत जैन कीर्तिस्तम्भ (मानस्तम्भ) है। एक दिगम्बर जिनमन्दिर के सन्मुख यह मानस्तम्भ है, मानस्तम्भ बहुत सुन्दर कलामय है; चारों ओर आदिनाथ प्रभु के पाँच फीट उन्नत खड्गासन प्रतिमा मानस्तम्भ में उत्कीर्ण हैं... अन्दर के भाग में सीढ़ी है, उससे ठेठ मानस्तम्भ के ऊपर जाया जाता है... वहाँ चारों ओर कलामय कमानो में पाँच-पाँच जिनबिम्ब उत्कीर्ण हैं और १०-१५ लोग बैठ सकें, ऐसी मण्डप जैसी विशाल जगह है। मानस्तम्भ पर संसार से अलिप्त शान्त वातावरण में बैठ कर सिद्धों के गुण इत्यादि का स्मरण करने से मुमुक्षु हृदय आह्लादित होता है। मानस्तम्भ के बगल के मन्दिर का जीर्णोद्धार हो गया है और उसमें मल्लिनाथ प्रभु की प्रतिष्ठा होनेवाली है। तोपखाना के पास एक वृक्ष के नीचे प्राचीन अवशेषों में बहुत दिगम्बर जिनप्रतिमाएँ हैं। किले के गढ़ में भी कहीं-कहीं जिनप्रतिमा दृष्टिगोचर होती है।

राणा प्रताप को विशेष सहायता करनेवाले जैन वीर भामाशाह इस चित्तौड़ के ही थे। जैनधर्म का अनेक वैभव यहाँ दृष्टिगोचर होता है। राज्य के जयस्तम्भ के साथ-साथ जैनधर्म का कीर्तिस्तम्भ भी इस राज्य में जैनधर्म की जहोजलाली और कीर्ति की प्रसिद्धि कर रहे हैं। तदुपरान्त किले पर दूसरे कितने ही देखनेयोग्य स्थल हैं। सात-सात गढ़वाला प्राचीन किला देखते समय उसके बनवानेवाले की हालत का स्मरण होने पर, मानो किला स्वयं ही करुणस्वर में पुकार-पुकार कर कहता हो कि इतना मजबूत किला बनवानेवाले और उसमें रहनेवाले भी मृत्यु से अपनी रक्षा नहीं कर सके; जगत में एक जैनधर्म ही रक्षक है—ऐसा किले पर खड़ा हुआ जैनधर्म का स्तम्भ प्रसिद्ध कर रहा है। चित्तौड़ गाँव में एक छोटा जिनालय है, वहाँ दर्शन-पूजन किये थे। भोजन और प्रवचन के बाद चित्तौड़ से प्रस्थान करके यात्री उदयपुर पहुँचे।

उदयपुर (वैशाख कृष्ण ११-१२)

सवेरे पूज्य गुरुदेव उदयपुर पधारे और लगभग तीन हजार लोगों ने उत्साह से भव्य स्वागत किया... स्वागत के बाद सुसज्जित विशाल प्रवचन-मण्डप में एक बालिका ने मारवाड़ी स्वागत-गीत गाया और सेठ बंसीलालजी चौधरी ने स्वागत प्रवचन किया।

आसपास के गाँवों से सैकड़ों लोग गुरुदेव का लाभ लेने आये थे। यहाँ ९ जिनमन्दिर हैं। उदयपुर प्राकृतिक सौन्दर्यवाला शहर है, वहाँ अनेक देखनेयोग्य स्थल हैं। सरोवर के बीच का महल नौका में बैठकर देखने जाया जाता है। एक सरोवर का नाम 'स्वरूप सागर' है। म्यूजियम में अनेक प्राचीन जिनबिम्बों हैं। रात्रि में उदासीन आश्रम के जिनालय में भक्ति का कार्यक्रम था; पूज्य बहिनश्री-बहिन ने भक्ति गवाने के बाद एक बालिका ने नृत्य भजन सहित जिनेन्द्रदर्शन करके सिद्धपद की भावना का दृश्य (चलो मन... अपने देश...) बताया था। दूसरे दिन सवेरे जिनमन्दिर में सामूहिक पूजन हुई थी। दोपहर को प्रवचन के बाद अभिनन्दन-पत्र प्रदान किया गया था और रात्रि में मुम्बई की प्रतिष्ठा महोत्सव की फिल्म का प्रदर्शन हुआ था। गुरुदेव के और संघ के स्वागत सम्मान में उदयपुर की समाज ने बहुत उल्लास और वात्सल्य बताया था। दो दिन का कार्यक्रम पूरा होने पर वैशाख कृष्ण १३ की सवेरे उदयपुर से प्रस्थान करके गुरुदेव संघसहित केसरियाजी पधारे थे।

केसरियाजी (वैशाख कृष्ण १३)

गुरुदेव पधारने पर स्वागत हुआ; बीच में दो जिनालयों के दर्शन के बाद केसरियाजी मन्दिर में आये। गाँव का नाम धूवेल है परन्तु मुख्य मन्दिर में बहुत केसर चढ़ती है, इसलिए यह क्षेत्र 'केसरियाजी' रूप से प्रसिद्ध है। यहाँ एक विशाल प्राचीन कारीगरीवाला मन्दिर है, उसमें आदिनाथ प्रभु की प्रतिमा विराजमान है, श्वेताम्बरभाई भी इस प्रतिमा को पूजते हैं, लगभग पूरे दिन केसर आच्छादित रहती है। बाद के भाग में आदिनाथ प्रभु की एक दूसरी प्रतिमा है, वहाँ सामूहिक पूजन हुई थी। तदुपरान्त चारों ओर देहरियों में भी अनेक जिनबिम्ब विराजमान हैं। यहाँ दर्शन-पूजन के बाद भोजन करके संघ ने ईडर की ओर प्रस्थान किया।

लगभग दोपहर तीन बजे गुजरात की धरती में प्रवेश किया... महाराष्ट्र और कन्नड़, तमिल तथा विदर्भ, बुन्देलखण्ड और मध्यभारत इत्यादि का यात्रा प्रवास कर-करके तीन महिने बाद गुजरात की भूमि, गुजरात की हवा, गुजरात का पानी और गुजराती भाषा देखने पर, मातृभूमि को भेंटने के लिये तरस रहे यात्रियों का हृदय हर्ष की वृत्ति अनुभव कर रहा था। सायंकाल ईडर पहुँच गये।

ईडर

ईडर प्राचीन काल में वैभववन्त शहर था। 'ईडरियोगढ़' कहावत में प्रसिद्ध है। यहाँ गाँव में तीन प्राचीन और विशाल जिनमन्दिर हैं। गाँव के चारों ओर रमणीय पर्वत और बीच में तालाब है। एक पहाड़ी (गढ़) के ऊपर विशाल दिगम्बर जिनमन्दिर है, उसमें मूलनायक आदिनाथ प्रभु (केसरियाजी जैसी कारीगरीवाले) विराजमान हैं; मन्दिर में दूसरे भी अनेक भगवन्त हैं। मार्बल के एक विशाल शिलापट्ट पर १७० विदेही तीर्थंकर उत्कीर्ण हैं। दूसरा एक पहाड़ जो 'घंटीआ पहाड़' रूप से पहिचाना जाता है, उसके ऊपर श्रीमद् राजचन्द्रजी ने जिसे 'सिद्धशिला' रूप से बतलाया है वह स्थान है; इस पर्वत पर श्रीमद् राजचन्द्रजी ध्यानादि करते थे और यहाँ उन्होंने विशिष्ट प्रमोद व्यक्त किया था। तदुपरान्त यहाँ स्टेशन के पास टेकरी के ऊपर दिगम्बर मुनि इत्यादि की स्मृति में बनायी हुई प्राचीन छतरियाँ हैं। ईडर में वैशाख कृष्ण १३ के दिन रात्रि में शान्तिनाथ जिनालय में तत्त्वचर्चा की। दूसरे दिन सवेरे पर्वत के ऊपर दिगम्बर जिनमन्दिर में दर्शन–पूजन तथा भक्ति की... पर्वत पर चढ़ते–चढ़ते पूज्य बहिनश्री–बहिन प्रमोदपूर्वक भक्ति कराती थीं। पूजा–भक्ति के बाद पर्वत पर संघ ने नाश्ता किया। श्रीमद् राजचन्द्रजी यहाँ विचरे हैं, इसका स्मरण करते–करते भक्त नीचे उतरे। यात्रा के बाद गाँव के एक मन्दिर की स्वाध्यायशाला में श्रीमद् राजचन्द्रजी वाला 'द्रव्यसंग्रह' देखा। दोपहर के प्रवचन के बाद सब 'घंटीआ पहाड़' के ऊपर गये थे। इस पर्वत के आस–पास में बाघ रहते हैं। पर्वत के ऊपर जाते हुए बीच में आम के वृक्ष इत्यादि आते हैं। पर्वत के ऊपर जाकर श्रीमद् राजचन्द्रजी के स्थानों का पूज्य गुरुदेव ने और भक्तों ने भावपूर्वक अवलोकन किया। यहाँ सेठ भोगीभाई ने गुरुदेव के प्रति बहुत भक्तिभाव बताया था और यात्रियों को पर्वत पर भोजन कराया था। भोजनादि के बाद यात्री नीचे उतर गये थे... पूज्य गुरुदेव और कितने ही भक्त रात्रि में ऊपर रहे थे... वहाँ खुले चौक में स्फटिक के महावीर प्रभुजी के सन्मुख भक्ति हुई थी। उस समय महावीर प्रभु का स्तवन और सम्यग्दृष्टि महिमा सम्बन्धी स्तवन गवाने के बाद पूज्य बहिनश्री–बहिन ने निम्न काव्य मानो कि चैतन्य का आनन्दरस झरता हो, ऐसे उत्तमभाव से गवाया था।

धन्य रे दिवस आ अहो...
जागी रे शांति अपूर्व
दस वरसे रे धारा उल्लसी
मिटयो उदय-कर्मनो गर्व रे। धन्य रे....

ओगणीससें ने अेकताली से
आव्यो अपूर्व अनुसार...
ओगणीससें ने बेंतालीसे
अद्‌भुत वैराग्य धार रे.... धन्य रे....

ओगणीससे ने सुडतालीसे
समकित शुद्ध प्रकाश्युं....
श्रुत अनुभव वघती दशा
निज स्वरूप अवभास्युं रे.... धन्य रे...

'धन्य दिवस' का यह अपूर्व भाववाही काव्य पूज्य बहिनश्री-बहिन के श्रीमुख से सुनने का धन्य दिवस प्राप्त होने पर भक्तों को बहुत आनन्द हुआ था और इस अवसर से वे स्वयं को धन्य मानते थे। यहाँ पर्वत इत्यादि के अवलोकन के समय गुरुदेव श्रीमद् राजचन्द्रजी के अन्तरंग गहरे भावों की समझ प्रदान करते थे, इसलिए भक्तों को विशेष आनन्द होता था। वैशाख कृष्ण अमावस्या के सवेरे स्टेशन के पास छतरियों का अवलोकन करके संघ ने ईडर से सोनासण की ओर प्रस्थान किया। ईडर में संघ के भोजनादि की व्यवस्था अहमदाबाद के भाईयों की ओर से की गयी थी।

सोनासण

वैशाख कृष्ण अमावस को पूज्य गुरुदेव पधारने पर सोनासण के समाज ने तथा आसपास के अनेक गाँवों के गुजराती भाईयों ने गुरुदेव का भावपूर्वक स्वागत किया... दोपहर को प्रवचन के बाद अभिनन्दन-पत्र समर्पण और रात्रि में जिनमन्दिर में भक्ति हुई। रमणीय जिनमन्दिर में आदिनाथ प्रभु तथा बगल में सुन्दर गन्धकुटी पर पार्श्वनाथ प्रभु शोभित हैं। यहाँ से यात्रासंघ की बस में बैठकर यात्रियों ने फतेपुर की ओर प्रस्थान किया।

दक्षिण देश के बाहुबली भगवान इत्यादि तीर्थधामों की यात्रा को निकले हुए 'पूज्य

श्री कानजीस्वामी दिगम्बर जैन तीर्थयात्रा संघ' अनेकानेक तीर्थधामों की आनन्द भरी यात्रा करके अब वापस घर की ओर आ रहा है... यात्रासंघ में चार बसें हैं। मोटर बसों में यात्रासंघ का आज अन्तिम प्रवास है। इस यात्रा प्रवास के पश्चात् अब यात्री एक-दूसरे से पृथक् हो जाएँगे - इस विचार से सबका चित्त भावभीना हो रहा है। कोई यात्री यात्रा के प्रसंगों को याद कर रहे हैं, तो कोई गद्‌गद् भाव से एक-दूसरे के समक्ष क्षमायाचना करते हुए विदाई ले रहे हैं। सबके हृदय में यात्रा के अनेक मधुर संस्मरण भरे हैं। सायंकाल साढ़े छह बजे बसें फतेपुर पहुँच गयीं और यात्रासंघ का प्रवास यहाँ पूरा होने पर दिल्ली से आयी हुई बसें खाली होकर दिल्ली की ओर वापस मुड़ गयीं... यात्रियों को छोड़कर खाली बस लेकर वापस जाते हुए ड्राईवर और कण्डक्टर इत्यादि भी गद्‌गद् हो गये थे... जाते-जाते बीच में सोनासण मुकाम में वे गुरुदेव के दर्शन करने उतरे थे और यात्रासंघ की ओर से उन्हें ईनाम दिया गया था... फतेपुर से कितने ही यात्री रात्रि में सोनासण भक्ति में गये थे... और भक्ति करके वापस फतेपुर पहुँच गये थे। गुरुदेव वैशाख शुक्ल एकम् को रामपुरा होकर फतेपुर पधारे, तब गुजरात-सौराष्ट्र की जनता ने भव्य स्वागत किया।

फतेपुर (वैशाख शुक्ल एकम तथा दूज)

गुरुदेव का ७०वाँ जन्मोत्सव यहाँ मनाया जा रहा होने से फतेपुर और गुजरात के जैन समाज को बहुत उत्साह था। जहाँ जैनों के चालीस घर और पूरे गाँव के मात्र २०० घर हैं ऐसे इस गाँव में दो हजार लोगों को रहने-जीमने, नहाने-धोने की तथा प्रवचन इत्यादि की सुन्दर व्यवस्था की गयी थी... मात्र फतेपुर के ही नहीं परन्तु गुजरात के अनेक गाँवों के भाईयों ने आनन्द से सहकारपूर्वक भाग लेकर गुरुदेव का जन्मोत्सव शोभित किया था...

गुरुदेव के साथ अनेक तीर्थधामों की भावभीनी यात्रा के बाद गुरुदेव का ७०वाँ जन्मोत्सव आनन्दपूर्वक मनाकर अब बहुत से यात्री अपने-अपने गाँव जाने के लिये उत्सुक हो रहे थे, इसलिए बहुत से यात्री यहाँ से अपने-अपने वतन की ओर चल दिये... अब गुरुदेव के साथ गुजरात के प्रवास में विशेषरूप से सोनगढ़ का भक्तमण्डल था। फतेपुर में आनन्द से उत्सव मनाकर भक्तजन मध्यरात्रि को तलोद पहुँचे।

फतेपुरनगरी में पूज्य गुरुदेवश्री का ७० वाँ जन्मोत्सव

दक्षिण की तीर्थधामों की यात्रा में भगवान बाहुबली नाथ, कुन्दकुन्दाचार्यदेव, रत्नमय जिनबिम्ब दरबार इत्यादि को भावपूर्वक भेंटकर वापस आते हुए पूज्य गुरुदेव वैशाख शुक्ल एकम के दिन फतेपुरनगर में पधारे और गुजराती जनता ने उमंग भरा भव्य स्वागत किया... वैशाख शुक्ल दूज को गुरुदेव का ७०वाँ मंगल जन्मोत्सव फतेपुर में धूमधाम से मनाया गया। सवेरे जन्मोत्सव की बधाई के मंगल वाजिन्त्र बजे... जगह-जगह घण्टनाद हुए... तत्पश्चात् जिनमन्दिर में शीतलनाथ इत्यादि भगवन्तों की सामूहिक पूजन हुई... तत्पश्चात् भक्तमण्डल ने एकत्रित होकर धूमधामपूर्वक गुरुदेव का स्वागत किया और गुरुदेव प्रवचनमण्डप में पधारे। मात्र २०० घर की आबादीवाले इस फतेपुर गाँव में दो से तीन हजार लोग गुरुदेव का जन्मोत्सव मनाने के लिये एकत्रित हुए थे... मण्डप खचाखच भर गया था... चारों ओर धूमधाम और आनन्द के शोर-शराबे से छोटा सा फतेपुर बड़ा शहर बन गया था... फतेपुर की जनता का उत्साह अजब था, मात्र फतेपुर नहीं परन्तु गुजरात के अनेक गाँवों की समाज ने उत्साहपूर्वक भाग लेकर इस उत्सव को शोभायमान किया था। गुरुदेव का आज का प्रवचन भी बहुत भावभीना था। प्रवचन के बाद अनेक भक्तों ने गुरुदेव के जन्मोत्सव सम्बन्धी भाषण करके गुरुदेव को अभिनन्दन दिया था... और 'आत्मधर्म' का अभिनन्दन अंक गुरुदेव को समर्पण किया गया था। गुजरात की जनता की ओर से बहुत हर्ष व्यक्त करते हुए उत्साही कार्यकर्ता भाईश्री बाबूलालभाई ने उल्लासपूर्वक कहा था कि धन्य है... धन्य है... आज का मंगल दिन! धन्य है हमारा सौभाग्य कि आज हमारे आँगन में गुरुदेव का जन्मोत्सव मना रहे हैं... आज हम रंक के यहाँ रत्न प्राप्त हुआ है... तीर्थंकर भगवान की दिव्यध्वनि का सन्देश देनेवाले महापुरुष आज हमारे आँगन में पधारे हैं, इसलिए मानो कि भगवान का समवसरण ही हमारे यहाँ आया हो—ऐसा हमें आनन्द होता है...

तलोद (वैशाख शुक्ल ३ तथा ४, दिनांक १०-११)

सवेरे गुरुदेव पधारने पर सुन्दर स्वागत हुआ... यहाँ का नूतन जिनमन्दिर सुशोभित

और भव्य है... सवा लाख के खर्च से निर्मित तीन मंजिल का यह मनभावन जिनमन्दिर गुजरात के साबरकांठा में विशेष प्रसिद्ध है। जिनमन्दिर की वेदी इत्यादि की कितनी ही रचना सोनगढ़ के जिनमन्दिर से मिलती है। मूलनायक आदिनाथ भगवान हैं, ऊपर की मंजिल में महावीर प्रभु की सुन्दर प्रतिमा खड्गासन में विराजमान है, नीचे के भोंयरा में त्यागियों के रहने का खास स्थान है। प्रवचन के लिये खास मण्डप था, गुरुदेव ने प्रवचन में 'नमः समयसाराय' का भावार्थ समझाया था। दोनों दिन रात्रि में जिनमन्दिर में भक्ति हुई थी। दूसरे दिन जिनमन्दिर में सामूहिक पूजा हुई थी। प्रवचन के पश्चात् अभिनन्दन-पत्र प्रदान किया गया था। यहाँ से बीच में उजलिया में जिनमन्दिर के दर्शन करके गुरुदेव रखियाल पधारे थे।

रखियाल (वैशाख शुक्ल ५)

स्वागत के बाद नियमसार के आठवें कलश पर गुरुदेव ने मंगल प्रवचन किया। यहाँ स्टेशन के पास गृह-चैत्यालय में आदिनाथ प्रभु विराजमान हैं। गाँव में दूसरा एक जिनालय है। दोपहर को प्रवचन तथा रात्रि में जिनेन्द्र भक्ति के पश्चात् यात्री देहगाम पहुँचे थे।

देहगाम (वैशाख शुक्ल ६)

गुरुदेव के पधारने पर जैन समाज ने उत्साह भरा स्वागत किया। स्वागत में और प्रवचन में बड़ी संख्या में लोगों ने भाग लिया। केशुभाई के पुत्र ने सजोड़े ब्रह्मचर्य प्रतिज्ञा अंगीकार की। रात्रि में सीमन्धरप्रभुजी के सन्मुख उत्साहपूर्ण भक्ति हुई थी; उस समय देहगाम की बहिनों ने भी रासपूर्वक मोरली का भजन गाकर भक्ति की थी। यहाँ गृह-चैत्य में सीमन्धर प्रभु की प्रतिमा विराजमान है तथा यहाँ जिनमन्दिर के लिये महावीर प्रभु की प्रतिमाजी प्रतिष्ठित होकर अभी तलोद जिनमन्दिर में विराजमान है। यहाँ के भक्तों को जिनमन्दिर बनाने की भावना है।

कलोल (वैशाख शुक्ल छठ-सातम)

द्वितीय वैशाख शुक्ल छठ को गुरुदेव पधारने पर कलोल के जैन समाज ने उत्साहपूर्वक भव्य स्वागत किया। यहाँ सुन्दर जिनमन्दिर है, उसके भोंयरा में भी प्राचीन

प्रतिमाएँ हैं... ऊपर के भाग में अभी सेठ जीवणलाल बखारिया के वंडा में से प्रगटित मुनिसुव्रत भगवान विराजमान हैं। गुरुदेव के प्रवचनों के उपरान्त रात्रि में आत्मसिद्धि की स्वाध्याय तथा दूसरे दिन जिनमन्दिर में समूह पूजन हुई थी। यहाँ से दोपहर को अहमदाबाद आये थे।

अहमदाबाद में दोपहर ३ से ४ प्रेमाभाई हाल में प्रवचन हुआ था... और रात्रि में तत्त्वचर्चा के समय गुरुदेव ने भावपूर्वक यात्रा के अनेक तीर्थों का स्मरण किया था... रात्रि में सोनगढ़ के बहुत से यात्री अहमदाबाद से सोनगढ़ की ओर गये थे... वैशाख शुक्ल नौ के सवेरे सोनगढ़ पहुँचकर सब यात्री आनन्द से गाते-गाते जिनमन्दिर में गये थे... बाकी रहे हुए भक्तों सहित गुरुदेव वैशाख शुक्ल नौ को अहमदाबाद से पोलारपुर पधारे थे... वहाँ दोपहर को प्रवचन था। शाम के भोजन के बाद गुरुदेव शीहोर आकर रात्रि में रहे... और पूज्य बहिनश्री-बहिन अदभुत भक्ति करते-करते सोनगढ़ पधारे... सोनगढ़ आने पर मानो रास्ते के आम भी प्रफुल्लित होकर स्वागत करते थे।

पूज्य बहिनश्री-बहिन के पधारने पर सोनगढ़ की बहिनों ने उमंगपूर्वक पुष्पहार इत्यादि से स्वागत किया... और भक्तों ने यात्रा के उल्लास में अति आभारवशता से उनके चरणों में नमस्कार किया... पश्चात् भक्तों के साथ आनन्द-गीत गाते-गाते पूज्य बहिनश्री-बहिन प्रिय विदेहीनाथ के दर्शन को आयीं... दूर-दूर से दिव्य तेज से जगमगा रहे सीमन्धरनाथ को देखते ही घड़ी भर स्तब्ध बनकर वे स्थिर हो गयीं... अति भक्ति, आश्चर्य और प्रमोद से भगवान को निहारती ही रहीं... मानो विदेह में है या भरत में-यह क्षणभर विस्मृत हो गया... पश्चात् भगवान के सन्मुख हृदय खोलकर आनन्द से भक्ति की, मानो पूरी यात्रा का एकत्रित हुआ अपार हर्ष यहाँ सीमन्धरनाथ के समक्ष एकसाथ व्यक्त किया।

आनन्द मंगल आज हमारे आनन्द मंगल आज जी
सीमन्धर प्रभुना दर्शन करतां आनन्द मंगल आज जी
सीमन्धर प्रभुना परम प्रतापे यात्रा अपूर्व थाय जी
सीमन्धरनाथ ने नयने नीरखतां आत्मा उल्लसी जाय जी

अनेक तीर्थों की यात्रा करके आज बहुत दिनों में सीमन्धर प्रभु के दर्शन करते हुए सबके हृदय में प्रमोद और शान्ति हो रही थी।

भावनगर (वैशाख शुक्ल दसम)

सिहोर से प्रस्थान करके पूज्य गुरुदेव भावनगर पधारने पर जैन समाज ने नगरी को शृंगार करके भावभीना स्वागत किया... हजारों की भीड़ ने प्रेम से गुरुदेव का प्रवचन सुना। २९ वर्ष में गुरुदेव भावनगर पधारने पर यहाँ के अनेक भावभीने स्मरण भक्तों के हृदय में जागृत हो उठे थे। दूसरे दिन रात्रि में भगवानजी सेठ के बंगले पर भगवान को पधराकर भक्ति हुई थी। जिनमन्दिर में खड्गासन में चन्द्रप्रभु भगवान इत्यादि के दर्शनों से भक्तों को आनन्द हुआ था। तीसरे दिन (वैशाख शुक्ल १२ के दिन) लगभग ३०० से अधिक भक्तों के साथ गुरुदेव घोघा के जिनमन्दिर के दर्शनार्थ पधारे। घोघा प्राचीन काल में सौराष्ट्र का वैभववन्त बन्दरगाह था; अभी यहाँ दो प्राचीन दिगम्बर जिनमन्दिर अनेक प्राचीन जिनबिम्बों सहित विराजमान हैं। उनमें मूलनायक आदिनाथ प्रभु की प्रतिमा बहुत प्राचीन है तथा स्फटिक की भी प्राचीन मूर्तियाँ हैं।

दर्शन के बाद चौक में पार्श्वप्रभु को विराजमान करके सामूहिक पूजन हुई थी... और पश्चात् भक्ति हुई थी। प्रथम गुरुदेव ने उपशमभावपूर्वक उपशमरस झरते पार्श्वप्रभु का स्तवन गवाया था... स्तवन गवाते हुए गुरुदेव ने कहा कि अनेक तीर्थों की यात्रा हुई... आज मंगलवार यात्रा का मंगल किया। तत्पश्चात् पूज्य बहिनश्री-बहिन ने 'भारत भूमि ना वासी जिन ने वंदु वार हजार' इस प्रकार पूरे भारत के तीर्थों को याद करके भक्ति करायी थी... तत्पश्चात् घोघा में चाय-नाश्ता करके यात्री वापस भावनगर आये थे। दूसरे दिन भावनगर से सोनगढ़ की ओर प्रस्थान किया था।

तीर्थधाम सोनगढ़ में पूज्य गुरुदेव का आगमन

(वैशाख शुक्ल १३)

आज सोनगढ़ की भूमि अनेकविध शृंगार से शोभित थी... आमवृक्ष अति प्रफुल्लित होकर मानो कि हाथ में आम लेकर झुक-झुककर गुरुदेव का स्वागत करते थे, स्वाध्यायमन्दिर के वृक्ष तो मानो कि शतशत दीपक की ज्योति द्वारा गुरुदेव का सम्मान करते थे... रास्ते

अनेक सुसज्जित मण्डपों-कमानों और ध्वजा तोरण से शोभायमान थे... गाँव-गाँव के सैकड़ों भक्त और स्वर्णपुरी के अनेक नगरजन गुरुदेव के स्वागत के लिये बहुत ही उत्साहपूर्वक आतुर थे... बैण्डबाजा मंगलनाद कर-करके मानो कि 'मंगलवर्द्धिनी' को बुला रहे थे... इस ओर 'मंगलवर्द्धिनी' मोटर सोनगढ़ की ओर शीघ्रता से आ रही थी... गुरुदेव के हृदय में सीमन्धरनाथ को भेंटने की भावभीनी ऊर्मियाँ जागृत हो रही थीं... और दूर-दूर से सोनगढ़ के जिनधामों को निहार रहे थे... थोड़ी देर में 'मंगलवर्द्धिनी' सोनगढ़ आ पहुँची और सा... रे... ग... म... के मंगल सुर द्वारा जैसे ही गुरुदेव के पधारने की बधाई दी कि तुरन्त ही सैकड़ों भक्तजनों ने अति उल्लासपूर्वक जय-जयकार से गुरुदेव का स्वागत किया।

गुरुदेव आते ही सीमन्धरप्रभु के दरबार में पधारे। प्रभु के दर्शन करते ही अन्तर में भक्ति का स्रोत बहने लगा... और अति नम्रभाव से नमन करके थोड़ी देर तक प्रभु की मुद्रा निहारते ही रहे... पश्चात् अर्घ्य चढ़ाकर भगवान की पूजा की... और वहाँ से स्वाध्यायमन्दिर में आकर विराजमान हुए... वहाँ बहुत भावपूर्वक अनेक तीर्थधामों का स्मरण करके शान्तरस झरता मंगल प्रवचन किया... दोपहर को प्रवचन में 'समयसार' की मंगल शुरुआत हुई... तत्पश्चात् जिनमन्दिर में भक्ति प्रसंग में इस मंगलकारी तीर्थयात्रा महोत्सव की पूर्णता प्रसंग का बहुत ही भाववाही स्तवन पूज्य बहिनश्री-बहिन ने गवाया... गुरुदेव के साथ ही साथ ऐसी महान तीर्थयात्रा हुई, उसकी अपार प्रसन्नता स्तवन के शब्द-शब्द में से झरती थी... सब यात्रियों के हृदय भक्ति और हर्ष से गद्गद् थे... भक्ति के पश्चात् जिनेन्द्र भगवन्तों की और सन्तों की जय-जयकारपूर्वक यह मंगल यात्रा समाप्त हुई... भारत के अनेक तीर्थधामों की गुरुदेव के साथ की यह महान मंगलवर्द्धिनी यात्रा भव्य जीवों के मंगल की वृद्धि करो।

'पूज्य श्री कानजीस्वामी दिगम्बर जैन तीर्थयात्रा संघ' का वर्णन यहाँ समाप्त होता है। यात्रा में आये हुए यात्रियों को यात्रा के उल्लासकारी प्रसंग और तीर्थधामों के स्मरण में उपयोगी बने तथा यात्रा में नहीं आ सके हुए भक्तों को भी तीर्थयात्रा का कुछ ख्याल आवे, तदर्थ यात्रा का संक्षिप्त विवरण यहाँ प्रस्तुत किया है। इस तीर्थयात्रा के मंगल प्रसंग दौरान किसी भी पूज्य तीर्थ के प्रति या तीर्थस्वरूप सन्तों के प्रति, पूज्य गुरुदेव के प्रति या

पूज्य बहिनश्री-बहिन के प्रति किसी भी प्रकार से अविनय आदि हो गये हों तो अन्तःकरण की भक्तिपूर्वक मधुरभाव से मैं क्षमा चाहता हूँ। यात्रा के दौरान परिचय में आये हुए देश-देश के साधर्मी भाई-बहिनों के प्रति भी मुझसे जो कुछ दोष हुए हों, उनके बदले वात्सल्यपूर्वक सब साधर्मी भाई-बहिनों के प्रति क्षमाप्रार्थी हूँ।

भारत के महान तीर्थों की ऐसी उल्लास भरी मंगल यात्रा हुई, तदर्थ परम पूज्य गुरुदेव का अपने पर महान उपकार है... संसार से तिरने के लिये सच्चा तीर्थ क्या है-वह आपश्री ही अपने को समझा रहे हैं... इस प्रकार सम्यक्तीर्थ की अपूर्व यात्रा कराकर मुक्तिपुरी सिद्धिधाम की ओर ले जानेवाले परमपूज्य जीवनाधार गुरुदेव के पुनीत चरणों में परम भक्तिभाव से नमस्कार करता हूँ। —ब्रह्मचारी हरिलाल जैन

परिशिष्ट - 1

गिरनार-सिद्धक्षेत्र में मंगल-प्रतिष्ठा महोत्सव

[तीर्थराज की उल्लासपूर्ण यात्रा; महावीर-धर्मचक्र का आगमन]

माघ शुक्ल दोज के प्रात:काल पूज्य गुरुदेव के साथ भावभीने चित्त से नेमिनाथ भगवान का स्मरण करते-करते कल्याणकधाम गिरनार में आ पहुँचे... नेमप्रभु की वेदी प्रतिष्ठा का मंगल उत्सव चल रहा था। मंगल स्वागत विधि के बाद नेमप्रभु के भावपूर्ण दर्शन किये। फिर श्रीमण्डप में मंगल सुनाते हुए गुरुदेव ने कहा कि आत्मा सर्वज्ञस्वभावी है, वह सर्वज्ञस्वभाव नेमिनाथ भगवान ने इस गिरनार भूमि में प्रगट किया है, और यहीं से दिव्यध्वनि के द्वारा जगत को वह बतलाया है। ऐसे स्वभाव की श्रद्धा करने पर आत्मा में जो सम्यग्दर्शन और आनन्दरूप साधकदशा प्रगट हुई, वह अपूर्व मंगल है। सम्यग्दर्शन वह सिद्धपद की तलहटी है, और वही सिद्धक्षेत्र की यात्रा का सच्चा प्रारम्भ है। भगवान नेमिनाथ और ७२,००००,७०० (बहत्तर करोड़-सात सौ) मुनि यहाँ से सिद्धपद को प्राप्त हुए हैं, उनके स्मरणरूप यह यात्रा है।

शुभ-अशुभ कषायभाव दु:खरूप हैं; उनसे पार शान्तस्वरूप चेतना है; अहा, ऐसे स्वभाव की ज्ञानकला प्रगट हुई, वहाँ मोक्ष का उत्सव प्रारम्भ हो गया। जिसने सम्यग्दर्शन प्रगट किया, वह जीव मोक्ष की तलहटी में आ गया; सम्यग्दर्शन प्रगट करके जो मोक्ष की तलहटी में आया, उसे अब मोक्षधाम में पहुँचने के लिये अधिक समय नहीं लगता। अहा, जिनकी तलहटी में आने पर भी अपूर्व आनन्द का अंश प्रगट होता है, उस मोक्ष-सुख की क्या बात! अज्ञान-दु:ख का नाश करके ऐसा अपूर्व सुख प्रगट हो, वह मंगल है।

मंगलाचरण के बाद नेमप्रभु के प्रतिष्ठा महोत्सव के मंगल प्रारम्भ में धर्मध्वज-आरोहण-विधि पूज्य गुरुदेव के मंगल सुहस्त से (ब्रह्मचारी हरिभाई जैन की ओर से) हुई थी। गिरनार तीर्थधाम में पूज्य गुरुदेव के सुहस्त से धर्मध्वज को लहराता हुआ देखकर सबको प्रसन्नता होती थी। इसके बाद भगवंत पंच परमेष्ठी का पूजन हुआ था। दोपहर के प्रवचन में समयसार की छठवीं गाथा में 'ज्ञायकभाव' दर्शाते हुए स्वामीजी ने कहा कि—

यह तो नेमिनाथ प्रभु का मोक्षधाम है, मोक्षधाम की तलहटी में समयसार की इस छठवीं गाथा पर प्रवचन होते हैं। कैसे आत्मा को जानने से मोक्ष होता है ? वह बात कुन्दकुन्दस्वामी ने बतलायी है। विदेहक्षेत्र में विराजमान सीमन्धरस्वामी के दिव्यध्वनि का साक्षात् श्रवण करके आचार्यदेव ने इन शास्त्रों की रचना की है, इनमें आत्मा के प्रचुर स्वसंवेदन सहित आत्म–वैभव से एकत्व–विभक्त ज्ञायकभाव बतलाया है।

अहा, ज्ञायकभाव!—जो शुभाशुभ से पार है, जिसमें सुन्दर आनन्द विद्यमान है, उसके अनुभव करने का यह अवसर है। भाई! तूने चारों गति में अनन्त बार परिभ्रमण किया है, परन्तु चैतन्य की शान्ति उससे पार कोई अलौकिक वस्तु है। चैतन्यभावरूप आत्मा का स्वसंवेदन होने पर सम्यग्दर्शन में भी आनन्द का कोई अपूर्व स्रोत प्रवाहित होता है। फिर मुनिदशा के महान आनन्द की तो क्या बात ? ऐसी आनन्द दशावाले भगवान नेमनाथ इस गिरनार में विराजमान थे। जिसकी यह चौथी बार यात्रा करने आये हैं। प्रथम सं. १९९६ में, दूसरी २०१० में, तीसरी २०१७ में और यह चौथी यात्रा इस २०३१ में हो रही है। महावीर भगवान के २५०० वर्षीय निर्वाण महोत्सव के वर्ष में नेमप्रभु के निर्वाणधाम की यात्रा हो रही है तथा मानस्तम्भ में नेमप्रभु की मंगल प्रतिष्ठा भी हो रही है। कुन्दकुन्दाचार्यदेव ने भी इस गिरनार तीर्थ की यात्रा की थी। उनके द्वारा बतलाये हुए 'ज्ञायकभाव' का यह मन्त्र मिथ्यात्व का विष नष्ट कर देता है। भाई! तू एकबार इस मन्त्र का श्रवण कर! तेरा भवचक्र बन्द हो जायेगा, और तेरे में धर्मचक्र का अपूर्व प्रारम्भ होगा।

संसार–भ्रमण का कारण कषायचक्र है, शुभ और अशुभ ये दोनों भाव कषायचक्र से होनेवाले हैं, ज्ञायकभावरूप शुद्ध आत्मा को देखो तो वह शुभाशुभरूप नहीं हुआ, उसकी उपासना करने से वह सम्यक्त्वादि शुद्धभावरूप ही अनुभव में आता है, और ऐसी अनुभूति, यही भगवान का धर्मचक्र है। यह धर्मचक्र कषायचक्र का नाश करनेवाला है, यह धर्मचक्र 'ज्ञायकभाव' की उपासना से अर्थात् शुद्धात्म–अनुभूति से चलता है।

माघ शुक्ल तीज के प्रात:काल गुजरात प्रान्त के 'महावीर धर्मचक्र' का ७०० यात्रिकों के संघ सहित गिरनारधाम में आगमन हुआ। जैनधर्म प्रभावक धर्मचक्र को देखकर सभी को आनन्द हुआ... गुरुदेव धर्मचक्र के रथ में कुछ समय बैठे... अहा, वीरनाथ भगवान! आपको धर्मचक्र आज भी चल रहा है और इस धर्मरथ में बैठकर

मुमुक्षु जीव आपके मोक्षमार्ग में चल रहे हैं। गुजरात कर यह धर्मचक्र सात सौ जितने साधर्मी यात्रियों के साथ भारत के कई प्रान्तों में घूमेगा और स्थान-स्थान पर भगवान महावीर का सन्देश सुनायेगा। तलोद में इस धर्मचक्र का उद्घाटन श्री प्रकाशचन्द्रजी जैन सेठी (मध्यप्रदेश के मुख्यमन्त्रीजी) द्वारा हुआ था। इस प्रसंग पर मध्यप्रदेश के मुख्यमन्त्रीजी ने मध्यप्रदेश सरकार की ओर से गुजरात को पचास हजार रुपये दुष्काल राहत फण्ड में देने की घोषणा की थी। भारत में आजकल मुख्य पाँच महावीर-धर्मचक्र चल रहे हैं:- प्रथम धर्मचक्र दिल्ली-राजधानी से चला था-जिसका उद्घाटन भारत की प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिराबहिन गाँधी ने किया था, दूसरा इन्दौर से प्रारम्भ हुआ है; तीसरा श्रवणबेलगोला से चला है, चौथा धर्मचक्र राजगृही तीर्थधाम से चला है और पाँचवाँ गुजरात प्रदेश का धर्मचक्र फतेपुर से चला है। स्थान-स्थान पर अभूतपूर्व जागृति आ रही है, और धर्मचक्र का धामधूमपूर्वक सम्मान हो रहा है। हम सब भी महावीर भगवान के जयकार सहित धर्मचक्र का आनन्द से स्वागत करते हैं और भावना भाते हैं कि जिनेन्द्र भगवान का धर्मचक्र सम्पूर्ण देश में प्रवर्ते और जगत के जीवों का कल्याण करे।

श्री गिरनारधाम में एकसाथ तीन भव्य कार्यक्रम चल रहे हैं—एक तो नेमिनाथ भगवान की प्रतिष्ठा का महोत्सव (यह जिनबिम्ब-प्रतिष्ठा महोत्सव भोपाल के सेठ श्री बिहारीलालजी जैन की ओर से हुआ था।) दूसरा-गुरुदेव के साथ गिरनारतीर्थ की भावभीनी यात्रा; तीसरा-ढाई हजार वर्षीय निर्वाणमहोत्सव-अन्तर्गत 'महावीर-धर्मचक्र' का संघसहित आगमन।

माघ शुक्ल तीज के दोपहर में १२ बजे गुरुदेव ने यात्रिकों के साथ गिरनार पर चढ़ना प्रारम्भ किया... गुरुदेव को तथा साथ में भक्तों को भी तीर्थयात्रा का बहुत उल्लास था। दो बजे प्रथम टोंक पर पहुँचे; फिर वहाँ से सहस्त्रआम्रवन की ओर प्रस्थान किया। आह, नेमिनाथ भगवान जहाँ दीक्षा लेकर मुनि हुए, जहाँ क्षपकश्रेणी चढ़कर केवलज्ञानी-सर्वज्ञ हुए और जहाँ से दिव्यध्वनि द्वारा जगत को सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र का उपदेश दिया—उस पवित्रधाम में हम जा रहे हैं-तब हमारे भाव भी वैसे ही पवित्र हो रहे हैं... और भाव की पवित्रता ही उत्तम तीर्थयात्रा है।

अब, सहस्त्रआम्रवन में श्रीगुरु के साथ नेमप्रभु के चरणों के पास बैठे हैं... प्रभु के

वैराग्यधाम में और केवलज्ञान के धाम में गुरुदेव के साथ अद्भुत ज्ञान-वैराग्य के भाव जागृत होते हैं; स्वामीजी बार-बार नेमप्रभु का स्मरण करके कहते हैं कि यहीं पर भगवान का समवसरण था। 'बाल ब्रह्मचारी जिणंदपदधारी...' इस भजन के द्वारा गुरुदेव ने भक्ति की थी; पश्चात् पूज्य बेनश्री व पूज्य बेनजी ने भी उल्लासपूर्ण वैराग्यमय भक्ति करायी थी... सहस्रआम्रवन का शान्त वातावरण कोई अद्भुत है। वहाँ की यात्रा करके जिनमन्दिर में (प्रथम टोंक पर) नेमप्रभु की भावभीनी भक्ति की। बहुत से यात्रियों ने रात्रि को प्रथम टोंक पर ही विश्राम किया; गिरनार के ऊपर तीव्र शीत के मध्य भी नेमप्रभु के गुण-स्मरण द्वारा रात्रि बीत चली; कब प्रात:काल हो और कब पाँचवीं टोंक पर जाकर सिद्धक्षेत्र की यात्रा करे-ऐसी उत्सुकता से यात्री लोग सोये ही नहीं। प्रात:काल होते ही पाँचवीं टोंक पर पहुँच गये... यहाँ नेमप्रभु की मूर्ति पहाड़ में ही उत्कीर्ण है; उसके सन्मुख भक्तिभाव से अर्घ चढ़ाया। इस टोंक पर नेमिप्रभु के चरणचिह्न विराजमान हैं परन्तु देशकाल-अनुसार आज उसकी व्यवस्था अपने हाथ में नहीं रही। फिर भी वह हमें अपने नेमनाथ प्रभु के मोक्ष का स्मरण तो अवश्य कराते ही हैं।—प्रभु को हमारे हृदय में से कोई दूर नहीं कर सकता। पाँचवीं टोंक की यात्रा के बाद प्रथम टोंक के जिनमन्दिर में अभिषेक हुआ। प्रथम अभिषेक की बोली सोनगढ़ की ब्रह्मचारी कंचनबहन वगैरह ने ली थी; और पूज्य स्वामीजी के मंगल हस्त से जिनेन्द्र अभिषेक हुआ था। गिरनार पर ऐसा अभिषेक देखकर सबको आनन्द हुआ। बहुत से यात्री चौथी टोंक (प्रद्युम्नसिद्धिधाम) की यात्रा को भी गये थे। यहाँ पर भी पर्वत में एक जिनमूर्ति उत्कीण है-जो कि पाँचवीं टोंक की मूर्ति के सदृश ही है। तथा चरणपादुका भी पर्वत में ही उत्कीर्ण है। चौथी और पाँचवीं टोंक की बिल्कुल सदृश रचना को देखकर ऐसा ख्याल आता है कि यह दोनों रचनाएँ एक ही समय में हुई हैं। ऐसी दूसरी दो जिनमूर्तियाँ पर्वत के के भिन्न-भिन्न स्थान में हैं (एक तीसरी टोंक के बाद पाँचवीं टोंक की ओर जाते हुए मार्ग में दायीं ओर है और दूसरी नीचे से प्रथम टोंक की ओर आते समय आधे से अधिक भाग निकल जाने पर बायीं ओर है, इससे ऊपर 'सं. १४' ऐसा उत्कीर्ण है।)

आनन्दपूर्वक महान तीर्थ की यात्रा करके, गुरुदेव के साथ पूज्य बहिनश्री-बहिन की विध-विध भक्ति झेलते-झेलते और प्रभु जैसे जीवन की उत्तम भावना भाते-भाते नीचे आये, और नेमप्रभु के जय-जयकारपूर्वक यात्रा पूर्ण हुई।

ध्रुव अचल अरु अनुपम गति को प्राप्त नेमिनाथ को
कर नमन, मैं की सिद्धियात्रा शुद्ध-सम्यक् भाव से॥
जहाँ नेमिनाथ मुनि हुए अरिहंत एवं सिद्ध बने;
कर नमन, कीनी तीर्थयात्रा, कहानगुरु साथ में॥

तीर्थयात्रा, प्रतिष्ठामहोत्सव और महावीर धर्मचक्र—ऐसे तीनों मंगल प्रसंग में सम्मिलित होने के लिये आये हुए ढाई हजार जितने यात्रियों से तीर्थधाम का वातावरण बहुत प्रसन्नतापूर्ण था; और गुरुदेव भी प्रवचन में ज्ञायकभाव के साथ-साथ बार-बार प्रसन्नतापूर्वक नेमिनाथ भगवान का स्मरण करके गिरनार तीर्थ की महिमा प्रसिद्ध करते थे... जिसका श्रवण करने पर ऐसा लगता था कि वाह रे वाह तीर्थराज! तुम्हारी महिमा कौन न करे? बहत्तर करोड़ और सात सौ सर्वज्ञ भगवन्तों के अतीन्द्रिय आनन्द से स्पर्शित ऐसी इस तीर्थभूमि को वन्दन कौन न करे? अहा, अभी ऐसे महान तीर्थ में ही गुरुदेव के साथ बैठे हैं, और आनन्द से प्रभु के सिद्धिपंथ में यात्रा कर रहे हैं।

श्रमणो-जिनों-तीर्थंकरों आ रीते सेवी मार्गने,
सिद्धि वर्या, नमुं तेमने... निर्वाणना अे मार्गने।
—सिद्धि वर्या, नमुं तेमने, निर्वाणना आ धामने॥

(प्रवचनसार गाथा २०० गुजराती भाषा है)

माघ शुक्ल पंचमी के दिन प्रवचन के बाद नेमिनाथ भगवान के भव्य (सोनगढ़ के परमागममन्दिर में विराजमान महावीर भगवान के सदृश विशाल भव्य) जिनबिम्ब का स्थापन हुआ; मानस्तम्भ में ऊपर-नीचे नेमिनाथ भगवान की प्रतिष्ठा हुई; तथा गिरनार से मोक्षगामी शम्बुकुमार, अनिरुद्धकुमार और प्रद्युम्नकुमार की प्रतिमा का भी स्थापन हुआ। इस प्रकार आनन्दपूर्वक प्रभु की प्रतिष्ठा का मंगल उत्सव पूर्ण हुआ। प्रतिष्ठा की खुशी में सायंकाल धर्मचक्रसहित जिनेन्द्रदेव की रथयात्रा जूनागढ़ शहर में निकली; अद्भुत उल्लास पूर्ण महान रथयात्रा को देखकर सबको आनन्द होता था। गिरनार का उत्सव पूर्ण करके स्वामीजी सोनगढ़ पधारे।

सोनगढ़ के बाद गुरुदेव भावनगर-सूरत-पालेज-बम्बई होकर भोपाल पधारे थे,

वहाँ पीपलानी में जिनेन्द्र–पंचकल्याणक प्रतिष्ठा वगैरह का भव्य आयोजन हुआ; बड़ा भारी उत्सव आनन्दपूर्वक पूर्ण हुआ; उसका समाचार प्राप्त होने पर अगले अंक में दिया जायेगा। इस वक्त मैं स्वयं प्रवास में पूज्य स्वामीजी के साथ में शामिल नहीं हुआ हूँ; इसलिए मैं स्वयं उत्सव का बयान नहीं दे सकता हूँ; हरेक जगह से मुझे जो समाचार एवं चित्र प्राप्त होगा, उसी के आधार पर समाचार दिया जावेगा। (सं.)

जिनेन्द्र भगवान का कल्याणक जगत का कल्याण करो।

सर्व जीव सुखकारी वीरनाथ का धर्मचक्र सदैव सर्वत्र प्रवर्तमान हो॥

परिशिष्ट - 2

मुक्तिपुरी के पथिक पूज्य सद्गुरुदेवश्री कानजीस्वामी ने

क्र.	यात्रा नं.	यात्राधाम	निर्वाणभूमि/ जन्मधाम/अन्य	भगवान/मुनिराज
१	१	श्री सम्मेदशिखरजी	शाश्वत निर्वाणधाम	बीस तीर्थंकर भगवंतों तथा
	२			
२	१	श्री चंपापुरी/मंदारगिरि	निर्वाणभूमि तथा जन्मधाम	(१२) श्री वासुपूज्य भगवान की जन्म तथा निर्वाणभूमि
३	१	श्री पावापुरी	निर्वाणभूमि	(२४) श्री महावीर भगवान की निर्वाणभूमि
	२			
४	१	श्री गिरनारजी	निर्वाणभूमि	(२२) श्री नेमिनाथ भगवान तथा श्री जम्बूकुमार, अनिरुद्धकुमार, प्रद्युम्नकुमार आदि ७२ करोड़ मुनिवरों की निर्वाणभूमि
	२			
	३			
	४			
५	१	श्री अयोध्या	शाश्वत जन्मधाम	(१) श्री ऋषभदेव, (२) श्री अजितनाथ (४) श्री अभिनन्दनस्वामी (५) श्री सुमतिनाथ और (१४) श्री अनंतनाथ भगवन्तों की जन्मभूमि
६	१	श्री वाराणसी (काशी)	जन्मधाम	(७) श्री सुपार्श्वनाथ, (२३) श्री पार्श्वनाथ भगवान की जन्मभूमि

निर्वाणभूमि / जन्मधाम / साधनाधाम की, की हुई मंगल यात्रा

यात्रा मुकाम तिथि	वि.सं.	यात्रा तिथि	यात्रा मुकाम दि.	ई.स.	यात्रा दि.
फाल्गुन सुद ५-८	२०१३	फाल्गुन सुद ७	मार्च ५-९	१९५७	०८/०३/१९५७
फाल्गुन सुद १३ -वद ३	२०२३	फाल्गुन सुद १५	मार्च २४-२९	१९६७	२६/०३/१९६७
फाल्गुन सुद १०-११	२०१३	फाल्गुन सुद ११	मार्च ११-१२	१९५७	१२/०३/१९५७
फाल्गुन सुद १-३	२०१३	फाल्गुन वद २	मार्च २-४	१९५७	०३/०३/१९५७
फाल्गुन वद ५-६	२०२३	फाल्गुन वद ५	मार्च ३१-अप्रेल १	१९६७	३१/०१/१९६७
फाल्गुन सुद २	१९९६	फाल्गुन सुद २	मार्च ११	१९४०	११/०३/१९४०
माघ सुद १०-१३	२०१०	माघ सुद ११-१२	फरवरी १२-१५	१९५४	१३-१४/०२/१९५४
माघ सुद १०-१३	२०१७	माघ सुद ११	जनवरी २६-२९	१९६१	२७/०१/१९६१
माघ सुद २-५	२०३१	माघ सुद ३	फरवरी १३-१६	१९७५	१४/०२/१९७५
माघ वद ६-७	२०१३	माघ वद ६-७	फरवरी २०-२१	१९५७	२०-२१/०२/१९५७
माघ वद ८-१०	२०१३	माघ वद ९-१०	फरवरी २२-२४	१९५७	२३-२४/०२/१९५७

मुक्तिपुरी के पथिक पूज्य सद्‌गुरुदेवश्री कानजीस्वामी ने

क्र.	यात्रा नं.	यात्राधाम	निर्वाणभूमि/ जन्मधाम/अन्य	भगवान/मुनिराज
७	१	श्री चन्द्रपुरी	जन्मधाम	(८) श्री चन्द्रप्रभु भगवान की जन्मभूमि
८	१	श्री सिंहपुरी	जन्मधाम	(११) श्री श्रेयांसनाथ भगवान की जन्मभूमि
९	१	श्री रत्नपुरी	जन्मधाम	(१५) श्री धर्मनाथ भगवान की जन्मभूमि
१०	१	श्री हस्तिनापुर	जन्मधाम	(१५)श्री शान्तिनाथ (१७) श्री कुंथुनाथ श्री अरनाथ भगवान की जन्मभूमि
११	१	श्री राजगृही	जन्मधाम	(२०) श्री मुनिसुव्रतनाथ भगवान की जन्मभूमि
	२			
१२	१	श्री शौरीपुर	जन्मधाम	(२२) श्री नेमिनाथ भगवान की जन्मभूमि
गुजरात				
१३	१	श्री शत्रुंजय	निर्वाणभूमि	श्री युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन तथा आठ करोड़ मुनिवरों की निर्वाणभूमि
	२			
१४	१	तारंगाजी	निर्वाणभूमि	श्री वरदत्त, सागरदत्त आदि साढ़े तेरह करोड़ मुनिवरों की निर्वाणभूमि
१५	१	श्री पावागढ़	निर्वाणभूमि	श्री लव-कुश तथा पाँच करोड़ मुनिवरों की निर्वाणभूमि

निर्वाणभूमि / जन्मधाम / साधनाधाम की, की हुई मंगल यात्रा

यात्रा मुकाम तिथि	वि.सं.	यात्रा तिथि	यात्रा मुकाम दि.	ई.स.	यात्रा दि.
माघ वद ८	२०१३	माघ वद ८	फरवरी २२	१९५७	२२/०२/१९५७
माघ वद ८	२०१३	माघ वद ८	फरवरी २२	१९५७	२२/०२/१९५७
माघ वद ६	२०१३	माघ वद ६	फरवरी २०	१९५७	२०/०२/१९५७
चैत्र सुद २	२०१३	चैत्र सुद २	अप्रैल ३	१९५७	०३/०४/१९५७
माघ वद १३– फाल्गुन सुद १	२०१३	माघ वद १४– –अमावस्या	फरवरी २७–मार्च २	१९५७	२८/०२, ०१/०३/१९५७
फाल्गुन वद ६	२०२३	फाल्गुन वद ६	अप्रैल १	१९६७	०१/०४/१९६७
माघ सुद १४	२०१३	माघ सुद १४	फरवरी १३	१९५७	१३/०२/१९५७
पोष वद १३	१९९५	पोष वद १३	जनवरी १८	१९३९	१८/०१/१९३९
प्रथम अषाढ़ वद ४	२००६	प्र. अषाढ़ सुद ४	जून १९	१९५०	१९/०५/१९५०
चैत्र वद १३–	२०१३	चैत्र वद १४	अप्रैल २८–३०	१९५७	२९/०४/१९५७
पोष सुद ८–९	२०१५	पोष सुद ९	जनवरी १७–१८	१९५९	१८/०१/१९५९

मुक्तिपुरी के पथिक पूज्य सद्गुरुदेवश्री कानजीस्वामी ने

क्र.	यात्रा नं.	यात्राधाम	निर्वाणभूमि/ जन्मधाम/अन्य	भगवान/मुनिराज
महाराष्ट्र				
१६	१	श्री गजपंथा	निर्वाणभूमि	सात बलभद्र तथा आठ करोड़ मुनिवरों की निर्वाणभूमि
१७	१	श्री मांगीतुंगी	निर्वाणभूमि	श्री रामचन्द्रजी, सुग्रीव आदि ९९ करोड़ मुनिवरों की निर्वाणभूमि
१८	१	श्री कुंथलगिरि	निर्वाणभूमि	श्री देशभूषण-कुलभूषण मुनिवरों की निर्वाणभूमि
मध्यप्रदेश				
१९	१	श्री वडवानीजी	निर्वाणभूमि	इन्द्रजीत, कुम्भकर्ण तथा साढ़े तीन करोड़ मुनिवरों की निर्वाणभूमि
	२			
	३			
२०	१	श्री उन-पावागिरि	निर्वाणभूमि	सुवर्णभद्र आदि चार मुनिवरों की निर्वाणभूमि
	२			
२१	१	श्री सिद्धवरकूट	निर्वाणभूमि	दो चक्रवर्ती (सनतकुमार और मधवा), दस कामदेव और साढ़े तीन करोड़ निवरों की निर्वाणभूमि
२२	१	मुक्तागिरि	निर्वाणभूमि	साढ़ तीन करोड़ मुनिवरों की निर्वाणभूमि

निर्वाणभूमि / जन्मधाम / साधनाधाम की, की हुई मंगल यात्रा

यात्रा मुकाम तिथि	वि.सं.	यात्रा तिथि	यात्रा मुकाम दि.	ई.स.	यात्रा दि.
पोष वद १	२०१३	पोष वद १	जनवरी १७	१९५७	१७/०१/१९५७
पोष वद ३	२०१३	पोष वद ३	जनवरी १८	१९५७	१८/०१/१९५७
फाल्गुन सुद १५-वद १	२०१५	फाल्गुन सुद १५-वद १	मार्च २४-२५	१९५९	२४-२५/०३/१९५९
पोष वद ५-७	२०१३	पोष वद ६	जनवरी २०-२२	१९५७	२१/०१/१९५७
पोष सुद १२	२०१५	पोष सुद १२	जनवरी ६	१९५९	०६/०१/१९५९
जेठ वद १	२०१९	जेठ वद १	जून ८	१९६३	०८/०६/१९६३
पोष वद ८	२०१३	पोष वद ८	जनवरी २३	१९५७	२३/०१/१९५७
जेठ सुद १५	२०१९	जेठ सुद १५	जून ७	१९६३	०९/०६/१९६३
पोष वद ११	२०१३	पोष वद ११	जनवरी २६	१९५७	२६/०१/१९५७
फाल्गुन वद ११-१२	२०१५	फाल्गुन वद ११-१२	अप्रैल ३-४	१९५९	३-४/०४/१९५९

मुक्तिपुरी के पथिक पूज्य सद्गुरुदेवश्री कानजीस्वामी ने

क्र.	यात्रा नं.	यात्राधाम	निर्वाणभूमि/ जन्मधाम/अन्य	भगवान/मुनिराज
२३	१	श्री नैनागिरि-रेशंदीगिरि	निर्वाणभूमि	श्री वरदत्तादि पाँच मुनिवरों की निर्वाणभूमि
२४	१	श्री कुण्डलगिरि	निर्वाणभूमि	श्री अन्तिम केवली श्रीधरस्वामी की निर्वाणभूमि
२५	१	श्री द्रोणगिरि	निर्वाणभूमि	श्री गुरुदत्त आदि मुनिवरों की निर्वाणभूमि
२६	१	श्री सोनागिरि	निर्वाणभूमि	श्री नंग-अनंग आदि साढ़े पाँच करोड़ मुनिवरों की निर्वाणभूमि; चन्द्रप्रभु भगवान का समवसरण अनेक बार आया है।
उत्तरप्रदेश				
२७	१	श्री मथुरा	निर्वाणभूमि	श्री जम्बुस्वामी तथा महामुनि विद्युत इत्यादि पाँच सौ मुनिवरों की निर्वाणभूमि
	२			
बिहार				
२८	१	श्री गुणावा	निर्वाणभूमि	श्री गौतमस्वामी की निर्वाणभूमि
२९	१	श्री पटणा	निर्वाणभूमि	श्री सुदर्शन मुनिराज की निर्वाणभूमि
ओडिशा				
३०	१	श्री खंडगिरि-उदयगिरि	निर्वाणभूमि	दशरथ राजा के पुत्रों आदि पाँच सौ मुनिवरों की निर्वाणभूमि

निर्वाणभूमि / जन्मधाम / साधनाधाम की, की हुई मंगल यात्रा

यात्रा मुकाम तिथि	वि.सं.	यात्रा तिथि	यात्रा मुकाम दि.	ई.स.	यात्रा दि.
चैत्र सुद १३	२०१५	चैत्र सुद १३	अप्रैल १९	१९५९	१९/०४/१९५९
चैत्र सुद ७	२०१५	चैत्र सुद ७	अप्रैल १५	१९५९	१५/०१/४/१९५९
चैत्र सुद १२-१३	२०१५	चैत्र सुद १२	अप्रैल २०-२१	१९५९	२०/०४/१९५९
माघ सुद ६-७	२०१३	माघ सुद ७	फरवरी ६-७	१९५७	०७/०२/१९५७
माघ सुद १५, वद १	२०१३	माघ सुद १५, वद १	फरवरी १४-१५	१९५९	१४-१५/०२/१९५९
चैत्र सुद ११	२०१३	चैत्र सुद ११	अप्रैल २०	१९६७	२०/०४/१९६७
फाल्गुन सुद ३	२०१३	फाल्गुन सुद ३	मार्च ४	१९५७	०४/०३/१९५७
माघ वद १३	२०१३	माघ वद १३	फरवरी २७	१९५७	२९/०२/१९५७
फाल्गुन वद १३	२०१३	फाल्गुन वद १३	मार्च २९	१९५७	२९/०३/१९५७

मुक्तिपुरी के पथिक पूज्य सद्गुरुदेवश्री कानजीस्वामी ने

क्र.	यात्रा नं.	यात्राधाम	निर्वाणभूमि/ जन्मधाम/अन्य	भगवान/मुनिराज
तमिलनाडु				
३१	१	श्री पोन्नुर (वन्देवास)	तपोभूमि	श्री कुन्दकुन्दाचार्य की तपोभूमि
	२			
	३			
कर्नाटक				
३२	१	कुन्दाद्री (कुन्दनगिरि)	समाधिभूमि	श्री कुन्दकुन्दाचार्य की समाधिभूमि
	२			
३३	१	श्री श्रवणबेलगोला	तपोभूमि तथा ग्रन्थ रचनाभूमि	श्री भद्रबाहुस्वामी की तपोभूमि; श्री नेमिचन्द्र सिद्धान्त चक्रवर्ती द्वारा ''श्री गोम्मटसार'' की रचना; श्री इन्द्रगिरि पर ५७ फीट की बाहुबली प्रतिमा
	२			

निर्वाणभूमि / जन्मधाम / साधनाधाम की, की हुई मंगल यात्रा

यात्रा मुकाम तिथि	वि.सं.	यात्रा तिथि	यात्रा मुकाम दि.	ई.स.	यात्रा दि.
फाल्गुन सुद ५	२०१५	फाल्गुन सुद ५	मार्च १४	१९५९	१४/०३/१९५९
माघ सुद १२–१४	२०२०	माघ सुद १२–१४	जनवरी २६–२७	१९६४	२६–२७/०१/१९६४
फाल्गुन सुद ५	२०३४	फाल्गुन सुद ५	मार्च १३	१९७८	१३/०३/१९७८
माघ वद ३	२०१५	माघ वद ३	फरवरी २६	१९५९	२६/०२/१९५९
माघ सुद ३	२०२०	माघ सुद ३	जनवरी १७	१९६४	१७/०१/१९६४
माघ वद ९–११	२०१५	महा वद ९– इन्द्रगिरि; माघ वद १०–चन्द्रगिरि पहाड़	मार्च ३–५	१९५९	३–४/०३/१९५९
माघ सुद ७–८	२०२०	माघ वद ७–८ इन्द्रगिरि	जनवरी २१–२२	१९५४	२१–२२/०१/१९५४